दशम ग्रंथ साहि

(हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्त

दूसरी सं

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

स्री दसम ग्रंथ साहिब

(दूसरी सैंची)

[हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण]

अनुवाद—

डॉ० जोधसिंह

एम० ए०, पीएच्० डी०, साहित्य रत्न

विश्वनागरी लिपि

।। ग्रामे-ग्रामे सभा कार्या, ग्रामे-ग्रामे कथा शुभा ।।

सब भारतीय लिपियाँ सम-वैज्ञानिक हैं !

All the Indian Scripts are equally scientific !

भारतीय लिपियों की विशेषता ।

संसार की लिपियों में नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक है । यह कथन बिलकुल ठीक है । परन्तु यह कहते समय हमें याद रखना चाहिए कि वह सर्वाधिक वैज्ञानिकता, केवल हिन्दी, मराठी, नेपाली, लिखी जानेवाली लिपि में नहीं, वरन् समस्त भारतीय लिपियों में मौजूदहै। क, च, त, प आदि के रूपों में कोई वैज्ञानिकता नहीं है। वैज्ञानिकता है लिपि का ध्वन्यात्मक होना। नियमित स्वरों का पृथक् होना। अधिक सेअधिक व्यंजनों का होना । सबको एक 'अ' के आधार पर उच्चरित करना । ['अ' अक्षर-स्वर, सकल अक्षरोंका उस भाँति मूल आधार । सकलविश्व का जिस प्रकार 'भगवान्' आदि है जगदाधार ।]एक अक्षर से केवल एक ध्वनि । एक ध्वनि के लिए केवल एक अक्षर । स्माल् कैपिटल्, इटैलिक्स् के समान अनेकरूपा नहीं; बस एकही रूप में लिखना बोलना, छापना और प्रत्येक अक्षर का समानै वजन पर एकाक्षरी

पंजाबी (गुरमुखी)-देवनागरी वर्णमाला

ਅ अ	ਆ आ	ਇ इ	ਈ ई	ਉ उ
ਊ ऊ	ਰੀ ऋ	ਏ ए	ਐ ऐ	ਓ ओ
	ਔ औ	ਅੰ अं	ਅः अः	
ਕ क	ਖ ख	ਗ ग	ਘ घ	ਙ ङ
ਚ च	ਛ छ	ਜ ज	ਝ झ	ਞ ञ
ਟ ट	ਠ ठ	ਡ ड	ਢ ढ	ਣ ण
ਤ त	ਥ थ	ਦ द	ਧ ध	ਨ न
ਪ प	ਫ फ	ਬ ब	ਭ भ	ਮ म
ਯ य	ਰ र	ਲ ल	ਵ व	ਸ਼ श
	ਸ਼ ष	ਸ स	ਹ ह	

नाम। उच्चारण-संस्थान के अनुसार अक्षरों का कवर्ग, चवर्ग आदि में वर्गीकरण। फिर प्रत्येक वर्ग के अक्षरों का क्रम से एक ही संस्थान में थोड़ा-थोड़ा ऊपर उठते हुए अनुनासिक तक पहुँचना, आदि-आदि ऐसे अनेक गुण हैं जो अभारतीय लिपियों में एकत्र, एकसाथ नहीं मिलते। किन्तु ये गुण समान रूप से सभी भारतीय लिपियों में मौजूद हैं, अतः वे सब नागरी के समान ही विश्व की अन्य लिपियों की अपेक्षा 'सर्वाधिक वैज्ञानिक' हैं। सब ब्राह्मी लिपि से उद्भूत हैं। ताड़पत्र और भोजपत्र की लिखाई तथा देश-काल-पात्र के अन्य प्रभावों के कारण विभिन्न भारतीय लिपियों के अक्षरों में यत्र-तत्र परिवर्तन, हिन्दी वाली 'नागरी लिपि' को कोई श्रेष्ठता प्रदान नहीं करता। भारत की मौलिक सब लिपियाँ 'नागरी लिपि' के समान ही श्रेष्ठ हैं।

नागरी लिपि को 'भी' अपनाना श्रेयस्कर क्यों ?

"नागरी लिपि" की केवल एक विशेषता है कि वह कमोबेश सारे देश में प्रविष्ट है, जबकि अन्य भारतीय लिपियाँ निजी क्षेत्रों तक सीमित हैं। वहीं यह भी सत्य है कि नागरी लिपि में प्रस्तुत और विशेष रूप से हिन्दी का साहित्य, अन्य लिपियों में प्रस्तुत ज्ञानराशि की अपेक्षा कम और नवीनतर है। अतः समस्त भाषाओं की ज्ञानराशि को, सर्वाधिक फैली लिपि "नागरी" में अधिक से अधिक लिप्यन्तरित करके, क्षेत्रीय स्तर से उठाकर सबको सारे राष्ट्र में, यहाँ तक कि विश्व में ले आना परम धर्म है। विश्व की सब भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान (सत्साहित्य) है आत्मा, और 'नागरी लिपि' होना चाहिए उसका पर्यटक शरीर।

अन्य लिपियों को बनाये रखना भी कर्तव्य है।

वस्तुतः यह परम धर्म है कि समस्त सदाचार साहित्य को नागरी में तत्परता और प्राचुर्य में लिप्यन्तरित करना। किन्तु साथ ही यह भी परम धर्म है कि अन्य लिपियों को उत्तरोत्तर उन्नति के साथ बरक़रार रखना। यह इसलिए कि सबका सब कभी लिप्यन्तरित नहीं हो सकता। अतः अन्य लिपियों के नष्ट होने और नागरी लिपि मात्र के ही रह जाने से अलिप्यन्तरित हमारी समस्त ज्ञानराशि उसी प्रकार लुप्त-सुप्त होकर रह जायगी जैसे पाली, प्राकृत और अपभ्रंश का वाङ्मय रह गया। हमारे ही राष्ट्र का प्राचीन आप्तज्ञान विलुप्त हो जायगा।

नागरी लिपि वालों पर उत्तरदायित्व विशेष !

इन दोनों परम धर्मों की पूर्ति का सर्वाधिक भार नागरी लिपि वालों पर है, इसलिए कि उनको 'सम्पर्क लिपि' का श्रेष्ठ आसन प्रदत्त है। मैं कह सकता हूँ कि उन्होंने अपने कर्तव्य का, जैसा चाहिए था, वैसा निर्वाह नहीं किया। परन्तु उसकी प्रतिक्रिया में अन्य लिपि वालों को भी "अपराध के बदले में अपराध" नहीं करना चाहिए 'कोयला' बिहार का है

अथवा सिंहभूमि का है, इसलिए हम उसको नहीं लेंगे, तो वह हमारे ही लिए घातक होगा। कोयले की क्षति नहीं होगी। अपनी लिपियों को समुन्नत रखिए, किन्तु नागरी लिपि को भी अवश्य अपनाइए।

उपर्युक्त परिवेश में नागरी लिपि का पठन और समग्र श्रेष्ठ साहित्य का नागरी में लिप्यन्तरण तो आवश्यक है ही, किन्तु अन्य लिपियाँ भी अपनी लिपि में दूसरी भाषाओं के सत्साहित्य को लिप्यन्तरित तथा अनूदित कर सकती हैं। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।' ज्ञान की सीमा नहीं निर्धारित है। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने भी अवधी के रामचरितमानस को ओड़िआ भाषा में गद्य एवं पद्य अनुवाद-सहित, ओड़िआ लिपि में लिप्यन्तरित किया है। परन्तु सम्पर्क और एकीकरण की दृष्टि से 'नागरी लिपि' अनिवार्य है।

नागरी लिपि की वैज्ञानिकता मानव मात्र की सम्पत्ति है।

अब एक क़दम आगे बढ़िए। भारतीय लिपियों की सर्वाधिक वैज्ञानिकता युगों की मानव-शृंखला के मस्तिष्क की उपज है। क्या मालूम इस अनादि से चल रहे जगत् में कब, क्या, किसने उत्पन्न किया? भारत संयोग से इस समय इस विज्ञान का कस्टोडियन् है, स्रष्टा नहीं। भारत भी न जाने कब, कहाँ तक और कितना था? अत: हम भारतीयों को नागरी लिपि के स्वामित्व का गर्व नहीं होना चाहिए। वह आज के मानव के पूर्वजों की देन है, सबकी सम्पत्ति है, सकल विश्व उसका समान गौरव से उपयोग कर सकता है। हमारा 'अहम्' उस लिपि की उपयोगिता को नष्ट कर देगा, जिसके हम सँजोये रखनेवाले मात्र हैं। किन्तु विदेशों में बसनेवाले बन्धुओं को भी नागरी लिपि के गुणों को अपने ही पूर्वजों की उपज मानकर परखना चाहिए। ये गुण इस निबन्ध के प्रथम अनुबन्ध में अधिकांशत: वर्णित हैं। न परखने पर उनकी क्षति है, विश्व की क्षति है। अरब का पेट्रोल हम नहीं लेंगे, तो क्षति किसकी होगी? पेट्रोल की नहीं, अपनी ही।

फिर याद दिला देना जरूरी है कि क, प आदि रूपों में वैज्ञानिकता नहीं है। वे काफ़, पे और के, पी जैसे ही रूप रख सकते हैं, किन्तु लिपि में 'अनुबन्ध प्रथम' में ऊपर दिये हुए गुणों और क्रम को अवश्य ग्रहण करें। और यदि एक बनी-बनाई चीज़ को ग्रहण करके सार्वभौम सम्पर्क में समानता और सरलता के समर्थक हों, तो 'नागरी लिपि' के क्रम को अपनी पैतृक सम्पत्ति मानकर, ग़ैर न समझकर, मौजूदा रूप में भी ग्रहण कर सकते हैं। वह भारत की बपौती नहीं है। आज के मानव के पूर्वजों की वह सृष्टि है। इससे विश्व के मानव को परस्पर समझने का मार्ग प्रशस्त होगा।

नागरी लिपि में अनुपलब्ध विशिष्ट स्वर-व्यञ्जनों का समावेश।

हर शुभ काम में कजी निकालनेवाले एक दूर की कौड़ी यह भी लाते हैं कि "नागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक होते हुए भी अपूर्ण है और अनेक स्वर-व्यञ्जनों को अपने में नहीं रखती उनको कहाँ तक और कैसे समाविष्ट

किया जाय ?" यह मात्र तिल का ताड़ है। मौजूदा कर्तव्य को टालना है।

अलबत्ता अन्य भाषाओं में कुछ व्यंजन ऐसे हैं जो नागरी में नहीं है— किन्तु अधिक नहीं। भारतीय भाषा उर्दू की क़ ख़ ग़ ज़ फ़, ये पाँच ध्वनियाँ तो बहुत समय से नागरी लिपि में प्रयुक्त हो रही है। दुःख है कि आज़ादी के बाद से राष्ट्रभाषा के पक्षधर ही उनको ग़ायब करने पर लगे हैं। इसी प्रकार मराठी ळ है। इनके अतिरिक्त अरबी, इब्रानी आदि के कुछ व्यञ्जन हैं, किन्तु उनको नागरी की दैनिक लिपि में अनिवार्यतः रखना आवश्यक नहीं। विशिष्ट भाषाई कार्यों में उन विशिष्ट भाषाई व्यंजनों को चिह्न देकर दरसाया जा सकता है।

तदर्थ अरबी लिपि का आदर्श सम्मुख।

और यह कोई नयी बात नहीं। नितान्त अपरिवर्तनशील कहे जाने वालों की लिपि 'अरबी' में केवल २७-२८ अक्षर होते हैं। भाषा के मामले में वे भी अति उदार रहे। "इल्म चीन (अर्थात् दूर से दूर) से भी लाओ"— यह पैग़म्बर का कथन है। जब ईरान में, फ़ारसी की नई ध्वनियों च, प, ग, आदि से सामना पड़ा तो उन्होंने उनको अरबी-पोशाक चे, पे, गाफ़ पहना दी। जब हिन्दोस्तान आये तो ट, ड, ड़ आदि से सामना पड़ने पर अरबी ही जामे में टे, डाल, ड़े आदि तैयार कर लिये। यहाँ तक कि सिन्धी में नागरी के सब महाप्राण और अनुनासिक, तथा सिन्धी के विशिष्ट अन्तःस्फुट अक्षरों को भी अरबी का लिबास पहना दिया गया। फिर 'नागरी' वाले तो औदार्य का दावा करते हैं, उनको परेशानी क्या है ? और नागरी में भी तो परिवर्तन होते रहे हैं। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र में प्रयुक्त ळ को छोड़ चुके हैं, और ड़, ढ़ आदि को अवर्गीय दशा में जोड़ चुके हैं। नागरी लिपि में कुछ ही व्यंजनों का अभाव है। उनमें से कुछ को स्थायी तौर पर और कुछ को अस्थायी प्रयोग के लिए गढ़ सकते हैं। 'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने यह सेवा बड़ी सरलता, सफलता और सुन्दरता से की है।

स्वर और प्रयत्न (लहजा) का अन्तर।

अब रहे स्वर। जान लीजिए कि प्रमुख स्वर तीन ही हैं— अ, इ, उ; उनसे दीर्घ, संयुक्त (डिफ्थांग) आदि बनते हैं। अतिदीर्घ, प्लुत, लघु, अतिलघु आदि फिर अनेक हैं जो विश्व में अनेक रूपों में बोले जाते हैं। भारतीय वैदिक एवं संस्कृत व्याकरण में अनेक हैं। वे स्वतन्त्र स्वर नहीं हैं प्रयत्न हैं, लहजा हैं। वे सब न लिखे जा सकते हैं, न सब सर्वत्र बोले जा सकते हैं। डायाक्रिटिकल मार्क्स कोशों में छाप-छापकर चमत्कार भले ही दिखा दिया जाय, प्रयोग में तो, "एक ही रूप में", अपने निजी शब्द निजी देशों में भी नहीं बोले जाते। स्वर क्या, व्यंजन तक। एक शब्द "पहले" को लीजिए। सब जगह घूम आइए, देखिए उसका उच्चारण किस-किस प्रकार से होता है। एक बिहार प्रदेश को छोड़कर कहीं भी "पहले" का शुद्ध

उच्चारण सुनने को नहीं मिलेगा। पंजाब, बंगाल, मद्रास के अंग्रेज़ी के उद्‌भट विद्वान् अंग्रेज़ी में भाषण देते हैं—उनके लहजे (प्रयत्न) बिलकुल भिन्न होते हैं। फिर भी न उनका उपहास होता है, न अंग्रेज़ी भाषा का ह्रास।

शास्त्र पर व्यवहार की वरीयता।

शास्त्र और विज्ञान से हमको विरोध नहीं। लिपि की रचना, शोध, परिमार्जन, देश-काल-पात्र के अनुसार करते रहिए, परन्तु व्यवहारिकता को अवरुद्‌ध मत कीजिए। खाद्‌यपदार्थ के तत्त्वों का गुण-दोष, परिमाण, संतुलन, न्यूनाधिक्य, और खानेवाले की शक्ति के साथ उनका समन्वय, यह सब स्तुत्य है, कीजिए। किन्तु ऐसा नहीं कि उस समीक्षा के पूर्ण होने तक कोई भूखा रहकर मर ही जाय। थाली रखी है, उसे भोजन करने दीजिए। आज सबसे जरूरी है राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक का एक-दूसरे की ज्ञानराशि को समझने के लिए एक सम्पर्क लिपि की व्यापकता।

'भुवन वाणी ट्रस्ट' ने स्थायी और मुक़ामी तौर पर अनेक स्वर-व्यंजनों की सृष्टि की है। दक्षिणी भाषाओं में प्रयुक्त एकार तथा ओकार की ह्रस्व, दीर्घ—दोनों मात्राएँ हम प्रयोग में ला रहे हैं। पढ़ने दीजिए, बढ़ने दीजिए। समस्त भाषाओं के ज्ञान-भण्डार को निजी क्षेत्रों से उठाकर धरातल पर नागरी लिपि के माध्यम से पहुँचाइए। नागरी लिपि मानव के पूर्वज की सृष्टि है, मानव मात्र की है। यहाँ से योरोप तक उसकी पहुँच है। यूरोपियों की लिपि-शैली नागरी थी। अक्षरों के रूप कुछ भी रहे हों। किन्हीं कारणों से सामीकुलों में भटककर अलफ़ा-बीटा के क्रम को थोड़े अन्तर के साथ अपना लिया। फिर पुराने संस्कारों से याद आया, तो स्वर-व्यंजन पृथक् माने। किन्तु उनके क्रम-स्थान जैसे के तैसे मिले-जुले रहे। सामीकुल की भाषाओं ने भी प्रमुख स्वर तीन ही माने हैं, ज़बर-ज़ेर-पेश (अ इ उ)। ै और ौ का उच्चारण अरबी, संस्कृत, अवधी और अपभ्रंश का एक जैसा है— (अई, अऊ)। किन्तु खड़ी बोली व उर्दू के अै, और औ, ऐनक, औरत जैसे। यह स्वरों की भिन्नता नहीं है, वरन् लहजा (प्रयत्न) की भिन्नता है।

पूर्ण वैज्ञानिक कोई वस्तु मनुष्य के पल्ले नहीं पड़ सकती। "पूर्ण विज्ञान" भगवान् का नाम है। सा-रे-ग-म-प-ध-नी, ये सात स्वर; उनमें मध्य, मन्द, तार; कुछ में तीव्र, कोमल—बस इतने में भारतीय संगीत बँधा है। उनमें भी कुछ अदा नहीं हो सकते, अनुभूति मात्र हैं। किन्तु क्या इतने ही स्वर हैं? संगीत के स्वरों का इनके ही बीच में अनंत विभाजन हो सकता है। जैसे अणु से परमाणु का, और उसमें भी आगे। किन्तु शास्त्र एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी। व्यवहार में उपर्युक्त षडज से निषाद तक की पकड़ में लाकर संगीत क़ायम है, क्या उसको रोककर इनके मध्य के स्वरों को पहले तलाश कर लिया जाय? तब तक संगीत को रोका जाय, क्योंकि वह पूर्ण नहीं है? क्या कभी वह पूर्ण होगा? पूर्ण

तो 'ब्रह्म' ही है। "बेस्ट् इज़् द ग्रेटेस्ट् ऍनिमी ऑफ़् गुड्।" (Best is the greatest enemy of Good.) इसलिए शशूल और शोल्दों की आड़ न ली जाय। नागरी लिपि पर्याप्त सक्षम है।

विश्व-व्यापकता के संदर्भ में नागरी लिपि के स्वरों का रूप।

लिखने के भेद— यदि नागरी को हिन्दी क्षेत्र की ही लिपि बनाये रखना है तो इ, उ, ए, ऐ, लिखने के अपने पुरानेपन के मोह में मुग्ध रहिए। और यदि उसे राष्ट्रलिपि अथवा विश्व तक में, यहाँ तक कि सामीकुल में भी आसानी से ग्राह्य बनाना चाहते हैं तो अि, अु, अे, अै लिखिए। किन्तु कोई मजबूर नहीं करता। विनोबा जी ने भी इसका आग्रह नहीं रखा। आकार और रूप का मोह व्यर्थ है। पुराने ब्राह्मी-शिलालेखों को देखिए। आपके मौजूदा रूप वहाँ जैसे के तैसे कहाँ हैं ?

संस्कृत के तिरस्कार से भाषा-विघटन।

मेरा स्पष्ट मत है कि "संस्कृत" को राष्ट्रभाषा होना चाहिए था। वह होने पर, यह भाषा-विवाद ही न उठता। सबको ही (हिन्दी-भाषी को भी) समान श्रम से संस्कृत सीखने से हमारा अपार ज्ञान-भण्डार सबको प्रत्यक्ष होता, स्पर्धा-कटुता का जन्म न होता और हिन्दी की पैठ में भी प्रगति ही होती। उर्दू-हिन्दी की अपेक्षा, अन्य सभी भारतीय भाषाएँ, संस्कृत के अधिक समीप हैं। इसलिए कि प्राय: सभी भारतीय लिपियों में संस्कृत भाषा उसी प्रकार अबाध गति से लिखी जाती है जिस प्रकार नागरी लिपि में। संस्कृत ही एक भाषा है जिसकी अनेक लिपियाँ अपनी हैं। किन्तु अब वह बात हाथ से बेहाथ है; अब "हिन्दी" ही राष्ट्रभाषा सबको मान्य होना चाहिए। यह इसलिए कि अन्य भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भारतीय भाषा है जो देश के हर स्थल में कमोबेश प्रविष्ट है।

अब क्या करना है ?

सार यह कि हुज्जत कम, काम होना चाहिए। शास्त्र पर व्यवहार प्रबल है। समय बड़ा बलवान है, वह आवश्यकतानुसार ढलाई कर देता है। हिन्दी-क्षेत्र में ही घूम-घूमकर प्रतिमा-अनावरण, हिन्दी का महिमा-गान, अनुवादों की धूम, अमुक भाषा की हिन्दी को यह देन, अमुक भाषा में हिन्दी की यह छाप— यह सब दिशाविहीनता, क़िलेबन्दी और अभियान त्यागकर नागरी लिपि में विश्व का साहित्य लाइए। टूटी-फूटी ही सही, हिन्दी बोलना भी— ("ही" नहीं बल्कि "भी") बोलने का अभ्यास कीजिए। लिपि और भाषा की सार्थकता होगी। मानवमात्र का कल्याण होगा। हमारी एकराष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व चरितार्थ होगा।

—नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ।

अनुवादकीय

प्रस्तुत द्वितीय सैंची (जिल्द) में कृष्णावतार प्रसंग को ही रखा जा सका है। कृष्णावतार गुरु गोबिंदसिंहजी की अनुपम कृति है, जिसके बारे में प्रथम सैंची की भूमिका में थोड़ा सा संकेत दिया जा चुका है कि किस प्रकार यह रचना सिक्ख-समुदाय में, जहाँ एक ओर भ्रम एवं पाखंड-पूर्ण जीवन व्यतीत करनेवालों को झकझोरती है, वहाँ साथ ही साथ स्वाभिमानपूर्ण जीवन-यापन का भी संदेश देती है। कृष्णावतार ने सभी चौबीस अवतारों में से शायद गुरुजी का ध्यान अधिक आकृष्ट किया है। तभी इस रचना की छंद-रचना सर्वाधिक है। इस रचना में गुरुजी ने यह स्थापित किया है कि सच्ची आध्यात्मिकता, नैतिकता को व्यवहारिक जीवन में कार्यान्वित करने में ही है। यदि हमारा ज्ञान जीवन को एक दिव्य अर्थ, दिव्य दिशा प्रदान नहीं कर पाता है तो ऐसा ज्ञान व्यर्थ है। भक्ति भी यदि जीवन में एक नई रचनात्मक ऊर्जा उत्पन्न नहीं करती तो ऐसी भक्ति भी मात्र अंधानुकरण और पाखंड है। कृष्णावतार में ही वे कहते हैं :—

धन्य जीउ ताको जग में मुख ते हरि चित्त में जुद्ध बिचारे।
देह अनित्त न नित्त रहै जस नाव चड़े भवसागर तारे॥
धीरज धाम बनाइ रहे तन बुद्धि सो दीपक ज्यों उजियारे।
ज्ञानहि की बढ़नी मनो हाथ लै कातरता कुतवार बुहारे॥

(कृष्णावतार पद २४९२ पृष्ठ ४०५-४०६)

उनके उपर्युक्त सवैये में हम जहाँ भक्ति-शक्ति, संसार की नश्वरता और शुभ कर्मों की प्रेरणा तथा धैर्य आदि गुणों को मानव के आभूषणों के रूप में चित्रित पाते है, वहीं साथ ही साथ अंतिम पंक्ति में ज्ञान के वास्तविक कार्य की समीक्षा भी पाते हैं। ज्ञान का अर्थ शास्त्रार्थों के माध्यम से दूसरों को भयभीत करना मात्र ही नहीं अपितु ज्ञान रूपी झाड़ू से तो मानवता में व्याप्त संत्रास को समाप्त करना है, उसे साफ़ करके संशय-विमुक्त जीवन प्रदान करना है।

दशम ग्रंथ के कृतित्व के बारे में अभी सिक्ख विद्वानों में पूर्ण एक मत नहीं है, परन्तु इतना तो निस्संकोच कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण दशम ग्रंथ में अन्य प्रबंधों की भाँति कुछ क्षेपक तो पाए जा सकते हैं परन्तु इस सपूर्ण रचना को गुरुकृति न मानना इस महान ग्रंथ के रचयिता के प्रति अन्याय ही होगा।

दूसरी सैंची इतनी शीघ्र प्रकाशित कर सकने के लिए मैं भुवन वाणी ट्रस्ट के प्रमुख न्यासी श्री नन्दकुमार अवस्थी जी का आभारी हूँ, क्योंकि यह सारा कार्य उनकी सतत प्रेरणा का ही फल है।

जोधसिंह
रीडर, पंजाबी विश्वविद्यालय, शोध विभाग, पटियाला — एम० ए० पीएच्० डी०, साहित्यरत्न
दिनांक २६ १०-८३

प्रकाशकीय प्रस्तावना

विषय-प्रवेश

भुवन वाणी ट्रस्ट के 'देवनागरी अक्षयवट' की देशी-विदेशी प्रकाण्ड-शाखाओं में, संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी, कश्मीरी, गुरमुखी, राजस्थानी, सिन्धी, गुजराती, मराठी, कोंकणी, मलयाळम, तमिळ, कन्नड, तेलुगु, ओड़िया, बँगला, असमिया, मैथिली, नेपाली, अंग्रेज़ी, हिब्रू, ग्रीक, अरामी आदि के वाङ्मय के अनेक अनुपम ग्रन्थ-प्रसून और किसलय खिल चुके हैं, अथवा खिल रहे हैं। इस नागरी अक्षयवट की गुरमुखी शाखा में प्रस्तुत यह 'दसम गुरूग्रन्थ साहिब' ग्रन्थ तीसरा पल्लव-रत्न है।

गुरमुखी लिपि की अलौकिकता

विश्व की प्रायः सभी लिपियाँ अपने निजी क्षेत्र के नाम पर प्रसिद्ध हैं। किन्तु संस्कृत, देवनागरी और गुरमुखी इसका अपवाद हैं। ये संस्कृति और धर्म का प्रतीक हैं। बल्कि गुरमुखी का तो नाम ध्यान में आते ही सन्तों और गुरुओं का स्मरण हो आता है। रोम-रोम में एक पवित्रता छा जाती है। वैसे तो गुरमुखी में सभी प्रकार का साहित्य मौजूद है, परन्तु गुरमुखी का नाम लेते ही 'श्री आदि गुरूग्रन्थ साहिब' का पवित्र स्मरण मूर्तमान हो जाता है।

श्री दसम गुरूग्रन्थ की दूसरी सैंची का नागरी में अवतरण

लोकप्रख्यात धर्मग्रन्थ 'श्री गुरूग्रन्थ साहिब' का पावन ग्रन्थ ३७६४ पृष्ठों और चार सैंचियों में पहले ही प्रकाशित होकर हिन्दी-जगत के सम्मुख अवतीर्ण हो चुका और जनता ने उत्कण्ठा और भावावेश में उसका स्वागत किया। इस सोल्लास प्रतिक्रिया से प्रोत्साहित होकर हमने तत्काल श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब के नागरी रूपान्तर की योजना बनायी और श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब की प्रथम सैंची साल भर पूर्व पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत हो चुकी है। हमारे माननीय अनुवादक श्री डॉ० जोधसिंह

एम्० ए०, पीएच्० डी०, साहित्यरत्न के अनवरत श्रम के फलस्वरूप इतनी शीघ्र दूसरी सैंची भी आज पाठकों को अर्पित है। शेष दो सैंचियाँ मुद्रित हो रही हैं।

प्रथम सैंची में दी प्रकाशकीय प्रस्तावना

ट्रस्ट का भाषाई उद्देश्य, लिप्यन्तरण की महिमा, अब तक का कार्यकलाप, पवित्र गुरुवाणी की भाषा, श्री आदि गुरूग्रन्थ साहिब का अति विशुद्ध नागरी लिप्यन्तरण तथा सर्वप्रथम हिन्दी अनुवाद का अवतरण, हिन्दी-जगत में उनका स्वागत, राष्ट्रीय एकता और विश्वबन्धुत्व की भावना, गुरुवाणी की अमृतवर्षा, दशगुरु-अवतार, क्रमशः शान्त-रस से वीर, और वीर से रौद्र-रस का प्राकट्य, गुरुमुख-मनमुख, ज्योति में ज्योति का समावेश आदि पर एक विशद प्राक्कथन, श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब की प्रथम सैंची में दिया जा चुका है। अब प्रकाशकीय प्रस्तावना का परिशिष्टांश चौथी सैंची में प्रस्तुत किया जायगा।

श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब का नागरी लिप्यन्तरण

दसम गुरूग्रन्थ की भाषा "आदि ग्रन्थ" की भाषा से पृथक् है। इसमे प्राचीन ब्रजभाषा में कवित्तों की रचना है। मूल पाठ गुरमुखी लिपि से पृथक् न हो और काव्य के पढ़ने के धारा-प्रवाह में विघ्न न हो, इसके लिए नागरी लिप्यन्तरण में विशेष सतर्कता रखी गई है। ग्रन्थ का नागरी लिप्यन्तरण ट्रस्ट के कुशल विद्वानों ने बड़े श्रम और अनन्य निष्ठा से किया है।

गुरमुखी एवं नागरी ग्रन्थों के पाठ के मिलान की सुविधा

गुरुमुखी और हिन्दी संस्करण में कौन पाठ एक-दूसरे में कहाँ है, यह जानने के लिए प्रथम सैंची के अनुसार इस दूसरी सैंची में भी हिन्दी मूल पाठ के बीच में छोटे आकार में पृष्ठ-संख्या दी गई है। उदाहरण— हिन्दी संस्करण का देखिए पृष्ठ ४४१। उसमें मूलपाठ में एक स्थल पर छपा है (मू०सं०५८८)। समझिए कि पृ० ४४१ का यह नागरी पाठ गुरमुखी मूल ग्रन्थ में ५८८ पृष्ठ पर और गुरमुखी ग्रन्थ के पृष्ठ ५८८ का यह पाठ नागरी ग्रन्थ के ४४१ पृष्ठ पर प्राप्त है।

आभार-प्रदर्शन

सर्वप्रथम हम सरदार डॉ० जोधसिंह जी के कृतज्ञ हैं, जिन्होंने निस्पृह

भाव से ट्रस्ट के आग्रह पर अनुवाद जैसे जटिल और गहन कार्य को राष्ट्रहित में अति श्रम एवं तत्परता से किया। सर्वाधिक श्रेय उनको है।

सदाशय श्रीमानों और उत्तरप्रदेश शासन (राष्ट्रीय एकीकरण विभाग) के प्रति भी हम आभारी हैं, जिनकी अनवरत सहायता से 'भाषाई सेतुकरण' के अन्तर्गत अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन चलता रहता है।

सौभाग्य की बात है कि भारत सरकार के राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा शिक्षा एवं संस्कृति मंत्रालय ने राष्ट्रभाषा हिन्दी-सहित सभी भाषाओं की समृद्धि और व्यापकता के लिए एक जोड़लिपि "नागरी" के प्रसार पर उपयुक्त बल दिया। उनकी उल्लेखनीय सहायता से हमको विशेष बल मिला है और उसी के फलस्वरूप गुरमुखी— श्री दसम गुरूग्रन्थ साहिब की दूसरी सेंची का प्रकाशन प्रस्तुत वर्ष में सम्पूर्ण हो सका है।

विश्ववाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा।
पहन नागरी पट, सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा॥
अमर भारती सलिला की 'गुरमुखी' सुपावन धारा।
पहन नागरी पट, 'सुवेवि' ने भूतल-भ्रमण विचारा॥

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
नागरी-गुरमुखी वर्णमाला चार्ट	३
अनुवादकीय	९
प्रकाशकीय प्रस्तावना	१०
विषय-सूची	१३
कृष्ण उवाच नन्द के प्रति	१७
समस्त गोपियों का बिलाप	१८
कृष्ण द्वारा गायत्री-मंत्र सीखना	२४
उग्रसेन को राज्य देना	२५
धनुष-विद्या सीखना	२५
उद्धव को व्रज भेजना	२८
गोपी-उद्धव-संवाद और विरह-नाटक-कथन	३७
कुब्जागृह-गमन-कथन	५३
अक्रूर के घर कृष्णजी का आगमन	५६
अक्रूर को बुआ के पास भेजना	५९
उग्रसेन को राज देना	६४
युद्ध-प्रबन्ध प्रारम्भ	६५
जरासन्ध-युद्ध-कथन	६५
सेना-सहित अमिटसिंह-वध-कथन	९३
पंच भूप-युद्ध-कथन	१२२
बारह राजाओं का युद्ध-कथन	१२४
पंच भूप-युद्ध-कथन	१३९
दस भूप-युद्ध-कथन	१४०
दस भूप-सहित अनूपसिंह-युद्ध-कथन	१४१
करमसिंह आदि पंच भूप-युद्ध-कथन	१४३
खड्गसिंह-युद्ध-कथन	१४६
राजा जरासंध को पकड़कर छोड़ना	२२०
कालयवन को लेकर जरासंध का पुन: आगमन	२६३
जरासंध को पकड़कर छोड़ना	२६९
श्रीकृष्ण द्वारा द्वारिकापुरी-निर्माण-वर्णन	२७४
बलभद्र-विवाह-वर्णन	२७७
रुक्मिणी-विवाह-कथन	२७८
प्रद्युम्न का जन्म-कथन	२८९
प्रद्युम्न का शंबर का वध कर रुक्मिणी को मिलना	२९२
सत्राजित का सूर्य से मणि लाना और द्वारा वध	२९४
सत्राजित को मणि प्रदान करना	३००

विषय

सत्राजित की पुत्री का विवाह-कथन
लाक्षागृह-प्रसंग
कृष्णजी का दिल्ली-आगमन-कथन
उज्जैन राजा की कन्या का विवाह-कथन
इन्द्र का भूमासुर के दुःख से (पीड़ित होकर) आगमन
भूमासुर-युद्ध-कथन
भूमासुर के पुत्रों को राज्य-प्रदान और सोलह हज़ार राजकुमारियों से विवाह-कथन
इन्द्र को जीतकर कल्पवृक्ष लाना
रुक्मिणी के साथ कृष्णजी की हास्य-क्रीड़ा-कथन
अनिरुद्धजी का विवाह-कथन
ऊषा का विवाह-कथन और सहस्रबाहु का गर्व-हरण
डिग (नृग) राजा का उद्धार-कथन
गोकुल में बलभद्रजी का आगमन
शृगाल का दूत द्वारा संदेश भेजना कि "मैं कृष्ण हूँ"
सुदक्ष-युद्ध-कथन
वानर-युद्ध-कथन
गजपुर के राजा की कन्या का वरण
नारद-आगमन-कथन
जरासंध-वध-कथन
दिल्ली आना और राजसूय यज्ञ-वर्णन
जरासंध को मारकर सब राजाओं को छुड़ाना
राजसूय यज्ञ और शिशुपाल-वध-कथन
श्रीकृष्ण क्रोधित हुए और राजा युधिष्ठर का क्षमा माँगना
राजा युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ करना
युधिष्ठिर का सभा-निर्माण-कथन
बकस दैत्य-युद्ध-कथन
विदूरथ दैत्य-वध-कथन
बलभद्रजी का तीर्थ-गमन-कथन
सुदामा-वार्त्ता-कथन
सूर्यग्रहण के दिन कुरुक्षेत्र-आगमन-कथन
देवकी के सभी छः पुत्र लाकर देना
सुभद्रा-विवाह-कथन
मिथिलापुर के राजा और ब्राह्मण की कथा तथा भस्मांग की छल करके मारकर रुद्र को छुड़ाना

विषय	पृष्ठ
शुकदेवजी का राजा परीक्षित से कथन	३९४
भृगु द्वारा लात-प्रहार का प्रसंग-कथन	३९७
अर्जुन का ब्राह्मण के निमित्त चिता सजाकर स्वयं भस्म होने लगना	३९९
श्रीकृष्ण जी का स्त्रियों के साथ जल-विहार करना	४०१
प्रेमकथा-कथन	४०३
नर-अवतार-कथन	४०६
बुद्ध-अवतार तेईसवाँ कथन	४०७
निष्कलंकी चौबीसवाँ अवतार-कथन	४०८
भल भाग भया इह्नि संभल	४२७
देशान्तर-युद्ध-कथन	४६५
पूर्ब दिशा-युद्ध-कथन	४७२
चौबीसवाँ अवतार-कथन	४७३
मेंहदी-मीर-वध-कथन	४८४
ब्रह्मा-अवतार-कथन	४८५
प्रथम वाल्मीकि-अवतार-कथन	४९०
द्वितीय अवतार ब्रह्मा-कश्यप-कथन	४९२
तृतीय अवतार शुक्र-कथन	४९३
चतुर्थ ब्रह्मा, बृहस्पति का वर्णन	४९३
पंचम अवतार ब्रह्मा, व्यास, मनु राजा का राज-कथन	४९४
पृथु राजा का राज्य-वर्णन	४९६
ययाति राजा का राज्य-वर्णन	५०५
बेन राजा का राज-कथन	५०७
मान्धाता का राज-कथन	५०८
दिलीप का राज-कथन	५१०
राजा रघु का राज-कथन	५१२
अज राजा का राज्य-कथन	५१८
ब्रह्मा छठा ऋषि-अवतार-कथन	५३४
कालिदास-अवतार-कथन	५३५
रुद्र-अवतार-कथन	५३६
दत्तात्रेय-अवतार	५४०
अकाल को प्रथम गुरु करना	५५२
द्वितीय गुरु-कथन	५५३

विषय	पृष्ठ
बक चतुर्थ गुरु-कथन	५६४
बिड़ाल पाँचवाँ गुरु-कथन	५६५
धुनियाँ गुरु-कथन	५६६
मछेरा सातवाँ गुरु-कथन	५६६
दासी आठवाँ गुरु-कथन	५६७
वणिक् नौवाँ गुरु-कथन	५६८
मालिन दसवाँ गुरु-कथन	५६९
सुरथ ग्यारहवाँ गुरु-कथन	५७०
बालिका बारहवाँ गुरु-कथन	५७४
भृत्य तेरहवाँ गुरु-कथन	५७६
चौदहवाँ गुरु प्रारम्भ	५७८
बाण-निर्माता पंद्रहवाँ गुरु-कथन	५८४
सोलहवें गुरु चील का कथन	५८७
माहीगीर (डुबोर) पक्षी सत्रहवाँ गुरु-कथन	५८८
शिकारी अठारहवाँ गुरु-वर्णन	५८९
नलिनी-शुक उन्नीसवाँ-गुरु-कथन	५९२
व्यापारी बीसवाँ गुरु-कथन	५९६
तोते को पढ़ाता हुआ व्यक्ति, इक्कीसवाँ गुरु-कथन	५९८
हलवाहा बाईसवाँ गुरु-कथन	५९९
यक्षणी स्त्री तेईसवाँ गुरु-कथन	६०१
चौबीसवाँ अवतार-कथन	६०३
पारसनाथ रुद्र-अवतार-कथन	६०८
नृप विवेक-दल-कथन	६६१
आदि पुरुष महिमा-वर्णन	६८१
रामकली पातिशाही १०	६८५
रे मन ऐसो	६८५
मित्र पिआरे नूं	६८८
३२ सवैये	६९१
जागत जोत जपै निस बासुर	६९१
सत सदैव	६९३
खालसा महिमा	७००
जो किछु लेख लिख्यो बिधना	७००
जुध जिते इनही के प्रसादि	७००
सेव करी इनही की भावत	७००

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

स्री वाहिगुरू जी की फ़तह ॥

श्री दसम ग्रंथ साहिब

(नागरी लिपि में)

हिन्दी व्याख्या सहित

अथ कान्ह जू नंद सो बाच ॥

॥ सवैया ॥ चलि आइकै सो फिर नंद के धाम किधौ तिन सौ बिनती अति कीनी । हउ बसुदेवहि को सुत हौ इह भांत कह्यो तिन मानकै लीनी । जाहु कह्यो तुम धामन को बतिया सुन मोह प्रजा ब्रिज भीनी । नंद कह्यो सु कह्यो ब्रिज की बिन कान्ह भई सु पुरी सभ हीनी ॥ ८५७ ॥ ॥ सवैया ॥ सीस झुकाइ गयो ब्रिज को अति ही मन भीतर शोक भयो है । जिउँ कोऊ तात मरे पछुतात है प्यारे कोऊ मनो भ्रात छयो है । पै जिम राज बडे रिपराज की पैरन

कृष्ण उवाच नन्द के प्रति

॥ सवैया ॥ कृष्ण तब नन्द के स्थान पर आये और रूठते हुए उन्होंने कहा कि क्या मैं वसुदेव का पुत्र हूँ ? नन्द ने सबसे कहा कि अब ब्रज वासी सब अपने-अपने घरों को जायँ । इस प्रकार नन्द के कहने से सब लोग चले गये और कृष्ण के बिना ब्रजमंडल शोभा-विहीन हो गया ॥ ८५७ ॥ ॥ सवैया ॥ नन्द भी सिर झुकाकर मन में अत्यन्त शोकाकुल होते हुए ब्रज को चले गए । वे इस प्रकार शोकपीडित दिखाई दे रहे हैं मानो कोई पिता की मृत्यु या प्यारे भाई की मृत्यु पर दुखी हो अथवा किसी बड़े राजा का किसी शत्रु द्वारा राज्य और सम्मान छीन लिया गया हो । कवि कहता है कि

मैं पति छोड़ गयो है। यों उपजी उपमा बसुदे ठग स्याम मनो धन लूट लयो है ॥ ८५८ ॥ ॥ नंद बाच पुरजन सो ॥ ॥ दोहरा ॥ नंद आइ ब्रिज पुर बिखै कही क्रिशन की बात। सुनत शोक कीनो सभै रोदन कीनो मात ॥ ८५९ ॥ ॥ जसुधा बाच ॥ ॥ सवैया ॥ बचयो जिन तात बडे अहि ते जिनहू बक बीर बली हनि दइया। जाहि मर्यो अघ नाम महा रिपु पै पिअरवा मुसलीधर भइया। जो तपस्या करि कै प्रभ ते कबि स्याम कहै पर पाइन लइया। सो पुरबासन छीन लयो हम ते सुनिये सखी पूत कन्हइया ॥ ८६० ॥

सभ ग्वारनीआ बिरलाप ॥

॥ सवैया ॥ सुनिकै इह बात सभै मिलि ग्वारन पै मिलि कै तिन शोक सु कीनो। आनद दूरि कर्यो मन ते हरि ध्यान बिखै तिनहू मन दीनो। धरनी पर सो मुरझाइ गिरी सु पर्यो तिनके तन ते सु पसीनो। हाह कुलैन लगी सभि ही सु भयो सुख ते तिन को तन हीनो ॥ ८६१ ॥ ॥ सवैया ॥ अति

ऐसा लग रहा है, मानो वसुदेव रूपी ठग ने श्याम रूपी धन लूट लिया हो ॥ ८५८ ॥ ॥ नन्द उवाच पुरवासियों के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ नन्द ने ब्रज में आकर कृष्ण की बात सबको बतायी, जिसे सुनकर सभी शोकाकुल हो उठे और माता यशोदा भी रोने लगी ॥ ८५९ ॥ ॥ यशोदा उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जिसने अपने पिता को विशाल सर्प से बचाया, जिसने बकासुर नामक बली का वध किया, जिस प्यारे हलधर के भाई ने अघासुर नामक राक्षस का वध किया और जिसके चरणों की प्राप्ति प्रभु की तपस्या करने पर होती है, हे सखी ! उस मेरे प्रभु कृष्ण को मथुरा नगर के वासियों ने मुझसे छीन लिया ॥ ८६० ॥

समस्त गोपियों का विलाप

॥ सवैया ॥ यह बात सुनकर सभी गोपियाँ शोकाकुल हो उठीं। उनके मन का आनन्द समाप्त हो गया और सबने कृष्ण में अपना ध्यान लगा दिया। उनके तन से पसीना बहने लगा और वे मुरझाकर धरती पर गिर पड़ीं। वे हाहाकार करने लगीं और तन-मन सुख-विहीन हो उठा ॥ ८६१ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की प्रीति में व्याकुल होकर वे कृष्ण के गुण गाती हैं और

आतुर ह्वै हरि प्रीतहि सो कब स्याम कहै हरि के गुन गावै। सोरठ सुद्ध मलार बिलावल सारंग भीतर तान बसावै। ध्यान धरै तिह ते जिय मै तिह ध्यानहि ते अति ही दुखु पावै। यौ मुरझावत है मुख ता ससि जिउँ पिख कंज मनो मुरझावै॥ ८६२॥ पुरबासन संग रचे हरि जू हमहूँ मन ते जदुराइ बिसारी। त्याग गए हमको इह ठउर हमू पर ते अति प्रीत सु टारी। पै कहिकै न कछू पठियो तिह तीयन के बसि भे गिरधारी। एक गिरी कहूँ ऐसे धरा इक कूकत है सु हहा री हहा री॥ ८६३॥ ॥ सवैया॥ इह भाँत सो ग्वारनि बोलत है अपने (मू०ग्रं०३६८) जिय मै अति मान उदासी। शोक बढ्यो तिनके जिय मै हरि डार गए हित की तिन फासी। अउ रिस मान कहै मुख ते जदुराइ न आनत लोगन हासी। त्याग हमै सु गए ब्रिज मै पुरबासन संग फसे ब्रिज-बासी॥ ८६४॥ ॥ सवैया॥ रोदन कै सभ ग्वारनिया मिलि ऐसे कह्यो अति होइ बिचारी। त्याग ब्रिजै मथुरा मै गए तजि नेह अनेह की बात बिचारी। एक गिरै धर यौ कहिकै

सोरठ, शुद्ध मल्हार, बिलावल, सारंग आदि की तान मन में बसा रही है। मन में उसका ध्यान कर रही हैं और उस कृष्ण के ध्यान से अत्यन्त दुखी हो रही हैं। वे इस प्रकार मुरझा रही हैं जैसे चन्द्रमा को देखकर रात्रि-वेला में कमल मुरझा जाते हैं॥ ८६२॥ अब तो कृष्ण नगरवासियों के साथ लिप्त हो गए और हम लोगों को उन्होंने मन से भुला दिया। हमको वे यहीं छोड़ गए है, हम भी अब उनकी प्रीति का त्याग करती हैं। कितने आश्चर्य की बात है कि वहाँ वे स्त्रियों के इतना वश में हो गये हैं कि उन्होंने हमारे लिए कोई संदेशा तक नहीं भेजा। यह कहते हुए कोई तो धरती पर गिर पड़ी और कोई करुण चीत्कार करने लगी॥ ८६३॥ ॥ सवैया॥ इस प्रकार अत्यन्त उदास होकर गोपियाँ आपस में बातचीत कर रही हैं। उनके हृदय में शोक बढ रहा है, क्योंकि प्रेम की फाँस डालकर कृष्ण उन्हें त्यागकर चले गये है। कभी-कभी वे क्रोधित होकर यह भी कहती हैं कि क्या कृष्ण को लोगों के व्यंग्य-बाणों की भी कोई परवाह नहीं है, जो वह हमको तो व्रज में छोड़ गये हैं और स्वयं नगरवासियों के संग जा फँसे॥ ८६४॥ ॥ सवैया॥ रोती हुई सब गोपियाँ विनम्र होकर कह रही हैं कि प्रेम और विरह के विचार का परित्याग कर कृष्ण व्रज से मथुरा चले गये। यह कहते हुए कोई धरती पर गिर रही है और कोई सँभलते हुए कह रही है कि हे सखियो मेरी बात सुनो

इक ऐसे सँभार कहै ब्रिजनारी। री सजनी सुनियै बतियाँ ब्रिज नार सभै ब्रिजनाथ बिसारी ॥ ८६५ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ आँखन आगहि ठाढ लगे सखी देत नही किह होत दिखाई। जा संग केल करे मन मै तिह ते अतिही जिय मै दुचिताई। हेत तज्यो ब्रिजबासन सौ न संदेस पठ्यो जिय कै सु ढिठाई। ताही की ओर निहारत है पिखियै नही स्याम हहा मोरी माई ॥ ८६६ ॥ ॥ बारहमाह ॥ ॥ सवैया ॥ फागन मै सखी डार गुलाल सभै हरि सिउ बन बीच रमै। पिचकारन लै करि गावति गीत सभै मिलि ग्वारन तउन समै। अति सुंदर कुंजगलीन के बीच किधौ मन के करि दूर गमै। अरु त्याग तमै सभ धामन की इह सुंदरि स्याम की मान तमै ॥ ८६७ ॥ ॥ सवैया ॥ फूल सी ग्वारन फूल रही पटि रंगन के फुन फूल लिए। इक स्याम सिगार सु गावत है पुन कोकलका सम होत जिए। रितना महि स्याम भयो सजनी तिह ते सभ छाड सु साज दिए। पिखि जा चतुरानन चउक रहै जिह देखत होत हुलास हिए ॥ ८६८ ॥ एक समै रहै किसक फूलि सखी तह पउन बहै सुखदाई। भउर

ब्रजनाथ श्रीकृष्ण ने ब्रज की सभी नारियों को भुला दिया है ॥ ८६५ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ आँखों के आगे हमेशा श्रीकृष्ण खड़े रहते हैं, इसलिए और कुछ दिखाई नहीं देता। जिसके साथ उन्होंने केलि-क्रीड़ा की थी, उसी को स्मरण कर अब मन में दुबिधा बढ़ रही है। उन्होंने ब्रजवासियों के प्रेम को त्याग दिया है और अपना हृदय कठोर कर लिया है कि कोई संदेश तक नही भेजा। हे मेरी माँ! हम उसी श्याम की ओर देख रही हैं, परन्तु वह दिखाई नहीं देता ॥ ८६६ ॥ ॥ बारहमासा ॥ ॥ सवैया ॥ फागुन के महीने में सखियाँ गुलाल डालती हुई वन के बीच में कृष्ण के साथ रमण करती है और हाथ में पिचकारियाँ लेती हुई सुन्दर गीत गाती हैं। मन के शोक को दूर करती हुई कुंजगलियों में दौड़ रही हैं और श्यामसुन्दर के प्रेम मे वे अपने घर की मान-मर्यादा भी भूल रही हैं ॥ ८६७ ॥ ॥ सवैया ॥ फूलों के समान गोपियाँ खिली हुई और उनके वस्त्रों में भी फूल लगे हुए हैं। वे शृंगार करके कृष्ण के लिए इस प्रकार गीत गा रही हैं, मानो कोयल गा रही हो। अब वसंत ऋतु है, इसलिए उन्होंने सब कृत्रिम साज-शृंगार को छोड दिया है। उनकी शोभा को देखकर ब्रह्मा भी आश्चर्यचकित हो रहे हैं ८६८ एक बार पलास के फूल खिल रहे थे और सुखदायक पवन बह

गुंजारत है इत ते उत ते मुरली नंदलाल बजाई । रीझ रह्यो सुनिकै सुरमंडल ता छबि को बरन्यो नही जाई । तउन समै सुखदाइक थी रित अउसर याहि भई दुखदाई ।। ८६९ ।। जेठ समै सखी तीर नदी हम खेलत चित्त हुलास बढाई । चंदन सो तन लीप सभै सु गुलाबहि सो धरनी छिरकाई । लाइ सुगंध भली कपर्‌यो पर ताकी प्रभा बरनी नहि जाई । तौन समै सुखदाइक थी इह अउसर स्याम बिना दुखदाई ।। ८७० ।। पउन प्रचंड चलै जिह अउसर अउर (मू०ग्रं०३६९) बघूलन धूर उडाई । धूप लगै जिह मास बुरी सु लगै सुखदाइक सीतल जाई । स्याम को संग सभै हम खेलत सीतल पाटक काबि छटाई । तउन सभै सुखदाइक थी रित अउसर याहि भई दुखदाई ।। ८७१ ।। ।। सवैया ।। जोर घटाघन आए जहाँ सखी बूँदन मेघ भली छबि पाई । बोलत चात्रिक दादर अउ घन मोरन पै घनघोर लगाई । ताही समै हम कान्हर के संग खेलत थी अति प्रेम बढाई । तउन समै सुखदाइक थी रित अउसर याहि भई दुखदाई ।। ८७२ ।। मेघ परै कबहूँ उघरै

रहा था । इधर भौंरे गुंजार कर रहे थे और उधर श्रीकृष्ण ने मुरली बजाई थी । उनकी मुरली को सुनकर सुरमंडल भी रीझ रहा था और उस छवि का वर्णन नहीं किया जा सकता । उस समय वह ऋतु सुखदायी थी और आज वही दुखदायी हो गयी है ।।८६९।। जेठ के महीने में, हे सखी ! हम चित्त मे प्रसन्न होकर नदी के किनारे क्रीड़ा किया करते थे । तन पर चंदन का लेप किया करते थे और धरती पर गुलाब-जल छिड़का करते थे । वस्त्रों में सुगंध लगाते थे और उस शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता । वह अवसर कितना सुखदायक था, परन्तु श्याम के बिना अब वही दुःखदायक हो गया ।। ८७० ।। जिस समय पवन प्रचंड वेग से चलता था, बगूले उठते थे और धूप कष्टदायक होती थी, वह समय भी हम सबको सुखदायक प्रतीत होता था । हम सब एक-दूसरे पर छींटे डालते हुए कृष्ण के साथ खेलते थे । वह समय अत्यन्त सुखदायक था, परन्तु अब वही समय अत्यन्त कष्टदायक लग रहा है ।। ८७१ ।। ।। सवैया ।। देखो, हे सखी ! घटाएँ घिर आयी हैं और वर्षा की बूंदों से कितनी सुन्दर छवि लग रही है । चातक, मोर और मेंढकों की ध्वनि गूँज रही है । ऐसे ही समय में हम सब कृष्ण के संग प्रेम-क्रीड़ा किया करती थीं । वह समय कितना सुखदायक था और अब यह समय कितना दुःखदायक हो गया है ८७२ कभी मेघ बरस जाते थे और पेड़ की छाया सुखदायक

सखी छाइ लगै द्रुम की सुखदाई । स्याम के संग फिरैं सजनी रंग फूलन के हम बस्त्र बनाई । खेलत क्रीड़ करै रस की इस अउसर कउ बरन्यो नही जाई । स्याम समै सुखदाइक थी रित स्याम बिना अति भी दुखदाई ।। ८७३ ।। मास असू हम कान्हर के संग खेलत चित्त हुलास बढाई । कान्ह तहाँ पुन गावत थो अति सुंदर रागन तान बसाई । गावत थी हमहूँ संग ताही के ता छबि को बरन्यो नही जाई । ता संग मै सुखदाइक थी रित स्याम बिना अब भी दुखदाई ।। ८७४ ।। कातक की सखी रास बिखै रुत खेलत थी हरि सो चित लाई । सेतहु ग्वारन के पट छाजत सेत नदी तह धार बहाई । भूखन सेतह गोपन के अरु मोतनहार भली छबि पाई । तउन समै सुखदाइक थी रित अउसर याहि भई दुखदाई ।। ८७५ ।। ।। सवैया ।। मघ्र समै सभ स्याम के संग हुइ खेलत थी मन आनंद पाई । सीत लगै तब दूर करै हम स्याम के अंग सो अंग मिलाई । फूल चँबेली के फूल रहे जिह नीर घट्यो जमुना जिय आई । तउन समै सुखदाइक थी रित अउसर याहि भई दुखदाई ।। ८७६ ।।

प्रतीत होती थी । फूलों के वस्त्र पहनकर हम श्याम के संग घूमती थीं। विचरण करते हुए हम प्रेम-क्रीड़ा किया करती थीं । उस अवसर का वर्णन करना असंभव है । श्याम के रहते वह ऋतु सुखदायक थी और अब श्याम के बिना वही ऋतु दु:खदायक हो गई है ।। ८७३ ।। आश्विन मास में हम उल्लसित होकर कृष्ण के संग खेलती थीं । कृष्ण मस्त होकर सुंदर रागों की तान बजाते-गाते थे । हम भी उसके संग गाती थीं और उस छवि का वर्णन नही किया जा सकता । उसके साथ रहते थे । वह ऋतु सुखदायक थी, परन्तु अब वही दु:खदायक हो गई है ।। ८७४ ।। कातिक मास में सुख मानकर हम सब रासलीला में मग्न होकर कृष्ण के साथ खेला करती थीं । श्वेत नदी की धारा में गोपियाँ भी श्वेत वस्त्र पहनकर शोभायमान होती थीं । गोप भी श्वेत (फूलों के) आभूषण पहनकर मोतियों के हारों को धारण कर भले प्रतीत होते थे । वह समय कितना सुखदायक था और अब यह समय अत्यन्त दु:खदायक हो गया है ।। ८७५ ।। ।। सवैया ।। मार्गशीर्ष मास में आनंदित होकर हम श्याम के संग खेलती थीं । जब शीत का अनुभव होता था तो श्याम के अंगों से अंग मिलाकर हम ठंड दूर किया करती थीं । चमेली के फूल खिलने से रह गये हैं और यमुना का जल भी शोक में घट गया है। हे सखी ! कृष्ण के साथ रहने की ऋतु कितनी सुखदायक थी और यह ऋतु

बीच सरद्रुत के सजनी हम खेलत स्याम सो प्रीत लगाई। आनंद कै अति ही मन मै तजकै सभ ही जिय की दुचिताई। नारि सभै ब्रिज कीन बिखै मन की तजि कै सभ शंक कन्हाई। ता संग सो सुखदाइक थी रित स्याम बिना अब भी दुखदाई ॥ ८७७ ॥ ॥ सवैया ॥ माघ बिखै मिलकै हरि सो हम सो रस रास की खेल मचाई। कान बजावत थो मुरली (मू०ग्रं०३७०) तिह अउसर को बरन्यो नही जाई। फूल रहे तिह फूल भले पिखियै जिह रीझ रहे सुरराई। तउन समै सुखदाइक थी रित स्याम बिना अब भी दुखदाई ॥ ८७८ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम चितार सभै तह ग्वारन स्याम कहै जु हुती बडभागी। त्याग दई सुध अउर सभै हरि बातन के रस भीतर पागी। एक गिरी धर ह्वै बिसुधी इक पै करुनाही बिखै अनुरागी। कै सुध स्याम के खेलन की मिलकै सभ ग्वारनि रोवन लागी ॥ ८७९ ॥

॥ इति गोपीअन को बिलाप पूरनं ॥

अत्यन्त दुःखदायक है ॥ ८७६ ॥ शरद ऋतु में हम सब प्रेमपूर्वक कृष्ण के साथ आनंदित होकर और सब शंकाओं को छोड़कर खेला करती थीं। कृष्ण भी निस्संकोच होकर व्रज की सभी गोपियों को अपनी स्त्रियाँ समझा करते थे। उसके संग वह ऋतु सुखदायक थी और अब वही ऋतु दुःखदायक हो गई है ॥ ८७७ ॥ ॥ सवैया ॥ माघ मास में हमने कृष्ण के साथ मिलकर खेल की धूम मचा दी थी। कृष्ण उस समय मुरली बजा रहे थे। उस अवसर का वर्णन नहीं किया जा सकता। फूल खिल रहे थे और देवराज इन्द्र भी उस दृश्य को देखकर हर्षित हो रहे थे। हे सखी! वह ऋतु सुखदायक थी और अब वही ऋतु दुःखदायक हो गई हैं ॥ ८७८ ॥ ॥ सवैया ॥ श्याम कवि कहता है कि वे बड़े भाग्य वाली गोपियाँ कृष्ण को स्मरण कर रही हैं। वे अपनी सुध-बुध भूलकर कृष्ण के रस में अनुरक्त हो गई हैं। कोई गिर पड़ी है, कोई बेसुध हो गई है और कोई उसके प्रेम में विभोर हो उठी है। श्याम के साथ खेलों को याद कर सभी गोपियाँ रोने लग गई हैं ॥ ८७९ ॥

॥ गोपी-विलाप पूर्ण ॥

अथ कान जू मंत्र गाइत्री सीखन समै ॥

॥ सवैया ॥ उत तै इह ग्वारनि की भी दशा इत कान्ह कथा भई ताहि सुनाऊ । लीप कै भूमहि गोबर सों कबि स्याम कहै सभ प्रोहति गाऊ । कान्ह बैठाइ कै स्याम कहै कबि पै गरगै सु पवित्रहि ठाऊ । मंत्र गाइत्री को ताहि दयो जोऊ है भुगिआ धरनीधर नाऊ ॥ ८८० ॥ ॥ सवैया ॥ डार जनेऊ सु स्याम गरै फिरकै तिह मंत्र सु स्रउन मै दीनो । सो सुनिकै हरि पाइ पर्‌यो गरगै जहु भाँतन को धन दीनो । अस्व बडे गजराज औ उश्ट दए पट सुंदर साज नवीनो । लाल परे अरु सबज मनी तिह पाइ पर्‌यो हित आनंद कीनो ॥ ८८१ ॥ मंत्र परोहत दै हरि को धनु लै बहुतो मन मै सुखु पायो । त्याग सभै दुख को तबही अतिही मन आनंद बीच बढायो । सो धन पाइ तहाँ ते चलयो चलिकै अपने ग्रहि भीतर आयो । सो सुनि मित्र प्रसंनि भए ग्रहि ते सभ दारिद दूरि परायो ॥ ८८२ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे स्री क्रिशन जू को गाइत्री मंत्र सिखाइ जग्योपवीत डारा गरे धिआइ समापतम सतु ॥

कृष्ण द्वारा गायत्री मंत्र सीखना

॥ सवैया ॥ उधर तो गोपियों की यह दशा हुई, इधर अब मैं कृष्ण की दशा कहता हूँ। धरती को गोबर से लीपकर सब पुरोहितों को बुलाया गया। गर्ग मुनि को पवित्र स्थान पर बैठाया गया। उस मुनि ने उसको गायत्री मंत्र दिया जो सारी धरती का भोग करनेवाला है ॥ ८८० ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के गले में जनेऊ पहनाकर उसे कान में मंत्र दिया गया। मंत्र सुनकर कृष्ण गर्ग के पाँव पड़े और उसे बहुत धन आदि दिया। उसे अश्व, गजराज, ऊँट और सुन्दर वस्त्रादि दिए। गर्ग के पाँव छूते हुए आनद से उसे लाल, पन्ने और मणियाँ दान में दीं ॥ ८८१ ॥ कृष्ण को मंत्र देकर और धन प्राप्त करके पुरोहित प्रसन्न हुआ। उसने सभी कष्टों का त्याग करते हुए परम आनंद प्राप्त किया। धन प्राप्त कर वह अपने घर आया। उसके मित्रों को यह सब जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई और मुनि की सभी प्रकार की दरिद्रता नष्ट हो गई ॥ ८८२ ॥

॥ इति श्री दशम स्कन्ध पुराण में बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में श्रीकृष्ण जी को गायत्री मंत्र सिखाकर यज्ञोपवीत धारण करने का समाप्त

अथ उग्रसैन को राज दीबो ॥

॥ सवैया ॥ मंत्र परोहत ते हरि लै अपने रिप को फिर तात छडायो । छूटत सो हरि रूपु निहार कै आइ कै पाइन सीस झुकायो । राजु कह्यो हरि को तुम लेहु जू सो न्रिप कै जदुराइ बैठायो । आनंद भ्यो जग मै जस भ्यो हरि संतन को दुखु दूरि परायो ॥ ८८३ ॥ कान्ह जबै रिप को बध कै रिप तात को राज (मू०ग्रं०३७१) किधो फिरि दीनो । देत उदार सु जिउँ दमरी तिहको इम कै फुन रंच न लीनो । मारकै शत्र अभेख करे सु दियो सभ संतन के सुख जीनो । असत्रनि की बिधि सीखन को कबि स्याम हली मुसली मन कीनो ॥ ८८४ ॥

॥ इति राजा उग्रसैन को राज दीबो धिआइ संपूरनं ॥

अथ धनख बिदिआ सीखन ॥

॥ सवैया ॥ आइस पाइ पिता ते दोऊ धन सीखन की बिधि काज चले । जिनके मुखि की सम चंद्रप्रभा जोऊ

उग्रसेन को राज्य देना

॥ सवैया ॥ पुरोहित से मंत्र लेकर फिर कृष्ण ने अपने बंदी पिता को छुड़ाया । उन्होंने छूटते ही कृष्ण के (परमात्म) स्वरूप को देखकर उसके सामने सिर झुकाया । कृष्ण ने कहा, अब आप राज करें और राजा (उग्रसेन) को पुनः गद्दी पर बैठाया । सारे संसार में आनंद छा गया और संतों के कष्ट दूर हो गए ॥ ८८३ ॥ जब कृष्ण ने शत्रु कंस का वध कर दिया तो उन्होंने कंस के पिता को राज्य दे दिया । राज्य ऐसे दिया मानो एक दमड़ी (पैसे से भी छोटा सिक्का) दे रहे हों, अर्थात् उन्होंने जरा सा भी लालच करके कुछ भी स्वयं न लिया । कृष्ण ने शत्रुओं को मारकर विवस्त्र कर दिया अर्थात् उनके पाखंडों को नंगा कर दिया । इसके बाद उन्होंने और बलराम ने अस्त्र-शस्त्र-विद्या सीखने का मन बनाया और उसकी तैयारी करने लगे ॥ ८८४ ॥

इति राजा उग्रसेन को राज्य देना समाप्त

बीरन ते बरबीर भले। गुर पास संदीपन के तबही दिन थोरनि मै भए जाइ खले। जिनहूँ कुपि कै मुर नाम मर्यो जिनहूँ छल सो बलराज छले ॥ ८८५ ॥ ॥ सवैया ॥ चउसठ दिनस मै स्याम कहै सभ ही तिह ते बिध सीख सु लीनी। पैंसठवै दिन प्रापत भे गुर सो उठकै बिनती इह कीनी। तउ गुर पूछ किधो तिय ते सुतहूँ की सु बात पै माँग कै लीनी। सो सुनि भ्रउनन बीच दुहू जोऊ वाहि कही तिहको सोई दीनी ॥ ८८६ ॥ ॥ सवैया ॥ बीर बडे रथ बैठ दोऊ चलि कै तट सो नदिआपत आए। ताही को रूपु निहारत ही बचना तिन सीस झुकाइ सुनाए। एक बली इह बीच रहै नही जानत है तिन हूँ कि चुराए। सो सुनि बीच धसे जल कै करि कोप दुहूँ मिलि संख बजाए ॥ ८८७ ॥ बीच धसे जल के जबही इक रूप भयानक दैत निहार्यो। देखत ही तिहको प्रभ रे गहि आयुध पान घनो रन पार्यो। जुद्ध भयो दिन बीस तहाँ तिहको जस पै कबि स्याम उचार्यो। जिउँ म्रिगराज मरै म्रिग को तिम सो कुप कै जदुबीर पछार्यो ॥ ८८८ ॥ ॥ इति दैत बधह ॥

भले वीर हैं। थोड़े ही दिनों में वे संदीपनि ऋषि के पास जा पहुँचे। ये वही हैं, जिन्होंने क्रोधित होकर मुर नामक राक्षस का वध किया था और राजा बलि को छला था ॥ ८८५ ॥ ॥ सवैया ॥ कवि श्याम का कथन है कि चौंसठ दिनों में सभी विद्याएँ इन्होंने सीख लीं। पैंसठवें दिन गुरु के समक्ष उपस्थित होकर इन्होंने प्रार्थना की। गुरु ने अपनी स्त्री से बात करके पुत्र (को जीवित कर लाने) की बात इन दोनों भाइयों से की। दोनों ने बात सुनी और (गुरू-दक्षिणा के रूप में) वही देना स्वीकार किया ॥ ८८६ ॥ ॥ सवैया ॥ दोनों वीर रथ पर सवार होकर समुद्र के पास आये। समुद्र को देखकर सिर झुकाकर इन्होंने अपना आने का मन्तव्य कहा। समुद्र ने कहा कि एक महाबली यहीं रहता है, परन्तु मैं नहीं जानता कि (आपके गुरु-पुत्र को) उसी ने चुराया है अथवा नहीं। यह सुनकर दोनों भाई शंख बजाते हुए जल में प्रवेश कर गये ॥ ८८७ ॥ जल में प्रवेश करते ही इन्होंने एक भयानक रूप वाला दैत्य देखा। उसे देखते ही कृष्ण ने शस्त्र हाथ में लेकर घनघोर युद्ध किया। कवि श्याम के कथनानुसार बीस दिन तक यह युद्ध वहाँ चलता जिस रहा। प्रकार शेर मृगों को मार देता है उसी प्रकार यदुराज श्रीकृष्ण ने उस दैत्य को पछाड़ फेंका ८८८ इति दैत्य-वध।

॥ सवैया ॥ मार के राकश को तबही तिहके उर ते हरि संख निकार्यो । बेदन की जिह ते धुनि होवत काढ लियो सोऊ जो रिपु मार्यो । तउ हरि जू मन आनंद कै सुत सूरज के पुर मो पग धार्यो । सो लखकै हरि पाइ पर्यो मन को सभ शोक बिदा करि डार्यो ॥ ८८९ ॥ सूरज के सुत मंडल मै जदुनंदन टेर कह्यो मुख सों । मो गुर को सुत हियाँ न कहूँ इह भाँत कह्यो सु किधौ जम सों । जम ऐसे कह्यो न फिरै जमलोक ते देवन के फुन आइस सों । तबही हरि देहु कह्यो करि फेरन पंडित बामन (मू०ग्रं०३७२) को सुत सों ॥ ८९० ॥ ॥ सवैया ॥ जम आइस पाइ किधौ हरि ते हरि के सोऊ पाइन आन लगायो । लै तिनको जदुराइ चल्यो अति ही अपने मन मै सुख पायो । ल्याइकै ताही कौ पँ संग कै गुर पाइन ऊपर सीस झुकायो । होइ बिदा तब ही गुर ते कबि स्याम कहै अपुने पुर आयो ॥ ८९१ ॥ ॥ दोहरा ॥ मिले आइकै कुटंब को अति ही हरख बढाइ । सुख तिह को प्रापत भयो चितवन गई पराइ ॥ ८९२ ॥

॥ इति धनुख सीख गुर को पुत्र लिआइ दीए समापतम ॥

॥ सवैया ॥ राक्षस को मारकर कृष्ण ने उसके हृदय से शंख बाहर निकाला । यह वेदध्वनि करनेवाला शंख शत्रु को मारकर कृष्ण द्वारा प्राप्त कर लिया गया । इस प्रकार आनंदित होकर अब कृष्ण ने यमलोक में प्रवेश किया, जहाँ सब शोकों को दूर करता हुआ यमराज श्रीकृष्ण के चरणों मे आ पड़ा ॥ ८८९ ॥ यमलोक को देखकर श्रीकृष्ण ने अपने मुख से कहा कि मेरे गुरु का पुत्र कहीं यहाँ तो नहीं है ? यमराज ने कहा कि यहाँ आया हुआ व्यक्ति तो देवताओं के कहने पर भी वापस नहीं जा सकता । परन्तु श्रीकृष्ण ने ब्राह्मण के पुत्र को वापस कर देने के लिए कहा ॥ ८९० ॥ ॥ सवैया ॥ यमराज ने कृष्ण भगवान की आज्ञा पाकर (उनके गुरु-पुत्र को) उनके चरणों में ला प्रस्तुत किया । उसे लेकर मन में सुख प्राप्त करते हुए यदुराज चल पड़े । उसको साथ लाकर वापस आकर उन्होंने गुरु के चरणो पर सिर झुका दिया और पुनः विदा होकर अपने नगर से आ गये ॥ ८९१ ॥ ॥ दोहा ॥ वे पुनः अपने परिवार से आ मिले । सभी के आनंद में वृद्धि हुई । सबको सुख प्राप्त हुआ और दुविधा नष्ट हो गई ॥ ८९२ ॥

इति धनुष विद्या सीखकर गुरु को पुत्र वापस लाकर देना समाप्त

अथ ऊधो ब्रिज भेजा ॥

॥ सवैया ॥ सोवत ही इह चित करी ब्रिजबासन सिउ इह कारज कइयै । प्रात भए ते बुलाइकै ऊधव भेज कह्यो तिह ठउरहि दइयै । ग्वारनि जाइ संतोख करे सु संतोख करै हमरी भ्रम मइयै । याते न बात भली कधु अउर है मोहि बिबेकहि को झगरइयै ॥ ८९३ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रात भए ते बुलाइकै ऊधव पै ब्रिजभूमहि भेज दयो है । सो चलि नंद के धाम गयो बतियाँ कहि शोक अशोक भयो है । नंद कह्यो संगि ऊधव के कबहूँ हरि जी मुहि चित्त कयो है । यो कहि कै सुध स्यामहि कै धरनी पर सो मुरझाइ पयो है ॥ ८९४ ॥ जब नंद पर्‍यो गिर भूम बिखै तब याहि कह्यो जदुबीर अए । सुनिकै बतियाँ उठ ठाढ भयो मन के सभ शोक पराइ गए । उठिकै सुधि सो इह भाँत कह्यो हम जानत ऊधव पेच कए । तज कै ब्रिज को पुर बीच गए फिरकै ब्रिज मै नही स्याम अए ॥ ८९५ ॥ स्याम गए नजिकै ब्रिज को ब्रिज लोगन को

उद्धव को व्रज भेजना

॥ सवैया ॥ रात को सोते समय श्रीकृष्ण ने यह विचार किया कि मुझे व्रजवासियों का भी कुछ कार्य करना चाहिए। प्रातः उद्धव को बुलाकर व्रज भेज देना चाहिए, ताकि वह वहाँ मेरी धर्म-माता (यशोदा) और अन्यों को सान्त्वना दे सके। फिर मोह (प्रेम) और ज्ञान के विवाद को हल करने का इससे और अच्छा उपाय भी कोई अन्य नहीं है (उद्धव को ज्ञान का गर्व था और प्रेम तथा उसकी लीलाओं को वे मूर्खता मानते थे) ॥ ८९३ ॥
॥ सवैया ॥ प्रातः होते ही उद्धव को बुलाकर श्रीकृष्ण ने व्रजभूमि में भेज दिया। वह चलकर नंद के घर पहुँचे, वहाँ सबका शोक दूर हुआ। नद उद्धव से पूछने लगे कि क्या कभी कृष्ण ने उनको याद किया है? इतना कहते हुए वे श्याम को स्मरण कर निस्तेज होकर धरती पर गिर पड़े ॥८९४॥
जब नंद भूमि पर गिर पड़े तो (उद्धव ने) कहा कि यदुवीर आ गये हैं। यह बात सुनते ही वे शोक का त्याग करते हुए उठकर खड़े हो गये। उठकर वे कहने लगे कि हे उद्धव! हम जानते हैं कि तुमने (और कृष्ण ने) हमारे साथ छल किया है, क्योंकि जबसे श्रीकृष्ण व्रज को त्यागकर नगर में गये हैं फिर वापस यहाँ कभी नहीं लौटे ८९५ श्याम व्रज के लोगों को अत्यन्त दुख देते हुए

अति ही दुखु दीनो । ऊधव बात सुनो हमरी तिह के बिनु भ्यो हमरो पुर हीनो । दै बिधि नै हमरे ग्रहि बालक पाप बिना हम ते फिरि छीनो । यों कहि सीस झुकाइ रह्यो बहु शोक बढ्यो अति रोदन कीनो ॥ ८९६ ॥ ॥ सवैया ॥ कहिकै इह बात पर्यो धरि पै उठ फेर कह्यो संग ऊधव इउ । तजि कै ब्रिज स्याम गए मथुरा हम संग कहो अब कारनि किउ । तुमरे अब पाइ लगो उठिकै सु भई बिरथा सु कहो सुभ जिउ । तिह ते नही लेत कछू सुधि है मुहि पाप पछान कछू रिस सिउ ॥ ८९७ ॥ (मू०ग्रं०३७३) ॥ सवैया ॥ सुनि कै तिन ऊधव यो बतिया इह भांतनि सिउ तिह उत्तर दीनो । थो सुत सो बसुदेवहि को तुम ते सभ पै प्रभजू नही छीनो । सुनिकै पुरि को पति यों बतिया कबि स्याम उसास कहै तिन लीनो । धीर गयो छुट रोवत भ्यो इनहूँ तिह देखत रोदन कीनो ॥ ८९८ ॥ ॥ स्वैया ॥ हठि ऊधव कै इह भाँति कह्यो पुर के पति सो कछु शोक न कीजै । स्याम कही मुहि जो बतिया तिह को बिरथा सभही सुनि लीजै । जाकी कथा सुनि होत खुशी मन देखत ही जिस को मुख जीजै । वाहि कह्यो नहि चिंत करो न कछू इह ते तुमरो फुन छीजै ८९९ ॥ ॥ सवैया ॥ सुनिकै

ब्रज को त्यागकर चले गये हैं । हे उद्धव ! उसके बिना तो हमारा ब्रज हीन हो गया है । परमात्मा ने हमारे घर पुत्र दिया, परन्तु पता नहीं हमारे किस पाप के कारण उसे पुनः हमसे छीन लिया है । इतना कहकर नंद ने सिर झुका लिया और वे रोने लगे ॥ ८९६ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर वे धरती पर गिर पड़े और फिर उठकर उद्धव से कहने लगे कि हे उद्धव ! बताओ, किस कारण से कृष्ण ब्रज छोड़कर मथुरा चले गये हैं ? मैं तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ, तुम मुझे सारा वृत्तांत कहो । मेरे किस पाप के कारण मेरी खोज-खबर श्रीकृष्ण नहीं लेते ? ॥ ८९७ ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव ने यह बातें सुनकर इस प्रकार उत्तर दिया कि वह तो वसुदेव का ही पुत्र था, तुमसे परमात्मा ने उसे छीना नहीं है । नंद ने यह सुनकर एक ठंडी साँस ली, उसका धैर्य छूट गया और वह उद्धव को देखकर रुदन करने लगे ॥ ८९८ ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव ने हठपूर्वक कहा कि हे ब्रज के स्वामी ! आप शोक न करें । मुझे जो कृष्ण ने कहा है, उसे आप लोग सुन लें । जिसकी बात सुनकर मन प्रसन्न होता है और जिसके मुख को देखकर ही सब जीवित रहते हैं उस श्रीकृष्ण ने कहा है कि आप लोग चिंता का त्याग करें आपका कुछ भी क्षय नहीं होगा ८९९

इम ऊधव ते बतिया फिर ऊधव को सोऊ पूछन लाग्यो। कान्ह कथा सुनि चित्तके बीच हुलास बढ्यो सभ ही दुखु भाग्यो। अउर दई सभ छोर कथा हरि बात सुनैबे बिखै अनुराग्यो। ध्यान लगावत जिउँ जुगिया इह तिउ हरि ध्यान के भीतर पाग्यो ॥ ९०० ॥ ॥ सवैया ॥ यौं कहि ऊधव जात भयो ब्रिज मै तिह ग्वारनि की सुध पाई। मानहु शोक को धाम हुतो द्रुम ठउर रहे सु तहाँ मुरझाई। मोन रही ग्रहि बैठ त्रिया मनो यों उपजी इह ते दुचिताई। स्याम सुने ते प्रसंन्य भई नहि आइ सुने फिरि भी दुखदाई ॥ ९०१ ॥ ॥ ऊधव बाच ॥ ॥ सवैया ॥ ऊधव ग्वारनि सो इह भाँत कह्यो हरि की बतिया सुनि लीजै। मारग जाहि कह्यो चलियै जोऊ काज कह्यो सोऊ कारज कीजै। जोगनि फार सभै पट होवहु यो तुम सो कह्यो सोऊ करीजै। ताही की ओर रहो लिव लाइ री याते कछू तुमरो नही छीजै ॥ ९०२ ॥ ॥ ग्वारनि बाच ॥ ॥ स्वैया ॥ सुन ऊधव ते बिधि या बतिया तिन ऊधव को इम उत्तरु दीनो। जा सुनि ब्योग हुलास घटै

॥ सवैया ॥ इस प्रकार उद्धव की बातें सुनकर फिर नंद उद्धव से पूछने लगे और कृष्ण की कथा सुनकर उनका दुःख दूर भाग गया तथा मन में आनंद की वृद्धि हो गई। उन्होंने बाक़ी सब बातें छोड़ दी और कृष्ण की बात में ही अनुरक्त हो गये। जिस प्रकार योगी ध्यान में स्थित हो जाते हैं, इसी तरह उनका ध्यान कृष्ण में लग गया ॥ ९०० ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर उद्धव व्रज गाँव में गोपियों की सुधि प्राप्त करने चले गये। सारा व्रज उन्हें शोक का घर दिखाई देने लगा। वहाँ पेड़-पौधे भी शोक से मुरझाए हुए थे। घरों में स्त्रियाँ चुपचाप बैठी थीं, मानो किसी बड़ी दुविधा में फँसी हों। कृष्ण के बारे में सुना तो वे प्रसन्न हो उठीं, परन्तु जब उन्हें यह पता लगा कि वे नहीं आए हैं तो दुःखी हो उठीं ॥ ९०१ ॥ ॥ उद्धव उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव ने गोपियों से कहा कि आप सब कृष्ण की बातें सुन लें। जिस रास्ते पर चलने के लिए उन्होंने कहा है उसी पर चलो और जो काम करने के लिए उन्होंने कहा है वही करें। वस्त्रों को फाड़कर योगिनियाँ बन जाओ और जैसा आपको कहा जा रहा है, वैसा ही आप करें। आप उसी की ओर ध्यान लगाए रखें, इससे आपका ज़रा सा भी अहित नहीं होगा ॥९०२॥ ॥ गोपी उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव की ये बातें सुनकर उन्होंने उद्धव को यह उत्तर दिया कि हे उद्धव जिसकी बातों को सुनकर वियोग की भावना
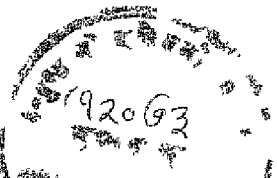
जिह के सुनए दुख होवत जीनो । त्याग गए तुम हो हमको हमरो तुमरे रस मै मनु भीनो । यौ कह्यो ता संग यो कहियो हरिजू तुहि प्रेम बिदा करि दीनो ॥९०३॥ ॥ सवैया ॥ फिरकै संग ऊधव के ब्रिजभामन स्याम कहै इह भांत उचार्यो । त्याग गए न लई सुधि है रस सो हमरो मनुआ तुम जार्यो । इउ कहि कै पुन ऐसे कह्यो तिह को सु किधौ कबि यौं जसु सार्यो । ऊधव स्याम सो यो कहियो (मू०ग्रं०३७४) हरिजू तुहि प्रेम बिदा करि डार्यो ॥ ९०४ ॥ फेरि कह्यो इम ऊधव सो जब ही सभ ही हरि के रस भीनी । जो तिन सो कह्यो ऊधव इउ तिन ऊधव सो बिनती इह कीनी । कंचन सो जिनको तन थो जोऊ हाथ बिखै तुही ग्वार नवीनी । ऊधव जू हम को तजिकै तुमरे बिन स्याम कछू सुध लीनी ॥ ९०५ ॥ ॥ सवैया ॥ एक कहै अति आतुर ह्वै इक कोप कहै जिन ते हित भाग्यो । ऊधव जू जिह देखन को हमरो मनुआ अति ही अनुराग्यो सो हमको तजि ग्यो पुर मै पुरबासन के रस भीतर पाग्यो । जउ हरिजू ब्रिजनारि तजी ब्रिजनारन भी ब्रिजनाथहि त्याग्यो ॥ ९०६ ॥ ॥ सवैया ॥ एकन यों कह्यो स्याम तज्यो

आती है और आनन्द कम होता है, वह कृष्ण हम लोगों को छोड़कर चला गया है। तुम उसे जाकर यह कहना कि हे कृष्ण! अपने प्रेम को एकदम तिलांजलि दे दी है ॥ ९०३ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनः ब्रज की स्त्रियों ने उद्धव से कहा कि एक ओर तो वह हमको छोड़ गये हैं और दूसरी ओर तुम ऐसी बातें करके हमारा मन जला रहे हो। इतना कहकर गोपियों ने उद्धव से कहा कि हे उद्धव! तुम कृष्ण से इतना अवश्य कह देना कि हे कृष्ण! आपने प्रेम-रस को विदा कर दिया है ॥ ९०४ ॥ पुनः कृष्ण के रस में बावरी होकर गोपियों ने उद्धव से कहा कि हे उद्धव! हम तुमसे प्रार्थना करते हैं कि जिन गोपियों के शरीर कंचन के समान थे, उनके शरीर का क्षय हो चुका है। हे उद्धव! तुम्हारे बिना किसी ने भी आज तक हमारी खोज-खबर नहीं ली ॥ ९०५ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई अत्यन्त व्याकुल होकर और कोई अत्यन्त क्रोधित होकर कह रही है कि हे उद्धव! जिसको देखने के लिए हमारा प्रेम उमड़ रहा है, उसी कृष्ण के मन से हमारा हित दूर हो गया है। वह हमको त्यागकर नगर में जाकर नगरवासियों में अनुरक्त हो गया है। ठीक है, जिस प्रकार कृष्ण ने व्रज की स्त्रियों को त्याग दिया है, अब आप यह मान लीजिए कि व्रज की स्त्रियों ने कृष्ण को त्याग ही दिया है ९०६ सवैया ॥ कुछ तो कहने

इक ऐसे कहै हम काम करैंगी। भेख जिते कह्यो जोगन के तितने हम आपने अंग डरैंगी। एक कहै हम जैह तहाँ इक ऐसे कहै गुनि ही उचरैंगी। एक कहै हम खैं मरिहै बिख इक कहै ध्यानहि बीच मरैंगी॥ ९०७॥ ॥ ऊधव बाच गोपन सो॥ ॥ सवैया॥ पिखि ग्वारनि की इह भाँत दशा बिसमै हुइ ऊधव यों उचरो। हम जानत है तुमरी हरि सो बलि प्रीत घनी इह काम करो। जोऊ स्याम पठ्यो तुम पै हम को इह रावल भेख न अंग धरो। तजिकै ग्रिह को पुन काज सभै सखी मोरे ही ध्यान कै बीच अरो॥ ९०८॥ ॥ गोपिन बाच ऊधव सो॥ ॥ सवैया॥ एक समै ब्रिजकुंजन मै मुहि कानन स्याम तटंग धराए। कंचन के बहु मोल जरे नग ब्रहम सकै उपमा न गनाए। बज्र लगे जिन बीच छटा चमके चहूँ ओर धरा छबि पाए। तउन समै हरि वै दए ऊधव दै अब रावल भेख पठाए॥ ९०९॥ ॥ सवैया॥ एक कहै हम जोगन ह्वैहै कहै इक स्याम कह्यो ही करैंगी। डार बिभूत सभै तन पै बटुआ

लगीं कि हमने कृष्ण को त्याग दिया है और कुछ कहने लगीं कि जैसा कृष्ण ने कहला भेजा है हम वैसा ही करेंगी। कृष्ण ने जितने भी योगियों के भेष धारण करने के लिए हमसे कहा है, हम वही धारण करेंगी। कोई कहने लगी कि हम कृष्ण के पास जायेंगी और कोई कहने लगीं कि हम उसके स्तुति का गायन करेंगी। कोई गोपी कहती है कि मै विष खाकर मर जाऊँगी और कोई कहती है कि मैं उसके ध्यान में मगन होकर मर जाऊँगी॥ ९०७॥ ॥ उद्धव उवाच गोपियों के प्रति॥ ॥ सवैया॥ गोपियों की यह अवस्था देखकर आश्चर्यचकित उद्धव यह कहने लगे कि मैं जानता हूँ कि आपकी प्रीति कृष्ण के साथ बहुत अधिक है, परन्तु आप एक काम करें कि यह योगियों का वेश धारण न करें। मुझे कृष्ण ने आप लोगों के पास इसीलिए भेजा है कि आप सब घर का कार्य त्यागकर कृष्ण में ही ध्यान लगायें॥ ९०८॥ ॥ गोपी उवाच उद्धव के प्रति॥ ॥ सवैया॥ एक बार व्रज के कुंजों में कृष्ण ने मेरे कानों में कर्णाभूषण पहनाये, जिसमें बहुमूल्य नग जड़े हुए थे और जिसकी उपमा ब्रह्मा भी नहीं कर सकते थे। जिस प्रकार घटाओं में बिजली चमकती है, उसी प्रकार उन आभूषणों की छवि थी। हे उद्धव! उस समय तो कृष्ण ने वे सब दिए परन्तु अब उन्होंने तुमको यह योगी का वेश देकर हमारी ओर भेजा है॥ ९०९॥ ॥ सवैया॥ कोई गोपी कहने लगी कि हम कृष्ण के तो योगिनियाँ ही बन जायेंगी और भमूत खप्पर आदि धारण

छिपिआ करि बीच धरैंगी । एक कहै हम जाहि तहाँ इक यों कहै ग्वारनि खाहि मरैंगी । एक कहै बिरहागन को उपजाइ कै ताही के संग जरैंगी ॥ ६१० ॥ ॥ राधे बाच ऊधव सो ॥ ॥ सवैया ॥ प्रेम छकी अपने मुख ते इह भांत कह्यो ब्रिखभान की जाई । स्याम गए मथरा तजिकै ब्रिज हो अब धो हमरी गति काई । देखत ही पुर की (मू०ग्रं०३७५) त्रिय को सु छके तिन के रस मै जिय आई । कान्ह लयो कुबजा बसि कै टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥६११॥ ॥ सवैया ॥ सेज बनी संग फूलन सुंदर चाँदनी रात भली छबि पाई । सेत बहै जमुना पट है सित मोतनहार गरे छबि छाई । मैन चड़्यो सरि लै बरकै बधबे हमको बिन जान कन्हाई । सोऊ लयो कुबजा बसकै टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥६१२॥ ॥ सवैया ॥ रात बनी घन की अति सुंदर स्याम सिगार भली छबि पाई । स्याम बहै जमुना तरए इह जा बिन को नही स्याम सहाई । स्यामहि मैन लग्यो दुख देवन ऐसे कह्यो ब्रिखभानहि जाई । स्याम

कर लेंगी । कोई कहने लगी कि हम वहाँ कृष्ण के पास जायेंगी और कुछ विष आदि खाकर प्राण दे देंगी तथा कोई कहने लगी कि हम विरह-अग्नि को उत्पन्न कर उसी में जल मरेंगी ॥ ६१० ॥ ॥ राधा उवाच उद्धव के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के प्रेम में डूबी हुई राधा ने अपने मुँह से कहा कि अब तो कृष्ण ब्रज को त्यागकर मथुरा चले गये हैं और हम सबको हाल-बेहाल कर गये हैं । वह मथुरा की स्त्रियों को देखते ही उनके रस में मग्न हो गये हैं । कृष्ण तो कुब्जा के वश में हो गये हैं और ऐसे होते हुए उस क़साई के हृदय में ज़रा-सी भी कसक नहीं उठी ॥ ६११ ॥ ॥ सवैया ॥ फूलों की सुन्दर सेज चाँदनी रात में शोभायमान हो रही है । श्वेत यमुना की धारा बहती हुई सुन्दर वस्त्र के समान लग रही है और रेत के कण मोतियों की माला के समान छविमान दिखाई पड़ रहे हैं । कामदेव बाणों के समेत हम पर हमें कृष्ण-विहीन देखकर आक्रमण कर रहा है और उसी कृष्ण को कुब्जा ने अपने वश में कर लिया है । ऐसा करते समय न तो उसके हृदय में कोई टीस उठी और न ही उस क़साई के हृदय में कोई कसक उठी ॥६१२॥ ॥ सवैया ॥ घनघोर रात्रि का श्रृंगार अत्यन्त भली छवि दे रहा है । श्याम रंग की यमुना बह रही है, जिसका श्याम के बिना कोई अन्य सहायक नहीं है । राधा ने कहा कि कृष्ण रूपी कामदेव अत्यन्त कष्ट दे रहा है और उस कृष्ण को कुब्जा ने अपने वश में कर लिया है तथा ऐसा करते समय न तो उसके हृदय मे कोई टीस उठी

नयो कुबजा बसि कै टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥६१३॥ ॥ सवैया ॥ फूल रहे सिगरे ब्रिज के तर फूलि लता तिन सो लपटाई । फूलि रहे सर सारस सुंदर सोभ समूह बढी अधिकाई । चेत चड़्यो सुक सुंदर कोकिल का ग्रुत कंत बिना न सुहाई । दासी के संगि रह्यो गहि हो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१४ ॥ बास सुबास अकाश मिली अर बासत भूमि महाँ छबि पाई । सीतल मंद सुगंध समीर बहै मकरंद निशंक मिलाई । पैर पराग रही है बैसाख सभै ब्रिज लोगनि की दुखदाई । मालन लैब करो रस को टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१५ ॥ ॥ सवैया ॥ नीर समीर हुतासन के सम अउर अकाश धरा तपताई । पंथ न पंथी चलै कोऊ ओतरु ताक तरै तन ताप सिराई । जेठ महा बलवंत भयो अति ब्याकुल जीय महा रित पाई । ऐसे सक्यो धसक्यो ससक्यो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१६ ॥ ॥ सवैया ॥ पउन प्रचंड बहै अति तापत चंचल चित्ति दसो

तथा न ही उस क़साई के हृदय में कोई कसक उठी ॥६१३॥ ॥ सवैया ॥ सारे व्रजमण्डल के वृक्ष फूलों से लदे हुए और लताएँ उनसे लिपटी हुई हैं। सरोवर और सरोवरों में सारस शोभायमान हो रहे हैं तथा समस्त शोभा में वृद्धि हो रही है। सुन्दर चैत्र का महीना प्रारम्भ हो गया है जिसमें सुन्दर कोयल का स्वर सुनाई दे रहा है, परन्तु यह सब उस कृष्ण के बिना सुहावना नहीं लग रहा है। दासी के संग रहते हुए उस कृष्ण के हृदय में न तो कोई टसक उठी और न ही उस क़साई के हृदय में कोई कसक उठी ॥ ६१४ ॥ सुन्दर सुगन्धि आकाश तक छा गई है तथा पृथ्वी सर्वत्र शोभायुक्त हो गई। मन्द-मन्द शीतल पवन बह रहा है और उसमें फूलों का मकरन्द मिला हुआ है। बैसाख के महीनों में फूलों के पराग की धूल अब व्रज के लोगों को कृष्ण के बिना दुखदाई लगती है, क्योंकि वहाँ नगर में मालिनों से फूल लेते हुए उस निर्मोही के हृदय में न ही कोई कसक उठती है और न ही कोई टीस उठती है ॥ ६१५ ॥ ॥ सवैया ॥ जल और वायु अग्नि के समान प्रतीत हो रहे हैं तथा धरती और आकाश जल रहे हैं। कोई भी राहगीर रास्ता नहीं चल रहा है और वृक्षों को देखकर पथिक अपनी जलन शान्त कर रहे हैं। जेठ का महीना अत्यन्त तेजस्वी है और हर एक का मन इसमें व्याकुल हो रहा है। ऐसे मौसम में भी उस निर्मोही का मन न तो विचलित होता है और न ही उसमें कोई कसक उठती है ६१६ सवैया प्रचण्ड वेग से पवन बह

दिस धाई। बैस अवास रहै नर नार बिहंगम वार सु छाहि तकाई। देख असाड़ नई रित दादर मोरन हूँ घनघोर लगाई। गाढ परी बिरही जन को टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१७ ॥ ॥ सवैया ॥ ताल भरे जल पूरनि सौ अरु सिंध मिली सरता सभ जाई। तैसे घटान छटान मिली अति ही पपीहा पिय टेर लगाई। सावन माहि लग्यो (मू०ग्रं०३७६) बरसावन भावन नाहि हहा घर माई। लाग रह्यो पुर भामन सो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१८ ॥ ॥ सवैया ॥ भादव माहि चड्यो बिन नाहि दसो दिस माहि घटा घहराई। द्योस निसा नहि जान परै तम बिज्जुछटा रवि की छबि पाई। मूसल धार छुटै नभि ते अवनी सगरी जल तूरनि छाई। ऐसे समे तजि ग्यो हमको टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६१९ ॥ ॥ सवैया ॥ मास कुआर चढ़्यो बल धार पुकार रही न मिले सुखदाई। सेत घटा अरु रात छटा सर तुंग अटा सिमकै बरसाई। नीर बिहीन फिरै नभि

रहा है और चंचल चित्त व्याकुल अवस्था में चारों ओर दौड़ रहा है। सभी नर-नारी अपने घरों में और सभी पक्षी छाया का आश्रय ले रहे हैं। आषाढ की इस ऋतु में मेंढक और मोरों की घनघोर ध्वनि सुनाई पड़ रही है। ऐसे वातावरण में विरह से व्याकुल व्यक्तियों की जान पर आ बनी है, परन्तु उस निर्मोही को दया नहीं आई और न ही उसके मन में वेदना की कसक उठी ॥ ६१७ ॥ ॥ सवैया ॥ जल से सरोवर भर गये हैं और नदियाँ सरोवर में जाकर मिल रही हैं। घटाएँ वर्षा के छींटें उछाल रही हैं और पपीहे ने भी अपना ही राग अलापना शुरू कर दिया है। हे माँ! सावन का महीना लग गया है, परन्तु वह मनभावन कृष्ण मेरे घर में नहीं है। वह कृष्ण नगर में स्त्रियों के साथ रमण कर रहा है और ऐसा करते समय निर्दयी के हृदय में कोई कसक नहीं उठ रही है ॥ ६१८ ॥ ॥ सवैया ॥ मेरा स्वामी नहीं है और भादों का महीना प्रारम्भ हो गया है, जिसमें दसों दिशाओं से घटाएँ घहराने लगी हैं। दिन और रात का अन्तर नहीं जान पड़ता और अंधकार में बिजली सूर्य के समान चमक रही है। आकाश से मूसलाधार वर्षा हो रही है और सारी धरती पर जल-ही-जल छा गया है। ऐसे समय में वह निर्मोही हमें छोड़ गया और उसके हृदय में कुछ भी वेदना नहीं हुई ॥ ६१९ ॥ ॥ सवैया ॥ क्वार का बलशाली मास चढ आया है और इसमें भी वह सुखदायक कृष्ण हमे नहीं मिला स्वेत घटाएँ रात्रि की छटा और पर्वतो

छीन सु देख अधीन भयो हिय राई । प्रेम छकी तिन सो बिथक्यो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६२० ॥ कातकि मै गनि दीप प्रकाशत तैसे अकाश मै ऊजलताई । जूथ जहाँ तह फैल रह्यो सिगरे नर नारन खेल मचाई । चित्र भए घर आँङन देख गचे तह के अरु चित्त भ्रमाई । आयो नही मन भायो तही टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६२१ ॥ ॥ सवैया ॥ बारज फूल रहे सर पुंज सुगंध सने सरिता न घटाई । कुंजत कंत बिना कुलहंस कलेश बढे सुनि कै तिह माई । बासुर रैन न चैन कहूँ छिन मंघर मास अयो न कनाई । जात नही तिन सौ मसक्यो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥६२२॥ ॥सवैया॥ भूम अकाश अवास सु बासु उदास बढी अति सीतलताई । कूल दुकूल ते सूल उठै सभ तेल तमोल लगै दुखदाई । पोख संतोख न होत कछू तन सोखत जिउँ कुमदी मुरझाई । लोभ रह्यो उन प्रेम गह्यो टसक्यो न हियो

के समान अट्टालिकाएँ दिखाई दे रही हैं। ये घटाएँ आकाश में जल-विहीन भ्रमण कर रही है और इन्हें देखकर हमारा हृदय और भी अधीर हो उठा है। हम प्रेम में अनुरक्त हैं, परन्तु उस कृष्ण से हमारी दूरी हो गई है तथा उस कसाई के हृदय में किसी प्रकार की कोई पीड़ा नहीं है ॥ ६२० ॥ कातिक महीने में दीपक के प्रकाश की तरह आकाश में उज्ज्वलता शोभायमान हो रही है। नर-नारियों के खेल में मदमस्त झुंड इधर-उधर बिखरे हुए पड़े हैं। घर और आँगन को देखकर सभी चित्रों के समान मोहित हो रहे हैं। वह कृष्ण नहीं आया और उसका मन वहीं रम गया। ऐसा करते समय उस निर्मोही के मन में तनिक भी कष्ट नहीं हुआ ॥६२१॥ ॥ सवैया ॥ सरोवर में कमल के फूल के पुंज सुगन्धि बिखेर रहे हैं। बिना हंस के अन्य पक्षी क्रीड़ा कर रहे हैं और उनकी ध्वनि सुनकर मन में और क्लेश बढ़ता है। अगहन के महीने में भी कृष्ण नहीं आया, इसलिए दिन-रात चैन नहीं पड़ता। उसके बिना मन को शान्ति नहीं, परन्तु उस निर्मोही के हृदय में न तो कोई टीस उठती है और न ही कोई कसक उठती है ॥६२२॥ ॥ सवैया ॥ अत्यन्त शीतल ऋतु में भूमि, आकाश और घर-आँगन में उदासी छा गई है। नदी के किनारे और अन्य स्थानों पर भी शूल के समान कष्टकारक पीड़ा उठ रही है और तेल, ताम्बूल सभी दुखदाई प्रतीत हो रहे हैं। पौष के महीने में जिस प्रकार कुमुदनी मुरझा जाती है, उसी प्रकार हमारा तन सूख गया। उस कृष्ण ने लोभवश वहाँ प्रेम कर लिया है और ऐसा करते समय उसके हृदय में कोई टीस या

कसक्यो न कसाई ॥ ६२३ ॥ माहि मै नाहि नही घरि माहि सु दाह करै रवि जोति दिखाई । जानी न जात बिलात तद्योसन रैन की बिरध भई अधिकाई । कोकिल देखि कपोत मिली मुख कूँजत ए सुनिकै डरपाई । प्रीत की रीत करी उन सो टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६२४ ॥ ॥ सवैया ॥ फागुन फाग बढ्यो अनुराग सुहागन भाग सुहाग सुहाई । केसर चीर बनाई सरीर गुलाब अबीर गुलाल उडाई । सो छबि मै न लखी जन द्वादस मास (मू०ग्रं०३७७) **की सोभत आग जगाई । आस को त्याग निरास भई टसक्यो न हियो कसक्यो न कसाई ॥ ६२५ ॥**

॥ इति स्री बचित्र नाटके क्रिशनावतारे ब्रिह नाटक बारामाह संपूरणम सतु ॥

अथ गोपी ऊधव संबादे बिरह नाटक कथनं ॥

॥ गोपनि बाच आपस मै ॥ ॥ सवैया ॥ याही के संग सुनो मिलकै हम कुंजगलीन मै खेल मचायो । गावत भ्यो सोऊ ठउर तहा हमहूँ मिलकै तह मंगल गायो । सो ब्रिज त्याग गयो

वेदना नहीं जगी ॥६२३॥ मेरा प्रियतम घर में नहीं है, इसलिए सूर्य भी अपना तेज दिखाकर मुझे जलाना चाहता है । दिन का तो पता ही नहीं लगता तथा रात्रि का प्रभाव अधिक हो गया है । कोयल को देखकर कबूतर उसके पास आता है और उसके प्रेम के विरह को देखकर भयभीत हो उठता है । उस कृष्ण ने प्रीति उन नगरवासियों से की और ऐसा करते समय उसके हृदय में जरा-सी भी कसक नहीं उठी ॥ ६२४ ॥ ॥ सवैया ॥ फाल्गुन के महीने में फाग का अनुराग सभी सुहागिनों के लिए बढ़ गया है । लाल रंग के वस्त्र उन्होंने धारण कर लिये हैं और गुलाल तथा अबीर उड़ाना प्रारम्भ कर दिया, मैंने इन बारह महीनों की छवि को नहीं देखा और उनकी छवि की अग्नि मेरे अन्दर लगी हुई है । मैं सब आशाओं को त्यागकर निराश हो गई हूँ, परन्तु उस कसाई के हृदय में न तो कोई टीस उठी और न ही कोई कसक उठी ॥ ६२५ ॥

इति श्री बचित्र नाटक के ार मे विरह नाटक बारह मास सम्पूर्ण

मथुरा इन ग्वारन ते मनुआ उचटायो । यों कहि ऊधव सो तिन टेर हहा हमरे ग्रिह स्याम न आयो ॥ ६२६ ॥ ॥ गोपिन बाच ऊधव सो ॥ ॥ सवैया ॥ एक समै हमको सुनि ऊधव कुंजन मै फिरै संग लिये । हरिजू अति ही तिह साथ घने हम पै अति ही कह्यो प्रेम किये । तिनके बसि ग्यो हमरो मन ह्वै अति ही सुखु भ्यो ब्रिजनार हिये । अब सो तजिकै मथुरा को गयो हित के बिछुरे फल कउन जिये ॥ ६२७ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ ग्वारनि पै जितनी फुन ऊधव स्याम कहै हरि बात बखानी । ग्यान को उत्तर देत भई नहि प्रेम चितार सभै उचरानी । जाही के देखत भोजन खात सखी जिह के बिन पीत न पानी । ग्यान की जो इन बात कही तिनहूँ हित सो करि एक न मानी ॥ ६२८ ॥ ॥ गोपिन बाच ऊधव सो ॥ ॥ सवैया ॥ मिलकै तिन ऊधव संग कह्यो हरि सो सुन ऊधव यों कहियो । कहिकै करि ऊधव ग्यान जितो पठियो तितनो सभ ही गहियो । सभ ही इन ग्वारनि पै कबि स्याम कह्यो

वह जिस स्थान पर गाता था, हम भी उसके साथ मिलकर मंगल-गीत गाती थीं । उस कृष्ण का मन अब इन गोपियों से विमुख हो चुका है और वह व्रज को त्यागकर मथुरा चला गया है । यह सब उन्होंने उद्धव की ओर देखते हुए कहा और साथ-ही-साथ यह भी कहा कि हाय, हमारे घर कृष्ण पुनः नहीं आया ॥ ६२६ ॥ ॥ गोपी उवाच उद्धव के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ हे उद्धव ! एक समय था जब हम लोगों को कुंजगलियों मे साथ लेकर कृष्ण विचरण किया करते थे । कृष्ण हम लोगों के साथ रहकर अत्यन्त गहन प्रेम किया करते थे । उस कृष्ण के वश में हम लोगों का मन था और व्रजमण्डल की स्त्रियों के मन में अत्यन्त सुख था । अब वही कृष्ण हम सबको त्यागकर मथुरा चले गये हैं । उस कृष्ण से बिछुड़कर हम कैसे जीवित रहें ॥ ६२७ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव के पास कृष्ण से सम्बन्धित जितनी भी बातें थीं उसने गोपियों से की । वे उसके ज्ञान का उत्तर कुछ नहीं देती थी प्रत्युत् प्रेम की बोली ही उसके सामने बोल रही थीं । जिस कृष्ण को देखकर वे भोजन करती थीं और जिसके बिना वे पानी तक न पीती थीं, उसी से सम्बन्धित जो उद्धव ने ज्ञान की बातें की, उनमें से गोपियों ने एक भी बात नहीं मानी ॥ ६२८ ॥ ॥ गोपी उवाच उद्धव के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ सबने मिलकर उद्धव से कहा कि हे उद्धव ! तुम कृष्ण से इस प्रकार कहना कि जितना ज्ञान आपने उद्धव के हाथ भेजा था वह सब हम लोगो ने ग्रहण कर

हित आखन सो चहियो । इनको तुम त्याग गए मथुरा हमरी सुध लेत सदा रहियो ॥ ९२९ ॥ जब ऊधव सो इह भांत कह्यो तब ऊधव को मन प्रेम भर्यो है । अउर गई सुध भूल सभै मन ते सभ ग्यान हुतो सु टर्यो है । सो मिलिकै संग ग्वारन के अति प्रीत की बात के संग ढर्यो है । ग्यान के डार मनो कपरे हित की सरता महि कूद पर्यो है ॥ ९३० ॥ यो कहि संग गुआरन के जबही सभ ग्वारनि को हित चीनो । ऊधव ग्यान दयो तजिकै मन मै जब प्रेम को संग्रह कीनो । होइ गयो तन मै हित सो इह भाति कह्यो सु कर्यो ब्रिज हीनो । त्याग गए तुम को मथुरा तिह ते हरि काम सखी (मू०ग्रं०३७८) घट कीनो ॥ ९३१ ॥ ॥ ऊधव बाच गोपिन सो ॥ ॥ सवैया ॥ जाइकै हउ मथुरा मै सखी हरि ते तुम ल्यैबो को दूत पठैहो । बीतत जो तुम पै बिरथा सभ ही जदुराइ के पास कहैहो । कै तुमरी बिनती उह पै बिधि जा रिझहै बिधि ता रिझवैहो । पाइन पै कबि स्याम कहै हरि को ब्रिज भीतर फेरि लियैहो ॥ ९३२ ॥ ॥ सवैया ॥ यों जब ऊधव बात कही उठ

लिया है । हे उद्धव ! तुम इन गोपियों के हित को ध्यान में रखते हुए यह बात अवश्य कहना कि हे कृष्ण ! इन गोपियों को त्यागकर तुम मथुरा चले गये हो, इनकी खोज-खबर सदैव लेते रहना ॥ ९२९ ॥ जब गोपियों ने उद्धव से यह सब कहा तो उसके मन में भी प्रेम भर आया । उसे अपनी सुधि भूल गई और उसके मन से ज्ञान का तेज समाप्त हो गया । वह भी गोपियों के साथ मिलकर प्रेम की बातें करने लगे और ऐसा लगने लगा कि मानो वे ज्ञान के वस्त्र उतारकर प्रेम की नदी में कूद पड़े ॥ ९३० ॥ जब गोपियों के प्रेम को उद्धव ने पहचाना तो वह भी गोपियों के साथ प्रेमपूर्वक वार्तालाप करने लगे । उद्धव ने मन में प्रेम का संग्रह किया और ज्ञान का त्याग कर दिया । उनके मन में भी इतना प्रेम भर उठा कि वे भी कहने लगे कि कृष्ण ने व्रज को त्यागकर इसे हीन बना दिया है, परन्तु हे सखी ! जब से कृष्ण मथुरा में गये हैं उनकी कामवासना कम हो गई है ॥ ९३१ ॥ ॥ उद्धव उवाच गोपियों के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ हे सखी ! मै मथुरा में जाकर तुम लोगों को लिवा जाने के लिए कृष्ण के माध्यम से दूत भेजूँगा । तुम लोगों पर जो कठिनाई गुजर रही है, उसका वृत्तान्त मैं कृष्ण को सुनाऊँगा । तुम लोगों की प्रार्थना कृष्ण तक पहुँचाकर उन्हें किसी भी तरह प्रसन्न करूँगा मैं पाँव पड़कर भी पुन उन्हें

पाइन लागत भी तब सोऊ ।　दूख घट्यो तिन के मन ते अति ही मन भीतर आनंद होऊ ।　कै बिनती संग ऊधव के कबि स्याम कहै बिधि या उचरोऊ ।　स्याम सो जाइकै यो कहियो करिकै कह्यो प्रीत न त्यागत कोऊ ॥ ९३३ ॥　कुंजगलीन मै खेलत ही सभ ही मन ग्वारनि को हरियो ।　जिन के तिह लोगन हास सह्यो जिनके हित शत्रुन सो लरियो ।　संग ऊधव के कबि स्याम कहै बिनती करिकै इम उचरियो ।　हम त्याग गए ब्रिज मै मथुरा तिह ते तुम काम बुरो करियो ॥ ९३४ ॥ ब्रिज बासन त्याग गए मथुरा पुर बासन के रस भीतर पाग्यो । प्रेम जितो पर ग्वारनि थो उन संग रचे इन ते सभ भाग्यो । दै तुहि हाथ सुनो बतिया हम जोग के भेख पठावन लाग्यो । ता संग ऊधव यों कहियो हरिजू तुम प्रेम सभै अब त्याग्यो ॥९३५॥ ॥ सवैया ॥ ऊधव जो तजिकै ब्रिज को चलिकै जब ही मथुरा पुर जइयै ।　पै अपने चित मै हित कै हम ओर ते स्याम के पाइन पइयै ।　कै अति ही बिनती तिह पै फिरकै इह भाँत सो उत्तर दइयै ।　प्रीत निबाहियै तउ करियै पर यों नही काहू सो

ब्रज में ले आऊँगा ॥ ९३२ ॥　॥ सवैया ॥ उद्धव ने जब यह बात कही तो सभी गोपियाँ उठकर उसके चरण छूने लगीं ।　उनके मन का शोक कम हुआ और आन्तरिक आनन्द में वृद्धि हुई। वे प्रार्थना करती हुई उद्धव से यह कहने लगीं कि हे उद्धव ! जाकर यह कहना कि प्रेम करके हे कृष्ण ! कोई भी व्यक्ति प्रेम का त्याग नहीं करता है ॥ ९३३ ॥　कुंजगलियों में खेलते हुए हे कृष्ण ! तुमने सभी गोपियों के मन का हरण किया, जिनके लिए तुमने लोगों की हँसी सही और जिनके हित में तुमने शत्रुओं से युद्ध किया, गोपियाँ उद्धव के समक्ष प्रार्थना करती हुई यह कहती हैं कि हे कृष्ण ! हमको तुम त्यागकर मथुरा चले गये, यह तुमने बहुत बुरा काम किया ॥ ९३४ ॥　ब्रजवासियों को त्यागकर तुम चले गये और मथुरा नगर के निवासियों के प्रेम में अनुरक्त हो गये। जितना प्रेम तुम्हें गोपियों के साथ था; वह प्रेम अब तुम्हारा छूट गया और नगरवासियों के साथ तुम्हारा प्रेम जुड़ गया।　हे उद्धव! उसने हमारे पास योग का वेश भेज दिया है।　हे उद्धव ! आप कृष्ण से यह कहना कि हे कृष्ण ! अब तुम्हें हम लोगों से कोई प्रेम नहीं रहा ॥९३५॥　॥ सवैया ॥ उद्धव, जैसे ही आप ब्रज को त्याग मथुरा जायेंगे तो प्रेमपूर्वक आप हमारी ओर से कृष्ण के पाँव पड़ आना　अत्यन्त विनम्रतापूर्वक फिर यह कहना कि हे कृष्ण　यदि प्रम निभाना हो तो प्रेम करना चाहिए और यदि प्रम न निभाना हो

प्रीत करइयै ॥ ६३६ ॥ ॥ स्वैया ॥ ऊधव मो सुन लै बतिया जदुबीर को ध्यान जबै करिहों । बिरहा तब आइ कै मोहि ग्रसै तिह के ग्रसए न जियो मरिहों । न कछू सुधि मो तन मै रहिहै धरनी पर ह्वै बिसुधो झरिहों । तिह ते हम को बिरथा कहियै किह भांत सो धीरज हउ धरिहों ॥ ६३७ ॥ ॥ सवैया ॥ दीन ह्वै ग्वारनि सोऊ कहै कबि स्याम जु थी अति ही अभिमानी । कंचन से तन कंजमुखी जोऊ रूप बिखै रति को फुन सानी । यों कहै ब्याकुल ह्वै बतिया कबि ने तिह की उपमा पहिचानी । ऊधव ग्वारनिया सफरी सभ नाम लै स्याम (मू०ग्रं०३७२) को जीवत पानी ॥६३८॥ ॥सवैया॥ आतुर ह्वै ब्रिखभान सुता संग ऊधव के सु कह्यो इम बैना । भूखन भोजन धाम जितो हमको जदुबीर बिना सु रुचै ना । यों कहि स्याम बियोग बिखै बसि गे कबि ने जस यों उचरैना । रोवत भी अति ही दुख सो जु हुते मनो बाल के कंजन नैना ॥ ६३९ ॥ ब्रिखभान सुता अति प्रेम छकी मन मै जदुबीर को ध्यान लगै कै । रोवत भी अति ही दुख सो संग काजर नीर गिर्यो ढरकै कै ।

तो प्रेम करने से क्या लाभ ॥ ६३६ ॥ ॥ सवैया ॥ हे उद्धव! मेरी बात सुनो, जब भी हम कृष्ण का ध्यान करती हैं तो विरह-अग्नि आकर मुझे खाने लगती है, जिससे न मैं जीवित रह पाती हूँ और न मर पाती हूँ । मुझे तन की भी सुधि नहीं रहती है और मैं अचेत होकर धरती पर गिर पड़ती हूँ । उससे हम अपनी व्याकुलता क्या कहें और तुम ही बताओ कि किस प्रकार धैर्य धारण करें ॥ ६३७ ॥ ॥ सवैया ॥ जो गोपियाँ गर्व से युक्त रहती थीं, उन्होंने अत्यन्त विनम्र होकर ये बातें कहीं । यह वही गोपियाँ हैं जिनका शरीर सोने के समान और मुख कमल के फूल के समान था तथा जो रूप-सौन्दर्य में रति के समान थीं । वे व्याकुल होकर ये बातें कह रही हैं और कवि के कथनानुसार उद्धव को ऐसी लग रही हैं कि मानो वे मछलियाँ हों जो कृष्ण रूपी जल को पीकर ही जीवित रह सकती हों ॥६३८॥ ॥ सवैया ॥ राधा ने व्याकुल होकर उद्धव से यह कहा कि हे उद्धव! हमें कृष्ण के बिना आभूषण, भोजन, घर आदि कुछ भी अच्छा नहीं लगता । इतना कहकर राधा वियोग में लीन हो गई और उसे रोने में भी अत्यन्त कष्ट प्रतीत होने लगा । उस बालिका के नयन कमल के फूल के समान लग रहे थे ॥ ६३९ ॥ राधा कृष्ण के ध्यान में प्रेम-पूर्वक लीन होकर अत्यन्त दुःखपूर्वक रोने लगी और उसके आँसुओं के साथ आँखों का काजल भी निकलने लगा कवि मन में प्रसन्न होकर कहता है कि

ता छबि को जसु उच्च महा कबि स्याम कह्यो मुख ते उमगै कै। चंदहि को जु कलंक हुतो मनु नैननि पैंड चल्यो निचुरै कै ॥ ६४० ॥ ॥ सवैया ॥ गहि धीरज ऊधव सो बचना ब्रिखभान सुता इह भांत उचारे। नेहु तज्यो ब्रिजबासन सो तिह ते कछू जानत दोख बिचारे। बैठ गए रथ भीतर आप नही इनको सोऊ ओर निहारे। त्याग गए ब्रिज को मथरा हम जानत है घट भाग हमारे ॥ ६४१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब जैहो कह्यो मथुरा कै बिखै हर पै हमरी बिनती इह कीजो। पाइन को गहिकै रहियो घटका दस जो मुहि नामहि लीजो। ताही के पाछे ते मो बतिया सुनि लै इह भाँतहि सो उचरीजो। जानत हो हित त्याग गए कबहूं हमरे हित के संग भीजो ॥६४२॥ ॥ सवैया ॥ ऊधव को ब्रिखभान सुता बचना इह भांत सों उचर्यो है। त्याग दई जब अउर कथा मन जउ संग स्याम के प्रेम भर्यो है। ता संग सोऊ कहो बतिया बन मै हमरे जोऊ संग अर्यो है। मै तुमरे संग मान कर्यो तुमहूँ हमरे संग मान कर्यो है ॥ ६४३ ॥ बन मै हमरे संग खेल करे मन मै अब सो जदुबीर चितारो। मोरे जु संग कही बतिया हित की सोई आपने चित्त निहारो। ताही को ध्यान करो किह हेत तज्यो

मानो चन्द्रमा का काला कलंक आँखों के जल के साथ धुलकर बह रहा है ॥ ६४० ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव से धैर्य ग्रहण कर राधा ने कहा कि कृष्ण ने व्रजवासियों से शायद किसी दोष के कारण प्रेम त्याग दिया है। ने चलते समय रथ में चुपचाप बैठ गये और इन व्रजवासियों की तरफ़ देखा तक नहीं। हम जानते हैं कि यह हमारा दुर्भाग्य है कि कृष्ण व्रज को त्यागकर मथुरा चले गये हैं ॥ ६४१ ॥ ॥ सवैया ॥ हे उद्धव! जब मथुरा जाओगे तो कृष्ण के पास हमारी प्रार्थना कहना। दस घड़ी तक कृष्ण के पाँव पकड़कर पड़े रहना और मेरा नाम पुकारते रहना। इसके बाद मेरी यह बात कृष्ण से कहना कि हे कृष्ण ! तुम हमारा प्रेम त्याग गये हो, अब कभी तो हमारे प्रेम में पुन: लीन होने की कृपा करो ॥ ६४२ ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव से राधा ने इस भाँति कहा कि हे उद्धव ! श्याम के प्रेम से मन के भरते ही मैंने अन्य सब बातें छोड़ दी हैं। उसे वन में रूठनेवाली बात कहना और यह भी कहना कि मैंने तुम्हारे साथ हठ किया था, क्या अब तुम भी मेरे साथ हठ (मान) कर रहे हो ॥ ६४३ ॥ हे यदुवीर उन बातों को स्मरण करो जब तुम मेरे साथ वन में खेल खेलते थे प्रेम की बातों को अपने चित्त मे याद करो उसी का ध्यान करते हुए यह

ब्रिज औ मथुरा को पधारो । जानत है तुमरो कछु दोश नही कछु है घट भाग हमारो ॥ ६४४ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ सुनि उत्तर देत भ्यो ऊधव प्रीत घनी हरि की संग तेरै । जानत हो अब आवत है उपजै इह चित कह्यो मन मेरै । किउ मथुरा तजि आवत है जु फिरै नहि ग्वारनि के फुन फेरै । जानत है हमरे घटि भागन आवत है हरिजू फिर डेरै ॥ ६४५ ॥ ॥ सवैया ॥ यों कहि रोवत भी ललना अपने मन मै (मू०ग्रं०३८०) अति शोक बढायो । झूम गिरी प्रिथमी पर सो ह्रिदै आनंद थो तितनो बिसरायो । भूल गई सुध अउर सभै हरि के मन ध्यान बिखै तिन लायो । यों कहि ऊधव सो तिन टेर हहा हमरे ग्रहि स्याम न आयो ॥ ६४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जाही के संगि सुनो मिलकै हम कुंजगलीन मै खेल मचायो । गावत भ्यो सोऊ ठउर तहाँ हमहूँ मिलकै तह मंगल गायो । सो ब्रिज त्याग गए मथुरा इन ग्वारनि ते मनुआ उचटायो । यों कहि ऊधव सो तिन टेर हहा हमरे ग्रहि स्याम न आयो ॥ ६४७ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिज त्याग गयो मथुरा को सोऊ मन ते सभ ही

बताओ कि किस कारण से तुमने व्रज का त्याग कर मथुरा गमन किया है। हम तो जानती हैं इसमें तुम्हारा कुछ दोष नहीं है, हमारा ही भाग्य अच्छा नही है ॥ ६४४ ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर उद्धव ने उत्तर दिया कि हे राधा ! तुम्हारे साथ कृष्ण का प्रेम अत्यन्त गहन है। मेरा मन यह कह रहा है कि अब वह आयगा। राधा पुन: कहती है कि जब वे गोपियों द्वारा रोके जाने पर नहीं रुके तो अब मथुरा छोड़कर आने का क्या तात्पर्य है। हमारे कहने पर तो वे रुके नहीं, अत: अब यदि वे अपने घर वापस भी आते हैं तो हम तो यही मानेंगी कि हमारा भाग्य ही प्रबल नहीं है ॥६४५॥ ॥ सवैया ॥ यह कह कर राधा शोक पूर्ण होती हुई फूट-फूटकर रोने लगी। हृदय के आनंद का त्याग करती हुई वह अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उसको अन्य बातें भूल गयीं और उसका मन कृष्ण के ध्यान में लीन हो गया। उसने फिर उद्धव को पुकारकर कहा कि हाय ! मेरे घर में कृष्ण नहीं आए ॥ ६४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जिसके साथ हम कुंजगलियों में खेल खेलती रहीं। वह और हम मिलकर मंगलगीत उन स्थानों पर गाते थे। वही कृष्ण व्रज को त्यागकर मथुरा चले गए और उनका मन गोपियों से विरत हो गया है। इस प्रकार कहते हुए राधा उद्धव को कहने लगी कि हाय ! मेरे घर पर कृष्ण नहीं आये ॥ ६४७ ॥ ॥ सवैया ॥ व्रज को त्यागकर मथुरा गये और व्रजनारी

ब्रिजनाथ बिसारी । संग रचे पुरबासन के कबि स्याम कहै सोऊ जान पिआरी । ऊधव जू सुनियै बिरथा तिह ते अति ब्याकुल भी ब्रिजनारी । कुंचरि जिउँ अहिराज तजै तिह भाँत तजी ब्रिजनार मुरारी ।। ६४८ ।। ।। सवैया ।। ऊधव के फिरि संग कह्यो कबि स्याम कहै ब्रिखभान जई है । जा मुख की सम चंद्रप्रभा जु तिहूँ पुर मानहु रूप मई है । स्याम गयो तजिकै ब्रिज को तिह ते अति ब्याकुल चित्त भई है । जा दिन के मथुरा मै गए बिन त्वै हमरी सुध हू न लई है ।। ६४६ ।। जा दिन के ब्रिज त्याग गए बिन त्वै कोऊ मानस हूँ न पठायो । हेत जितो इन ऊपर थो कबि स्याम कहै तितनो बिसरायो । आप रचे पुरबासन सौ इनको दुखु दै उनको रिझवायो । ता संग जाइकै यौ कहियो हरि जी तुमरे कहु का जिय आयो ।।६५०।। त्याग गए मथरा ब्रिज कउ चलिकै फिरि आप नही ब्रिज आए । संग रचे पुर बासन के कबि स्याम कहै मन आनंद पाए । दै गयो है इनको दुख ऊधव पै मन मै न हुलास बढाए । आपन थे ब्रिज मै उपजै इन सों सु भए छिन बीच पराए ।। ६५१ ।।

ने सबको भुला दिया । वे पुरवासियों के प्यार में लीन हो गए । हे उद्धव ! सुनो, व्रज की स्त्रियाँ इसीलिए इतनी व्याकुल हो गई हैं कि जैसे सर्प केंचुल का त्याग करता है उसी भाँति कृष्ण ने व्रज की नारियों का त्याग कर दिया है ।। ६४८ ।। ।। सवैया ।। राधा ने पुनः उद्धव से कहा कि जिस मुख की प्रभा चन्द्र के समान है और जो तीनों लोकों को सौन्दर्य प्रदान करनेवाला है, वह कृष्ण व्रज को त्यागकर चला गया, इसीलिए हमारा चित्त व्याकुल है । जिस दिन से कृष्ण व्रज को त्यागकर मथुरा गए हैं, हे उद्धव ! तुम्हारे बिना हमारी सुधि किसी ने नहीं ली है ।। ६४६ ।। जिस दिन से व्रज छोड़कर गए हैं कृष्ण ने तुम्हारे सिवा एक आदमी तक यहाँ नहीं भेजा । जितना भी प्यार हम सब पर था, कवि का कथन है कि वह सब उसने भुला दिया । स्वयं तो पुरवासियों में लीन हो गए और उनको प्रसन्न करने के लिए इन व्रजवासियों को दुःख दिया । उनसे जाकर उद्धव यह कहना कि हे कृष्ण ! यह तुम्हारे हृदय में क्या आया जो तुमने यह सब किया ।। ६५० ।। व्रज त्यागकर मथुरा गए और उस दिन से आज तक व्रज वापस नहीं आए तथा आनंदित होकर नगरवासियों में लिप्त हो गए । व्रजवासियों का आनंद न बढ़ाया, अपितु इन्हें तो दुःख ही दे गए । व्रज में पैदा हुए कृष्ण हमारे अपने थे, परन्तु अब तो वे क्षण भर में पराए हो गए हैं ।। ६५१ ।। ।। सवैया । इन व्रजवासियों की तुमने खबर

॥ सवैया ॥ त्याग गए न लई इनकी सुध होत कछू मन मोह तुहारे । आप रचे पुरबासन सों इनके सभ प्रेम बिदा करि डारे । ता ते न मान करो फिरि आवहु जीतत भे तुमहू हम हारे । ता ते तजो मथुरा फिर आवहु हे सभ गउअनि के रखवारे ॥ ९५२ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम चितार कै स्याम कहै मन मै सभ ग्वारनिया दुख पावै । एक परै मुरझाइ धरा इक (मू०ग्रं०३८१) ब्योग भई गुन ब्योग ही गावै । कोऊ कहै अदुरा मुख ते सुनि स्त्रउनन बात तहा एउ धावै । जउ पिखवै न तहा तिन को सु कहै हमको हरि हाथ न आवै ॥ ९५३ ॥ ॥ सवैया ॥ ग्वारनि ब्याकुल चित्त भई हरि के नही आवन की सुध पाई । ब्याकुल होइ गई चित मै ब्रिखभान सुता मन मै मुरझाई । जो बिरथा मन बीच हुती सोऊ ऊधव के तिह पास सुनाई । स्याम न आवत है तिह ते अति ही दुख भ्यो बरन्यो नही जाई ॥ ९५४ ॥ ॥ सवैया ॥ ऊधव उत्तर देत भयो अति ब्योग मनै अपने सोऊ कै है । ग्वारनि के मध मद्धि बिखै कबि स्याम कहै जोऊ बात रचै है । थोरे ही द्योसनि मै मिलिहै जिह के उर मै न कछू भ्रम भै है । जोगनि होइ जपो हरि को मुख माँगहु गी तुम सो बर

तक नहीं ली, क्या तुम्हारे मन में तनिक भी मोह नहीं पैदा होता । स्वयं पुर-वासियों के संग लिप्त हो गए और इनका सभी प्रेम विदा कर दिया । हे कृष्ण! अब हठ (मान) मत करो; ठीक है कि तुम जीत गए और हम सब हार गए है । हे गायों के रखवाले कृष्ण ! अब तो मथुरा का त्याग करो और पुनः यहाँ आ जाओ ॥ ९५२ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण का स्मरण कर, कवि कहता है, सभी गोपियाँ दुःख पा रही हैं । कोई मूर्च्छित होकर धरती पर गिर पड़ रही है और कोई उसके वियोग के गीत गा रही है । कोई कृष्ण-कृष्ण पुकारती हुई, कानों में कृष्ण की आहट सुनती हुई इधर-उधर दौड़ती है और कृष्ण को न देखकर व्याकुल होकर कहती है कि कृष्ण मेरे हाथ नहीं आ रहा है ॥ ९५३ ॥ ॥ सवैया ॥ गोपियाँ व्याकुल हो गई हैं, परन्तु कृष्ण के आने की उन्हें कोई खबर नहीं मिली । राधा भी व्याकुल होकर निस्तेज हो गई है । जो वेदना उसके मन में थी, वह उसने उद्धव से कह दी और कहा कि श्याम नहीं आ रहे है, इस दुःख का वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ ९५४ ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव ने भी अत्यन्त व्याकुल होकर गोपियों के बीच में बात बनाते हुए कहा कि वह अभय कृष्ण थोड़े ही दिनों में आप लोगों को मिल जायगा तुम योगी होकर

दै है ॥ ९५५ ॥ ॥ सवैया ॥ उन दै इम ऊधव ग्यान चल्यो चलिकै जसुधापति पै सोऊ आयो। आवत ही जसुधा जसुधापति पाइन ऊपर सीस झुकायो। स्याम ही स्याम सदा कहियो कहिकै इह मो पहि कान्ह पठायो। यौं कहिकै रथ पै चढ़िकै रथ को मथुरा ही की ओर चलायो ॥९५६॥ ॥ ऊधव बाच कान्ह जू सो ॥ ॥ सवैया ॥ आइ तबै मथुरा पुर मै बलराम अउ स्याम के पाइ पर्‌यो। कह्यो जो तुम मो कहिकै पठियो तिन सो इह भाँत ही सी उचर्‌यो। संग नंद के अउ उन ग्वारनि के चरचा करि ग्यान की फेर फिर्‌यो। तुमरो मुख भान निहारत ही तुम सो दुख थो सभ दूर कर्‌यो ॥९५७॥ ॥ सवैया ॥ तुमरे पग भेट गयो जब ही तब ही फुन नंद के धाम गयो। तिह को करिकै हरि ग्यान प्रबोध उठ्यो चलि ग्वारनि पास अयो। तुमरो उन दुक्ख कह्यो हम पै सुन उत्तर मै इह भाँत दयो। बल स्यामहि स्याम सदा जपियो सुन नामहि प्रेम घनो बढयो ॥ ९५८ ॥ ॥ ऊधव संदेस बाच ॥ ॥ सवैया ॥ ग्वारनि मो संग ऐसे कह्यो हम ओर ते स्याम के पाइन पइयै। यौं कहियो पुरबासन को तजिकै ब्रिजबासन को

उसका मनन करो; तुम जो वर माँगोगी, वह तुम्हें देगा ॥ ९५५ ॥ ॥ सवैया ॥ गोपियों को ज्ञान देकर उद्धव नंद बाबा के पास आए। यशोदा और नंद ने आते ही उनके पैरों पर सिर झुकाए। उद्धव ने कहा कि आप लोगों को परमात्मा को स्मरण करने का उपदेश देने के लिए मुझे श्रीकृष्ण ने भेजा है। इतना कहकर उद्धव रथ पर सवार होकर मथुरा की ओर चल पड़े ॥९५६॥ ॥ उद्धव उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव तब मथुरा में पहुँचकर कृष्ण-बलराम के चरणों में आ पड़े और कहने लगे कि हे कृष्ण ! जो तुमने मुझसे कहने के लिए कहा था मैंने वैसा ही कह दिया है। उन गोपियों और नंद बाबा के साथ ज्ञान की चर्चा करके मैं वापस आया हूँ और तुम्हारे सूर्य-मुख को देखकर मेरे कष्ट दूर हो गए हैं ॥ ९५७ ॥ ॥ सवैया ॥ तुम्हारे चरणों को छूकर जब मैं चला तो पहले नंद के घर पहुँचा। उनको ज्ञान देकर मैं गोपियों के पास आया। तुम्हारा विरह-दुःख उन्होंने मुझसे कहा तो मैंने उन्हें श्याम का नित्य जाप करने को कहा। कृष्ण का नाम सुनते ही उनका प्रेम और अधिक घनीभूत हो उठा ॥ ९५८ ॥ ॥ उद्धव संदेश उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ गोपियों ने मुझसे आपके चरण-स्पर्श करने को कहा। यह भी कहा कि हे कृष्ण ! अब नगर-वासियों को छोड़कर व्रजवासियों को भी सुख दो यशोदा ने भी कहा कि

सुख दइयै । जसुधा इह भांत करी बिनती बिनती कहियो संग पूत कनइयै । ऊधव ता संग यों कहियो बहुरो फिरि आइ कै माखन खइयै ॥ ९५९ ॥ ॥ स्वैया ॥ अउर कही बिनती तुम पै सु मनो अरु अउरन (मू०ग्रं०३८२) बातन डारो । ऐसे कहा जसुधा तुमको हमको अति ही ब्रिजनाथ पिआरो । ताते करो न कछू गनती हमरो सु कह्यो तुम प्रेम बिचारो । ताही ते बेग तजो मथुरा उठ कै अब ही ब्रिज पूत पधारो ॥ ९६० ॥ ॥ सवैया ॥ मात करी बिनती तुम पै कबि स्याम कहै जोऊ है ब्रिज रानी । ताही को प्रेम घनो तुम सों हम आपने जो महि प्रीति पछानी । तांते कह्यो तजि कै मथुरा ब्रिज आवहु या बिधि बात बखानी । इयाने हुते तब मानत थे अब स्याने भए तब एक न मानी ॥ ९६१ ॥ ताही ते संग कहो तुमरे तजि कै मथुरा ब्रिज को अब अइयै । मान कै सीख कहो हमरी तिन ठउर नहो पलवा ठहरइयै । यों कहि ग्वारनिया हम सो सभही ब्रिजबासन को सुख दइयै । सो सुध भूल गई तुमको हमरे जिउं अउसर पाइन पइयै ॥ ९६२ ॥ ॥ सवैया ॥ ताही ते त्याग रह्यो मथुरा कबि स्याम कहै ब्रिज मै फिर आवहु । ग्वारनि प्रीत पछान कह्यो तिह ते तिह ठउर न ढील लगावहु । यों कहि पाइन पै हमरे हम संग कह्यो सु तहां तुम जावहु । जाइ

मेरे पुत्र से प्रार्थना करना कि वह पुनः आकर मक्खन खाए ॥ ९५९ ॥ ॥ सवैया ॥ तुमसे और जो प्रार्थना की, हे कृष्ण ! उसे भी सुनो । यशोदा ने कहा कि ब्रजनाथ हमको अत्यन्त प्रिय है । मेरे प्रेम की तुलना नहीं की जा सकती । इसीलिए, हे पुत्र ! तुम शीघ्र मथुरा को छोड़कर ब्रज में पदार्पण करो ॥ ९६० ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रज की रानी माता यशोदा ने तुमसे, हे कृष्ण ! प्रार्थना की और उसके प्रेम को मैंने भी मन में अनुभव किया । इसीलिए यशोदा ने कहा कि मथुरा को छोड़कर ब्रज में आ जाओ । अरे तुम जब बच्चे थे तब तो मानते थे, परन्तु अब बड़े होकर एक भी बात नहीं मान रहे हो ॥ ९६१ ॥ मथुरा को छोड़कर अब ब्रज में आ जाओ । मेरा कहना मानो और अब एक पल भी मथुरा में मत ठहरो । गोपियों ने भी कहा कि अब ब्रज-वासियों को भी सुख दो । तुम्हें वे अवसर भूल गए जब तुम हम लोगों के पाँव पड़ते थे ॥ ९६२ ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! मथुरा को त्यागकर अब ब्रज में आ जाओ । गोपियाँ प्रेम की अनुभूतिवश कह रही थीं अब अधिक देर मत करो मेरे पाँव पड़ती हुई गोपियों ने कहा कि हे उद्धव तुम जाओ और कृष्ण

कै आवहु यों कहियो हमको सुख हो तुमहूँ सुख पावहु ॥ ६६३ ॥
॥ सवैया ॥ तां ते कह्यो तजि कै मथुरा फिर कै ब्रिजबासन को सुखु दीजै । आवहु फेरि कह्यो ब्रिज मै इक काम किए तुमरो नही छीजै । आइ क्रिपाल दखावहु रूप कह्यो जिह देखत ही मन जीजै । कुंजगलीन मै फेर कह्यो हमरे अधरानन को रस लीजै ॥ ६६४ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम कह्यो संग है तुमरे जु हुती तुम को ब्रिज बीच पियारी । कान्ह रचे पुरबासन सों कबहूँ न हिए ब्रिजनारि चितारी । पंथ निहारत नैनन की कबि स्याम कहै पुतरी दोऊ हारी । ऊधव स्याम सो यो कहियो तुमरे बिनु भी सभ ग्वार बिचारी ॥ ६६५ ॥
॥ सवैया ॥ अउर कही तुम सौ हरि जू ब्रिखभान सुता तुम को जोऊ प्यारी । जा दिन ते ब्रिज त्याग गए दिन ता की नही हमहू है सँभारी । आवहु त्याग अबै मथुरा तुमरे बिन गी अब होइ बिचारी । मै तुम सिउ हरि मान कर्यो तज आवहु मान अबै हम हारी ॥ ६६६ ॥ त्याग गए हमको किह हेत ते बात कछू तुमरी न बिगारी । पाइन मो परके सुनियै प्रभ ए बतिया इह (मू०ग्रं०३८३) भाँत उचारी । आप रचे पुरबासन

से आने के लिए कहो। उसे यह भी कहो कि यहाँ आएँ। स्वयं भी सुख लें और हम सबको भी सुख दें ॥ ६६३ ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! मथुरा को छोड़कर अब व्रजवासियों को सुख दो। पुनः व्रज में आ जाओ और हमारा यह एक काम करने से तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। हे कृपालु! अपना रूप आ दिखाओ, तुम्हें देखकर ही तो हम जीवित हैं। हे कृष्ण ! पुनः आओ और कुंजगलियों में हमारे अधरपान का रसास्वादन करो ॥६६४॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! तुम्हें वे ही याद कर रही हैं जो व्रज में तुम्हें प्यारी लगती थी। अब कृष्ण नगर-वासियों में रमण कर रहे हैं और कभी भी उन्होंने व्रज की नारियों का स्मरण तक नहीं किया। कृष्ण का रास्ता देखते हमारी आँखें थक गई हैं। हे उद्धव ! श्याम से कहना कि तुम्हारे बिना सभी गोपियाँ असहाय हो गई हैं ॥ ६६५ ॥
॥ सवैया ॥ हे हरि ! तुमको तुम्हारी प्यारी राधा ने कहा है कि जिस दिन से तुम व्रज का त्याग कर गए हो, हम उसी दिन से सँभल नहीं पाई हैं। तुम तत्क्षण मथुरा त्यागकर चले आओ, हम तुम्हारे बिना असहाय हैं। मैंने तुम्हारे साथ मान किया था, हे कृष्ण ! तुम चले आओ, मैं हार मानती हूँ ॥६६६॥ हमने तो तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड़ा था तुम हमको क्यों त्याग गए हो। हे प्रभु मेरे पाँव पकड़कर राधा ने यह कहा कि कृष्ण तुम तो व्रजनारियों को

सों मन ते सभ ही ब्रिजनार बिसारी । मान कर्यो तुम सो घट काम कर्यो अब स्याम हहा हम हारी ॥ ९६७ ॥
॥ सवैया ॥ अउर करी तुम सो बिनती सोऊ स्याम कहै चितदै सुनि लीजै । खेलत थी तुम सो बन मै तिह अउसर की कबहूं सुध कीजै । गावत थी तुम पै मिलकै जिहकी सुर ते कछु तान न छीजै । ताको कह्यो तिह की सुध कै बहुरो ब्रिजबासन को सुख दीजै ॥ ९६८ ॥ ॥ सवैया ॥ अउर कही ब्रिखभान सुता हरिजू सोऊ बात अबै सुनि लइयै । यौं कह्यो त्याग तुमै मथुरा बहुरो ब्रिज कुंजन भीतर अइयै । जिउं हमरे संग खेलत थे तिह भांत कह्यो फिरि खेल मचइयै । चाह घनी तुहि देखन की ग्रहि आइ कह्यो हमको सुख दइयै ॥ ९६९ ॥
॥ सवैया ॥ तेरे पिखे बिन हे हरि जी कही भांत कह्यो नहीं मो मन भीजै । सूक भई पुतरी सी कह्यो कही यों हरि सो बिनती सुन लीजै । बातन मोहि न होत प्रतीत कह्यो घनस्याम पिखेइ प्रसीजै । आनन पै सम चंद निहार चकोर सी ग्वारन को सुख दीजै ॥ ९७० ॥ ॥ ऊधव चंद्रभगा को संदेश बाच ॥
॥ सवैया ॥ यों तुम सो कह्यो चंद्रभगा हरिजू अपनो मुख चंद

भुलाकर पुरवासियों में लीन हो गए हो । हे कृष्ण ! हमने तुमसे हठ किया था, परन्तु अब हम हार चुकी हैं ॥ ९६७ ॥ ॥ सवैया ॥ तुमसे और भी कहा है, हे श्याम ! चित्त लगाकर उसे सुन लो । तुम्हारे साथ कभी हम खेला करती थी, हे कृष्ण ! उस अवसर को भी कभी याद कर लो । तुम्हारे साथ कभी न समाप्त होनेवाली तान खींचकर गाया करती थी । इन सबको याद करने के लिए कहा है और यह भी कहा है कि हे कृष्ण ! पुनः ब्रजवासियों की खोज-खबर लो ॥ ९६८ ॥ ॥ सवैया ॥ और सुनो, राधा ने कहा कि मथुरा को त्याग फिर व्रज के कुंजों में आ जाओ और जैसे पहले खेलते थे पुनः खेल की धूम मचाओ । हे कृष्ण ! तुम्हें देखने की इच्छा बहुत बलवती हो रही है । तुम आओ और हमको सुख दो ॥९६९॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! तुम्हें देखे बिना मेरा मन नहीं मानता । राधा सूखकर पतली-सी हो गई है और उसने कहा है कि हे कृष्ण ! मेरी प्रार्थना सुनो; मेरी बातों से ही संतुष्टि नहीं होती । मेरी संतुष्टि तो केवल तुम्हें देखने से ही होगी । अपने मुखचन्द्र से चकोर रूपी गोपियों को सुख दीजिए ॥ ९७० ॥ ॥ उद्धव द्वारा चन्द्रभगा का संदेश उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! चन्द्रभगा ने कहा है कि अपना चन्द्रमुख दिखाइए । हे मैया हलधर उन्होंने कहा है कि हम बिना कृष्ण को देखे व्याकुल हो गई

दिखइयै। ब्याकुल होइ गई बिनु तै सु हहा कह्यो टेर हलीधर भइयै। ताही तै आवहु ना चिर लावहु मो जिय की अब ही सुन लइयै। हे ब्रिजनाथ कह्यो नंदलाल चकोरन ग्वारनि को सुख दइयै ॥ ६७१ ॥ ॥ सवैया ॥ हे ब्रिजनाथ कह्यो ब्रिजनार हहा नंदलाल नही चिर कीजै। हे जदुरा अग्रज जसुधा सुत रच्छक धेन कह्यो सुन लीजै। साप के नाथ असुर बधिया अरु आवन गोकलनाथ न छीजै। कंस बिदार अबै करतार चकोरन ग्वारनि कौ सुख दीजै ॥ ६७२ ॥ ॥ सवैया ॥ हे नंदनंद कह्यो सुखकंद मुकंद सुनो बतिया गिरधारी। गोकलनाथ कहो बक के रिप रूप दिखावहु मोहि मुरारी। स्री ब्रिजनाथ सुनो जसुधा सुत भी बिन त्वै ब्रिजनार बचारी। जानत है हरिजू अपने मन ते सभ ही इह तीय बिसारी ॥ ६७३ ॥ ॥ सवैया ॥ कंस के मार सुनो करतार बका मुख फार कह्यो सुनि लै। सभ दोख निवार सुनो ब्रिजनाथ अबै इन ग्वारनि (मू०ग्रं०३८४) रूप दिखै। घनस्याम की सूरत पेखे बिना न कछू इनके मन बीच रुचै। तिह ते हरिजू तज कै मथुरा इनकै सभ शोकन को हरि दै ॥ ६७४ ॥

हैं। इसलिए अब विलंब न लगाओ और आकर मेरे दिल की बात सुन लो। हे व्रजनाथ कृष्ण ! गोपियों ने कहा है कि हम चकोरियों को सुख प्रदान कीजिए ॥ ६७१ ॥ ॥ सवैया ॥ हे व्रजनाथ ! गोपियों ने कहा है कि अब देर मत कीजिए। हे यदुवंशियों में श्रेष्ठ ! यशोदा के सुत और गायों के रक्षक ! हमारा कहना सुन लीजिए। हे कालिय नाग को नाथनेवाले ! असुरों का वध करनेवाले गोकुलनाथ तथा कंस को मारनेवाले ! तुम चकोर रूपी गोपियों को सुख प्रदान करो ॥ ६७२ ॥ ॥ सवैया ॥ हे नंद के पुत्र, सुखों के मूल और पर्वत को धारण करनेवाले, गोकुलनाथ तथा बकासुर को मारनेवाले ! हमें आकर दर्शन दो। हे व्रजनाथ ! यशोदा के पुत्र ! सुनो, तुम्हारे बिना व्रज की स्त्रियाँ असहाय हो गई हैं। हम सब जानती हैं कि हे कृष्ण ! तुमने हम सबको मन से भुला दिया है ॥ ६७३ ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! तुमने कंस को मारकर बकासुर का मुँह फाड़ दिया था। हमारे सब दोषों को अनदेखा करके हे व्रजनाथ ! इन गोपियों को दर्शन दीजिए, क्योंकि आपको देखे बिना इनको कुछ भी अच्छा नहीं लगता इसलिए हे कृष्ण ! अब मथुरा को छोड़कर आओ और इन सबका दुःख दूर कर दो १७४

॥ बिज्जछटा अरु मैनप्रभा संदेश बाच ॥ ॥ सवैया ॥ बिज्जछटा अरु मैनप्रभा संग तोहि सियाम कह्यो सुनि ऐसे । प्रीत बढाइ इती इनसों अब त्याग गए कहु कारन कैसे । आवहु स्याम न ढील लगावहु खेल करो हम सो फुन वैसे । मान करै ब्रिखभान सुता पठवौ हमको तुम वा बिध जैसे ॥ ९७५ ॥ ॥ स्वैया ॥ ऊधव स्याम सो यौ कहियो तुमरो रहिबो जब स्रउन धरैंगी । त्याग तबै अपने सुख को अति ही मन भीतर शोक करैंगी । जोगन बस्त्रन को धरहै कि कह्यो बिख खाइकै प्रान परैंगी । ताही ते हे हरि जी तुम सो ब्रिखभान सुता फिर मान करैंगी ॥ ९७६ ॥ ॥ सवैया ॥ यों तु कही उनहूँ तुम को ब्रिखभान सुता जु कह्यो सुन लीजै । त्याग गए हमको ब्रिज मै मनुआ तुमरो सु लखो न प्रसीजै । बैठ रहे अब हो मथुरा इह भाँत कह्यो मनुआ जब खीजै । जिउँ हमको तुम पीठ दई तुमकौ तुमरी मन भावत दीजै ॥ ९७७ ॥ अउर कही तुम सौ ब्रिजनाथ कही अब ऊधव सो सुन लइयै । आप चलो तु नही कह्यो नाथ बुलावन ग्वारनि दूत पठइयै । जो कोऊ दूत पठो न कयो तब तो उठ आपन हो तह जइयै । ना तर ग्वारनि को द्रिड़ता हू को स्याम कहै अब दान दिवइयै ॥ ९७८ ॥ तेरो

॥ विद्युच्छटा और मैनप्रभा उवाच ॥ ॥सवैया॥ विद्युच्छटा और मैनप्रभा ने, हे कृष्ण ! तुमसे यह कहा है कि इतना प्रेम बढ़ाकर अब क्यों त्यागकर चले गए हो । हे कृष्ण ! अब विलंब मत लगाओ, जल्दी आ जाओ और हमारे साथ वैसे ही खेल खेलो। राधा तुमसे रूठी है, हे कृष्ण ! या फिर किसी तरीक़े से हमको बुला भेजो ॥ ९७५ ॥ ॥ सवैया ॥ हे उद्धव ! श्याम से यह कहना कि हम जैसे ही तुम्हारा वहीं रह जाना सुनेंगी तो हम सब सुखों को त्यागकर शोकमग्न हो जायँगी; योगियों के वस्त्र पहनकर विष खाकर मर जायँगी और फिर राधा तुमसे पुनः मान करेगी ॥ ९७६ ॥ ॥ सवैया ॥ ये तो उन्होंने कहा, अब जो राधा ने कहा वह भी सुन लो । कृष्ण हमको त्यागकर चले गए हैं; ब्रज में हमारा मन नहीं लगता । तुम मथुरा में बैठे हो और हमारा मन खीझ रहा है । हे कृष्ण ! जिस प्रकार तुमने हमको भुला दिया है, तुम्हारी मनभावन (रानी) भी तुमको वैसे ही भुला दे ॥ ९७७ ॥ हे व्रजनाथ ! गोपियों ने कहा है कि या तो स्वयं आ जाएँ अथवा गोपियों को बुलाने के लिए किसी दूत को भेज दीजिए यदि कोई दूत भी नहीं भेजा तो गोपियाँ स्वयं ही चली आएँगी नहीं तो हे श्याम ! गोपियों को मन की दृढ़ता का दान दीजिए ९७८ हे

ही ध्यान धरैं हरिजू अरु तेरो ही लैकर नामु पुकारैं । मात पिता की न लाज करैं हरि साइत स्याम ही स्याम चितारैं । नाम अधार ते जीवत है बिन नाम कह्यो छिन मैं कसटारैं । या बिधि देख सदा उनकी अति बीच बढ्यो जिय शोक हमारैं ।। ६७६ ।। ।। सवैया ।। मात पितान की शंक करैं नहि स्याम ही स्याम करैं मुख सिउ । भूम गिरैं बिध जा मतवार परैं गिरकैं धर पैं सोऊ तिउ । ब्रिजकुंजन ढूँढत है तुमको कबि स्याम कहै धन लोभक जिउ । अब ता तैं करो बिनती तुम सों पिखकैं तिन को फुन हुउ दुख इउ ।।६८०।। ।। सवैया ।। आप चलो इह ते न भली जु पैं आप चलो नही दूत पठीजैं । तां ते करो बिनती तुम सों दुहू बातन ते इक बात करीजैं । जिउं जल (मू०ग्रं०३८५) के बिन मीन दशा सु दशा भई ग्वारनि की सुनि लीजैं । कै जल होइ उनैं मिलिऐ कि उनैं द्रिड़ता को कह्यो बर दीजैं ।। ६८१ ।। ।। कबियो बाच ।। ।। सवैया ।। ब्रिजबासन हाल किधौ हरिजू फुन ऊधव ते सभ ही सुन लीनो । जाकी कथा सुन कै चित ते सु हुलास घटैं दुख होवत जीनो । स्याम कह्यो मुख ते इह भांत किधो कबि नैं सु

कृष्ण ! वे तुम्हारा ध्यान कर रही हैं और तुम्हारा ही नाम लेकर पुकारती हैं। वे माता-पिता की लज्जा भी नहीं मान रही हैं और प्रत्येक घड़ी श्याम, श्याम ही पुकार रही हैं। वे आपके नाम के आधार पर ही जीवित हैं और नाम के बिना उन्हें बहुत कष्ट होता है। उनकी यह दशा देखकर हे कृष्ण ! मेरे हृदय में भी शोक बढ़ गया है ।। ६७६ ।। ।। सवैया ।। माता-पिता की लज्जा का त्याग कर गोपियाँ श्याम ही श्याम की रट लगा रही हैं। मतवालों की तरह वे धरती पर गिर पड़ और उठ रही हैं। धन के लोभी की व्याकुलता की तरह व्याकुल होकर वे तुम्हें व्रज के कुंजों में ढूंढ़ रही हैं। इसीलिए मैं तुमसे प्रार्थना कर रहा हूँ। मेरा दुःख भी उनको देखकर बढ़ गया है ।।६८०।। ।।सवैया।। यदि आप स्वयं चले चलें तो इससे अच्छा और अन्य कुछ नहीं हो सकता। यह नही तो अपना दूत भेज दीजिए। मेरी प्रार्थना है कि दोनों कामों में से एक काम (अवश्य) कर दीजिए। जो दशा जल बिना मछली की हो जाती है वही दशा गोपियों की हो गई है। अब या तो जल-रूप होकर उन्हें मिलिए अन्यथा उन्हें दृढ़मन होने का वरदान दीजिए ।।६८१।। ।। कवि उवाच ।। ।। सवैया ।। व्रज-वासियों की दशा कृष्ण ने उद्धव से सुन ली। उस कथा को सुनकर आनंद कम तथा दुःख बढ़ता है कृष्ण ने अपने मुख से कहा और कवि ने उस कथन को

सोऊ लखि लीनो । ऊधव मै उन ग्वारनि को सु कयो द्रिड़ता को अबै बर दीनो ॥ ९८२ ॥ ॥ दोहरा ॥ सत्रह सै चवताल मै सावन सुदि बुधवार । नगर पावटा मो तुमो रचियो ग्रंथ सुधार ॥ ९८३ ॥ ॥ दोहरा ॥ खड़गपान की क्रिपा ते पोथी रची बिचार । भूल होइ जहँ तहि सुकबि पड़िअहु सभै सुधार ॥ ९८४ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे गोपी ऊधव संबादे बिरह नाटक बरननं नाम धिआइ समापतम सतु ॥

अथ कुबजा ग्रहि गवन कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ गोपन को पोखन कर्यो हरि जू क्रिपा कराइ । अवर खेल खेलन लगे अति ही हरख बढाइ ॥ ९८५ ॥ ॥ सवैया ॥ माधव ऊधव लै अपने संग एक समै कुबजा ग्रहि आए । ए सुन आगे ही आइ लए मन भावत देख सभै सुख पाए । लै हरिके जुग पंकज पाइन सीस ढुलाइ रही लपटाए । ऐसो हुलास बढ्यो जिय मो जिम चातिक मोर घटा घहराए ॥ ९८६ ॥ ॥ सवैया ॥ ऊच अवास बन्यो अति

अनुभव कर कहा है कि हे उद्धव ! मैं उन गोपियों को दृढ़मन होने का वरदान तत्काल देता हूँ ॥ ९८२ ॥ ॥ दोहा ॥ सावन सुदी बुधवार को सम्वत् १७४४ में पाँवटा नगर में सुधारकर इस ग्रंथ की रचना की गई है ॥ ९८३ ॥ ॥ दोहा ॥ खड़गधारी परमात्मा की कृपा से इस ग्रंथ का विचारपूर्वक सृजन किया गया है, अपितु फिर भी जहाँ कहीं भी भूल होगी कविगण (कृपापूर्वक) इसे सुधारकर पढ़ लेंगे ॥ ९८४ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में गोपी-उद्धव-संवाद में विरह-नाटक-वर्णन अध्याय की सत् समाप्ति ॥

कुब्जागृह-गमन-कथन

॥ दोहा ॥ गोपों का कृपापूर्वक पोषण करके श्रीकृष्ण आनंदित होकर अन्य खेल खेलने लगे ॥९८५॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण एक बार उद्धव को साथ लेकर कुब्जा के घर आए । कुब्जा ने कृष्ण को आया जानकर आगे पहुँचकर उनका स्वागत किया और सुख प्राप्त किया । कृष्ण के पदपंकज पर उसने सिर झुकाया और मन मे ऐसे प्रसन्न हुई जैसे मोर घटा को देखकर प्रसन्न होता

सुभर मईंगर रंग के चित्त बनाए। चंदन धूप कदंब कलंबक दीपक दीप तहा दरसाए। लै परजंक तहाँ अति सुंदर स्वच्छ सु मउर सुगंध बिछाए। दो कर जोर प्रनाम कर्‌यो तब केसव ता पर आन बैठाए॥ ९८७॥ ॥ दोहरा॥ रतन खचत पीढ़ा बहुर ल्याई भगति जनाइ। ऊधव जी सों यो कह्यो बैठहु या पर आइ॥ ९८८॥ ॥ सवैया॥ ऊधव जी कुबजा सो कहै निज प्रीत लखी अति ही तुमरी मै। हउ अति दीन अधीन अनाथ न बैठ सकउ समुहाइ हरी मै। कान्ह प्रताप तबै उठ पीढ़े कउ दीन उठाइके बाही धरी मै। पै इतनो करकै भुअ बैठ रह्यो गहि पाइन नेह छरी मै॥ ९८९॥ जे पद पंकज शेश महेश सुरेश दिनेश निसेश न पाए। जे पदपंकज बेद (मू०ग्रं०३८६) पुरान बखान प्रमान कै ग्यानन गाए। जे पद पंकज सिद्ध समाध मै साधत है मुन मोन लगाए। ते पद पंकज केसव के अब ऊधव लै कर मै सहराए॥ ९९०॥ ॥ सवैया॥ संत सहारत स्याम के पाइ महा बिगस्यो मन भीतर सोऊ। जोगन के जोऊ ध्यान के बीच न आवत है अति ब्याकल होऊ। जा ब्रहमादिक शेश सुरादिक खोजत

है॥ ९८६॥ ॥ सवैया॥ उसका आवास अत्यन्त सुन्दर है और उस पर लाल रंग के चित्र बने हुए हैं। वहाँ चंदन, अगरु, कदंब के पेड़ और दीपक आदि दिखाई पड़ रहे हैं। सुंदर पलंग वहाँ है और उन पर सुन्दर विस्तर बिछाए हुए हैं। कृष्ण को दोनों हाथ जोड़कर कुब्जा ने प्रणाम किया और उन्हें वहाँ ला बैठाया॥ ९८७॥ ॥ दोहा॥ फिर एक रत्नखचित आसन लेकर कुब्जा आई और उद्धव जी को उस पर बैठने के लिए कहा॥९८८॥ ॥ सवैया॥ उद्धव जी कुब्जा से कहने लगे कि तुम्हारा प्रेम मैंने अत्यन्त गहन देखा है। मैं अत्यन्त दीन हूँ, अनाथ हूँ अत: भगवान के सामने नहीं बैठ सकता। कृष्ण के तेज को अनुभव करते हुए उन्होंने आसन अलग रख दिया और प्रेमपूर्वक श्रीकृष्ण जी के चरण पकड़कर धरती पर बैठ गए॥ ९८९॥ जिन चरणों को शेषनाग, महेश, सूर्य एवं चंद्र भी न पा सके; जिन चरणों का वर्णन वेद, पुराण आदि में सप्रमाण हुआ है; जिन चरणों को सिद्धगण समाधि में ध्याते हैं, उन चरणों को अब प्रेमपूर्वक उद्धव दबा रहे हैं॥ ९९०॥ ॥ सवैया॥ जो सत आध्यात्मिक तौर पर अत्यन्त विकसित हो जाते हैं, वे प्रभु के चरणों के प्रताप को सहन कर पाते हैं। जो चरण व्याकुल योगियों के ध्यान के बीच में भी नही आते हैं जिन चरणों का ब्रह्मा इंद्र शेषनाग आदि भी रहस्य नही समझ

अंति न पावत कोऊ। सो पद कंजन की सम तुल्लि पलोटत ऊधव लै कर दोऊ ॥ ९९१ ॥ इत स्याम पलोटत ऊधव पाइ उतै उन मालन साज किए। सुभ बज्जन के अरु लाल जवाहर देखि जिसै सुख होत जिए। इतने पहि कान्ह पै आइ गई बिंदरी कहि इंगर भाल दिए। तिह रूप निहार हुलास बढ्यो कबि स्याम कहै जदुबीर हिए ॥ ९९२ ॥ ॥ सवैया ॥ सज साजन मालन अंगन मै अति सुंदर सो हरि पास गई। मनो दूसर चंदकला प्रगटी मनो हेरत कै इह रूप-भई। हरिजू लखिकै जिय की बिरथा कबि स्याम कहै सोऊ ऐंच लई। तिह ऊपरि बैस अशंक भई मन की सभ शंक पराइ गई ॥ ९९३ ॥ ॥ सवैया ॥ बहियाँ जब ही गहि स्याम लई कुबजा अति ही मन मै सुख पायो। स्याम मिले बहुते दिन मै हम कउ कहि कै इह भाँत सुनायो। चंदन जिउँ तुहि अंग मल्यो तिह ते हमहूँ जदुबीर रिझायो। जोऊ मनोरथ थो जिय मै तुमरे मिलए सोऊ मो करि आयो ॥ ९९४ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे कुबजा के ग्रहि जा मनोरथ पूरन समापतं ॥

सके, उनके कमल के समान चरणों को उद्धव अपने हाथों में सहला-दबा रहे हैं ॥ ९९१ ॥ इधर उद्धव श्रीकृष्ण के पाँव दबा रहे हैं, उधर मालिनी कुब्जा ने साज-शृंगार किया। उसने सुख देनेवाले पत्थर, लाल, जवाहिर आदि धारण किए और बिंदिया तथा सिंदूर माथे पर लगाकर वह पास आ बैठी। उसके इस रूप-सौंदर्य को देखकर कृष्ण मन में आनंदित हो उठे ॥ ९९२ ॥ ॥ सवैया ॥ शृंगार करके मालिनी कुब्जा श्रीकृष्ण के पास गई और ऐसी लगने लगी मानो दूसरी चंद्रकला प्रकट हुई हो। कृष्ण ने कुब्जा के मन की आतुरता को अनुभव कर उसे अपनी ओर खींच लिया। कुब्जा भी कृष्ण के अंक में बैठकर निस्संकोच हो गई और उसकी सभी शंकाएँ समाप्त हो गयीं ॥ ९९३ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कुब्जा की बाँह श्याम ने पकड़ी तो उसे अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ। वह सुनाकर कहने लगी कि हे श्याम ! आप हमें बहुत दिनों बाद मिले हैं। तुम्हारे लिए मैंने चंदन के समान अपने अंगों को मलकर स्वच्छ किया है और अब आपके मिलने से मैंने अपने मन का मनोरथ पा लिया है ॥ ९९४ ॥

श्री बचित्र नाटक ग्रंथ में कुब्जा के घर जाकर मनोरथ पूर्ण करना समाप्त

अथ अक्रूर के धाम कान्ह जू आए ॥

॥ सवैया ॥ दै सुख मालन कउ अति ही अक्रूरहि के फिर धाम पधार्यो । आवत सो सुन पाइ लग्यो तिह महि चल्यो हरि प्रेम चितार्यो । सो गहि स्याम के पाइ रह्यो कबि ने मुख ते इह भाँत उचार्यो । ऊधव सो जदुबीर कह्यो इन संतन को अति प्रेम निहार्यो ॥ ९९५ ॥ ऊधव स्याम कह्यो सुनकै अक्रूरहि को अति प्रेम निहार्यो । सुद्ध करी उन की मन मै कुबजा को कह्यो अरु प्रेम चितार्यो । सो गनती करि कै मन मै कन्हया संग पै इह भाँत उचार्यो । हे हरिजू इह के पिखए उन को सभ (मू०ग्रं०३८७) प्रेम बिदा करि डार्यो ॥ ९९६ ॥ ॥ सवैया ॥ हरि रूप निहार भनै सुख पाइकै स्री जदुबीर की सेव सु कीनी । पाइ परो तहि के बहुरो उठ देवकी लाल पराक्रम दीनी । भोजन अंन जितो ग्रह थो सोऊ आन धरो हित बात लखीनी । थो मन मो सोऊ बाछत इच्छव है जसुधा सुत पूरन कीनी ॥९९७॥ ॥ सवैया ॥ पूरन कै मनसा तिह की संग ऊधव लै फिर धाम अयो । ग्रहि आइ कै मंगन लोग बुलाइ गवावत भ्यो तिह राग गयो । तिन

अक्रूर के घर कृष्ण जी का आगमन

॥ सवैया ॥ मालिन कुब्जा को सुख देकर फिर कृष्ण जी अक्रूर के घर पधारे । वह भी श्रीकृष्ण का आना सुनकर प्रेमपूर्वक उनके पाँव पर आ पड़ा । वह कृष्ण के पाँव पड़े हुए हैं और उन्हें देखकर श्रीकृष्ण ने उद्धव से कहा कि इस प्रकार के संतों का प्रेम भी अत्यन्त गहन् है, जिसे मैंने अनुभव किया है ॥ ९९५ ॥ श्याम ने उद्धव से कहा कि अक्रूर का प्रेम देखकर मुझे कुब्जा के प्रेम की सुधि आ रही है । यह देखकर सोच-विचारकर उद्धव ने यह कहा कि हे हरि ! इनका प्रेम इतना है कि उसके सामने कुब्जा के प्रेम को विदा कर दीजिए ॥ ९९६ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण का रूप देखकर अक्रूर परम सुखी हुए और उन्होंने श्रीकृष्ण की भलीभाँति सेवा की । उनके पाँव को छुआ और उनकी परिक्रमा की । प्रेम से अभिभूत होकर अक्रूर ने घर में जो अन्न, भोजन आदि था, श्रीकृष्ण के सामने ला रखा । जो कुछ अक्रूर के मन में इच्छा थी यशोदा के पुत्र श्रीकृष्ण ने पूरी कर दी ॥ ९९७ ॥ सवैया अक्रूर की इच्छा पूर्ण करके उद्धव को साथ लेकर श्रीकृष्ण फिर

ऊपर रीझ कहै कबि स्याम घनो ग्रहि ते कद दान दयो । मनो ता जस ते भ्रित मंडल मै अबके दिन लउ दिन सेत भयो ॥ ६६८ ॥ अक्रूर सिआम के धामहि आइकै स्री जदुबीर के पाइन लाग्यो । कंस बिदार बकी उर फार कह्यो करतार सराहन लाग्यो । अउर गई सुध भूल सभै हरि की उपमा रस भीतर पाग्यो । आनंद बीच बढ्यो मन के मन को दुख थो जितनो सभ भाग्यो ॥ ६६६ ॥ ॥ सवैया ॥ देवकी लाल गुपाल अहो नंदलाल दिआल इहै जिय धार्यो । कंस बिदार बकी उर फार कह्यो करता जदुबीर उचार्यो । हे अघ के रिप हे रिप केसी के हे कुपजाह त्रिनाव्रत मार्यो । ता अब रूप दिखाइ हमै हमरो सभ पाप बिदा करि डार्यो ॥१०००॥ ॥ सवैया ॥ चोर है साधन के दुख को सुख को बरदाइक स्याम उचार्यो । है ठग ग्वारन चीरन को भट है जिन कंस सो बीर पछार्यो । काइर है बहु पापन ते अरु बैद है जा सभ लोग जियार्यो । पंडित है कबि स्याम कहै जिन चारो ई बेद को भेद सवार्यो ॥ १००१ ॥ ॥ सवैया ॥ यों कहि कै जदुबीर

अपने घर वापस आए । घर में आकर भिक्षुओं को बुलाया गया और उन पर प्रसन्न होकर उन्हें अनेक प्रकार से दान दिया गया । उससे श्रीकृष्ण का इतना यश हुआ कि उस यश की धवल कीर्ति से आज तक दिन श्वेत दिखाई पड़ता है ॥ ६६८ ॥ अक्रूर श्याम के महल में आकर (पुन:) उनके पाँव पड़ा । वह कंस के हंता, बकासुर का वध करनेवाले कर्ता कृष्ण की प्रशंसा करने लगा । प्रभु की प्रशंसा करने में हो वह अपनी सुधि भूल गया और उसका सब दु:ख दूर हो गया तथा मन में आनंद की वृद्धि हुई ॥ ६६६ ॥ ॥ सवैया ॥ ये कृष्ण देवकी के पुत्र नंदलाल हैं, जिन्होंने कंस को मारकर बकासुर का हृदय फाड़ दिया था और जिन्हें यदुवीर के नाम से जाना जाता है । हे केशी को मारनेवाले, सभी पापों का नाश करनेवाले तथा कुपित होकर तृणावर्त को मार डालनेवाले श्रीकृष्ण ! आपने अपना रूप दिखाकर मेरे सभी पापों का नाश कर दिया है ॥ १००० ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण को साधुओं के दु:खों का हरण करनेवाला, सुख प्रदान करनेवाला, गोपियों के वस्त्र चुरानेवाला ठग और कंस के वीरों को पछाड़नेवाला महान् बलशाली कहा जाता है । वह पापों से दूर रहनेवाला तथा लोक को सभी व्याधियों से बचा कर जीवित रखनेवाला है कवि श्याम का कथन है कि वही कृष्ण चारों वेदों के रहस्य का कथन महान पंडित भी है १००१ ।

के सो कबि स्याम कहै उठ पाइ पर्यो । हरि की बहु बार सराह करी दुख थो जितनो छिन बीच हर्यो । अरु ता छबि को जस उच्च महाँ कबि नैं बिध या मुख ते उचर्यो । हरि नाम सँजोअ कउ पैन्ह तनै सभ पापन संग लर्यो न टर्यो ।। १००२ ।। ।। सवैया ।। फिरि यों करि कानर की उपमा हरिजी तुमही मुर शत्र पछार्यो । तैंही मरे त्रिपराद कमद्ध सु रावन मार घनो रन पार्यो । लंक दई अर भ्रातर कउ सिय को संग लै फिरि अउध सिधार्यो । तैंही चरित्र किए सभ ही हम जानत है इह (मू०ग्रं०३८८) भाँत उचार्यो ।। १००३ ।। हे कमलापति हे गरड़ाध्वज हे जगनाइक कान्ह कह्यो है । हे जदुबीर कहो बतिया सभ ही तुमरी त्रित लोक भयो है । मोरी हरो ममता हरिजू इह भाँत कह्यो हरि चीन्ह लयो है । डार दई ममता तिह पै सोऊ मोनहि धारकै बैठ रह्यो है ।। १००४ ।। ।। कान्ह जू बाच अक्रूर सो ।। ।। सवैया ।। ऐहो चचा जदुबीर कह्यो हम कउ समझे बिन तैं हरि चीनो । ताते लडावहु मोहि कह्यो जिह ते सुख हो अति ही मुहि जीनो । आइ समो बसुदेवह जी अक्रूर बडे लखऊ कर कीनो । ताते नमो घनिस्याम लखै इह भात कह्यो हरिजू

।। सवैया ।। यह कहकर (अक्रूर) श्रीकृष्ण के पाँव पड़ा। उसने हरि का बार-बार गुणानुवाद किया और क्षण भर में उसके दुःख दूर हो गए। कवि ने उस छवि का वर्णन इस भाँति किया है कि अक्रूर मानो हरि के नाम का कवच पहनकर अभय होकर पापो से लड़ने के लिए सक्षम हो गया हो ।। १००२ ।। ।। सवैया ।। फिर उसने कृष्ण की प्रशंसा की और कहा कि हे हरि ! आपने ही मुर नामक दैत्य का वध किया, कबंध और रावण आदि को भीषण युद्ध में मारा। तुम्हीं ने लंका विभीषण को दी और स्वयं सीता को लेकर अयोध्या चले आए। मैं भलीभाँति स्वीकार करता हूँ कि आपने ही ये सब लीलाएँ कीं ।। १००३ ।। हे गरुड़ध्वज, लक्ष्मीपति एवं जगत् के नायक ! मेरी बात सुनो, आप ही सारे विश्व का आधार हो। कृष्ण ने जान लिया कि अक्रूर मोह-ममता से छूटने की बात कहना चाहता है, अतः उन्होंने मन-ही-मन वरदान देकर उसकी ममता को दूर कर दिया और स्वयं चुप होकर बैठे रहे ।। १००४ ।। ।। कृष्ण उवाच अक्रूर के प्रति ।। ।। सवैया ।। हे चाचा ! आपने मुझे बिना जाने ही भगवान के रूप में देखा है। आप तो मुझे सुख दीजिए जिससे मेरा जीवन सुखमय हो वसुदेव जी के बाद आप ही तो

हसि दीनो ॥ १००५ ॥ ॥ सवैया ॥ सो सुन बीर प्रसंन भयो मुसलीधर स्याम जू कंठ लगाए । शोक जिते मन भीतर थे हरि को तन भेट सभै बिसराए । छोट भतीज लखे करिकै करिकै जगकै करता नही पाए । या बिध भी तिह ठउर कथा तिह के कबि स्यामहि मंगल गाए ॥ १००६ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे अकरूर ग्रिह जैबे संपूरनम ॥

अथ अक्रूर को फुफी पास भेजन कथनं ॥

॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर कह्यो हसिकै बरबीर गजापुर मै चल जय्यै । मो पित की भगनी सुत है तिनको अब जाइकै सोधहि लय्यै । अंध तहा न्रिप है मनअंध द्रुजोधन भ्यो बस ताको लखय्यै । पंड के पुत्रन को हित ठउर दईयत है सुख कै दुख दय्यै ॥ १००७ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनकै तिह की बतिया करिकै अक्रूर प्रनाम सिधार्यो । पंथ की बात गनउ कहि लउ पग बीच गजापुर के तिन धार्यो । प्रात भए न्रिप बीच सभा कबि स्याम कहै इह भांत उचार्यो । भूप कही कहु मो बिरथा जदुबीरहि जा बिधि कंस पछार्यो ॥ १००८ ॥

सबसे बड़े माने जायेंगे । मेरा आपको नमस्कार है । यह कहकर श्रीकृष्ण मुस्कुरा दिये ॥ १००५ ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर अक्रूर प्रसन्न हुआ और उसने कृष्ण-बलराम को गले लगा लिया । मन के शोक का त्याग किया और छोटे भतीजों को भतीजे मानने लगा न कि जगत्कर्ता । इस प्रकार यह कथा वहाँ हुई जिसका कवि श्याम ने मंगल-गायन किया है ॥ १००६ ॥

॥ श्री दशम स्कंध में बचित्र नाटक के कृष्णावतार में अक्रूर के घर जाना संपूर्ण ॥

अक्रूर को बुआ के पास भेजना

॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने हँसकर अक्रूर से कहा कि आप हस्तिनापुर चले जायँ और मेरे पिता की बहिन के पुत्रों (पाण्डवों) का हालचाल ले आयें । वहाँ एक अंधा राजा मतिअंध दुर्योधन के वश में है, उसको भी देखते आइए । पाण्डव के पुत्रों को ये सब सुख देने के बजाय दुःख दे रहे है ॥ १००७ ॥ ॥ सवैया ॥ यह बात सुनकर अक्रूर प्रणाम कर चल पड़े तथा मार्ग का वर्णन मैं क्या करूँ, वे हस्तिनापुर आ पहुँचे । प्रातः वे राजा के दरबार में उपस्थित हुए जहाँ राजा ने कहा कि हे अक्रूर ! मुझे बताओ कि श्रीकृष्ण ने किस प्रकार

बतिया सुनि उत्तर देत भयो रिप सो सभ जा बिधि स्याम लर्यो । गज मार प्रहार कै मल्लन को दल फारकै कंस सो जाइ अर्यो । तब कंस निकार क्रिपान करै अरु ढाल समारकै जुद्ध कर्यो । तब ही हरिजू गहि केसन ते पटक्यो धरनी पर मार डर्यो ॥ १००९ ॥ ॥ सवैया ॥ भीखम द्रोण क्रिपारु क्रिपी सुत और दुसासन बीर निहार्यो । सूरज को सुत भूरस्रवा जिन पारथ भ्रात सो बैर उतार्यो । राज द्रुजोधन (मू०ग्रं०३८९) मातल सो इह पेखत ही इह भांत उचार्यो । स्याम कहा बसुदेव कहा कहि अंगि मिले मन को दुखु टार्यो ॥ १०१० ॥ ॥ सवैया ॥ रंचक बैठ सभा न्रिप की उठकै जदुबीर फुफी पहि आयो । कुंती कउ देख ही कबि स्याम कहै तिन पाइन सीस झुकायो । पूछत भी कुसलै जदुबीर है जा जसु बीच सभै धरि छायो । नीके है स्याम मनै बसुदेव सु देवकी नीकी सुनी सुखु पायो ॥१०११॥ ॥ सवैया ॥ इतने पहि बिदरु आइ गयो सोऊ पारथ माइ कै पाइन लाग्यो । पूछत भ्यो जदुबीर सुखी अक्रूर कउ तार समो अनुराग्यो । अउर गई सुध भूल सभै कबि स्याम इहो रस भीतर पाग्यो ।

कंस को पछाड़ फेंका ॥ १००८ ॥ यह बात सुनकर अक्रूर ने वे सब ढंग बताये, जिससे कृष्ण शत्रुओं से लड़े थे । यह भी बताया कि कैसे हाथी को मारकर मल्लों के झुंड को पछाड़कर श्रीकृष्ण कंस के समक्ष जा अड़े । तब कंस ने ढाल-कृपाण सम्हालकर युद्ध किया और उसी क्षण कृष्ण ने केशों से पकड़कर कंस को धरती पर पछाड़ फेंका ॥ १००९ ॥ ॥ सवैया ॥ अक्रूर ने भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, अश्वत्थामा और सूर्यपुत्र भूरिश्रवा, जिससे अर्जुन ने बदला लिया था, को देखा । राजा दुर्योधन मामा अक्रूर को देखते ही पूछा कि कृष्ण और वसुदेव आदि कहाँ हैं । यह कहकर प्रसन्न होते हुए वह अक्रूर से मिला ॥ १०१० ॥ ॥ सवैया ॥ थोड़ी देर राज्य-सभा में बैठकर अक्रूर कृष्ण की बुआ के पास आये । कुन्ती को देखते ही इन्होंने सिर झुकाकर प्रणाम किया । कृष्ण के कुशल-क्षेम के बारे में पूछा और धरती पर सुयश को फैलानेवाले श्याम और वसुदेव तथा देवकी आदि की कुशलता के बारे मे जानकर सुख प्राप्त किया ॥ १०११ ॥ ॥ सवैया ॥ इतने में विदुर भी आ गए और उन्होंने अर्जुन की माता के चरण छुए । उसने भी कृष्ण के बारे मे अक्रूर से प्रेमपूर्वक पूछा । कृष्ण से सम्बन्धित प्रेम-भरी बातों में विदुर इतने मस्त हो गए कि उन्हे बाक़ी हर पदार्थ की सुधि भूल गई सबकी कुशलता

बाह कह्यो सभ ही है सुखी सुनके बतिया सुख क्यो दुख भाग्यो ॥ १०१२ ॥ ॥ कुंती वाच ॥ ॥ सवैया ॥ केल करै मथुरा मै सोऊ मन ते कहो हउ ब्रिजनाथ बिसारी । दुक्खत भी इन लोगन ते अति ही कहिकै घनिस्याम पुकारी । नाथ मर्‌यो सुत बाल रहे तिह ते अक्रूर भयो दुखु भारी । ता ते हउ पूछत हउ तुम कउ कबहूँ हरि जी सुध लेहु हमारी ॥ १०१३ ॥ ॥ सवैया ॥ दुक्खत ह्वै अक्रूर के संग कही बतिया न्रिप अंध निसै से । देत है दूखु घनो हम कउ कहियो सुन मीत सिआम सो एसे । पारथ भ्रात रखे उनको नहि बाहि कह्यो कहु सो बिध कैसे । यों सुनि उत्तर देत भई सोऊ आँख के बीच परे त्रिण जैसे ॥ १०१४ ॥ ॥ सवैया ॥ कहियो बिनती हमरी हरि सो अति शोक समुंद्र मै बूड गई हउ । जीवत हों कबि स्याम कहै तुहि आइस पाइकै नाम कई हउ । मारन मो सुत को न्रिप के सुत कोट उपावन सो कढई हउ । स्याम सों यों कहियो बतियां तुमरे बिन नाथ अनाथ भई हउ ॥ १०१५ ॥ ॥ सवैया ॥ यों कहिकै तिह सो बतिया अति ही दुख सास उसास सु लीनो । जो दुख मोरे रिदै महि थो सोऊ मै तुम पै

के बारे में जानकर वे धन्य-धन्य कहने लगे । उन्हें परमसुख प्राप्त हुआ और दुख दूर हो गया ॥ १०१२ ॥ ॥ कुन्ती उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण मथुरा में क्रीड़ा कर रहे हैं और मुझे उन्होंने भुला दिया है । कुन्ती पुकार कर कहने लगी कि मैं यहाँ के लोगों (कौरवों) से अत्यन्त दु:खी हो गई हूँ । मेरे स्वामी मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं और बच्चे अभी छोटे हैं । इसीलिए हे अक्रूर ! मैं घोर कष्ट में हूँ और तुमसे पूछती हूँ कि क्या श्रीकृष्ण हमारी भी खोज-खबर लेंगे ॥ १०१३ ॥ ॥ सवैया ॥ अंधा राजा धृतराष्ट्र हम पर क्रोधित है. यह कुन्ती ने अक्रूर को बताया और कहा कि हे अक्रूर ! तुम कृष्ण से कहना कि वे सब हमको बहुत दु:ख दे रहे हैं । अर्जुन तो उन सबको भाई के समान मानता है, परन्तु वे ऐसा नहीं करते हैं । मैं अपने दु:ख का वर्णन कैसे करूँ? और यह कहते हुए कुन्ती की आँखों से ऐसे पानी बहने लगे मानो आँख में कोई तिनका पड़ गया हो ॥ १०१४ ॥ ॥ सवैया ॥ हे अक्रूर ! कृष्ण से कहना कि मैं शोक के समुद्र में डूबी हुई हूँ और केवल तुम्हारे आश्वासन और नाम के सहारे जीवित हूँ । मेरे पुत्रों को मारने के लिए राजा के पुत्र अनेकों उपाय कर रहे हैं हे अक्रूर ! कृष्ण से कहना कि तुम्हारे बिना हम सब अनाथ हैं । १०१५ सवैया यह कहकर कुन्ती ने दु:खपूर्वक लम्बा साँस ली

सभ ही कहि दीनो । सो सुनियं हमरी बिरथा कहियो दुख की जदुबीर हठीनो । हे ब्रिजनाथ अनाथन नाथ सहाइ करो करि रोदन कीनो ॥ १०१६ ॥ ॥ अक्रूर बाच ॥ ॥ सवैया ॥ देख दुखातरु पारथ मात को यों कह्यो त्वै सुत ही न्रिप ह्वैहै । स्याम की प्रीत घनी तुम सों तिह ते तुम को अति ही सुख दैहै । (पू०पं०२६०) तेरी ही ओर ह्वैहै सुभ लचछन तुइ सुत शत्रन कउ दुख दैहै । राज सभै उह ही लहि है हरि शत्रन को जमलोक पठैहै ॥ १०१७ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुन कै बतियाँ तिह की मन मै अक्रूरहि मंत्र बिचार्यो । कै कै प्रनाम चल्यो तबही न्रिपु त्वै सुत है इह भाँत उचार्यो । का संग लोगन को हित है इह चित करी पुर मै पगु धार्यो । देख्यो कि प्रीत इनो संग है तिह ते सभ शोक बिदा कर डार्यो ॥ १०१८ ॥ ॥ अक्रूर बाच ध्रितराशटर सो ॥ ॥ सवैया ॥ पुर देख सभा न्रिप बीच गयो संग जा न्रिप कै इह भाँत उचार्यो । राजन मोह ते नीत सुनो कहु बाह कह्यो इन या बिध सार्यो । प्रीत तुमै सुत आपन सों तुहि पंडि के पुत्रन सो हित टार्यो । जानत है ध्रितराशटर तैं सभ आपन राज को पैड

और कहा कि जो दुःख मेरे हृदय में था वह मैंने कह दिया। हे यदुवीर अक्रूर ! तुम हमारी व्यथा श्रीकृष्ण से कहना और कुन्ती ने पुनः विलाप करते हुए यह कहा कि हे ब्रजनाथ ! तुम हम अनाथों की सहायता करो ॥ १०१६ ॥ ॥ अक्रूर उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन की माता को दुःखी देख अक्रूर ने कहा कि कृष्ण की प्रीति तुम लोगों से बहुत अधिक है। तुम्हारा पुत्र ही राजा बनेगा और तुमको अत्यन्त सुख प्राप्त होगा। सभी शुभ लक्षण (शकुन) तुम्हारे ही तरफ़ होंगे और तुम्हारे पुत्र शत्रुओं को पीड़ित करेंगे। वे ही राज्य प्राप्त करेंगे और शत्रुओं को यमलोक भेजेंगे ॥ १०१७ ॥ ॥ सवैया ॥ कुन्ती की बातों को सुनकर अक्रूर ने चलने का विचार किया। वे प्रणाम करके चले। यह जानने के लिए कि लोगों का प्रेम किनके साथ है अर्थात् कौरवों के साथ या पाण्डवों के साथ है, अक्रूर नगर के अन्दर प्रविष्ट हुए। जब उन्होंने देखा कि सबका स्नेह पाण्डवों पर ही है तो उनके मन की उदासी दूर हो गई ॥१०१८॥ ॥ अक्रूर उवाच धृतराष्ट्र के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ नगर को देखकर अक्रूर राजा की सभा में पुनः पहुँचे और वहाँ जाकर कहा कि हे राजन् ! मुझसे नीति की बात सुनो और मैं जो कह रहा हूँ उसे सत्य मानो। तुम्हें मात्र अपने पुत्रों से प्रीति है और पाण्डु के पुत्रों के हित का तुम अनदेखा कर रहे

बिगार्यो ॥ १०१६ ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे द्रुजोधन पूत ह्वै त्वै इनकी सम पुत्रन पंडु लखइयै । ता ते करों बिनती तुम सो इन ते कछु अंतर राज न कइयै । राख खुशी इनको उनको जिह ते तुमरो जग मै जसु गइयै । या बिध सो अकरूर कह्यो न्रिप सों जिह ते अति ही सुख पइयै ॥ १०२० ॥ यों सुन उत्तर देत भयो न्रिप पै हरिकै संग दूतह केरे । जेतक बात कही हम सों नही आवत एक कह्यो मन मेरे । यों कहि पंड के पुत्रन कउ पिख मारत है अब साँझ सवेरे । आइ है जो जिय सो करि है सु कछू बचना नहि मानत तेरे ॥ १०२१ ॥ दूत कह्यो न्रिप के संग यों हमरो जु कह्यो तुम रंच न मानो । तउ कुपि है जदुबीर मनै तुमको मरिहै तिह ते तिह ठानो । स्याम के भउह मरो रन सों हम जानत है तुहि राज बहानो । मो जिय मै जु हुती सु कही तुमरो जिय की सु कह्यो तुम जानो ॥१०२२॥ ॥ सवैया ॥ यों कहिकै बतिया न्रिप सौं तजिकै इह ठउर तहाँ को गयो है । कान्ह जहाँ बलभद्र बली सभ जादवबंस तहाँ सु अयो है । स्याम को चंद निहारत ही मुख ता पग पै सिर को

हो। हे धृतराष्ट्र ! क्या तुम जानते हो कि तुम अपने राज्य की मर्यादा को बिगाड़ रहे हो ॥ १०१६ ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे दुर्योधन तुम्हारा पुत्र है, उसी प्रकार तुम पाण्डवों को भी मानो। इसलिए हे राजन् ! तुमसे मेरी प्रार्थना है कि राज्य के मामले में इनसे कुछ अन्तर मत रखो। तुम दोनों ही पक्षों को प्रसन्न रखो, ताकि संसार तुम्हारे यश का गायन करे। अक्रूर ने इस विधि से ये सब बातें राजा से कहीं जिससे सबको अच्छा लगा ॥ १०२० ॥ यह सुनकर राजा ने कृष्ण के दूत (अक्रूर) से कहा कि जितनी बाते तुमने कही हैं, वह मेरे मानने में नहीं आ रही हैं। अब तो पाण्डु के पुत्रों को सुबह-शाम खोज-खोजकर मारा जायेगा। जो हमारे दिल में आयेगा हम वही करेंगे और तुम्हारी कोई बात नहीं मानेंगे ॥ १०२१ ॥ दूत ने राजा से कहा कि यदि तुम मेरा कहना नहीं मानोगे तो क्रोधित होकर कृष्ण तुम्हें मार डालेंगे। श्याम के डर से तुम युद्ध से विरत रहो और मेरे इस आने को ही तुम बहाना मान लो। मेरे हृदय में जो था वह मैंने कह दिया और अपने हृदय का हाल तुम ही जानो ॥ १०२२ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार राजा से यह बात कहकर अक्रूर उस स्थान पर चले गए जहाँ कृष्ण, बलभद्र एवं यादव-वंश के अन्य महाबली विराजमान थे। कृष्ण को देखते ही अक्रूर का शीश उनके चरणों में झुक गया और उन्होंने हस्तिनापुर का सारा वृत्तान्त श्रीकृष्ण

भुकियो है। जो बिरथा उह ठउर भई निकटै हरि के कहि भेद दयो है ॥ १०२३ ॥ ॥ सवैया ॥ तुमसों इह पारथमात कह्यो हरि दीनन की बिनती सुन लै। अति ही दुख भ्यो हमको इह ठउर बिना तुमरे न सहाइक (मू०ग्रं०३८१) कुऐ। गज को जिम संकट शीघ्र कट्यो तिम मो दुख को कटिऐ हरि ऐ। तिह ते सुनि लै सु कह्यो हमरो कबि स्याम कहै हित सों चित दै ॥ १०२४ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिशनावतारे अककूर फुफी कुंती पास भेजा समापतम ॥

अथ उग्रसैन को राज दीबो कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ स्री मनमोहन जगत गुर नंदनंदन ब्रिज मूर। गोपी जन बल्लभ सदा प्रेम खान भरपूर ॥ १०२५ ॥ ॥ छपै ॥ प्रिथम पूतना हनी बहुर सकटासुर खंड्यो। त्रिणावरत लै उड्यो ताहि नभि माहि बिहंड्यो। काली दिओ निकार चोंच गहि चीर बकासुर। नाग रूप मग रोक रह्यो

को कह सुनाया ॥ १०२३ ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण! तुमसे कुन्ती ने कहा है कि अनाथों की प्रार्थना सुन लीजिए। मैं इस स्थान पर अत्यन्त दुःखी हूँ और तुम्हारे बिना मेरा कोई सहायक नहीं। जिस प्रकार गज को ग्राह से बचाकर उसका संकट काटा था, उसी प्रकार हे कृष्ण! मेरे दुःख को काटिए। इसलिए हे कृष्ण! प्रेमपूर्वक हमारी बातों को ध्यान से सुन लीजिए ॥ १०२४ ॥

॥ श्री दशम स्कंध के बचित्र नाटक ग्रन्थ के कृष्णावतार में अक्रूर को बुआ कुन्ती के पास भेजा अध्याय समाप्त ॥

उग्रसेन को राज देना

॥ दोहा ॥ श्रीकृष्ण जगत के गुरु नन्द के नन्दन मनमोहन एवं ब्रज के मूल हैं। वे गोपियों के हृदय में विराजनेवाले सर्वदा प्रेम से परिपूर्ण बने रहनेवाले हैं ॥ १०२५ ॥ ॥ छप्पय ॥ पहले पूतना का नाश किया, फिर शकटासुर का खण्डन किया पुनः तृणावर्त का आकाश में उड़ाकर ले जाने पर नाश किया। कालिय नाग को यमुना से निकाला और चोंच पकड़कर बकासुर को चीर दिया कृष्ण ने रास्ता नाग रूपी अघासुर

तब हत्यो अघासुर । केसी सु बच्छ धेनक हन्यों रंगभूम गज डारियो । चंडूर मुसट के प्रान हरि कंस केस गहि मारियो ॥ १०२६ ॥ ॥ सोरठा ॥ अमरलोक ते फूल बरखे नंदकिशोर पै । मिट्यो सकल ब्रिज सूल कवल नैन के हेत ते ॥ १०२७ ॥ ॥ दोहरा ॥ दुष्ट अरिष्ट निवारकै लीनो सकल समाज । मथरा मंडल को दयो उग्रसैन को राज ॥ १०२८ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे राजा उग्रसैन कउ मथुरा को राज दीबो ॥

अथ जुद्ध प्रबंध ॥ जरासिंध जुद्ध कथनं ॥

॥ सवैया ॥ इत राज दयो न्रिप कउ जबही उत कंस बधू पित पास गई । अति दीन सु छीन मलीन महा मन के दुख सों सोई रोत भई । पति भइयन के बधबे कि ब्रिथा जु हुती मन मै सोई भाख दई । सुनि कै मुख ते तिह सिंध जरा अति कोप कै आँख सरोज तई ॥ १०२९ ॥ ॥ जरासिंध बाच ॥

राक्षस का वध किया और केशी, धेनुकासुर तथा रंगभूमि में गज को मार डाला । कृष्ण ने ही चण्डूर को मुष्टि-प्रहार से तथा कंस को केश पकड़कर मार गिराया ॥ १०२६ ॥ ॥ सोरठा ॥ स्वर्ग से श्रीकृष्ण पर पुष्प-वर्षा होने लगी और कमलनयन कृष्ण के प्रेम के कारण सारे व्रज में दुःख का नाश हो गया ॥ १०२७ ॥ ॥ दोहा ॥ सब दुष्टों को खदेड़कर सारे समाज को अपनी छत्रछाया में लेते हुए श्रीकृष्ण ने मथुरामण्डल का राज्य उग्रसेन को प्रदान किया ॥ १०२८ ॥

॥ श्री दसम स्कंध के बचित्र नाटक के कृष्णावतार में राजा उग्रसेन को मथुरा का राज्य देना समाप्त ॥

युद्ध-प्रबन्ध प्रारम्भ । जरासंध-युद्ध-कथन

॥ सवैया ॥ इधर जब उग्रसेन को राज्य दे दिया तब कंस की रानियाँ अपने पिता (जरासंध) के पास गयीं और अत्यन्त दीन-भाव से दुःखी होकर रोने लगीं । पति एवं उसके भाइयों के वध की कथा उन्होंने कह सुनाई जिसे सुनकर जरासंध की आँखें क्रोध से लाल हो गयीं ॥ १०२९ ॥ ॥ जरासंध उवाच दोहा अपनी पुत्री से जरासंघ ने कहा कि मैं कृष्ण और

॥ दोहरा ॥ हरि हलधरहि सँघारिहों दुहिता प्रति कहि बैन । रजधानी ते निसरियो मंत्र बुलाए सैन ॥१०३०॥ ॥चौपई॥ देस देस परधान पठाए । नरपति सभ देसन ते ल्याए । आइ न्रिपत को कीन जुहारू । दयो बहुत धन तिन उपहारू ॥१०३१॥ जरासिंध बहु सुभट बुलाए । भाँति भाँति के शस्त्र बँधाए । गज बाजन पर पाखन डारी । सिर पर कंचन सिरी सवारी ॥ १०३२ ॥ पाइक (मू०ग्रं०३६२) रथ बहुते जुरि आए । भूपति आगे सीस निवाए । अपनी अपनि मिसल सभ गए । पाँति जोर करि ठाढे भए ॥ १०३३ ॥ ॥ सोरठा ॥ यहि सैना चतुरंग जरासिंध न्रिप की बनी । साज्यो कवच निखंग धनख बान लै रथ चड़्यो ॥ १०३४ ॥ ॥ सवैया ॥ जोर चमूँ सभ मंत्रीअन लै तब यों रन साज समाज बनायो । तेइस छूहनी लै दल संग बजाइकै बंब तहा कहुँ धायो । बीर बडे सम रावन के तिन कउ संग लै मरिबे कहु आयो । मानहु काल प्रलै दिन बारध फैल पर्‌यो जल यों दलु छायो ॥ १०३५ ॥ ॥ सवैया ॥ नग मानहु नाग बडे तिह मै

बलराम का संहार करूँगा और यह कहते हुए उसने अपने मंत्रियों एवं सेना को इकट्ठा कर अपनी राजधानी से निकल पड़ा ॥१०३०॥ ॥ चौपाई ॥ उसने देश-देशान्तरों में अपने विशेष दूत भेजे जो सब देशों के राजाओं को ले आये। उन्होंने आकर राजा को प्रणाम किया और बहुत सा धन उपहार-स्वरूप दिया ॥ १०३१ ॥ जरासंध ने बहुत से वीरों को बुलाया और विभिन्न प्रकार के शस्त्रों से उन्हें लैस किया। हाथी और घोड़ों पर काठियाँ कस दी गई और सिर पर सोने के मुकुट धारण किए गए ॥ १०३२ ॥ पैदल और रथी बहुत से एकत्र हो गए और उन्होंने राजा के समक्ष सिर झुकाया। वे अपने-अपने समूह में जा मिले और पंक्तियाँ बना खड़े हो गए ॥ १०३३ ॥ ॥ सोरठा ॥ राजा जरासंध की चतुरंगिनी सेना तैयार हो गई और राजा स्वयं कवच, तरकस, धनुष-बाण आदि लेकर रथ पर आ चढ़ा ॥ १०३४ ॥ ॥ सवैया ॥ चतुरंगिनी सेना और मंत्रियों को साथ ले राजा ने युद्ध का उपक्रम किया। तेईस अक्षौहिणी सेना को साथ लेकर भयंकर गर्जन करता हुआ जरासंध चला। वह रावण के समान शक्तिशाली वीरों को साथ लेकर लड़ने के लिए आ पहुँचा। उसका दल इस प्रकार फैला हुआ था जैसे मे समुद्र फैल जाता है १०३५ सवैया बड़े-बड़े वीर पर्वतों और शेषनाग के समान बलशाली हैं जरासंध की पैदल सेना समुद्र

मछुरी पुनि पैदल की बल जेती । चक्र मनो रथ चक्र बने उपजी कबि के मन मै कही तेती । है भए बोचन तुलि मनो लहरैं बहरैं बरछी दुत सेती । सिंध किधौ दल सिंध जरा रहिगी मथुरा तिह मद्ध बरेती ॥ १०३६ ॥ जो बल बंड बडे दल मै तिह अग्र कथा महि नाम कहैहउ । जो संगि स्याम लरैं रिसकैं तिनके जस को मुख ते उचरैहउ । जे बलभद्र के संगि भिरे तिन कउ कथकैं प्रभ लोक रिझैहउ । त्याग सभै ग्रहि लालच को हरि केहरि के हरि के गुन गैहउ ॥ १०३७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जदुबीरन सबहूँ सुनी दूत कही जब आइ । मिलि सभहू न्रिप के सदन मंत्र बिचार्यो जाइ ॥ १०३८ ॥ ॥ सवैया ॥ तेइस छूहन लै दलु संग चढ्यो हम पै अति ही भर रोहै । जाइ लरै अर के समुहे इह लाइक या पुर मै अब को है । जो भजिहै जउ मान घनो रिसकैं सभ को तब मारत सोहै । ता ते निशंक भिरो इनसो जितहै तु भलो म्रितए जसु होहै ॥ १०३९ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ जदुबीर कह्यो उठिकैं रिस बीच सभा अपने बल सो । अब को बलवंड बडो हम मै चलि

मे मछलियों के समान है । सेना के रथ के पहिये तीक्ष्ण चक्रों के समान हैं और सैनिकों की बर्छियों की चमक तथा हिलना समुद्र के मगरमच्छों के समान है । जरासंध की सेना समुद्र के समान है और मथुरा इस सेना के सामने छोटे से टापू के समान है ॥ १०३६ ॥ सेना में जो बड़े-बड़े वीर हैं, आनेवाली कथा में मैंने उनका नाम बताया जो कृष्ण के साथ क्रोधित होकर लड़े उनके यश का गायन भी मैंने किया है । बलभद्र के साथ लड़नेवालों का वर्णन करके भी मैंने लोकरंजन किया । मैं सभी प्रकार के लालच को त्यागकर अब कृष्ण रूपी सिंह के गुणानुवाद करूँगा ॥ १०३७ ॥ ॥ दोहा ॥ जब दूत ने आक्रमण के बारे में बताया तो सभी यदुवंशियों ने उसे सुना और मिलकर राजा के घर में जाकर उनसे विचार-विमर्श किया ॥१०३८॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने बताया कि तेईस अक्षौहिणी सेना ले हम पर क्रोधित होकर जरासंध ने चढ़ाई की । इस नगर में कौन इस योग्य है जो शत्रु के सामने जाकर लड़ सके । यदि भागते हैं तो मान-हानि होती है और वे क्रोधित होकर हम सबको मार डालेंगे, इसलिए शंका-रहित हो जरासंध की सेना से भिड़ा जाय । क्योंकि यदि जीत गए तो अच्छा होगा और यदि मर गए तो यश की प्राप्ति होगी १०३९ सवैया तब कृष्ण ने सभा में उठकर यह कहा कि हम लोगो मे कौन ऐसा बलवान है जो शत्रु के दल से लडे और अपने बल को

आगे ही जाइ लरै दल सो । अपनो बल धार सँघारकै दानव दूर करै सभ भूतल सो । बहु भूत पिसाचन काकनि डाकनि तोख करै पल मै पल सो ॥ १०४० ॥ ॥ सवैया ॥ जब या बिध सो जदुबीर कह्यो किनहू मन मै नही धीर धर्‌यो । हरि देखि तबै मुखि बाइ रहे सभहूँ भजबे कहु चित्त कर्‌यो । जोऊ मान हुतो मन छत्रन के सोऊ ओरनि की सम तैसे गर्‌यो । कोऊ जाइ न सामुहे शत्रन के (मू०ग्रं०३९३) न्रिप ने मुख ते बिध या उचर्‌यो ॥ १०४१ ॥ किनहूँ नही धीरजु बाँध सक्यो लरबे ते डरे सभ के मन भाज्यो । भाजन की सभहूँ बिध की किनहूँ नही कोप सरासनि साज्यो । यों हरिजू पुन बोलि उठ्यो गज को बधि के जिम केहरि गाज्यो । अउर भली उपमा उपजी धुन को सुन कै घन सावन लाज्यो ॥ १०४२ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ राज नचिंत करो मन मै हमहूँ दोउ भ्रात सु जाइ लरैंगे । बान कमान क्रिपान गदा गहिकै रन भीतर जुद्ध करैंगे । जो हम ऊपरि कोप कै आइहै ताहिके अस्त्र सिउँ प्रान हरैंगे । पै उनको मरिहै डरिहै नही आहव ते पग दुइ न टरैंगे ॥ १०४३ ॥ इउ कहिकै उठ ठाढे भए दोऊ भ्रात सु

धारण करके दानवों को इस धरती से हटाये तथा भूत-पिशाच, डाकिनी आदि को अपने मांस की भेंट चढ़ाकर अर्थात् युद्धभूमि में वीरगति प्राप्त करके संतुष्ट कर सके ॥ १०४० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने जब इस प्रकार कहा तो सबका धैर्य छूट गया। कृष्ण को देखकर उनका मुँह खुला रह गया और सभी भाग जाने की सोचने लगे। सभी क्षत्रियों का मान वर्षा में ओलों की तरह गलकर बह गया। कोई भी शत्रु के सम्मुख जाकर लड़ने की हिम्मत न जुटा सका और राजा के कहे को पूरा करने का साहस न कर सका ॥१०४१॥ कोई भी धैर्य न रख सका और सबका मन लड़ाई से दूर भागने लगा। किसी ने भी क्रोधित हो धनुष-बाण न सम्हाला और लड़ने का उपक्रम न किया। अपितु सबने भागने की योजनाएँ बना ली। यह देखकर कृष्ण उसी प्रकार गरज उठे जैसे हाथी को मारकर शेर गरजता है अथवा वे ऐसे गरजने लगे कि उन्हें देखकर सावन के बादल भी लजाने लगे ॥ १०४२ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ हे राजन् ! आप निश्चिन्त हो राज करें। हम दोनों भाई जाकर लड़ेंगे तथा बाण, कृपाण, कमान, गदा आदि धारण कर घनघोर युद्ध करेंगे। जो भी क्रोधित हो हम पर आक्रमण करेगा हम अपने अस्त्रों से उसके प्राण हर लेंगे उनका नाश कर देंगे परन्तु युद्ध से दो कदम भी पीछे

मात पिता पहि आए । आवत ही दुहूँ हाथन जोरिकै पाइन ऊपर माथ लुडाए । मोहु बढ्यो बसुदेव अउ देवकी लै अपने सुत कंठ लगाए । जीतहुगे तुम दैतन सिउँ भजिहै अर यों घन बार उडाए ॥ १०४४ ॥ ॥ सवैया ॥ मात पिता कउ प्रनाम दोऊ करिकै तजि धाम सु बाहिर आए । आवत ही सभ आयुध लै पुर बीर जिते सभ ही सु बुलाए । दान घने दिज कउ दए स्याम दुहू मिलि आनंद चित्त बढाए । आसिख देत भए द्विज इउ ग्रहि आइहो जीत घने अर घाए ॥ १०४५ ॥ ॥ दोहरा ॥ देख चमूँ सभ जादवी हरिजू आपन साथ । घन सुर सिउ संग सारथी बोल्यो स्री ब्रिजनाथ ॥ १०४६ ॥ ॥ कान जू बाच दारक सों ॥ ॥ सवैया ॥ हमरो रथ दारक तैं करि साज भली बिधि सिउ अब तारन कउ । अस तामहि चक्र गदा धरियो रिप की धुजनी सु बिदारन कउ । सभ जादव लै अपने संग हउ सु पधारत दैत सँघारन कउ । किह हेत चल्यो सुन लै हम पै अपने न्रिप के दुख टारन कउ ॥ १०४७ ॥ ॥ दोहरा ॥ यों कहिकै गोबिंद तबि कट सिउ कस्यो निखंग ।

नहीं हटेंगे ॥ १०४३ ॥ यह कहकर दोनों भाई उठ खड़े हुए और माता-पिता के पास पहुँचे । आते ही हाथ जोड़कर माता-पिता को प्रणाम किया । उन्हें देख वसुदेव और देवकी का मोह बढ़ चला और उन्होंने दोनों पुत्रों को गले से लगाया । उन्होंने कहा कि तुम दैत्यों को जीतोगे और वे ऐसे भागेंगे जैसे वायु बादलों को उड़ा देता है ॥ १०४४ ॥ ॥ सवैया ॥ माता-पिता को प्रणाम कर तथा घर छोड़ दोनों वीर बाहर आये । आते ही उन्होंने सब शस्त्र ले सभी वीरों को बुलाया । ब्राह्मणों को पर्याप्त दान दिया गया और उनका मन आनन्दित हो उठा । ब्राह्मणों ने आशीर्वाद दिया और कहा कि आप शत्रुओं को मार वापस घर आयेंगे ॥ १०४५ ॥ ॥ दोहा ॥ यादवों की सेना अपने साथ देख कृष्ण जी अपने सारथी से गरजकर बोले ॥ १०४६ ॥ ॥ कृष्ण उवाच दारुक के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ हे दारुक ! तुम हमारा भली प्रकार से रथ सजाओ और उसमें शत्रु के ध्वज को खण्डित करनेवाले चक्र-गदा, शस्त्र-अस्त्र रखो । मैं सभी यादवों को साथ लेकर दैत्यों का संहार करने जा रहा हूँ । तुम यह जान लो कि मैं अपने राजा का कष्ट निवारण करने के लिए जा रहा हूँ १०४७ दोहा यह कहकर श्रीकृष्ण ने अपनी कमर के साथ तरकश को बाँधा और कुछ यादवों को साथ लेकर बलराम ने भी हल और

हल मूसल हलधरि गह्यो कछु जादव लै संग ॥ १०४८ ॥ ॥ सवैया ॥ दैतन मारन हेत चले अपुने संग लै सभ ही भट दानी । स्री बलभद्रह संग लए जिह के बल की गति स्री पत जानी । को सम भीखम है इनके अरु को भ्रिगनंदन रावन बानी । शत्रन के बध कारन स्याम चले (मू०ग्रं०३६४) मुसलीधरि जू अभिमानी ॥ १०४६ ॥ ॥ सवैया ॥ बाँध क्रिपान सरासन लै चड़ि स्यंदन पै जदुबीर सिधारे । भाखत बैन सुधा मुख ते सु कहा है सभै सुत बंध हमारे । स्री प्रभ पाइन के सभ साथ सु यों कहिकै इक बीर पुकारे । धाइ परे अरि के दल मै बलि सिउ बलिदेव हलायुध धारे ॥१०५०॥ ॥ सवैया ॥ देखत ही अरि की प्रतना हरि जू मन मो अति कोप भरे । सु धवाइ तहाँ रथु जाइ परे धुजनी पति ते नही नैकु डरे । सित बानन सो गज बाज हने जोऊ साज जरा इन साथ जरे । मनो इंद्र कै बज्र लगे टुटके धरनी गिर स्रिंग सुमेर परे ॥ १०५१ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर सरासन ते बहु तीर छुटे छुटकै भट घाए । पैदल मार रथी बिरथी करि शत्र घने जमलोक पठाए । भाज अनेक गए रन ते जोऊ लाज भरे हरि पै पुनि आए । ते

मूसल धारण कर लिये ॥ १०४८ ॥ ॥ सवैया ॥ दैत्यों को मारने के लिए अपने साथ वीरों को लेकर श्रीकृष्ण चले । बलराम को भी साथ लिया जिसके बल की गति को परमात्मा ही जानता है । इनके समान भीषण और परशुराम की तरह प्रतिज्ञा का पालन करनेवाला अन्य कौन है । शत्रुओं का वध करने के लिए बलराम और कृष्ण अभिमानपूर्वक चल पड़े ॥ १०४६ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण जी कृपाण और धनुष-बाण लेकर रथ पर सवार हो चल पडे । वे अमृत वचनों से कहने लगे कि मेरे साथी सभी मेरे भाई हैं । श्रीकृष्ण के चरणों का आश्रय ले सभी वीर भीषण रूप से सिंहनाद कर उठे और बलराम आदि अपने शस्त्रों के साथ शत्रु-सेना पर टूट पड़े ॥ १०५० ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु-सेना को देख श्रीकृष्ण अत्यन्त क्रोधित हो उठे । रथ को चलवाकर वे शत्रु-सेनापति पर टूट पड़े । अपने बाणों से उन्होंने हाथी और घोडों को मार गिराया और वे इस प्रकार गिर पड़े मानो इन्द्र के वज्र के लगने से सुमेरु पर्वत की चोटियाँ टूटकर धरती पर गिर पड़ी हों ॥ १०५१ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के धनुष से बहुत से तीर चले और बहुत से वीर उन तीरों से मारे गए । पैदलों को मार डाला गया । रथियों को रथहीन कर दिया गया और बहुत से शत्रुओं को यमलोक भेज दिया गया अनेकों वीर

ब्रिजनाथ के हाथ लगे ग्रहि कउ फिर जीवत जान न पाए ॥ १०५२ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप भरे रन मै भट यों चहूँ ओरन ते ललकार परे । करि चउप भिरे अपने मन मै नंद-नंदन ते न रती कु डरे । तब ही ब्रिजनाथ सरासन लै छिन मै उनके अभिमान हरे । जोऊ आवत भे धन बान भरे हरि जू सिगरे बिन प्रान करे ॥ १०५३ ॥ ॥ कबित्त ॥ स्रउनत तरंगनी उठाइ कोप बल बीर मार मार तीर रिप खंड किए रन मै । बाज गज मारे रथी ब्रिथी करि डारे केते पैदल बिदारे सिंघ जैसे म्रिग बन मै । जैसे शिव कोप कै जगत जीव मार प्रलै तैसे हरि अरि यों सँघारे आई मन मै । एक मार डारे एक धाइ छित पारे एक त्रसे एक हारे जाकै ताकत न तन मै ॥ १०५४ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुरो घनिस्याम घनस्सुर कै बरख्यो सर बूँदन जिउँ मँगवा । चतुरंग चमूँ हन स्रउन बह्यो सु भयो रन ईंगर के रँगवा । कहूँ मुंड झरे रथ पुंज ढरे गज सुंड परे कहूँ है तँगवा । जदुबीर जु कोप कै तीर हने कहूँ बीर

भाग खड़े हुए और भागते हुए जो लज्जित हुए वे पुनः कृष्ण से आ भिड़े, परन्तु श्रीकृष्ण के हाथ लगते ही वे सब पुनः जीवित न बच सके ॥ १०५२ ॥ ॥ सवैया ॥ शूरवीर युद्ध में क्रोधित हो रहे हैं और चारों ओर से ललकारें सुनाई पड़ रही हैं । शत्रु-सेना के वीर भी उत्साहित हो लड़ रहे हैं और वे भी कृष्ण से तनिक भी नहीं डर रहे हैं । श्रीकृष्ण धनुष-बाण हाथ में लेकर क्षण भर में उनके अभिमान को चूर कर रहे हैं और जो भी सामने आता है, श्रीकृष्ण उनको मौत के घाट उतारकर निष्प्राण कर देते हैं ॥ १०५३ ॥ ॥ कवित्त ॥ तीर चलाकर शत्रुओं को युद्ध में खण्ड-खण्ड कर दिया गया है और रक्त की नदियाँ बह उठी हैं । हाथी, घोड़े मार डाले गए हैं । रथियों को विरथी बना डाला गया है और पदातियों को ऐसे मार डाला गया है जैसे सिंह वन में मृगों को मार डालता है । जैसे प्रलयकाल में कुपित हो शिव जगत के जीवों का नाश करते हैं, उसी प्रकार कृष्ण ने शत्रुओं का संहार कर दिया है । कई मार डाले गए हैं, कई घायल धरती पर पड़े हैं और कई अशक्त एवं भयभीत होकर पड़े हैं ॥ १०५४ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण बादलों की तरह गरज रहे हैं और उनके तीर जल की बूँदों की तरह बरस रहे है । चतुरंगिणी सेना का रक्त बहने से रणस्थल लाल रंग का हो गया है । कही पर खोपड़ियाँ पड़ी हैं कहीं रथों के ढेर पड़े हैं तथा कहीं हाथियों की सूँड़ें पड़ी हैं । कृष्ण ने क्रोधित होकर बाण-वर्षा की और कही पर वीर गिरे हैं तथा

गिरे सु कहूं अँगवा ।। १०५५ ।। ।। स्वैया ।। बहु झूझ परै छित मै भट यों अरि कै बरकै हरि सिउ लरिकै । धन बान क्रिपान गदा गहि पान गिरे रन बीच इती करिकै । तिह मासु गिरास मवास उदास हुइ गीध सु मोन रही धरिकै । सु मनो बुटिआ (मू०ग्रं०३६५) बर बीरन की न पची उर मै बरिकै फरिकै ।। १०५६ ।। ।। स्वैया ।। अस कोप हलायुध पान लियो सु धस्यो दल मै अति रोस भर्यो । बहु बीर हने रन भूम बिखै प्रतनापति ते न रती कु डर्यो । गज बाज रथी अरु पति चमूं हनिकै उन बीरन तेजु टर्यो । जिम तात धरा सुरपति लर्यो हरि भ्रात बली इम जुद्ध कर्यो ।। १०५७ ।। ।। सवैया ।। जुद्ध जुरे जदुराइ सखा किधो क्रोध भरे दुरजोधन सोहै । भीर परै रन रावन सो सुत रावन को तिह की सम को है । भीखम सो भरबे कहु है लरिबे कहु राम बली बरि जो है । अंगद है कि हनू जमु है कि भर्यो बलभद्र भयानक रोहै ।। १०५८ ।। ।। सवैया ।। द्रिड़कै बल कोप हलायुध लै अर के दल भीतर धाइ गयो । गज बाज रथी बिरथी करिकै बहु पैदल को दलु कोप

कहीं उनके अंग गिरे हैं ।। १०५५ ।। ।। सवैया ।। शूरवीर जूझकर और श्रीकृष्ण से लड़कर धरती पर पड़े हुए हैं । धनुष, बाण, कृपाण, गदा आदि को पकड़े हुए वीर अन्त तक लड़कर मर मिटे हैं । उनके मांस को भक्षण करते हुए गिद्ध भी उदास हो चुपचाप बैठे हैं और ऐसा लग रहा है मानो इस वीरों की बोटियाँ इन गिद्धों को पच नहीं पा रही हैं ।। १०५६ ।। ।। सवैया ।। बलराम ने कुपित होकर अपना शस्त्र हाथ में लिया और शत्रुदल में जा धँसे । शत्रु-सेनापति से बिना डरे हुए उन्होंने बहुत से वीरों को मार गिराया । हाथी, घोड़ों और रथियों को मारते हुए उनको निस्तेज कर दिया । जिस प्रकार इन्द्र युद्ध करता है, उसी प्रकार श्रीकृष्ण के बलवान भाई बलराम ने युद्ध किया ।। १०५७ ।। ।। सवैया ।। कृष्ण के भाई बलराम युद्ध कर रहे हैं और ऐसा लग रहा है, मानो क्रोध से भरा दुर्योधन अथवा राम-रावण-युद्ध में रावण का पुत्र मेघनाद । ऐसा लग रहा है मानो भीष्म को मारने योद्धा जा रहा हो अथवा बलराम बलशाली राम के समान हों । भयानक बलभद्र क्रोधित रूप में अंगद अथवा हनुमान के समान दिखाई पड़ रहे हैं ।। १०५८ ।। ।। सवैया ।। क्रोधित हो बलराम शत्रु-दल पर टूट पड़े । उनके क्रोध की छाया में हाथी, घोड़े, रथी, पैदल आदि आ चुके हैं । इस युद्ध को देख नारद भूत पिशाच एवं शिव आदि प्रसन्न हो रहे हैं शत्रुदल भृग

छयो। कलि नारद भूत पिसाच घने शिव रीझ रह्यो रन देख नयो। अरि यों सटके म्रिग के गन ज्यों मुसलीधर मानहु सिंघ भयो ॥ १०५६ ॥ ॥ सवैया ॥ इक ओर हलायुधु जुद्धु करै इक ओर गोबिंदह खग्ग सँभार्यो। बाज रथी गजपत्ति हने अति रोस भरे दल को ललकार्यो। बान कमान गदा गहि स्री हरि सैथन सिउँ अरु पुंज बिडार्यो। मारत ह्वै घनस्याम किधो उमड्यो दल पावस मेघ निवार्यो ॥ १०६० ॥ ॥ सवैया ॥ स्री नंदलाल सदा रिप घाल कराल बिसाल जबै धनु लीनो। इउ सर जाल चलो तिह काल तबै अरिसाल रिसै इह कीनो। घाइन संगि गिरी चतुरंग चमूँ सभ को तन स्रउनत भीनो। मानहु पंद्रसवो बिधने सु रच्यो रंग आरन लोक नवीनो ॥ १०६१ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिजभूखन दूखन दैतन के रिप साथ रिसै अतिमान भर्यो। सु धवाइ तहा रथ जाइ पर्यो लख दानव सैन न नैकु डर्यो। धनु बान सँभार अयोधन मै हरि केहरि की बिध जिउँ बिचर्यो। भुजदंड अदंडन खंडन कै रिस कै दल खंड निखंड कर्यो ॥ १०६२ ॥ मधसूदन बीच अयोधन के बहुरो करि मै धनु बान लयो। सुनि शंक तबै रन

के समान लग रहा है और इधर मुसलीधर बलराम सिंह के समान दिखाई दे रहे हैं ॥१०५९॥ ॥ सवैया ॥ एक तरफ़ बलराम युद्ध कर रहे हैं तथा दूसरी ओर श्रीकृष्ण ने खड्ग सम्हाल लिया है। उन्होंने घोड़े, रथी और गजपतियों को मारकर क्रोधित हो दल को ललकारा है। बाण, कमान, गदा एवं अन्य शस्त्रों से श्रीकृष्ण ने शत्रुओं के झुण्ड को खण्ड-खण्ड कर दिया है। कृष्ण इस प्रकार शत्रुओं को मार रहे हैं जैसे वर्षाकाल में बादलों को पवन खंड-खंड कर देता है ॥ १०६० ॥ ॥ सवैया ॥ सदैव शत्रुओं का नाश करनेवाले श्रीकृष्ण ने विकराल धनुष जब हाथ में लिया तब उसमें से तीरों के झुण्ड निकलने लगे और शत्रुओं का हृदय क्षुब्ध हो उठा। चतुरंगिणी सेना घायल हो गिर पड़ी और सबके शरीर रक्त से लथपथ हो गए। ऐसा लग रहा था मानो विधाता ने इस जगत को लाल रंग से ही बनाया हो ॥ १०६१ ॥ ॥ सवैया ॥ दैत्यो को दु:ख देनेवाले श्रीकृष्ण अत्यन्त क्रोधित हो गर्व से भर उठे और दानव-सेना से बिलकुल न डरते हुए रथ चलवाकर उस पर टूट पड़े। वे युद्धस्थल में धनुष-बाण सम्हालकर सिंह की तरह विचरने लगे और अपनी भुजाओं के बल से क्रोधित होकर शत्रुदल को खंड-खंड करने लगे ॥ १०६२ ॥ युद्धस्थल मे पुन श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लिया और युद्धस्थल में शत्रु-सेना का

बीच पर्‌यो अरि को बरिकै हन सैन दयो । धुन सो जिम तूलि धुने धुनिया दल त्यों सित बानन सो (मू०ग्रं०३९६) धुनयो । बहु स्रउन प्रवाह बह्‌यो रन मै तिह ठा मनो आठवो सिंध भयो ॥ १०६३ ॥ इत ते हरि की उमडी प्रतना उत ते उमड्‌यो न्रिप लै बल संगा । बान कमान क्रिपान लै पान भिरे कटिगे भटि अंग पतंगा । पत्ति गिरे गजि बाज कहूँ कहूँ बीर गिरे तिनके कहूँ अंगा । ऐसे गए मिलि आपसि मै दल जैसे मिले जमुना अरु गंगा ॥ १०६४ ॥ ॥ सवैया ॥ स्वामि के काज कउ लाज भरे दुहूँ ओरन ते भट यों उमगे है । जुद्ध कर्‌यो रन कोप दुहूँ रस रुद्र ही के पुन संग पगे है । जूझ परे समुहे लरिकै रन की छित ते नही पैग भगे है । उज्जल गात मैं साँग लगी मनो चंदन रूप मै नाग लगे है ॥ १०६५ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध कर्‌यो रिस आपसि मै दुहूँ ओरन ते नही कोऊ टरे । बरछी गहि बान कमान गदा अस लै करि मै इह भाँति लरे । कोऊ जूझि गिरे कोऊ रीझ भिरे छित देख डरे कोऊ धाइ परे ।

हनन कर दिया । जिस प्रकार रूई को धुननेवाला रूई धुनता है, उसी प्रकार अपने बाणों मे श्रीकृष्ण ने शत्रु-सेना को धुन दिया । रक्त का प्रवाह युद्धस्थल मे इस प्रकार बह निकला कि मानो आठवाँ समुद्र बन गया ॥१०६३॥ इधर से श्रीकृष्ण की सेना उमड़ी और उधर से राजा जरासंध अपने दल-बल के साथ चल पड़ा । बाण, कमान और कृपाणों को हाथ में लेकर शूरवीर भिड गए और उनके अंग कटने लगे । कहीं हाथी-घोड़ों के स्वामी गिरने लगे और कहीं वीरों के अंग गिरने लगे । दोनों दल आपस में इस प्रकार मिलकर गुत्थम-गुत्था होने लगे मानो गंगा और यमुना मिलकर एक हो गई हो ॥ १०६४ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने स्वामी के कार्य को करने के लिए दोनो ओर के शूरवीर उत्साहपूर्वक आगे बढ़ रहे हैं । दोनों ओर के योद्धा रौद्र-रस में रँगकर कुपित हो युद्ध कर रहे हैं और एक-दूसरे के सम्मुख बिना विचलित हुए लड़कर जूझ रहे हैं । श्वेत शरीरों में भाले लगे हुए ऐसे दिखाई दे रहे हैं मानो चन्दन के पेड़ों पर नाग लगे हुए हों ॥१०६५॥ ॥ सवैया ॥ दोनों ओर के वीरों ने क्रोधित हो युद्ध किया और कोई भी पीछे नहीं हटा । वे बरछी, बाण, कमान, गदा, कृपाण आदि को लेकर भलीभाँति लड़ रहे हैं । कोई जूझकर गिर रहा है, कोई प्रसन्न हो रहा है, कोई युद्धस्थल को देख डर रहा है तथा कोई दौड़ा जा रहा है कवि का कथन है कि यह ऐसा लग रहा है कि मानो युद्धस्थल रूपी दीपक पर आकर सैनिक रूपी पतंगे जल रहे

मन यौं उपजी उपमा रन दीप के ऊपर आइ पतंग जरे ॥१०६६॥ ॥ सवैया ॥ प्रिथमे संगि बान कमान भिर्यो बरछी बर लै पुन भ्रात मुरारी । फेर लर्यो अस लै कर मै धसकै रिप की बहु सैन सँघारी । फेरि गदा गहिकै सु हते बहुरो जु हुते गहि पान कटारी । ऐंचत यौं हल सो दल को जिम खैंचत दुइ करि झीवर जारी ॥ १०६७ ॥ जो भट सामुहि आइ अर्यो बरिकै हरिजू सोऊ मार गिरायो । लाज भरे जोऊ जोर भिरे तिन ते कोऊ जीवत जान न पायो । बैठ तबै प्रतना अर की मध स्याम घनो पुन जुद्ध मचायो । स्री बलबीर सु धीर गह्यो रिप को सभ ही दल मार भगायो ॥ १०६८ ॥ ॥ दोहरा ॥ भगी चमूँ चतुरंगनी न्रिपति निहारी नैन । निकटि बिकटि भट जो हुते तिन प्रति बोल्यो बैन ॥ १०६९ ॥ ॥ न्रिप जरासिंध बाच सैना प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध करै घनिस्याम जहाँ तुमहूँ दलु लै उह ओर सिधारो । बान कमान क्रिपान गदा करि लै जदुबीर को देह प्रहारो । जाइ न जीवत जादव को तिन को रन भूम मै जाइ सँघारो । यो जब बैन कहै न्रिपसैन चली चतुरंग जहाँ रन डारो ॥ १०७० ॥ ॥ सवैया ॥ आइस पावत ही

है ॥ १०६६ ॥ ॥ सवैया ॥ पहले बाण और कमान के साथ तथा फिर हाथ मे बरछी लेकर बलराम लड़ने लगे । फिर उन्होंने कृपाण हाथ में ले शत्रु-सेना में घुसकर सेना का संहार किया । फिर उन्होंने कटार पकड़े हुए सैनिकों को गदा से मार गिराया । बलराम अपने हल से शत्रु-सेना को इस प्रकार खींच रहे है जैसे कहार दोनों हाथों से पानी खींचने का उपकरण कर रहा हो ॥ १०६७ ॥ जो भी योद्धा सामने आया उसे श्रीकृष्ण ने मार गिराया । जो अपनी निर्बलता पर लज्जित होकर और जोर से भिड़ा वह भी जीवित न बच सका । शत्रु-सेना में घुसकर श्रीकृष्ण ने घनघोर युद्ध मचाया । श्री बलराम ने भी धैर्यपूर्वक युद्ध किया और शत्रुदल को मार भगाया ॥ १०६८ ॥ ॥ दोहा ॥ चतुरंगिणी सेना को भागते हुए जरासंध ने देखा तो अपने पास वाले शूरवीरों से वह कह उठा ॥ १०६९ ॥ ॥ राजा जरासंध उवाच सेना के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ जिस ओर कृष्ण युद्ध कर रहे है तुम सब लोग उस ओर चलो और बाण, कमान, कृपाण तथा गदा से श्रीकृष्ण पर प्रहार करो । कोई भी यादव रणभूमि से जीवित न जाने पाए । उनका संहार कर दो । जब राजा जरासंध ने यह कहा तो सेना पंक्तियां बनाकर उस ओर बढ़ने लगा ॥ १०७० ॥ ॥ सवैया ॥ राजा की आज्ञा पाते ही शूरवीर घटाओं की

त्रिप के घन जिउँ उमडे भट ओघ घटा घट। बानन बूँदन (मू०ग्रं०३६७) जिउँ बरखे चपला अस की धुन होत सटा सट। भूम परे इक सास भरे इक जूझ मरे रन अंग कटा कट। घाइल एक परे रन मै मुख मार ही मार पुकार रटा रट॥ १०७१॥ ॥ सवैया॥ जदुबीर सरासन लै करि मै रिप बीर जिते रन माँझि सँघारे। मत्ति करी बर बाज हने रथ काट रथी बिरथी करि डारे। घाइल देखकै काइर जे डरु मान रने छित त्याग सिधारे। स्री हरि पुंन के अग्रज मानहु पापन के बहु पुंज पधारे॥ १०७२॥ सीस कटे कितने रन मै मुख ते तेऊ मार ही मार पुकारैं। दउरत बीच कबंध फिरैं जह स्याम लरै तिह ओर पधारैं। जो भट आइ भिरै इन सो तिन कउ हरि जानकै घाइ प्रहारैं। जो गिर भूम परै मर कै कर ते करवारन भू पर डारैं॥ १०७३॥ ॥ कबित्त॥ कोप अति भरे रन भूम ते न टरे दोऊ रीझ रीझ लरे दल दुंदभी बजाइकै। देव देखै खरे गन जच्छ जसु ररे नभ ते पुहप ढरे मेघबूँदन जिउँ आइकै। केते जूझ मरे केते अपछरन बरे केते

तरह उमड़ पड़े। बाण बूँदों की तरह बरसने लगे और कृपाणें बिजली की तरह चमकने लगीं। कोई भूमि पर जूझकर पड़ा है, कोई लम्बी साँस भर रहा है और किसी का अंग कटा हुआ है। कोई घायल होकर भूमि पर पडा है परन्तु फिर भी 'मारो, मारो' की रट लगा रहा है॥ १०७१॥ ॥ सवैया॥ कृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लेकर जितने भी शूरवीर थे उनको रणस्थल में मार गिराया। मदमस्त हाथी-घोड़ों को मार दिया और कई रथियों को रथ-विहीन कर दिया। घायलों को देखकर कायर लोग युद्धस्थल छोड़कर भाग खड़े हुए। वे ऐसे लगने लगे मानो श्रीकृष्ण रूपी पुण्य के पुंज के सामने पापों के समूह भागे चले जा रहे हों॥ १०७२॥ जितने सिर युद्ध में कटे वे सब मुँह से मारो, मारो पुकार रहे हैं। कबंध दौड़ रहे हैं और उस ओर बढ़ रहे हैं जहाँ श्रीकृष्ण लड़ रहे हैं। जो शूरवीर इन कबंधों से आ भिड़ रहे हैं उन्हें ये कबंध कृष्ण समझकर उन पर प्रहार कर रहे हैं। जो धरती पर गिर रहे हैं, उनकी तलवारें भी धरती पर गिर पड़ रही हैं॥१०७३॥ ॥ कवित्त॥ दोनों पक्ष कुपित हैं, युद्धभूमि से नहीं हट रहे हैं और उत्साह के साथ दुंदुभियाँ बजाते हुए लड़ रहे हैं। देवता देख रहे हैं और यक्ष भी यशोगान कर रहे हैं। आकाश से मेघ की बूँदों के समान पुष्प-वर्षा हो रही है कितने ही वीर मर गए हैं, कितनों का वरण अप्सराओं ने कर लिया

गीधनन करे केते गिरे घाइ खाइकै। केहरि जिउँ अरे केते खेत देख डरे केते लाज भारि भरे दउरि परे अरिराइ कै॥ १०७४॥ ॥ सवैया ॥ भूम गिरे भट घाइल हुइ उठके फिर जुद्ध के काज पधारे। स्याम कहा दुरकै जु रहे अति कोप भए इह भाँति पुकारे। यौं उन कै मुख ते सुन बैन भयो हरि सामुहि खग्ग सँभारे। दउर कै सीस कटे न हटे रिसकै बलबीर की ओर सिधारे॥ १०७५॥ ॥ सवैया ॥ मार ही मार पुकार तबै रन मै अस लै ललकार परे। हरि राम को घेरि लयो चहूँ ओर ते मल्लहि की पिर सोभ धरे। धनु बान जबै करि स्याम लयो लखि कातर खेतहु ते बिडरे। रंगभूम को मानो उझार भयो चले कउतक देख निहार घरे॥ १०७६॥ जे भट लै अस हाथन मै अति कोप भरे हरि ऊपरि धावै। कउतक सो दिख कै शिव के गनि आनंद सो मिल मंगल गावैं। कोऊ कहै हरिजू जितहै कोऊ इउ कहि ए जितहै बहसावैं। रार करे तब लउ जब लउ उन कउ हरि मार न भूमि गिरावैं॥ १०७७॥ ॥ कबित्तु ॥ बडेई बनैत बीर सभै

है, कितनों को गिद्ध खा गए हैं और कितने ही घाव खाकर गिरे पड़े हैं। कई शेर के समान डटे हैं, कई युद्ध को देखकर डर गए हैं और कई लजाकर हड़बड़ाकर दौड़ पड़े हैं॥ १०७४॥ ॥ सवैया ॥ घायल पुनः भूमि से उठकर युद्ध के लिए चल पड़े हैं। कवि का कथन है कि जो छुपे बैठे थे वे भी अब पुकार सुनकर क्रोधित हो उठे। उनकी बातें सुनकर कृष्ण खड़ग सँभालकर उनके सामने हो गए और उनके सिर काट दिए। वे फिर भी नहीं हटे और (कबंध-रूप में) क्रोधित होकर बलराम की ओर चले॥ १०७५॥ ॥ सवैया ॥ मार-मार की पुकार के साथ युद्ध में कृपाण लेकर वीर टूट पडे। उन्होंने बलराम और कृष्ण को चारों ओर से मल्लों के अखाड़े की तरह घेर लिया। जब कृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लिया तो वीर असहाय होकर युद्ध-भूमि से पलायित होने लगे। युद्धभूमि मानो उजड़ गई हो और वीर यह लीला देखकर अपने-अपने घरों को जाने लगे॥ १०७६॥ जब भी कोई शूरमा कृपाण हाथ में लेकर श्रीकृष्ण पर टूट पड़ता है, तो इस दृश्य को देखकर शिव के गण आनंदित हो जाते हैं और मंगलगीत गाना प्रारम्भ कर देते है। कोई कहता है कि कृष्ण जीतेंगे तथा कोई कहता है कि वह शूरवीर जीतेगा। वे तब तक इसी प्रकार झगडा करते हैं जब तक कृष्ण उनको मारकर भूमि पर नहीं गिरा देते १०७७ कबित्त बडे-बडे कवचों को धारण किए

पखरैत गज दल सो अरैत धाए तुरंग नचाइकै। जुद्ध मै अडोल (पृ०ग्रं०३१८) स्वामकार जी अमोल अति गोल ते निकस लरे दुंदभ बजाइकै। सैथन सँभारकै निकार कै क्रिपान मार मार ही उचार ऐसे परे रन आइकै। हरिजू सो लरे ते वे ठउर ते न टरे गिर भूम हूँ मै परे उठि अरे घाइ खाइकै ॥ १०७८ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप भरे अरराइ परे न डरे हरि सिउ हथियार करे है। घाइ भरे बहु स्रउन झरे अस पान धरे बल कै कु अरे है। मूसल लै बलदेव तबै सभ चावर जिउँ रन माहि छरे है। फेरि प्रहार कियो हल सों अरि भूँमि गिरे नही स्वास भरे है ॥ १०७९ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर के बीर जिते अस हाथन लै अरि ऊपरि धाए। जुद्ध कर्यो करि कोप दुहूँदिस जंबक जो गिर ग्रिज्झ अघाए। बीर गिरे दुहूँ ओरन ते गहि फेट कटारन सिउ लरि घाए। कउतक देख कै देव कहै धनि वे जननी जिन ए सुत जाए ॥ १०८० ॥ ॥ सवैया ॥ अउर जिते बरबीर हुते अति रोस भरे रनभूमहि आए। जादव सैन चली इत ते तिनहूँ मिलकै अति जुद्ध मचाए। बान कमान

हुए हाथियों-समेत महाबली बीर घोड़े नचाते हुए आगे की तरफ़ बढ़े। वे युद्ध में भी स्थिर हैं और अपने स्वामियों के हितों के लिए गोल में से निकल-निकलकर दुंदुभियाँ बजाते हुए लड़ने लगे। बरछे और कृपाणों को निकालकर सम्हालते हुए मारो-मारो का उच्चारण करते हुए वे युद्ध में आ पहुँचे। वे कृष्ण से लड़ रहे हैं, परन्तु अपने स्थान से पीछे नहीं हट रहे हैं। वे भूमि पर गिर पड़ रहे हैं, परन्तु घाव खाकर भी वे पुन: उठ रहे हैं ॥ १०७८ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर वे चीत्कार कर रहे हैं और निर्भय होकर शस्त्रों से जूझ रहे हैं। घावों से भरे उनके तन से रक्त बह रहा है। फिर भी तलवार हाथ में लिये हुए वे बलपूर्वक अड़े हुए हैं। बलदेव ने अपने मुसल से उनको चावल की तरह कूट डाला है और पुन: उन पर अपने हल से वार किया है, जिससे वे धराशायी होकर पड़े हैं ॥ १०७९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के सभी वीर हाथों में कृपाण लेकर शत्रुओं पर टूट पड़े। कुपित होकर उन्होंने ऐसा युद्ध किया कि दसों दिशाओं में गीदड़ और गिद्ध मृतकों का मास खाते-खाते अघा गए। दोनों ओर से वीर धराशायी हुए हैं और कटारों के घाव खाकर पड़े हुए हैं। इस दृश्य को देखकर देवगण भी कह रहे हैं कि वे माताएँ धन्य हैं, जिन्होंने ऐसे पुत्रों को जन्म दिया ॥ १०८० ॥
सवैया ॥ जितने अन्य वीर भी थे वे भी युद्धभूमि में आ गए इधर से

क्रिपान गदा बरछे बहु आपस बीच चलाए । भेद चमूं जदुबीरन की सभ ही जदुराइ के ऊपरि धाए ॥ १०८१ ॥ ॥ स्वैया ॥ चक्र त्रिसूल गदा गहि बीर करद्धर कै अस अउर कटारी । मार ही मार पुकार परे लरे धाइ करे न टरे बल भारी । स्याम बिदार दई धुजनी तिह की उपमा इह भाँत बिचारी । मानहु खेत सरोवर मै धसिकै गजि बारज ब्यूह बिडारी ॥ १०८२ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुनाथ के बानन अग्र डरे अरि इउ किहूँ धीर धर्यो ना । बीर सभै हटिकै ठटि के भटि के रन भीतर जुद्ध कर्यो ना । मूसल अउ हल पान लयो बल पेखि भजे दल कोऊ अर्यो ना । जिउँ म्रिग के गनि छाडि चलै बन डीठ पर्यो म्रिगराज को छउना ॥ १०८३ ॥ ॥ सवैया ॥ भाग तबै सभ ही रन ते गिर ते परते न्रिप तीर पुकारे । तेरे ही जीवत हे प्रभ जू सिगरे रिस कै बल स्याम सँघारै । मारे अनेक न एक बच्यो बहु बीर गिरे रनि भूमि मझारे । ता ते सुनो बिनती हमरी उन जीत भई तुमरे दल हारे ॥ १०८४ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप कर्यो तब सिंध जरा

यादव सेना चली और उधर से उन लोगों ने भिड़कर भयंकर युद्ध मचाया। बाण-कमान, कृपाण, गदा, बर्छियाँ परस्पर चलने लगीं तथा शत्रु-सेना यादवों की सेना को भेदकर श्रीकृष्ण के ऊपर टूट पड़ी ॥ १०८१ ॥ ॥ सवैया ॥ वीरों ने चक्र, त्रिशूल, गदा, कृपाण और कटारें पकड़ रखी हैं तथा 'मार-मार' की पुकार लगाते हुए वे महाबली अपने स्थान से टल नहीं रहे हैं। कृष्ण ने शत्रु-सेना को नष्ट कर दिया है और ऐसा लग रहा है मानो सरोवर में किसी हाथी ने प्रवेश कर कमल के फूलों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया हो ॥ १०८२ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के बाणों से भयभीत शत्रु धैर्य छोड़ रहे हैं। सभी वीर ठिठककर हटने लगे हैं और कोई भी युद्ध नहीं करना चाह रहा है। बलराम को हाथ में मुगदर और हल लिये देखकर शत्रुदल भाग खड़ा हुआ और यह दृश्य ऐसा लग रहा है मानो सिंह को देखकर मृग वन को छोड़कर छिटककर भाग रहे हों ॥ १०८३ ॥ ॥ सवैया ॥ सभी सैनिक गिरते-पड़ते भागकर जरासंध के पास पहुँचे और पुकारने लगे कि हे प्रभु ! तुम्हारे सभी सैनिकों को कृष्ण एवं बलराम ने क्रोधित होकर मार डाला। एक भी सैनिक नहीं बचा है। सभी रणभूमि में धराशायी हो चुके हैं इसलिए हम आपसे प्रार्थना करते हुए यह कहते हैं कि हे राजन ! उनकी तो जीत हो गई है और तुम्हारा दल हार गया है ॥ १०८४ ॥ ॥ सवैया ॥ तब क्रोधित होकर शत्रुओं को मारने

अरि मारन कउ बहु बीर बुलाए । आइस पावत ही न्रिप को मिलिकै (मू०ग्रं०३९९) हरि के बधबे कहु धाए । बान कमान गदा गहिकै उमडे धनि जिउँ घनस्याम पै आए । आइ परे हरि ऊपर सो मिलकै बग मेल तुरंग उठाए ॥ १०८५ ॥ ॥ सवैया ॥ रोस भरे मिल आनि परे हरि कउ ललकार कै जुद्ध मचायो । बान कमान क्रिपान गदा गहि यौ तिन सार सो सार बजायो । घाइल आप भए भट सो अरु शस्त्रन सो हरि को तन घायो । दउर परे हल मूसल लै बलि बैरन को दलु मारि गिरायो ॥ १०८६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जूझ परे जे न्रिप बली हरि सिउ जुद्धु मचाइ । तिन बीरन के नाम सभ सो कबि कहत सुनाइ ॥ १०८७ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री नरसिंघ बली गजसिंघ चल्यो धनसिंघ सरासन लै । हरिसिंघ बडो रनसिंघ नरेश तहां को चल्यो दिज को धनु दै । जदुबीर सो जाइकै जुद्ध कर्‍यो बहु बीर चमूं सु घनी हरिकै । हरि ऊपर बान अनेक हनें इह भाँति कह्यो हमरी रन जै ॥ १०८८ ॥ ॥ सवैया ॥ होइ इकत्र इते न्रिप यौं हरि ऊपर बान चलावन लागे । कोप कै जुद्ध कर्‍यो तिनहूं ब्रिजनाइक ते पग दुइ करि

के लिए बलशाली वीरों को बुलाया। वे राजा से आज्ञा पाकर श्रीकृष्ण का वध करने के लिए चल दिए। बाण-कमान-गदा आदि पकड़कर वे बादलों के समान उमड़कर कृष्ण पर टूट पड़े। घोड़ों को दौड़ाते हुए श्रीकृष्ण पर उन्होंने आक्रमण कर दिया ॥ १०८५ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर ललकारते हुए उन्होंने श्रीकृष्ण के साथ युद्ध प्रारम्भ कर दिया। बाण, कृपाण और गदा को हाथ में लेकर उन्होंने लोहे से लोहा बजा दिया। वे वीर स्वयं घायल हो गए और उन्होंने श्रीकृष्ण के शरीर पर भी घाव कर दिए। बलराम भी हल और मुगदर लेकर दौड़े और उन्होंने शत्रुओं के दल को मार गिराया ॥ १०८६ ॥ ॥ दोहा ॥ जो महाबली श्रीकृष्ण से युद्ध करते हुए जूझ गए, कवि अब उन वीरों के नामों की गणना कर रहा है ॥ १०८७ ॥ ॥ सवैया ॥ नरसिंह, गजसिंह, धनसिंह जैसे शूरवीर धनुष-बाण लेकर चले। हरीसिंह, रणसिंह आदि राजा भी ब्राह्मणों को दान करके चले। विशाल चतुरंगिणी सेना ने जाकर श्रीकृष्ण से युद्ध किया और अपनी जय-जयकार करते हुए श्रीकृष्ण पर अनेकों बाण चलाए ॥ १०८८ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर सभी राजा एकत्र होकर कृष्ण पर बाण चलाने लगे। दो क़दम आगे बढ़कर वे कुपित होकर श्रीकृष्ण से युद्ध करने लगे जीवित रहने की आशा को

आगे । जीव की आस कउ त्याग तबै सभ ही रस रुद्र बिखै अनुरागे । चीर धरे सित आए हुते छिन बीच भए सभ आरन बागे ॥ १०८९ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध कर्‍यो तिन बीरन स्याम सों पारथ ज्यों रिसकै करिनैसे । कोप भर्‍यो बहु सैन हनी बलभद्र अर्‍यो रन भू मधि ऐसे । बीर फिरै करि साँगनि लै तिह घेरि लयो बलदेवहि कैसे । जोरि सो साँकरि तोर धिर्‍यो मदमत्त करी गढ दारन जैसे ॥ १०९० ॥ ॥ सवैया ॥ रन भूम मै जुद्ध भयो अति ही ततकाल मरे रिप आए है जोऊ । जुद्ध कर्‍यो घनिस्याम घनो उत कोप भरे मन मै भट ओऊ । स्री नरसिंघ जू बान हन्यो हरि को जिह की सम अउर न कोऊ । यों उपमा उपजी जिय मै जिव सोवत सिंघ जगावत कोऊ ॥ १०९१ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम के बान लग्यो उर मै गडकै सोऊ पंखन लउ सु गयो है । स्रउन के संग भर्‍यो सर अंग बिलोक तबै हरि कोप भयो है । ता छबि को जसु उच्च महाँ कबि ने कहिकै इह भाँत दयो है । मानहु तच्छक को लरिका खगराज लख्यो गहि लील लयो है ॥१०९२॥ (मू०ग्रं०४००) ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथ सरासन लै रिसकै सरु राजन बीच

छोड़कर वे सभी युद्ध में अनुरक्त हो गए। श्वेत वस्त्र धारण करके आए वीरों के वस्त्र क्षण भर में लाल रंग के हो गए ॥ १०८९ ॥ ॥ सवैया ॥ वीरों ने क्रोधित होकर श्रीकृष्ण से ऐसे भीषण युद्ध किया जैसे अर्जुन ने कर्ण से युद्ध किया था। बलभद्र ने भी युद्धस्थल पर डटकर क्रोधित होकर बहुत सी सेना को नष्ट किया। बरछी लेकर घूमते हुए वीरों ने बलराम को ऐसे घेर लिया जैसे बल से लोहे की ज़ंजीर तोड़कर मदमस्त हाथी छूट जाता है और गहरे गड्ढे में फँस जाता है ॥१०९०॥ ॥ सवैया ॥ रणभूमि में भीषण युद्ध हुआ और जो राजा आया तत्काल मारा गया। इधर श्रीकृष्ण ने भयंकर युद्ध किया और उधर शत्रु वीर भी क्रोध से भर उठे। नरसिंह ने कृष्ण की ओर ऐसे बाण मारा जैसे कोई सोते हुए शेर को जगाने की चेष्टा कर रहा हो ॥ १०९१ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की छाती में बाण लगा और पंखों तक घुस गया। बाण रक्त से भर गया और अपने अंगों से रक्त बहता देखकर श्रीकृष्ण क्रोधित हो उठे। यह दृश्य ऐसा लग रहा है कि मानो तक्षक के पुत्र को गरुड़ निगल गया हो १०९२ सवैया श्रीकृष्ण ने क्रोधित होकर बाण को धनुष की डोरी पर कसा और गजसिंह की ओर

कसा। गर्जासिघ को बान अचान हन्यो गिर भूम पर्यो जन साँप डसा। हरिसिघ जु ठाढो हुतो तिह पै सोऊ भाज गयो तिह पेख दसा। मनो सिंघ को रूप निहारत ही न टिक्यो सु चल्यो सटकाइ ससा ॥ १०९३ ॥ ॥ सवैया ॥ हरिसिघ जबै तज खेत चल्यो रनसिघ उठ्यो पुन कोप भर्यो। धन बान सँभार कै पान लयो बहुरो बलि कै रन जुद्ध कर्यो। उनहूँ पुन बीच अयोधन के हरि को ललकार कै इउ उचर्यो। अब जात कहा थिरु होहु घरी हमरे अस काल के हाथ पर्यो ॥ १०९४ ॥ ॥ सवैया ॥ इह भाँत कह्यो रनसिघ जबै हरिसिघ तबै सुनिकै मुसकान्यो। आइ अर्यो हरि सिउ धनु लै रन की छित ते नही पैग परान्यो। कोप कै बात कही जदुबीर सो मै इह लच्छन ते पहिचान्यो। आइकै जुद्ध किओ हम सो सु भली बिध काल के हाथ बिकान्यो ॥ १०९५ ॥ ॥ सवैया ॥ यौं सुन कै बतिया तिह की हरिजू धनु लै करि मै सु कह्यो है। दीरघु गात लख्यो तब ही सर छाड दयो अर सीस तक्यो है। बान लग्यो हरिसिघ तबै सिर टूट पर्यो धर ठाढो रह्यो है। मेर के स्रिंग हुतो उतर्यो सु मनो रवि अस्त

चलाया। गर्जसिंह भूमि पर गिर पड़ा जैसे उसे साँप ने डस लिया हो। हरीसिंह, जो उसके पास खड़ा था, उसकी यह दशा देखकर ऐसे भाग खड़ा हुआ मानो शेर का स्वरूप देखते ही खरगोश भाग खड़ा हो ॥ १०९३ ॥ ॥ सवैया ॥ हरीसिंह जब युद्धस्थल छोड़कर भाग गया तो क्रोधित होकर रणसिंह पुनः उठा। उसने बलपूर्वक धनुष-बाण सँभाला और युद्ध प्रारम्भ कर दिया। उसने युद्धक्षेत्र में ललकारकर श्रीकृष्ण को कहा कि अब थोडी देर के लिए रुको। जाते कहाँ हो, तुम काल के हाथ में पड़ चुके हो ॥१०९४॥ ॥ सवैया ॥ जब रणसिंह ने यह कहा तो हरीसिंह मुस्कुराने लगा। वह भी धनुष लेकर कृष्ण से लड़ने के लिए आ पहुँचा और पीछे नहीं हटा। उसने कुपित होकर श्रीकृष्ण से कहा कि जिसने मेरे साथ युद्ध किया समझ लो काल के हाथ बिक गया ॥ १०९५ ॥ ॥ सवैया ॥ उसकी ऐसी बातें सुनकर श्रीकृष्ण ने हाथ में धनुष ले लिया है। उसका विशाल शरीर देखकर उसके सिर का निशाना लगाते हुए उन्होंने बाण छोड़ दिया। बाण लगते ही हरिसिंह का सिर कट गया और धड़ खड़ा रह गया। उसके शरीर पर रक्त की लाली ऐसे लग रही थी मानो सुमेरु पर उसका सिर रूपी सूर्य तो अस्त हो गया हो

को प्रात भयो है ॥ १०९६ ॥ ॥ सवैया ॥ मार लयो हरिसिंघ जबै रनसिंह तबै हरि ऊपरि धायो। बान कमान क्रिपान गदा गहि कै कर मै अत जुद्ध मचायो। कोच सजे निज अंग महा लखिकै कबि ने इह बात सुनायो। मानहु मत्त करी बन मै रिस कै म्रिगराज के ऊपर आयो ॥ १०९७ ॥ आइके स्याम सो जुद्ध कर्‌यो रन की छित ते पग एक न भाग्यो। फेर गदा गहिकै करि मै ब्रिजभूखन को तन ताड़न लाग्यो। सो मधसूदन जू लखियो रस रुद्र बिखै अति ही इह पाग्यो। स्री हरि चक्र लयो करि मै भुअ बक्र करी रिस मै अनुराग्यो ॥ १०९८ ॥ लै बरछी रनसिंघ तबै जदुबीर के मारन काज चलाई। जाइ लगी हरि को अनचेत दई भुज फोर कै पार दिखाई। लाग रही प्रभ के तन सिउ उपमा तिह की कबि भाख सुनाई। मानहु ग्रीखम की रुत भीतर नागन चंदन सिउ लपटाई ॥ १०९९ ॥ (मू०ग्रं०४०१) ॥ स्वैया ॥ स्याम उखारकै सो बरछी भुज ते अरि मारन हेत चलाई। बानन के घन बीच कली चपला किधो हंस की अंस तचाई। जाइ लगी तिहके तन मै उरि फेरि दई उहि ओर दिखाई। कालका मानहु स्रउन

और पुनः प्रातःकाल की लालिमा छा रही हो ॥१०९६॥ ॥ सवैया ॥ हरीसिंह को जब श्रीकृष्ण ने मार लिया तो रणसिंह उन पर टूट पड़ा। बाण, कृपाण, कमान, गदा आदि पकड़कर उसने भीषण युद्ध किया। उसके कवच से सुसज्जित अंग देखकर कवि कहता है कि ऐसे लगता है मानो मदमस्त हाथी क्रोधित होकर सिंह पर टूट पड़ा हो ॥ १०९७ ॥ उसने आकर कृष्ण से युद्ध किया और युद्धभूमि से एक भी क़दम पीछे नहीं हटा। फिर उसने गदा हाथ में पकड़ी और श्रीकृष्ण के शरीर पर प्रहार करने लगा। यह सब देखकर श्रीकृष्ण रौद्र-रस से परिपूर्ण हो उठे और उन्होंने चक्र हाथ में लेकर रणसिंह को धराशायी करने के लिए क्रोध से अपनी भौहें टेढ़ी की ॥ १०९८ ॥ तभी रणसिंह ने बरछी हाथ में लेकर यदुवीर को मारने के लिए चलाई। वह अचानक कृष्ण को जा लगी और दाईं भुजा फाड़कर पार निकल गई। वह कृष्ण के शरीर में लगी ऐसी लग रही थी मानो ग्रीष्म ऋतु में नागिन चंदन के वृक्ष के साथ लिपटी हुई हो ॥ १०९९ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण ने वही बरछी अपनी भुजा से उखाड़कर शत्रु को मारने के लिए चलाई। वह बाणों के बादलों के बीच बिजली के समान चली अथवा ऐसे लग रही थी मानो हंस उड़ता हुआ जा रहा हो वह जाकर रणसिंह के शरीर मे लगी और उसको

भरी हनि सुंभ निसुंभ को मारन धाई ॥ ११०० ॥ रनसिंघ जबै रन सांग हन्यो धनसिंघ तबै करि कोप सिधार्यो । धाइ पर्यो करि लै बरछा ललकारकै स्री हरि ऊपरि मार्यो । आवत सो लखियो घनस्याम निकारकै खग्ग सु दुइ करि डार्यो । भूम दुटूक होइ टूट पर्यो सु मनो खगराज बडो अहि मार्यो ॥ ११०१ ॥ ॥ सवैया ॥ घाउ बचाइकै स्री जदुबीर सरासन लै अरि ऊपरि धायो । चार महूरत जुद्ध भयो हरि घाइ न हुइ उहि को नही घायो । रोस कै बान हन्यो हरि कउ हरिहूं तिह खैंच कै बान लगायो । देख रह्यो मुख स्रीहरि को हरिहूं मुख देख रह्यो मुसकायो ॥ ११०२ ॥ स्री जदुबीर को बीर बली अस लै करि मै धनसिंघ पै धायो । आवत ही ललकार पर्यो गजि मानहु केहरि कउ डरपायो । तउ धन सिंघ सरासनि लै सर सो तिहको सिर भूम गिरायो । जिउं अहिराज के आनन भीतर आन पर्यो म्रिग जान न पायो ॥ ११०३ ॥ दूसर स्री जदुबीर को बीर सरासन लै सर कोप भयो है । धीर बली धनसिंह की ओर चलावत बान

छाती फटी हुई दिखाई दी । वह ऐसी लग रही थी मानो दुर्गादेवी रक्त से लथपथ शुंभ-निशुंभ को मारने के लिए चली हों ॥ ११०० ॥ जब रणसिंह बरछी से मारा गया तब धनसिंह क्रोधित होकर दौड़ा और हाथ में भाला लेकर ललकारकर उसने श्रीकृष्ण पर वार किया । श्रीकृष्ण उसे आते हुए देखकर खड्ग निकालकर उसके दो टुकड़े कर दिये और यह दृश्य ऐसा लग रहा था मानो गरुड़ ने बहुत बड़े सर्प को मार दिया हो ॥ ११०१ ॥ ॥ सवैया ॥ घाव को बचाते हुए श्रीकृष्ण धनुष-बाण लेकर शत्रु पर टूट पडे । चार मुहूर्त तक युद्ध हुआ जिसमें न तो शत्रु मारा जा सका और न ही श्रीकृष्ण घायल हुए । उसने भी क्रोधित होकर कृष्ण पर बाण चलाया और इधर श्रीकृष्ण ने भी खींचकर बाण मारा । वह श्रीकृष्ण का मुँह देखने लगा और इधर श्रीकृष्ण भी उसे देखकर मुस्कुराने लगे ॥ ११०२ ॥ श्रीकृष्ण के एक महाबली ने हाथ में तलवार ली और धनसिंह पर टूट पड़ा । वह आते ही ऐसे ललकारा कि मानो हाथी ने सिंह को डरा दिया हो । धनसिंह ने धनुष-बाण लेकर उसका सिर धरती पर गिरा दिया और यह दृश्य. ऐसे लग रहा था जैसे अजगर के मुँह में अनजाने ही मृग आ पड़ा हो ॥ ११०३ ॥ श्रीकृष्ण का दूसरा वीर क्रोधित होकर हाथ में धनुष-बाण लेते हुए महाबली धनसिंह की तरफ निःसंकोच बढ़ा धनसिंह ने हाथ में ली और उसका मस्तक

निशंक गयो है । स्री धनसिंघ लिओ अस हाथ कट्यो अरि साथन डार दयो है । काछी निहार सरोवर ते फुलि मानहु बारज तोर लयो है ॥ ११०४ ॥ मार दुबीर निको धनसिंघ सरासन लै दल कउतक धायो । आवत ही गजि बाज हने रथ पैंदल काटि घनो रन पायो । खग्ग अलात की भाँत थिर्‍यो खर सान त्रिपाल को छत्र लजायो । अउर भली उपमा तिह को लखि भीखम कउ हरि चक्र भ्रमायो ॥ ११०५ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुरो धनसिंघ सरासन लै रिसकै अरिके दल माँझि पर्‍यो । रथ काटि घने गज बाज हने नही जात गने इह भाँत लर्‍यो । जमलोकु सु बीर किते पठए हरि ओर चल्यो अति कोप भर्‍यो । मुख मार ही मार पुकार पर्‍यो दलु जादव को सिगरो बिडर्‍यो ॥ ११०६ ॥ ॥ दोहरा ॥ धनसिंघ सैना जादवी दीनी घनी खपाइ । तब ब्रिजभूखन (मू०ग्रं०४०२) कोप भरि बोल्यो नैन तचाइ ॥ ११०७ ॥ ॥ कान्ह बाच सैना प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ देखत हो भट ठाढे कहा हम जानत है तुम पउरख हार्‍यो । स्री धनसिंघ के बान छुटै सभहूँ रनमंडल ते पग टार्‍यो । सिंघ कै अग्रब जैसे अजागन ऐसे भजे नहि

काटकर फेंक दिया । यह ऐसा लगा मानो किसी काछी ने सरोवर में कमल का फूल देखकर उसे तोड़ लिया हो ॥ ११०४ ॥ दो वीरों को मारकर बली धनसिंह धनुष-बाण लेकर दल पर टूट पड़ा और उसने आते ही हाथी-घोड़ों, रथियों और पैदलों को काटकर भीषण युद्ध किया । उसका खड्ग अग्नि की तरह चमक रहा था, जिसे देखकर राजा का छत्र भी लजा रहा था । वह उस भीष्म के समान लग रहा था जिसे देखकर श्रीकृष्ण ने अपना चक्र घुमाना प्रारम्भ कर दिया ॥ ११०५ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनः धनसिंह धनुष-बाण हाथ में लेकर क्रोधित होकर शत्रुदल में घुस पड़ा । उसने इस भाँति लडाई की कि कटे हुए रथ, गज एवं घोड़ों की गिनती नहीं की जा सकी । कितने ही वीरों को उसने यमलोक पहुँचा दिया और वह पुनः क्रोधित होकर श्रीकृष्ण की ओर बढ़ा । वह मुख से मारो-मारो पुकारने लगा और उसे देखकर यादवों का दल खण्डित हो गया ॥ ११०६ ॥ ॥ दोहा ॥ धनसिंह ने बहुत सी यादव सेना को नष्ट कर दिया तो श्रीकृष्ण क्रोधित होकर आँखें निकालते हुए बोले ॥ ११०७ ॥ ॥ कृष्ण उवाच सेना के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ हे शूरवीरो ! तुम क्यों खड़े हो गये हो । मैं जानता हूँ कि तुम लोग पौरुष हार चुके हो । तुमने धनसिंह के बाण छूटते ही से अपने पाँव हटाना शुरू कर दिया

शस्त्र सँभार्यो । काइर हुइ तिह पेख डरे नहि आप मरे उन कउ नही मार्यो ॥ ११०८ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै हरि की बतियाँ भट दाँतन पीस कै क्रोध भरे। धनु बान सँभारकै धाइ परे धनसिंघ हुते नही नैकु डरे। धनसिंघ सरासन लै करि मे कटि दैतन के सिर भूम परे। मनो पउन को पुंज बह्यो लग के फुलवारी मे टूट कै फूलि झरे ॥११०९॥ ॥ कबितु ॥ कोप भरे आए भट गिरे रन भूम कटि जुद्ध के निपट समुहाइ सिंघ धन सो। आयुध लै पान मै निदान को समर जान दउर दउर परे बीरता बढाइ मन सो। कोप धनसिंघ लै सरासन सु बान तान जुदो कर डारे सीस तिनही के तन सो। मानहु बसुंधरा की धीरता निहार इंद्र कीनी निजपूजा अरबिंद पुहपन सो ॥ १११० ॥ ॥ सवैया ॥ स्री धनसिंघ अयोधन मे अति कोप कियो बहुते भट मारे। अउर जिते बर आवत हे सु हने जनु मारत मेघ बिडारे। जादव के दल के गजके हलके दलके हलके करि डारे। झूम गिरे इव जिउँ धरनी मनो इंद्र के बज्र

है और शस्त्रों को न सँभालते हुए ऐसे दौड़ पड़े हों जैसे सिंह के सामने बकरियो का झुंड दौड़ता है। तुम कायर होकर उसको देखकर डर गये हो तथा न तो स्वयं ही मरे हो और न उसको ही मारा है॥ ११०८ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की ये बातें सुनकर शूरवीर क्रोध से दाँत पीसने लगे और धनसिंह का तनिक भी भय न मानते हुए धनुष-बाण सँभालकर उस पर टूट पड़े। धनसिंह ने धनुष-बाण हाथ में लिया और उधर से यादव सेना के आक्रमण के कारण दैत्यो के सिर कटकर भूमि पर ऐसे आ पड़े कि मानो तेज़ वायु बह रही हो और फुलवाड़ी में फूल झड़कर नीचे गिर रहे हों॥ ११०९ ॥ ॥ कवित्त ॥ शूरवीर क्रोध से भरकर आये और धनसिंह के सम्मुख युद्ध करते हुए कट-कटकर गिरने लगे। धनुष-बाण हाथ में लेकर इसे निर्णायक युद्ध मानकर मन में वीर-भाव लेते हुए दौड़-दौड़कर सामने आने लगे। धनसिंह ने भी क्रोधित होकर धनुष-बाण हाथ में लेकर इनके सिर धड़ से अलग कर दिये। यह ऐसा लग रहा था मानो धरती के धैर्य को देखकर इन्द्र कमल के फूल चढ़ाकर उसकी पूजा कर रहा हो॥ १११० ॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध में धनसिंह ने अत्यन्त क्रोधित होकर बहुत से शूरवीरों को मार डाला। अन्य जितने वीर और आते थे उनको भी उसी भाँति नष्ट कर दिया जैसे देखते-देखते हवा के झोंके से बादल खंडित हो जाते हैं। उसने अपनी वीरता से यादव-सेना के हाथी-घोड़ों के दल बहुत कम कर दिये वे वीर धरती पर ऐसे गिरे हुए थे जैसे

लगे गिर भारे ॥ ११११ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप भरे अस पान धरे धनसिंघ अरे गजराज सँघारे । अउर जिते जग पुंज हुते डर मान भजे अति ही धुजवारे । ता छबि की उपमा कबि स्याम कहै मन मै सु बिचार उचारे । मानहु इंद्र के आगम ते डर भूधर कै धर पंख पधारे ॥ १११२ ॥ जुद्ध कियो धनसिंघ घनो तिहके कोऊ सामुहि बीर न आयो । जो रन कोप सिउ आन पर्यो नही जान दियो सोई मार गिरायो । दास रथी दल सिउ जिम रावन रोस भर्यो अति जुद्ध मचायो । तैसे भिर्यो धनसिंघ बली हनि कै चतुरंग चमूं पुनि धायो ॥१११३॥ ॥ सवैया ॥ टेर कर्यो धनसिंघ बली रन त्याग सुनो हरि भाज न जइयै । ताते सँभारकै आनि भिरो निज लोकन को बिरथा न कटइयै । हे बलदेव सरासन लै हम सो समुहाइकै जुद्ध करइयै । संघर के सम अउर कछू (मू०ग्रं०४०३) नही याते दुहूँ जग मै जसु पइयै ॥ १११४ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ सुनिकै बतिया अरि की तरकी मन मै अति कोप भर्यो है । बान कमान क्रिपान गदा गहिकै जदुबीर हूँ धाइ पर्यो है । जुद्ध को फेरि फिर्यो धनसिंघ सरासन लै नही नैकु डर्यो है । बानन की

इन्द्र का वज्र लगने पर पंख कटे पर्वत गिरे पड़े हों ॥११११॥ ॥ सवैया ॥ हाथ में कृपाण पकड़े हुए क्रोधित धनसिंह ने बड़े-बड़े हाथियों को मार डाला तथा बाकी जितने ध्वजाओं वाले रथ आदि थे वे सब डरकर भाग खड़े हुए । कवि कहता है कि वह दृश्य ऐसा लग रहा था कि मानो इन्द्र के आगमन को जानकर पर्वत पंख लगाकर उड़ते चले जा रहे हों ॥ १११२ ॥ धनसिंह ने घनघोर युद्ध किया और उसके सामने कोई भी टिक न सका । जो उसके सामने आया, क्रोधित होकर धनसिंह ने उसे मार गिराया । वह ऐसे लग रहा था जैसे दाशरथी (राम की) सेना के साथ रावण ने भीषण युद्ध प्रारम्भ कर दिया हो । धनसिंह इस प्रकार लड़ते हुए चतुरंगिणी सेना का नाश करते हुए सेना पर टूट पड़ा ॥१११३॥ ॥ सवैया ॥ महाबली धनसिंह ने ललकारकर कहा कि हे कृष्ण ! अब युद्ध छोड़कर भाग मत जाना । तुम खुद आकर मुझसे लडो और व्यर्थ ही अपने लोगों को मत मरवाओ । हे बलराम ! तुम भी धनुष हाथ में लेकर मेरे सामने आकर युद्ध करो, क्योंकि युद्ध के समान अन्य कुछ नहीं है जिससे लोक-परलोक दोनों में यश मिलता हो ॥ १११४ ॥ सवैया शत्रु की ये सब बातें मन मे लग गयी और मन क्रोधित हो उठा और बाण कृपाण गदा आदि पकडकर श्रीकृष्ण भी टूट पडे धनसिंह भी

बरखा करि कै हरि सिउ लरिकै बलि साथ अर्‌यो है ॥१११५॥ ॥ सवैया ॥ इत ते बलभद्र सु कोप भर्‌यो उत ते धनसिंघ भयो अति तातो । जुद्ध कियो रिस घाइन सो सु दुहून के अंगु भयो रँग रातो । मार ही मार पुकार परे अरि भूल गई मन की सुध सातो । राम कहै इह भाँत लरैं हरि सो हरि जिउं गज सिउं गज मातो ॥ १११६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो बलदेव करे तिह बार बजाइकै आपनो आप सँभारे । लै कर मो अस दउर तबै कसिकै बल ऊपर घाइ प्रहारे । बीर पै भीर लई जदुबीर सु जादव लै रिप ओर सिधारे । घेरि लयो धनसिंघ तबै निस मै सस की ढिग जिउं लख तारे ॥१११७॥ बेड़ लयो धनसिंघ जबै गजसिंघ जु ठाढो हुतो सोऊ धायो । स्री बलदेव लखयो तबही चड़ स्यंदन वाही की ओर धवायो । आवन सो न दयो हरि लउ अध बीच ही बानन सो बिरमायो । ठाढो रह्‌यो गजसिंघ तहाँ सु मनो गजि के पद साँकर पायो ॥ १११८ ॥ ॥ सवैया ॥ धनसिंघ सो स्री हरि जुद्धु करे कबि राम कहै कहू जात न मार्‌यो । कोप भर्‌यो मधसूदन जू करि बीच सु आपनो चक्र सँभार्‌यो । छाडि दयो रन मै बरकै धनसिंघ को

अभय मन से धनुष पकड़कर युद्ध के लिए पलट पड़ा और बाण-वर्षा करता हुआ कृष्ण के सामने अड़ गया ॥ १११५ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर बलराम क्रोध से भर उठा, उधर धनसिंह क्रोध से लाल हो उठा। दोनों ने युद्ध किया और घावों ने रिसकर उनके शरीर लाल कर दिए। शत्रु तन-मन की सुधि भुलाकर मार-मार पुकारने लगे। कवि कहता है कि वे इस भाँति लड़े मानो हाथी से हाथी भिड़ गया हो ॥ १११६ ॥ ॥ सवैया ॥ बलदेव के वार को वह बचा ले रहा था और तभी दौड़कर उस पर कृपाण से वार कर रहा था। अपने भाई पर विपत्ति पड़ी देखकर यादवों को साथ लेकर श्रीकृष्ण उस ओर चले। उन्होंने धन को ऐसे घेर लिया जैसे चन्द्रमा के चारों ओर लाखों तारागण हों ॥ १११७ ॥ जब धनसिंह को घेर लिया तो गजसिंह जो कि खड़ा था वह भी आ गया। बलराम ने जब देखा तो वह भी रथ पर चढ़कर उसी ओर चल पड़ा और उसने अपने बाणों से उसे वहाँ तक नहीं पहुँचने दिया तथा आधे रास्ते में ही रोक लिया। गजसिंह वहाँ ऐसे रुक गया मानो हाथी के पैरों में जंजीर डाल दी गई हो ॥ १११८ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण धनसिंह से युद्ध कर रहे हैं और दोनों में से कोई भी नहीं मारा जा रहा है। अब क्रोधित होकर श्रीकृष्ण ने हाथ में चक्र सँभाल लिया उन्होंने चक्र

काटिकै सीस उतार्यो । यों तरफ्यो धर भूम बिखै मनो मीन सरोवर ते गहि डार्यो ॥ १११६ ॥ ॥ सवैया ॥ मार लयो धनसिंघ जबै तब ही लखि जादव संख बजाए । केतक बीर कटे बिकटे हरि सों लरिकै हरि लोक सिधाए । ठाढो हुतो गजसिंघ जहाँ यह कउतक देख महाँ बिसमाए । तउ लगि भागलि आइ कह्यो जु रहे भजि कै तुमरे पहि आए ॥ ११२० ॥ यों सुनकै तिनके मुख ते गजिसिंघ बली अत कोप भर्यो । कबि स्याम निहार कै राम की ओर धवाइ तहाँ रथु जाइ पर्यो । तजि शंक निशंक हुइ जुद्धु कर्यो जदुबीर कहा तिन यो उचर्यो । धन वै धनसिंघ बली हरि के समुहे लरिकै भवसिंध (मू०ग्रं०४०४) तर्यो ॥ ११२१ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रेम सो यों कहिकै मुखि ते परलोक सु लोक रहे सु बिचार्यो । भेज प्रचंड बडो बरछा रिसकै करि मै गजसिंघ सँभार्यो । जाहु कहाँ बलभद्र अबै कबि स्याम कहै इह भाँत उचार्यो । सो बरकै कर को तन को जदुबीर के भ्रात के ऊपरि डार्यो ॥ ११२२ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत इउ बरछा गहिकै बलदेव सु एक उपाइ

छोड़ दिया, जिसने युद्धस्थल में धनसिंह का सिर काटकर उतार लिया। वह धरती पर ऐसे तड़फने लगा जैसे सरोवर से मछली को निकाल देने पर मछली तड़फती है॥ १११६ ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे ही धनसिंह को मार डाला गया तो यादवों ने यह देखकर शंखध्वनि की। कितने ही वीर श्रीकृष्ण से लड़कर कटकर मरे और स्वर्ग सिधार गए। गजसिंह भी जहाँ खड़ा था, वहीं से यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हो उठा। तब तक भागने वालों ने आकर उससे कहा कि अब हम ही बचे हैं और तुम्हारे पास आए है॥ ११२० ॥ उनके मुँह से यह सुनकर बली गजसिंह 'क्रोध से भर उठा। कवि का कथन है कि वह बलराम की ओर देखकर रथ दौड़ाकर उस पर टूट पडा। श्रीकृष्ण ने कहा कि अभय होकर जिसने युद्ध .किया वह धनसिंह धन्य है जो सामने लड़ता हुआ भवसागर को पार कर गया॥ ११२१ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रेम से यह कहते हुए श्रीकृष्ण ने उसके लोक और परलोक का चिन्तन किया। इधर गजसिंह ने क्रोधित हो एक प्रचण्ड भाला अपने हाथ में लिया और यह कहते हुए कि हे बलराम! अब तुम बचकर कहाँ जाओगे? उसके ऊपर चला दिया॥ ११२२ ॥ ॥ सवैया ॥ आते हुए भाले को पकड़कर बलदेव ने एक उपाय किया और घोड़ो की तरफ़ देखते हुए वह छत्री का

करयो है । स्यंदन पै निहर्यो तब ही छती तरि हुइ इह भाँति अर्यो है । फोरके पारि भयो फल यो तिह को उपमा कबि यो उचर्यो है । मानहु कौलिद्र के स्रिगहु ते निकस्यो अहि को फन कोप भर्यो है ॥ ११२३ ॥ ॥ स्वैया ॥ बल सो बल खैंच लयो बिरछा तिहके कर सो तिरछा सु भ्रमायो । यो चमक्यो दमक्यो नभ मै चुटिआ उड तेज मनो दरसायो । स्री बलभद्र अयोधन मै रिसकै गजसिंघ की ओर चलायो । मानहु काल परीछत कउ जमदंड प्रचंड किधो चमकायो ॥ ११२४ ॥ ॥ सवैया ॥ गजसिंघ अनेक उपाइ किए न बच्यो उर आइ लग्यो बरछा बर । भूप बिलोकत है सिगरे धुन सीस हहा कहि मीचत है कर । घाउ प्रचंड लग्यो तिहको मुरछाइ पर्यो न तज्यो कर ते सर । स्यंदन पै गजसिंघ गिर्यो गिर ऊपरि जिउँ गजराज कलेवर ॥ ११२५ ॥ चेत भयो तबही गजसिंघ सँभार प्रचंड कुअंड लनायो । कान प्रमान लउ खैंच कै आन सु तानकै बान प्रकोप चलायो । एक ते हुइ कै अनेक चलै तिह की उपमा कहु भाख सुनायो । पउन के भच्छक तच्छक लच्छक लै बल की शरनागत आयो ॥ ११२६ ॥ ॥ सवैया ॥ दानन एक

आकार बनाते हुए वहीं फैल गया । बरछे का फल शरीर को फाड़कर इस प्रकार पार हुआ दिखाई दे रहा है, मानो पर्वतश्रृंग से सर्प फण निकाल क्रोध से देख रहा हो ॥ ११२३ ॥ ॥ सवैया ॥ बलपूर्वक भाला खींचकर बलभद्र ने उसे तिरछा घुमाया । वह इस प्रकार आकाश में लहराने लगा मानो किसी की चोटी लहरा रही हो । युद्धस्थल में बलराम ने क्रोधित हो वही भाला गजसिंह की ओर चला दिया । वह भाला जाता हुआ इस प्रकार दीख रहा था, मानो महाकाल ने राजा परीक्षित को मारने के लिए यमदग्नि भेजा ॥ ११२४ ॥ ॥ सवैया ॥ गजसिंह ने अनेकों उपाय किए परन्तु बच न सका और भाला उसकी छाती में लगा । सारे राजा देख रहे हैं और हाथ मलते हुए हाहाकार कर रहे हैं । उसको भीषण घाव लगा और वह मूच्छित हो गया परन्तु उसने हाथों से बाणों को नहीं छोड़ा । गजसिंह रथ के घोड़ों पर ऐसे गिर पड़ा जैसे पर्वत पर हाथी का शरीर गिर पड़ता है ॥ ११२५ ॥ चेतना अवस्था में आते ही गजसिंह ने अपना प्रचण्ड धनुष तान लिया और कानों तक उसकी डोरी खींच कुपित हो बाण चलाया । उसके एक बाण में से अनेकों बाण चलने लगे और उन बाणों के प्रकोप को सहन न कर सकने के कारण नागराज तक्षक भी अपने सब सर्पसमूह के साथ　　　की शरण में

लग्यो बल को गजसिंघ तबै इह भाँत कह्यो है। शेश सुरेश दनेश धनेश महेश निशेश खगेश गह्यो है। जुद्ध बिखै अब लउ सुनि लै सोऊ बीर हन्यो मन मै जु चह्यो है। एक अचंभव है मुहि देखत तो तन मै कस जीव रह्यो है॥ ११२७॥ ॥ सवैया॥ यों कहिकै बतिया बल सो बरछा धुजसंजुत खैंच चलायो। तउ धनु लै करि मै मुसली सोऊ आवत नैनन सो लखि पायो। उग्र पराक्रम कै संग बान अचानक सो कटि भूम गिरायो। मानहु पंखन कौ अहिवा खगराज के हाथ पर्यो रिस घायो॥ ११२८॥ (मू०ग्रं०४०५) ॥ स्वैया॥ कोप भर्यो अति ही गजसिंघ लयो बरछा अर ओर चलायो। जाइ लग्यो मुसलीधर के तन लागत ता अति ही दुखु पायो। पार प्रचंड भयो फल यो जसु ता छबि को मन मै इह आयो। मानहु गंग की धार के मद्धि उतंग हुइ कूरम सीस उचायो॥ ११२९॥ ॥ सवैया॥ लागत साँग को स्री बलभद्र सु स्यंदन ते गहि खैंच कढ्यो। मुरझाइकै भूमि पर्यो न मर्यो सुर ब्रिछ गिर्यो मनो जोत मढ्यो। जब चेत भयो भ्रम छूटि गयो उठ ठाढो

आ पहुँचा॥ ११२६॥ ॥ सवैया॥ युद्धस्थल में गजसिंह ने गरजकर यह कहा कि शेषनाग, इन्द्र, सूर्य, कुबेर, शिव, चन्द्र एवं गरुड़ आदि सबको मैं पकड़ चुका हूँ। तुम अच्छी तरह सुन लो, युद्धस्थल में मैंने जिसे चाहा है मार दिया है, परन्तु मुझे आश्चर्य है कि अभी तक तुम्हारे तन में प्राण कैसे बचे हैं॥ ११२७॥ ॥ सवैया॥ यह कह उसने झंडी लगा भाला खींचकर दे मारा जिसे हाथ में धनुष लिये हुए बलराम ने आते हुए देखा। अपने महा पराक्रम के साथ उसने उस भाले को काट भूमि पर इस प्रकार गिरा दिया मानो उड़नेवाले साँप को खगराज गरुड़ ने पकड़कर मार डाला हो॥ ११२८॥ ॥ सवैया॥ क्रोधित होकर गजसिंह ने भाला शत्रु की ओर चलाया जो कि बलराम के शरीर में जा लगा। भाला लगते ही बलराम को अपार कष्ट हुआ। वह भाला शरीर के पार हो गया और उसका बाहर निकला हुआ फल ऐसे लग रहा था जैसे गंगा की धारा में कछुवे ने बाहर सिर निकाला हो॥ ११२६॥ ॥ सवैया॥ बलराम ने भाला लगते ही उसको खींचकर बाहर निकाल दिया और मुरझाकर ऐसे भूमि पर गिर पड़े मानो ज्योति से परिपूर्ण कल्पवृक्ष धरती पर गिर पड़ा हो। जब वे पुनः चेतनावस्था में आये तो उन्हे स्थिति का आभास हुआ और वे क्रोध से भर उठे वह रथ को देखकर कूदकर उस पर ऐसे जा चढ़ा जैसे सिंह कूदकर पर्वत पर चढ़ जाता

भयो मन कोपु बढ्यो । रथ हेरकै धाइ चड़्यो बरसो गिर पै मनो कूद कै सिंघ चढ्यो ॥११३०॥ पुन आइ भिर्यो गजसिंघ सो बीर बली मन मै नही नैकु डर्यो । धनु बान सँभारि क्रिपान गदा रिस बीच अयोधन जुद्ध कर्यो । जोऊ आवत भ्यो सर शत्रन को संग बानन के सोऊ काट डर्यो । कबि स्याम कहै बलदेव महाँ रन की छित ते नही पैगु टर्यो ॥ ११३१ ॥ ॥ स्वैया ॥ बहुरो हल मूसल लै करि मो अरि सिउ अरिकै अति जुद्ध मचायो । लै बरछा गजिसिंघ बली बलि सिउँ बलदेव की ओर चलायो । आवत सो लखिकै फल को हल सो कटिकै पुन भूम गिरायो । सो फल हीन भयो जबही कसिकै बलभद्र के गात लगायो ॥ ११३२ ॥ ॥ स्वैया ॥ खग्ग करंगहि कै गजिसिंघ अनंत के ऊपर कोप चलायो । तउ मुसली कर चरम लियो धर यों अरि कउ बल घाउ बचायो । ढाल के फूल पै धार बही चिनगार उठी कबि यों गुन गायो । मानहु पावस की निस मै बिजुरी दुति तारन को प्रगटायो ॥ ११३३ ॥ ॥ स्वैया ॥ घाइ हली सह कै रिप को गहि कै करवार सु बार कर्यो है । धार बही अरि कंठि बिखै कटि कै तिह को सिर भूम झर्यो है । बज्र जरे रथ ते गिरयो तिह को जस यौ कबि

है ॥ ११३० ॥ वह पुनः अभय हो गजसिंह से आ भिड़ा और धनुष, बाण, कृपाण, गदा आदि को सम्हालते हुए क्रोधित हो युद्ध करने लगा । जो भी शत्रु का बाण आता उसे वह अपने बाण से काट डालता । कवि का कथन है कि बलराम युद्धस्थल से एक क़दम भी पीछे नहीं हटा ॥ ११३१ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनः हल और मुगदर ले बलराम ने घनघोर युद्ध किया और इधर गजसिंह ने भी भाला ले बलराम की ओर चलाया । आते हुए भाले को देख बलराम ने उसे अपने हल से काट पुनः भूमि पर गिरा दिया और वह फलहीन भाला ज़ोर से आकर बलराम के शरीर में लगा ॥ ११३२ ॥ ॥ सवैया ॥ अब गजसिंह ने क्रोधित हो खड्ग से वार किया जिसे बलराम ने हाथ में ढाल लेकर बचाया । ढाल पर से चिनगारियाँ निकलने लगीं और वह ऐसी लग रही हैं मानो वर्षा ऋतु में रात्रि में बिजली चमककर तारागणों को प्रकट कर रही हो ॥ ११३३ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु का घाव सहनकर बलराम ने तलवार से वार किया । तलवार की धार शत्रु के गले पर लगी और उसका सिर कटकर भूमि पर गिर पड़ा । वह अपने रथ से वज्र की चोट खाकर गिर पड़ा और उस दृश्य का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि

नै उचर्यो है। मानहु तारन लोकहूँ ते सुरभान हन्यो सिर भूमि पर्यो है॥ ११३४॥ मार लयो गजिसिंघ जबै तजिकै रन को सभ ही भट भागे। स्रउन भरे लखि लोथ डरे नहि धीर धरे निस के जनु जागे। मार लए न्रिप पंच भगे तिन यों कह्यो जा अपने प्रभि आगे। यों सुनि कै दल धीर छुट्यो न्रिप हीयो फट्यो रिस मै अनुरागे॥ ११३५॥ (मू०ग्रं०४०६)

॥ इति क्रिशनावतारे जुद्ध प्रारंभ गजसिंघ बधहि धिआइ समापतम॥

अथ सेना सहित अमिटसिंघ बध कथनं॥

॥ दोहरा॥ अणगसिंघ अउ अचलसी अमितसिंघ न्रिप तीर। अमरसिंघ अर अनघसी महाँ रथी रनधीर॥ ११३६॥ ॥ सवैया॥ देख तिनै न्रिप सिंघजरा हथिआर धरे लखबीर पचारे। पेखहु आज अयोधन मै न्रिप पंच बली जदुबीर सँघारे। ता संगि जाइ भिरो तुमहूँ तजि शंक निशंक बजाइ नगारे। यो सुनिकै प्रभ को बतिया अति कोप भरे रन ओर पधारे॥ ११३७॥ ॥ सवैया॥ आवत ही जदुबीर तिनो रन

वह ऐसा लगा मानो लोकोपकार के लिए विष्णु ने राहु का सिर काटकर धरती पर फेंक दिया हो॥ ११३४॥ जब गजसिंह मारा गया तो युद्ध छोड़ सभी वीर भाग खड़े हुए। रक्त से लथपथ उसकी लाश देखकर सबका धैर्य छूट गया और ऐसे घबड़ा गए जैसे कई रातों से वे सो न सके हों। शत्रुदल के लोग अपने स्वामी जरासंध के पास जा कहने लगे कि युद्धस्थल में सभी प्रमुख राजा मारे जा चुके हैं। यह सुन दल का धैर्य छूट गया और क्रोध से राजा की छाती फटने लगी॥ ११३५॥

॥ श्री कृष्णावतार के युद्ध-प्रारम्भ में गजसिंह-वध अध्याय समाप्त॥

सेना-सहित अमिटसिंह-वध-कथन

॥ दोहा॥ अनगसिंह, अचलसिंह, अमितसिंह, अमरसिंह तथा अनघसिंह जैसे रणधीर महारथी राजा जरासंध के साथ बैठे हुए थे॥ ११३६॥ ॥ सवैया॥ इनको अपने पास देखकर राजा जरासंध ने शस्त्रों को तथा इन वीरों को देखते हुए कहा कि देखो, आज रणभूमि में कृष्ण ने पाँच महाबली राजाओं का संहार कर दिया अब तुम लोग बिना किसी भय के नगाड़े बजाते हुए कृष्ण के साथ जा भिड़ो अपने राजा की यह बात सुन सभी

भूम बिखै जम रूप निहार्‌यो। पान गहे धन बान सोऊ रन बीच तिनो बलदेव हकार्‌यो। खग्ग कसे कटि मै अंग कौच लिए बरछा अणगेस पुकार्‌यो। आइ भिरो हरिजू हम सिउ अब ठाढो कहा इह भाँति उचार्‌यो॥ ११३८॥ देख तबै तिनको हरिजू तब ही रन मै पंच बीर हकारे। स्याम सु सैन चल्यो इत ते उत तेऊ चले सु बजाइ नगारे। पट्टसि लोह हथी परसे अगनायुध लै करि कोप प्रहारे। जूझ गए इतके उतके भट भूमि गिरे सु मनो मतवारे॥ ११३९॥ ॥ सवैया॥ जुद्ध भयो तिह ठउर बडो चढिकै सभ देव बिबाननि आए। कउतकि देखन कउरन को कबि स्याम कहै मन मोद बढाए। लागत साँगत के भट यो गिर अस्वन ते धरनी पर आए। सो फिरकै उठ जुद्धु करै तिहके गुन किंनर गंध्रब गाए॥ ११४०॥ ॥ कबितु॥ केते बीर भाजे केते गाजे पुनि आइ आइ धाइ धाइ हरिजू सो जुद्ध वे करत हैं। केते भूमि गिरे केते भिरे गज्ज मत्तन सिउ लरे तेतो म्रितक हुइकै छित

क्रोधित हो युद्धस्थल की ओर चल पड़े॥ ११३७॥ ॥ सवैया॥ उनके आते ही श्रीकृष्ण ने उन्हें युद्धभूमि में यम के रूप में विचरण करते देखा। उन्होंने हाथों में धनुष-बाण पकड़ रखे थे और वे बलराम को ललकार रहे थे। उनके हाथों में खड्ग थे और अंगों में कवच कसे हुए थे। हाथ में भाला लिये हुए अनगसिंह ने ललकारकर कहा कि हे कृष्ण! अब खड़े क्यों हो? आओ हमसे युद्ध करो॥ ११३८॥ कृष्ण ने देखकर उन पाँच वीरों को ललकारा। इधर से कृष्ण सेना-समेत चले और उधर से वे भी नगाड़े बजाते चले। हाथों में लौहास्त्र तथा आग्नेयास्त्र लेकर वे क्रोधित हो प्रहार करने लगे। दोनों ओर के वीर जूझ पड़े और मतवाले हो भूमि पर गिरने लगे॥ ११३९॥ ॥ सवैया॥ बड़ा भयंकर युद्ध हुआ और देवगण अपने विमानों पर बैठकर युद्ध देखने आए। युद्ध की लीला देखने के लिए उनके मन में उत्साह बढ़ उठा। भालों के लगते ही वीर घोड़ों से गिरकर धरती पर लोटने लगे। गिरते हुए वीर उठकर पुनः युद्ध करने लगे और गंधर्व तथा किन्नर उनका यशोगान करने लगे॥ ११४०॥ ॥ कवित्त॥ कितने ही वीर भागने लगे, कितने ही गरजने लगे और कितने ही पुनःपुनः दौड़कर कृष्ण जी के साथ युद्ध करने लगे। कितने ही भूमि पर गिर पड़े, मदमस्त हाथियों से लड़ मरे और कितने ही मृतक धरती पर पडे हुए हैं वीरों के मरने पर अन्य लोग दौड़ दौड़कर मार-मार का उच्चारण करते हुए शस्त्र उठा रहे हैं और एक भी

पै परत हैं । अउर दउर परे मार मार ही उचरे हथियारन उघरे पग एक ना टरत हैं । स्रउणत उधत लोह आँच बड़वानल सी पउन बान चलै बीर त्रिण जिउँ जरत हैं ॥ ११४१ ॥ ॥ स्वैया ॥ अणगेस बली तब कोप भर्‍यो मन जान निदान की मार मची जब । स्यंदन पै चढिकै कढिकै कसि बान कमान तनाइ लई तब । स्री हरि की प्रतना हू के ऊपरि आइ पर्‍यो तिन बीर हने सभ । भाज गए तम से अर यो न्रिप पावत भ्यो रन सूरज की छब ॥ ११४२ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रेर तुरंग सु आगे भयो करि लै अस ढार बडी धरकै । कछु जादव से तिह जुद्ध कर्‍यो न टर्‍यो तिन सो पग दुइ डरिकै । जदुबीर (मू०ग्रं०४०७) के सामुहि आइ अर्‍यो बहु बीरन प्रान बिदा करिकै । ग्रहि को न चलों इह मो प्रन है किधो प्रान तजउ कि तुवै मरिकै ॥ ११४३ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ कहिकै अस को गहिकै जदुबीर चमूँ कहु जाइ हकारा । जादवसैन हुते निकस्यो रन सुंदर नाम सरूप अपारा । प्रेरि तुरंग भयो समुहे न्रिप मुंड कर्‍यो न लगी कछु बारा । योध रते सिर छूट पर्‍यो नभि ते जिम टूट परे छित तारा ॥ ११४४ ॥

कदम पीछे नहीं हटते । रक्त रूपी समुद्र में बड़वानल की अग्नि धधक रही है और पवन के समान तीव्रगामी बाण चलाते शूरवीर तिनकों के समान चल रहे हैं ॥ ११४१ ॥ ॥ सवैया ॥ अनगसिंह इसे निर्णायक युद्ध मान क्रोध से भर उठा और उसने रथ पर चढ़कर कृपाण निकाल ली तथा बाण और कमान तान लिया । उसने श्रीकृष्ण की सेना पर आक्रमण कर दिया और वीरों को नष्ट कर दिया । अंधकार के भाग जाने के समान सूर्य रूपी राजा अनघसिंह के सामने से शत्रु-सेना भाग खड़ी हुई ॥ ११४२ ॥ ॥ सवैया ॥ घोड़े को हाँककर बहुत बड़ी ढाल-तलवार ले वह आगे बढ़ा और बिना पीछे हटे उसने कुछ यादवों के झुंड के साथ युद्ध किया । बहुत से वीरों को मारकर वह श्रीकृष्ण के सामने आकर डट गया तथा कहने लगा कि मैंने प्रण किया है कि मैं घर वापस नहीं जाऊँगा और या तो प्राणों का स्वयं त्याग करूँगा या तुम्हें मार डालूँगा ॥ ११४३ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर हाथ में तलवार ले उसने श्रीकृष्ण की सेना को ललकारा । यादव सेना में से भी कृष्ण के नाम की जय-जयकार होने लगी, परन्तु अनघसिंह घोड़े को दौड़ाकर सामने जा पहुँचा और इस राजा ने सभी सेना के वीरों को क्षण भर में मार डाला । सिर धरती पर ऐसे गिरने लगे जैसे से तारे टूटकर धरती पर गिर रहे

॥ स्वैया ॥ पुनि दउर पर्यो जदुबी प्रतना पर स्याम कहै अति कोप रुसा । उत ते जदुबीर फिरे इकठे अरि राइ बढाइकै चित्त गुसा । अगनस्त्र छुट्यो न्रिप के कर ते जरगे मनो पावक बीच तुसा । कटि अंग परे बहु जोधन के मनो जग्य के मंडल मद्धि कुसा ॥ ११४५ ॥ ॥ सवैया ॥ कान प्रमान लउ खैंच कमान सु बीर निहार कै बान चलावै । जो इह ऊपर आइ परे सर सो अध बीच ते काटि गिरावै । लोह हथी परसे करि लै ब्रिजनाथ की देह प्रहार लगावै । जुद्ध समै थकि कै जकि कै जदुबीर कउ बार सँभार न आवै ॥ ११४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो इह ऊपरि आइ परे भट कोप भरे इनहूँ सु निवारे । बान कमान क्रिपान गदा गहि मार रथी बिरथी करि डारे । घाइल कोटि चले तजि कै रन जूझ परे बहु डील डकारे । यों उपजी उपमा सु मनो अहराज परे खगराज के मारे ॥ ११४७ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध कियो जदुबीरन सो उह बीर जबै कर मै असि साज्यो । मार चमूँ सु बिदार दई कबि राम कहै बल सो न्रिप गाज्यो । सो सुनि बीर डरे सभही धुन कउ सुनकै घन सावन लाज्यो । छाजत जिउँ अर के गन मै

हों ॥ ११४४ ॥ ॥ सवैया ॥ अतिरुष्ट होकर वह पुनः यादव सेना पर टूट पड़ा । उधर से श्रीकृष्ण भी सेना में विचरण करने लगे जिससे शत्रु राजा का क्रोध और बढ़ उठा । राजा अनगसिंह ने आग्नेयास्त्र छोड़ा और उससे सैनिक ऐसे जलने लगे जैसे अग्नि में भूसा जल उठता है । योद्धाओं के अंग कटकर ऐसे गिरने लगे मानो यज्ञवेदी में कुशा जल रही हों ॥ ११४५ ॥ ॥ सवैया ॥ कानों तक बाण खींचकर वीर उन्हें चला रहे हैं और इन बाणों से बीच ही में जो बाण आकर टकराता है वह उसे काट फेंकता है । कृपाण पकड़कर शत्रु श्रीकृष्ण की देह पर वार कर रहे हैं, परन्तु स्वयं थक जाने के कारण कृष्ण के वार को सम्हाल नहीं पा रहे हैं ॥ ११४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जिन वीरों ने श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया उनको इन्होंने खण्ड-खण्ड कर डाला । बाण-कमान, कृपाण व गदा को हाथ में ले रथियों को विरथी कर डाला । कई वीर घायल हो युद्ध छोड़कर चल पड़े हैं और कई युद्धस्थल में ही जूझ गए हैं । मरे हुए वीर ऐसे लग रहे हैं, मानो खगराज गरुड़ द्वारा मारे गए सर्पराज पड़े हों ॥ ११४७ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथ में कृपाण ले उस वीर ने यादवों से युद्ध किया । चतुरंगिणी सेना को मारकर कवि राम का कथन है कि राजा बलपूर्वक गरजने लगा उसकी गर्जना को सुन सावन के बादल

म्रिग के बन मै मनो सिंघ बिराज्यो ।।११४८।। ।। सवैया ।। बहुरो कर वार सँभार बिदार दई धुजनी न्रिप कोट मरे। असवार हजार पचास हने रथ काटि रथी बिरथी सु करे। कहूँ बाज गिरे कहूँ ताज जरे गजराज घिरे कहूँ राज परे। थिर नाहि रहै न्रिप को रथभूम मनो नटुआ बर न्रित करे ।। ११४९ ।। एक अजाइब खाँ हरि को भटिताँ संग सो न्रिप आनि अर्‌यो है। भाजत नाहि हठी रन ते अणगे सगली अति कोप भर्‌यो है। लै करि वार प्रहार कियो कटियो तिह सीस कबंध (मू०ग्रं०४०८) लर्‌यो है। फेर गिर्‌यो मानो आँधी बहै द्रुम दीरघ भू परि टूट पर्‌यो है ।। ११५० ।। ।। सवैया ।। देख अजाइब खान दशा तब गैरत खाँ मन रोस भर्‌यो। सु धवाइकै स्यंदन जाइ पर्‌यो अर बीर हूँ ते नही नैक डर्‌यो। अस पान धरे रन बीच दुहूँ तिह आपस मै बहु जुद्ध कर्‌यो। मन यौं उपजी उपमा बन मै गज सो मद को गज आन अर्‌यो ।।११५१।। ।। सवैया ।। गैरत खाँ बरछी गहिकै बर सो अरि बीर की ओर चलाई। आवत बिज्जल ता सम देखकै काटि क्रिपान सो भूम गिराई।

लजाने लगे तथा सभी भयभीत हो उठे। वह शत्रुओं में इस प्रकार शोभायमान हो रहा था जैसे मृगों के वन में सिंह शोभा पा रहा हो ।। ११४८ ।। ।। सवैया ।। पुनः वार करके सेना को मार डाला गया और अनेकों राजा मारे गए। पचास हजार सैनिक मारे गए और रथियों को काटकर रथहीन कर दिया गया। कहीं घोड़े, कहीं हाथी और कहीं राजा गिरे पड़े हैं। राजा अनगसिंह का रथ युद्धभूमि में स्थिर नहीं है और वह ऐसे दौड़ रहा है मानो नट नृत्य कर रहा हो ।। ११४९ ।। श्रीकृष्ण की सेना में एक अजायब खाँ नामक शूरवीर था, वह आकर राजा के सामने डट गया। अनगसिंह भी रण-भूमि से नहीं हटा और अत्यन्त क्रोध से भरकर उसने अजायब खाँ पर तलवार का वार किया। उसका सिर कट गया और कबन्ध लड़ने लगा। पुनः वह इस प्रकार धरती पर गिर पड़ा मानो आँधी चलने से कोई विशाल वृक्ष टूटकर गिर पड़ा हो ।। ११५० ।। ।। सवैया ।। अजायब खाँ की यह दशा देखकर ग़ैरत खाँ का मन क्रोध से भर उठा। वह रथ को हँकाकर अभय होकर टूट पड़ा और हाथों में तलवारें पकड़कर दोनों महाबलियों ने भीषण युद्ध किया। वे ऐसे लग रहे थे कि मानो बन में हाथी से हाथी आ भिडा हो ११५१ सवैया हाथ में बरछी पकडकर ग़ैरत खाँ ने शत्रु की तरफ़ फेंकी जिसे अनगसिंह ने बिजली के समान देखते हुए अपनी कृपाण से

सो न लगी रिसकै रिप को बरछी गहि दूसरी ओर चलाई। यों उपमा उपजी जिय मै मानो छूट चली नभ ते जु हवाई ॥ ११५२ ॥ ॥ स्वैया ॥ दूसरी देखकै साँग बली न्रिप आवत काटिकै भूम गिराई। लै बरछी अपनी कर मै न्रिप गैरत खाँ पर कोप चलाई। लाग गई तिहके मुख मै बहि स्रउन चल्यो उपमा ठहराई। कोप की आग महाँ बढिकै डढ कै हिय कउ मनो बाहरि आई ॥ ११५३ ॥ ॥ दोहरा ॥ मिरतक हुइ धरनी पर्‌यो जोति रही ठहराइ। जनु अकाश ते भास करि पर्‌यो राह डरि आइ ॥ ११५४ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप भरे रन मै कबि स्याम तबै हरिजू इह भाँति कह्‌यो है। जुद्ध बिखै भटु कउन गनै लखि बीर हनै मन मै जु चह्‌यो है। जानत हउ तिह त्रास तुमै किनहूँ कर मै धनहूँ न गह्‌यो है। ता ते पधारहु धामन को सु लख्यो तुम ते पुरखत्त रह्‌यो है ॥ ११५५ ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसे कह्‌यो जदुबीर तिनै सभही रिसकै धन बान सँभार्‌यो। ह्वैकै इकत्र चले रन को बल बिक्रम पउरख जीअ बिचार्‌यो। मार ही मार पुकार परे जोऊ आइ अर्‌यो अरि सो तिह मार्‌यो। होन भयो तिह जुद्ध बडो दुहूँ ओरन ते

काटकर भूमि पर गिरा दिया। वह बरछी शत्रु को न लगी और उसने दूसरी बरछी ऐसे चलाई मानो आकाश में हवाई गोला फेंका गया हो ॥ ११५२ ॥ ॥ सवैया ॥ दूसरी बरछी को भी आते देखकर महाबली राजा ने काटकर भूमि पर गिरा दिया और अपने हाथ में बरछी लेकर क्रोधित होकर गैरत खाँ पर चलाई। वह बरछी उसके मुँह में लगी। रक्त इस प्रकार बह चला मानो क्रोध की आग बढ़कर हृदय से बाहर निकल आई हो ॥ ११५३ ॥ ॥ दोहा ॥ वह मृतक होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसकी चेतना स्थिर हो गई। वह ऐसा लग रहा था मानो आकाश से सूर्य डरकर धरती पर आ गया हो ॥ ११५४ ॥ ॥ सवैया ॥ तब श्रीकृष्ण जी ने क्रोधित होकर इस तरह कहा कि यह कौन शूरवीर है जिसने अपनी इच्छा-अनुसार सब शूरवीरों को मार गिराया। मैं जानता हूँ कि तुम लोग उसके भय के कारण हाथों में धनुष नहीं पकड़ रहे हो। मेरे विचार से तुम सब अपने-अपने घरों को जाओ क्योंकि तुम लोगों का पौरुष समाप्त हो चुका है ॥११५५॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के ऐसा कहने पर धनुष-बाण सँभाले और अपने पौ ष का विचार करते हुए सब इकट्ठा होकर युद्ध के लिए चले। मारो-मारो की पुकार लगाते हुए वे सामने आनेवाले प्रत्येक शत्रु को मारने लगे दोनों ओर से हो रहे

त्रिप ठाढ निहार्यो ॥ ११५६ ॥ ॥ सवैया ॥ एक सुजान बडो बलवान धरे अस पान तुरंगम डार्यो । अस्व पचास हने अर्यो अनगेस बली कहु जा ललकार्यो । धाइकै घाइ कर्यो त्रिप लै करि बाम मै चाम की ओट निहार्यो । दाहनै पान क्रिपान की तान सुजान को काटि कै सीस उतार्यो ॥ ११५७ ॥ ॥ दोहरा ॥ बीर सुजान हन्यो जबै अणगसिंघ तिह ठाइ । देख्यो सैना जादवी दउर (मू०ग्रं०४०६) परे अरराइ ॥ ११५८ ॥ ॥ सवैया ॥ भट लाज भरे अरराइ परे न डरे अरि सिउ तेऊ आइ अरे । अति कोप भरे सभ लोह जरे अब याहि हनो मुख ते उचरे । अस भाल गदा अरु लोह हथी बरछी कर लै ललकार परे । कबि राम भने नही जात गने कितने बरबान कमान धरे ॥ ११५९ ॥ ॥ सवैया ॥ अनगेस बली धन बान गह्यो अति रोस भर्यो दोऊ नैन तजाए । मार ही मार पुकार पर्यो सरु शत्रन के उर बीच लगाए । एक मरे इक घाइ परे इक देखि डरे रन त्याग पराए । आइ लरे जोऊ लाज भरे मन मै रन कोप की ओप बढाए ॥ ११६० ॥ सातक अउ

इस भीषण युद्ध को राजा जरासंध ने देखा ॥ ११५६ ॥ ॥ सवैया ॥ एक महाबली ने हाथ में तलवार लिये हुए अपने घोड़े को दौड़ाया और पचास घुडसवारों को मारते हुए उसने अनगसिंह को जा ललकारा । इधर सुजानसिंह ने दौड़कर राजा पर वार किया, जिसे उसने बायें हाथ से ढाल पर रोक लिया । दायें हाथ से राजा ने अपनी कृपाण से सुजानसिंह का सिर उतार लिया ॥ ११५७ ॥ ॥ दोहा ॥ जब अनगसिंह ने सुजानसिंह को मार डाला तो यादव सेना क्षुब्ध होकर शत्रु-सेना पर टूट पड़ी ॥११५८॥ ॥ सवैया ॥ लज्जा से भरे हुए वीर अभय होकर सेना पर टूट पड़े और क्रोधित होकर चिल्लाने लगे कि अब इस अनगसिंह को अवश्य मारना है । वे हाथों में भाले, कृपाण, गदा, बरछी आदि लेकर ललकारने लगे और कवि राम का कथन है कि अगणित धनुषों की डोरियाँ खिच गईं ॥ ११५९ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर अनगसिंह ने भी क्रोधित होकर धनुष-बाण उठा लिया और उसकी आँखें लाल हो गईं । मारो-मारो की ललकार के साथ उसने अपने बाण शत्रुओं के हृदय में मारे जिनकी मार से कोई तो मर गया, कोई घायल हो गया और कोई रणभूमि छोड़कर भाग गया । जो गर्वयुक्त होकर लड़ने के लिए आये, उनके आने से युद्ध और भीषण हो उठा ॥ ११६० ॥ हलधर और वसुदेव तथा सात्यकि आदि भी आगे की तरफ बढ़े तथा उद्धव और अक्रूर आदि भी युद्ध

मुसली रथ पै बसुदेव ते आदिक धाइ सभै । बरमाक्रित ऊधव अउर अक्रूर चले रन कउ भरि लाज तबै । तिह बीच घिर्यो न्रिप राजत यो लखि रीझ रहे भट ताहि छबै । मन यों उपजी उपमा रित पावस अभ्रन मै दिनराज फबै ॥ ११६१ ॥ ॥ सवैया ॥ हल पान सँभार लयो मुसली रन मै अरिकै हय चारो ही घाए । बान कमान गही बसुदेव भले रथ के चक काटि गिराए । सातक सूत को सीस कट्यो रिस ऊधव बान अनेक चलाए । फाँध पर्यो रथ ते ततकाल लए अस ढाल बडे भट घाए ॥ ११६२ ॥ ॥ सवैया ॥ ठाढो हुतो भट सो जदुबीर को सो अणगेस जू नैन निहार्यो । पाइन की करि चंचलता बर सो अस शत्र के सीस प्रहार्यो । टूट पर्यो झट दै कटि यो सिर ता छबि को कबि भाउ उचार्यो । मानहु राहु निसाकर को नभिमंडल ते हनि कै छित डार्यो ॥ ११६३ ॥ कूद चड़्यो अर के रथ ऊपर सारथी कउ बधकै तब ही । धन बान क्रिपान गदा बरछी अर के करि शस्त्र लए सभ ही । रथ आप ही हाक कै स्याम कहै मध जादव सैन पर्यो जब ही । इक मार लए इक भाज गए इक ठाढे भए तेऊ नाद बही ॥ ११६४ ॥

के लिए चले । इन सबमें घिरा हुआ राजा अनगसिंह ऐसा लगता है मानो वर्षाऋतु में बादलों के बीच घिरा हुआ सूर्य शोभायमान हो रहा हो ॥ ११६१ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने अपने हाथ में हल सँभाल लिया और शत्रु के चारों घोड़ों को मार गिराया । वसुदेव ने अपने बाण और कमान से रथ के चारो पहियों को काट दिया । सात्यकि ने उसके सारथी का सिर काट डाला और उद्धव ने भी क्रोधित होकर अनेकों बाण चलाये । राजा अनगसिंह तत्काल रथ से कूद पड़ा और अपनी तलवार से अनेकों वीरों को मार गिराया ॥ ११६२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा अनगसिंह ने श्रीकृष्ण के शूरवीरों को खड़े देखा तो तेजी से उसने शत्रु के सिर पर अपनी कृपाण से वार किया । शत्रु का सिर कटकर इस प्रकार धरती पर जा गिरा मानो राहु ने आकाश-मंडल से चन्द्रमा को मारकर धरती पर गिरा दिया हो ॥ ११६३ ॥ शत्रु के सारथी को मारकर राजा उसके रथ पर चढ़ गया और उसने अपने हाथ में धनुष, बाण, कृपाण, गदा और बरछी आदि शस्त्र उठा लिये । वह यादव सेना के बीच स्वयं भी रथ चलाने लगा । उसकी मार से कोई तो मर गया- कोई भाग गया और कोई होकर खडा का खडा रह गया ११६४

॥ सवैया ॥ आपन ही रथ हाकत है अरु आपन ही सरि जाल चलावै । आपन ही रिप घाइ बचावत आपन ही अरि घाइ लगावै । एकन के धनु बान कटे भट एकन के रथ काट गिरावै । दामन जिउँ दमकै घन मै कर मै करवारहि तिउ चमकावै ॥ ११६५ ॥ (मू०ग्रं०४१०) ॥ सवैया ॥ मार के बीर घने रन मै बहु कोप कै दाँतन ओठ चबावै । आवत जो इह कै अरि ऊपरि बानन सिउ तिह काटि गिरावै । आइ परे रिप के दल मै दल कै मल कै बहुरो सिर धावै । जुद्ध करै न डरै हरि सिउ अरि के रथ को बल ओर चलावै ॥ ११६६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब रिप रन कीनो घनो बढ्यो क्रिशन तब तेहु । जादव प्रति हरि यों कह्यो दुबिधा करि हनि लेहु ॥ ११६७ ॥ ॥ सवैया ॥ सातक काटि दयो तिन को रथ कान्ह तबै रन काटिकै डार्यो । सूत को सीस कट्यो मुसली बरमाक्रित अंग प्रतंग प्रहार्यो । बान अक्रूर हन्यो उर मै तिह जोर लग्यो नही नैक सँभार्यो । मूरछ ह्वै रनभूम गिर्यो अस लै करि ऊधव सीस उतार्यो ॥ ११६८ ॥ ॥ दोहरा ॥ अणगसिंघ

॥ सवैया ॥ अब वह स्वयं ही रथ हाँक रहा है और बाण-वर्षा कर रहा है। स्वयं शत्रु के वार से बच रहा है और स्वयं शत्रु पर वार कर रहा है। किसी वीर का उसने धनुष-बाण काट डाला और किसी का रथ काटकर गिरा दिया। उसके हाथ में तलवार ऐसे चमक रही है मानो बादलों में बिजली चमक रही हो ॥ ११६५ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा अनगसिंह कई वीरों को रण-भूमि में मारकर दाँतों से ओंठ काट रहा है। जो इस पर टूट पड़ता है उसे यह बाणों से काट गिराता है। शत्रु-सेना पर वह टूट पड़ा है और शत्-दल का खंडन कर रहा है। वह युद्ध करते हुए श्रीकृष्ण से घबरा नहीं रः है और प्रयत्नपूर्वक रथ को बलराम की ओर चला रहा है ॥ ११६६ । ॥ दोहा ॥ जब शत्रु ने घनघोर युद्ध किया तो कृष्ण उसकी तरफ़ बढ़े और यादवों से कहने लगे कि इसे दोनों ओर से युद्ध करके मार डालो ॥ ११६७ ॥ ॥ सवैया ॥ सात्यकि ने उसका रथ काट डाला, और कृष्ण ने भी मार-काट मचा दी। हलधर ने उसके सारथि का सिर काट डाला और कवच से सुरक्षित अंगों पर प्रहार किया। अक्रूर का बाण उसे इतनी ज़ोर से लगा कि वह सँभाल नही पाया वह मूर्च्छित होकर युद्धभूमि में गिर पड़ा और उद्धव ने अपनी कृपाण से उसका सिर उतार लिया ११६८ दोहा जब

जब मारियो खट सुभटन मिलि ठउर। जरासिंध की सैन ते चले चत्र न्रिप अउर ॥ ११६९ ॥ ॥ सवैया ॥ अमतेस बली अचलेस महाँ अघनेसहि लै असुरेस सिधाए। बान कमान क्रिपान बडे बरछे परसे सु गदा गहि आए। रोसकै बीर निशंक भिरे भट के नटि के भट ओघ पराए। आइ घिर्‌यो ब्रिजभूखन कउ मध दूखन कउ बहु बान लगाए ॥ ११७० ॥ ॥ सवैया ॥ घाइन कउ सहि कै ब्रिजराज सरासन लै सर लेत भयो। असुरेसहि को सिर काटि दयो अमतेस की देह बिदार छयो। अनघेस को काटि दुखंड कियो त्रित ह्वै रथ ते गिर भूमि पयो। अचलेस जु बाननि को सहिकै फिर ठाढ रह्‌यो नही भाज गयो ॥ ११७१ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप कै बोलत यों हरि को रनसिंघ ते आदि तै बीर खपाए। तो ते कहा गजसिंघ हन्यो अणगेस हूँ ते छल साथ गिराए। जानत हों अमितेस बली धनसिंघ सँघार कै बीर कहाए। सो तब लउ गज गाजत है जब लउ बन मै म्रिगराज न आए ॥११७२॥ ॥ सवैया ॥ यों कहिकै बतिया हरि सो अभिमान भरे धन बान सँभार्‌यो। कान प्रमान सरासन तान महाँ सर तीछन स्याम को मार्‌यो।

छ. वीरों ने मिलकर अनगसिंह को मार डाला तो जरासंध की सेना से चार अन्य राजा आगे बढ़े ॥ ११६९ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा अमितेश, अचलेश, अघनेश और असुरेशसिंह चल पड़े। उन्होंने बाण, कृपाण, बरछे, गदा और फरसे पकड़ रखे थे। वे अभय एवं क्रोधित होकर सबको पराया समझते हुए भिड़ पड़े और उन्होंने कृष्ण को घेरकर उस पर बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी ॥ ११७० ॥ ॥ सवैया ॥ अपने घावों को सहन करते हुए श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण सँभाला और असुरेश का सिर काटकर अमितेश का शरीर छेद डाला। अघनेश के दो टुकड़े कर दिए। वह रथ से भूमि पर गिर पड़ा, परन्तु अचलेश बाण-वर्षा को सहकर भी खड़ा रहा और नहीं भागा ॥ ११७१॥ ॥ सवैया ॥ वह क्रोधित होकर श्रीकृष्ण से बोला कि तुमने हमारे बहुत से वीरों को मार डाला है। तुमने गजसिंह को मारा और अनगसिंह को भी छल से मार डाला। तुम जानते हो कि अमितेशसिंह भी बली था और धनसिंह आदि को मारकर तुम अपने-आपको वीर कहला रहे हो; परन्तु हाथी जंगल में तभी तक गरजता है जब तक शेर नहीं आता ॥ ११७२ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर उसने अभिमान से धनुष-बाण सँभाला और कान तक खींचकर तीक्ष्ण बाण कृष्ण को मारा श्रीकृष्ण ने आता हुआ बाण नहीं

लाग गयो हरि के उर मै हरिजू नहि आवत नैन निहार्‌यो। मूरछत ह्वै रथ माझ गिरे तजिकै रन लै प्रभ सूत पधार्‌यो ॥ ११७३ ॥ एक महूरत बीत गयो (मू०ग्रं०४११)। तब स्यंदन पै जदुबीर सँभार्‌यो। तउ अचलेस गुमान भरे अति ही हसकै इह भाँति पुकार्‌यो। जात कहा हम ते भज कै करि लै कै गदा कटु बोल उचार्‌यो। मानहु केहरि जात हुतो नर लै लकटी करि मै ललकार्‌यो ॥ ११७४ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै बतिआ अरि की रथु हाकि फिर्‌यो हरि कोप भयो। पट पीत महा फहर्‌यो धुस जिउँ घन मै चपला सम रूप लयो। बरख्यो सर बूँदन जिउँ घनस्याम तबै रिप को दल मार दयो। रिस कै अचलेस सु बान कमान गहे हरि सामुहि आइ खयो ॥ ११७५ ॥ ॥ दोहरा ॥ सिंघनाद तब तिन कियो क्रिशन चितै करि नैन। बिकट निकट रन सुभट लखि हरि प्रति बोल्यो बैन ॥ ११७६ ॥ ॥ अचलसिंघ बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जीवत जे जग मै रहि है अति जुद्ध कथा हमरी सुनि लैहै। ताँ छबि की कविता करिकै कबि राम नरेशन जाइ रिझैहै। जो बल पै कहिहै कथ पंडित रीझ घनो तिहको धन दैहै। हे हरिजू इह आहव के जुग चारनि मै गन गंध्रब

देखा, इसलिए वह उनकी छाती में आ लगा। वे मूर्च्छित होकर रथ में गिर पड़े और उनका सारथी उन्हें लेकर चल पड़ा ॥ ११७३ ॥ एक मुहूर्त समय जब बीत गया तब रथ में श्रीकृष्ण सँभले। अब अचलेश ने गर्व से हँसते हुए यह कहा कि अब मुझसे भागकर कहाँ जाओगे। गदा हाथ में लेते हुए उसने इन कटु वचनों का ऐसे उच्चारण किया मानो जाते हुए शेर को किसी मनुष्य ने हाथ में लाठी लेकर ललकारा हो ॥ ११७४ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु की यह बातें सुनकर श्रीकृष्ण ने क्रोधित होकर अपना रथ आगे बढ़ाया। उनका पीताम्बर बादल में बिजली के समान लहराने लगा। बाण-वर्षा करके उन्होंने शत्रु-दल को मार गिराया और अब क्रोधित होकर अचलेश धनुष-बाण हाथ में लेकर श्रीकृष्ण के सामने आ खड़ा हुआ ॥ ११७५ ॥ ॥ दोहा ॥ कृष्ण को देखकर उसने सिंहनाद किया और अपने चारों तरफ़ शूरवीरों को देखकर उसने कृष्ण से कहा ॥ ११७६ ॥ ॥ अचलसिंह उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जग मे जो जीवित बचेंगे, वे हमारी युद्धकथा को सुनेंगे और कविगण उस कविता से राजाओं को प्रसन्न करेंगे। यदि पंडित इसकी कथा कहेंगे तो उनको भी अत्यधिक धन की प्राप्ति होगी और हे कृष्ण! हमारे इस युद्ध का गायन गण

गंहै ॥११७७॥ ॥ सवैया ॥ कोप कै उत्तर देत भयो अरि की बतिया सुनि स्याम सबै । चिरिया बन मै चुहकै तब लउ अति कोप न आवत बाज जबै । गरबात है मूढ घनो रन मै कटिहौ तुहि सीस लखैगो तबै । तिह ते तजि शंक निशंक लरो बलबीर कह्यो कहाँ ढील अबै ॥ ११७८ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै कटि बैनन को अचलेस बली मन कोप जग्यो । कस बोलत हो कछु लाज गहो रन ठाढे रहो सुनिहो न भग्यो । यह उत्तर दै हरि को जबही तबही निज आयुध लै उमग्यो । मन मै हरख्यो धन को करख्यो बरख्यो सर स्री हरि कउ न लग्यो ॥ ११७९ ॥ ॥ सवैया ॥ जो अचलेस जू बान चलावत सो हरि आवत काटि गिरावै । जानै न देह लग्यो अर की सर फेर रिसा करि अउर चलावै । सो हरि आवत बीच कटै अपनो उह के उर बीच लगावै । देख सतक्रित कउतक को कबि राम कहै प्रभु को जसु गावै ॥११८०॥ ॥ सवैया ॥ दारक को कह्यो तेजकै स्यंदन स्री हरिजू कर खग्ग सँभार्यो । दामन जिउँ घन मै लसकै रिसकै बरिकै अरि ऊपर मार्यो । दुज्जन

और गंधर्व भी करेंगे ॥ ११७७ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर श्रीकृष्ण ने शत्रु की सभी बातें सुनी और कहा कि चिड़िया वन में तभी तक चहचहाती है जब तक क्रोधित होकर वहाँ बाज़ नहीं आता । हे मूर्ख ! तुम बहुत गर्व कर रहे हो, तुम तभी जानोगे जब मै तुम्हारा सिर काट डालूँगा । इसलिए अब सब शंकाओं को त्यागकर लड़ो और ज़रा-सी भी ढील मत दो ॥ ११७८ ॥ ॥ सवैया ॥ इन बातों को सुनकर बली अचलसिंह के मन में क्रोध जगा और वह गरजकर कहने लगा कि हे कृष्ण ! तुम कुछ शर्म करो और खड़े रहो, भागो मत । यह कहकर उसने अपना शस्त्र हाथ में लिया और आगे की तरफ़ दौड़ा । उसने प्रसन्न होकर धनुष को खींचा और बाण चलाया । परन्तु वह बाण श्रीकृष्ण को नहीं लगा ॥ ११७९ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भी बाण अचलसिंह चलाता उसे श्रीकृष्ण जी काट गिराते । वह भी जब जानता कि वह बाण श्रीकृष्ण को नहीं लगा तो क्रोधित होकर और बाण चलाता । श्रीकृष्ण उसके बाण को रास्ते में ही काट डालते और अपना बाण उसकी छाती में मार देते । इस लीला को देखकर कवि राम प्रभु का गुणानुवाद कर रहा है ॥ ११८० ॥ ॥ सवैया ॥ दारुक नामक सारथी को रथ को तेज करने के लिए कहकर श्रीकृष्ण ने अपने हाथ में खड्ग सम्भाला । बिजली के समान चमकता हुआ खड्ग क्रोधित होकर उन्होंने शत्रु के सिर पर चलाया

को सिरु काट दयो बिन (मू०ग्रं०४१२) रुंड भयो जसु ताहि उचार्‌यो। जिउं सरदूल महा बन मै हुत कै बल सो मनो केहरि डार्‌यो ॥ ११८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ अडरसिंघ अरु अजब सिंघ अघटसिंघ सिंघ बीर। अमरसिंघ अरु अटलसिंघ महारथी रनधीर ॥ ११८२ ॥ अरजनसिंघ अरु अमिटसिंघ क्रिशन निहार्‌यो नैन। आठ भूप मिलि परसपर बोलत ऐसे बैन ॥ ११८३ ॥ ॥ सवैया ॥ देखत हो न्रिप स्याम बली तिहके हम ऊपरि धाइ परै। अपुने प्रभ को मिलि काजु करै मुसली हरि ते नही नैकु डरै। धनु बान क्रिपान गदा परसे बरछे गहि तीछन जाइ अरै। सभ ही सु कही इह ई प्रन है जदुबीर हनै मिलि जुद्धु करै ॥ ११८४ ॥ आयुध लै सिगरे कर मै सु मुकंद के ऊपरि दउर परे। सु धवाइकै स्यंदन आनि अरे संगि चार अछूहन बीर बरे। कबि स्याम कहै अति आहव मै अघ खंडनि ते नही नैकु डरे। मनो गाज प्रलै घन धाइ चल्यो तिम दउरे सु मार ही मार करे ॥ ११८५ ॥ ॥ सवैया ॥ धनसिंघ अछूहन दो संगि लै अनगेस अछूहन तीन सु ल्याए। सो तुम स्याम सुनो छल सो रन मै दसहूं न्रिप मार गिराए। चार अछूहन लै हमहूं दल तै पर आए ह्वै कोप

और उस दुर्जन का सिर काटकर धड़ को मुण्ड-विहीन कर दिया। यह ऐसे लगा जैसे बबर शेर ने छोटे शेर को मारा हो ॥११८१॥ ॥ दोहा ॥ अडर सिंह, अजबसिंह, अघटसिंह, वीरसिंह, अमरसिंह, अटलसिंह आदि रणधीर महारथी वहाँ थे ॥ ११८२ ॥ अर्जुनसिंह और अमिटसिंह को श्रीकृष्ण ने देखा और पाया कि आठ राजा आपस में मिलकर बातचीत कर रहे हैं ॥ ११८३ ॥ ॥ सवैया ॥ वे राजा कह रहे हैं कि हे राजाओ ! वही महाबली कृष्ण है, आओ हम उस पर टूट पड़ें तथा कृष्ण और हलधर से तनिक भी न डरते हुए अपने स्वामी का काम करें। वे धनुष-बाण, कृपाण, गदा, फरसा, बरछी आदि पकड़कर जाकर अड़ गये और सबसे कहने लगे कि आओ मिलकर युद्ध करें और श्रीकृष्ण को मार डालें ॥ ११८४ ॥ अपने शस्त्र हाथ में लेकर वे श्रीकृष्ण पर टूट पड़े। वे रथों को चलाकर सामने चार अक्षौहिणी सेना को लेकर आ डटे। कवि श्याम का कथन है कि वे इस घनघोर युद्ध में जरा भी नहीं डरे और मार-मार की गर्जना करते हुए ऐसे आगे बढ़े मानो प्रलयकाल में बादल गरज रहे हों ॥ ११८५ ॥ ॥ सवैया ॥ धनसिंह दो अक्षौहिणी तथा अनगेशसिंह तीन अक्षौहिणी सेना लेकर आये और कहने लगे कि हे कृष्ण !

बढाए। ता ते कह्यो सुनि लै हमरो ग्रहि को तजि आहव जाहु पराए ॥११८६॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ यौं सुनिकै बतिया तिह की हरि कोप कह्यो हम जुद्ध करैंगे। बान कमान गदा गहिकै दोऊ भ्रात सभै अर सैन हरैंगे। सूर शिवादिक ते न भजै हनिहै तुम कउ नहि जूझ परैंगे। मेरु हलै सुक है निधि बार तऊ रन की छित ते न टरैंगे ॥ ११८७ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ कहिकै बतिया तिन सो कस बान अरीन की ओर चलायो। लाग गयो अजबेस के बच्छ सु लागत ही कछु खेद न पायो। फेरि हठी हठिकै हरि सिउ इम बैन महाँ करि कोप सुनायो। का कहिए तिह पंडित को जिह ते धन की बिधि तूँ पड़ि आयो ॥ ११८८ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप भरी जदुबी प्रतना इत ते उमडी उत ते वह आई। मार ही मार किए मुख ते कबि स्याम कहै जिय रोस बढाई। बान क्रिपान गदा के लगे बहु जूझि (मू०ग्रं०४१२) परे करि दुंद लराई। रीझ रहे सुर पेख सभै पुहपावल की बरखा बरखाई ॥ ११८९ ॥ ॥ सवैया ॥ इत ते रन मै रिस बीर लरै नभि मै ब्रहमादि

तुमने छल से दसों राजाओं को मार गिराया है। हम क्रोधित होकर चार अक्षौहिणी सेना लेकर आये हैं, इसलिए तुम युद्ध छोड़कर घर को भाग जाओ ॥ ११८६ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर क्रोधित होकर कृष्ण ने उन्हें युद्ध के लिए ललकारा और कहा कि हम दोनों भाई बाण, कमान और गदा को पकड़कर सारी सेना को नष्ट कर देंगे। सूर्य और शिव आदि से भी हम नहीं डरे हैं, इसलिए तुम सबको भी मार डालेंगे अथवा स्वयं जूझ जायेंगे। सुमेरु पर्वत हिल जाय और बेशक समुद्र का जल सूख जाय परन्तु हम युद्धस्थल से नहीं हटेंगे ॥ ११८७ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर उन्होंने एक बाण कसकर शत्रुओं की ओर चलाया जो कि अजबसिंह के वक्ष पर लगा परन्तु यह बाण उसका कुछ बिगाड़ नहीं सका। उस महाबली ने क्रोधित होकर श्रीकृष्ण से कहा कि हे कृष्ण ! वह कौन ऐसा पंडित है जिससे तुमने धनुष-विद्या सीखी है ॥ ११८८ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोध से भरी हुई यादव सेना उमड़कर वहाँ आई और मुख से मारो-मारो की आवाज़ निकालने लगी। बहुत सी सेना उस द्वन्द्व में बाण, कृपाण और गदा के वारों से धराशायी हो गई। सुरगण यह देखकर प्रसन्न होने लगे और पुष्प-वर्षा करने लगे ॥ ११८९ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर क्रोधित होकर वीर लड़ रहे हैं, उधर आकाश में ब्रह्मा आदि देवता देखते हुए आपस में यह कह रहे हैं कि पहले

सनादि निहारै। आगे न ऐसो भयो कबहूँ रन आपसि मै इम बोलि उचारै। जूझि परे तिह स्रउन ढरे भर खप्पर जुग्गन पी किलकारै। मुंडन माल अनेक गुही शिव के गण धंनु ही धंनि पुकारै ॥११९०॥ ॥ सवैया ॥ आयुध धार अयोधन मै इक कोप भरे भट धाइ अरै। इक मल्ल की दाइन जुद्ध करै इक देख महाँ रण दउर परै। इक राम ही राम कहे मुखि ते इक मार ही मार इहै उचरै। इक जूझि परे इक धाइ परे इक स्याम कहा इह भाँत ररै ॥ ११९१ ॥ ॥ सवैया ॥ मुकिया उलरै इक आपस मै गहि केसनि केसनि एक अरे हैं। एक चले रन ते भजिकै इक आहव को पग आगे करे हैं। एक लरे गहि फेटनि फेट कटारन लौं दोऊ जूझ मरे हैं। सोऊ लरे कबि स्याम ररे अपुने कुल की जोऊ लाज भरे हैं ॥११९२॥ ॥ सवैया ॥ आठो ही भूप अयोधन मै सभ लै प्रतिना हरि ऊपरि आए। जुद्ध करो न डरो हम ते कबि स्याम कहै इह बैन सुनाए। ऐंचै कसीसनि ईसनि चाँपनि लै सर स्री हरि ओर चलाए। स्याम जू पान सरासनि लै सर सो सर आवत काटि गिराए ॥११९३॥

कभी ऐसा भीषण युद्ध नहीं हुआ। योद्धा जूझ रहे हैं और उनके रक्त को खप्परों में भरकर पीती हुई योगिनियाँ किलकारियाँ भर रही हैं। शिव के गण धन्य-धन्य कहते हुए मुंडों की अनेक मालाएँ बना रहे हैं॥ ११९० ॥ ॥ सवैया ॥ शस्त्रों को धारण करते हुए कोई वीर युद्धस्थल में दौड़कर सामने जा अड़ रहा है। कोई मल्ल की तरह युद्ध कर रहा है और कोई भीषण युद्ध को देखकर दौड़ रहा है। कोई राम ही राम का उच्चारण कर रहा है और कोई मारो-मारो चिल्ला रहा है। कोई मृत्यु को प्राप्त कर रहा है और कोई घायल होकर तड़प रहा है॥ ११९१ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई आपस में मुट्ठी तानकर तो कोई एक-दूसरे के केश पकड़कर द्वन्द्वयुद्ध कर रहा है। कोई रण से भाग चला है और कोई युद्धस्थल में आगे बढ़ रहा है। कोई कमर-बन्दों से लड़ रहा है और कोई कटार के वार से जूझ रहा है। कवि श्याम का कथन है कि वे ही लोग लड़ रहे हैं जिन्हें अपने कुल की मान-मर्यादा का ध्यान है॥ ११९२ ॥ ॥ सवैया ॥ आठों ही राजा युद्धस्थल में सेना लेकर श्रीकृष्ण पर टूट पड़े और कहने लगे कि हे कृष्ण ! तुम अभय होकर हमसे युद्ध करो। उन्होंने अपने धनुषों को खींचते हुए तीर श्रीकृष्ण की ओर चलाये और श्रीकृष्ण ने अपने हाथों में धनुष लेकर उनके बाणों को काट गिराया॥ ११९३ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु-सेना ने कुपित होकर श्रीकृष्ण को

।। सवैया ।। तउ मिलिकै धुजनी अरि की जदुबीर चहूँ दिस ते रिसि घेर्‌यो । आपसि मै मिलि कै भट धीर हन्यो बलबीर इहै पुनि टेर्‌यो । स्री धनसिंघ बली अचलेस कउ अउर नरेशहि याही निबेर्‌यो । इउ कहिकै सर मारत भ्यो गज पुंज मनो करि केहर छेर्‌यो ।। ११६४ ।। ।। सवैया ।। घेरि लयो हरि कौ जबही हरिजू तब ही सभ शस्त्र सँभारे । कोप अयोधन मै फिरकै रिस साथ घने अरि बीर सँघारे । एकन के सिर काटि दए इक जीवत ही गहि केस पछारे । एक लरे कटि भूमि परे इक देख डरे मरगे बिन मारे ।।११६५।। ।। सवैया ।। आठो ई भूप कह्यो मुख ते भटि भाजत हो कह जुद्ध करो । जब लउ रन मै हम जीवत है तब लउ हरि ते तुमहू न डरो । हमरो इह आइस है तुमको जदुबीर के सामुहि जाइ (मू०ग्रं०४१४) लरो । कोऊ आहव ते नही नैकु टरो इक जूझि परो इक धाइ अरो ।। ११६६ ।। ।। सवैया ।। फेरि फिरे भट आयुध लै रन मै जदुबीर कउ घेरि लियो । न टरे अति रोसि भरे जिय मै अति आहव चित्र बचित्र कियो । अस लै बरबीर गदा गहिकै रिप को दल मारि बिदारि दियो । इक बीरन के कर सीस

चारों तरफ़ से घेर लिया और कहने लगे कि सभी शूरवीर मिलकर महाबली कृष्ण को मार डालो । धनसिंह और अचलेशसिंह तथा अन्य राजाओं को इसी ने मारा है । यह कहकर उन्होंने श्रीकृष्ण को ऐसे घेर लिया जैसे बहुत से हाथी शेर को घेरे खड़े हों ।। ११६४ ।। ।। सवैया ।। जब श्रीकृष्ण को घेर लिया तब श्रीकृष्ण ने कुपित होकर अपने शस्त्र सँभाले । उन्होंने क्रोधित होकर बहुत से शत्रुओं का युद्धभूमि में संहार किया । कइयों के सिर काट डाले और कइयों को केश पकड़कर पछाड़ दिया । कुछ तो कटकर भूमि पर गिर पड़े और कुछ यह सब देखकर बिना मारे ही मर गये ।। ११६५ ।। ।। सवैया ।। आठों ही राजाओं ने कहा कि हे शूरवीरो ! दौड़ो मत और युद्ध करो । जब तक हम जीवित हैं तब तक युद्ध में श्रीकृष्ण से मत डरो । हमारी यह आज्ञा है कि यादवराज कृष्ण के सामने जाकर लड़ो । कोई भी युद्ध से तनिक भी विचलित नहीं होगा । दौड़ो और जाकर जूझ जाओ ।। ११६६ ।। ।। सवैया ।। फिर शूरवीर शस्त्र लेकर युद्ध में भिड़ गए और उन्होंने श्रीकृष्ण को घेर लिया । वे एक क्षण के लिए भी पीछे नहीं हटे और उन्होंने क्रोधित होकर घनघोर युद्ध किया । हाथ में तलवार और गदा पकड़कर उन्होंने शत्रु-दल को खण्ड-खण्ड कर डाला । और कहीं वीरों के सिर काट लिये और कहीं

कटे भट एकन को दयो फार हियो ॥ ११९७ ॥ स्री जदुबीर सरासन लै बहु काटि रथी सिर भूम गिराए । आयुध लै अपने अपने इक कोप भरे हरि पै पुनि धाए । ते ब्रिजनाथ करंगहि खग्ग अभग्ग हने सु घने तह घाए । भाज गए हरि ते अरि यौ सो कोऊ नहि आहव मै ठहराए ॥११९८॥ ॥ दोहरा ॥ भूपन की भाजी चमू खाई हरि ते मारि । तबहि फिरै न्रिप जुद्ध को आयुध सकल सँभार ॥ ११९९ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप अयोधनु मै करि कै करि मै सभ भूपन शस्त्र सँभारे । आइकै सामुहि स्याम ही के बल कै निज आयुध कोस प्रहारे । कान्ह सँभार सरासन लै सर शत्रन काटि कै भू पर डारे । घाइ बचाइकै यौ तिनकै बहुरो अरि के सिर काट उतारे ॥ १२०० ॥ ॥ दोहरा ॥ अजबसिंघ को सिर कट्यो हरिजू शस्त्र सँभार । अडरसिंघ घाइल कर्यो अति रन भूम मझार ॥ १२०१ ॥ ॥ चौपई ॥ अडरसिंघ घाइल जब भयो । अति ही क्रोध जिय तिह ठयो । बहु तीछन बरछा कर लयो । हरि की ओर डार कै दयो ॥ १२०२ ॥ ॥ दोहरा ॥ बरछा आवत लखयो हरि धनख बान कर कीन । आवत सर सो काटि कै मारि बहे

वीरों के सीने फाड़ दिए ॥ ११९७ ॥ श्रीकृष्ण ने हाथ में धनुष लेकर बहुत से रथियों को काटकर भूमि पर गिरा दिया परन्तु अपने-अपने हाथों में शस्त्र लेकर शत्रु पुन: श्रीकृष्ण पर टूट पड़े । श्रीकृष्ण ने अपने खड्ग से उनको मार डाला और इस प्रकार जो श्रीकृष्ण से बच गये वे युद्धस्थल में ठहर न सके ॥ ११९८ ॥ ॥ दोहा ॥ राजाओं की सारी सेना श्रीकृष्ण से मार खाकर भाग खड़ी हुई । तब अपने शस्त्रों को सँभालते हुए राजागण युद्ध के लिए आगे बढ़े ॥ ११९९ ॥ ॥ सवैया ॥ युद्धस्थल में क्रोधित होकर राजाओं ने हाथों में शस्त्र सँभाले और कृष्ण के सामने आकर रोषपूर्वक प्रहार किए । कृष्ण अपने धनुष को सँभालते हुए शत्रुओं के बाण काटकर धरती पर गिरा दिए । अपना वार बचाते हुए श्रीकृष्ण ने बहुत से शत्रुओं के सिर काट डाले ॥ १२०० ॥ ॥ दोहा ॥ श्रीकृष्ण ने अपने शस्त्रों से अजबसिंह का सिर काट डाला और अडरसिंह को रणभूमि में घायल कर दिया ॥ १२०१ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब अडरसिंह घायल हो गया तो अत्यन्त क्रोधित हो उठा । उसने एक बरछा अपने हाथ में लिया और श्रीकृष्ण की तरफ़ चला दिया ॥ १२०२ ॥ ॥ दोहा ॥ बरछा आते हुए देखकर श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण अपने हाथ में लिया और उसे अपने तीर से काटकर उस शूरवीर को भी

भट लीन ॥ १२०३ ॥ अघड़सिघ लखि तिह दशा देत भयो नही पीठ । समुहे हरि के आइकै बोल्यो ह्वै करि ढीठ ॥ १२०४ ॥ ॥ चौपई ॥ हरि सनमुखि इह भाँति उचार्यो । अडरसिघ तुअ छल सो मार्यो । अजबसिघ करि कपट खपायो । यह सभ भेद ह्मो लखि पायो ॥१२०५॥ ॥ दोहरा ॥ अघड़सिघ अति निडर ह्वै बोल्यो हरि समुहाइ । बचन स्याम सो जो कहो सो कबि कहित सुनाइ ॥ १२०६ ॥ ॥ सवैया ॥ ढीठ ह्वै बोलत भ्यो रन मै हसिकै हरि सो बतिया सुनि लैहो । क्रुद्ध किए (मू०ग्रं०४१५) हम संगि निशंग कहा अति जुद्ध किए फल पैहो । ता ते लरो नही मो संगि आइकै हो लरका रन देखि परैहो । हो हठ के लरिहो मरिहो अपुने ग्रिह मारग जीत न जैहो ॥ १२०७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिउँ बोल्यो अति गरब सिउ इत हरि ऐंच कमान । सर मार्यो अरि मुखि बिखै पर्यो म्रितक धर आन ॥१२०८॥ ॥दोहरा॥ अरजनसिघ तब ढीठ ह्वै कही किशन सो बात । महाँबली हौ आज ही करिहो तेरो घात ॥ १२०९ ॥ सुनत बचन हरि खग्ग गहि अरि सिर झार्यो धाइ । गिर्यो मनो आँधी बहे बडो ब्रिछ मुरझाइ ॥ १२१० ॥ ॥ सवैया ॥ अरजनसिघ हन्यो असि सो

मार डाला ॥ १२०३ ॥ अघड़सिंह यह दुर्दशा देखकर भी भागा नहीं और श्रीकृष्ण के सम्मुख आकर निर्लज्जतापूर्वक बोला ॥१२०४॥ ॥ चौपाई ॥ उसने श्रीकृष्ण को कहा कि तुमने अडरसिंह को छलपूर्वक मार डाला। अजबसिंह को भी कपटपूर्वक मारा है और इस रहस्य को मैं अच्छी तरह जानता हूँ ॥ १२०५ ॥ ॥ दोहा ॥ अघड़सिंह अत्यन्त निडर होकर श्रीकृष्ण के सामने बोला। जो वचन उसने श्रीकृष्ण से कहे उन्हें अब कवि कहता है ॥ १२०६ ॥ ॥ सवैया ॥ निर्लज्जतापूर्वक वह श्रीकृष्ण से युद्धस्थल में बोला कि तुम हमारे साथ व्यर्थ ही क्रोधित हो और इस युद्ध का तुम्हें क्या फल मिलेगा। तुम अभी लड़के हो इसलिए मेरे साथ लड़ो मत और भाग जाओ। यदि हठपूर्वक लड़ोगे तो घर का रास्ता भी नहीं मिलेगा और मारे जाओगे ॥ १२०७ ॥ ॥ दोहा ॥ जैसे ही वह गर्वपूर्वक यह बोला तो श्रीकृष्ण ने धनुष खींचा और बाण उसके मुख में जा लगा। बाण लगते ही वह मृतक होकर धरती पर आ गिरा ॥ १२०८ ॥ ॥ दोहा ॥ तब ढीठ अर्जुनसिंह ने श्रीकृष्ण से कहा कि मैं महाबली हूँ और अभी तुमको मार गिराता हूँ ॥ १२०९ ॥ यह बात सुनते ही श्रीकृष्ण ने अपने खड्ग से उसके सिर पर वार किया और वह ऐसे गिर

अमरेस महीप हन्यो तबही । अटलेस पै कोप भयो लखिकै हरि आपने शस्त्र लए सभही । अति मार ही मार पुकार पर्‌यो हरि सामुहि आइ अर्‌यो जबही । कलधउत के भूखन अंग सजे जिहकी छबि सो सविता दबही ॥ १२११ ॥ ॥ सवैया ॥ जाम प्रमान कियो घमसान बडो बलवान न जाइ सँघार्‌यो । मेघ ज्यों गाज मुरार तबै असि लै करि मै अरि ऊपरि झार्‌यो । ह्वै छित भूम पर्‌यो तब ही जदुबीर जबै सिर काटि उतार्‌यो । धंनि ही धंनि कहै सभ देव बडो हरिजू भुअ भार निवार्‌यो ॥ १२१२ ॥ ॥ दोहरा ॥ अटलसिंघ जब मारियो बहु बीरन को राउ । अमिटसिंघ तब अमिट हुइ कीनो जुद्ध उपाउ ॥ १२१३ ॥ ॥ सवैया ॥ बोलत यों हठिकै हरि सो भट तउ लखिहो जब मोसो लरैगो । मोको कहा इन राजन ज्यों छल मूरत ह्वै छल साथ छरैगो । मो अति कोप भरो लखिकै रहिहो नहि आहव हूँ ते टरैगो । जउ कबहूँ भिरहो हम सो निसचै निज देह को त्यागु करैगो ॥ १२१४ ॥ ॥ सवैया ॥ काहे कउ कान्ह अयोधन मै हित औरन के रिसकै

पड़ा मानो आँधी में बड़ा वृक्ष गिर पड़ा हो ॥ १२१० ॥ ॥ सवैया ॥ खड्ग से अर्जुनसिंह को और अमरेशसिंह नामक राजा को मार डाला । तब अटलेश पर क्रोधित होकर श्रीकृष्ण ने अपने शस्त्र सँभाले । वह भी श्रीकृष्ण के सामने आते हुए मारो-मारो पुकारने लगा । उसके स्वर्ण-आभूषण वाले अंगों की शोभा के समक्ष सूर्य भी फीका दिखाई पड़ रहा था ॥ १२११ ॥ ॥ सवैया ॥ उसने एक प्रहर तक घमासान युद्ध किया परन्तु उसका संहार न हो सका । तब श्रीकृष्ण ने बादल के समान गरजकर अपनी कृपाण से शत्रु पर वार किया और श्रीकृष्ण ने जब उसका सिर काट डाला तो वह धरती पर मृत होकर जा गिरा । यह देखकर देवता धन्य-धन्य पुकारते हुए कहने लगे कि हे श्रीकृष्ण ! आपने धरती का बहुत बड़ा बोझ हलका कर दिया ॥ १२१२ ॥ ॥ दोहा ॥ जब अटलसिंह, जो कि बहुत से वीरों का राजा था, मारा गया तो अमिटसिंह ने युद्ध का उपक्रम किया ॥ १२१३ ॥ ॥ सवैया ॥ वह श्रीकृष्ण से कहने लगा, मैं तो तभी तुम्हें जानूँगा जब तुम मुझसे युद्ध करोगे । क्या मुझे भी तुम इन राजाओं की तरह अपने कपट से छलोगे । मुझे क्रोध से भरा हुआ देखकर तुम अवश्य युद्ध से भाग जाओगे और यदि कहीं तुम मुझसे भिड़ गये तो निश्चित रूप से तुम अपने शरीर को छोड़ जाओगे अर्थात मारे जाओगे १२१४ सवैया हे कृष्ण ! क्यों

रन पारो । काहे कउ घाइ सहो तन मै पुनि का के कहे अरि भूपनि मारो । जीवत हो तब लउ जग मैं जब लउ मुहि संगि भिर्‌यो न बिचारो । सुंदर जानकै छाडत हो तजिकै रन स्याम जू धाम सिधारो ॥ १२१५ ॥ ॥ सवैया ॥ फेर अयोधन पै रिसि कै अमिटेस बली इह भाँति उचारो । बैस किशोर मनो हरि मूरत लैहो कहा लखि जुद्ध हमारो । (मू०ग्रं०४१६) हउ तुम सिउ हरि साचु कह्यो तुम जउ जिय मै कछु अउर बिचारो । कै हम संगि लरो तजिकै डर कै अपने सभ आयुध डारो ॥ १२१६ ॥ ॥ स्वैया ॥ आजु अयोधन मै तुमको हनिहो तुमरी सभ ही प्रतना को । जउ रे कोऊ तुम मै भट है बहु आवत है बिधि आहव जा को । सो हमरे संग आइ भिरै न लरै परमेशर की सहु ता को । जो टरिहै इह आहव ते सोई सिंघ नही भट स्यार कहा को ॥१२१७॥ ॥ दोहरा ॥ अमिट-सिंघ के बचन सुनि हरिजू क्रोध बढाइ । शस्त्र सभै करि मै लए सनमुखि पहुच्यो धाइ ॥ १२१८ ॥ ॥ स्वैया ॥ आवत स्याम को पेख बली अपने मन मै अति कोप बढायो । चारोई घोरनि घाइल कै सर तीछन दारक के उर लायो । दूसरे तीर

दूसरों पर क्रोधित होकर युद्ध कर रहे हो ? क्यों अपने शरीर पर घाव सह रहे हो और किसके कहने पर तुम इन राजाओं को मार रहे हो। तुम तभी तक जीवित हो जब तक तुम मुझसे नहीं भिड़े हो। मैं तुम्हें सुन्दर समझकर छोड़ दे रहा हूँ। इसलिए तुम युद्ध छोड़कर अपने घर चले जाओ ॥ १२१५ ॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध में पुनः अमिटसिंह यह बोला कि तुम्हारी उम्र अभी बहुत कम है और तुम हमारा युद्ध देखकर क्या करोगे। हे कृष्ण ! मैं तुमसे सच कह रहा हूँ परन्तु तुम मन में कुछ और सोच रहे हो। अब या तो तुम अभय होकर हमसे लड़ो अथवा अपने सभी शस्त्र फेंक दो ॥१२१६॥ ॥ सवैया ॥ आज युद्धस्थल में तुमको और तुम्हारी सब सेना को मार डालूँगा। यदि तुम लोगों में से कोई शूरवीर है और किसी को युद्ध की विधि पता है तो वह हमारे संग आकर लड़े। मुझे परमात्मा की सौगंध है कि मैं तुमसे नहीं लड़ूँगा। जो इस युद्ध से हटेगा वह सिंह नहीं गीदड़ कहलाएगा ॥१२१७॥ ॥ दोहा ॥ अमिटसिंह की बातों को सुनकर क्रोधित होकर श्रीकृष्ण सभी शस्त्रों को हाथ में लेकर अमिटसिंह के सामने जा पहुँचे ॥ १२१८ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण को आता हुआ देखकर उस महाबली का क्रोध बढ़ उठा। उसने श्रीकृष्ण के चारों घोड़ों को घायल कर दिया और तीक्ष्ण बाण दारुक के सीने में मारा। दूसरा

सो कान्ह सरीर सु कोप हन्यो जोऊ ठौर तकायो । स्याम कहै अमिटेस मनो जदबीर की देह को लच्छ बनायो । १२१९ ।। बान चलाइ घने हरि को इक लै सर तीछन और चलायो । लागत स्याम गिर्यो रथ मै रण छाडिकै दारक सूत परायो । देखकै भूप भज्यो बलबीर निहार चमू तिह ऊपर धायो । मानहु हेरि बडे सर को गजराज कवी गन रोंदन आयो ।।१२२०।। ।। स्वैया ।। आवत देख हली अरि को सु धवाइकै स्यंदन सामुहि आयो । तान लियो धनु को करि मै सर को धर कै अर ओर चलायो । सो अमिटेस जू नैन निहार सु आवत बान सु काटि गिरायो । आइ भिर्यो बल सिउ तब ही अपने जिय मै अति कोप बढायो ।। १२२१ ।। ।। स्वैया ।। काटि धुजा रथु काटि दयो अस चाप को काटि जुदा करि डार्यो । मूसल अउ हल काट दयो बिन आयुध ह्वै बलदेव पधार्यो । जात कहा मुसली भजिकै कबि राम कहै इह भाँति उचार्यो । यों कहि कै अस को गहिकै लहिकै दल जादव को ललकार्यो ।। १२२२ ।। ।। स्वैया ।। जो इह सामुहि आइ भिरै भट ताही सँघारकै भूमि गिरावै । कान प्रमान लउ तान कमान घने सर शत्रन के तन

तीर उसने श्रीकृष्ण पर सामने देखकर चलाया और कवि का कथन है कि अमिटसिंह ने श्रीकृष्ण को अपना निशाना बनाया ।। १२१९ ।। कृष्ण की ओर बाण-वर्षा करते हुए एक तीक्ष्ण बाण उसने चलाया जिसके लगते ही श्रीकृष्ण रथ में गिर पड़े और दारुक सारथि उन्हें ले भागा। श्रीकृष्ण को जाते देखकर राजा उनकी सेना पर टूट पड़ा और ऐसे लग रहा था मानो किसी बड़े तालाब को देखकर गजराज उसे रौंदने के लिए बढ़ रहा हो ।। १२२० ।। ।। सवैया ।। बलराम ने जब शत्रु को आते देखा तो वह घोड़ों को हँकवाकर सामने आ गए और धनुष तानकर उसने शत्रु की ओर बाण चलाए। बलराम के बाणों को अमिटसिंह ने काट गिराया और अत्यन्त क्रोधित होकर बलराम से आ भिड़ा ।। १२२१ ।। ।। सवैया ।। बलराम की ध्वजा, रथ, कृपाण, धनुष आदि सब काटकर खंड-खंड कर दिया। मुगदर और हल सभी काट दिए और शस्त्र-विहीन होकर बलराम चल पड़े। यह देखकर अमिटसिंह ने कहा कि हे बलराम! अब भागकर कहाँ जाते हो। यह कहकर हाथ में तलवार पकड़कर अमिटसिंह ने यादव सेना को ललकारा ।। १२२२ ।। ।। सवैया ।। जो वीर भी इसके सामने आता, अमिट सिंह उसे मार गिराता। कान तक धनुष को खींचता हुआ वह शत्रुओं पर

लावै। सोऊ बचे तिह ते बल बीर जोऊ भजि आपने प्रान बचावै। अउरन की सु कहा गनती जु बडे भट जीवत जान न पावै ॥१२२३॥ ॥ स्वैया ॥ मूसल अउर लए मुसली (मू०ग्रं०४१७) चड़ि स्यंदन पै बहुरो फिर धायो। आवत ही बल कै न्रिप सो चतुरंग प्रकार को जुधु मचायो। अउर जिते भट ठाढे हुते रिसि कै मुखि ते इह भाँत सुनायो। जान न देहु अरे अरि को सुनिकै हरिके दल कोपु बढायो ॥ १२२४ ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसे हलायुध कोप कह्यो तब जादव बीर सभै मिलि धाए। जो इह सामुहि आइ अरे ग्रहि को तेऊ जीवत जान न पाए। अउर जिते तह ठाढे हुते अस लै बरछे परसे गहि आए। जोरि भिरे जोऊ लाज भरे अरि को बर कै तिन घाइ लगाए ॥ १२२५ ॥ ॥ दोहरा ॥ अमिटसिंघ अति कोप ह्वै अमित चलाए बान। हरि सैना तम जिउँ भजी शरमानो करि भान ॥ १२२६ ॥ ॥ सवैया ॥ जात भजे जदुबी प्रतिना रन मै मुसली इह भाँत पचारे। छत्रनि के कुल मै उपजे किह भाँति परावत हो बलु हारे। आयुध छाडत हो कर ते डरु मान घनो बिनही अरि मारे। त्रास करो न कछू रन मै जब लउ तन मै थिरु प्रान हमारे ॥ १२२७ ॥ ॥ दोहरा ॥ कोप

बाण-वर्षा कर रहा था। उससे वही वीर बचता था जो भागकर प्राण बचा लेता था। अन्यों की वहाँ क्या गिनती थी! बड़े-बड़े शूरवीर वहाँ से जीवित नहीं जा पा रहे थे ॥ १२२३ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम पुनः दूसरा मुगदर लेकर रथ पर चढ़कर आए और आते ही उन्होंने बलपूर्वक राजा से चार प्रकार का युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। बाक़ी सब शूरवीरों को भी उन्होंने क्रोधित होकर कहा कि इसे जीवित मत जाने दो। यह सुनकर श्रीकृष्ण के दल में भी क्रोध जाग्रत् हो उठा ॥ १२२४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब बलराम ने इस भाँति क्रोध किया तब सभी यादव वीर मिलकर टूट पड़े। अब जो इनके सामने आया जीवित न बचकर जा सका। जितने वहाँ खड़े थे सभी फरसे, बरछे लेकर चल पड़े। अपनी मान-मर्यादा का ध्यान कर बलपूर्वक उन्होंने शत्रु पर वार किए ॥ १२२५ ॥ ॥ दोहा ॥ अमिटसिंह ने जब क्रोधित होकर अनंत बाण चलाए तो शत्रु-सेना ऐसे भाग खड़ी हुई जैसे सूर्य से घबराकर अंधकार भाग खड़ा होता है ॥१२२६॥ ॥ सवैया ॥ भागती हुई यादव सेना को बलराम ने कहा कि क्षत्रियों के कुल में पैदा हुए वीरो! क्यों भागे चले जा रहे हो बिना शत्रु को मारे ही हाथों से हथियार छोड़

अयोधन मै हली सुभटनि कह्यो पचार। अमिटसिंघ को घेरि कै कह्यो लेहु तुम मार ॥ १२२८ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ आइस पाइ तबै मुसली चहूँ ओर चमूं ललकार परी। अति कोप भरी अपुने मन मै अमिटेस के सामुहि आइ अरी। बहु जुद्ध अयोधन बीच भयो कबि स्याम कहै नही नैकु डरी। न्रिप बीर सरासनि लै कर बान घनी प्रतना बिनु तान करी ॥ १२२९ ॥ ॥ सवैया ॥ काटि करी रथ काटि दए बहु बीर हने अति बाज सँघारे। घाइल घूमत है रन मै कितने सिर भूमि परे धर भारे। जीवत जे तेऊ आयुध लै न डरे अरि ऊपरि धाइ प्रहारे। तउ तिन के तन आहव मै असि लै न्रिप खंड निखंड कै डारे ॥ १२३० ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध बिखै अति तीर लगै बहु बीरनि को तन स्रोणत भीने। काइर भाज गए रन ते अति ही डर सिउ जिह गात पसीने। भूत पिसाच करै किलकार फिरै रन जोगिन खप्पर लीने। आन फिर्यो तह स्री त्रिपरार सु आधेई अंग सिवा तन कीने ॥ १२३१ ॥ ॥ दोहरा ॥ मूरछा ते पाछे घरी तीन भए हरि चेत। दारक

रहे हो। जब तक मैं जीवित हूँ तुम लोग युद्ध में बिलकुल मत डरो ॥१२२७॥ ॥ दोहा ॥ युद्ध में क्रोधित होकर बलराम ने वीरों को पुचकार कर कहा कि अमिटसिंह को घेरकर मार डालो ॥ १२२८ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम की आज्ञा पाकर चारों ओर से सेना ललकार कर टूट पड़ी और क्रोध से परिपूर्ण होकर अमिटसिंह के सामने आकर अड़ गई। युद्ध-स्थल में भीषण युद्ध हुआ परन्तु सेना तनिक भी नहीं डरी। राजा अमिटसिंह ने धनुष हाथ में लेकर सेना के अनेक वीरों को मार डाला और सेना को असहाय कर दिया ॥ १२२९ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथी, रथों, वीरों और घोड़ों को मार डाला गया। कितने ही वीर घायल होकर घूम रहे हैं और कितने ही भारी धड़ धरती पर पड़े हुए हैं। जो जीवित हैं वे शस्त्र हाथ में लेकर निडर होकर शत्रु पर प्रहार कर रहे हैं। राजा अमिटसिंह ने ऐसे वीरों के शरीर कृपाण हाथ में लेकर खंड-खंड कर दिए हैं ॥१२३०॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध में बाण लगने से बहुत से वीरों के शरीर रक्त से भीगे हुए हैं। कायरों के पसीने छूट गए और वे रण से भाग खड़े हुए हैं। भूत-पिशाच किलकारियाँ भरते हुए भाग रहे हैं और योगिनियों ने अपने हाथों में खप्पर ले लिये हैं। शिव भी (गणों-समेत) वहाँ घूम रहे हैं और वहाँ पड़े हुए मृतक अब आधे ही रह गए हैं अर्थात उनका मास भक्षण किया जा रहा है १२३१

सो कह्यो हाकि रथ पुन आए जह खेतु ॥ १२३२ ॥ (मू०ग्रं०४१८)
॥ सवैया ॥ जानो सहाइ भयो हरि को बहुरो जदुबंसनि क्रोध जग्यो। अमिटेस सो धाइ अरे रन मै तिह जोधन सो नही एक भग्यो। गहि बान कमान क्रिपान गदा अति ही दलु आहव को उमग्यो। बहु स्त्रउन परं रंगि स्याम जगे मनो आग लगे गन साल दग्यो ॥ १२३३ ॥ ॥ सवैया ॥ बिबधायुध लै पुनि जुद्धु किओ अति ही मन मे भट कोप भरे। मुख ते कहि मार ही मार परे लखिकै रन को नही नैकु डरे। पुन या बिधि सिउ कबि राम कहै जदुबीर घने अरि साथ अरे। रिसि भूप तबै बलु कै असि लै रिप के तन द्वै करि चार करे ॥ १२३४ ॥ ऐसी निहारकै मार मची जोऊ जीवत थे तजि जुद्धु पराने। स्याम भनै अमिटेस के सामुहि आहव मे कोउ ना ठहिराने। जे बर बीर कहावत है बहुबार भिरे रन बाँधित बाने। सो इह भाँति चले भजिकै जिम पउन बहे द्रुम पात उडाने ॥१२३५॥ ॥ सवैया ॥ केते रहे रन मै रुपकै कितने भजि स्याम के तीर पुकारे। बीर घने नही जात गने अमिटेस बली रिसि साथ

॥ दोहा ॥ मूर्च्छित होने के तीन घड़ी बाद श्रीकृष्ण की चेतना लौटी और दारुक से रथ हँकवाकर वे पुनः युद्धस्थल में आ गए ॥ १२३२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कृष्ण को यदुवंशियों ने अपनी सहायता के लिए आए देखा तो उनका क्रोध जाग उठा। वे अमिटसिंह से दौड़कर जा भिड़े और युद्ध मे एक भी योद्धा नहीं भागा। कृपाण, बाण, कमान, गदा आदि लेकर सेना उमड़ पड़ी। वीर रक्त से भीगकर ऐसे चमक रहे हैं जैसे आग लगने से भूसे का ढेर तमतमाकर जल उठता है ॥ १२३३ ॥ ॥ सवैया ॥ विविध प्रकार के शस्त्र लेकर कुपित होकर वीरों ने युद्ध किया। सभी मुँह से मार-मार पुकार रहे थे और तनिक भी डर नहीं रहे थे। पुनः कवि का कथन है कि श्रीकृष्ण अनेकों शत्रुओं के समक्ष अड़े रहे। उधर राजा अमिटसिंह ने क्रोधित होकर दो-दो वीरों के (एक साथ) शरीरों को चार-चार खंडों में विभक्त कर दिया ॥ १२३४ ॥ ऐसा भीषण युद्ध देखकर जो युद्ध के लिए चले आ रहे थे वे वीर युद्ध छोड़कर भाग खड़े हुए। अमिटसिंह के सामने युद्ध में कोई नही ठहर रहा था। जो अपने को बड़ा वीर कहलाते थे और तरह-तरह के शस्त्र बाँधे घूम रहे थे वे युद्धस्थल से ऐसे भागे चले जा रहे थे जैसे वायु के चलने से वृक्ष के पत्ते उड़ते जा रहे हों ॥ १२३५ ॥ ॥ सवैया ॥ कई युद्ध में स्थिर रहे और कई कृष्ण के तीरो की मार खाकर चिल्लाते हुए भाग खड़े हुए।

सँघारे । बाज मरे गजराज परे सु कहूँ रथ काटिकै भू पर डारे । आवत का तुमरे मन मै करता हरता प्रतिपालन हारे ॥ १२३६ ॥ ॥ दोहरा ॥ रन आतुर ह्वै सुभट जो हरि सो बिनती कीन । तब तिनको ब्रिजराज जू इह बिधि उत्तर दीन ॥ १२३७ ॥ ॥ कानजू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ निधि बार बिखै अति ही हठ कै बहु मास रह्यो तपु जापु कियो । बहुरो तजिकै पित मात सु भ्रात अवास तज्यो बनवास लियो । शिव रीझ तपो धन मै इह को कह्यो माँग महाँ बर तोहि दियो । मुहि सामुहि कोऊ न शत्र रहै बरु देहु इहै मुखि माँग लियो ॥ १२३८ ॥ ॥ स्वैया ॥ शेश सुरेश गनेश निशेश दिनेश हू ते नही जाइ सँघार्यो । सो बर पाइ महाँशिव ते अरिबिंद नरिंद इनी रन मार्यो । सूरन सौ बलबीर तबै अपुनै मुखि ते इह भाँति उचार्यो । हउ तिह संघरके समुहे म्रित की बिध पूछ इही जिय धार्यो ॥ १२३९ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब हरिजू ऐसे कह्यो तब मुसली सुन पाइ । इह को अब ही हउ हनो बोल्यो बचनु रिसाइ ॥ १२४० ॥ ॥ सवैया ॥ कोप हली जदुबीर ही सो इह भाँति (मू०ग्रं०४१९)

अमिटसिंह ने कितने वीरों को मार डाला, उनकी गणना नहीं की जा सकती। कहीं घोड़े, कहीं हाथी तथा कहीं काटे हुए रथ भूमि पर पड़े हैं। हे प्रभु ! तुम ही कर्ता, पोषक और संहारक हो; तुम्हारे मन में क्या है, कौन समझ सकता है ॥ १२३६ ॥ ॥ दोहा ॥ युद्ध में व्याकुल शूरवीरों ने जब श्रीकृष्ण से प्रार्थना की तो श्रीकृष्ण ने उनको यह उत्तर दिया ॥ १२३७ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ अमिटसिंह ने समुद्र में हठपूर्वक बहुत मास तक तप और जाप किया है। फिर इसने माता-पिता, घर आदि को त्यागकर वन में निवास किया। शिव ने प्रसन्न होकर इस तपस्या के बदले इससे वर माँगने को कहा तो इसने यह वर माँग लिया कि मेरे समक्ष कोई भी शत्रु न रहे अर्थात् मुझे कोई न मार पाए ॥ १२३८ ॥ ॥ सवैया ॥ इसे इंद्र, शेषनाग, गणेश, चन्द्र, सूर्य कोई भी नहीं मार सकता। शिव से वरदान पाकर इसने अनेकों राजाओं को मार डाला है। मैं सोचता हूँ कि इसके सामने होकर लड़ूँ और इसी से इसकी मृत्यु की विधि पूछूँ ॥ १२३९ ॥ ॥ दोहा ॥ जब कृष्ण की यह बात बलराम ने सुनी तो वे क्रोधित होकर बोले कि मैं अभी इसको मार गिराता हूँ ॥ १२४० ॥ ॥ सवैया ॥ कुपित होकर महाबली बलराम ने कृष्ण से कहा कि मैं इसका संहार करता हूँ और यदि शिव भी इसकी सहायता करने के

कह्यो कहो जाइ सँघारो । जउ शिव आइ सहाइ करै शिव को रन मै तिउ संग प्रहारो । साच कहो प्रभजू तुम सों हनहो अमिटेस नही बल हारो । पउन सरूप सहाइ करो तुम पावक ह्वै रिप कानन जारो ।। १२४१ ।। ।। क्रिशन बाच मुसली सो ।। ।। दोहरा ।। तुम सो तिन जब जुद्ध किय किउ न लरे पग रोप । अब हम आगे गरब को बचन उचारत कोप ।। १२४२ ।। ।। सवैया ।। जादव भाजि गए सिगरे तुम बोलत हो अहंकारनि जिउ । अब आज हनो अर को रन मै कस भाखत हो मतवारनि जिउ । तिह को बडवानल के परसे जर जैहो तबै त्रिन भारन जिउ । जदुबीर कह्यो वह केहरि है तिह ते भजिहो बलबारन जिउ ।। १२४३ ।। ।। दोहरा ।। ब्रिजभूखन बलभद्र सो इह बिध कही सुनाइ । हरे बोल बल जो कह्यो करो जु प्रभहि सुहाइ ।। १२४४ ।। ।। सवैया ।। यों बल सिउ कह्यो रोस बढाइ चल्यो हरिजू हथिआर सँभारे । काइर जात कहा थिरु होहु सु केहरि ज्यो हरिजू भभकारे । बान अनेक हने उनहूँ हरि कोप ह्वै बान सो बान निवारे । आपने पान लयो धनु तान घने सर लै अरि ऊपरि डारे ।। १२४५ ।।

लिए आ जाएँ तो मैं उन पर भी इसी के साथ प्रहार करूँगा । हे कृष्ण ! मैं आपसे सत्य कह रहा हूँ कि मैं अमिटसिंह को मार डालूँगा और हारूँगा नहीं । तुम मेरी सहायता करो और अपने बल की अग्नि से शत्रुओं के इस वन को जला दो ।। १२४१ ।। ।। कृष्ण उवाच हलधर के प्रति ।। ।। दोहा ।। तुमसे जब वह युद्ध कर रहा था तो तुम पाँव जमाकर क्यों नहीं लड़े और अब मेरे सामने गर्वपूर्ण बातें कर रहे हो ।। १२४२ ।। ।। सवैया ।। सभी यादव भाग खड़े हुए हैं और तुम अभी भी अहंकारी की तरह बातें कर रहे हो । मतवालों की तरह क्या बोल रहे हो कि आज तुम अमिटसिंह को मार डालोगे । उसकी बड़वानल के सामने तुम तिनकों के समान जल जाओगे । कृष्ण ने कहा, वह शेर है और उसके सामने बच्चों की तरह भाग खड़े होओगे ।। १२४३ ।। ।। दोहा ।। कृष्ण ने जब यह बलराम को सुनाकर कहा तो बलराम ने कहा कि जैसा आपको अच्छा लगे वैसा ही कीजिए ।।१२४४।। ।। सवैया ।। बलराम से यह कहकर क्रोधित होकर श्रीकृष्ण शस्त्रों को सँभालते हुए चल पड़े और बोले कायर कहाँ जा रहा है, ज़रा ठहर जा । अमिटसिंह ने अनेकों बाण चलाए जिन्हें श्रीकृष्ण ने अपने बाणों से रोका । कृष्ण ने तानकर धनुष हाथ में लिया और अनेकों तीर शत्रु पर छोड़ दिए ।। १२४५ ।। ।। दोहा ।। अनेकों

। दोहरा ।। बान अनेक चलाइकै पुनि बोले हरिदेव ।
अमिटसिंघ मिट जाइगो झूठो तुय अहमेव । १२४६ ।
।। सवैया ।। हउ जब जुद्ध के काज चल्यो तुअ काल कह्यो हरिजू हम सउ । तिह को कह्यो कान कियो तब मै तुअ हेरि कै आयो हउ आपनी गउ । तिह ते न्रिप बीर कह्यो सुनि कै तजि शंक भिरे दोऊ आहव मउ । ध्रूअलोक टरै गिर मेर हलै सु तऊ तुम ते टरिहों नही हउ ।। १२४७ ।। ।। कानजू बाच ।।
।। दोहरा ।। कह्यो क्रिशन तुहि मारिहो तूं करि कोट उपाइ ।
अमिटसिंघ बोल्यो तबहि अति ही कोप बढाइ ।। १२४८ ।।
।। अमिटसिंघ बाच ।। ।। सवैया ।। हउ न बकी बक नीच नही ब्रिखभासुर सो छल साथ सँघार्यो । केसी न हउ गज धेनक नाहि न हउ त्रिणावर्त सिला पर डार्यो । हउ न अघासुर मुसट चंडूर सु कंस नही गहि केस पछार्यो । भ्रात बली तुअ नाम पर्यो कहो कउन बली बल सो तुअ मार्यो ।। १२४९ ।। (मू०ग्रं०४२०) ।। सवैया ।। का चतुरानन मै बलु है जोऊ आहव मै हम सो रिसि कैहै । कउन खगेश

बाण चलाकर पुनः श्रीकृष्ण बोले कि हे अमिटसिंह ! तुम्हारा झूठा अहंकार मिट जाएगा ।। १२४६ ।। ।। सवैया ।। यह सुनकर अमिटसिंह ने कहा कि जब तुम युद्ध के लिए चले थे तभी से तुम ऐसी बातें कर रहे हो। मैंने तुम्हारी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया और अब मैं तुम्हें ढूँढ़कर तुम्हारे सामने आया हूँ। इसलिए शंकाविहीन होकर आओ, युद्ध में एक-दूसरे से भिड़ें। ध्रुवलोक चाहे अपने स्थान से टल जाय और पर्वत भी हिल जाएँ, परन्तु हे कृष्ण! तुमसे मैं हिलनेवाला नहीं हूँ ।। १२४७ ।। ।। कृष्ण उवाच ।। ।। दोहा ।। कृष्ण ने कहा कि तुम करोड़ों उपाय कर लो पर मैं तुम्हें मार डालूँगा, तो अमिटसिंह अत्यन्त क्रोधित होकर बोला ।। १२४८ ।। ।। अमिटसिंह उवाच ।। ।। सवैया ।। मैं बकी या बकासुर अथवा वृषभासुर नहीं हूँ, जिन्हें तुमने छलपूर्वक मार डाला। मैं केशी, हाथी, धेनुकासुर अथवा तृणावर्त भी नहीं हूँ जिसे तुमने पत्थर पर दे मारा। न ही मैं अघासुर, मुष्टिक, चंडूर अथवा कंस हूँ, जिसे तुमने केशों से पकड़कर पछाड़ फेंका। तुम्हारा भाई बलराम है और तुम बली कहलाते हो; मुझे बताओ ज़रा किस महाबली को तुमने अपने बल से मारा है ।। १२४९ ।। ।। सवैया ।। ब्रह्मा में भी इतना बल कहाँ जो युद्ध में मेरे साथ भिड़े। बेचारे गरुड़, गणेश, सूर्य, चन्द्र आदि भी क्या हैं। ये सब तो मुझे देखकर चुप होकर भाग जायँगे। शेष, वरुण, इन्द्र, कुबेर

गनेश दिनेश निसेश निहारकै मोन भजै है। शेश जलेश सुरेश धनेश जू जउ अरि है तऊ मोह न छैहै। भाजत देव बिलोक कै मोकउ तू लरका लरि का फलु लैहै ॥ १२५० ॥ ॥ दोहरा ॥ खोवत है जिउ किह् नमित तजि रन स्याम पधार। मारत होर न आज तुहि अपने बलहि सँभार ॥ १२५१ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ अमिटसिंघ के बचन सुन बोल्यो हरि करि कोप। अब अकार तुअ लोप कर अमिटसिंघ बिनु ओप ॥ १२५२ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्धु कर्‌यो हरिजू जुग जाम तबै रिप रीझकै ऐसे पुकार्‌यो। बालक हो अर जुद्ध प्रबीन हो मागु कछू मुख जो जिय धार्‌यो। आपनी पात की घात की बात कउ देहु बताइ मुरार उचार्‌यो। सामुहि मोहि न कोऊ हनै अस लै तब कान्ह पछावर झार्‌यो ॥ १२५३ ॥ ॥ सवैया ॥ सीस कट्‌यो न हट्‌यो तह् ठउर ते दउरकै आगै ही को पगु धार्‌यो। कुंचरु एक हुतो दल मै तिह् धाइकै जाइकै घाइ प्रहार्‌यो। मार करी हनि बीर चल्यो अस लैकर स्री हरि ओर पधार्‌यो। भूमि गिर्‌यो सिर स्री शिव लै गुह मुंड की माल को मेरु सवार्‌यो ॥ १२५४ ॥ ॥ दोहरा ॥ अमिटसिंघ

आदि यदि अड़ेंगे भी तो मेरा कुछ न बिगाड़ पाएँगे। मुझे देखकर तो देवता भी भाग खड़े होते हैं, तुम अभी बच्चे हो मुझसे लड़कर क्या लोगे ॥ १२५० ॥ ॥ दोहा ॥ हे कृष्ण ! क्यों प्राण गँवाते हो। युद्ध छोड़कर भाग जाओ। मैं आज तुमको अपने पूर्ण बल के साथ नहीं मारूँगा ॥ १२५१ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ अमिटसिंह के वचन सुनकर कृष्ण क्रोधित होकर बोले कि हे अमिटसिंह ! अब मैं तेरा शरीर समाप्त कर दूँगा और तुझे निष्प्राण कर दूँगा ॥ १२५२ ॥ ॥ सवैया ॥ दो प्रहर तक जब श्रीकृष्ण ने युद्ध किया तो शत्रु अमिटसिंह प्रसन्न होकर बोला कि हे कृष्ण ! तुम हो तो बालक परन्तु युद्धकला में प्रवीण हो। तुम जो चाहते हो मुझसे माँग लो। कृष्ण ने कहा कि तुम मुझे अपने मरने की विधि बता दो। तब अमिटसिंह ने कहा कि सामने से मुझे कोई नहीं मार सकता है। कृष्ण ने तब पीछे से अमिटसिंह पर वार किया ॥ १२५३ ॥ ॥ सवैया ॥ अमिटसिंह का सिर कट गया, परन्तु फिर भी दौड़कर आगे की तरफ़ ही बढ़ा और दल के एक हाथी पर उसने भीषण प्रहार किया। हाथी को मारकर, वीरों को मारता हुआ वह वीर श्रीकृष्ण की ओर बढ़ा। उसका सिर भूमि पर गिर पड़ा था जिसे शिवजी ने अपनी मुंडमाला में मेरु का स्थान दिया ॥ १२५४ ॥ ॥ दोहा ॥ बली

अत ही बली बहुतु कर्यो संग्राम। निकसि जोति हरि सो मिली जिउँ निस को कर भान ॥१२५५॥ ॥ सवैया ॥ अउर जिती प्रतिना अरिकी तिनहूँ जदुबीर जो जुद्ध किया। बिनु भूपत आन अरे न डरे रिस को करिकै अति गाढो हिया। मिलि धाइ परे हरि पै भट यों कविता छबिको जसु मान लिया। मानो रात समै उड कीट पतंग जिउँ टूट परे अविलोक दिया ॥ १२५६ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब ब्रिजभूखन खड़गु गहि अर बहु दए गिराइ। एक अरे इक रुप लरे इक रन छाड पराइ ॥ १२५७ ॥ ॥ चौपई ॥ अमिटसिंघ दल हरिजू हयो। हाहाकार शत्रु दल भयो। उत ते सूर असतु हुइ गयो। प्राची दिस ते ससि प्रगटयो ॥ १२५८ ॥ चार जाम दिन संघर कीनो। बीरन को बलु हुइ ग्यो छीनो। दो दल आप आपि मिलि धाए। इत जदुबीर बसत (मू०ग्रं०४२१) ग्रहि आए ॥ १२५९ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे अमिटसिंघ सैना सहित बधहि धिआइ समापतम ॥

अमिटसिंह ने भीषण संग्राम किया। जैसे सूर्य और चन्द्र से ज्योति विकीर्ण होती है, ऐसे ही उसकी ज्योति भी उसके शरीर से निकलकर परमात्मा में जा मिली ॥ १२५५ ॥ ॥ सवैया ॥ बाक़ी शत्रु-सेना ने श्रीकृष्ण से युद्ध किया। वे बिना राजा के भी आकर डट गए और उन्होंने क्रोधित होकर अपने हृदय को मज़बूत बना लिया। सेना इस प्रकार एकत्र होकर श्रीकृष्ण पर टूट पड़ी जैसे रात्रि के समय दीपक को देखकर कीड़े-पतिंगे दीपक की ओर टूट पड़ते हैं ॥ १२५६ ॥ ॥ दोहा ॥ तब श्रीकृष्ण ने खड्ग पकड़कर बहुत से शत्रुओं को मार गिराया। कोई तो लड़ा, कोई स्थिर खड़ा रहा और कितने ही भाग खड़े हुए ॥ १२५७ ॥ ॥ चौपाई ॥ श्रीकृष्ण ने अमिटसिंह के दल का संहार कर दिया और शत्रुदल में हाहाकार मच गया। उधर से सूर्य भी अस्त हो गया और पूर्व दिशा से चन्द्रमा उदित हुआ ॥ १२५८ ॥ दिन के चारों प्रहर युद्ध करते-करते वीरों का बल क्षीण हो गया। दोनों दल स्वयं ही वापस चल पड़े और इधर श्रीकृष्ण भी अपने घर आ गए ॥ १२५९ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबंध में अमिटसिंह का सेना-सहित-वध अध्याय समाप्त ॥

अथ पच भूप जुद्ध कथन ॥

॥ दोहरा ॥ जरासिंध तब रैन कउ सकल बुलाए भूप । बल गुन बिक्रम इंद्र सम सुंदर काम सरूप ॥ १२६० ॥ ॥ दोहरा ॥ भूप अठारह जुद्ध मै स्याम हने बलबीर । प्रात जुद्ध बा सो करै ऐसो को रनधीर ॥१२६१॥ ॥ दोहरा ॥ धूमसिंघ धुजसिंघ मनसिंघ धराधर अउर । धउलसिंघ पाचो न्रिपत सूरनि के सिरमउर ॥ १२६२ ॥ हाथ जोरि उठि सभा महि पाचहु कियो प्रनाम । काल भोर के होत ही हनिहै बल दल स्याम ॥ १२६३ ॥ ॥ सवैया ॥ बोलत भे न्रिप सो तेऊ यौ जिन चिंत करो हम जाइ लरैंगे । आइस हो इतु बाँधि लिआवहि नातर बान सो प्रान हरैंगे । काल अयोधन मै अरिकै बल अउ हरि जादव सो न टरैंगे । एक क्रिपान के संग निशंग उनै बिन प्रान करैं न डरैंगे ॥ १२६४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जरासिंध इह मंत्र करि दई जु सभा उठाइ । अपने अपने ग्रिहि गए राजा अति सुखु पाइ ॥ १२६५ ॥ ॥ दोहरा ॥ ग्रिहि आए उठ पाँच न्रिप जाम एक गई रात । तीन पहर सोए नही

पंच भूप-युद्ध-कथन

॥ दोहा ॥ तब रात्रि में जरासंध ने सभी राजाओं को बुलाया, जो बल एवं गुण में इन्द्र के समान एवं रूप में कामदेव के समान सुंदर थे ॥ १२६० ॥ ॥ दोहा ॥ कृष्ण ने अठारह राजा युद्ध में मार डाले हैं, अब कौन ऐसा है जो प्रातःकाल उससे युद्ध करेगा ॥ १२६१ ॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ पर धूमसिंह, ध्वजसिंह, मनसिंह, धराधरसिंह, धवलसिंह पाँच राजा शूरवीरों के सिरमौर विराजमान थे ॥ १२६२ ॥ पाँचों ने सभा में उठकर प्रणाम किया और कहा कि प्रातः होते ही हम बलराम, कृष्ण और उसकी सेना को मार डालेंगे ॥ १२६३ ॥ ॥ सवैया ॥ राजाओं ने जरासंध से कहा कि आप चिंता न करिए, हम जाकर लड़ेंगे । आपकी आज्ञा हो तो उसे यहाँ बाँधकर ले आएँ अन्यथा वहीं मार डालें । युद्धस्थल में हम बलराम, कृष्ण और यादवों से ज़रा सा भी नहीं हिलेंगे । हम एक ही खड्ग से उन्हें अभय होकर निष्प्राण कर देंगे ॥ १२६४ ॥ ॥ दोहा ॥ जरासंध ने यह विचार-विमर्श कर सभा को विदा किया और राजा प्रसन्न होकर अपने-अपने घरों (ख़ेमों) को चले गए ॥ १२६५ ॥ ॥ दोहा ॥ पाँचों राजा अपने स्थानों पर आ गए और इधर एक प्रहर रात्रि व्यतीत हो गई । बाक़ी के तीन प्रहर वे सो न सके और

झाँकत हुइ ग्यो प्रात ॥ १२६६ ॥ ॥ कबितु ॥ प्रातकाल भयो अंधकार मिट गयो क्रोध सूरनि को भयो रथ साजि कै सभै चले । इतै ब्रिजराइ बलदेव जू बुलाइ मन महाँ सुखु पाइ जदुबीर संग लै भले । उतै डर डारकै हथियारन सँभारकै सु आए है हकार कै अटल्ल भट ना टले । स्यंदन धवाइ संख दुंदभ बजाइ द्वै तुरंगनि के भाइ दल आपसि बिखै रले ॥१२६७॥ ॥ दोहरा ॥ स्यंदन पै हरि सोभियै अमित तेज की खान । कुमदन जान्यो चंद्रमा कंजन मानो भान ॥ १२६८ ॥ ॥ सवैया ॥ घन जानकै मोर नच्यो बन माँझ चकोर लख्यो ससि के सम है । मन कामन काम सरूप भयो प्रभ दासनि जान्यो नरोतम है । बर जोगिन जान जुगीशर ईशर रोगन मान्यो सदा छम है । हरि बालन बालक रूप लख्यो जिय दुज्जन जान्यो महा जम है (मू०ग्रं०४२२) ॥ १२६९ ॥ ॥ सवैया ॥ चकवान दिनेश गजान गनेश गनान महेश महात्तम है । मघवा धरनी हरि जिउँ हरिनी उपमा बरनी न कछू स्रम है ।

इसी तरह प्रात:काल हो गया ॥ १२६६ ॥ ॥ कवित्त ॥ प्रात:काल हुआ अंधकार मिट गया, शूरवीर क्रोधित होकर रथों को सजाकर चले। इधर ब्रजराज ने बलराम को बुलाकर मन में महासुख प्राप्त कर प्रस्थान किया। उस ओर भी भय का त्याग कर शस्त्रों को सँभाल कर शूरवीर पुकारते हुए चल पड़े। रथों को चलाकर शंख और दुंदुभियाँ बजाकर घोड़ों पर सवार दोनों दल आपस में मिल गए अर्थात् गुत्थमगुत्था हो गए ॥ १२६७ ॥ ॥ दोहा ॥ रथ पर बैठे श्रीकृष्ण तेज की अपरिमित खान की तरह शोभायमान हो रहे थे। कुमुदिनियाँ उन्हें चन्द्रमा समझने लगी और कमल के फूलों ने उन्हें सूर्य समझ लिया ॥ १२६८ ॥ ॥ सवैया ॥ मोर उन्हें बादल समझकर नृत्य करने लगे, चकोर उन्हें चन्द्रमा मानकर वन में नृत्य करने लगे। स्त्रियों को वे कामदेव के समान लगे और दासियों ने उन्हें नरोत्तम अर्थात् नर-श्रेष्ठ समझा। योगियों ने उन्हें योगेश्वर शिव समझा और रोगों ने उन्हें अपना उपचार समझा। बालकों ने उन्हें बालक समझा और दुर्जनों ने उसे काल-रूप में देखा ॥ १२६९ ॥ ॥ सवैया ॥ चकवे पक्षियों ने उन्हें सूर्य, गजों ने गणेश और गणों ने उन्हें महेश समझा। वे इन्द्र, धरती एवं विष्णु के समान दिखाई दे रहे थे, परन्तु साथ ही साथ हरिणी के समान भोलेभाले दिखाई पड़ रहे थे। मृगों के लिए वे नादस्वरूप दिखाई दे रहे थे और विवादों से परे

म्रिग जूथन नाद सरूप भयो जिनके न बिबाद तिनै दम है । निज मीतन मीत ह्वै चीत बस्यो हरि शत्रनि जान्यो महाँ जम है ॥ १२७० ॥ ॥ दोहरा ॥ द्वै सैना इकठी भई अति मन कोप बढाइ । जुद्ध करत है बीरबर रन दुंदभी बजाइ ॥१२७१॥ ॥ सवैया ॥ धूम धुजा मन धउर धरा धरसिंघ सभै रन कोप कै आए । लै करवारन ढाल कराल ह्वै शंक तजी हरि सामुहि धाए । देखि तिनै तब ही ब्रिजराज हली सो कह्यो सु करो मन भाए । भाइ बली बल लै कर मै हल पाँचन के सिर काटि गिराए ॥ १२७२ ॥ ॥ दोहरा ॥ दो अछूहनी दल न्रिपत पाँचो हने रिसाइ । एकि दोइ जीवत बचे रन तजि गए पराइ ॥ १२७३ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे पाँच भूप दो अछूहनी दल सहित बधह धिआइ समाप्त ॥

अथ द्वादस भूप जुद्ध कथनं ॥

॥ स्वैया ॥ द्वादस भूप निहार दशा तिह दाँतन पीसकै कोप कियो । धरी आस वही बर अस्त्रन के बहु शस्त्रनि के

मनुष्यों के लिए वे प्राण के समान दिखाई दे रहे थे । मित्रों के वे मित्र के समान चित्त में बसे हुए थे और शत्रुओं को वे यम के समान दिखाई पड़ रहे थे ॥ १२७० ॥ ॥ दोहा ॥ दोनों ओर की सेना कुपित होकर इकट्ठी हुई और वीर लोग नगाड़े आदि बजाकर युद्ध करने लगे ॥ १२७१ ॥ ॥ सवैया ॥ धूम, ध्वजा, मन, धवल एवं धराधरसिंह सभी क्रोधित होकर युद्धस्थल में पहुँचे । वे हाथों में ढालें और कृपाणें लेकर शंकाओं को त्यागकर श्रीकृष्ण के सामने दौड़े । उन्हें देखकर श्रीकृष्णजी ने बलराम से कहा कि अब जो चित्त में आए वही करो । बलवान बलराम ने हाथ में हल लेकर पाँचों के सिर काटकर धरती पर गिरा दिये ॥ १२७२ ॥ ॥ दोहा ॥ दो अक्षौहिणी सेना और पाँचों राजा मार डाले गए और जो एक दो जीवित बचे वे युद्ध छोड़कर भाग खड़े हुए ॥ १२७३ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में युद्ध-प्रबंध में पांच भूप, दो अक्षौहिणी सेना-सहित वध अध्याय समाप्त ॥

बारह राजाओं का युद्ध-कथन

सवैया बारह राजाओं ने जब यह दशा देखी तो वे क्रोध से दाँत

दल बाँट दियो । मिलि आप बिखै तिन मंत्र कियो करिकै अति छोभ सो तातो हियो । लरिहै मरिहै भव को तरिहै जस साथ भलो पल एक जियो ॥ १२७४ ॥ ॥ सवैया ॥ यों मन मै धरि आइ अरे सु घनो दलु लै हरि पेखि हकारो । याही हने न्रिप पाँच अबै हम संगि लरो हरि भ्रात तुमारो । ना तर आइ भिरो तुमहूँ नहि आयुध छाडकै धाम सिधारो । जो तुम मै बलु है घटि का लरिकै लखि लै पुरखत्त हमारो ॥ १२७५ ॥ ॥ सवैया ॥ यो सुनिकै बतियाँ तिन की सभ आयुध लै हरि सामुहि आयो । साहिबसिंघ को सीस कट्यो सु सदासिंघ मारकै भूम गिरायो । सुंदरसिंघ अधंधर कै पुनि साजनसिंघ हन्यो रन पायो । केसन ते गहिकै सभ लेस धरा पटक्यो इम जुद्ध मचायो ॥ १२७६ ॥ ॥ दोहरा ॥ शकतिसिंघ पुनि हन्यो रन सैनसिंघ हति दीन । सफलसिंघ अरिसिंघ हनि सिंघनाद हरि कीन ॥१२७७॥ ॥ सुवर्च्छसिंघ बाच ॥ ॥ सवैया ॥ स्वच्छ नरेश कह्यो (मू०ग्रं०४२३) हरि सिउ अपने बल कोप अयोधन मै । अब तै दस भूप हने बलवंड न रंचक त्रास कियो मन मै ।

पीसने लगे । उन्होंने अपने अस्त्रों-शस्त्रों पर भरोसा किया और हथियार अपने दल में बाँट दिये । स्वयं सबने मिलकर विचार-विमर्श किया । उनके हृदय अत्यन्त दु:खी थे । वे कहने लगे कि हम लड़ेंगे, मरेंगे और भवसागर को पार करेंगे; क्योंकि यशपूर्वक एक पल का जीवन भी श्रेष्ठ है ॥ १२७४ ॥ ॥ सवैया ॥ मन में यह सोचकर और काफ़ी सेना लेकर वे आए और श्रीकृष्ण को ललकारने लगे । इसी बलराम ने अभी पाँच राजाओं को मारा है अब हे कृष्ण ! अपने भाई से कहो कि यह हमारे साथ लड़े । नहीं तो तुम हमारे साथ आ भिड़ो अथवा युद्ध छोड़कर घर चले जाओ । यदि तुम लोग वैसे ही निर्बल हो तो लड़कर क्या हमारा पौरुष देखोगे ॥१२७५॥ ॥ सवैया ॥ उनकी ये बातें सुनकर सभी शस्त्र लेकर श्रीकृष्ण के सामने आए । आते ही उन्होंने साहिबसिंह का सिर काट डाला तथा सदासिंह को मारकर भूमि पर गिरा दिया । सुंदरसिंह को दो टुकड़ों में बाँट दिया और फिर साजनसिंह का नाश कर दिया । समलेशसिंह को केशों से पकड़कर धरती पर पटक दिया और इस प्रकार भीषण युद्ध मचा दिया ॥ १२७६ ॥ ॥ दोहा ॥ फिर शक्तिसिंह और सैनसिंह को मार डाला तथा सफलसिंह, अरिसिंह को मारकर श्रीकृष्ण सिंह की तरह दहाड़े ॥ १२७७ ॥ ॥ स्वच्छसिंह उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध मे क्रोधित होकर बलपूर्वक स्वच्छसिंह राजा ने श्रीकृष्ण से कहा कि तुमने

जदुबीर की ओर ते तीर चलै बरखा जिम सावन के घन मै। सर पउन के जोर लगे न टर्‌यो गिर जिउँ थिरु ठाढ रह्यो रन मै ॥ १२७८ ॥ ॥ दोहरा ॥ जदुबीरन सो अति लर्‌यो जिउँ बासव सिउ जंभ। अचल रह्यो तिह ठउर न्रिप जिउँ रन मै रनखंभ ॥ १२७९ ॥ ॥ सवैया ॥ जिउँ न हलै गिर कंचन को अति हाथन को बल कोऊ करै। अरि जिउँ ध्रुअलोक चलै न कहू शिव मूरत जिउँ कबहूँ न चरै। बर जिउँ न सती सति छाडि पतिब्रति जिउँ सिध जोग मै ध्यान धरै। तिम स्याम चमू मध स्वच्छ नरेश हठी रन ते नही नैकु टरै ॥१२८०॥ ॥ कबित ॥ फेरि तिन कोपि कै अयोधन मै स्याम कहि बीर बहु मारे स्वच्छसिंघ महाबल सैं। अतिरथी सति महारथी जुग सति तहाँ सिधुर हजार हने स्याम जू के दल सैं। घने बाज मारे रन पैदल सँघारे भई रुधर रंगीन भूमि लहरै उछल सै। घाइल गिरे सु मानो महाँ मतवारो ह्वैकै सोए रूमी तलै लाल डारकै अतल सैं ॥ १२८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुत सैन हनि

अब तक अभय होकर दस राजाओं को मार डाला है। कृष्ण की ओर से साथ ही साथ बाण ऐसे चल रहे हैं जैसे सावन में बादल बरस रहे हों परन्तु राजा स्वच्छसिंह बाणों के वेग से भी ज़रा सा नहीं हिला और युद्धस्थल में पर्वत के समान अड़ा रहा ॥ १२७८ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा, यादवों से उसी भाँति लड़ा जैसे इन्द्र जंभासुर से लड़ा था। राजा युद्ध में ऐसे ही स्थिर था जैसे युद्धभूमि में कोई स्तम्भ खड़ा हो ॥ १२७९ ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे सुमेरु पर्वत हाथियों के बल से भी नहीं हिलता है; जैसे ध्रुवलोक अटल रहता है और शिव की मूर्ति कभी कुछ नहीं खाती है; जैसे पतिव्रता अपने धर्म को नहीं छोड़ती और सिद्धयोगी अपने ध्यान को नहीं छोड़ते उसी प्रकार कृष्ण की चतुरंगिणी सेना में हठी स्वच्छसिंह विराजमान है और अटल है ॥ १२८० ॥ ॥ कवित्त ॥ फिर महाबली स्वच्छसिंह ने क्रोधित होकर कृष्ण की सेना के महावीरों को मार डाला। सात अतिरथी और चौदह महारथियों को तथा हज़ारों हाथियों को मार डाला। बहुत से घोड़ों और प्यादों को मार डाला। भूमि रक्तरंजित हो गई और रक्त की लहरें वहाँ उछलने लगीं। घायल वीर मदमस्त होकर वहाँ गिर पड़े और ऐसे लग रहे थे मानो भूमि पर रक्त के छींटे रूपी नालों को छितराकर वे सोए हुए हों १२८१। । दोहा । बहुत सी यादव-सेना को स्वच्छसिंह का मद बहुत बढ़ गया वह गर्वपूर्वक

जादवी बढयो गरब अपार। मानु उतार्यो क्रिशन प्रति बोल्यो कोप हकार ॥ १२८२ ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा भयो जो भूप दस मारे स्याम रिसाइ। जिउँ म्रिग बन तिन भच्छ कर लरे न हरि समुहाइ ॥ १२८३ ॥ रिप के बचन सुनंत ही बोले हरि मुसकाइ। स्वच्छसिंघ तुअ मारिहो स्यार सिंघ की न्याइ ॥१२८४॥ ॥ सवैया ॥ सिंघ निहारकै जिउँ सरदूल घनो बल कै रिस साथ तचायो। जिउँ गजराज लख्यो बन मै म्रिगराज मनो अति कोप बढायो। जिउँ चितवा म्रिग पेखकै दउरत स्वच्छ नरेश पै तिउ हरि धायो। पउन के गउन ते आग चल्यो हरि को रथु दारक ऐसे धवायो ॥ १२८५ ॥ ॥ सवैया ॥ उत ते न्रिप स्वच्छ भयो समुहे इत ते सु चल्यो रिस कै बलभइआ। बान कमान त्रिपान लरे दोऊ आपसि मै बर जुद्ध करइया। मार ही मार पुकार अरे न टरे रन ते अति धीर धरइया। स्याम ते राम ते जादव ते न डर्यो सु लग्यो बरबीर लरइया ॥ १२८६ ॥ ॥ दोहरा ॥ अधिक जुद्ध जब (मू०ग्रं०४२४) तिन कियो तब ब्रिजपत का कीन। खड़गधारि सिर शत्र को मार जुदा कर दीन ॥१२८७॥ ॥ दोहरा ॥ स्वच्छसिंघ जब मार्यो समरसिंघ

कृष्ण से बोला ॥१२८२॥ ॥ दोहा ॥ क्या हुआ यदि कृष्ण तुमने दस राजाओं को मार डाला। यह वैसा ही है जैसे मृग वन के तिनकों को तो खा सकता है परन्तु सिंह के सामने नहीं लड़ सकता ॥ १२८३ ॥ शत्रु के वचन सुनकर कृष्ण मुस्कुराए और बोले, स्वच्छसिंह तुम्हें मैं वैसे ही मारूँगा जैसे सिंह गीदड़ को मार डालता है ॥ १२८४ ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे बबर शेर छोटे शेर को देखकर अत्यन्त क्रोधित हो उठता है, जैसे गजराज को देखकर मृगराज सिंह मन में क्रोधित हो उठता है; जैसे मृगों को देखकर चीता उन पर टूट पड़ता है उसी प्रकार स्वच्छसिंह पर श्रीकृष्ण टूट पड़े। दारुक ने इधर पवन के वेग को भी पीछे छोड़ने की गति से कृष्ण का रथ चला दिया ॥ १२८५ ॥ ॥ सवैया ॥ उधर से स्वच्छसिंह सामने आया और इधर से बलराम के भाई कृष्ण कुपित होकर आगे बढ़े। दोनों योद्धा हाथ में बाण, कृपाण, कमान लेकर भिड़ गए। दोनों ही धैर्यवान थे, मार-मार की पुकार दोनों ने लगाई परन्तु एक-दूसरे के सामने अड़े रहे तनिक भी नहीं टले। स्वच्छसिंह भी न तो कृष्ण से न बलराम से और न ही युद्ध में किसी यादव से डरा ॥ १२८६ ॥ ॥ दोहा ॥ जब उसने बहुत घमासान युद्ध किया तब श्रीकृष्ण ने खड्ग के वार से शत्रु के सिर को धड़ से अलग कर दिया १२८७ दोहा जब

किथो कोप। नह भाज्यो लखि सयर को रह्यो सु द्रिड़ पग रोप ॥ १२८८ ॥ ॥ सवैया ॥ रोसकै बीर बली असि लै अति ही भर स्री जदुबीर के मारे। अउर किते गिरि घाइल ह्वै कितने रन भूमहि हार पधारे। स्याम जू पै इह भाँत कह्यो समरेस बली तिह ते हम हारे। काशी मै जिउं कलवत्त बहै तिम बीरन चीर कै द्वै करि डारे ॥ १२८९ ॥ ॥ सवैया ॥ बोलि कह्यो हरिजू दल मै भट है कोऊ जो अरि संग लरै। उहको बहु अस्त्र सहै तन मै अपने उहि ऊपर शस्त्र करै। निज पान पै पान धरे घनस्याम सु कोइ न बीरन लाज धरै। रन मै जस को सोऊ टीको लहै समरेस को जुद्ध ते नाहि टरै ॥ १२९० ॥ ॥ दोहरा ॥ बहुत जुद्ध सुभटनि कर्‌यो कहा करै बलवान। आहवसिंघ बली हुतो माँग लिए तिह पान ॥ १२९१ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ कोऊ प्रश्न इह ठाँ करै किउं न लरे ब्रिजराज। यह उत्तर है ताहि को कउतक देखन काज ॥ १२९२ ॥ ॥ सवैया ॥ आहवसिंघ

स्वच्छसिंह मारा गया तो समरसिंह अत्यन्त क्रोधित हुआ। वह युद्ध को देखकर दृढ़ क़दमों से श्रीकृष्ण के सामने अड़ा रहा ॥१२८८॥ ॥ सवैया ॥ उस महाबली ने कृपाण हाथ में लेकर श्रीकृष्ण के अनेक वीरों को मार डाला। अनेकों वीर घायल हो गये और अनेकों रणभूमि में हारकर भाग गये। शूरवीरों ने पुकारकर कहा कि हम समरसिंह महाबली से हार रहे हैं, क्योंकि वह जिस प्रकार काशी में करवत (आरा) चलता है और लोगों को काट देता है उसी भाँति वीरों को चीरकर दो टुकड़े किये जा रहा है ॥ १२८९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने अपने दल में ललकार कर कहा कि कौन ऐसा शूरवीर है जो शत्रु के संग लड़ेगा, उसके अस्त्रों के वारों को सहेगा और अपने शस्त्रों से उस पर वार करेगा। श्रीकृष्ण ने अपने हाथ में पान का बीड़ा पकड़ रखा है ताकि कोई वीर यह बीड़ा उठा सके, परन्तु किसी भी वीर को अपनी मान-मर्यादा का ध्यान नहीं है। युद्ध में यश का टीका उसे ही प्राप्त होगा, जो समरसिंह से युद्ध में भागेगा नहीं ॥ १२९० ॥ ॥ दोहा ॥ बहुत से वीरों ने बहुत सा युद्ध किया है और उनमें से महाबली आहवसिंह ने श्रीकृष्ण से वह पान का बीड़ा माँग लिया ॥ १२९१ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ कोई यहाँ प्रश्न कर सकता है कि ब्रजराज श्रीकृष्ण स्वयं क्यों नहीं लड़ते। उसका उत्तर यह है कि वह ऐसा मात्र लीला देखने के लिए कर रहे हैं ॥ १२९२ ॥ सवैया श्रीकृष्ण का शूरवीर आहवसिंह क्रोधित होकर समरसिंह पर टूट

बली हरि को भट सो तिह ऊपर कोप कै धायो। संघरसिंघ हठी हठि सिउ न हट्यो सु तहा अति जुद्ध मचायो। आहवसिंघ को संघरसिंघ महाँ अस लै सिर काटि गिरायो। ऐसे पर्यो धर पै धर मानहु बज्र पर्यो भुअ कंपु जनायो ॥ १२९३ ॥ ॥ कबितु ॥ भूप अनरुद्धसिंघ ठाडो हुतो स्याम तीर हरिजू बिलोक कै निकटि बोल लयो है। कीनो सनमान घनस्याम कह्यो जाहु तुम रथहि धवाइ चल्यो रन माँझ गयो है। तीर तरवारन को सैथी जमदारन को घटका दुइ तिहो ठउर महाँ जुद्ध भयो है। जैसे सिंघ म्रिग को सिचानो जैसे चिरीआ को तैसे हरि बीर को समरसिंघ हयो है ॥ १२९४ ॥ ॥ कबित्तु ॥ जैसे कोऊ अउखध के बल कबि स्याम कहै दूर करै सति बैद रोग संनपात को। जैसे कोऊ सुकबि कुकबि के कबित्त सुनि सभा बीच दूखि करि मानत न बात को। जैसे सिंघ नाग को हनत जल आग को अमलु सुर राग को सचित नर गात को। तैसे ततकाल हरि बीर मार डार्यो (मू०ग्रं०४२५) जैसे लोभहूँ ते महाँ गुनि नासै तम प्रात को ॥१२९५॥ ॥ कबित्तु ॥ बीरभद्र-

---

पड़ा और उधर समरसिंह भी बहुत हठीला था, उसने भी भीषण युद्ध किया। आहवसिंह को समरसिंह ने अपने भारी खड्ग से काटकर धरती पर गिरा दिया। उसका धड़ धरती पर ऐसे गिरा मानो धरती पर वज्र गिरा हो तथा धरती काँप उठी हो ॥ १२९३ ॥ ॥ कवित्त ॥ राजा अनिरुद्धसिंह कृष्ण के पास खड़े थे। उन्हें देखकर कृष्ण ने उन्हें पास बुलाया। श्रीकृष्ण ने उसका बहुत सम्मान किया और उसे युद्ध में जाने को कहा। आज्ञा पाकर वह युद्ध में गया। तीर-तलवारों और भालों आदि से वहाँ दो घड़ी तक घमासान युद्ध हुआ। जिस प्रकार सिंह मृग को और बाज़ चिड़िया को मार देता है, उसी प्रकार श्रीकृष्ण के इस वीर को भी समरसिंह ने मार डाला ॥ १२९४ ॥ ॥ कवित्त ॥ कवि श्याम का कथन है कि जैसे कोई ओषधि के बल पर सन्निपात रोग को दूर करता है, अथवा जिस प्रकार कोई सुकवि किसी अकवि की कविता को सुनकर भरी सभा में उसका समर्थन नहीं करता है, जिस प्रकार सिंह सर्प का और जल अग्नि का नाश करता है तथा अमलीय पदार्थ सुरीले कंठ का नाश करते हैं, उसी प्रकार श्रीकृष्ण के इस वीर को भी समरसिंह ने मार डाला। उसके शरीर से प्राण ऐसे चल निकले जैसे लोभ के कारण महान गुण तथा प्रातःकाल होने पर अंधकार भाग जाता है ॥ १२९५ ॥

कवित्त वीरभद्रसिंह वासुदेवसिंह वीरसिंह बलसिंह क्रोधित होकर

सिंघ बासदेवसिंघ बीरसिंघ बलसिंघ कोप करि अरि सामुहे भए । समर के बीच जहा ठाढो है समरसिंघ ताही को निहार रूप पावक से ह्वै गए । आयुध सँभारि लीने जुद्ध मै सभै प्रबीने स्याम जू के बीर चारो ओर हूँ ते आ खए । ताही समे बलवान तान कै कमान बान चारो न्रिप हरि जू के मार छिन मै लए ॥ १२९६ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जब चारो ई बीर हने रन मै तब अउरन सिउ हरि यों उचरै । अब को भट है हमरे दल मै इह सामुहि जाइकै जुद्ध करै । अतिही बलवान सो धाइकै जाइकै घाइ करै कु लरै न डरै । सभ सिउँ इम स्याम पुकार कह्यो कोऊ है अरि को बिनु प्रान करै ॥ १२९७ ॥ ॥ सवैया ॥ राछस हो इक स्याम की ओर सोऊ चल कै अरि ओर पधार्यो । क्रूर धुजा तिह नाम कहै जग सो तिह सो इह भाँति उचार्यो । मारत हो रे सँभार अबै कहि या बतिया धनु बान सँभार्यो । ता समरेस को बान हन्यो रह्यो ठउर मनो कई दिवस को मार्यो ॥ १२९८ ॥ ॥ दोहरा ॥ क्रूर धुजा रन मै हन्यो समरसिंघ को कोप । सकतिसिंघ के बधन को बहुर रह्यो पग रोप ॥ १२९९ ॥

शत्रु के सामने आये । युद्धभूमि में जहाँ समरसिंह खड़ा है उसको देखकर ये सब अग्नि के समान तमतमा उठे । शस्त्रों को सँभालते हुए श्रीकृष्ण के ये प्रवीण योद्धा समरसिंह पर चारों ओर से टूट पड़े । उसी समय उस बलवान ने धनुष को खींचा और क्षण भर में श्रीकृष्ण के उन चारों राजाओं को मार गिराया ॥ १२९६ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जब चारों वीरगण युद्ध में मारे गये तो अन्य वीरों से श्रीकृष्ण ने कहा कि अब कौन ऐसा बलवान है, जो सामने जाकर युद्ध करेगा और इस अत्यन्त बलवान समरसिंह पर टूटकर अभय होकर लड़ते हुए उसे मार गिराएगा । श्रीकृष्ण ने सबसे पुकारकर कहा कि कोई ऐसा है जो शत्रु को निष्प्राण कर सके ॥ १२९७ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण की सेना में एक राक्षस था जो शत्रु की ओर चल पड़ा । उसका नाम क्रूरध्वज था । उसने जाकर समरसिंह से कहा कि मै तुम्हें मार रहा हूँ तुम अपने-आप को सँभालो । इतना कहकर उसके धनुष-बाण सँभाला और समरसिंह को बाण से इस प्रकार मार गिराया, जैसे समरसिंह कई दिनों का मरा हुआ पड़ा हो ॥ १२९८ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार क्रूरध्वज ने युद्ध में क्रोधित होकर समरसिंह को मार डाला और अब उसने शक्तिसिंह के वध के लिए अपना पाँव जमा दिया १२९९ क्रूरध्वज उवाच कवित्त युद्ध

॥ क्रूरधुज बाच ॥ ॥ कबित्तु ॥ गिर सो दिखाई देत क्रूरधुज आहव मै कहै कबि राम शत्र बध को चहत है। सुनि रे सकतिसिंघ मार्‌यो जिउँ समरसिंघ तैसे हउ हनिहो तू हम सों खहत है। ऐसे कहि गदा गहि बडे ब्रिछ के समान लीन असि पान अउर शस्त्रनि सहत है। बहुरो पुकार दैत कह्यो है निहार न्रिप तो मै कोऊ घरी पल जीवन रहत है ॥ १३०० ॥ ॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ सुनि अरि शबदि बोल्यो कोपु बढाइ। जानत हो घन क्वार को गरजत बरस न आइ ॥ १३०१ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै तिह बात निसाचर जी अपने अति कोप भर्‌यो। असि लै तिह सामुहि आइ अर्‌यो सकतेस बली नही नैकु डर्‌यो। बहु जुद्ध कै अंतरिध्यान भयो नभि मै प्रगट्यो मुख ते उचर्‌यो। अब तोहि सँघारत हौ पल मै धनु बान सँभारकै पान धर्‌यो ॥ १३०२ ॥ ॥ दोहरा ॥ बानन की बरखा करत (मू०ग्रं०४२६) नभ ते उतर्‌यो क्रूर। पुनि आयो रनभूम मै अधिक लर्‌यो बर सूर ॥१३०३॥ ॥ सवैया ॥ बीरन मारकै दैत बली अपने चित मै अति ही हरख्यो है। ही तजि

भूमि में क्रूरध्वज पर्वत के समान दिखाई दे रहा है। कवि राम का कथन है कि वह शत्रुओं का वध करने के लिए तत्पर है और कह रहा है कि शक्तिसिंह जिस प्रकार मैंने समरसिंह को मारा है, उसी प्रकार तुमको भी मार डालूँगा, क्योंकि तुम मुझसे भिड़ रहे हो। इस प्रकार कहकर वृक्ष के समान गदा और तलवार हाथ में लेकर वह शत्रुओं के शस्त्रों के वार सह रहा है। दैत्य क्रूरध्वज पुनः पुकारकर राजा शक्तिसिंह से कह रहा है कि हे राजा! तुम्हारे में अब घड़ी दो घड़ी के लिए ही प्राण शेष हैं ॥ १३०० ॥ ॥ दोहा ॥ शक्तिसिंह शत्रु के शब्दों को सुनकर क्रोध से बोला कि मैं जानता हूँ कि क्वार महीने के बादल गरजते हैं पर बरसते नहीं ॥ १३०१ ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर निशाचर क्रुद्ध हो उठा और इधर शक्तिसिंह भी कृपाण लेकर उसके सामने अभय होकर आ डटा। बहुत युद्ध के पश्चात् वह राक्षस अन्तर्ध्यान होकर आकाश में प्रगट होकर यह कहने लगा: कि शक्तिसिंह! अब मैं तुम्हारा संहार करता हूँ। इतना कहकर उसने धनुष-बाण सँभाल लिया ॥ १३०२ ॥ ॥ दोहा ॥ बाणों की वर्षा करता क्रूरध्वज आकाश से उतरा और पुनः युद्धभूमि में आकर वह महाबली और भीषण रूप से लड़ा १३०३ सवैया वीरों को मारकर वह बलवान दैत्य अपने मन में अत्यन्त प्रसन्न हुआ और दृढ़ मन से शक्तिसिंह का वध करने के लिए

शंक निशंक भयो शकतेश सँघारबे को सरख्यो है। जिउँ चपला चमकै दमकै वरि काँप लियो कर मै करख्यो है। मेघ परे बर बूंदन जिउँ सर जाल करालनि तिउ बरख्यो है ॥१३०४॥ ॥ सोरठा ॥ पग न टर्यो बरबीर सकतसिंघ धुज क्रूर ते। अचल रह्यो रनधीर जिउँ अंगद रावन सभा ॥ १३०५ ॥ ॥ सवैया ॥ भाजत नाहिन आहव ते शकतेश महा बलवंत सँभार्यो। जाल जितो अरि के सर को तबही अगनायुध साथ प्रजार्यो। पान लयो धनु बान रिसाइकै क्रूर धुजा सिर काटि उतार्यो। ऐसे हन्यो रिप जिउँ मघवा बलकै ब्रितरासुर दैत सँघार्यो ॥ १३०६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ जब क्रूरधुज मार्यो भूम गिराइ। जिउँ बरखा रित के समै दउर परे अरराइ ॥ १३०७ ॥ ॥ सवैया ॥ काक धुजा निज भ्रात निहारि हन्यो तबही रिसकै बहु धायो। दाँत किए कई जोजन लउ गिर सो तिह आपनो रूप बनायो। रोम किए तरु से तन मै कर आयुध लै रनि भूमहि आयो। स्री शकतेश तन्यो कर चाँप सु एकही बान सिउ मार गिरायो ॥ १३०८ ॥

आगे बढ़ा। जिस प्रकार बिजली चमकती है, उसके हाथ में धनुष चंचल हो उठा तथा उसकी टंकार सुनाई देने लगी। जिस प्रकार बादलों से बूंदें बरसती हैं उसी प्रकार बाण बरसने लगे ॥ १३०४ ॥ ॥ सोरठा ॥ क्रूरध्वज दैत्य से शक्तिसिंह एक पग भी पीछे न हटा और जिस प्रकार रावण की सभा में अंगद डटा रहा उसी प्रकार वह भी अटल रहा ॥ १३०५ ॥ ॥ सवैया ॥ महान् बलशाली शक्तिसिंह युद्धस्थल से नहीं भागा और शत्रु द्वारा बाणों का जो भी व्यूह बनाया गया उसे उसने अपने अग्निबाणों से काट डाला। क्रोधित होकर उसने धनुष-बाण उठा लिया और क्रूरध्वज का सिर काटकर फेंक दिया। उसने दैत्य को ऐसे मारा मानो इन्द्र ने वृत्रासुर को मार डाला ॥ १३०६ ॥ ॥ दोहा ॥ जब शक्तिसिंह ने क्रूरध्वज को मार गिराया तो जिस प्रकार वर्षा में भीगने से बचने के लिए लोग इधर-उधर दौड़ते हैं, उसी प्रकार शत्रु भी बचाव के लिए भागने लगे ॥ १३०७ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने भाई को मरा हुआ देखकर काकध्वज क्रोधित होकर आगे बढ़ा। उसने कई योजन तक अपने लम्बे दाँत बना लिये और पर्वताकार अपना रूप बना लिया। अपने शरीर पर उसने वृक्षों के समान बाल उगा लिये तथा हाथ में शस्त्र लेकर रणभूमि में आ गया। शक्तिसिंह ने धनुष खींचकर एक ही बाण से उसे मार गिराया ॥ १३०८ ॥ ॥ सवैया ॥ दैत्यों की सेना का स्वामी वहाँ खड़ा था

॥ सवैया ॥ दैत चमूँपति ठाढो हुतो तिह को बर कै न्रिप ऊपर धायो। राछस सैन अछूहन लै अपने मन मै अति कोप बढायो। बान बनाइ चढ्यो रन कौ तिह आपनो नामु कुरूप कहायो। ऐसे चल्यो अरिके बध को मनो साबन को उनए घनु आयो ॥ १३०९ ॥ ॥ सवैया ॥ हेरि चमूँ बहु शत्रन की शकतेश बली मन रोस भयो है। धीरज बाँधि अयोधन माँझि सरासनि बान सु पान लयो है। त्रास सभै तजिकै लजिकै अरिके दल के समुहे सु गयो है। दानव मेघ बिडारन को रन मै मनो बीर समीर भयो है ॥ १३१० ॥ ॥ सवैया ॥ अंतरिध्यान कुरूप भयो नभि मै तिह जाइकै बैन उचारे। जैहो कहा हम ते भजिकै गज बाज अनेक अकाश ते डारे। रूख पखान सिला रथ सिंघ धराधर रीछ महाँ अहि कारे। आन परे रनभूमि मै जोर सु भूप बच्यो सिगरे दबि मारे ॥ १३११ ॥ ॥ सवैया ॥ जेतक डारि (मू०ग्रं०४२७) दए न्रिप पै गिर तेतक बानन साथ निवारे। जे रजनीचर ठाढे हुते सकतेस बली तिह ओर पधारे। पान क्रिपान लए बलवान सु घाइल एक करे इक मारे। दैंत चमूँ न बसात कछू अपने छल छिद्रनि कै सभ

वह भी क्रोधित होकर शक्तिसिंह पर टूट पड़ा। वह राक्षसों की अक्षौहणी सेना को लेकर मन में अत्यन्त क्रोधित होकर बढ़ा। युद्धस्थल में आनेवाले इस दैत्यराज का नाम कुरूप था। यह इस प्रकार शत्रु का विनाश करने चला मानो सावन के बादल उमड़ रहे हों ॥ १३०९ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रुओं की चतुरंगिणी सेना को देखकर बली शक्तिसिंह क्रोध से भर उठा, पर युद्धस्थल में धैर्य रखकर उसने धनुष-बाण अपने हाथ में लिया। वह शत्रुदल के सामने गया और उसे देखते ही डरकर सभी भागने लगे। दानव रूपी बादलों को खंडित करने के लिए वह वीर पवन के समान दिखाई पड़ रहा था ॥ १३१० ॥ ॥ सवैया ॥ कुरूप अन्तर्ध्यान हो गया और आकाश में जाकर कहने लगा कि शक्तिसिंह! तुम मुझसे बचकर कहाँ जाओगे ? यह कहकर उसने आकाश से हाथी, घोड़े, वृक्ष, पत्थर, शिलाएँ, रथ, सिंह, पर्वत रीछ और काले नाग बरसाये। ये सब धरती पर आ गिरे, जिससे शक्तिसिंह के अतिरिक्त सभी दबकर मर गये ॥ १३११ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा पर जितनी भी चीजें फेंकी गयीं उन्होंने अपने बाणों के साथ उन सबका परिहार कर दिया और जिधर दैत्य खड़े थे महाबली शक्ति से उस ओर पहुँचा। इस ने हाथ मे कृपाण लेकर कुछ को तो घायल कर दिया और बहुतों को

हारे ॥ १३१२ ॥ ॥ स्वैया छंद ॥ न्रिप के बहुरो धन बान लयो रिसि साथ कुरूप के बीच हने । जेऊ जीवत थो करि आयुध लै अरिराइ परे बरबीर घने । जेऊ आन लरे बिनु प्रान करे रुप ठाढे लरै केऊ स्रउन सने । मन यों उपमा उपजी रितराज समै द्रुम किंसक लाल बने ॥ १३१३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ तिहु समर मै बहुरो शस्त्र सँभार । असुर सैन मै भट प्रबल ते बहु दए सँघार ॥ १३१४ ॥ ॥ सवैया ॥ बिक्रतानन नाम्र कुरूप को बांधव कोप भयो अस पान गह्यो । कबि स्याम कहै रन मै तिहको मन मै अरि के बधबो को चह्यो । सु धवाइकै स्यंदन आयो तहाँ न टर्यो वह जुद्ध ही को उमह्यो । सु न्रिपेश कतेश सँभार सँघारत हो तुमको इह भांत कह्यो ॥ १३१५ ॥ ॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ यहि बचनि सुनि लीनी सकति उठाइ । चपला सी रबि किरन सी अरि तक दई चलाइ ॥ १३१६ ॥ ॥ सवैया ॥ लाग गई बिक्रतानन के उर चीर कै ता तन पार भई । जिह ऊपरि कंचन की सभ आक्रित है सभ ही सोऊ लोह भई । लसकै उर राकश के मध यों उपमा तिह की कबि भाख दई । मनो राहु

मार डाला । दैत्य-सेना से कुछ करते नहीं बन रहा था और वह अपने छल-प्रपंच के कारण ही हार रही थी ॥ १३१२ ॥ ॥ सवैया छंद ॥ राजा ने क्रोधित हो धनुष-बाण हाथ में ले कुरूप को लक्ष्य बनाया जो हाथों में शस्त्र ले जीवित थे वे अनेकों वीर तड़फड़ाने लगे । जो लड़ने के लिए सामने आया वह निष्प्राण हो गया और अनेकों रक्त से सने खड़े दिखाई दे रहे थे । वे ऐसे लग रहे थे मानो वसन्त ऋतु में केसू के लाल फूल लहरा रहे हों ॥ १३१३ ॥ ॥ दोहा ॥ उस युद्ध में शक्तिसिंह ने शस्त्र सम्हालकर असुर सेना के बहुत से शूरवीरों को मार डाला ॥ १३१४ ॥ ॥ सवैया ॥ विक्रतानन नामक कुरूप के भाई ने क्रोधित हो तलवार हाथ में पकड़ी और युद्धभूमि में उसने शत्रु को मार डालने का उपक्रम किया । रथ हँकवाकर युद्ध का उत्साह मन में लिये हुए वह वहाँ पहुँचा और कहने लगा कि राजा ! तुम अपनी कृपाण सम्हालो मैं तुम्हारा संहार कर रहा हूँ ॥ १३१५ ॥ ॥ दोहा ॥ शक्तिसिंह ने यह सुन एक शक्ति अपने हाथ में पकड़ी और शत्रु को देखकर सूर्य की किरणों के समान तीव्रगामी यह शक्ति उस ओर चला दी ॥ १३१६ ॥ ॥ सवैया ॥ वह शक्ति विक्रतानन के हृदय को चीरती हुई उसके शरीर से पार हो गई । जिस शरीर पर कंचन की आकृतियाँ बनी हुई थी वह सब हो गया वह

बिचारकै पूरब बैर को सूरज की करि लील लई ॥ १३१७ ॥
॥ दोहरा ॥ उर बरछी के लगत ही प्रान तजे बलवान ।
सभ दैतन को मन डर्‌यो हाहा कियो बखान ॥ १३१८ ॥
॥ दोहरा ॥ बिक्रतानन जब मारयो सकतिसिंघ रनधीर । सो
कुरूप अविलोक कै सहि न सक्यो दुखु बीर ॥ १३१९ ॥
॥ सवैया ॥ बिक्रतानन को बध पेख कुरूप सु काल को प्रेर्‌यो
अकाश ते आयो । बान कमान क्रिपान गदा गहि लै कर मै
अति जुद्ध मचायो । स्री सकतेस बडो धनु तानकै बान महाँ
अरि ग्रीव लगायो । सीस पर्‌यो कटिकै धरनी सु कबंध लए
असि को रन धायो ॥ १३२० ॥ ॥ कबियो बाच ॥
॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ के सामुहे गयो लिए करवार । एक
बान न्रिप ने (मू०ग्रं०४२८) हन्यो गिरयो भूमि मझारि ॥१३२१॥
॥ दोहरा ॥ जब कुरूप सैना सहित भूपति दयो सँघार । तब
जादव लख समर मै कीनो हाहाकार ॥ १३२२ ॥ बहुतु लर्‌यो
अर बीर रनि कह्यो स्याम सो राम । किउ न लरै कह्यो
क्रिशन जू सकतिसिंघ जिह नाम ॥ १३२३ ॥ ॥ चौपई ॥ तब

शक्ति राक्षस के शरीर में गड़ी ऐसी लग रही थी मानो राहु ने अपनी शत्रुता को स्मरण कर सूर्य को निगल लिया हो ॥ १३१७ ॥ ॥ दोहा ॥ उस बरछी के लगते ही उस बलवान ने प्राण त्याग दिए तथा सब बलवान मन में डरकर हाहाकार करने लगे ॥ १३१८ ॥ ॥ दोहा ॥ जब शूरवीर शक्तिसिंह ने विक्रतानन को मार डाला तो अपने भाई के मरने का दुःख कुरूप सह न सका ॥ १३१९ ॥ ॥ सवैया ॥ विक्रतानन के वध को देखकर काल से प्रेरित होकर कुरूप आकाश में गया और उसने बाण, कृपाण, गदा आदि हाथ में लेकर भीषण युद्ध मचा दिया । शक्तिसिंह ने भी बहुत बड़ा धनुष तानकर शत्रु के गले का निशाना लगाया । शत्रु का सिर कटकर धरती पर गिर पड़ा और शत्रु का कबन्ध कृपाण हाथ में पकड़कर युद्धभूमि में दौड़ने लगा ॥१३२०॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ शक्तिसिंह के सामने राजा तलवार लेकर पहुँचा, परन्तु उसने उसको एक बाण से भूमि पर मार गिराया ॥ १३२१ ॥ ॥ दोहा ॥ जब सेना-सहित कुरूप और राजा को शक्तिसिंह ने मार डाला तो यादव सेना यह देख युद्ध में हाहाकार करने लगी ॥ १३२२ ॥ बलराम ने कृष्ण से कहा कि यह वीर बहुत देर से लड़ रहा है । तब श्रीकृष्ण ने कहा कि वह क्यों न लड़े, क्योंकि उसका नाम ही शक्तिसिंह है ॥ १३२३ ॥ चौपाई तब श्रीकृष्ण ने सबसे यह कहा कि शक्तिसिंह का वध हम लोगों

हरिजू सभ सो इम कह्यो । सकतिसिंघ बध हम ते रह्यो ।
इन अति हित सो चंड मनाई । ताते हमरी सैन खपाई ॥१३२४॥
॥ दोहरा ॥ ताते तुमहूं चंड की सेव करहु चितु लाइ । जीतन
को बरु देइगी अरि तब लीजहु घाइ ॥ १३२५ ॥ जागत
जाकी जोति जग जल थल रही समाइ । ब्रहम बिशन हरि रूप
मै त्रिगुनि रही ठहराइ ॥ १३२६ ॥ ॥ सवैया ॥ जाकी कला
बरतै जग मै अरु जाकी कला सभ रूपन मै । अरु जाकी कला
बिमला हरि के कमलापति के कमला तन मै । पुनि जाकी
कला गिर रूखन मै ससि पूखन मै मघवा घन मै । तुमहूं नही
जानी भवानी कला जग मानी को ध्यान करो मन मै ॥१३२७॥
॥ दोहरा ॥ सकतिसिंघ बर सकति सो माँग लयो भगवान ।
ताही के परसादि ते रन जीतत नही हान ॥ १३२८ ॥
॥ दोहरा ॥ शिव सूरज सस सचीपति ब्रहम बिशन सुर कोइ ।
जो इह सो रिसकै लरै जीत न जैहै सोइ ॥ १३२९ ॥
॥ सवैया ॥ जउ हरि आइ भिरै इह सो नही देखत हों बलु है
तिन मो । चतुरानन अउर खड़ानन बिशन घनो बल है सु

से नहीं हो सकेगा, क्योंकि इसने अत्यन्त प्रेम-भाव से चण्डी की साधना की है, इसलिए इसने हमारी सारी सेना को नष्ट कर दिया है ॥ १३२४ ॥ ॥ दोहा ॥ इसलिए तुम भी मन लगाकर चण्डी की सेवा करो जिससे वह जीतने का वरदान देगी और तब तुम शत्रु को मार सकोगे ॥१३२५॥ जिसकी जगमगाती ज्योति जल और स्थल तथा सम्पूर्ण संसार में समाहित है वही ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश में त्रिगुणात्मक रूप से अवस्थित है ॥ १३२६ ॥ ॥ सवैया ॥ जिसकी कला सारे संसार और सभी स्वरूपों में है, जिसकी कला पार्वती, विष्णु एवं लक्ष्मी में विराजमान है, पुनः जिसकी कला पर्वत, वृक्ष, सूर्य, चन्द्र, इन्द्र और बादलों में भी है। तुमने उस भवानी को नहीं माना, इसलिए अब उसका ध्यान करो ॥ १३२७ ॥ ॥ दोहा ॥ शक्तिसिंह ने अपनी साधना के बल पर भगवान से वरदान प्राप्त कर लिया है और उसी के प्रताप से वह युद्ध जीत रहा है तथा उसकी कोई हानि नहीं हो रही है ॥ १३२८ ॥ ॥ दोहा ॥ शिव, सूर्य, चन्द्रमा, इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु अर्थात् कोई भी देवता इससे युद्ध करेगा वह इसको जीत नहीं सकेगा ॥ १३२९ ॥ ॥ सवैया ॥ यदि शिव भी इससे भिड़ जायँ तो उनमें भी इतना बल नहीं कि वे इससे जीत सकें। ब्रह्मा, कार्तिकेय, विष्णु आदि जिनमें बहुत बल माना जाता है तथा भूत पिशाच देवता और असुर आदि की भी इसके बल के सामने

कह्यो जिन मो। पुनि भूत पिसाच सुरादिक जे असुरादिक है गनती किन मो। जदुबीर कह्यो सभ बीरन सो सु इतो बल भूप धरै इन मो ॥ १३३० ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥
॥ सवैया ॥ जुद्ध करो तुम जाहु उतै इत हउ ही भवानी को जाप जपैहउ। ऐसे कह्यो जदुबीर अबै अति ही हित भाव ते थाप थपैहउ। ह्वैकै प्रतच्छ कहै बर माँग हनो सकतेस इहै बरु लैहउ। तउ चड़कै अपुने रथ पै अब ही रन मै इह को बध कैहउ ॥ १३३१ ॥ ॥ कबियो बाच ॥
॥ सवैया ॥ बीर पठे जदुबीर उतै इत भूमि मै बैठ शिवा जपु कीनो। अउर दई सुध छाड सभै तब ताही के ध्यान बिखै मन दीनो। चंड तबै परतच्छ भई बरु माँगहु जो मन मै जोई चीनो। (मू०ग्रं०४२६) या अरि आजु हनो रन मै घनस्याम जू माँग इहै बर लीनो ॥ १३३२ ॥ ॥ सवैया ॥ यों बर पाइ चड्यो रथ तै हरि जू मन बीच प्रसंनि भयो। जपु कै जु भवानी ते स्याम कहै अरि मारन को बर माँग लयो। सभ आयुध लै बलबीर बली हू के साम्हि तउ जदुबीर गयो। मनो जीत को अंकुर जात रह्यो हुतो या बर ते उपज्यो सु नयो ॥१३३३॥

कोई गिनती नहीं। श्रीकृष्ण ने सब यादवों से कहा कि इतना बल इस राजा में है ॥ १३३० ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ तुम जाओ इससे युद्ध करो और मैं स्वयं देवी का जाप करता हूँ। मैं अत्यन्त भावनापूर्ण तरीक़े से देवी की स्थापना करूँगा जिससे वह प्रत्यक्ष होकर मुझसे वर माँगने को कहेगी और मैं शक्तिसिंह का वध करने का वर माँग लूँगा। तब मैं रथ में सवार हो तत्क्षण इसका वध कर दूँगा ॥१३३१॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने उस तरफ़ तो यादवों को युद्ध करने के लिए भेज दिया तथा इधर स्वयं भूमि पर बैठ चण्डी का जाप करने लगे। अपनी सारी सुधि-बुधि भुलाकर देवी के ध्यान में ही अपना मन लगा दिया। तब देवी ने प्रत्यक्ष हो कहा कि जो वर माँगना हो माँग लो। इस पर श्रीकृष्ण ने यह माँगा कि युद्धस्थल में आज शक्तिसिंह का नाश हो ॥ १३३२ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार वर प्राप्त कर प्रसन्न मन से श्रीकृष्ण रथ पर सवार हुए। अपने जप के कारण कवि श्याम का कथन है कि उन्होंने शत्रु को मारने का वर प्राप्त कर लिया। सभी शस्त्रों को ले श्रीकृष्ण उस महाबली के सामने गए और जो जीत की आशा समाप्त हो चली थी इस वरदान के कारण उसमें नया अंकुर फूट निकला १३३३ दोहा युद्धभूमि मे शक्तिसिंह ने बहुत से वीरों को

॥ दोहरा ॥ शकतिसिंघ उत्त समर मै बहुतु हने बर सूर। तब ही तिन के तनन सिउ भूमि रही भरपूर ॥ १३३४ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्धु करै शकतेश बली तिह ठाँ हरि आइ कै रूपु दिखायो। जात कहा रहु रे थिर ह्वै अब हउ तुम पै बल कै इति आयो। कोप गदा कर लै घनस्याम सु शत्र के सीस पै घाउ लगायो। प्रान तज्यो मन चंड भज्यो तिह को तन ताहि के लोक सिधायो ॥ १३३५ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रान चल्यो तिह को तब ही जब ही तन चंड के लोग पधार्‍यो। सूरज इंद्र सनादिक जे सुर हूँ मिलि कै जस ताहि उचार्‍यो। ऐसो न आगे लर्‍यो रन मै कोऊ आपनी बैसि मै नाहि निहार्‍यो। स्री शकतेश बली धन है हरि सो लरिकै परलोक सिधार्‍यो ॥१३३६॥ ॥ चौपई ॥ जबै चंड को हरि बरु पायो। शकतिसिंघ को मार गिरायो। अउर शत्र बहु गए पराई। रबि निहार ज्यो तम न रहाई ॥ १३३७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे दुआदस भूप शकतिसिंघ सुधा बधहि धिआइ समापतम ॥

मार गिराया और उनके मृत शरीरों से धरती भर गई ॥ १३३४ ॥ ॥ सवैया ॥ जहाँ शक्तिशाली शक्तिसिंह युद्ध कर रहा था, श्रीकृष्ण वहाँ आ पहुँचे और कहा कि अब तुम रुक जाओ, कहाँ जा रहे हो। मैं प्रयत्नपूर्वक यहाँ आया हूँ। क्रोधित हो श्रीकृष्ण ने गदा से शत्रु के सिर पर वार किया और उसके साथ ही मन में चण्डी का स्मरण करते हुए शक्तिसिंह ने प्राण त्याग दिया। शक्तिसिंह का शरीर भी चण्डी के लोक की ओर चल पड़ा ॥ १३३५ ॥ ॥ सवैया ॥ चण्डी के लोक की ओर शरीर के जाते ही उसके प्राण भी चल पड़े और उसके यश का वर्णन सूर्य, इन्द्र, सनक, सनन्दन आदि देवगण भी करने लगे। वे सब कहने लगे कि हमने अपनी आयु में ऐसा लड़नेवाला नहीं देखा। महाबली शक्तिसिंह धन्य है जो श्रीकृष्ण से लड़कर परलोक में पहुँचा है ॥ १३३६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब चण्डी से श्रीकृष्ण ने वर प्राप्त किया, तब उन्होंने शक्तिसिंह को मार गिराया। अन्य बहुत से शत्रु ऐसे भाग खड़े हुए जैसे सूर्य को देखकर अंधकार समाप्त हो जाता है ॥ १३३७ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबन्ध में द्वादस भूप शक्तिसिंह-सहित-वध अध्याय समाप्त ॥

अथ पंच भूप जुद्ध कथन ॥

॥ दोहरा ॥ असमसिंघ जससिंघ पुनि इंद्रसिंघ बलवान । अभैसिंघ सूरो बडो इच्छासिंघ सुर ग्यान ॥ १३३८ ॥ ॥ दोहरा ॥ चमूं भजी भूपन लखी चले जुद्ध के काज । अहंकार पाँचो कियो अजु हनिहै जदुराज ॥ १३३९ ॥ उत ते आयुध लै सभै आए कोप बढाइ । इत ते हरि समुहे भए स्यंदन शीघ्र धवाइ ॥ १३४० ॥ ॥ सवैया ॥ सुभटेस महाँ बलवंत तबै जदुबीर की ओर ते आगे ही धायो । पाँच ही बान लए इह पान बडो धनु तानकै कोप बढायो । एक ही एक हन्यो सर पाँचन भूपन को तिन मार (मू०ग्रं०४३०) गिरायो । तूल जिउँ जारि दए न्रिप पाँच मनो न्रिप आँच सु बेख बनायो ॥ १३४१ ॥ ॥ दोहरा ॥ सुभटसिंघ रुप समर मै किय प्रचंड बल जासु । नरपति आए पाँच बर कीनो तिन को नासु ॥ १३४२ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे पाँच भूप बधह ॥

पंचभूप-युद्ध-कथन

॥ दोहा ॥ असमसिंह, जससिंह, इन्द्रसिंह, अभयसिंह और इच्छासिंह आदि बलवान एवं ज्ञानवान शूरवीर वहाँ युद्धस्थल में थे ॥ १३३८ ॥ ॥ दोहा ॥ सेना को भागते हुए जब इन राजाओं ने देखा तो युद्ध करने के लिए ये चल पड़े। पाँचों ने ही अहंकारपूर्वक कहा कि आज यदुराज कृष्ण को अवश्य ही मार डालना है ॥ १३३९ ॥ उधर से शस्त्र हाथ में लेकर क्रोधित होकर सब आगे आये और इधर से श्रीकृष्ण रथ हँकवाकर शीघ्र ही उनके सामने जा पहुँचे ॥ १३४० ॥ ॥ सवैया ॥ महाबलवान सुभटसिंह उसी समय श्रीकृष्ण की ओर से दौड़े और पाँच बाण हाथ में लेकर भारी धनुष को क्रोधित होकर उसने ताना। एक-एक बाण से उसने पाँचों राजाओं को मार डाला। ये पाँचों राजा तिनके के समान जल उठे और ऐसा लग रहा था मानो सुभटसिंह अग्नि की ज्वाला हो ॥ १३४१ ॥ ॥ दोहा ॥ सुभटसिंह ने युद्धस्थल में स्थिर होकर प्रचंड होकर युद्ध किया और जो पाँचों राजा आये थे उनका नाश कर दिया ॥ १३४२ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबन्ध में पंचभूप-वध समाप्त ॥

अथ दस भूप जुद्ध कथन ॥

॥ दोहरा ॥ अउर भूप दस कोप कै धाइ संग लै बीर । जुद्ध बिखै दुरमद बडे महाँरथी रनधीर ॥ १३४३ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत ही मिलकै दसहूँ न्रिप स्री सुभटेस को बान चलाए । नैनन हेरि सोऊ हरि बीर लयो धनु बान सो काटि गिराए । उत्तरसिंघ को सीस कट्यो तन उज्जलसिंघ के घाइ लगाए । उद्दमसिंघ हन्यो बहुरो असि लै कर संकरिसिंघ सिधाए ॥ १३४४ ॥ ॥ दोहरा ॥ ओजसिंघ को हत कियो ओटसिंघ को मार । उद्धसिंघ उसनेस अरु उत्तरसिंघ संघार ॥ १३४५ ॥ ॥ दोहरा ॥ भूप नवो जब इन हने एक बच्यो संग्राम । नहि भाज्यो बलवंत सो उग्रसिंघ तिह नाम ॥ १३४६ ॥ ॥ सवैया ॥ उग्रबली पड़ मंत्र महा सर स्री सुभटेस की ओर चलायो । लाग गयो तिह के उर मै बरकै तन भेदकै पार परायो । भूम पर्‌यो मर बान लगे तिह को जसु यों कबि स्याम सुनायो । भूप हने किए पाप घने जम ने उड या मनो नाग डसायो ॥ १३४७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जादव एक

दस भूप-युद्ध-कथन

॥ दोहा ॥ अन्य दस राजा क्रोधित होकर वीरों को साथ लेकर चले। ये सब महारथी और युद्ध में हाथियों के समान मस्त रहनेवाले व्यक्ति थे ॥ १३४३ ॥ ॥ सवैया ॥ दसों राजाओं ने आते ही सुभटसिंह पर बाण चलाया और इस वीर ने यह देखकर अपने धनुष-बाण से उन बाणों को काट गिराया। उत्तरसिंह का सिर कट गया और उज्जलसिंह घायल हो गया। उद्दमसिंह मारा गया तो कृपाण लेकर शंकरसिंह चल पड़ा ॥ १३४४ ॥ ॥ दोहा ॥ ओटसिंह को मारकर ओजसिंह का वध किया तथा उद्धसिंह, उष्णेश सिंह और उत्तरसिंह आदि को भी मार डाला ॥ १३४५ ॥ ॥ दोहा ॥ जब इन्होंने नौ राजाओं को मार डाला जो कि युद्ध से नहीं भागा। इसका नाम उग्रसिंह था ॥ १३४६ ॥ ॥ सवैया ॥ महाबली उग्रसिंह ने मंत्र पढ़कर एक बाण सुभटसिंह की तरफ़ चलाया जो कि उसके हृदय में जा लगा तथा शरीर को फाड़कर बाहर निकल गया। वह मरकर भूमि पर गिर पड़ा और कवि श्याम के कथनानुसार उसने मानो अनेकों राजाओं को मारने का पाप किया हो तो यम रूपी इस तीर अथवा नाग ने उसे डस लिया ॥ १३४७ ॥

मनोजसिंघ तब निकस्यो बरबीर । उग्रसिंघ पर क्रोध कर चल्यो महाँ रनधीर ॥ १३४८ ॥ ॥ सवैया । जादव आवत पेख बली अरि बीर महाँ रनधीर सँभार्यो । लोह मई गहओ बरछा गहि कै बल सो करि कोप प्रहार्यो । लागत सिंघ मनोज हन्यो तिह प्रानन लै जमधाम पधार्यो । मार कै ताहि लियो धनु बान बली बलुकै बल को ललकार्यो ॥ १३४९ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत शत्रु पेख हलायुध कोप कियो गहि मूसर धायो । आपसि मै बलवंत अरै दोऊ स्याम कहै अति जुद्ध मचायो । उग्र नरेश के लाग गयो सिर मूसल दाइ बचाइ न आयो । भूमि गिर्यो मर कै जद ही मुसली अपना तब संख बजायो ॥ १३५० ॥ (मू०ग्रं०४३१)

॥ इति दस भूप सैना सहित बधहि ध्याइ ॥

दस भूप सहत अनूपसिंघ जुद्ध कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ दस भूपन अविलोकियो उग्र हन्यो बरबंड । जुद्ध काज आवित भए जिह बल भुजा प्रचंड ॥ १३५१ ॥

॥ दोहा ॥ तब एक मनोजसिंह नामक यादव निकला और क्रोधित होकर उग्रसिंह पर टूट पड़ा ॥ १३४८ ॥ ॥ सवैया ॥ महाबली यादव को आते देखकर रणधीर उग्रसिंह सँभला और उसने लोहे का भाला क्रोध से पकड़कर बलपूर्वक उससे प्रहार किया । वह बरछा लगते ही मनोजसिंह का अन्त हो गया और वह प्राण लेकर यमलोक पहुँच गया । उसको मारकर उग्रसिंह ने महाबली बलराम को ललकारा ॥ १३४९ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु को आते हुए देखकर बलराम मुगदर पकड़कर उस पर टूट पड़े । ये दोनों वीर आपस में भीषण रूप से लड़े । उग्रसिंह दावँ न बचा सका और मुगदर उसके सिर पर जा लगा । वह मरकर भूमि पर जा पड़ा और तब बलराम ने शंखनाद किया ॥ १३५० ॥

॥ दस भूप सेना-सहित-बध अध्याय समाप्त ॥

दस भूप सहित अनूपसिंह-युद्ध-कथन

॥ दोहा ॥ दस राजाओं ने जब देखा कि महाबली उग्रसिंह मारा गया तो प्रचण्ड भुजाओं वाले ये राजा युद्ध करने के लिए आगे बढ़े ॥ १३५१ ॥

।। सवैया ।। अनुपमसिंघ अपूरबसिंघ चले रन कउ मन कोपु बढायो । आगे हुइ कंचनसिंघ चल्यो बल आवत को तिह बान लगायो । स्यंदन हूँ ते गिर्यो म्रित हुइ तब जोत सबूह तहाँ ठहरायो । बान लग्यो हनुमान किधों रवि को फल जान कै भूमि गिरायो ।। १३५२ ।। ।। दोहरा ।। कोपसिंघ को हत कियो कोटि सिंघ को मार । अउर अपूरबसिंघ हत्यो मोहसिंघ संघार ।। १३५३ ।। ।। चौपई ।। कटकसिंघ को पुन हन दयो । क्रिशनसिंघ को तब बध कयो । कोमलसिंघहि बान लगायो । बेग ताहि जमधाम पठायो ।। १३५४ ।। पुन कनकाचलसिंघ सँघार्यो । अनुपमसिंघ नरन ते हार्यो । बल कै आन सामुहे भयो । उत ते राम ओर सो गयो ।। १३५५ ।। ।। दोहरा ।। बली अनूपमसिंघ अति बल मै लर्यो रिसाइ । बहुतु बिशन भट जुद्ध करि जमपुर दए पठाइ ।। १३५६ ।। ।। सवैया ।। सिंघ क्रिता शत्रु आहव मै कबि राम कहै रिस कै अति धायो । आइ कै सिंघ अनूपहि सिउ करि मै असि लै तब जुद्ध मचायो । तान लयो धनु बान महाँ बरकै उरसिंघ अनूप के लायो । लागत प्रान चल्यो तब ही रबिमंडल भेद कै पार परायो ।। १३५७ ।। ।। सवैया ।। ईशरसिंघ सकंध बली सु

।। सवैया ।। अनुपमसिंह, अपूर्वसिंह क्रोधित होकर युद्ध के लिए चले । इनमें से कंचनसिंह आगे-आगे चला और उसको आते ही बलराम ने बाण मारा। वह मृतक होकर रथ से गिर पड़ा परन्तु उसकी आत्मा वहीं ज्योतिस्वरूप होकर ठहरी रही । ऐसा लग रहा था मानो हनुमान ने सूर्य को फल जानकर बाण मारकर नीचे गिरा दिया हो ।। १३५२ ।। ।। दोहा ।। कोपसिंह कोटिसिंह मार डाले गए । अपूर्वसिंह भी मोहनसिंह के बाद मार डाला गया ।। १३५३ ।। ।। चौपाई ।। तब कटकसिंह और कृष्णसिंह का वध कर दिया गया । कोमल सिंह के बाण लगा और वह यमपुरी चला गया ।।१३५४।। फिर कनकाचलसिंह का संहार हुआ और अनुपमसिंह यादवों से लड़ते-लड़ते थक गया । तब वह दूसरी ओर से बलराम की तरफ़ आकर लड़ने लगा ।। १३५५ ।। ।। दोहा ।। बली अनुपमसिंह बलराम से क्रोधित होकर लड़ा और उसने कृष्ण की ओर के बहुत से शूरवीर यमलोक पहुँचा दिए ।। १३५६ ।। ।। सवैया ।। कृतासिंह (कृष्ण की ओर से) युद्ध में क्रोधित होकर कूद पड़ा और हाथ में तलवार लेकर उसने भीषण युद्ध किया । उसने बडा धनुष ताना और बाण अनुपमसिंह को मारा जिसके लगते ही उसके प्राण

अयोधन मै इह ऊपर आए । पेखि क्रिता शत्र सिंघ तबै सर तीछन आवत ताहि लगाए । चंद्रक बान लगे तिह कउ दुह के सिर काट कै भूमि गिराए । यों उपमा उपजी मन मै मनो मूँडन को घर ही धर आए ॥ १३५८ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे दस भूप अनूप सिंघ सहित बध धिआइ समापतम ॥

अथ करमसिंघादि पंच भूप जुद्ध कथनं ॥

॥ छपै ॥ करमसिंघ जयसिंघ अउर भट रन मै आए । जालपसिंघ अरु गजासिंघ अतिकोप बढाए । जगतसिंघ न्रिप पाँच महाँ सुंदर सूरे बर । तुमल कर्यो संग्राम घने (मू०ग्रं०४३२) मारे जादव नर । शस्त्र क्रिता शत्रसिंघ कस चतुर भूप मिरतक किए । इक जगतसिंघ जीवत बच्यो छत्रापन द्रिढ धर हिए ॥ १३५९ ॥ ॥ चौपई ॥ करमसिंघ जालपसिंघ धाए । गजासिंघ जैसिंघ जु आए । जगतसिंघ अति गरबु जु कीनो । ताते काल प्रेर रन दीनो ॥ १३६० ॥

रविमंडल को भेदकर पार निकल गए ॥ १३५७ ॥ ॥ सवैया ॥ ईश्वरसिंह के समान बलवान वीर इस पर टूट पड़े जिन्हें देखकर कृतासिंह ने तीक्ष्ण बाण इनकी ओर चलाए । चन्द्राकार बाण उसको लगे और उसका तथा उसके साथी दोनों का सिर इस प्रकार कटकर धरती पर गिर पड़ा और उनके धड़ ऐसे लग रहे थे मानो वे अपने सिरों को घर पर ही भूल आये हों ॥ १३५८ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबन्ध में दस भूप अनूपसिंह सहित-वध अध्याय समाप्त ॥

करमसिंह आदि पंचभूप-युद्ध-कथन

॥ छप्पय ॥ करमसिंह, जयसिंह, जालबसिंह, गजासिंह आदि क्रोध बढ़ाकर युद्धस्थल में आये । जगतसिंह आदि पाँच महाशूर वीरों ने भयानक युद्ध किया और अनेक यादवों को मार डाला । शस्त्रसिंह, कृतासिंह, शत्रुसिंह आदि चार राजा मारे गए और एक जगतसिंह जीवित बचा जिसने क्षत्रियत्व को दृढ़ता से धारण किया ॥ १३५९ ॥ ॥ चौपाई ॥ करमसिंह और जालबसिंह आगे बढ़े तथा गजासिंह और जयसिंह भी आ गए । जगतसिंह ने अत्यन्त गर्व किया जिससे काल ने उसे प्रेरित कर युद्ध में भेज दिया ॥ १३६० ॥

॥ दोहरा ॥ करमसिंघ जालपासिंघ गजासिंघ बरबीर ।
जयसिंघ सहित क्रिताससिंघ हनो चार रणधीर ॥ १३६१ ॥
॥ सवैया ॥ सिंघ क्रितास अयोधन मै हरि की दिस के
न्रिप चार संघारे । अउर हने सु बलंत बने जदुबीर घने
जमलोक सिधारे । जाइ भिर्‌यो जगतेस बली संग आपनो
बान कमान सँभारे । अउर जिते रन ठाढे हुते भट पेखि
तिनै सर जाल प्रहारे ॥ १३६२ ॥ ॥ सवैया ॥ मार बिदार
दयो दल को बहुरो कर मै करवार सँभार्‌यो । धाइकै जाइकै
आइ अर्‌यो जगतेस कै सीस हूँ हाथ प्रहार्‌यो । दुइ धर होइकै
भूम गिर्‌यो रथ ते तिह को कबि भाव बिचार्‌यो । मानो
पहार के ऊपरि सालहि बीच परी तिह दुइ कर
डार्‌यो ॥ १३६३ ॥ ॥ दोहरा ॥ कठनसिंघ रहि कटक ते
आयो या पर धाइ । मत्त दुरद जिउँ सिंघ पै आवत कोप
बढाइ ॥ १३६४ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत ही अरि को तिह
हेरि सु एक ही बान कै संग सँघार्‌यो । अउर जितो दल साथ
हुतो तिह को घरी एक बिखै हनि डार्‌यो । बीर घने जदुबीरन
के हत कोप कै स्याम की ओर निहार्‌यो । आइ लरो न डरौ

॥ दोहा ॥ करमसिंह, जालपासिंह, गजासिंह और जयसिंह नामक चार शूरवीरों को क्रुताशसिंह ने मार डाला ॥ १३६१ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रुताशसिंह ने युद्ध में श्रीकृष्ण की ओर के चार राजाओं का संहार कर दिया तथा साथ ही साथ अन्य योद्धाओं को भी यमलोक पहुँचा दिया । अब वह जाकर जगतेशसिंह के साथ अपना धनुष-बाण सम्हालकर जा भिड़ा तथा उस समय अन्य जितने वीर वहाँ खड़े थे उन्होंने क्रुतेशसिंह पर बाण-वर्षा प्रारम्भ कर दी ॥ १३६२ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुत से शत्रुदल को मार पुनः उसने तलवार पकड़ी और स्थिर हो जगतेशसिंह के सिर पर वार किया । वह दो टुकड़े हो रथ से इस प्रकार गिर पड़ा मानो पर्वत पर बिजली के गिरने से उसके दो टुकड़े हो गए हों ॥ १३६३ ॥ ॥ दोहा ॥ इतने में कठिनसिंह सेना से निकलकर आकर इस प्रकार टूट पड़ा जिस प्रकार मस्त हाथी क्रोधित हो सिंह पर आक्रमण करता है ॥ १३६४ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु को आते देख एक ही बाण से उसका संहार कर दिया तथा जितनी सेना उसके साथ थी उसको भी क्षण भर में मार गिराया । उसने यादवों के अनेकों वीरों को मार क्रोधित होकर कृष्ण की ओर देखा और कहा कि तुम खड़े क्यों हो, आओ युद्ध में मेरे साथ

हरि जू रन ठाँढे कहा इह भाँति उचार्‌यो ॥ १३६५ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ हरिजू करि कोप चल्यो तब दारक स्यंदन को सु धवायो । पान लियो असि स्याम सँभार कै ताहि हकारकै ताक चलायो । ढाल क्रिता शत्र सिंघ लई कर ताही की ओट कै वार बचायो । आपनी काढ क्रिपान मियान ते दारक के तन घाउ लगायो ॥ १३६६ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध करै करवारन को मन मै अति ही दोऊ क्रोध बढाए । स्री हरिजू अरि घाइ लयो तब ही हरि को रिप घाइ लगाए । कउतकि देख दोऊ ठटके दल ब्योम ते देवन बैन सुनाए । लागी अवार मुरार सुनो पल मै मध से मुर से तुम घाए (मू०ग्रं०४३३) ॥ १३६७ ॥ ॥ सवैया ॥ चार महूरत जुद्ध भयो तक कै हरिजू इह घात बिचार्‌यो । मारहु नाहि कह्यो सु सही मुर कै अरि पाछे की ओर निहार्‌यो । आसु ही तीछन लै असि स्री हरि शत्र की ग्रीव के ऊपर झार्‌यो । ऐसीए भाँत हन्यो रिप कउ अपने दल को सभ त्रास निवार्‌यो ॥ १३६८ ॥ यों अरि मारि लयो रन मै अति ही मन मै हरि जू सुखु पायो । आपनी सैन निहार मुरार महाँबलु धार कै संख बजायो । संत सहाइक स्री

लडो ॥ १३६५ ॥ ॥ सवैया ॥ तब कृष्ण क्रोधित हो दारुक से रथ हँकवाकर उसकी ओर चले । कृष्ण ने हाथ में तलवार पकड़ी और सम्हालकर ललकारते हुए उस पर वार किया परन्तु कृतासिंह ने ढाल की ओट करके उनका वार बचा लिया तथा अपनी कृपाण म्यान से निकालकर कृष्ण के सारथी दारुक को घायल कर दिया ॥ १३६६ ॥ ॥ सवैया ॥ दोनों क्रोधित हो कृपाणों से युद्ध करने लगे । जब श्रीकृष्ण शत्रु को घायल करते तो वह भी श्रीकृष्ण को घाव लगा देता । इस लीला को देखकर आकाश में देवगण यह कहने लगे कि हे कृष्ण ! तुम देर कर रहे हो । क्योंकि तुमने तो क्षण भर में मुर और मधु-कैटभ जैसे राक्षसों को मारा है ॥ १३६७ ॥ ॥ सवैया ॥ चार प्रहर तक युद्ध हुआ तब कृष्ण ने एक तरकीब सोची । श्रीकृष्ण ने कहा कि मैं तुमको मार नहीं रहा हूँ और इतना कहते ही शत्रु ने पीछे मुड़कर देखा उसी क्षण शीघ्रता से कृष्ण ने तीक्ष्ण तलवार से शत्रु के गर्दन पर वार किया और इस प्रकार शत्रु को मारकर अपनी सेना को अभय किया ॥ १३६८ ॥ इस प्रकार युद्ध में शत्रु को मार श्रीकृष्ण प्रसन्न हुए और उन्होंने अपनी सेना की ओर देखते हुए बलपूर्वक शंखनाद किया । श्रीकृष्ण सन्तों के सहायक और सब कार्यों में सक्षम

ब्रिजनाइक है सभ लाइक नाम कहायो। स्री हरि जू मुख ऐसे कह्यो चतुरंग चमूं रन जुद्ध मचायो ॥ १३६९ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे पांच भूप बधह ॥

अथ खड़गसिंघ जुद्ध कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ तिह भूपति को मित्र इक खड़गसिंघ तिह नाम। पैरे समर समुंद्र बहु महांरथी बलधाम ॥ १३७० ॥ क्रुद्धत ह्वै अति मन बिखै चार भूप तिह साथ। जुद्ध करनि हरि सिउ चल्यो अमित सैन लै साथ ॥ १३७१ ॥ ॥ छपै ॥ खड़गसिंघ बरसिंघ अउर न्रिप गवनसिंघ बर। धरमसिंघ भवसिंघ बडे बलवंत जुद्ध कर। रथ अनेक संग लिए सुभट बहु बाजत सज्जत। दस हजार गज मत्त चले घनिअर जिम गज्जत। मिलि घेरि लियो तिन कउ तिनो सु कबि स्याम जसु लखि लियो। रिप पावस मै घन घटा जिउँ घोर मनो नर बोलियो ॥ १३७२ ॥ ॥ दोहरा ॥ जादव की सैना हुते निकसे भूप सु चार। नाम सरससिंघ बीरसिंघ महांसिंघ सिंघ सार ॥ १३७३ ॥ खड़गसिंघ के संग न्रिप चार चार मत

व्रजनायक हैं। श्रीकृष्ण की आज्ञा से ही चतुरंगिणी सेना ने भीषण युद्ध किया ॥ १३६९ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबन्ध में पंचभूप-वध समाप्त ॥

खड्गसिंह-युद्ध-कथन

॥ दोहा ॥ उस राजा का खड्गसिंह नाम का एक मित्र वहाँ था जो कि युद्ध रूपी समुद्र में तैरनेवाला महारथी और बल का धाम था ॥ १३७० ॥ चार राजाओं के साथ क्रोधित होकर वह अपार सेना ले श्रीकृष्ण से युद्ध करने चला ॥ १३७१ ॥ ॥ छप्पय ॥ खड्गसिंह, बरसिंह, गवनसिंह, धरमसिंह, भवसिंह आदि अनेकों वीर वहाँ थे, जिनको अनेकों रथों एवं शूरवीरों के साथ उसने अपने साथ लिया। बादलों की गर्जना करते दस हज़ार हाथी चले और उन्होंने मिलकर श्रीकृष्ण एवं उनकी सेना को घेर लिया। शत्रु-सेना वर्षा ऋतु में घनघोर घटा के समान कोलाहल एवं गर्जन कर रही थी ॥ १३७२ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर यादवों की सेना से भी चार राजा निकले जिनके नाम सरससिंह वीरसिंह महासिंह एवं सारसिंह थे। १३७३। खड्गसिंह के

बंत । हरि की ओर चले मनो आयो इनको अंत ॥ १३७४ ॥ ॥ दोहरा ॥ सरस महा अउ सार पुन बीरसिंघ ए चार । जादव सैना ते तबै निकसे अति बलिधार ॥ १३७५ ॥ हरि की दिस के चतुर न्रिप तिन वह लीने मार । खड़गसिंघ अति कोप करि दीनो इनहि सँघार ॥ १३७६ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री हरि ओर ते अउर नरेश चले तिन संगि महाँ दलु लीनो । सूरतसिंघ सपूरनसिंघ चल्यो बरसिंघ सु कोप प्रबीनो । अउ मतिसिंघ सज्यो तन कउच सु शस्त्रन अस्त्रन माँझि (मू०ग्रं०४३४) प्रबीनो । धाइकै स्री खड़गेश के संगि जु चार ही भूपन आहव कीनो ॥१३७७॥ ॥ दोहरा ॥ इत चारो भूपत लरे खड़गसिंह के संगि । उत दोऊ दिस की लरत सबल सैन चतुरंगि ॥ १३७८ ॥ ॥ कबित्तु ॥ रथी संगि रथी महारथी संगि महारथी सुवार सिउ सुवार अति कोप कै कै मन मै । पैदल सिउ पैदल लरत भए रन बीच जुद्ध ही मै राख्यो मन राख्यो ना ग्रिहन मै । सैथी जमदार तरवारै घनी स्याम कह मुसली त्रिसूल बान चलै ताही छिन मै । दंतन सिउ दंती पै बजंत्रन सिउ बजंत्री लर्यो चारन सिउ चारन भिर्यो है ताही

साथ चार मदमस्त राजा थे। वे श्रीकृष्ण की ओर इस प्रकार चले मानो उनका अन्तिम समय अब पास ही आ गया है ॥ १३७४ ॥ ॥ दोहा ॥ सरस-सिंह, महासिंह, सारसिंह और वीरसिंह भी यादव सेना में से निकलकर बलशाली रूप से सामने आये ॥ १३७५ ॥ श्रीकृष्ण की ओर के चारों राजाओं को खड्गसिंह ने क्रोधित हो मार डाला ॥ १३७६ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की ओर से सेना ले अन्य राजा चले जिनके नाम सूरतसिंह, सम्पूर्णसिंह और बरसिंह आदि थे। वे क्रोधी और युद्धकला में प्रवीण थे। मतिसिंह ने भी अस्त्र-शस्त्रों से सुरक्षित करने के लिए शरीर पर कवच धारण कर लिया और इन चारों राजाओं ने खड्गसिंह से घमासान युद्ध किया ॥ १३७७ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर ये चारों राजा खड्गसिंह के साथ लड़े और उधर दोनों पक्षों की सबल चतुरंगिणी सेना भीषण युद्ध करने लगी ॥१३७८॥ ॥ कवित्त ॥ रथी के साथ रथी, महारथी के साथ महारथी और सवार के साथ सवार तथा पैदल के साथ पैदल अत्यन्त क्रोधित होकर और घर-बार का मोह छोड़कर युद्ध करने लगे। कटारें तलवारें त्रिशूल मुगदर बाण चलने लगे हाथी के साथ हाथी और वादक के साथ

रन मै ॥ १३७९ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुरो सर सिंघ हत्यो रिसकै महाँ सिंघहि मार लयो जबही । पुन सूरतसिंघ सपूरनसिंघ सु सुंदरसिंघ हन्यो तबही । बर स्त्री मतिसिंघ को सीस कट्यो लखि जादव सैन गई दबही । नभि मै गन किंनर स्त्री खड़गेश को कीरति गावत है सबही ॥ १३८० ॥ ॥ दोहरा ॥ छिअ भूपन को छै कियो खड़गसिंघ बलधाम । अउरो भूपत तीन बर धाइ लरे संग्राम ॥ १३८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ करनसिंघ पुन अरनसीसिंघ बरन सुकुमार । खड़गसिंघ रुप रन रह्यो ए तीनो संघार ॥ १३८२ ॥ ॥ सवैया ॥ मारकै भूप बडे रन मै रिसिकै बहुरो धनु बानु लियो । सिर काटि दए बहु शत्रन के कर अस्त्रन लै पुन जुद्ध कियो । जिम रावन सैन हती न्रिप राघव तिउ दलु मारि बिदार दियो । गन भूत पिसाच सिंघालन गीधन जोगन स्रउन अघाइ पियो ॥ १३८३ ॥ ॥ दोहरा ॥ खड़गसिंघ कर खड़ग लै रुद्र रसहि अनुराग । यौ डोलत रन निडर हुइ मानो खेलत फाग ॥ १३८४ ॥ ॥ सवैया ॥ बान चले तेई कुंकम मानहु मूठ गुलाल को साँग

वादक तथा चारण-भाट के साथ चारण युद्धस्थल में भिड़ा ॥ १३७९ ॥ ॥ सवैया ॥ महासिंह को मारकर सरसिंह को भी मार डाला तथा पुन. सूरतसिंह, सम्पूर्णसिंह, सुन्दरसिंह भी मार डाले गए । मतिसिंह का शीश कटते देख यादव-सेना निस्तेज हो गई परन्तु आकाश में गण और किन्नर खड्गसिंह का यशगान करने लगे ॥ १३८० ॥ ॥ दोहा ॥ महाबली खड्गसिंह ने छः राजाओं को मार डाला तथा उसके बाद तीन अन्य राजा आए और उन्होंने युद्ध किया ॥ १३८१ ॥ ॥ दोहा ॥ कर्णसिंह, अरणसिंह, बरणसिंह आदि को भी मार कर खड्गसिंह युद्ध में स्थिर रहा ॥ १३८२ ॥ ॥ सवैया ॥ बड़े-बड़े राजाओं को मारकर पुन: क्रोधित होकर खड्गसिंह ने धनुष-बाण हाथ में लिया । बहुत से शत्रुओं के सिर काट डाले और उन पर अस्त्रों से वार किया । जिस प्रकार श्री रामचन्द्र ने रावण की सेना को नष्ट कर दिया था, उसी प्रकार खड्गसिंह ने शत्रुदल को मार डाला । गण, भूत, पिशाच, गीदड़, गिद्ध और योगिनियों ने पेट भरकर इस युद्ध में रक्तपान किया ॥ १३८३ ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह हाथ में खड्ग लेकर रौद्र-रस में अनुरक्त होकर इस प्रकार अभय होकर युद्ध में घूम रहा था, मानो होली खेल रहा हो ॥ १३८४ ॥ ॥ सवैया ॥ बाण इस प्रकार चल रहे है, मानो कुमकुम उड़ रहा हो और बर्छियों के प्रहार से निकलता हुआ रक्त मानो

प्रहारी । ढाल मनो डफ माल बनी हथ लाल बंदूक छुटे पिचकारी । स्रउन भरे पट बीरन के उपमा जन घोर कै केसर डारी । खेलत फाग कि बीर लरै नवलासी लिए करवार कटारी ॥ १३८५ ॥ ॥ दोहरा ॥ खड़गसिंघ अति लरत है रस रुद्रहि अनुराग । रन चंचलता बहु करत जन नटुआ बडभाग ॥ १३८६ ॥ ॥ सवैया ॥ सारथी आपने सो कहिकै सु धवाइ (मू०ग्रं०४३५) तही रथ जुद्ध मचावै । शस्त्र प्रहारत सूरन पै कर हाथन को अरथाव दिखावै । दुंदभ ढोल म्रिदंग बजे करवार कटारन ताल बजावै । मार ही मार उचार करै मुखि यो कर न्रित्त अउ गान सुनावै ॥१३८७॥ ॥ सवैया ॥ मार ही मार अलाप उचारत दुंदभ ढोल म्रिदंग अपारा । शत्रन के सिर अस्त्र तराक लगै तिहि तालन को ठनकारा । जूझि गिरे धरि रीझकै देत है प्रानन दान बडे रिझवारा । न्रित करै नट कोप लरै भट जुद्ध की ठउर कि न्रित अखारा ॥ १३८८ ॥ ॥ सवैया ॥ रन भूमि भई रंगभूमि मनो धुनि दुंदभ बाजे म्रिदंग हियो । सिर शत्रन के पर अस्त्र लगै ततकार तराकन

गुलाल बह रहा हो । ढालें मानो डपलियाँ बन गई हैं और बन्दूकें पिचकारियों के समान छूट रही हैं । वीरों के वस्त्र रक्त से भरे हुए ऐसे लग रहे हैं मानो घोलकर केसर डाल दिया गया हो । तलवारों को पकड़े हुए वीर ऐसे लग रहे हैं मानो फूलों की छड़ियाँ पकड़े हुए वे होली खेल रहे हैं ॥ १३८५ ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह रौद्र-रस में मदमस्त होकर लड़ रहा है और उसी प्रकार चंचल है जैसे कोई कुशल नट अपना खेल दिखा रहा हो ॥ १३८६ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने सारथी को कहकर और उससे रथ हँकवाकर वह घनघोर युद्ध कर रहा है । हाथों से संकेत करके वह शूरवीरों पर शस्त्र चला रहा है । दुन्दुभियाँ, ढोल, मृदंग और तलवारों के ताल बज रहे हैं तथा वह मार ही मार का उच्चारण करता हुआ नृत्य कर रहा है तथा गीत गा रहा है ॥ १३८७ ॥ ॥ सवैया ॥ मार ही मार का उच्चारण तथा ढोल, मृदंग, नगाड़ों की ध्वनि सुनाई पड़ रही है । शत्रुओं के सिर पर अस्त्रों के लगने से तालों की झनकार सुनाई पड़ रही है । वीरगण जूझकर गिरते हुए ऐसे लग रहे हैं कि मानो वे प्रसन्न होकर प्राणदान कर रहे हों । क्रोधित होकर वीर इस प्रकार उछल-कूद रहे हैं कि यह कहा नहीं जा सकता कि यह युद्धस्थल है अथवा नृत्य का अखाड़ा है ॥ १३८८ ॥ ॥ सवैया ॥ युद्धभूमि मानो नृत्यभूमि बन गई हो जहाँ पर नगाड़े बाजे और मृदंग बज रहे हैं । शत्रुओं के सिर

ताल लियो । अस लागत झूम गिरैं मरिकैं भट प्रानन मानहु दान दियो । बर निरत करैं कि लरैं नट ज्यों छिप मार ही मार सु राग कियो ॥ १३८६ ॥ ॥ दोहरा ॥ इतो जुद्ध हरि हेरिकैं सभहनि कह्यो सुनाइ । को भट लाइक सैन मै लरैं जु या संग जाइ ॥ १३९० ॥ ॥ चौपई ॥ घनसिंघ घातसिंघ दोऊ जोधे । जात न किसी सुभट ते सोधे । घन सुरसिंघ घमंडसिंघ धाए । मानहु चारो काल पठाए ॥ १३९१ ॥ तब तिन तक चहुँअन सर मारे । चारो प्रान बिना करि डारे । स्यंदन अस्व सूत सभ घाए । सैन सहित जमलोक पठाए ॥ १३९२ ॥ ॥ दोहरा ॥ चपलसिंघ अरु चतुरसिंघ चंचल स्त्री बलवान । चित्रसिंघ अरु चउपसिंघ महारथी सुर ग्यान ॥ १३९३ ॥ छत्रसिंघ अर मानसिंघ शत्रसिंघ बलबंड । सिंघ चमूँपति अति बली भुजबलि ताहि अखंड ॥ १३९४ ॥ ॥ सवैया ॥ भूप दसो रिसि कै कबि स्याम कहै खड़गेश के ऊपर धाए । आवत ही बलि कै धनु लै सु निखंगन ते बहु बान चलाए । बाज हने सति दुइ अरु गै सति लै सति बीर महाँ तब घाए । बीस रथी अउ महाँरथि तीस अयोधन मै जमलोक पठाए ॥ १३९५ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनि धाइ हने

पर लग रहे अस्त्र एक विशिष्ट ताल की ध्वनि दे रहे हैं। झूमकर गिरते हुए वीर प्राणों का दान देते हुए प्रतीत हो रहे हैं। वे कुशल नर्तक के समान नृत्य करते हुए मार ही मार का राग अलाप रहे हैं ॥१३८९॥ ॥ दोहा ॥ इतना युद्ध देखकर श्रीकृष्ण ने सबको सुनाकर कहा कि कौन ऐसा योग्य शूरवीर है जो खड्गसिंह से जाकर लड़ेगा ॥ १३९० ॥ ॥ चौपाई ॥ घनसिंह और घातसिंह ऐसे योद्धा थे जो किसी से भी हारनेवाले नहीं थे। घनसुरसिंह और घमण्डसिंह भी चल पड़े और ऐसा लग रहा था मानो चारों को काल ने स्वयं बुलाया हो ॥ १३९१ ॥ तब इनकी तरफ़ देखकर चारों पर बाणों से प्रहार किया और उन्हें निष्प्राण कर डाला। उनके रथ के घोड़े, सारथी आदि सबको घायल करके सेना-समेत यमलोक भेज दिया ॥ १३९२ ॥ ॥ दोहा ॥ चपलसिंह, चतुरसिंह, चित्रसिंह, चौपसिंह आदि महारथी वहाँ उपस्थित थे ॥१३९३॥ छत्रसिंह, मानसिंह, शत्रुसिंह आदि सेनापति जो कि महाबली थे वहाँ उपस्थित थे ॥ १३९४ ॥ ॥ सवैया ॥ दसों राजा क्रोधित होकर खड्गसिंह पर टूट पड़े। आते ही उन्होंने बलपूर्वक धनुष से बहुत से बाण चलाए। रथों के सोलह घोड़े और दस महावीर वहाँ मार डाले गए सेना के बीस रथी एवं

सति गै हय द्वै सति ऐतु पदांत हने रन मैं । सु महारथी अउर पचास हने कबि स्याम कहे सु तही छिन मै । दसहूँ न्रिप की बहु सैन भजी लखि जिउँ म्रिग केहरि कउ बन मै । तिह संग रमै खड़गेश बली रुप ठाढो रह्यो रिसकै (मू०ग्रं०४३६) मन मै ॥ १३९६ ॥ ॥ कबित्तु ॥ दसो भूप रन पार्यो सैन कउ बिपत डार्यो बीर प्रन धार्यो न डरैहै काहू आन सो । एई दस भूपति रिसाइ समुहाइ गए उत आए सउहे भयो महा सूरमान सो । कहै कबि स्याम अति क्रुद्ध हुइ खड़गसिंघ तानकै कमान को लगाई जिह कान सो । गजराज भारे अरु जुद्ध के करारे भूप दसो मार डारे तिन दस दस बान सो ॥ १३९७ ॥ ॥ दोहरा ॥ पाँच बीर जदुबीर के गए सु अरि पर दउर । छकतसिंघ अर छत्रसिंघ छोहसिंघ सिंघ गउर ॥ १३९८ ॥ ॥ सोरठा ॥ छलबलसिंघ जिह नाम महाबीर बलबीर को । लए खड़ग कर चाम खड़गसिंघ पर सो चल्यो ॥ १३९९ ॥ ॥ चौपई ॥ जब ही पाँच बीर मिलि धाए । खड़गसिंघ के ऊपर आए । खड़गसिंघ तब शस्त्र सँभारे । सभ ही प्रान बिना करि डारे ॥ १४०० ॥ ॥ दोहरा ॥ द्वादस जोधे क्रिशन

तीस महारथी भी मृत्यु को प्राप्त हुए ॥१३९५॥ ॥ सवैया ॥ पुन: खड्गसिंह ने दौड़कर सात घोड़ों और अनेकों पदातियों को युद्ध में मार डाला। कवि श्याम का कथन है कि उसी क्षण खड्गसिंह ने पचास अन्य महारथियों को मार डाला। दसों राजाओं की बहुत सी सेना इस प्रकार भाग खड़ी हुई जैसे सिंह को वन में देखकर मृग भाग उठते हैं। परन्तु उस युद्ध में बली खड्गसिंह क्रोधित और स्थिर होकर डटा रहा ॥ १३९६ ॥ ॥ कवित्त ॥ दसों राजाओं ने युद्ध किया, सेना को विपत्ति में डाला और प्रण किया कि कोई भी किसी से डरेगा नहीं, यही दस राजा क्रोधित होकर उस महान् शूरवीर के समक्ष गए। अति क्रोधित होकर जब खड्गसिंह ने धनुष को तानकर कान तक खींचा तो गजों के समान भारी और युद्धकौशल में निपुण राजाओं को दस-दस बाणों से मार डाला ॥ १३९७ ॥ ॥ दोहा ॥ श्रीकृष्ण के पाँच अन्य वीर शत्रु पर टूटे जिनके नाम छकतसिंह, छत्रसिंह, छोभसिंह और गौरसिंह आदि थे ॥१३९८॥ ॥ सोरठा ॥ छलबलसिंह नामक महावीर हाथ में ढाल-तलवार लेकर खड्गसिंह से युद्ध करने के लिए चला ॥ १३९९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब वे पाँचों वीर मिलकर चले और खड्गसिंह पर टूट पड़े तब खड्गसिंह ने शस्त्रों को सँभाला और इन सबको प्राणविहीन कर डाला १४०० दोहा कृष्ण

के अति बलबंड अखंड। जीत लयो है जगत जिन बल करि भुजा प्रचंड ।१४०१।। ।। सवैया ।। बालमसिंघ महाँमति सिंघ जगाजतसिंघ लए अस धायो। सिंघ धनेश क्रिपावतसिंघ सु जोबनसिंघ महाँ बर पायो। जीवनसिंघ चल्यो जगसिंघ सदा-सिंघ लै जससिंघ रसायो। बीरमसिंघ लए शकती कर मै खड़गेश सो जुद्ध मचायो ।। १४०२ ।। ।। दोहरा ।। मोहनसिंघ जिह नाम भट सोऊ भयो तिन संगि। शस्त्र धार करि मै लिए साज्यो कवच निखंग ।। १४०३ ।। ।। सवैया ।। खड़गेश बली कहु स्याम भनै सभ भूपन बान प्रहार कर्यो है। ठाढो रह्यो द्रिड़ भूप रे मेर सो आहव ते नही नेकु डर्यो है। कोप बढी तिह आनन ऊपर ता छबि को कबि भाउ धर्यो है। रोसि की आग प्रचंड भई सर पुंज छुटे मानो घीउ पर्यो है ।। १४०४ ।। ।। सवैया ।। जो दल हो हरि बीरनि के संग सो तो कछू अरि मारि लयो है। फेर अयोधन मै रुप कै अस लै जिय मै पुन कोप भयो है। मार बिदार दयो घट ग्यो दल सो कबि के मन भाउ नयो है। मानहु सूर प्रलै को चड्यो जल सागर को सभ सूक गयो है ।। १४०५ ।। प्रिथमे तिनकी

के बारह योद्धा अत्यन्त बलवान हैं जिन्होंने अपने प्रचण्ड बाहुबल से सारा ससार जीत लिया है ।। १४०१ ।। ।। सवैया ।। बालमसिंह, महामतीसिंह और जगाजतसिंह तलवार लेकर टूट पड़े। धनेशसिंह, कृपावतसिंह, जोबनसिंह, जीवनसिंह, जगसिंह, सदासिंह, जससिंह आदि भी चल पड़े। वीरमसिंह ने हाथ में शक्ति लेकर खड्गसिंह से युद्ध प्रारम्भ कर दिया ।। १४०२ ।। ।। दोहा ।। मोहनसिंह नाम का एक शूरवीर भी उनके साथ हो गया। उसने शस्त्र हाथ में पकड़ रखे थे और वह तरकस और कवच से सुसज्जित था ।। १४०३ ।। ।। सवैया ।। महाबली खड्गसिंह पर सब राजाओं ने बाणों से प्रहार किया। परन्तु युद्ध में अभय होकर वह पर्वत की तरह दृढ़ रहा। उसके चेहरे पर क्रोध बढ़ा हुआ दिखाई दे रहा है और उसके क्रोध की प्रचण्ड आग में ये बाण मानो घी का काम कर रहे हैं ।। १४०४ ।। ।। सवैया ।। जो श्रीकृष्ण के वीरों का दल था, उसमें से कुछ को तो शत्रु ने मार गिराया। पुनः युद्ध में खड़े होकर क्रोधित होते हुए उसने कृपाण हाथ में ली। उसने शत्रु-दल को मारकर इस प्रकार कत्ल कर दिया कि मानो प्रलयकाल के तपते हुए सूर्य ने सागर का सारा जल सुखा दिया हो ।। १४०५ ।। पहले उसने वीरों की भुजाएँ काट दीं, फिर उनके सिर काट दिया। रथ-घोड़े

भुज काटि दई फिर के तिन के सिर काटि दए। रथ बाजन सूत समेत सभै कबि स्याम कहै रन बीच (मू०ग्रं०४३७) छए। जिनकी सुख के संग आयु कटी तिन की लुथ जंबुक गीध खए। जिन शत्रु घने रन माँझि हने सोऊ संघर मै बिन प्रान भए॥ १४०६॥ ॥ सवैया॥ द्वादस भूपन को हनिकै कबि स्याम कहै रन मै न्रिप छाज्यो। मानहु दूर घनो तम कै दिन आधिक मै दिवराज बिराज्यो। गाजत है खड़गेश बली धुनि जा सुनि कै घन सावन लाज्यो। काल प्रलै जिउँ किरारन ते बढ मानहु नीरध कोप कै गाज्यो॥१४०७॥ ॥ सवैया॥ अउर किती जदुबीर चमूँ न्रिप इउ पुरखति दिखाइ भजाई। अउर जिते भटि आइ भिरे तिन प्रानन की सभ आस चुकाई। लै करि मै असि स्याम भनै जिन धाइकै आइकै कीनी लराई। अंत को अंत के धाम गए तिन नाहक आपनी देह गवाई॥ १४०८॥ ॥ सवैया॥ बहुरो रन मै रिसकै दस सै गज ऐत तुरंग चमूँ हनि डारी। दुइ सति स्यंदन काटि दए बहु बीर हने बलु कै असि धारी। बीस हजार पदांत हने द्रुम से गिरहै रनभूम मँझारी। मानो हनूं रिसि रावन बाग की मूलहु ते जर मेख

और सारथियों समेत रणभूमि में नष्ट हो गए। जिन्होंने सुखपूर्वक जीवन बिताया था उनकी लाशों को गीदड़ और गिद्ध खा रहे हैं। जिन वीरो ने घनघोर युद्ध में शत्रु का नाश किया था वे ही अब समरभूमि में निष्प्राण हो चुके हैं॥ १४०६॥ ॥ सवैया॥ बारह राजाओं को मारकर राजा खड्गसिह शोभायमान हो रहा है, मानो दूर अन्धकार में सूर्य विराजमान हो रहा है। खड्गसिह की गर्जना सुनकर सावन के बादल भी लजा रहे हैं और ऐसा लग रहा है मानो प्रलयकाल के किनारों से बढ़कर क्रोधित होकर समुद्र गरज रहा हो॥ १४०७॥ ॥ सवैया॥ अन्य कितनी ही यादव-सेना राजा ने अपना पौरुष दिखाकर भगा दी तथा जितने भी योद्धा आकर उससे भिड़े उन्होंने अपने प्राणों की आशा छोड़ दी। कवि का कथन है कि जिसने भी हाथ में तलवार लेकर युद्ध किया, वह मृत्युलोक को प्राप्त हुआ और व्यर्थ ही उसने अपना शरीर गँवाया॥ १४०८॥ ॥ सवैया॥ पुनः क्रोधित होकर उसने एक हज़ार हाथी और घुड़सवारों को मार डाला। दो सौ रथों को काट डाला और बहुत से कृपाणधारी वीरों को मार डाला। बीस हज़ार पैदलों को मार डाला जो कि युद्धभूमि में पेड़ों की तरह गिर पड़े। यह दृश्य ऐसा लग रहा था कि मानो हनुमान ने क्रोधित होकर रावण के बाग़ को जड़-मूल

उखारी ॥ १४०९ ॥ ॥ सवैया ॥ राछस अभ्र हुतो हरि की दिस सो बल कै न्रिप ऊपर धायो । शस्त्र सँभार सभै अपने चपला सम लै अस कोप बढायो । गाजत ही बरख्यो बरखा सर स्याम कबीशर यौ गुन गायो । मानहु गोपन के गन पै अति कोप किए मघवा चढ आयो ॥ १४१० ॥ दैत चमूँ घनि जिउँ उमडी मन मै न कछू न्रिप हूँ डरु कीनो । कोप बढाइ घनो चित मै धनु बान सँभार भले करि लीनो । खैंच कै कान प्रमान कमान सु छेद ह्रिदा सर सों अरि दीनो । मानहु बाँबी मै साप धस्यो कबि ने जसु ता छबि को इम चीनो ॥ १४११ ॥ ॥ सवैया ॥ बानन संगि सु मारिकै शत्रन राम भने अस सो पुन मार्‌यो । स्रउन समूह पर्‌यो तिह ते धर प्रान बिना कर भू पर डार्‌यो । ता छबि की उपमा लखिकै कबि ने मुखि ते इह भाँति उचार्‌यो । खग्ग लग्यो तिह को नही मानहु लै कर मै जमदंड प्रहार्‌यो ॥ १४१२ ॥ ॥ सवैया ॥ राछस मार लयो जब ही तब राछस को रिसकै दलु धायो । आवत ही कबि स्याम कहै बिबधायुध लै अति जुद्ध मचायो । दैत (मू०ग्रं०४३८) घने तह घाइल ह्वै बहु घाइन सो खड़गेशहि घायो । सो सहिकै

से उखाड़ फेंका ॥ १४०९ ॥ ॥ सवैया ॥ अभ्र नाम का एक राक्षस श्रीकृष्ण की ओर था जो बलपूर्वक खड्गसिंह पर टूट पड़ा । उसने शस्त्र सँभालकर बिजली के समान कृपाण हाथ में ली और क्रोधित होकर गर्जना करते हुए इस प्रकार बाण-वर्षा की कि मानो गोपों के झुंड पर क्रोधित होकर इन्द्र ने चढ़ाई कर दी हो ॥ १४१० ॥ दैत्य-सेना बादलों के समान उमड़ पड़ी परन्तु राजा तनिक भी नहीं डरा और उसने चित्त में क्रोधित होकर भली प्रकार से धनुष-बाण अपने हाथ में पकड़ लिया । कान तक धनुष खींचकर उसने बाण से शत्रु का हृदय ऐसे छेद दिया मानो सर्प अपने बिल में घुस गया हो ॥ १४११ ॥ ॥ सवैया ॥ बाणों के साथ शत्रु को मारकर पुनः कृपाण के साथ उसने मारकाट की । युद्ध के फलस्वरूप रक्त धरती पर बहने लगा और शरीरों को उसने प्राण-विहीन करके धरती पर डाल दिया । उस दृश्य का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि वे ऐसे लग रहे थे कि मानो इन्हें खड्ग नहीं लगा है बल्कि यमदण्ड से इन पर प्रहार हुआ हो ॥१४१२॥ ॥ सवैया ॥ जब इस राक्षस को मार लिया तो राक्षसों का दल क्रोधित होकर टूट पड़ा और उसने आते ही विभिन्न प्रकार के शस्त्रों से युद्ध प्रारम्भ कर दिया । दैत्य अधिक संख्या मे उस स्थान पर घायल हुए और खड्गसिंह को भी बहुत से

असि को गहिकै न्रिप जुद्ध कियो नही घाउ जतायो ॥ १४१३ ॥ धाइ परे सभ राछसि या पर है तिन कै मन कोप बढ्यो । गहि बान कमान गदा बरछी तिन म्यानहु ते करवार कढ्यो । सभ दानव तेज प्रचंड कियो रिस पावक मै तिन अंग डढ्यो । इह भाँत प्रहारत है न्रिप कउ तन कंचन मानो सुनार गढ्यो ॥ १४१४ ॥ ॥ सवैया ॥ जिनहूँ न्रिप के संगि जुद्ध कियो सु सभै इनहू हति कै तब दीने । अउर जिते अरि जीत बचे तिनके बध कउ करि आयुध लीने । तउ इन भूप सरासन लै किए शत्रन के तन मुंडन हीने । जौ न डरे सु लरे पुन धाइ निदान वही न्रिप खंडन कीने ॥ १४१५ ॥ ॥ सवैया ॥ बीर बडो इक दैत हुतो तिन कोप कियो अति ही मन मै । इह भाँति सो भूप कउ बान हने सभ फोकन लउ गडगे तन मै । तब भूपत साँग हनी रिप को धस गी उर जिउँ चपला घन मै । सु मनो उरगेश खगेश के त्रास ते धाइकै जाइ दुर्यो बन मै ॥ १४१६ ॥ ॥ सवैया ॥ लागत साँग कै प्रान तजे तिह अउर हुते तिह को असि झार्यो । कोप अयोधन मै खड़गेश

घाव लगे। घावों को सहते हुए भी राजा ने युद्ध किया और अपने घाव प्रकट नहीं होने दिए ॥ १४१३ ॥ सभी राक्षस इस पर टूट पड़े और उनके मन में क्रोध बढ़ उठा। हाथों में बाण, धनुष, गदा, बरछी आदि लेते हुए उन्होंने म्यान से तलवारें भी निकाल लीं। क्रोध की अग्नि में उन दानवों का प्रचण्ड तेज बढ़ने लगा और उनके अंग तमतमाने लगे। वे इस प्रकार राजा पर प्रहार कर रहे हैं कि मानो सोनार सोने के शरीर को गढ़ रहा हो ॥ १४१४ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा के साथ युद्ध करनेवाले सभी मारे गए तथा जितने शत्रु बच गए उनको मारने के लिए उसने अपने हाथों में शस्त्र ले लिये। हाथ में धनुष-बाण लेकर राजा ने शत्रुओं के शरीर मुंडविहीन कर दिये और इतने पर भी जो अभय होकर दौड़-दौड़कर लड़े राजा ने उनका भी नाश कर दिया ॥१४१५॥ ॥ सवैया ॥ एक बहुत बड़ा दैत्य वीर था जो कि अत्यन्त ही क्रोधित हुआ और उसने बहुत से बाण राजा पर चलाए। ये बाण आखिरी सिरे तक राजा के शरीर में गड़ गये। तब राजा ने क्रोधित होकर एक बरछी शत्रु को मारी जो बिजली के समान उसके शरीर मे धँस गई। यह ऐसा लगा कि मानो गरुड़ के डर से सर्पराज वन में जा छुपा हो ॥१४१६॥ ॥ सवैया ॥ बरछी के लगते ही उसने प्राण त्याग दिया और अन्यों पर राजा ने कृपाण से वार किया राजा खड्गसिंह ने क्रोधित होकर युद्धस्थल में खड़े

कहै कबि राम महा बल धार्यो । राछस तीस रहो तह ठाँ तिहको तबही तिह ठउर सँघार्यो । प्रान बिना इह भाँति पर्यो मघवा मनो बज्र भए नगु मार्यो ॥ १४१७ ॥ ॥ कबित्तु ॥ केते राछसन हूँ की भुजन कउ काटि दियो केते सिर शत्रन के खंडन करत है । केते भाजि गए अरि केते मारि लए बीर रन हूँ की भूमि हुते पँगु ना टरत है । सैथी जमदार लै सरासन गदा त्रिसूल दुज्जन की सैना बीच ऐसे बिचरत है । आगे हुइ लरत पग पाछे न करत डग कबूँ देखियत कबूँ देख्यो न परत है ॥ १४१८ ॥ ॥ अड़िल ॥ ॥ कबियो बाच ॥ खड़ग-सिंघ बहु राछस मारे कोप हुइ । रहे मनो मतवारे रन की भूम सुइ । जीअत बचे ते भाजे त्रास बढाइकै । हो जदुपति तीर पुकारे सभही आइकै ॥ १४१९ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ तब ब्रिजपति सभ सैन कउ ऐसे कह्यो सुनाइ । को लाइक भट कटक मै लरै जु या संग जाइ ॥ १४२० ॥ ॥ सोरठा ॥ स्री जदुपति के बीर दुइ (मू०ग्रं०४३९) निकसे अति कोप हुइ । महारथी रनधीर इंद्र तुलि बिक्रम जिनै ॥ १४२१ ॥ ॥ सवैया ॥ सिंघ झड़ाझड़ जूझनसिंघ गए

तीस राक्षसों को उसी स्थल पर मार डाला । वे सब इस प्रकार प्राण-विहीन होकर खड़े थे कि मानो इन्द्र के वज्र की मार से मरे हुए पर्वत पडे हों ॥ १४१७ ॥ ॥ कवित्त ॥ कितने ही राक्षसों की भुजाओं को काट दिया और कितने ही शत्रुओं के सिर काट डाले । कितने ही शत्रु भाग गये, कितने ही मारे गये परन्तु फिर भी यह वीर युद्धभूमि में अटल कृपाण, यमदाढ़, धनुष, गदा, त्रिशूल आदि हाथ में लेकर शत्रु-सेना में विचरण कर रहा है। यह आगे होकर लड़ रहा है और एक भी क़दम पीछे नहीं हट रहा है। राजा खड्गसिंह इतना तीव्रगामी है कि वह कभी तो दिखाई देता है, कभी दिखाई नहीं देता ॥ १४१८ ॥ ॥ अड़िल ॥ ॥ कवि उवाच ॥ क्रोधित होकर खड्गसिंह ने बहुत से राक्षस मार दिया और वे सब ऐसे लग रहे थे मानो मदमस्त होकर रणभूमि में सो रहे हों। जितने बचे वे डरकर भागे और सभी श्रीकृष्ण के पास आकर हा-हाकार करने लगे ॥ १४१९ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ तब कृष्ण ने सेना को सुनाकर कहा कि मेरी सेना मे कौन इस योग्य है जो खड्गसिंह के साथ जाकर लड़ेगा ॥ १४२० ॥ ॥ सोरठा ॥ श्रीकृष्ण के दो वीर अत्यन्त क्रोधित होकर निकले । ये दोनों इन्द्र के समान प्रतापी और रणधीर महारथी थे ॥ १४२१ ॥ ॥ सवैया ॥ झड़ाझड़-

तिह सामुहि लै सु घनो दलु । घोरन की खुर बार बजै भुअ कंप उठी अरु सप्त रिसातलु । यों खड़गेश रह्यो थिर ह्वै जिम पउन लगै न हलै कनकाचलु । ता पै बसावत है न कछू सभ ही जदुबीरन को घट ग्यो बलु ॥१४२२॥ ॥ सवैया ॥ कोप कियो धनु लै कर मै जुग भूपन की बहु सैन हनी है । बाज घने रथ पति करी अनी जो बिधि ते नही जात गनी है । ता छबि की उपमा मन मै लख के मुख ते कबि स्याम भनी है । जुद्ध की ठउर न होइ मनो रस रुद्र के खेल को ठउर बनी है ॥ १४२३ ॥ लै धन बान धस्यो रन मे तिहके मन मै अति कोप बढ्यो । जु हुतो दल बैरन को सभही रिस तेज के संग प्रतच्छ डढ्यो । अरि सैन को नास किओ छिन मै जसु ता छबि को कबि स्याम पढ्यो । तम जिउँ डरके अरि भाजि गए इह सूर नही मानो सूर चढ्यो ॥ १४२४ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप झड़ाझड़सिंघ तबै अस तीछन लै करि ताहि प्रहार्यो । भूप छिनाइ लियो कर ते बरकै अरिके तन ऊपरि झार्यो । लागत ही कटि मूँड गिर्यो धर ता छबि के कबि भाउ निहार्यो । मानहु ईश्वर कोप भयो सिर पूत को काटि जुदा करि डार्यो ॥ १४२५ ॥ ॥ सवैया ॥ बीर हन्यो जब ही रन मै

सिंह, जूझनसिंह बहुत-सा दल लेकर, उसके सामने गए । घोड़ों की टापों की आवाज़ से सातों पाताल और पृथ्वी काँप उठे । खड्गसिंह उसी प्रकार स्थिर रहा जैसे पवन के झोंकों में सुमेरु पर्वत स्थिर रहता है । उस पर कोई प्रभाव नहीं हुआ परन्तु यादवों का बल घटने लगा ॥ १४२२ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर खड्गसिंह ने दोनों राजाओं की बहुत-सी सेना नष्ट कर दी । अगणित घोड़े, रथ आदि को उसने मार डाला और कवि कहता है कि वह स्थल युद्ध का स्थल न दीखकर मानो रुद्र का क्रीड़ास्थल लग रहा है ॥ १४२३ ॥ मन में क्रोधित होकर वह शत्रुदल में घुस गया और उधर से शत्रुदल ने भी प्रचंड रूप धारण कर लिया । शत्रु-सेना का खड्गसिंह ने उसी प्रकार नाश कर दिया और शत्रु-सेना उसी प्रकार भाग खड़ी हुई जैसे अन्धकार सूर्य से डरकर भाग जाता है ॥ १४२४ ॥ ॥ सवैया ॥ तब झडाझड़सिंह ने क्रोधित होकर कृपाण हाथ में लेकर खड्गसिंह पर वार किया, जिसे राजा खड्गसिंह ने उसके हाथ से छीन लिया । वही कृपाण उसने शत्रु के शरीर पर चलाई, जिससे उसका धड़ कटकर धरती पर जा गिरा । कवि के कथनानुसार यह ऐसा लगा मानो शिव ने क्रोधित होकर गणेश का सिर

तब दूसर के मन कोप छयो । सु धवाइकै स्यंदन ताही को ओर गयो अस तीछन पान लयो । तब भूप सरासन बान लयो अरि को अस मूड ते काट दयो । मानो जीह निहारिकै धायो हुतो जमु जीभ कटी बिन आस भयो ॥ १४२६ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जबही करि को अस काटि दयो भट जेऊ भजे हुते ते सभ धाए । आयुध लै अपने अपने कर चित्त बिखै अति कोप बढाए । बीर बनैत बने सिगरे तिन के गुन स्याम कबीशर गाए । मानहु भूप सुअंबर जुद्ध रच्यो भट एन बडे न्रिप आए ॥ १४२७ ॥ ॥ सवैया ॥ जे न्रिप सामुहि आइ भिरे अरि बानन सो सोई मार लए है । केतकि जोरि भिरे हठिकै कितने रन को लखि भाजि गए है । केतकि होइ इकत्र रहै जसु ता छबि को कबि चीन लए है । मानहु आग लगी बन मै मद (मू०ग्रं०४४०) मत्त करी इक ठउर भए है ॥ १४२८ ॥ ॥ सवैया ॥ बीर घने रन माँझ हने मन मै न्रिप रंचक कोप भर्यो है । बाज करी रथ काटि दए जबही करि मै करवार धर्यो है । पेखकै शत्र इकत्र भए न्रिप मारबे

काटकर फेंक दिया हो ॥ १४२५ ॥ ॥ सवैया ॥ जब यह वीर मारा गया तो दूसरा (जूझनसिंह) मन में क्रोधित हो उठा । वह रथ हँकवाकर और हाथ मे तत्क्षण कृपाण लेकर उसकी ओर चला । तब राजा ने धनुष-बाण से उसका भी सिर काट लिया और वह ऐसा लग रहा था मानो ललचाकर जीभ हिलाते हुए कोई आगे बढ़ा हो परन्तु जीभ कट जाने से स्वाद पाने की उसकी आशाएँ समाप्त हो गई हों ॥ १४२६ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जब हाथी के समान वीर को तलवार से उसने काट डाला तो जितने अन्य शूरवीर थे वे सब उस पर टूट पड़े । वे अपने हाथों में शस्त्र लेकर क्रोधित हो उठे थे । वे इस प्रकार के शोभायुक्त महाबली थे और ऐसे लग रहे थे मानो राजा के किसी स्वयंवर में अन्य राजा एकत्र हुए हों ॥ १४२७ ॥ ॥ सवैया ॥ जितने शत्रु राजा के सामने आये उसने उन्हें बाणों से मार गिराया । कितने ही हठपूर्वक लड़े और कितने ही युद्ध को देखकर भाग खड़े हुए । कितने ही राजा एक स्थान पर एकत्र हो गए हैं और ऐसे लग रहे हैं कि मानो जंगल में आग लग गई हो और मदमस्त हाथी एक स्थान पर एकत्र हो गए हों ॥ १४२८ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुत सारे वीरों को रण में मारकर राजा खड्गसिंह को थोडा-सा क्रोध आया । जसे ही उसने हाथ में तलवार पकड़ी तो उसने हाथी, घोडे और रथ देखते ही देखते काट गिराये उसे देखकर शत्रु एकत्र हो

को तिन मंत्र कर्यो है। केहरि को बध जिउँ चितवै म्रिग सो तो ब्रिथा कबहूँ न डर्यो है ॥ १४२९ ॥ ॥ सवैया ॥ भूप बली बहुरो रिसकै जब हाथन मै हथियार गहे है। सूर हने बल बंड घने कबि राम भनै चित मै जु चहे है। सीस परे कटि बीरन के धरनी खड़गेश सु सीस छहे है। मानहु स्रउन सरोवर मै सिर शत्रन कंज से मूँद रहे है ॥१४३०॥ ॥ दोहरा ॥ तकि झुझसिंघ को खड़ग सो खड़ग लियो करि कोप। हन्यो तबै सिर शत्र को जन दीनी अस ओप ॥१४३१॥ ॥ सवैया ॥ पुनि सिंघ जुझार महा रन मै लरिकै मरिकै सुरलोक बिहार्यो। सैन जितो तिह संग हुतो तब ही अस लै न्रिप मार बिदार्यो। जेते रहे सु भजे रन ते किनहूँ नही लाज की ओर निहार्यो। मानहु दंड लिए कर मै जम के सम भूप महा अस धार्यो ॥ १४३२ ॥ ॥ दोहरा ॥ खड़गसिंघ सरु धनु गह्यो किनहू रह्यो न धीर। चले त्याग कै रन रथी महाँरथी बलबीर ॥ १४३३ ॥ जब भाजी जादव चमूँ क्रिशन बिलोकी नैन। सातक सिउ हरि यौ कह्यो तुम धावहु लै सैन ॥१४३४॥

गए और उसको मारने की मंत्रणा करने लगे। यह ऐसा ही लगा जैसे सिंह का वध करने के लिए मृग एकत्र हुए हों और सिंह अभय खड़ा हो ॥ १४२९ ॥ ॥ सवैया ॥ महाबली राजा ने जब क्रोधित होकर हाथ में शस्त्र पकड़े तो अपनी इच्छा के अनुसार उसने वीरों को मार डाला। वीरों के सिर खड्गसिंह के वारों से इस प्रकार धरती पाट रहे हैं मानो रक्त के सरोवर में शत्रु के सिर रूपी कमल सरोवर को पाटे हुए हों ॥ १४३० ॥ ॥ दोहा ॥ जूझनसिंह के खड्ग को देखकर खड्गसिंह ने अपनी कृपाण क्रोधित होकर हाथ में ले ली और बिजली के समान उसे शत्रु के सिर पर दे मारा और उसे मार डाला ॥ १४३१ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार जुझारसिंह इस महायुद्ध में लड़ मरकर स्वर्गलोक जा पहुँचा और उसके साथ जितनी सेना थी राजा ने उसे खण्ड-खण्ड कर डाला। जितने बचे वे मान-मर्यादा का ध्यान किए बिना भाग खड़े हुए। उन्हें राजा खड्गसिंह यम के रूप में काल का दण्ड हाथ में लिये हुए दिखाई पड़ने लगा ॥ १४३२ ॥ ॥ दोहा ॥ जब खड्गसिंह ने धनुष-बाण हाथ में पकड़ा तो सबका धैर्य छूट गया और सभी महारथी और बलवान वीर युद्ध छोड़कर चल पड़े ॥ १४३३ ॥ जब यादव-सेना को भागते हुए कृष्ण ने देखा तब सात्यकि को बुलाकर कृष्ण ने कहा कि तुम सेना लेकर जाओ ॥ १४३४ ॥ ॥ सवैया ॥ सात्यकि कृतवर्मा उद्धव बलराम वासुदेव

॥ सवैया ॥ सातक अउ बरमाक्रित ऊधव स्री मुसली कर मै हलु लै । बसुदेव ते आदिक बीर जिते तिह आगे कियो बल कउ दलु दै । सभहू न्रिप ऊपरि बानन ब्रिष्ट करी मन मै तकि कै खलु छै । सुरराज पठे गिर गोधन पै रिस मेघ मनो बरखै बलु कै ॥ १४३५ ॥ ॥ सवैया ॥ सर जाल कराल सभै सहिकै गहिकै बहुरो धन बान चलाए । बाज करे सभहूँन के घाइल सूत सभै तिन के रन घाए । पैदल के दल मांझि पर्यो तेई बानन सो जमुलोक पठाए । स्यंदन काटि दयो बहुरो सभ ह्वै बिरथी जदुबंस पराए ॥ १४३६ ॥ ॥ सवैया ॥ काहे कउ भाजत हो रन ते बल जुद्ध समो पुन ऐसो न पैहै । सातक सो खड़गेश कह्यो अब भाजहु तै कछु लाज रहैहै । जउ कहूँ अउर समाज मै जाइहो सो कहि काइर राजव है है । (मू०ग्रं०४४१) ता ते बिचार कै आन भिरो किन भाजकै का मुख लै घर जैहै ॥ १४३७ ॥ ॥ स्वैया ॥ यों सुनि सूर न कोऊ फिर्यो रिसकै अरिकै न्रिप पाछै धयो है । जादव भाजत जैसे अजा खड़गेश मनो म्रिगराज भयो है । धाइ मिल्यो मुसलीधरि को तिन कंठ बिखै धनु डार लयो है । तउ

आदि सब वीरों को दल देकर आगे भेजा और इन सबों ने खड्गसिंह का अनिष्ट करने के लिए ऐसी बाण-वर्षा की मानो इन्द्र ने गोवर्धन पर्वत पर वर्षा करने के लिए बलशाली मेघों को भेजा हो ॥१४३५॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने भीषण बाण-वर्षा को सहते हुए स्वयं भी बाण चलाये और सब राजाओं के घोड़ों को घायल करते हुए उसने उनके सभी सारथियों को मार डाला। उसके बाद वह पैदलों के दल में कूद पड़ा और बाणों से उन्हें यमलोक भेजने लगा। बहुतों के रथों को काट डाला और रथ-विहीन होकर यादव भाग खड़े हुए ॥ १४३६ ॥ ॥ सवैया ॥ रण से सब क्यों भाग रहे हो, तुम सबको युद्ध का ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा। खड्गसिंह ने सात्यकि से कहा कि तुम कुछ मर्यादा का ध्यान रखो और भागो मत, क्योंकि जब तुम किसी भी समाज में जाओगे तो वे लोग कहेंगे कि कायरों का राजा वही है। इसलिए तुम विचारपूर्वक मुझसे आ भिड़ो, क्योंकि भागकर तुम कौन सा मुँह लेकर घर जाओगे ॥ १४३७ ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर भी कोई शूरवीर वापस नही आया तो राजा क्रोधित होकर शत्रु के पीछे दौड़ा। यादव बकरियों की तरह भाग रहे हैं और खड्गसिंह मानो सिंह बन गया है। राजा दौड़कर बलराम को मिला और उसके गले में धनुष डाल दिया तब हँसकर बलराम

हसिकै अपने बस कै बलदेवहू कउ तब छाड दयो है ॥ १४३८ ॥
॥ दोहरा ॥ जब सभ ही भट भाजकै गए शरन ब्रिजराइ ।
तब जदुपति सभ जादवन कीनो एक उपाइ ॥ १४३९ ॥
॥ स्वैया ॥ घेरहि याह सभै मिलिकै हम ऐसे बिचार सभै भट
धाए । आगे कियो ब्रिजभूखन कउ सभ पाछे भए मन कोप
बढाए । कान प्रमान लउ तान कमानन यों न्रिप ऊपरि बान
चलाए । मानहु पावस की रित मै घन बूँदन जिउँ सर तिउ
बरखाए ॥ १४४० ॥ काटि कै बान सभै तिन के अपने सर
स्री हरि के तन घाए । घाइन ते बहु स्रउन बह्यो तब स्री
पति के पग ना ठहराए । अउर जिते बरबीर हुते रन देखिकै
भूपति को बिसमाए । धीर न काहू सरीर रह्यो जदुबीर ते
आदिक बीर पराए ॥ १४४१ ॥ स्री जदुबीर के भाजत ही
छुट धीर गयो बर बीरन को । अति ब्याकुल बुद्ध निराकुल
ह्वै लख लागे है घाइ सरीरन को । सु धवाइकै स्यंदन भाज
चले डर मान घनो अरि तीरन को । मन आपने को समझावत
स्याम तै कीनो है काम अहीरन को ॥१४४२॥ ॥ दोहरा ॥ निज
मन को समझाइकै बहुरि फिरे घनस्याम । जादव सैना संगि
लै पुन आए रनधाम ॥ १४४३ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥

को अपने वश में करते हुए पुनः राजा ने छोड़ दिया ॥१४३८॥ ॥ दोहा ॥ जब सभी शूरवीर भाग के कृष्ण की शरण में गए तो कृष्ण और सभी यादवों ने मिलकर एक उपाय किये ॥ १४३९ ॥ ॥ सवैया ॥ इसको सभी मिलकर घेर लें, यह विचार कर सभी शूरवीर आगे बढ़े। उन्होंने आगे तो कृष्ण को किया और स्वयं क्रोधित हो पीछे-पीछे चले। कान तक कमान खींच-खींचकर उन्होंने राजा पर इस प्रकार बाण-वर्षा की जैसे वर्षाऋतु में बूँदें पड़ती है ॥ १४४० ॥ उनके सभी बाणों को काटकर उसने श्रीकृष्ण के शरीर पर अनेकों घाव कर दिए। उन घावों से इतना रक्त बहा कि श्रीकृष्ण युद्धस्थल में ठहर न सके। जितने अन्य राजा थे वे भी खड्गसिंह को देख आश्चर्य-चकित रह गए। किसी के भी शरीर में धैर्य बाक़ी न बचा और सभी यादव वीर भाग खड़े हुए ॥ १४४१ ॥ श्रीकृष्ण के भागते ही सभी वीरों का धैर्य छूट गया और वे अपने शरीर के घावों को देख अत्यन्त व्याकुल हो उठे। वे रथों को हँकवाकर बाण-वर्षा के डर से भाग खड़े हुए और अपने मन को समझाने लगे कि श्रीकृष्ण ने खड्गसिंह से लड़ाई मोल लेकर बुद्धिपूर्ण काम नहीं किया ॥ १४४२ ॥ ॥ दोहा ॥ अपने मन को समझाते हुए श्रीकृष्ण यादव

॥ दोहरा ॥ खड़गसिंघ को हरि कह्यो अब तूँ खड़ग सँभार । जाम दिवस के रहत ही डारों तोहि सँघार ॥ १४४४ ॥ ॥ स्वैया ॥ कोप कै बैन कहै खड़गेश को स्री हरि जू धन बानन लै कै। चाम के दाम चलाइ लए तुमहू रन मै मन को निरभै कै। मत्त करी गरबै तब लउ जब लउ म्रिगराज गह्यो न रिसै कै। काहे कउ प्रानन सो धन खोवत जाहु भले हथियारन दै कै ॥१४४५॥ यों सुनिकै हरि की बतिआ तब ही न्रिप उत्तर देत भयो है। काहे कउ शोर करै रन मै बन मै जनु काहू ने लूट लयो है। बोलत हो हठि के सठि जिउँ (मू०ग्रं०४४२) हम ते कई बारन भाज गयो है। नाम पर्यो ब्रिजराज ब्रिथा बिन लाज समाज मै आजु खयो है ॥१४४६॥ ॥ खड़गेश बाच ॥ ॥ सवैया ॥ काहे कउ क्रोध सो जुधु करो हरि जाहु भले दिन कोइक जीजै। बैस किशोर मनो हरि मूरति आनन मै अब ही मस भीजै। जाइऐ धाम सुनो घनस्याम बिस्राम करो सुख अंम्रित पीजै। नाहक प्रान तजो रन मै अपने पित मात अनाथ न कीजै ॥१४४७॥

सेना के साथ पुनः युद्धभूमि में आ गए ॥ १४४३ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह से श्रीकृष्ण ने कहा कि अब तुम तलवार सम्हाल लो क्योंकि मैं एक प्रहर दिन रहते तक तुमको मार डालूँगा ॥ १४४४ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित हो धनुष-बाण हाथ में लेकर खड्गसिंह से कृष्ण ने कहा कि तुमने निर्भय हो युद्धस्थल में खूब चमड़े का सिक्का चला लिया है। मद-मस्त हाथी तभी तक गर्व कर सकता है जब तक सिंह क्रोधित हो उस पर टूट न पड़े। तुम क्यों प्राणों से हाथ धोते हो। भाग जाओ और शस्त्र हम लोगों को दे दो ॥ १४४५ ॥ कृष्ण की बातें सुन राजा ने उत्तर दिया कि बन में लुटे हुए व्यक्ति के समान इस युद्धभूमि में क्यों शोर कर रहे हो। मूर्खों की तरह तुम हठपूर्वक बोल रहे हो हालाँकि मेरे सामने से कई बार भाग चुके हो। नाम तो तुम्हारा व्रजराज है परन्तु प्रतिष्ठा गँवाकर भी तुम अपने समाज में बने हुए हो ॥ १४४६ ॥ ॥ खड्गेश उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ क्यों क्रोधित हो युद्ध कर रहे हो, हे कृष्ण ! जाओ, थोड़े दिन और सुखपूर्वक जी लो। तुम्हारी अभी किशोरावस्था है और तुम सुन्दर चेहरेवाले हो तथा तुम्हारी अभी मसें ही फूट रही हैं अर्थात् अभी तुम यौवन में प्रवेश ही कर रहे हो। हे कृष्ण ! अपने घर जाओ, आराम करो और सुखामृत पान करो। व्यर्थ ही युद्ध में प्राण गँवाकर अपने माता-पिता का सहारा मत गँवाओ १४४७ सवैया क्यों व्यर्थ ही हठ करके हे कृष्ण तुम हम

॥ सवैया ॥ काहे कउ कान्ह अयोधन मै हठ कै हम सो रन दुंद मचैहो । जुद्ध की बात बुरी सभ ते हरि क्रुद्ध किए न कछू फल पैहो । जानत हो अब या रन मै हम सो लरि कै तुम जीत न जैहो । जाहु तो भाज कै जाहु अबै नही अंत को अंत के धाम सिधैहो ॥ १४४८ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै हरि चांप लयो करि तानकै बान कउ खैंच चलायो । भूपत कउ हरि घाइल कीनो है स्रीपति कउ न्रिप घाइ लगायो । बीर दुहू तिह ठउर बिखै कबि राम भनै अति जुद्ध मचायो । बान अपार चले दुहू ओर ते अभ्रन जिउं दिव मंडल छायो ॥१४४९॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर सहाइ के काज जितो बर बीरन तीर चलाए । भूपत एक न बान लग्यो लखि दूरि ते बानन सौ बहु घाए । धाइ परी बहु जादव सैन धवाइकै स्यंदन चाँप चढाए । आवत स्याम भनै रिसिकै न्रिप सो पल मै दल पै दल घाए ॥ १४५० ॥ एक गिरे तजि प्रानन को रन की छित मै अति जुद्ध मचै कै । एक गए भजिकै इक घाइल एक लरे मन कोप बढै कै । तउ न्रिप लै कर मै करवार दियो बहु खंडन खंडन कै कै । भूप को पउरख है महबूब निहार रहे सभ आशक ह्वै

से युद्ध कर रहे हो । युद्ध बहुत बुरी चीज़ है और तुम्हें क्रोधित होकर के विशेष लाभ नहीं मिलनेवाला है । तुम जानते हो कि तुम इस युद्ध में हमसे जीत नहीं सकते, इसलिए तुरन्त भाग जाओ नहीं तो अन्त में तुम्हें यमलोक जाना होगा ॥ १४४८ ॥ ॥ सवैया ॥ यह सुनकर कृष्ण ने हाथ में धनुष लिया और खींचकर बाण चलाया । कृष्ण ने राजा को और राजा ने कृष्ण को घाव लगाया । दोनों ओर के वीरों ने घनघोर युद्ध किया । अपार बाण-वर्षा दोनों ओर से होने लगी और ऐसा लगने लगा कि जैसे आकाश में बादल छा गये हों ॥ १४४९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण की सहायता के लिए जितने भी वीरों ने बाण चलाये उनमें से एक भी बाण राजा को नहीं लगा परन्तु वे स्वयं दूर से ही बाण खाकर मरने लगे । यादव सेना रथों पर सवार हो धनुष चढ़ाते हुए टूट पड़ी । कवि के कथनानुसार वे क्रोधित होकर आते हैं परन्तु राजा क्षण भर में सेना के समूहों को नष्ट कर डालता है ॥ १४५० ॥ कुछ तो निष्प्राण हो युद्धस्थल में गिर पड़े और कुछ भाग गए, कुछ घायल हो गए तथा कुछ क्रोधित हो लड़ते रहे । राजा ने हाथ में तलवार ले सैनिकों को खण्ड-खण्ड कर डाला और ऐसा लग रहा है कि राजा का पौरुष

कै ॥ १४५१ ॥ ॥ सवैया ॥ अउर किते बलबंड हुते कबि स्याम जिते न्रिप कोप पछारे। सुद्ध प्रबीन सु बीर बडे रिसि साथ सोऊ छिन माहि सँघारे। स्यंदन काटि दए तिन के गज बाज घने संगि बानन मारे। रुद्र को खेलु कियो रन मै जेऊ जीवत ते तजि जुद्धु पधारे ॥ १४५२ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन भजाइकै धाइकै आइकै राम अउ स्याम के साथ अर्यो है। लै बरछा जमधार गदा अस क्रुद्ध ह्वै जुद्ध निशंगि कर्यो है। तउ बहुरो कबि स्याम भनै धनु बान सँभार कै पान धर्यो है। जिउँ घन (मू०ग्रं०४४३) बूँदन तिउ सर सिउ कमलापति को तन ताल भर्यो है ॥ १४५३ ॥ ॥ दोहरा ॥ बेध्यो जब तन क्रिशन रिस इंद्रास्तर संधान। मंत्रन सिउ अभिमंत्र करि गहि धनु छाड्यो बान ॥ १४५४ ॥ ॥ स्वैया ॥ इंद्र ते आदिक बीर जिते तब ही सर छूटत भू पर आए। राम भनै अगनायुध लै न्रिप कउ लखकै करि कोप चलाए। भूप सरासन लै सु कटे अपने सर लै सुर के तन लाए। घाइल स्रउन भरे लखिकै सुरराज डरै मिलिकै सभ धाए ॥ १४५५ ॥

मानो प्रेमिका हो और सभी आशिक़ बनकर उसे देख रहे हों ॥ १४५१ ॥ ॥ सवैया ॥ अन्य कितने ही महाबलियों को क्रोधित हो राजा ने पछाड़ फेंका। बड़े-बड़े वीरों को क्रोध में आकर राजा ने क्षण भर में मार डाला। उनके रथों को काट दिया और अनेकों हाथी-घोड़ों को बाण से मार डाला। रुद्र के समान युद्ध में राजा ने नृत्य किया और उसमें जो जीवित बचे वे भाग खड़े हुए ॥ १४५२ ॥ ॥ सवैया ॥ सेना को दौड़ाकर पुनः दौड़कर राजा बलराम और कृष्ण के साथ आ भिड़ा और उसने हाथ में बरछा, यमदाढ़, गदा, कृपाण आदि लेकर निर्भय होकर युद्ध किया। इसके बाद उसने धनुष-बाण हाथ मे लिया और बादलों की बूँदों के समान श्रीकृष्ण के सरोवर रूपी तन को बाणों से भर दिया ॥ १४५३ ॥ ॥ दोहा ॥ जब कृष्ण का तन बाणों से बिंध गया तब उसने इन्द्रास्त्र को धनुष पर चढ़ाया और मंत्रों से अभिमंत्रित कर उसे चला दिया ॥ १४५४ ॥ ॥ सवैया ॥ बाण के छूटते ही इन्द्र के समान महाबली धरती पर प्रकट हो गए और राजा को लक्ष्य कर क्रोधित हो आग्नेयास्त्र चलाने लगे। राजा ने धनुष लेकर उन सबको काट डाला और अपने बाणों से देवताओं को घायल कर दिया। देवगण रक्त से लथ-पथ हो डरे हुए देवराज इन्द्र के पास पहुचे। १४५५ सवैया । सूर्य

। सवैया । देव रवादिक बीर घने कबि स्याम भने अति कोप तए है । लै बरछी करवार गदा सु सभै रिसि भूप सो आइ खए है । आन इकत्र भए रन मै जसु ता छबि को कबि भाख दए है । भूप के बान सुगंध के लैबे कउ भउर मनो इक ठउर भए है ॥ १४५६ ॥ ॥ दोहरा ॥ देवन मिल खड़गेश कउ घेरि चहूँ दिस लीन । तब भूपत धनु बान लै कहो जु पउरख कीन ॥ १४५७ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ सूर को द्वादस बानन बेधिकै अउ सस को दस बान लगाए । और सचीपति कउ सर सउ सु लगै तन भेदकै पार पराए । जच्छ जिते सुर किंनर गंध्रब ते सभ तीरन सो त्रिप घाए । केतक भाजि गए रन ते डरि केतकि तउ रन मैं ठहराए ॥ १४५८ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध भयो सु घनो जब ही तब इंद्र रिसे करि साँग लई है । स्याम भनै बल को करिकै तिह भूप के ऊपरि डार दई है । स्री खड़गेश सरासन लै सर काट दई उपमा सु भई है । बान भयो खगराज मनो बरछी जनो नागन भच्छ गई है ॥ १४५९ ॥ ॥ सवैया ॥ पीड़त ह्वै सभ बानन सो पुनि इंद्र ते आदिक बीर भजाए । सूर ससी रन त्याग भजे अपने

के समान तेजस्वी वीर क्रोधित हो उठे और बरछी, तलवार, गदा आदि ले क्रोधित होकर राजा खड्गसिंह से भिड़ गए। वे सभी इस प्रकार से एक ही स्थान पर एकत्र हो गए हैं कि मानो राजा के फूल रूपी बाणों की सुगंध लेने के लिए देवता रूपी भौंरे इकट्ठे हुए हों ॥ १४५६ ॥ ॥ दोहा ॥ सभी देवताओं ने चारों दिशाओं से राजा खड्ग-सिंह को घेर लिया तब राजा ने जो पौरुष दिखाया अब उसका वर्णन करता हूँ ॥१४५७॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ सूर्य को बारह बाण मारते हुए चन्द्रमा को उसने दस बाण मारे। सौ बाण इन्द्र को मारे जो उसका शरीर छेदकर पार हो गए। जितने भी यक्ष, देवता, किन्नर, गंधर्व आदि थे उनको राजा ने तीरों से मार गिराया। कितने ही युद्ध से भाग गए परन्तु फिर भी कितने ही युद्धस्थल में डटे रहे ॥१४५८॥ ॥ सवैया ॥ जब घनघोर युद्ध हुआ तो क्रोधित होकर इन्द्र ने अपने हाथ में बरछी पकड़ी और बलपूर्वक उसे राजा पर चला दिया। खड्गसिंह ने धनुष-बाण लेकर उस बरछी को काट गिराया। राजा का बाण तो मानो गरुड़ है और बरछी मानो नागिन है जिसे बाण रूपी गरुड़ ने खा लिया हो ॥ १४५९ ॥ ॥ सवैया ॥ बाणों से पीड़ित होकर इन्द्र आदि भाग खड़े हुए। सूर्य, चन्द्र सभी युद्ध को त्याग गए और मन में अत्यन्त

मनि मै अति त्रास बढाए । खाइकै घाइ घने तन मै भजगे सभ ही न कोऊ ठहराए । जाइ बसे अपने पुर मै सुर शोक भरे सभ लाज लजाए ॥ १४६० ॥ ॥ दोहरा ॥ जब सकल सुर भज गए तब न्रिप कीनो मान । धनख तान कर मै प्रबल हरि पर मारे बान ॥ १४६१ ॥ तब हरि रिसि कै करि लयो राछस अस्त्र सँधान । मंत्रन सिउ अभिमंत्र करि छाड्यो अदभुत बान ॥ १४६२ ॥ ॥ सवैया ॥ दैत अनेक भए तिह ते (मू०ग्रं०४४४) बलवंड करूप भयानक कीनो । चक्र धरे जमदार छुरी अस ढाल गदा बरछी कर लीने । मूसल और प्रहार उखार लिए कर मै द्रुम पाति बिहीने । दाँति बढाइकै नैन नचाइकै आइकै भूपति को भय दीनो ॥ १४६३ ॥ ॥ स्वैया ॥ केस बडे सिर बेस बुरे अर देह मै रोम बडे जिनके । मुख सो नर हाडन चाबत हैं पुन दाँत सो दाँत बजे तिनके । सर स्रोनत के अखियाँ जिनकी संग कौन भिरै बल कै इनके । सर चाँप चढाइकै रैन फिरैं सभ काम करैं नित पापन के ॥ १४६४ ॥ ॥ स्वैया ॥ धाइ परे मिल कै उत राछस भूप इते थिर ठाँढो रह्यो है । डाढसु कै अपणे मन को रिस

भयभीत हो उठे। घायल होकर कई भाग गए और कोई नहीं ठहरा। सभी देवता लज्जित होकर अपने-अपने लोकों में पुनः जा बसे ॥ १४६० ॥ ॥ दोहा ॥ जब सब देवता भाग गए तो राजा ने गर्व का अनुभव किया। अब उसने धनुष तानकर श्रीकृष्ण पर बाण-वर्षा की ॥ १४६१ ॥ तब कृष्ण ने क्रोधित होकर दैत्यास्त्र से लक्ष्य साधा और इस अद्भुत बाण को मंत्रों से अभिमंत्रित कर उसे छोड़ दिया ॥ १४६२ ॥ ॥ सवैया ॥ उस बाण से विकराल दैत्य पैदा हुए जिनके हाथों में चक्र, जमदाढ़, छुरी, कृपाण, ढालें, गदाएँ और बर्छियाँ थीं। उनके हाथों में प्रहार करके के लिए मुगदर थे और उन्होंने पत्तों-रहित वृक्षों को भी उखाड़ लिया। वे दाँत निकालकर, आँखों को फैलाते हुए राजा को भयभीत करने लगे ॥ १४६३ ॥ ॥ सवैया ॥ वे बड़े केशों वाले, भयानक वेशों वाले थे और उनके शरीर के बाल बड़े-बड़े थे। वे मुख से मनुष्यों की हड्डियाँ चबा रहे थे और उनके दाँत पर दाँत बज रहे थे। उनकी आँखें रक्त के समुद्र के समान थीं; और इनके साथ कौन भिड़ सकता था। वे रात-रात भर धनुष-बाण लेकर घूमनेवाले और नित्य पापकर्म करनेवाले थे ॥ १४६४ ॥ ॥ सवैया ॥ उधर से राक्षस टूट पड़े परन्तु इधर राजा शान्तिपूर्वक स्थिर रहा पुन अपने मन को

शत्रुन को इह भाँत कह्यो है । आज सभै हनिहों रन मैं कहि यो बतियाँ धन बान गह्यो है । यौ न्रिप को अति धीरज पेख कै दानव को दल रीझ रह्यो है ॥ १४६५ ॥ ॥ स्वैया ॥ तान कमान महा बलवान सु शत्रन को बहु बान चलाए । एकन की भुज काटि दई रिस एकन के उर मै सर लाए । घाइल एक गिरे रन मै लख काइर छाड कै खेत पराए । एक महाँ बलवंत दयंत रहे थिर ह्वै तिन बैन सुनाए ॥ १४६६ ॥ ॥ स्वैया ॥ काहे को जूझ करैं सुन रे न्रिप तोहू को जीवत जान न दैहैं । दीरघ देह सलोनी सी मूरति सो सम भच्छ कहाँ हम पैहैं । तू नही जानत हैं सुन रे सठ तो कह दाँतन साथ चबैहैं । तोही के मास के खंडन खंड कै पावक बान मै भुंज कै खैहैं ॥ १४६७ ॥ ॥ दोहरा ॥ यौ सुनकै तिह बैन को न्रिप बोल्यो रिस खाइ । जो हम ते भजि जाइ तिह माता दूध अपाइ ॥ १४६८ ॥ एकु बैन सुन दानवी सैन परे सभ धाइ । चहूँ ओर घेर्यो न्रिपति खेत बार की न्याइ ॥ १४६९ ॥ ॥ चौपई ॥ असुरन घेर खड़गसिंघ लीनो । तब न्रिप कोप घनो मन कीनो । धनख बान कर बीच सँभारं । शत्र अनेक

मज़बूत कर उसने क्रोधित होकर शत्रुओं से यह कहा कि आज मैं सबको युद्ध में मार गिराऊँगा । यह कहकर उसने धनुष-बाण सँभाल लिया । राजा खड्गसिंह का धैर्य देखकर दैत्यों का दल प्रसन्न हो उठा ॥ १४६५ ॥ ॥ सवैया ॥ धनुष खींचकर उस महाबली ने शत्रुओं पर बाण-वर्षा की । किसी की भुजा काट दी और क्रोधित होकर किसी के सीने में बाण मारा । कोई घायल होकर युद्धस्थल में गिर पड़ा और कोई कायर युद्ध देखकर भाग खड़ा हुआ । वहाँ एक बलशाली दैत्य बच रहा उसने स्थिर होकर राजा से कहा ॥ १४६६ ॥ ॥ सवैया ॥ हे राजा ! तुम क्यों जूझ रहे हो, तुम्हें जीवित हम नहीं जाने देंगे । तुम्हारी काया लम्बी और सुन्दर है; ऐसा आहार हम अन्य कहाँ पर पाएँगे । अरे मूर्ख ! तुम नहीं जानते हो तुम्हें हम दाँतों से चबा जाएँगे । तेरे मांस के टुकड़ों को हम अपने बाणों की अग्नि से भूनकर खा जाएँगे ॥ १४६७ ॥ ॥ दोहा ॥ यह सुनकर राजा क्रोधित होकर बोला कि जो मुझसे बचकर चला जाएगा, समझो वह माता के दूध के ऋण से उऋण हो गया है ॥ १४६८ ॥ यह सुनकर दानवी सेना राजा पर टूट पड़ी और राजा को खेत की बाड़ की तरह चारों ओर से घेर लिया ॥ १४६९ ॥ ॥ चौपाई ॥ दैत्यों ने जब राजा को घेर लिया तो राजा मन में अत्यन्त क्रुद्ध

मार ही डारै ॥ १४७० ॥ क्रूरकरम इक राछस नामा । जिन जीते आगे संग्रामा । सो तब ही न्रिप सामुहि गयो । अत ही जूझ दुहन को भयो ॥ १४७१ ॥ ॥ स्वैया ॥ आयुध लै सभ ही अपणे जब ही वह भूपति संग अर्यो है । जुद्ध अनेक प्रकार कियो रन की छित ते कोऊ नाहि टर्यो है । तौ न्रिप लै कर मै असि को रिप मूंड कट्यो गिर भूम पर्यो है । देह (मू०ग्रं०४४५) छुट्यो नही कोप हट्यो निज ओठ को दाँतन सों पकर्यो है ॥१४७२॥ ॥ दोहरा ॥ क्रूरकरम को खड़गसिंघ जब मार्यो रन ठौर । असुरन की सैना हुती दानव निकस्यो और ॥१४७३॥ ॥ सोरठा ॥ क्रूर दैंत जिह नाम बडो दैंत बलवंड अति । आगे बहु संग्राम लर्यो अर्यो नाहन डर्यो ॥ १४७४ ॥ ॥ चौपई ॥ क्रूरकरम बध नैन निहार्यो । तब ही अपनो खड़ग सँभार्यो । क्रूर दैंत रिस न्रिप पर धायो । मानो काल मेघ उमडायो ॥ १४७५ ॥ आवत ही तिह भूप पचार्यो । जाहु कहाँ मुझ बंध पछार्यो । हौ तुम सो अब जुद्ध मचैहै । भ्रात गयो जह तोहि पठैहैं ॥ १४७६ ॥ यो कहि कै तब खड़ग

हो उठा। धनुष-बाण हाथ में लेकर उसने अनेकों शत्रुओं को मार डाला ॥ १४७० ॥ क्रूरकर्म नामक एक राक्षस था जिसने पहले भी अनेको युद्ध जीते थे। वह खड्गसिंह के सामने गया और इन दोनों वीरों का भीषण युद्ध हुआ ॥ १४७१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब वह शस्त्र लेकर राजा के सामने डटा तो उसने अनेक प्रकार से युद्ध किया और युद्धभूमि से कोई भी पीछे नहीं हटा। राजा ने कृपाण हाथ में लेकर शत्रु को मार डाला और उसका सिर धरती पर गिर पड़ा। उसका प्राणान्त तो हो गया परन्तु उसका क्रोध अभी तक शान्त नहीं हुआ था और उसने अपने दाँतों से अपना ओठ दबा रखा था ॥ १४७२ ॥ ॥ दोहा ॥ क्रूरकर्म को जब खड्गसिंह ने रणभूमि में मार गिराया तो राक्षसों की सेना से एक अन्य दैत्य निकला ॥ १४७३ ॥ ॥ सोरठा ॥ क्रूरदैत्य नामक यह राक्षस अत्यन्त बलवान था। वह पहले भी बहुत संग्राम लड़ चुका था; अतः वह राजा के सामने आ अड़ा और तनिक भी नहीं डरा ॥ १४७४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब उसने क्रूरकर्म के वध को अपनी आँखों से देखा तो उसने अपना खड्ग सँभाल लिया। क्रूरदैत्य अब क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़ा और ऐसा लगा मानो काल रूपी बादल उमड़ पड़ा हो ॥ १४७५ ॥ आते ही उसने राजा को ललकारा कि मेरे भाई को मारकर अब तुम कहाँ जा रहे हो। अब मैं तुमसे लड़ूँगा और जहाँ मेरा भाई गया

सँभार्‌यो । अति प्रचंड बल कोप प्रहार्‌यो । भूपति लख्यो काटि असि दीनो । सोऊ मार रन भीतर लीनो ॥ १४७७ ॥ ॥ दोहरा ॥ क्रूरदंत औ क्रूरक्रम दोऊ गए जमधाम । सैना तिन की शस्त्र लै घेर्‌यो न्रिप संग्राम ॥१४७८॥ ॥ स्वैया ॥ रोस कियो तिनहूँ मन मैं जेऊ दैंत बचे न्रिप ऊपर धाए । बान कमान गदा बरछी अगनायुध लै कर कोप बढाए । तौ न्रिप तीर सरासन लै सभ आवत बाट मै काट गिराए । आपने काढ निखंगहु ते सर शत्नन के उर बीच लगाए ॥ १४७९ ॥ ॥ चौपई ॥ तब सभ शत्न भाज कै गए । कोऊ सनमुख होत न भए । अधिक दैंत जमलोक पठाए । जिअति रहे रन त्याग पराए ॥ १४८० ॥ ॥ स्वैया ॥ भाज गए सभ दैंत जबै तब भूप रिस्यो हरि को सर मारे । लागत ही कबि स्याम कहै तन स्री जदुबीर को चीर पधारे । बेधि कै औरन के तन को पुन औरन जाइ लगे सु संघारे । देखहु पौरख भूपति को अब एक है आप अनेक बिदारे ॥ १४८१ ॥ ॥ चौपई ॥ स्री हरि जल को अस्त्र चलायो । सो छुट कै न्रिप ऊपर आयो । बरनसिंघ मूरति धरि आए । सरतन की सैना सँग

तुम्हें भी वहीं पहुँचाऊँगा ॥ १४७६ ॥ यह कहकर उसने खड्‌ग सँभाला और कुपित होकर प्रचंड वार किया। राजा ने देखा और उसकी तलवार को काटकर उसे भी युद्ध में मार गिराया ॥ १४७७ ॥ ॥ दोहा ॥ क्रूरदैंत्य और क्रूरकर्म दोनों दैत्य यमलोक जा पहुँचे। उनकी सेना को शस्त्र लेकर राजा ने युद्धभूमि में घेर लिया ॥ १४७८ ॥ ॥ सवैया ॥ बचे हुए दैत्य क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़े। उनके हाथों में बाण, कृपाण, गदा, बरछी और आग्नेयास्त्र थे। राजा ने धनुष-बाण से उनको रास्ते ही में काट गिराया और अपने तरकस से बाण निकालकर उनकी छातियों को वेध दिया ॥१४७९॥ ॥ चौपाई ॥ तब सभी शत्रु भाग गए और कोई सामने न ठहरा। काफी दैत्य मारे गए और जो बचे वे युद्ध छोड़कर भाग गए ॥ १४८० ॥ ॥ सवैया ॥ जब सभी दैत्य भाग गए तो क्रोधित होकर राजा ने श्रीकृष्ण पर तीर चलाए जो लगते ही कृष्ण के शरीर को चीरकर पार हो गए तथा अन्यों के तनों को छेदते हुए दूसरों के शरीर में जा लगे। राजा का पौरुष देखो कि स्वयं तो अकेला है, परन्तु अनेकों को मार रहा है ॥१४८१॥ ॥ चौपाई ॥ श्रीकृष्ण ने वरुणास्त्र चलाया और वह राजा खड्गसिंह को लगा। वरुण सिंह

ल्याए ।। १४८२ ।। आवत सिंघन शबदि सुनायो। बार राज अति रिस करि धायो। सुनत शबद काँपे पुर तीनो। इन न्रिप मन मै त्रास न कीनो ।। १४८३ ।। ।। स्वैया ।। बानन साँग जलाधिप को कबि स्याम भनै तन ताड़न कीनो। सातहु सिंधन को रिसकै सर जालन सिउ उर छेद कै दीनो। घाइल (मू०ग्रं०४४६) कै सरता सगरी बहु स्रोनत सो तिह को अंग भीनो। नैकु न ठाढ रह्यो रण मैं जल राज भज्यो ग्रहि को मग लीनो ।। १४८४ ।। ।। चौपई ।। जबै जलाधिप धाम सिधारे। तब हरि को न्रिप पुन सर मारे। तब जम को हरि अस्त्र चलायो। ह्वै प्रतच्छ जम न्रिप पर धायो ।।१४८५।। ।। स्वैया ।। बीर बडो बिक्रत दैत सु नामहि कोप ह्वै स्री खड़गेश पै धायो। बान कमान क्रिपान गदा बरछी कर लै अति जुद्ध मचायो। तीर चलावत भयो बहुरो तब ता छबि को कबि भाख सुनायो। भूप को बान मनो खगराज कट्यो अरि को सर नाग गिरायो ।। १४८६ ।। ।। स्वैया ।। बिक्रत को न्रिप मार लयो जम को रिस कै पुन उत्तर दीनो। का भयो जो जिय मार घने अरु दंड बडो कर मै तुम लीनो। तोहि न

का रूप धारण कर आ पहुँचा और साथ में नदियों की सेना ले आया ।।१४८२।। आते ही वरुण ने सिंहनाद किया और क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़ा। भयकर गर्जना सुनकर तीनों लोक काँप उठे, परन्तु राजा खड्गसिंह भयभीत नहीं हुआ ।। १४८३ ।। ।। सवैया ।। बर्छियों जैसे बाणों से राजा ने वरुण के तन को प्रताड़ित कर दिया। सातों समुद्रों के हृदय को क्रोधित होकर राजा ने छेद दिया। समस्त नदियों को घायल करके रक्त मे उनके अंगों को भिगो दिया। जलराज भी युद्धस्थल में टिक न सका और भागकर उसने भी अपने घर का रास्ता पकड़ा ।। १४८४ ।। ।। चौपाई ।। जब वरुण अपने घर चला गया तो श्रीकृष्ण पर पुनः राजा ने बाण चलाए। तब कृष्ण ने यम का अस्त्र चलाया और यमराज प्रत्यक्ष होकर राजा पर टूट पड़ा ।। १४८५ ।। ।। सवैया ।। विकृत दैत्य नामक वीर क्रोधित होकर खड्गसिंह पर टूट पड़ा और बाण, कृपाण, गदा, बरछी आदि लेकर उसने भीषण युद्ध किया। तीर चलाते-चलाते वह एक से अधिक हो गया। कवि कहता है कि इस युद्ध में राजा का बाण गरुड़ के समान लग रहा था जो शत्रु के बाण रूपी नाग को मार गिरा रहा था ।। १४८६ ।। ।। सवैया ।। विकृत को मारकर राजा ने यम से कहा कि क्या हुआ जो तुमने अभी तक बहुत से लोगों को मार डाला है और यह

जीअत छाडत हो सुन रे अब मोहि इहै प्रन कीनो । मारत हों कर लै करनो कछु मो बल जानत है पुर तीनो ॥ १४८७ ॥ ॥ स्वैया ॥ यों कहि कै बतिया जम को कवि राम कहै पुन जुद्ध किओ है । भूत स्रिगालन काकन झाकन डाकन स्रोन अघाइ पिओ है । मार्यो मरै न कहूँ जम ते त्रिप मानहु अंम्रितपान किओ है । पान लिओ धन बान जबै तिन अंतक अंत भजाइ दिओ है ॥ १४८८ ॥ ॥ सोरठा ॥ जब जम दिओ भजाइ क्रिशन हेरि त्रिप यौ कह्यो । लरते किउँ नही आइ महाँरथी रनधीर तुम ॥ १४८९ ॥ ॥ स्वैया ॥ जो हरि मंत्र अराधत हैं तप साधत हैं मन मैं नही आयो । जग्य किए बहु दान दिए सभ खोजत हैं किनहूँ नही पायो । ब्रहम सचीपति नारद सारद ब्यास परासर स्री सुक गायो । सो ब्रिजराज समाज मै आज हकार कै जुद्ध के काज बुलायो ॥ १४९० ॥ ॥ चौपई ॥ तब हरि जच्छ अस्त्र करि लीनो । ऐंच कमान छाड सर दीनो । नलकूबर मनग्रीव सु धाए । सुत कुबेर के द्वै इह आए ॥ १४९१ ॥ धनद जच्छ किंनर संग लीने । ए आए

बहुत बड़ा दंड हाथ में पकड़ रखा है। मैंने यह प्रण आज कर लिया है कि तुझे जीवित नहीं छोड़ूंगा। मैं तुम्हें मारने जा रहा हूँ; तुम्हें जो जी में आए कर लो, क्योंकि त्रिलोकी मेरा बल जानती है ॥ १४८७ ॥ ॥ सवैया ॥ यह बातें कहकर, कवि राम के कथनानुसार राजा ने यम से युद्ध किया। इस युद्ध में भूत, गीदड़, कौओं और डाकिनियों ने मन भरकर रक्तपान किया। राजा यम का मारा हुआ भी नहीं मर रहा है। ऐसा लग रहा है मानो उसने अमृत-पान कर रखा हो। राजा ने जब धनुष-बाण अपने हाथ में लिया तो अन्त में यमराज भी भाग खड़ा हुआ ॥ १४८८ ॥ ॥ सोरठा ॥ जब यम को भी भगा दिया तो राजा ने कृष्ण को देखकर कहा कि हे रणधीर महारथी ! तुम आकर क्यों नहीं लड़ते ॥ १४८९ ॥ ॥ सवैया ॥ मंत्रों से आराधना द्वारा अथवा तप-साधनाओं द्वारा जो चित्त में विराजमान नहीं होता; यज्ञ करने, दान देने से भी जो प्राप्त नहीं होता; इन्द्र, ब्रह्मा, नारद, शारदा, व्यास, पराशर और शुकदेव भी जिसका गुणानुवाद करते हैं, उस व्रजराज कृष्ण को आज राजा खड्गसिंह ने पूरे समाज में से ललकारकर युद्ध के लिए बुलाया है ॥ १४९० ॥ ॥ चौपाई ॥ तब श्रीकृष्ण ने यक्ष-अस्त्र हाथ में लिया और धनुष तानकर उसे छोड़ दिया। अब कुबेर के दोनों पुत्र नलकूबर और मणिग्रीव युद्धस्थल में आ पहुँचे ॥ १४९१ ॥ अनेकों धन देने में उदार यक्ष

मन मै रिस कीने। सगल सैन तिन कै संग आई। धाइ भूप सों करी लराई॥ १४६२॥ ॥ स्वैया॥ कोप किए सभ शस्त्र लिए कर मै मिलकै तिह पै तब आए। भूप निखंग ते काढ कै बान कमान को तान सु खैंच चलाए। होत भए बिरथी बिन सूत घने तब ही जमलोक पठाए। (मू०ग्रं०४४७) ठाढो न कोऊ रह्यो तिह ठौर सभै गन किंनर जच्छ पराए॥ १४६३॥ ॥ स्वैया॥ रोस घनो नलकूबर कै सु फिर्यो लरबे कहु बीर बुलाए। सौहें कुबेर भयो धन लै सर जच्छ जिते मिल कै पुन आए। मार ही मार पुकार परै सभ ही कर मै असि लै चमकाए। मानहु स्री खड़गेश के ऊपर दंड लिए जम के गन धाए॥ १४६४॥ ॥ चौपई॥ जब कुबेर को सभ दलु आयो। तब न्रिप मन मै कोप बढायो। निज कर मै धन बान सँभार्यो। अगनत दल इक पल मै मार्यो॥ १४६५॥ ॥ दोहरा॥ जच्छ सैन बलबंड न्रिप जमपुर दई पठाइ। नलकूबर घाइल किओ अति जिय कोप बढाइ॥ १४६६॥ तब कुबेर के उर विखै मार्यो तीछन बान। लागत सर के सटकिओ छूट गयो सभ मान॥ १४६७॥

और किन्नर उन्होंने साथ लिये जो क्रोधित होकर युद्धस्थल में पहुँचे। समस्त सेना उनके साथ आई और उन्होंने राजा के साथ भीषण युद्ध किया॥ १४६२॥ ॥ सवैया॥ क्रोधित होकर हाथों में शस्त्र लेकर सब मिलकर राजा पर टूट पड़े। राजा ने तरकस से बाण निकालकर तानकर बाण चलाए। अनेकों रथी विरथी और सारथि-विहीन हो गए और राजा ने उन्हें यमलोक भेज दिया। उस स्थल पर कोई भी न ठहर सका और यक्ष तथा किन्नर सभी भाग खड़े हुए॥ १४६३॥ ॥ सवैया॥ पुनः क्रुद्ध होकर नलकूबर ने युद्ध के लिए वीरों को बुलाया। सामने कुबेर भी धन सँभालकर खड़ा हो गया तथा जितने भी यक्ष थे फिर मिलकर आ पहुँचे। वे 'मार-मार' की पुकार लगाते हुए तलवार चमका रहे थे और ऐसे लग रहे थे मानो खड्गसिंह पर यम के गण कालदंड लेकर टूट पड़े हों॥ १४६४॥ ॥ चौपाई॥ जब कुबेर का पूरा दल आ गया तो राजा के मन में क्रोध बढ़ उठा। अपने हाथों में उसने धनुष-बाण सँभाला और असंख्य सैनिकों को एक पल में मार डाला॥ १४६५॥ ॥ दोहा॥ महाबली यक्षसेना को राजा ने यमपुरी भेज दिया और क्रोधित होकर नलकूबर को घायल कर दिया॥ १४६६॥ तब राजा ने कुबेर के सीने में तीक्ष्ण बाण मारा जिसके लगते ही वह भाग खड़ा

॥ चौपई ॥ सैना सहित सभै भज गयो । ठाढो न को रन भीतर भयो । मन कुबेर अति त्रास बढायो जुद्ध करन चित बहुर न भायो ॥ १४६८ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भाज जच्छ सभ गए तबहि हरि महाबल । रुद्र अस्त्र दिय छाड सु कंप्यो तल बितल । तब शिवजू उठ धाए सूल सँभार कै । हो किउ हरि सिमर्यो हमै इहै जिय धार कै ॥ १४६६ ॥ संग रुद्र के रुद्र चले भट उठ तबै । एक रदन जू चले संग लै दल सबै । और सकल गन चले सु शस्त्र सँभार कै । हो कौन अजित प्रगट्यो भव कहैं बिचार कै ॥ १५०० ॥ को भट उपज्यो जगत मैं सभ यों करत बिचार । शिव सिखि बाहर गन सहित आए रन रिसि धार ॥ १५०१ ॥ प्रलै काल करता जहीं आए तिह जा दौर । रन निहार मन मै कह्यो इह चिंता की ठौर ॥ १५०२ ॥ ॥ दोहरा ॥ गन गनेश शिव खटबदन देखै नैन निहार । सो रिस भूपति जुद्ध हित लीने आप हकार ॥ १५०३ ॥ ॥ स्वैया ॥ रे शिव आज अयोधन मै

हुआ और उसका संपूर्ण गर्व चूर हो गया ॥ १४६७ ॥ ॥ चौपाई ॥ सेना-सहित सभी भाग गए और कोई भी वहाँ खड़ा न रहा । कुबेर मन में अत्यन्त भयभीत हो उठा और पुनः युद्ध करने की उसकी इच्छा समाप्त हो गई ॥ १४६८ ॥ ॥ अड़िल ॥ जब सभी यक्ष भाग गए तो महाबली कृष्ण ने रुद्रास्त्र छोड़ा जिससे पृथ्वी और पाताललोक भी काँप उठा । तब शिवजी त्रिशूल सँभालकर उठ दौड़े । उन्होंने सोचा कि पता नहीं क्यों श्रीकृष्ण भगवान ने हमारा स्मरण किया है ॥ १४६६ ॥ रुद्र के साथ रुद्र के अन्य शूरवीर भी चल पड़े । गणेश जी भी अपना सारा दल लेकर साथ चल पड़े तथा अन्य भी सारे गण शस्त्रों को सँभालते हुए चल पड़े । वे सभी विचार कर रहे थे कि कौन ऐसा अजेय महाबली संसार में पैदा हो गया है (जिसको मारने के लिए हमें बुलाया जा रहा है) ॥ १५०० ॥ सभी यही सोच रहे हैं कि कौन ऐसा महाबली जगत में पैदा हो गया है । शिव और उनके गण क्रुद्ध होकर अपने-अपने स्थानों से बाहर आए ॥ १५०१ ॥ जब प्रलयकर्ता स्वयं युद्धस्थल पर दौड़कर आ पहुँचे तो अब युद्धस्थल वास्तव में चिन्ताजनक हो गया ॥ १५०२ ॥ ॥ दोहा ॥ अभी गणेश, शिव, दत्तात्रेय तथा गण युद्धस्थल को देख ही रहे थे, इतने में राजा ने स्वयं इनको युद्ध के लिए ललकार दिया ॥ १५०३ ॥ ॥ सवैया ॥ हे शिव ! आज तुममें जितना भी बल है इस

लरि कै हम सो कर लै बल जेतो । ऐ रे गनेश लरैं हमरे संग है तुमरे तन मै बल एतो (मू०ग्रं०४४८) किउ रे खड़ानन तूँ गरबै मर है अबही इक बान लगै तो । काहे कउ जूझ मरो रन मै अब लउ न गयो कछु जिय महि चेतो ।। १५०४ ।। ।। शिवजू वाच खड़गेश सो ।। ।। स्वैया ।। बोलि उठ्यो रिसिकै शिवजू अरे किउ सुन तूँ गरबातु है एतो । एतन सिउ जिन रार मंडो अबिही लखिहै हम मै बलु जेतो । जो तुम मै अति पउरख है अब ढील कहा धन बानहु लेतो । जेतो है दीरघ गात तिहारो सु बानन सो करि होलहु तेतो ।। १५०५ ।। ।। खड़गेश बाच शिव सो ।। ।। सवैया ।। किउ शिव मान करै इतनो भजि है तबही जब मार मचैगी । एक ही बान लगै कप जिउँ सिगरी तुमरी अब सैन नचैगी । भूत पिसाचन की धुजनी मरिहै रन मै नही नैकु बचैगी । तेरे ही स्रउनत सो सुनि आजु धरा इह आरन बेख रचैगी ।। १५०६ ।। ।। तोटक छंद ।। शिव यों सुनिकै धनु बानु लियो । कस कान प्रमान लउ छाड दियो । न्रिप के मुख लाग बिराज रह्यो । खगराज मनो अहिराज गह्यो ।। १५०७ ।। बरछी तब भूप चलाइ दई । शिव के

युद्ध में लगाकर देख लो। हे गणेश ! क्या तुम्हारे शरीर में इतना बल है कि तुम मेरे साथ लड़ सको । क्यों, कार्तिकेय ! तुम किस बात का गर्व कर रहे हो, तुम एक ही बाण में मार डाले जाओगे। अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है, तुम लोग क्यों युद्ध में जूझकर मरना चाहते हो ।। १५०४ ।। ।। शिवजी उवाच खड्गसिंह से ।। ।। सवैया ।। शिवजी क्रोधित हो बोले कि हे राजन् ! तुम क्यो इतना गर्व करते हो। हम लोगों से झगड़ा मत करो। तुम अभी देख लोगे कि हमारे में कितना बल है। यदि तुममें बहुत पौरुष है तो अब देर क्यों करते हो, धनुष-बाण हाथ में क्यों नहीं लेते। जितना बड़ा तुम्हारा शरीर है, उतने ही बाणों से छेदकर मैं तुम्हें हलका कर दूँगा ।। १५०५ ।। ।। खड्गेश उवाच शिव के प्रति ।। ।। सवैया ।। हे शिव ! क्यों इतना मान करते हो, अभी जब मारकाट मचेगी तो तुम भाग खड़े होगे। एक ही बाण लगते तुम्हारी सारी सेना बन्दर की तरह नाच उठेगी। भूत-पिशाचों की सारी सेना समाप्त हो जायेगी और कोई भी बाक़ी नहीं बचेगा। हे शिव ! सुनो, तुम्हारे ही रक्त से सनी आज यह धरती लाल वेश धारण करेगी ।। १५०६ ।। ।। तोटक छद ।। शिव ने यह सुनकर धनुष-बाण लिया और कान तक खींचकर उसे छोड दिया वह राजा के मुख पर इस तरह लगा मानो गरुड ने सर्पराज

उर मै लग क्रांत भई । उपमा कबि ने इह भाँत कही । रवि की क्रिन कंज पै मंड रही ॥ १५०८ ॥ तब ही हरि द्वै करि खैंच निकारी । गहि डार दई मनो नागन कारी । बहुरो न्रिप म्यान ते खगु निकार्यो । करि कै बलु कौ शिव ऊपर डार्यो ॥ १५०९ ॥ हर मोहि रह्यो गिर भूम पर्यो । मनो बज्र पर्यो गिर स्रिग झर्यो । इह रुद्र दशा सभ सैन निहारी । बरछी तबही शिव पूत सँभारी ॥ १५१० ॥ जब कर बीच शकत को लयो । तब आइ न्रिपत को सामुहि भयो । कर को बलु कै न्रिप ओर चलाई । बरछी नही मानो म्रित पठाई ॥ १५११ ॥ ॥ सवैया ॥ न्रिप आवत काटि दई बरछी सर तीछन सो अर के उर मार्यो । सो सर सो कबि स्याम कहै तिह बाहन कउ प्रतअंगु प्रहार्यो । एक गनेश लिलाट बिखै सर लाग रह्यो तिरछो छबि धार्यो । मान बढ्यो गज-आनन दीह मनो सर अंकुस साथ उतार्यो ॥ १५१२ ॥ चेत भयो चढि बाहनि पै शिव लै धनु बान चलाइ दयो । सो सर तीछन है अति ही इह भूपति के उर लाग गयो है । फूल गयो जिय जान नरेश हन्यो

को पकड़ लिया ॥ १५०७ ॥ तब राजा ने बरछी चलाई जो शिव के सीने में लगी हुई ऐसी लग रही थी मानो सूर्य की किरण कमल पर मँड़रा रही हो ॥ १५०८ ॥ तब शिव ने दोनों हाथों से खींचकर उसे निकाला और काली नागिन के समान उस बरछी को धरती पर फेंक दिया । पुनः राजा ने म्यान से खड्ग निकाला और बलपूर्वक शिव पर वार किया ॥ १५०९ ॥ शिव अचेत हो भूमि पर ऐसे गिर पड़े मानो वज्रपात होने पर पर्वत की चोटी टूटकर गिरती है । शिव की यह दशा जब सेना ने देखी तब शिवपुत्र गणेश ने बरछी हाथ में ली ॥ १५१० ॥ हाथ में शक्ति लेकर वह राजा के सामने आये और हाथ की पूरी शक्ति से उसको राजा की ओर इस प्रकार चलाया कि मानो वह बर्छीला होकर मृत्यु भेजी जा रही हो ॥१५११॥ ॥ सवैया ॥ आते ही बरछी को राजा ने काट दिया और एक तीक्ष्ण बाण शत्रु के हृदय में मार दिया । उस बाण ने गणेश के वाहन पर प्रहार किया । दूसरा बाण गणेश के माथे पर तिरछा हो लगा और वह ऐसा लग रहा था मानो गजानन में तीर रूपी अंकुश गड़ा हुआ हो ॥ १५१२ ॥ इधर चैतन्य होकर अपने वाहन पर सवार हो शिव ने धनुष-बाण चलाया और एक अत्यन्त ही तीक्ष्ण बाण राजा के हृदय में मार दिया शिव यह सोचकर प्रसन्न हुए कि अब राजा मारा गया परन्तु

नही (मू०ग्रं०४४६) रंचक त्रास भयो है। चाप तनाइ लियो करि मै सुनि खग्ग ते बान निकास लयो है ॥ १५१३ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब तिन भूपति बान इक कान प्रमान सु तान। लखि मार्‌यो शिव उर बिखै अरि बध हित हिय जान ॥१५१४॥ ॥ चौपई ॥ जब हरि के उर तिन सर मार्‌यो। इह बिक्रम शिव सैन निहार्‌यो। कार्तकेय निज दलु लै धायो। गन गनेश मन कोप बढायो ॥ १५१५ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत ही दुहू को लख भूपत जी अपने अति क्रोध बढायो। पउरख कै भुजदंडन को सिखि बाहन को इकु बान लगायो। अउर जितो गन को दलु आवत सो छिन मै जमधाम पठायो। आइ खड़ानन को जब ही गज आनन छाडिकै खेत परायो ॥ १५१६ ॥ मोद भयो न्रिप के मन मै जब ही शिव को दलु मारि भजायो। काहे कउ भाजत रे डरिकै जिन भाजहु इउ तिह टेर सुनायो। स्याम भनै खड़गेश तबै अपने करि लै बर संख बजायो। शस्त्र सँभार सभै तब ही मनो अंतक रूप किए रन आयो ॥ १५१७ ॥ ॥ सवैया ॥ टेर सुनो सभ फेर फिरै करि लै करवारन कोप हुइ

राजा इस बाण से तनिक भी भयभीत नहीं हुए। राजा ने अपने तरकस से बाण निकाला और अपने धनुष को तान लिया ॥ १५१३ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने अपने कान तक तानकर शिव को लक्ष्य करते हुए उनका निश्चित रूप से वध कर देने के लिए उनके हृदय में एक बाण मारा ॥ १५१४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब उसने शिव के हृदय में बाण मारा तो साथ ही साथ उस महाबली ने शिव की सेना की तरफ़ भी देखा। कार्तिकेय अपने दल के साथ दौड़ा चला आ रहा था और गणेश के गण भी अत्यन्त क्रुद्ध हो रहे थे ॥१५१५॥ ॥ सवैया ॥ दोनों को आते देखकर राजा मन में अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और उसने अपनी भुजाओं के पौरुष से उनके वाहन को एक बाण मारा। अन्य गणों का जितना भी दल था उन्हें क्षण भर में यमलोक पहुँचा दिया। कार्तिकेय की तरफ राजा को बढ़ता देखकर अब गणेश भी युद्धस्थल छोड़कर भाग खड़े हुए ॥ १५१६ ॥ शिव के दल को मार भगाकर राजा मन में प्रसन्न हुआ और सुनाकर कहने लगा कि तुम सब डरकर क्यों भाग रहे हो। खड्गसिंह ने अपने हाथ में शंख लेकर शंखनाद किया और वह शस्त्रों के साथ युद्ध में यमराज का रूप दिखाई दे रहा था ॥१५१७॥ ॥ सवैया ॥ जब सबने ललकार सुनी तो हाथों में तलवारें लेकर वे सब मुड़ पड़े। वे लज्जा से भरे हुए अवश्य थे लेकिन अब अभय हो स्थिर हो गए और उन सबने भी मिलकर

धाए । लाज भरे सु टरे न डरे तिनहूँ मिलिकै सभ संख बजाए। मार ही मार पुकार परै ललकार कहै अरि तै बहु घाए । मारत है अब तोहि न छाडत यों कहि कै सर ओघ चलाए ॥ १५१८ ॥ ॥ सवैया ॥ जब आन निदान की मार मची तब ही न्रिप आपने शस्त्र सँभारे । खग्ग गदा बरछी जमधार सु लै करवार ही शस्त्र पचारे । पान लिओ धनु बानु सँभार निहार कई अरि कोट सँघारे । भूपत मो रति संग रते मुख अंत को अंतक से भट हारे ॥ १५१९ ॥ ॥ सवैया ॥ लै अपुने शिव पान सरासन जी अपुने अति कोप बढायो । भूपत को चितयो चित मै बध बाहन आपन को सु धवायो । मारत हो अब या रन मै कहिकै न्रिप कउ इह भाँत सुनायो । यों कहि नाद बजावत भ्यो मनो अंत भयो परलै घन आयो ॥१५२०॥ ॥ सवैया ॥ नाद सु नाद रह्यो भरपूर सुन्यो पुरहूत महा बिसमायो । सात समुद्र नदी नद अउ सर बिब सुमेर महा गरजायो । काँप उठ्यो सुन यों सहसानन चउदह लोकन चालु जनायो । शंकत ह्वै सुन कै जग के जन भूप नही मन मै डरपायो (मू०ग्रं०४५०) ॥१५२१॥

शंख बजाये । 'मार-मार' की पुकार के साथ वे ललकारते हुए कहने लगे कि राजा तुमने बहुत से लोगों को मारा है, अब हम तुम्हें छोड़ेंगे नहीं, तुम्हें मार डालेंगे । यह कह उन्होंने बाणों के झुंड चलाये ॥ १५१८ ॥ ॥ सवैया ॥ जब मरने-मारने के लिए भीषण मारकाट मची तब राजा ने अपने शस्त्र सम्हाले और खड्ग, गदा, बरछी, यमदाढ़ और तलवार हाथ में लेकर शत्रु को ललकारा । हाथ में धनुष-बाण ले इधर-उधर देखते हुए उसने अनेकों शत्रु मार डाले । राजा के साथ लड़ते हुए सैनिकों के मुख लाल हो गए और अन्त मे वे सब योद्धा उससे हार गए ॥ १५१९ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने हाथ में धनुष-बाण ले शिवजी अत्यन्त क्रोधित हुए और राजा को मारने के ध्येय से अपना वाहन उसकी ओर हँकवाया राजा को सुनाते हुए उन्होंने कहा कि मैं अभी तुम्हें मारने जा रहा हूँ और इस प्रकार कहते हुए उन्होंने घोर शंखनाद किया तथा ऐसा लगा जैसे प्रलयकाल में बादल गरज रहे हों ॥ १५२० ॥ ॥ सवैया ॥ यह घोर नाद सारे विश्व में व्याप्त हो गया और इन्द्र भी इसे सुन आश्चर्यचकित रह गए । सातों समुद्रों, नदी, सरोवर और सुमेरु आदि पर्वत में भी इसी नाद की प्रतिध्वनि गरजने लगी । शेषनाग भी इस ध्वनि को सुनकर काँप उठा और उसे लगा कि चौदहों लोक हिल उठे हैं । सारे संसार के प्राणी इस ध्वनि को सुनकर घबड़ा गए परन्तु राजा खड्गसिंह भयभीत नहीं

॥ खड़गेश बाच शिव सो ॥ ॥ स्वैया ॥ रुद्र के आनन को अविलोक कै यों कहिकै न्रिप बात सुनाई। का भयो जो जुगिया कर लैकर डिंभ के कारन नाद बजाई। तंदुल मांगन है तुव कारज मै न डरो तुहि चांप चढाई। जूझबो काम है छत्रन को कछु जोगन को नही काम लराई ॥१५२२॥ ॥ सवैया ॥ यौं कहिकै बतिया शिव सौ न्रिप तान बिखै रिस खड़ग बडो लै। मारत भे हर के तन मै कबि स्याम कहै जिय कोप महां कै। घाउ कै सुंभ कै गाल बिखै इम बोलि उठ्यो हसि सिंध जरा जै। रुद्र गिर्यो सिर माल कहूं कहूं बैल गिर्यो गिर्यो सूल कहूं ह्वै ॥ १५२३ ॥ ॥ सवैया ॥ घेर लियो मिल कै न्रिप कउ जब ही शिव के दल कोप कर्यो है। आगे ह्वै भूप अयोधन मै दिठ ठाढो रह्यो नही पैग टर्यो है। ताल जहां रथ रूख धुजा भट पंछन सिउ रन बाग भर्यो है। भाग गए गन जैसे बिहंग मनो न्रिप टूट कै बाज पर्यो है ॥ १५२४ ॥ ॥ दोहरा ॥ ए शिव के गन थिर रहे अति मन कोप बढाइ। गनछउना गनराज स्री महाबीर मनराइ ॥ १५२५ ॥

हुआ ॥ १५२१ ॥ ॥ खड्गेश उवाच शिव के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र को देखकर राजा ने यह सुनाकर कहा कि हे योगी ! यह जो तुमने नाद बजाने का प्रपंच किया इससे क्या अन्तर पड़ेगा। चावलों की भीख माँगना तुम्हारा काम है; तुम्हारे धनुष चढ़ाने से मैं नहीं डरता। लड़ना तो क्षत्रियों का काम है। यह कार्य योगियों के लिए नहीं ॥ १५२२ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर राजा ने बड़ा खड्ग तान लिया और क्रोधित होकर उसे शिव के शरीर पर दे मारा। शिव के शरीर में खड्ग मार राजा समुद्र के समान गर्जन करता हुआ ललकार उठा। खड्ग के वार से शिव गिर पड़े। उनकी मुंडमाला अन्यत्र छिटककर गिर पड़ी, कहीं उनका बैल गिर पड़ा, कहीं उनका त्रिशूल गिर पड़ा ॥ १५२३ ॥ ॥ सवैया ॥ अब शिव के दल ने क्रोधित हो राजा को घेर लिया परन्तु राजा भी युद्धस्थल में दृढ़ रहा और एक क़दम भी पीछे नहीं हटा। उस युद्धस्थल रूपी बाग़ में रथ छोटे-छोटे सरोवरों के समान, ध्वजाएँ पेड़ों के समान और शूरवीर पक्षियों के समान लग रहे हैं और शिव के गण रूपी पक्षी ऐसे भाग खड़े हुए मानो राजा रूपी बाज़ उन पर टूट पड़ा हो ॥ १५२४ ॥ ॥ दोहा ॥ शिव के (कुछ) गण वहाँ स्थिर रहे। ये गण गणछबि और गणराज श्री महावीर एवं मलराय थे ॥१५२५॥ ॥ सवैया ॥ वीरों

॥ सवैया ॥ बीरन को मन स्री गनराइ महाँ बरबीर फिर्यो गनछउना । लोहत नैन चल्यो सिस होत किओ गहि जाँ जमराज खिलउना । आवत भूप बिलोक कै शत्रन आप कियो मन रंचक भउना । मार लए रन मै गन को गन जुद्ध कियो कि कियो कछु टउना ॥१५२६॥ ॥ चौपई ॥ तब अरि लखि कै सर से मार्यो । जिह कुद्रिश्ट न्रिप ओर निहार्यो । पुन गनेश को न्रिप ललकार्यो । त्रसत भयो तज जुद्ध पधार्यो ॥१५२७॥ जब शिव जू कछु संग्या पाई । भाजि गयो तज दई लराई । अउर सगल डर कै गन भागँ । ऐसो को भट आवै आगँ ॥ १५२८ ॥ ॥ चौपई ॥ जबहि क्रिशन शिव भजत निहार्यो । इहै आपने ह्रिदै बिचार्यो । अब हउ आपन इह संग लरो । कै अरि मारो कै लरि मरो ॥ १५२९ ॥ तब तिह सउहै हरि जू गयो । राम भनै अति जुद्ध मचयो । तब तिन तकि तिह बान लगायो । स्यंदन ते हरि भूम गिरायो ॥ १५३० ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जा प्रभ कउ नित ब्रहम सचीपति स्री सनकादिक हू जपु कीनो (मू०ग्रं०४५१) सूर ससी सुर नारद सारद ताही कै ध्यान

में गणराज महावीर और गणछवि पुनः पलटे । वे लाल आँखों से वापस आये क्योंकि वे इतने बलशाली थे कि उन्होंने यमराज को भी खिलौना बना रखा था । राजा शत्रुओं को आता देख तनिक भी भयभीत नहीं हुआ और उसने युद्ध में गणों को मारते हुए यह अनुभव किया कि ये गण युद्ध नहीं अपितु मामूली जादू-टोना कर रहे हैं ॥ १५२६ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब शत्रु को बाण से मारते हुए वक्र दृष्टि से गण-सेना ने राजा की ओर देखा । राजा ने पुनः गणेश को ललकारा जो कि भयभीत होकर युद्ध से भाग खड़ा हुआ ॥ १५२७ ॥ तब शिवजी को कुछ होश आया और वे युद्ध छोड़ भाग खड़े हुए । अन्य गण भी डरकर भाग गए और ऐसा कोई शूरवीर दिखाई नहीं देता जो सामने आये ॥ १५२८ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब श्रीकृष्ण ने शिव को भागते देखा तो अपने हृदय में विचार किया कि अब मैं इससे स्वयं युद्ध करूँगा और शत्रु को मार डालूँगा या मर जाऊँगा ॥ १५२९ ॥ तब राजा के सामने श्रीकृष्ण गए और भीषण युद्ध किया । राजा ने उन्हें लक्ष्य कर बाण चलाया और उन्हें रथ से भूमि पर गिरा दिया ॥ १५३० ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जिस प्रभु का हमेशा ब्रह्मा, इन्द्र, सनकादिक जाप करते हैं, सूर्य, चन्द्र, देवता, नारद, शारदा जिसका ध्यान करते हैं, जिसे सिद्ध समाधि में खोजते हैं और

बिखै मनु दीनो । खोजत है जिह सिद्ध महामुन ब्यास परासुर भेद न चीनो । सो खड़गेश अयोधन मै कर मो हित केसन ते गहि लीनो ॥ १५३१ ॥ ॥ सवैया ॥ मार बकीबर अउर अघासुर धेनक को पल मै बध कीनो । केसी बछासुर मुसट चंडूर किए चक चूर सुन्यो पुर तीनो । स्रीहरि शत्र अनेक हने तिह कउन गने कबि स्याम प्रबीनो । कंस कउ केसन ते गहि केसव भूप मनो बदलो वह लीनो ॥१५३२॥ ॥ सवैया ॥ चिंत करी चित मै तिह भूपत जो इह कउ अब हउ बध कैहउ । सैन सभै भजहै जबही तब का संग जाइकै जुद्ध मचैहउ । हउ किह पै करिहो बहु घाइन का के हउ घाइ सनंमुख खैहउ । छाड दयो कह्यो जाहु चलो हरि तो सम सूर कहू नही पैहउ ॥ १५३३ ॥ ॥ स्वैया ॥ पउरख जैसो बडो कियो भूप न आगे किसी न्रिप ऐसो कियो । भट पेखिकै भाजि गए सिगरे किनहूँ धनु बान न पान लियो । हथियार उतार चले बिसंभार रथी रथ टार डरात हियो । रन मै खड़गेश बली बलुकै अपनो करकै हरि छाड दियो ॥ १५३४ ॥ ॥ चौपई ॥ छाड केस

ब्यास-पराशर आदि महामुनि भी जिसके रहस्य को नहीं समझ पाते उसे खड्गसिंह ने युद्धस्थल में केशों से पकड़ लिया ॥१५३१॥ ॥ सवैया ॥ जिसने बकासुर, अघासुर और धेनुकासुर का पल भर में वध कर दिया था, जिसने केशी, मक्षासुर, मुष्टि, चण्डूर आदि को मारकर तीनों लोकों में नाम कमाया था, जिस श्रीकृष्ण ने अनेकों शत्रुओं को प्रवीणता से मार गिराया था और कंस को केशों से पकड़कर मारा था उसी कृष्ण को केशों से पकड़कर मानो राजा खड्गसिंह ने कंस को केशों से पकड़ने का बदला चुकाया है ॥ १५३२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने सोचा कि यदि मैं अभी कृष्ण का वध कर दूँगा तो इसकी सारी सेना भाग खड़ी होगी और फिर मैं किससे युद्ध करूँगा। फिर मैं किसको घायल करूँगा और कौन सामने आ मुझे घायल करेगा। इसलिए राजा ने कृष्ण को छोड़ दिया और कहा जाओ तुम्हारे समान अन्य वीर कोई नहीं है ॥ १५३३ ॥ ॥ सवैया ॥ जितना महान पौरुष राजा ने दिखाया वह अभूतपूर्व था। सभी शूरवीर यह दृश्य देख भाग खड़े हुए तथा किसी ने भी धनुष-बाण नहीं पकड़ा। महारथी मन में डरते हुए शस्त्रों को त्यागकर भाग खड़े हुए और युद्धस्थल में अपनी इच्छानुसार खड्गसिंह ने श्रीकृष्ण को छोड़ दिया १५३४ चौपाई जब कृष्ण को केशो से छोड़ दिया तब वह

ते जब हरि दयो । लज्जत भयो बिसर बल गयो । तब ब्रह्मा प्रतच्छ हुइ आयो । क्रिशन ताप तिन सकल मिटायो ॥१५३५॥ ॥ चौपई ॥ कहै क्रिशन सिउ इह बिध बैना । लाज करो नही पंकज नैना । इह पउरख हउ तोहि सुनाऊ । तिह ते तोकहु अबहि रिझाऊ ॥१५३६॥ ॥ ब्रहमा बाच ॥ ॥ तोटक ॥ जब ही इह भूपत जनम लियो । तजि धाम तबै बनबास कियो । उपमा करि कै जगमात रिझायो । तह तै अरि जीतन को बरु पायो ॥ १५३७ ॥ ॥ चौपई ॥ इहके बध को एक उपाई । सो प्रभ तोकहु कहत सुनाई । बिशन आइ जो या संगि लरै । ताहि भजावै बिलमु न करै ॥ १५३८ ॥ ॥ चौपई ॥ इंद्र द्वादसि भान बुलावहु । रुद्र गिआरह मिलकर धावहु । सोम जु जम आठो बस जोधे । ऐसी बिधि बिधि हरहि प्रबोधे ॥ १५३९ ॥ ॥ सोरठा ॥ ए सभ सुभट बुलाइ जुद्ध काज रन प्रगट ही । अपने दलहि जगाइ कहो जूझ एऊ करहि ॥ १५४० ॥ ॥ चौपई ॥ पुनि अपच्छरा सकल बुलावहु इह की अग्रज द्रिशटि नचावहु । कामदेव कउ (मू०ग्रं०४५२) आइस दीजै । याको चित्त मोहि करि लीजै ॥ १५४१ ॥

अपने सारे बल को भूल लज्जित हो उठे । तब ब्रह्मा प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हुए और उन्होंने कृष्ण के मानसिक सन्ताप को समाप्त किया ॥ १५३५ ॥ ॥ चौपाई ॥ उन्होंने कृष्ण से कहा कि हे कमलनयन ! लज्जित मत हो । मैं तुमको इसके पौरुष की कथा सुनाकर अभी प्रसन्न करता हूँ ॥ १५३६ ॥ ॥ ब्रह्मा उवाच ॥ ॥ तोटक ॥ जब इस राजा ने जन्म लिया तभी इसने घर-बार छोड़ वन का रास्ता अपनाया । तपस्या करके इसने जगत्माता (चण्डिका) को प्रसन्न किया तथा उससे शत्रु को जीतने का वरदान प्राप्त किया ॥ १५३७ ॥ ॥ चौपाई ॥ इसके वध का एक ही उपाय है जिसे मैं तुमको सुनाता हूँ । इससे विष्णु भी आकर यदि लड़ेंगे तो यह उन्हें भी अविलम्ब भगा देगा ॥ १५३८ ॥ ॥ चौपाई ॥ इन्द्र और बारह सूर्यों को बुलाओ और ग्यारह रुद्रों के साथ मिलकर इस पर चढ़ाई करो । चन्द्रमा और आठों यम योद्धाओं को भी बुलाओ । यह सब विधि ब्रह्मा ने कृष्ण को बताई ॥१५३९॥ ॥ सोरठा ॥ इन सब योद्धाओं को बुलाकर युद्धस्थल में चलो और अपने दल को ललकारते हुए इससे भिड़ा दो ॥ १५४० ॥ ॥ चौपाई ॥ पुनः सब अप्सराओं को बुलाओ और इसके सामने नत्य करवाओ । कामदेव को भी आज्ञा दो और इसके चित्त को मोहित कर लो १५४१ दोहा तब कृष्ण ने वही सब किया

।। दोहरा ।। तबहि क्रिशन सोऊ किओ जो ब्रहमा सिख दीन । इंद्र सूर सभ रुद्र बस जम्महि बोल करि लीन ।। १५४२ ।। ।। चौपई ।। निकटि स्याम के तब सभ आए । क्रोध होइ मन जुद्धहि धाए । इत सभ मिल कै जुद्ध मचायो । उत अपच्छरा नभ भर लायो ।। १५४३ ।। ।। स्वैया ।। कै कै कटाछ नचै लेऊ भामन गीत सभै मिलकै सुर गावै । बीन पखावज ताल बजै डफ भांति अनेकन भाउ दिखावै । सारंग सोरठ मालसिरी अरु रामकली नट संगि मिलावै । भोगन मोह की बात किती सुनिकै मन जोगन के द्रव जावै ।। १५४४ ।। ।। सवैया ।। उत सुंदर निरत करै नभ मै इत बीर सभै मिलि जुद्धु करै । बरछी करवार कटारन सिउ जब ही मन मै अति क्रुद्ध भरै । कबि स्याम अयोधन मै रद नंछद पीसकै आन परै न डरै । लरिकै मरिकै जु कबंध उठै अरि कै सु अपच्छर ताहि बरै ।। १५४५ ।। ।। दोहरा ।। बडो जुद्धु भूपत किओ मन मै कोप बढाई । सभ देवन को दिन परै सो कबि कहत सुनाइ ।। १५४६ ।। ।। स्वैया ।। गिआरह रुद्रन को सर बाइस द्वादस भानन

जो ब्रह्मा ने बताया था। उन्होंने इन्द्र-सूर्य सभी रुद्र और यमों को अपने पास बुलवाया ।। १५४२ ।। ।। चौपाई ।। वे सब कृष्ण के पास पहुँचे और क्रोधित हो युद्ध के लिए चल दिए। इन सबने मिलकर इधर युद्ध करना शुरू कर दिया और उधर आकाश में अप्सराओं ने नृत्य करना प्रारम्भ कर दिया ।। १५४३ ।। ।। सवैया ।। कटाक्ष करती हुई सुन्दर स्त्रियाँ नृत्य करने लगीं और सुर में गाने लगीं। वे वीणा, पखावज, डफली आदि वाद्यों को बजाती हुई अनेकों प्रकार के हाव-भाव दिखाने लगीं। वे सारंग, सोरठ, मालश्री और रामकली तथा नट आदि राग गाने लगीं। यह सब देखकर भोगियों के मोहित होने की बात छोड़ो योगियों का मन भी ललचाने लगा ।। १५४४ ।। ।। सवैया ।। उधर आकाश में सुन्दर नृत्य हो रहा है, इधर बरछी, तलवार, कटार आदि लेकर मन में अत्यन्त क्रुद्ध होते हुए वीर युद्ध कर रहे हैं। कवि कहता है कि ये वीर दाँत पीसते हुए निर्भय होकर युद्ध में आ भिड़े हैं। जो लड़ते हुए मरते हैं और जो कबंध युद्धस्थल में उठते हैं अप्सराएँ उनका वर्णन कर रही हैं ।। १५४५ ।। ।। दोहा ।। राजा ने क्रोधित हो भीषण युद्ध किया और सभी देवताओं को अत्यन्त कठिनाई का सामना करना पड़ा ।। १५४६ ।। ।। सवैया ।। ग्यारह रुद्रों को बाईस तीर और बारह सूर्यों को चौबीस बाण राजा ने मार इन्द्र को हज़ार और

चउबिसि मारे । इंद्र सहंस्र खड़ानन को खट पाचसि कान्ह को कोप प्रहारे । सोम को साठ गनेश को सत्तर आठ बसुन को चउसठ डारे । सात कुबेर को नउ जमराजहि एक ही एक सो अउर संघारे ॥ १५४७ ॥ ॥ सवैया ॥ बानन बेधि जलाधिपि कउ नलकूबर अउ जमके उर मार्‌यो । अउर कहा लगि स्याम गनै जु हुते रन मै सभहू न प्रहार्‌यो । संकत मान भए सभ ही किनहूँ नही भूप की ओर निहार्‌यो । मानो जुगंत के अंत समै प्रगट्‌यो कलकाल तिनो सु बिचार्‌यो ॥ १५४८ ॥ ॥ चौपई ॥ त्याग दयो रन त्रास बढायो । किनहूँ न तिह जो जुद्ध मचायो । चित सभहूँ इह भाँति बिचार्‌यो । इह नही मरै किसू ते मार्‌यो ॥ १५४९ ॥ तब ब्रहमे हरि निकटि उचार्‌यो । जब सगलो दल त्रिपत संघार्‌यो । जब लगि इह ते ता कर मो है । तब लग बज्र सूल धर को है ॥१५५०॥ ताते इहै काज अब कीजै । भिच्छकि होइ माँग सो लीजै । मुकट राम ते जो इह पायो । सो इंद्रादिक हाथ न आयो ॥ १५५१ ॥ जब ते ता इह कर ते लीजै । तब याको

कार्तिकेय को छः और कृष्ण को पचीस बाण मारे । चन्द्रमा को साठ, गणेश को सत्तर और देवताओं के आठों वसुओं को चौंसठ बाण मारे । सात बाण कुबेर को तथा नौ यमराज को मारे तथा बाक़ी अन्यों का एक-एक बाण से संहार कर दिया ॥१५४७॥ ॥ सवैया ॥ वरुण को बाणों से वेधकर नलकूबर और यम के हृदय में भी बाण मारा । अन्य कितने गिने जायँ, युद्ध में जितने थे सब पर राजा ने प्रहार किया । सब अपनी-अपनी सुरक्षा के लिए सशंकित हो उठे, किसी ने भी राजा की ओर देखने की हिम्मत नहीं की । वे सब राजा को यह मानने लगे कि मानो वह युगान्त में प्रकट हुआ काल है (जो सबका नाश कर देगा) ॥ १५४८ ॥ ॥ चौपाई ॥ उन्होंने युद्ध त्याग दिया और भयभीत हो उठे और किसी ने भी राजा के साथ युद्ध नहीं किया । सबने यह सोच लिया कि यह राजा किसी के भी मारने से नहीं मरेगा ॥ १५४९ ॥ तब ब्रह्मा पुनः श्रीकृष्ण का सारा दल मरा हुआ देखकर ब्रह्मा कृष्ण से बोले कि जब तक इसके हाथ में अभिमंत्रित यंत्र (तावीज) है, तब तक वज्र-त्रिशूल आदि इसके सामने क्या हैं ॥ १५५० ॥ इसलिए अब यही काम करो कि भिक्षुक होकर यह इससे माँग लो । जो मुकुट इसने राम से प्राप्त किया है, वह इन्द्र आदि को भी नहीं मिल सका ॥ १५५१ ॥ जब इसके हाथ से तावीज़ ले लोगे तो क्षण भर में इसका वध कर लोगे यदि

बध छिन महि कीजै । (मू०ग्रं०४५३) जिह उपाइ कर ते परहरै । तउ कदांच न्रिप मरै तो मरै ॥ १५५२ ॥ ॥ चौपई ॥ यो सुनि हरि दिज बेख बनायो । माँगन तिह पै हरि बिधि आयो । तब तिन स्याम ब्रहम लखि लीनो । स्याम कहै इस ऊतर दीनो ॥ १५५३ ॥ ॥ खड़गेश बाच ॥ ॥ सवैया ॥ बेख किओ हरि बामन को बल बावन जिउँ छलबे कहु आयो । रे चतुरानन तू बसि कानन का के कहे तपिसा तजि धायो । धूम ते आगर है न दुरी जिम तिउँ छल ते तुम को लखि पायो । माँगहु जो तुमरे मन मै अब माँगन हारे को रूप बनायो ॥ १५५४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब इह बिधि सो न्रिप कह्यो कही ब्रहम जसु लेहु । जग्ग अनल ते जो मुकटि उपज्यो सो मुहि देहु ॥ १५५५ ॥ जब चतुरानन यों कही पुनि बोल्यो जदुबीर । गउराँ ते ता तुहि दयो सो मुहि दै न्रिप धीर ॥ १५५६ ॥ ॥ चौपई ॥ तब न्रिप मन को इह बिधि कहै । रे जिय जियत न चहु जुग रहै । ताँ ते धरम ढील नहि कीजै । जो हरि माँगत सो इह दीजै ॥ १५५७ ॥

किसी उपाय से यह उसे अपने हाथ से त्याग दे तो कदाचित इसका वध हो सकता है ॥ १५५२ ॥ ॥ चौपाई ॥ यह सुनकर कृष्ण और ब्रह्मा ने ब्राह्मण का वेश धारण कर लिया और उससे माँगने के लिए चले । तब माँगने पर उसने ब्रह्मा और कृष्ण को पहचान लिया और कवि के कथनानुसार उन्हें यह कहा ॥ १५५३ ॥ ॥ खड़गेश उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण (विष्णु)! तुमने ब्राह्मण का वेश बना रखा है और फिर बलि को वामन बनकर छलने के समान मुझे छलने के लिए आए हो । अरे ब्रह्मा ! तुम भी कृष्ण के वश में होकर क्यों अपनी तपस्या को त्यागकर दौड़े फिर रहे हो । जिस प्रकार धुएँ से आग छिप नहीं सकती, उसी प्रकार तुम्हें देखकर ही मैं तुम्हारे छल को समझ गया हूँ । जब तुम लोगों ने भिक्षुक का रूप बना ही लिया है तो जो मन में आए मुझसे माँग लो ॥ १५५४ ॥ ॥ दोहा ॥ जब राजा ने ब्रह्मा से इस प्रकार कहा तो ब्रह्मा ने कहा कि हे राजन् ! तुम यश का अर्जन करो और यज्ञ की अग्नि से जो मुकुट निकला था वह मुझे दे दो ॥ १५५५ ॥ जब ब्रह्मा ने यह माँग लिया तो फिर श्रीकृष्ण बोले कि चंडीदेवी (गौरी) ने जो तावीज़ (यंत्र) तुमको दिया है वह मुझे दे दो ॥ १५५६ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा ने मन में विचार किया कि मुझे कोई चारों युगों तक तो जीवित रहना नहीं है । इसलिए धर्मपालन में मुझे विलम्ब नहीं करनी चाहिए और जो ब्रह्मा

॥ सवैया ॥ किउ तन की मन शंक करै थिर लो जग मै अब तूँ न रहै है । याते भले न कछू इह ते जसु लै रन अंतहि सो तजि जैहै । रे मन ढील रह्यो गहि काहे ते अउसर बीत गए पछुतैहै । शोक निवार निशंक हुइ कै भगवान सो भिच्छक हाथि न ऐहै ॥ १५५८ ॥ माँगत जो बिधि स्याम अरे मन सो तजि शंक निशंक हुइ दीजै । जाचत है जिह ते सगरो जग सो तुहि माँगत ढील न कीजै । अउर बिचार करो न कछू अब या महि तो न रती सुख छीजै । दानन देत न मान करो बसु दै असु दै जग मै जसु लीजै ॥ १५५९ ॥ ॥ सवैया ॥ बामन बेख कै स्याम जु चाहत स्री हरि को तिह भूपति दीनो । जो चतुरानन के चित मै कबि राम कहै सु वहै न्रिप कीनो । जो वह माँगति सोऊ दयो तब देत समै रस मै मन भीनो । दान क्रिपान दुहूँ बिधिकै तिहु लोकन मै अति ही जसु लीनो ॥ १५६० ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रहम किरीट तबीत लयो हरि गाजि उठे तब ही सभ सूरे । धाइ परे न्रिप पै मिलिकै चिति मै चप रोसिकै मार

और कृष्ण माँग रहे हैं वह मुझे दे देना चाहिए ॥१५५७॥ ॥ सवैया ॥ हे मन ! तन की तू क्यों शंका कर रहा है, तुझे जग में सदा तो स्थिर नहीं रहना है। इससे भला और क्या हो सकता है। इसलिए युद्ध में यश कमाओ क्योंकि अंत मे एक बार तो शरीर का त्याग करना ही है। हे मन ! ढील मत करो क्योंकि अवसर बीतने पर सिवा पछतावे के और कुछ हाथ नहीं आएगा। इसलिए शोक का त्याग कर शंकारहित होकर दे दे, क्योंकि भगवान जैसा भिक्षुक फिर हाथ नहीं आएगा ॥ १५५८ ॥ जो कुछ कृष्ण माँग रहे हैं, मेरे मन ! शंका-रहित होकर वह दे दे। जिससे सारा संसार माँगता है वह तेरे सामने भिखारी बना है, इसलिए और देर मत कर। अब अन्य विचार छोड़ दे, तेरे सुख में कोई कमी नहीं आएगी। दान देते समय गर्व (और सोच-विचार) नहीं करना चाहिए। बस सब कुछ देकर यश-लाभ प्राप्त करना चाहिए ॥ १५५९ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्राह्मण-वेश में जो कृष्ण ने माँगा राजा ने उसे दे दिया तथा साथ ही साथ जो ब्रह्मा के मन में था वह भी राजा ने कर दिया। जो उन्होंने माँगा वही राजा ने प्रेमपूर्वक दिया और इस प्रकार दान तथा कृपाण, दोनों प्रकार की बहादुरी में राजा ने महान् यश अर्जित किया ॥ १५६० ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रह्मा ने मुकुट और कृष्ण ने यंत्र (तावीज़) ले लिया तो सभी शूरवीर गरज उठे और चित्त में अत्यन्त क्रोधित होकर मिलकर राजा पर टूट पडे। राजा ने अनेकों वीरों का नाश किया और वे

भरूरे । भूप हने बर बीर घने सु परे धर ऊपरि लागति रूरे । छार लगाइकै अंग मलंग रहे मनो सोइकै खाइ धतूरे ॥ १५६१ ॥ (मू०ग्रं०४५४) हेर सभै मिलि घेरि लयो सु भयो मन भूपत कोप मई है । राम अयोधन मै फिरकै करगी कर बीच कमान लई है । सूरज की सस की जम की हरि की बहु सैन गिराइ दई है । मानहु फागन मास के भीतर पउन बह्यो पति झार भई है ॥ १५६२ ॥ ॥ सवैया ॥ पान सँभार बडो धनु भूपत रुद्र लिलाट मै बान लगायो । एक कुबेर के मार्‌यो रिदे सर लागति डार हथिआर परायो । देखि जलाधिप ताहि दशा रन छाड भज्यो मन मै डरपायो । धाइ पर्‌यो रिस कै जमु या पर सो त्रिप बान सो भूम गिरायो ॥ १५६३ ॥ ॥ सवैया ॥ यों जमराज गिराइ दयो तबही रिसि कै हरि को दल धायो । आइ है कोप भरे भट दुइ बिबिधायुध लै तिन जुद्ध मचायो । सिंघ हुतो बलबंड सो जादव सो रिसि सो त्रिप मार गिरायो । बाहु बली बरमाक्रित बंधु सोऊ रन ते जमलोक पठायो ॥ १५६४ ॥ ॥ सवैया ॥ अउर महाबली सिंघ हुतो संग तेजस सिंघ को मार लयो । पुन बीर महाजस सिंघ हुतो

धरती पर पड़े ऐसे सुन्दर लग रहे थे मानो अंगों में भस्म लगाकर और धतूरे खाकर फ़क़ीर धरती पर सो रहे हों ॥ १५६१ ॥ राजा को खोजकर सबने घेर लिया और राजा अत्यन्त क्रुद्ध हो उठा । राजा ने भी युद्ध में विचरण करते हुए एक दृढ़ धनुष हाथ में पकड़ लिया और सूर्य, चन्द्र तथा यम की सेना को ऐसे मार गिराया है मानो फागुन की ऋतु में पवन के चलने से पत्ते झड़कर धरती पर आ गिरे हों ॥ १५६२ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथ में एक बड़ा-सा धनुष लेकर राजा ने रुद्र के माथे में एक बाण मारा । एक कुबेर के हृदय में मारा और वह बाण लगते ही हथियार फेंक कर भाग खड़ा हुआ । वरुण उनकी यह दशा देखकर भयभीत होकर युद्ध छोड़कर भाग गया । इस पर यमराज क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़ा और राजा ने अपने बाण से उसे पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ १५६३ ॥ ॥ सवैया ॥ जब यमराज गिरा दिया गया तो क्रोधित होकर श्रीकृष्ण का दल दौड़ा और उसमें से दो शूरवीरों ने विविध प्रकार के शस्त्र लेकर भीषण युद्ध प्रारम्भ कर दिया । यादव वीर महाबली थे; उन्हें राजा ने क्रोधित होकर मार डाला और इस प्रकार बाहुबली और विक्रमाकृत दोनों भाइयों को युद्धस्थल से यमलोक भेज दिया ॥ १५६४ ॥ ॥ सवैया ॥ उनके साथ महाबलीसिंह और तेजसिंह थे उनको भी राजा ने

रिसि कै इह सामुहि आइ गयो । सोऊ खग्ग सँभारकै कोप भरे तिह को न्रिप नै ललकार लयो । कियो एक ही बार प्रहार क्रिपान को अंत के धाम पठाइ दयो ॥ १५६५ ॥ ॥ चौपई ॥ उतमसिंघ प्रलैसिंघ धाए । परमसिंघ अस लै करि आए । अति पवित्रसिंघ स्री सिंघ गए । पाँच भूप मार तिह लए ॥ १५६६ ॥ ॥ दोहरा ॥ फतेसिंघ अरु फउजसिंघ चित अति कोप बढाइ । ए दोऊ भट आवत हुते भूपति हने बजाइ ॥ १५६७ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ भीमसिंघ भुजसिंघ सु कोप बढाइयो । महासिंघ सिंघ मान मदनसिंघ धाइयो । अउर महा भट धाए शस्त्र सँभार कै । हो ते छिन मै तिह भूपत दए सँघारकै ॥ १५६८ ॥ ॥ सोरठा ॥ बिकटिसिंघ जिह नाम बिकटि बीर जदुबीर को । अपने प्रभ के काम धाइ पर्यो अरि बध नमिति ॥ १५६९ ॥ ॥ दोहरा ॥ बिकटसिंघ आवत लख्यो खड़गसिंघ धनु तान । मार्यो सर उर शत्र के लागत भजे परान ॥ १५७० ॥ ॥ सोरठा ॥ रुद्रसिंघ इक बीर ठाढ हुतो जदुबीर ढिग । महारथी रणधीर रिसि करि न्रिप सउहै (मू०ग्रं०४५५) भयो ॥ १५७१ ॥ ॥ चौपई ॥ खड़गसिंघ

मार लिया । पुनः महाजससिंह वीर क्रुद्ध होकर राजा के सामने आ गया और उसे खड्ग सँभालते हुए राजा खड़गसिंह ने ललकार लिया । उस पर कृपाण का एक ही प्रहार किया तो वह यम के धाम जा पहुँचा ॥ १५६५ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब उत्तमसिंह और प्रलयसिंह दौड़े और परमसिंह भी कृपाण लेकर आ पहुँचे । अतिपवित्रसिंह और श्रीसिंह आदि पाँचों को राजा ने मार गिराया ॥ १५६६ ॥ ॥ दोहा ॥ फतहसिंह और फौजसिंह क्रोधित होकर आगे बढ़े तो इनको भी राजा ने ललकार कर मार डाला ॥ १५६७ ॥ ॥ अड़िल ॥ भीमसिंह, भुजसिंह महासिंह, मानसिंह, और मदनसिंह क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़े । अन्य महाभट भी शस्त्र सँभालकर आए परन्तु राजा ने क्षण भर में उन सब का संहार कर दिया ॥१५६८॥ ॥ सोरठा ॥ बिकटसिंह एक श्रीकृष्ण का महाबली योद्धा था वह अपने प्रभु के कार्यवश शत्रु का वध करने के लिए उस पर टूट पड़ा ॥ १५६९ ॥ ॥ दोहा ॥ बिकटसिंह को आते देखकर खड्गसिंह ने धनुष ताना और शत्रु के सीने में बाण मारा । बाण लगते ही बिकटसिंह ने प्राण त्याग दिए ॥ १५७० ॥ ॥ सोरठा ॥ एक अन्य रुद्रसिंह नामक वीर कृष्ण के पास खड़ा था । वह महारथी भी क्रोधित होकर राजा के सामने पहुँचा ॥ १५७१ ॥ ॥ चौपाई ॥ रुद्रसिंह को देखकर

तब धनख सँभार्यो । रुद्र सिंह जब नैन निहार्यो । छाडि बान अस बल सो दयो । आवत शत्रु मार तिह लयो ॥१५७२॥ ॥ सवैया ॥ हिंमतसिंघ महा रिस सिउ इह भूपति पै तरवार चलाई । हाथ सँभाल कै ढाल दई तब ही सोऊ आवत ही सु बचाई । फूलहु पै करवार लगी चिनगार जगी उपमा कबि गाई । बासव पै शिव कोप किओ मानो तीसरे नैन की ज्वाल दिखाई ॥ १५७३ ॥ ॥ सवैया ॥ पुन हिंमतसिंघ महाँ बलु कै इह भूप के ऊपरि घाउ कियो । करवार फिर्यो अपुने दलु को न्रिप तउ ललकार हकार लियो । सिर माँझ क्रिपान की तान दई बिबि खंड हुइ भूमि गिर्यो न जियो । सिर तेग बही चपला सी मनो अधबीच ते भूधर चीर दियो ॥ १५७४ ॥ ॥ सवैया ॥ हिंमतसिंघ हन्यो जब ही तब ही सभ ही भट कोप भरे । महा रुद्र ते आदिक बीर जिते इह पै इक बार ही टूट परे । धनु बान क्रिपान गदा बरछीन के स्याम भनै बहु वार करे । न्रिप घाइ बचाइ सभै तिनकै इह पउरख देख कै शत्रु डरे ॥ १५७५ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र ते आदि जिते गन देव तिते मिलकै न्रिप ऊपरि धाए । ते सभ आवत देख बली धनु तान

खड्गसिंह ने धनुष सँभाला। इतने बल से उसने बाण मारा कि बाण आते ही शत्रु मारा गया ॥ १५७२ ॥ ॥ सवैया ॥ हिम्मतसिंह ने क्रोधित होकर राजा पर तलवार से वार किया। राजा ने हाथ की ढाल में आती हुई तलवार का वार बचाया। ढाल के उभरे हिस्से (फूल) पर तलवार लगी और चिनगारियाँ इस प्रकार निकलीं मानों शिव ने इंद्र को अपने तीसरे नेत्र की ज्वाला दिखाई हो ॥ १५७३ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनः हिम्मतसिंह ने बलपूर्वक राजा पर वार किया। वार करके वह अपनी सेना की तरफ मुड़ा तो उसी समय राजा ने उसे ललकार लिया और उसके सिर पर कृपाण तानकर मारी। वह धरती पर निर्जीव होकर गिर पड़ा। उसके सिर पर तलवार ऐसे चली मानो बिजली ने पर्वत को आधे बीच से चीर कर दो टुकडों में बाँट दिया हो ॥ १५७४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब हिम्मतसिंह मारा गया तो सभी वीर कुपित हो उठे। महारुद्र आदि जितने भी वीर थे वे सभी एक ही बार में राजा पर टूट पड़े और धनुष-बाण, कृपाण, गदा तथा बर्छियों से उन्होंने राजा पर अनेकों वार किए। राजा ने सबके वारों को बचाया और राजा का यह पौरुष देखकर सभी शत्रु भयभीत हो उठे ॥ १५७५ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र आदि जितने भी गणाधिप थे वे सब मिलकर राजा पर टूट पडे। उन सबको

हकार के बान लगाए । एक गिरे तह घाइल हुइ इक त्रास भरे तजि जुद्ध पराए । एक लरै न डरै बलवान निदान सोऊ न्रिप मार गिराए ॥ १५७६ ॥ ॥ सवैया ॥ शिव के दस सै गन जीत लए रिसि सो पुनि लच्छक जच्छ सँघारे । राछस तेइस लाख हने कबि स्याम भने जम धार सिधारे । स्री ब्रिजनाथ किओ बिरथी बहु दारक कै तन घाउ प्रहारे । द्वादस सूर निहार निशेश धनेश जलेश पस्वेश पधारे ॥१५७७॥ ॥ सवैया ॥ बहुरो आयुध गज मारत भ्यो पुन तीस हजार रथी रिसि घायो । छत्तिस लाख सु पत्य हने दस लाख सवारन मार गिरायो । भूपत लच्छ हने बहुरो दल जच्छ प्रतच्छहि मार भजायो । द्वादस सूरन ग्यारह रुद्रन के दल कउ हनिकै पुनि धायो ॥१५७८॥ ॥ सवैया ॥ साठ हजार हने बहुरो भट जच्छ सु लच्छ कई तिह घाए । जादव लच्छ किए बिरथी बहु (मू०ग्रं०४५६) जच्छन के तन लच्छ बनाए । पैदल लाख पचास हने पुरजे पुरजे कर भूम गिराए । अउर हने बलवान क्रिपान लै जो इह भूप के ऊपरि आए ॥ १५७९ ॥ ॥ सवैया ॥ ताउ दै मूछ

आता देखकर इस महाबली ने भी ललकार कर बाण चलाए । कुछ तो वहाँ घायल होकर गिर पड़े और कुछ भयभीत होकर युद्ध छोड़कर भाग गए । कुछ अभय होकर राजा से लड़ते रहे और उन्हें राजा ने मार गिराया ॥१५७६॥ ॥ सवैया ॥ शिव के दस सौ गणों को जीतकर पुन: राजा ने एक लाख यक्षों का संहार किया । तेईस लाख राक्षस मार डाले जो यमलोक पहुँच गए । श्रीकृष्ण को रथ-विहीन कर दिया और उनके सारथि दारुक को घायल कर दिया । बारहों सूय, चंद्र, कुबेर, वरुण एवं पशुपतिनाथ यह दृष्य देखकर भाग खड़े हुए ॥ १५७७ ॥ ॥ सवैया ॥ फिर राजा ने बहुत से घोड़े हाथी और तीस हज़ार रथियों को मार गिराया । छत्तीस लाख पैदलों को और दस लाख सवारों को मार गिराया । एक लाख राजाओं को मार दिया और यक्षों के दल को मार भगाया । बारह सूर्य और ग्यारह रुद्रों को मार कर राजा पुन: शत्रु-सेना पर टूट पड़ा ॥ १५७८ ॥ ॥ सवैया ॥ साठ हज़ार वीरों को मारकर एक लाख यक्षों को राजा ने मार गिराया । एक लाख यादवों को रथ-विहीन कर दिया और यक्षों को अपना लक्ष्य बनाया । पचास लाख पदातियों को खण्ड-खण्ड करके भूमि पर बिखेर दिया तथा इनके अलावा भी जो बलवान कृपाण ले राजा पर चढ़े उन सबको उसने मार गिराया ॥ १५७९ ॥ ॥ सवैया ॥ मूछों पर ताव देकर राजा सेना पर अभय

दुहूँ कह भूपति सैन मै जाइ निशंक पर्यो । पुन लाख सुआर हने बलिकै ससि को रवि को अभिमान हर्यो । जम को सर एक ते डार दयो छित स्याम भनै नही नैकु डर्यो । जोऊ सूर कहावत है रन मै सभहू न्रिप खंड निखंड कर्यो ॥ १५८० ॥
॥ सवैया ॥ रन मै दस लच्छ हने पुन जच्छ जलाधिप को भट लच्छक मार्यो । इंद्र के सूर हने अगने कबि स्याम भनै सु नही न्रिप हार्यो । सातक कउ मुसलीधर कउ बसुदेवहि कउ करि मूरछ डार्यो । भाज गयो जम अउर सचीपति काहू न हाथ हथ्यार संभार्यो ॥ १५८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब भूपत एतो किओ जुद्ध क्रुद्ध कै साथ । तब ब्रिजपत आवत भयो धनुख बान लै हाथ ॥ १५८२ ॥ ॥ बिशन पद ॥ स्री हरि रिस भर बल कर अरि पर जब धन धरि करि धायो । तब न्रिप मन मै क्रोध बढायो स्रीपति को गुन गायो ॥ रहाउ ॥ जाको प्रगट प्रताप तिहू पुर शेश अंति नही पायो । बेद भेद जाको नही जानत सो नंदनंद कहायो । काल रूप नाथ्यो जिह कालो कंस केस गहि धायो । सो मै रन महि ओर आपनी कोप हकार बुलायो । जाको ध्यान राम नित मुनजन धरति ह्रिदै नही

होकर टूट पड़ा । पुनः उसने एक लाख सवार मार डाले तथा सूर्य और चन्द्र का गर्व चूर किया । यमराज को एक ही बाण में धरती पर गिरा दिया तथा राजा तनिक भी भयभीत नहीं हुआ । जितने भी अपने आप को वीर कहलानेवाले थे राजा ने सबके टुकड़े-टुकड़े कर दिए ॥ १५८० ॥
॥ सवैया ॥ युद्ध में दस लाख यक्ष और वरुण के लगभग एक लाख शूरवीर मार डाले । इन्द्र के भी अगणित शूरवीरों को राजा ने मार डाला और फिर भी नहीं हारा । सात्यिकी, बलराम और वसुदेव को उसने मूर्छित कर दिया तथा युद्धस्थल से शस्त्रों को बिना संभाले हुए यम और इन्द्र भाग खडे हुए ॥ १५८१ ॥ ॥ दोहा ॥ जब राजा ने इतने क्रोध के साथ युद्ध किया तब श्रीकृष्ण धनुष-बाण हाथ में ले आगे आये ॥१५८२॥ ॥ विष्णुपद ॥ श्रीकृष्ण जब क्रोधित होकर बलपूर्वक धनुष हाथ में ले शत्रु पर टूट पड़े तब राजा ने क्रोधित होकर मन ही मन श्री भगवान का गुणानुवाद किया॥ रहाउ ॥ जिसका तीनों लोकों में प्रताप जाना जाता है, शेषनाग भी जिसका अन्त नही पा सके और वेद भी जिसके रहस्य को नहीं जान सके उन्हीं का नाम नन्दनन्दन श्रीकृष्ण है । जिसने काल स्वरूप कालिया नाग को नथा और कंस को केशों से पकड़कर मार डाला, उसको मैंने क्रोधित हो युद्ध में

आयो । धंन भाग मेरे तिह हरि सो अतिही जुद्ध मचायो ॥१५८३॥ जदपति मोहि सनाथ कियो । दरसन देत न दरसन हूको मोकउ दरस दियो ॥ रहाउ ॥ जानत हउ जग मै सम मोसो अउर न बीर बियो । जिह रन मै ब्रिजराज आपनो ओर हकार लियो । जाको सुक नारद मुन सारद गावत अंतु न पायो । ताकउ स्याम आज रिस करिकै भिरबे होत बुलायो ॥ १५८४ ॥ ॥ सवैया ॥ गुन गाइकै यौ धनुपान गह्यो पुन धाइ पर्यो बहु बान चलाए । जे भट आन परे रन मै नह जान दए बहु मार गिराए । घाइ लगे जिनके तन मै तिन मारन कउ नहि हाथ उठाए । सैन सँघार दई जदवी ब्रिजनाइक ऊपर ही ब्रिप धाए ॥ १५८५ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाइक को सु करीट गिराइ (मू०ग्रं०४५७) कै बान के संगि दयो है । पंद्रहि सै गजराज समाज मै बाज अनेकन मार लयो है । द्वादस लच्छ जिते पुन जच्छ सु सैन घनो बिन प्रान भयो है । ऐसी ओ भाँति को जुद्ध बिलोक कै सूरन को अभिमानु गयो है ॥ १५८६ ॥ ॥ सवैया ॥ दस दिवस निसा दस जुद्ध

ललकारा है । जिसका ध्यान नित्य मुनिजन करते हैं परन्तु फिर भी हृदय से उसका साक्षात्कार नहीं कर पाते, मेरे बड़े भाग्य हैं कि मैंने उसी श्रीकृष्ण से भीषण युद्ध किया ॥ १५८३ ॥ हे यदुपति तुमने मुझे आश्रय दिया है, तुम सन्तों को भी दर्शन नहीं देते हो, परन्तु तुमने मुझे दर्शन दिए हैं॥ रहाउ ॥ मैं जानता हूँ कि जगत में मेरे जैसा अन्य कोई वीर नहीं है जिसने श्रीकृष्ण को युद्ध के लिए ललकारा हो। शुकदेव, नारद मुनि एवं शारदा जिसका गुणानुवाद करते हैं और फिर भी उसके रहस्य को नहीं समझ पाते हैं उसको मैंने आज क्रोधित हो युद्ध के लिए ललकारा है ॥ १५८४ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार गुणानुवाद कर राजा ने हाथ में धनुष-बाण पकड़ा और दौड़कर बहुत से बाण चलाए। युद्ध में जो वीर सामने आये उनको जाने नहीं दिया और मार गिराया। घायलों को मारने के लिए राजा ने हाथ नहीं उठाया और यादव सेना का संहार करके राजा श्रीकृष्ण पर टूट पड़ा ॥ १५८५ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने बाण से राजा ने श्रीकृष्ण का मुकुट गिरा दिया। पन्द्रह सौ हाथी और घोड़े मार गिराए। बारह लाख यक्ष भी उसने निष्प्राण कर दिए। इस प्रकार के युद्ध को देख शूरवीरों का अभिमान चूर हो गया ॥ १५८६ ॥ ॥ सवैया ॥ दस दिन और दस रात तक उसने श्रीकृष्ण

किओ ब्रिजनाइक सो न टर्यो भट टार्यो । चार अछूहन अउर तहाँ रिसि ठान सतक्रित को दलु मार्यो । मूरछ हुइ भट भूम गिरे बहु बीरन कौ लरते बहु हार्यो । केते भजे डर मान तिनो कहु जात बली इह भाँति हकार्यो ॥ १५८७ ॥ ॥ सवैया ॥ टेर सुने सभ फेर फिरे तब भूपति तीछन बान प्रहारे । आवत ही मग बीच गिरे तन फेर जिरे सर पार पधारे । एक बली तब दउर परे मुख ढालन लै हथियार उधारे । पउरख एक निहारकै भूप को बीर अयोधन मै ठटकारे ॥ १५८८ ॥ एक सतक्रित को जग दीरघ क्रुद्धत होइ न्रिपु ऊपरि धायो । आवत ही घन जिउँ गरज्यो अपनो रन मै अति ओज जनायो । भूप निहारि लयो अस हाथि कट्यो करि ताहि तबै सु परायो । इउ उपमा उपजी मन मै गज सुंड मनो घरही धरि आयो ॥ १५८९ ॥ ॥ दोहरा ॥ जुद्ध इतो इत होत भयो उत हरि हेत सहाइ । पाँचो पांडव स्याम भन तिह ठाँ पहुचे आइ ॥ १५९० ॥ बहुत छोहणी दलु लिए रथ पैदल गज बाज । आवत भे तह स्याम कहि जदुपति हित के काज ॥ १५९१ ॥ ॥ दोहरा ॥ छोहण दोइ मलेछ है तिह

से युद्ध किया परन्तु हारा नहीं। वहाँ उसने इंद्र का चार अक्षौहिणी और दल मार गिराया। वीर मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़े और वहुत से वीर लड़ते लड़ते हार गए। उस वीर ने ऐसे ललकारा कि कितने ही भयभीत होकर भाग गए ॥ १५८७ ॥ ॥ सवैया ॥ ललकार सुनकर सभी फिर लौटे तो वीर ने तीक्ष्ण वाणों से उन पर प्रहार किया। रास्ते ही मे उनके शरीर गिरने लगे क्योंकि तीर उनके शरीर से पार होने लगे। कई वीर ढाल-तलवारों को लेकर दौड़ पड़े परन्तु राजा खड़गसिंह का पौरुष देखकर ठिठक गए ॥ १५८८ ॥ इन्द्र का एक जगदीर्घ नामक हाथी क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़ा। आते ही वह बादल की तरह गर्जना कर अपने शौर्य का प्रदर्शन करने लगा। राजा ने देखकर तलवार हाथ में ली और हाथी को काट डाला। वह भाग खड़ा हुआ और ऐसा लग रहा था मानो हाथी अपनी सूँड़ घर भूल आया हो (और वापस दौड़ा जा रहा हो) ॥ १५८९ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर युद्ध चल रहा है, और उधर श्रीकृष्ण की सहायता के लिए पाँचों पांडव भी वहाँ आ पहुँचे ॥ १५९० ॥ उनके साथ कई अक्षौहिणी दल, रथ पैदल हाथी घोडों सहित था। वे सब श्रीकृष्ण के हित के लिए वहाँ आ पहुँचे १५९१ दोहा दो अक्षौहिणी मलेच्छ सेना भी उनके साथ है

सैना के संगि । कवची खड़गी शकति धरि कट मधि कसे निखंगि ॥ १५६२ ॥ ॥ सवैया ॥ मीर अउ सयद शेख पठान सभै तिह भूप के ऊपर धाए । कउच निखंग कसे कटि मै सभ आयुध लै करि कोप बढाए । नैन नचाइ दोऊ रदनच्छद पीस कै भउह सो भउह चढाए । आइ हकार परे चहू ओर ते वा न्रिप कउ बहु घाइ लगाए ॥ १५६३ ॥ ॥ दोहरा ॥ सकल घाइ सहकै न्रिपति अति चित कोप बढाइ । धनख बान गहि जमसदन बहु अरि दए पठाइ ॥ १५६४ ॥ ॥ कबितु ॥ शेर-खान मार्यो सीस सैद खां को काटि डार्यो ऐसो रन पार्यो पर्यो सैदन मै धाइकै । सैद मीर मार्यो सैद नाहरि संघार डार्यो शेखन की फउजन कउ दीनो (मू०ग्रं०४५८) बिचलाइकै । सादक फरीद शेख भले बिध जुज्झ कीनो भूपतन घाइ गिर्यो आप घाइ खाइकै । ऐसी भाँति हेर कै निबेर दीने सूर सभै आप ब्रिजराज ताके उठे गुन गाइकै ॥१५६५॥ ॥ दोहरा ॥ देख जुधिशटरि ओर प्रभ अपनो भगति बिचार । तिह न्रिप को पउरख सुजसु मुख से कह्यो सुधार ॥१५६६॥ ॥ कबितु ॥ भारे भारे सूरमा सँघार डारे महाराज जम की जमन की घनी ही

जो कवच, खड्ग एवं शक्तियों से सुसज्जित है ॥ १५६२ ॥ ॥ सवैया ॥ मीर सय्यद, शेख और पठान सभी राजा पर टूट पड़े । कवच, तरकस कमर में बाँधे हुए वे सब क्रोधित होकर राजा पर टूट पड़े । आँखे नचाते, दाँत पीसते और भौंहों को चढ़ाते हुए वे राजा पर ललकारते हुए टूट पड़े तथा उन्होंने राजा को बहुत से घाव लगा दिए ॥ १५६३ ॥ ॥ दोहा ॥ सभी घावों को सहते हुए अत्यन्त क्रोधित होते हुए राजा ने धनुष-बाण पकड़कर बहुत से शत्रुओं को यमपुर भेज दिया ॥ १५६४ ॥ ॥ कवित्त ॥ राजा ने शेर खाँ को मारकर सैद खाँ का सिर काट डाला और ऐसा युद्ध करते हुए वह सय्यदों मे कूद पड़ा । सय्यद मीर और सय्यद नाहर को मारकर राजा ने शेखों की सेना को विचलित कर दिया । शेख सादी फ़रीद ने भली प्रकार युद्ध किया । वह राजा को घायल करते हुए स्वयं भी घायल हो गिर गया । इस प्रकार उसने खोज-खोजकर सभी वीरों को समाप्त कर दिया । उसकी वीरता को देखकर स्वयं कृष्ण भी उसकी प्रशंसा करने लगे ॥ १५६५ ॥ ॥ दोहा ॥ युधिष्ठिर की ओर देखते हुए और अपने भक्त का विचार करते हुए कृष्ण ने राजा का पौरुष भली प्रकार उन्हें बताया ॥ १५६६ ॥ कवित्त इस राजा खड्गसिंह ने भारी शूरवीरो और बादलों के समान

सेना छई है। शेश की सुरेश की दिनेश की धनेश की लुकेश हू की चमूं त्रितलोक कँउ पठई है। भाजगे जलेशसे गनेशसे गनत कउन अउर हउ कहा कहउ पस्वेशि पीठ दई है। जादव सभन ते न डर्यो रीझ लर्यो हाहा देखो त्रिप हम ते बजाइ बाज लई है ॥ १५९७ ॥ ॥ राजा जुधिशटर बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ कह्यो जुधिश्टरि निम्र हुइ सुनियै स्री ब्रिजराज। यह समाजु तुमही कियो कउतक देखन काज ॥ १५९८ ॥ ॥ चौपई ॥ यौं त्रिप हरि से बचन सुनाए। बहुरो उन भट मार गिराए। पुन मलेछ की सेना धाई। नाम तिनहु कबि देत बताई ॥ १५९९ ॥ ॥ सवैया ॥ नाहिर खान झड़ाझड़ खाँ बलबीर बहादुर खान तबै। पुन खान निहंग भड़ंग झड़ंग लरे रन आगे डरे न कबै। जिह रूप निहार डरै दिगपाल महा भट ते कबहू न दबै। करि बान कमान धरे अभिमान सों आइ परे तब खान सबै ॥ १६०० ॥ जाहद खानहु जब्बर खान सु बाहद खान गए संग सूरे। चउप चहू दिस ते उमगे चित मै चपरोस के मार मरूरे। गोरे मलेछ चले त्रिप पै इक स्याह मलेछ चले इक भूरे। भूप सरासन लै तबही सु अचूर बडे छिन

घनी यम-सेना को भी मार डाला है। शेषनाग, इंद्र, रवि, कुबेर आदि की चतुरंगिणी सेना को इसने मृत्यु लोक भेज दिया है। वरुण, गणेश आदि की तो गिनती ही क्या, इसको देखकर तो शिव भी पीठ दिखा गए। यह किसी यादव से नहीं डरा और प्रसन्न भाव से सबसे लड़कर इसने हमसे युद्ध की बाजी जीत ली है ॥१५९७॥ ॥ राजा युधिष्ठर उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ युधिष्ठिर ने विनम्रतापूर्वक कहा कि हे ब्रजराज ! यह सारा खेल आपने ही लीला देखने के लिए किया है ॥ १५९८ ॥ ॥ चौपई ॥ इधर युधिष्ठर ने श्रीकृष्ण से कहा और उधर राजा खड्गसिंह ने बहुत सी सेना को मार गिराया। पुनः मलेच्छ सेना आगे बढ़ी जिनके नाम कवि कहता है ॥ १५९९ ॥ ॥ सवैया ॥ नाहर खाँ, झड़ाझड़ खाँ बहादुर खाँ, निहंग खाँ भड़ंग, झड़ंग ऐसे युद्धकला मे निपुण योद्धा थे कि वे कभी भी युद्ध से डरे नहीं। जिनका स्वरूप देखकर दिशाओं के रक्षक भी डरते थे ऐसे महाबली कभी किसी से दबे नहीं थे। वे सब खान हाथों में बाण-कमान लेकर गर्वपूर्वक राजा से आ भिड़े ॥ १६०० ॥ जाहिद खाँ, जब्बर खाँ और वाहिद खाँ आदि शूरवीर साथ थे। वे चारों दिशाओं से मन में क्रोधित होकर उमड़ पड़े। राजा से लड़ने के लिए गोरे, काले भूरे सभी वर्णों के मलेच्छ चल पड़े राजा ने उसी क्षण धनुष हाथ

भीतर चूरे ॥ १६०१ ॥ ॥ सवैया ॥ कोप मलेछन की प्रतना सु दुधा करिकै सतिधा करि डारी । बीर परे कहूँ बाज मरे कहूँ झूम गिरे गजि भू परि भारी । घूमति है कहूँ घाइ लगे भट बोल सकैं न गए बलु हारी । आसन लाइ मनो मन राइ लगावत ध्यान बडे ब्रतधारी ॥ १६०२ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्धु इतो जब भूप किओ तब नाहरिखाँ रिखिकै अटिक्यो । हथिआर सँभार हकार पर्यो जु समाज मै बाज हुतो मटिक्यो । खड़गेश तिनै गहि केसन ते झटक्यो (मू०ग्रं०४५६) अरु भूमि बिखै पटिक्यो । तब ताहरि खाँ इह देख दशा कबि स्याम कहै भज ग्यो न टिक्यो ॥ १६०३ ॥ ताहरि खाँ भज ग्यो जबही तब ही रिसि खान झड़ाझड़ आए । शस्त्र सँभार सभै अपुने जमरूप किए न्रिप ऊपरि धाए । भूपति बान हने इन कउ इनहूँ न्रिप कउ बहु बान लगाए । किंनर जच्छ ररैं उपमा रन चारन जीत के गीत बनाए ॥१६०४॥ ॥ दोहरा ॥ खड़गसिंघ लखि बिकटि भट तिउर चड़ाए माथ । सीस काटि अरि को दयो एक बान के साथ ॥१६०५॥ ॥ सवैया ॥ पुनि खान निहंग झड़ंग भड़ंग चले मुख ढालनि कउ धरिकै । करि

में लेकर इन सभी दुर्दमनीय शूरवीरों को चूर-चूर कर डाला ॥ १६०१ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने क्रोधित होकर मलेच्छों की सेना को दो हिस्सों में बाँटकर खंड-खंड कर डाला । कहीं वीर, कहीं घोड़े, कहीं झूमकर भारी बलवान हाथी मरे पड़े हैं । कई घाव खाकर तड़फ रहे हैं और कई बोल नहीं पा रहे हैं । कई ऐसे चुपचाप बैठे हैं मानो कोई बड़ा व्रतधारी ध्यान लगाकर बैठा हो ॥ १६०२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने जब इतना भीषण युद्ध किया तो क्रोधित होकर नाहर खाँ आगे आ खड़ा हुआ । वह शस्त्र सँभाल कर घोड़े को नचाता हुआ ललकार कर राजा पर टूट पड़ा । खड्गसिंह ने उसे केशों से पकड़कर झटककर भूमि पर पटक दिया । उसकी यह दशा देखकर ताहिर खाँ वहाँ नहीं रुका और भाग खड़ा हुआ ॥ १६०३ ॥ जब ताहिर खाँ भाग खड़ा हुआ तो क्रोधित होकर झड़ाझड़ खाँ आगे आया और शस्त्र सँभालकर यमरूप होकर राजा पर टूट पड़ा । इसने राजा पर और राजा ने इस पर बहुत से बाण चलाए । किन्नर और यक्ष भी इस युद्ध की प्रशंसा करने लगे और चारण गण जीत के गीत गाने लगे ॥ १६०४ ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह ने विकट शूरवीरों को सामने देखकर माथे पर तेवर बदले और एक ही बाण से शत्रु का सिर काट डाला १६०५ सवैया पुन निहग झड़ग,

मे करबार सँभार हकार मुरार पैं धाइ परे अरिकैं । दलु मार बिदार दयो पल मैं धरि मुंड सु मीनन जिउँ फरकैं । न टरैं रनभूमहु ते तब लउ जब लउ छित पैं न परे मरिकैं ॥१६०६॥ ॥ दोहरा ॥ स्रोनत की सरता तहा चली महा अरिराइ । मेद मास मजिया बहुत बैतरनी के भाइ ॥ १६०७ ॥ ॥ कबितु ॥ मच्यो रन दारन दिलावर दलेल खाँ सिचानन की भाँति रन भूम झटपटी सी । हठी न निपट खटपटी सु भटन हूकी आनन की आभा ताकी लागै नैकु लटी सी । भूपति सँभारकैं क्रिपान पान तान अभिमान कैं सँघारी सैन बची फूटी फटी सी । कहूँ बाज मारे कहूँ गिरे गज भारे मारे भूप मानो करी भट-कटी बनकटी सी ॥ १६०८ ॥ ॥ दोहरा ॥ खड़ग सिंघ तब खड़ग गहि अति चित कोप बढाइ । सैन मलेछन की हनी जमपुर दई पठाइ ॥ १६०९ ॥ ॥ सोरठा ॥ दोइ छूहनी सैन जब मलेछ की न्रिप हनी । अउर सुभट जे ऐन चले नाम कबि देत कहि ॥ १६१० ॥ ॥ सवैया ॥ भीम गदा करि भीम लिए इखु धी कटि सो कसि पारथ धायो । राइ जुधिशटर लै धनु हाथ चल्यो चित मैं अति क्रोध बढायो ।

भड़ंग खान आदि ढालों से मुँह बचाते हुए आगे बढ़े । तब हाथों में तलवार सँभालकर (राजा) कृष्ण पर ललकार कर टूट पड़े। सेना को मारकर राजा ने दौड़ा दिया और धड़ तथा सिर युद्धस्थल में मछली की तरह तड़फने लगे । योद्धा मरते दम तक युद्धभूमि से टलने का नाम नहीं लेते ॥१६०६॥ ॥ दोहा ॥ वहाँ रक्त की नदी हड़हड़ा कर बह चली और ऐसा लग रहा था मानो मेदा, मांस और मज्जा की वैतरणी बन गई हो ॥ १६०७ ॥ ॥ कवित्त ॥ भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया और दिलावर, दलेल खाँ आदि युद्ध में शीघ्रता से बाज की तरह टूट पड़े । ये निपट हठी वीर मार काट कर रहे हैं और इनकी शोभा नयनों को सुन्दर लग रही है । राजा ने भी कृपाण सँभालकर गर्वपूर्वक सेना को तोड़-फोड़कर उसका संहार कर दिया । कहीं राजा ने घोड़ों और कहीं हाथियों को मार गिराया । ऐसे शूर कट रहे थे मानो राजा ने जंगल को काटकर फेंक दिया हो ॥ १६०८ ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह ने तब तलवार पकड़कर क्रोधित होकर मलेच्छों की सेना को यमलोक पहुँचा दिया ॥ १६०९ ॥ ॥ सोरठा ॥ जब दो अक्षौहिणी मलेच्छ सेना को राजा ने नष्ट कर दिया तो जो बाकी वीर युद्ध के लिए चले उनके नाम इस प्रकार हैं ॥ १६१० ॥ ॥ सवैया ॥ भीम बड़ी गदा लेकर और अपनी कृश कमर को कसकर अर्जुन

भ्रात बली दोऊ साथ लिए दलु जेतक संग हुतो सु बुलायो। ऐसे भिरे ब्रितरासुर सिउ मघवा रिसिकै जिम जुद्ध मचायो ॥ १६११ ॥ ॥ सोरठा ॥ मन महि. कोप बढाइ सुभटन सभै सुनाइकै। खड़गसिंघ समुहाइ बचन कहत भयो क्रिशन सिउ ॥ १६१२ ॥ ॥ खड़गेश बाच सभन भटन सो ॥ ॥ स्वैया ॥ पसचम (मू०ग्रं०४६०) सूर चड़े कबहू अरु गंग बही उलटी जिय आवै। जेठ के मास तुखार परे बन अउर बसंत समीर जरावै। लोक हलै ध्रुव को जल को थल हुइ थल को कबहू जलु जावै। कंचन के नगु पंखन धारि उडै खड़गेश न पीठ दिखावै ॥ १६१३ ॥ ॥ सवैया ॥ यों कहिकै धनु को गहिकै लहिकै चहिकै बहु बीर कटे। इक धाइ परै पुन सामुहि ह्वै इक भाज गए इक सूर लटे। बलबंड घने छित पै पटके भट ऐसी दशा बहु हेर हटे। कबि स्याम मनै तिह आहव मै सु रहे केऊ बीर फुटे ई फटे ॥ १६१४ ॥ ॥ सवैया ॥ धनु पारथ को तिह काटि दयो पुनि काटि कै भीम गदा ऊ गिराई। भूपति की करवार कटी कहु जाइ परी कछु जानी न जाई। भ्रात

चल पड़ा। युधिष्ठिर भी हाथ में धनुष लेकर क्रोधित होकर चल पडे। दोनों भाइयों को तथा जितना भी दल वहाँ था उन्होंने उसे साथ लिया और वे ऐसे भिड़ पड़े मानो इन्द्र ने वृत्तासुर के साथ युद्ध छेड़ दिया हो ॥ १६११ ॥ ॥ सोरठा ॥ मन में क्रोधित होता हुआ सभी वीरों को सुनाता हुआ खड्गसिंह कृष्ण के सामने जाकर बोला ॥ १६१२ ॥ ॥ खड्गेश उवाच सभी वीरों के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ सूर्य चाहे पश्चिम में उगे और गंगा चाहे उल्टी बहने लगे, जेठ के महीने में चाहे बरफ पड़ने लगे और बसन्त ऋतु का पवन चाहे जलाने का काम करने लगे; ध्रुवलोक चाहे हिल जाय और जल का स्थल और स्थल का जल हो जाय तथा चाँहे सुमेरु पर्वत पंख लगाकर उड़ने लगे परन्तु खड्गसिंह कभी युद्ध से पीठ नहीं दिखाएगा ॥१६१३॥ ॥ सवैया ॥ यह कहते हुए उसने धनुष पकड़कर प्रसन्न मुद्रा में बहुत से वीरों को काट डाला। कई सामने हो लड़ने लगे, कई भाग गए और कई शूरवीर धराशायी हो गए। बहुत से महावीरों को धरती पर पटक दिया और कई शूरवीर युद्ध का यह दृश्य देखकर पीछे हट गए। कवि का कथन है उस युद्धस्थल में जो भी वीर था वह कहीं न कहीं से कटा-फटा ही था ॥ १६१४ ॥ ॥ सवैया ॥ उसने अर्जुन का धनुष गिरा दिया और भीम की गदा गिरा दी। राजा की स्वयं भी तलवार कट गई और पता नहीं चला वहाँ कहाँ आ गिरी अर्जुन और

बोऊ अरु सैन घनी अति रोस भरी न्रिप ऊपर धाई । भूपति बान हनै तिह कउ तन फोर दई उह ओर दिखाई ॥ १६१५ ॥ ॥ दोहरा ॥ सैन अछूहन तुरत ही दीनी तिनह सँघार । पुनि रिसि सिउ धावत भयो अपने शस्त्र सँभार ॥ १६१६ ॥ ॥ सवैया ॥ एक चटाक चपेट हनै इक लै कर मै करवार सँघारै । एकन के उर फार कटारन केसन ते गहि एक पछारै । एक चलाइ दए दसहू दिस एक डरे मरगे बिनु मारै । पैदलु को दलु मार दयो दुह हाथन हाथिन दाँत उखारै ॥ १६१७ ॥ ॥ सवैया ॥ पारथ आन कमान गही तिह भूपति को इक बान लगायो । लागत ही अवसान गुमान गयो खड़गेश महा दुखु पायो । पउरख पेख कै जी हरिखयो बल टेर नरेश सु ऐसु सुनायो । धंन पिता धंन वै जननी जु धनंजै नामु जिनो सुत जायो ॥१६१८॥ ॥ खड़गेश बाच पारथ सो ॥ ॥ सवैया ॥ आनन मै मसु भीजत है बर बारज से जुग लोचन तेरे । छूट रही अलकै कट लउ इह भाँत मनो जुगनाग करेरे । आनंद कंद किधो मुख चंद कटे दुख फंध चकोरन केरे । सुंदर सूरत कैसे हनो

भीम की अनन्त सेना क्रोधित हो राजा पर टूट पड़ी । राजा ने घनघोर बाण वर्षा से उन सबके शरीर छेद दिए ॥१६१५॥ ॥ दोहा ॥ एक अक्षौहिणी सेना राजा ने तुरन्त मार डाली और पुनः क्रोधित हो अपने शस्त्रों को सम्हालता हुआ शत्रु पर टूट पड़ा ॥ १६१६ ॥ ॥ सवैया ॥ कुछ को अन्य शस्त्रों की मार से मार डाला और कुछ को हाथ में तलवार लेकर उनका संहार कर दिया । कई का हृदय तलवार से फाड़ डाला और बहुतों को केशों से पकड़कर पछाड़ दिया । कुछ को दशों दिशाओं में छितराकर फेंक दिया और कुछ डर के मारे बिना मारे ही मर गए । पैदलों के समूह को मार डाला और राजा ने अपने दोनों हाथों से हाथियों के दाँत उखाड़ लिए ॥१६१७॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन ने धनुष पकड़कर राजा को एक बाण मारा जिसे लगते ही राजा का गर्व नष्ट हुआ और उसे अत्यन्त दुःख पहुँचा । अर्जुन का पौरुष देखकर हृदय प्रसन्न हुआ और राजा ने सुनाते हुए कहा कि वे माता-पिता धन्य हैं जिन्होंने अर्जुन जैसे पुत्र को जन्म दिया ॥ १६१८ ॥ ॥ खड्गेश उवाच अर्जुन के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ तुम्हारी मसें भीग रही हैं और आँखें कमल के समान हैं । तुम्हारे बाल कमर तक ऐसे झूल रहे हैं मानो दो सर्प हों, तुम्हारा मुख चन्द्रमा के समान है जिसे देखकर चकोर का कष्ट दूर हो जाता है । तुम्हारी सुन्दर सूरत को देख मेरे मन में दया का भाव जागृत हो

तुम देख दया उपजी जिय मेरे ॥ १६१९ ॥ ॥ सवैया ॥ पारथ हेर हस्यो पुनि बैन चल्यो मन भीतर कोप भर्‌यो। धनु बान सँभारकै पान लियो ललकार पर्‌यो न रतीकु डर्‌यो। उत ते खड़गेश भयो समुहे अति बानन (मू०ग्रं०४६१) को दुह युद्ध कर्‌यो। तब पारथ सिउ लरबो तजि कै न्रिप भीम के ऊपर धाइ पर्‌यो ॥ १६२० ॥ तब भीम को स्यंदन काटि दयो अरु बीर घने रन मांझ छए है। घाइल एक परे छित पै इक घाइल घाइल आइ खए है। एक गए भजि कै इक तो सजिकै हथियारन कोप तए है। एक फिरै भट कांपत ही कर ते छुट कै करवार गए है ॥ १६२१ ॥ ॥ दोहरा ॥ पुन पारथ धनु लै फिर्‌यो कसिकै तीछन बान। मारत भ्यो खड़गेश तन मन अरि बधि हित जान ॥ १६२२ ॥ ॥ सवैया ॥ बान लग्यो जब ही तिह कउ तब ही रिसिकै कही भूपत बातै। काहे कउ आग बिरानी जरै सुनरे न्रिप मूरत हउ कहो तातै। ताही समेत हनो तुम कउ सिखई जिह बान चलान की घातै। जाहु चले ग्रहि छाडत हो तुम सुंदर नैननि जानि कै नातै ॥ १६२३ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ कहि भूपति पारथ कउ रन धाइ पर्‌यो कर लै

उठा है, इसलिए मैं तुम्हें कैसे मारूँ ॥ १६१९ ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन यह देखकर हँसा और मन में क्रोधित हो उठा। वह निर्भय होकर धनुष-बाण हाथ में ले ललकार उठा। उधर से खड्गसिंह ने भी उसके सामने हो युद्ध प्रारम्भ कर दिया। तब राजा अर्जुन से लड़ना छोड़ भीम के ऊपर टूट पड़ा ॥ १६२० ॥ तब भीम के रथ को काट दिया तथा अनेकों वीरों को युद्ध में मार गिराया। कई वीर धरती पर घायल हो पड़े हैं और कई घायल घायलों से भिड़े हैं। कई भाग खड़े हुए हैं और एक शस्त्र धारणकर क्रोधित हो रहे हैं। बहुतों के हाथ से तलवारें छूट गई ॥ १६२१ ॥ ॥ दोहा ॥ पुनः अर्जुन धनुष लेकर पलटा और उसने कसकर तीक्ष्ण बाण खड्गसिंह को मारने के लिए चलाया ॥ १६२२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा को जब बाण लगा तो उसने क्रोधित होकर अर्जुन से कहा कि हे मोहिनी मूरतवाले! तुम क्यों दूसरे की आग में जल रहे हो। तुमको मैं तुम्हारी बाण-विद्या के शिक्षक समेत मार डालूंगा। तुम सुन्दर नयनोंवाले हो इसलिए तुम घर चले जाओ, मैं तुम्हें छोड़ता हूँ ॥ १६२३ ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन को यह कह तीखी तलवार हाथ में ले राजा सेना पर टूट पड़ा। सेना को देखकर उस महाबली ने पूर्णतः

अस पैना। सैन निहार महाबलु धार हकार पर्‌यो मन रंचक भै ना। शत्रन के अवसान गए छुट कोऊ सक्यो करि आयुध लैना। मार अनेक दए रन मै इक पानी ही पानी रटै करि सैना ॥ १६२४ ॥ ॥ दोहरा ॥ भजी सैन जब पांडवी क्रिशन बिलोकी नैन। दुरजोधन सो यों कही तुम धावहु लै सैन ॥ १६२५ ॥ ॥ सवैया ॥ यों सुनिकै हरि की बतिआ सजि कै दुरजोधन सैन सिधार्‌यो। भीखम आगै भयो संग भानजु द्रोण क्रिपादिज साथ पधार्‌यो। धाइ परे अरराइ सभै तिह भूपत सो अति ही रन पार्‌यो। आगे हुइ भूप लर्‌यो न डर्‌यो सभ कउ सर एक ही एक प्रहार्‌यो ॥ १६२६ ॥ ॥ सवैया ॥ तब भीखम कोप कियो मन मै इह भूपति पै बहु तीर चलाए। आवत बान सो बान कटे खड़गेश महा असि लै करि धाए। होत भयो तह जुद्ध बडो रिसि भीखम के न्रिप बैन सुनाए। तउ लखि हो हमरे बल कउ जब ही जम के बसिहो ग्रिहि जाए ॥ १६२७ ॥ ॥ दोहरा ॥ भजत न भीखम जुद्ध ते भूप लखी इह गाथ। सीस कट्‌यो तिह सूत को एक बान के साथ ॥ १६२८ ॥ ॥ सवैया ॥ अस्व लै भीखम को

भय-विहीन होकर सेना को ललकारा। उसे देखकर शत्रु भयभीत हो उठे और शस्त्र तक न सम्हाल सके। उसने युद्ध में अनेकों को मार दिया और समस्त सेना पानी-पानी पुकारने लगी ॥ १६२४ ॥ ॥ दोहा ॥ जब पाण्डव-सेना को भागते हुए कृष्ण ने देखा तो उन्होंने दुर्योधन से कहा कि तुम सेना लेकर चढ़ाई करो ॥ १६२५ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की बातें सुनकर दुर्योधन सुसज्जित सेना लेकर चल पड़ा। कर्ण के साथ भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य आदि भी चल पड़े और इन सभी बलियों ने राजा खड्गसिंह के साथ भयंकर युद्ध किया। राजा निर्भय आगे बढ़कर लड़ा और उसने एक-एक बाण सब को मारा ॥ १६२६ ॥ ॥ सवैया ॥ तब भीष्म ने मन में क्रोध किया और राजा पर बहुत से बाण चलाये। आते हुए बाणों को काटकर राजा खड्गसिंह तलवार लेकर दौड़ पड़ा। उस भीषण युद्ध में भीष्म को राजा ने सुनाकर कहा कि तुम मेरे बल को तभी समझ सकोगे जब तुम यमलोक जा बसोगे ॥ १६२७ ॥ ॥ दोहा ॥ खड्गसिंह ने देखा कि भीष्म युद्ध से नहीं भाग रहे हैं तब उसने एक बाण के साथ उनके सारथी का सिर काट दिया ॥ १६२८ ॥ ॥ सवैया ॥ घोड़े भीष्म को ले भाग खड़े हुए तब दुर्योधन

भजिगे तबही दुरजोधन कोप भर्‌यो । संग द्रउण को पुत्र क्रिपा बर लै बरमाक्रित जादव जाइ पर्‌यो । धनु बान लै द्रउणहू आप तबै हठ (मू०ग्रं०४६२) ठान रह्‌यो नह नैकु डर्‌यो । करवार कटारनि सूलनि साँगनि चक्रनि को अति जूझ कर्‌यो ॥ १६२९ ॥
॥ कान जू बाच खड़गेश सो ॥ ॥ सवैया ॥ तउ ही लउ त्यौ जदुबीर लिए धन लौ खड़गेश कउ बैन सुनायो । मारत हउ हठिकै सठि तोकहु का भयो जो अति जुद्ध मचायो । एक घरी लरि लै मरिहै अब जानत हउ तुय काल ही आयो । चेत रे चेत अजउ चित मै हरि इउ कहिकै धनु बान चलायो ॥१६३०॥
॥ दोहरा ॥ आवत सर सो काटि कै रिसि बोल्यो खड़गेश । मुहि पउरख जानत सकल शेश सुरेश महेश ॥ १६३१ ॥
॥ कबित्तु ॥ भक्ख जैहउ भूतन भजाइ दैहो सुरासुर स्याम पटिकैहो भूमि भुजा असजोग हो । भैरव नचैहउ भारी जुद्धहि मचैहउ पुनि भाजहूँ न जैहउ सुनि साची हरि हउ कहउ । कहाँ द्रउण दिज कउ सँघारत न लागै पलु मारो दलबल इंद्र जम रुद्र जो चहउ । राधकारवन तऊ तेरे रन जुरे आजु छत्री

क्रोध से भर उठा । वह द्रोण के पुत्र, कृपाचार्य, कृतवर्मा तथा यादवों आदि को लेकर टूट पड़ा । द्रोणाचार्य स्वयं धनुष बाण लेकर हठपूर्वक अभय होकर युद्ध में डटे रहे और कृपाण, कटार, त्रिशूल, बरछी, चक्र आदि के साथ भीषण युद्ध किया ॥ १६२९ ॥ ॥ कृष्ण उवाच खड्गेश के प्रति ॥
॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने धनुष हाथ में ले खड्गसिंह से कहा कि हे मूर्ख ! क्या हुआ जो तुमने भीषण युद्ध किया, मैं अब बलपूर्वक तुम्हें मारता हूँ । तुम एक घड़ी तक और लड़ लो क्योंकि मैं जानता हूँ कि तुम्हारा काल आ पहुँचा है और तुम्हें मरना है । उसको सावधान हो जाने के लिए कहते हुए श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण चलाया ॥ १६३० ॥ ॥ दोहा ॥ आते हुए तीर को काटते हुए क्रोधित हो खड्गसिंह ने कहा कि मेरे पौरुष को शेषनाग, इन्द्र और शिव आदि सभी भली प्रकार जानते हैं ॥ १६३१ ॥ ॥ कवित्त ॥ मैं भूतों को खा जाऊँगा, सुरों और असुरों को भगा दूंगा और कृष्ण को भूमि पर पटक दूंगा, इतना मेरी भुजाओं में बल है । मैं भीषण युद्ध करके भैरव को भी नचा दूंगा और हे कृष्ण ! मैं सच कह रहा हूँ कि मैं युद्ध से भागूंगा नहीं । द्रोणाचार्य जैसे ब्राह्मण को मारते हुए तो एक पल भी नहीं लगेगा । मैं इन्द्र और यम जिसको चाहूँ दल-बल सहित मार सकता हूँ । हे कृष्ण ! ये जितने भी तेरे युद्ध में आज क्षत्री जुटे हैं इन सबको मैं मार सकता हूँ परन्तु खड्गसिंह

खड़गेश ह्वैंकै ऐसे बोल हउ सहउ ॥१६३२॥ ॥ छपै ॥ तबहि द्रउण रिस कोप बढाइ ग्रिप सउहै धायो। अस्त्र शस्त्र गहि पान बहुतु बिधि जुद्धु मचायो। अधिक स्त्रउण तन भरे लरे भट घाइल ऐसे। लाल गुलाल भरे पटि खेलत चाचर जैसे। तब देख सभै सुर यों कहै धंनि दिज धंनि सु भूप तुअ। जुग चारन मै अब लउ कहूँ ऐसो जुद्धन भयो भुअ ॥ १६३३ ॥ ॥ दोहरा ॥ घेर्यो तब खड़गेश कउ पांडव सैन्न रिसाइ। पारथ भीखम भीम दिज द्रउण क्रिपा कुरराइ ॥ १६३४ ॥ ॥ कबित्तु ॥ जैसे बार खेत को जु काल फास चेत को सु भिच्छ दान देत कउ सु कंकन जिउँ कर को। जैसे देह प्रान को प्रवेख सस भान को अग्यान जैसे ग्यान को सुगोपी जैसे हरि को। जिउँ तड़ाग आप कउ सु माला जैसे जाप कउ सु पुंनि जैसे पाप कउ जिउँ आल बाल तर को। जैसे उड ध्रूअ कउँ समुंद्र जैसे भूअ कउँ सु तैसे घेरि लीनो है खड़गसिंघ बर को ॥ १६३५ ॥ ॥ स्वैया ॥ घेरि लयो खड़गेश जबै तब ही दुरजोधन कोप

होकर तुम्हारी कही हुई बातें सहन नहीं कर सकता ॥ १६३२ ॥ ॥ छप्पय ॥ तब द्रोण क्रोधित हो राजा के सामने आये और उन्होंने अस्त्र-शस्त्र पकड़कर भीषण युद्ध किया। अधिक रक्त बहने से शूरवीर घायल होकर ऐसे लग रहे हैं मानो वे लाल गुलाल की होली खेलते हुए लाल रंग के कपड़े पहने हुए हों। देवगण यह देखकर, धन्य द्रोण एवं धन्य राजा खड्गसिंह कहने लगे और साथ-ही-साथ यह भी कहने लगे कि चारों युगों में धरती पर अभी तक ऐसा युद्ध कभी नहीं हुआ ॥ १६३३ ॥ ॥ दोहा ॥ तब क्रोधित होकर पाण्डव सेना के अर्जुन, भीष्म, भीम, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और दुर्योधन आदि ने राजा खड्गसिंह को घेर लिया ॥ १६३४ ॥ ॥ कवित्त ॥ जैसे बाढ़ खेत को घेर लेती है, काल जीवित प्राणी को घेर लेता है, भिक्षुक दानी को और कंगन हाथ को घेर लेता है जिस प्रकार देह प्राण को, सूर्य और चन्द्रमा का मंडल (तेज) उन्हें घेर लेता है तथा अज्ञान ज्ञान को घेर लेता है एवं गोपियाँ कृष्ण को घेर लेती हैं; जैसे जल को तालाब और जाप को माला तथा पाप को पुण्य तथा ककड़ी को उसकी बेल घेरे रहती है; जैसे ध्रुव को आकाश और भूमि को समुद्र घेर लेता है, उसी प्रकार इन वीरों ने महाबली खड्गसिंह को घेर लिया है ॥ १६३५ ॥ ॥ सवैया ॥ खड्गसिंह को घेर कर दुर्योधन क्रोधित हो उठा और अर्जुन भीम युधिष्ठिर तथा भीष्म एवं बलराम

भयो है। पारथ भीम जुधिष्टरि भीखम अउर हलीहल पान लयो है। भानज द्रउण सु अउर क्रिपा सु क्रिपान लए अरि ओर गयो है। असन लातन मूकन दाँतन को तहा आहव होत भयो है॥ १६३६॥ ॥ सवैया॥ (मू०ग्रं०४६३) स्री खड़गेश लयो धनुबान सँभार कई अरि कोटि सँघारे। बाज परे कहूँ ताज गिरे गजराज गिरे गिर से धरिकारे। घाइल एक परे तरफै सु मनो कर सायल सिंघ बिडारे। एक बली करवारन सो अरि लोथ परी तिह मूँड उतारे॥ १६३७॥
॥ सवैया॥ भूपत बान कमान गही जदुबीरन के अभिमान उतारे। फेरि लई जमदार सँभार हकार कै शत्रन के उर फारे। घाइल एक गिरे रन मै अपने मन मै जगदीश सँभारे। ते वह मोख भए तब ही भव को तर कै हरिलोक पधारे॥ १६३८॥ ॥ दोहरा॥ निपट सुभट चटपट कटे खटपट कही न जाइ। सटपट जे भाजे तिनह पारथ कह्यो सुनाइ॥ १६३९॥ ॥ सवैया॥ स्री ब्रिजराज कै काज कउ आज करो सभ ही भट नाहि टरो। धन बान सँभारकै पानन मै अरि भूपत कउ ललकार परो। मुख ते मिलि मार ही मार

ने भी हल हाथ में ले लिया है। द्रोणाचार्य, कृपाचार्य और कर्ण आदि कृपाण हाथ में लेकर शत्रु की ओर बढ़े हैं और अस्त्रों, लातों, घूसों और दाँतों से भयंकर युद्ध होने लगा॥ १६३६॥ ॥ सवैया॥ खड़गसिंह ने धनुष-बाण सँभालकर करोड़ों शत्रुओं को मार डाला। कहीं घोड़े, कहीं मुकुट और कहीं पर्वतों के समान काले हाथी गिरे पड़े हैं। कई ऐसे गिरकर तड़प रहे हैं, मानो सिंह ने हाथी के बच्चे को रौंद डाला हो और कई ऐसे बलवान भी हैं जो गिरी हुई लाशों के सिर उतार रहे हैं॥ १६३७॥ ॥ सवैया॥ राजा ने धनुष-बाण लेकर यादवों के गर्व को चूर कर दिया और पुनः यमदाढ़ हाथ में लेकर शत्रुओं के हृदय फाड़ डाले। योद्धा युद्ध में घायल होकर मन में परमात्मा का स्मरण कर रहे हैं। युद्ध में मरनेवालों की मुक्ति हो गई है और वे भवसागर को पार कर प्रभुलोक में चले गए हैं॥ १६३८॥
॥ दोहा॥ परम वीर शीघ्र ही काट डाले गये और युद्ध की भीषणता का वर्णन नहीं किया जा सकता। जो शीघ्रता से भागे चले जा रहे हैं अर्जुन ने उनसे कहा॥ १६३९॥ ॥ सवैया॥ हे शूरवीरो! श्रीकृष्ण के कार्य को करो और युद्ध मे मत भागो। धनुष-बाण हाथों में संभालो और ललकार

ररो अपुने अपुने हथियार धरो। तुम तो कुल की कछु लाज करो खड़गेश के संगि लरो न डरो ॥ १६४० ॥ ॥ सवैया ॥ भानज कोप भयो चित मै तिह भूपति के हठ सामुहि धायो। चांप चढाइ लयो कर मै सर यो तब ही इक बैन सुनायो। आयो है केहरि के मुख मै म्रिग ऐसे कह्यो न्रिप तौं सुनि पायो। भूपत हाथ लयो धनु बान सँभार कह्यो मुख ते समझायो ॥ १६४१ ॥ ॥ सवैया ॥ भानज काहे कउ जूझ मरो ग्रहि जाहु भलो दिन को इक जीजो। खात हलाहल किउ अपने कर जाइ कै धामु सुधारसु पीजो। यों कहि भूपति बान हन्यो मुख ते कह्यो जुद्धहि को फलु लीजो। लागति बान गिर्‌यो मुरछाइके स्रउन गिर्‌यो सगरो अंग भीजो ॥ १६४२ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ ही लउ भीम गदा गहि कै पुन पाथर लै कर मै धनु धायो। भीखम द्रोण क्रिपा सहदेव सु भूरस्रवा मन कोप बढायो। स्री दुरजोधन राइ जुधिशटरि स्री ब्रिजनाइक लै दलु आयो। भूप के तीरन के डर ते बरबीरन तउ मन मै डर पायो ॥ १६४३ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ लगि स्रीपति आप कुप्यो सर भूपति के उर मै इक मार्‌यो। एक ही बान को

कर राजा पर टूट पड़ो। अपने हाथों में शस्त्र पकड़ते हुए मारो-मारो की पुकार करो। कुल की मर्यादा का कुछ तो ध्यान करो और अभय होकर खड्गसिंह के साथ लड़ो ॥१६४०॥ ॥ सवैया ॥ सूर्यपुत्र (कर्ण) क्रोधित होकर राजा के सामने हठपूर्वक जा डटा और धनुष चढ़ाकर तीर हाथ में लेते हुए राजा से बोला कि राजा तुम सुनते हो, अब तुम मृग के समान होकर मुझ जैसे सिंह के मुँह में आ पड़े हो। राजा ने धनुष-बाण हाथ में लिया और सूर्य-पुत्र को समझाते हुए बोला ॥ १६४१ ॥ ॥ सवैया ॥ हे सूर्यपुत्र (कर्ण)! क्यों मरना चाहते हो; तुम जाओ और कुछ दिन रहो और जीओ। अपने हाथों से विष क्यों खा रहे हो, घर जाकर सुखपूर्वक अमृत पान करो। यह कहकर राजा ने बाण छोड़ा और कहा कि युद्ध का फल देख लो। बाण लगते ही वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा और उसका सारा शरीर रक्त से भीग गया ॥१६४२॥ ॥ सवैया ॥ तब तक भीम गदा लेकर और अर्जुन धनुष लेकर दौड़े तथा भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, सहदेव तथा भूरिश्रवा आदि भी क्रुद्ध हो उठे। दुर्योधन, युधिष्ठिर, कृष्ण भी सेना लेकर आ गये। राजा के बाणों से बड़े-बड़े महाबली मन में भयभीत हो उठे ॥ १६४३ ॥ ॥ सवैया ॥ तब तक श्रीकृष्ण ने कुपित होकर राजा के हृदय में एक बाण मारा अब एक बाण और तानकर

तान तबै इह सारथी को प्रतअंग प्रहार्‌यो। भूपति आगे ही होत भयो रनभूमहि ते टरयो पग टार्‌यो (मू०ग्रं०४६४) सूर सराहत भे सभ ही जसु यों मुख ते कबि स्याम उचार्‌यो ॥ १६४४ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री हरि को अविलोक कै आनन इउ कहिकै न्रिप बात सुनाई। छूट रही अलकै कटि लउ उपमा मुख की बरनी नही जाई। चार दिपै अखिआन दोऊ उपमा न कछू इन ते अधिकाई। जाहु चले तुम कउ हरि छाडत लैहु कहाँ हन ठान लराई ॥ १६४५ ॥ ॥ सवैया ॥ धनु बान संभार कह्यो बपुरो हमरी बतिया हरिजू सुनि लीजै। किउ हठि ठान अयोधन मै हम सिउ समुहाइकै आहव कीजै। मारत हों अब तोहि न छाडत जाहु भले अब लउ नही छीजै। मान कह्यो हमरो पुर की कजरारनि को न ब्रिथा दुख दीजै ॥ १६४६ ॥ ॥ सवैया ॥ हउ हठ ठान अयोधन मै घनस्याम घने रनबीरनि बेरे। का के कहे हम सो हरि जू समुहाइ भयो न फिर्‌यो रन हेरे। मारो कहा अब तोकहु हउ करुना अतही जिय आवत मेरे। तोको मर्‌यो सुनिकै छिन मै हरि जैहै सखा हरि जेतक तेरे ॥ १६४७ ॥

उन्होंने सारथी को मारा। अब राजा आगे बढ़ा और रणभूमि से उसके पैर विचलित हो उठे। कवि का कथन है कि सभी शूरवीर इस युद्ध के यश की सराहना करने लगे ॥ १६४४ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण को देखकर राजा ने कहा कि तुम्हारी सुन्दर केश-राशि है और तुम्हारे मुख की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता, तुम्हारे नेत्र अत्यन्त सुन्दर हैं और इनकी उपमा किसी से नहीं दी जा सकती। हे कृष्ण! तुम चले जाओ, मैं तुमको छोड़ता हूँ। तुम युद्ध कर के क्या लोगे ॥ १६४५ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने धनुष-बाण संभालकर कृष्ण से कहा कि तुम मेरी बात सुनो और क्यों हठपूर्वक सामने पड़कर तुम मुझसे युद्ध कर रहे हो। मैं अब तुम्हें मार डालूँगा और छोड़ूंगा नहीं अन्यथा तुम चले जाओ, क्योंकि अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। मेरा कहना मान जाओ और मर कर नगर की सुन्दरियों को व्यर्थ ही कष्ट में मत डालो ॥१६४६॥ ॥ सवैया ॥ मैंने हठपूर्वक युद्ध में पड़े कई रणवीरों को मार डाला। हे कृष्ण! तुम किसके कहने पर मेरे सामने आकर लड़ रहे हो और युद्ध से नहीं भाग रहे हो। मेरे हृदय में दया आ रही है, इसलिए मैं तुम्हें क्या मारूँ। तुम्हारे मारे जाने के बारे में सुनकर तुम्हारे सभी सखा भी क्षण भर में मर जाएँगे ॥ १६४७ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार यह सुनकर श्रीकृष्ण

॥ सवैया ॥ हरि इउ सुनि कै धनुबान लयो रिसिकै खड़गेश के सामुहि धायो । आवत ही कबि स्याम भनै घटिका जुग बानन जुद्ध मचायो । स्याम गिरावत भ्यो न्रिप कउ न्रिपहू रथ ते हरि भूम गिरायो । कउतक हेर सराहत भे भट स्री हरि को न्रिप को जसु गायो ॥१६४८॥ ॥ सवैया ॥ इत स्याम चढ़्यो रथ आपन पै रथ पै उत स्री खड़गेश चढ़्यो । अति कोप बढाइ महां चित मै तिह म्यानहु ते करवार कढ़्यो । सु घनो दल पंड के पुतन को रिसि तेज की पावक संग डढ़्यो । धुन बेद की अस्त्रनि शस्त्रनि की बिधि मानहु पारस साथ पढ़्यो ॥ १६४९ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री दुरजोधन के दल को लखि भूप तबै अति बान चलाए । बांके किए बिरथी तह बीर घने तबही जमधाम पठाए । भीखम द्रउण ते आदिक सूर भजे रण मै न कोऊ ठहराए । जीत की आस तजी बहुरो खड़गेश के सामुहि नाहिन आए ॥ १६५० ॥ ॥ दोहरा ॥ द्रउणज भानुज क्रिपा भजि गए न बाधी धीर । भूरस्रवा कुरराज सभ टरे लखी रन भीर ॥ १६५१ ॥ ॥ सवैया ॥ भाजे सभै लखिकै सु जुधिष्टरि स्रीपति कै तट ऐसे उचार्यो । (मू०ग्रं०४६५) भूप बडो बलवंत क्रिपानिध काहू ते पैग टर्यो नही टार्यो ।

क्रोधित होकर खड्गसिंह पर टूट पड़े और कवि के कथनानुसार दो घड़ी तक बाणों से युद्ध किया । कभी कृष्ण राजा को और कभी राजा कृष्ण को रथ से भूमि पर गिरा देते थे । यह लीला देखकर चारण-गण राजा और श्रीकृष्ण की प्रशंसा करने लगे ॥ १६४८ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर श्रीकृष्ण रथ पर चढ़े और उधर खड्गसिंह रथ पर सवार हुआ और उसने क्रोधित होकर म्यान से तलवार खींच ली । पाण्डवों का दल भी क्रोधाग्नि से जल उठा और ऐसा लग रहा था कि अस्त्र-शस्त्रों की ध्वनि वेद-मंत्रों का उच्चारण हो ॥ १६४९ ॥ ॥ सवैया ॥ दुर्योधन के दल को देखकर राजा ने बाण-वर्षा की और बहुत से वीरों को रथ-विहीन करके यमलोक पहुँचा दिया । भीष्म, द्रोण जैसे शूरवीर रण से भाग खड़े हुए तथा जीत की आशा त्याग कर पुनः खड्गसिंह के सामने नहीं आये ॥ १६५० ॥ ॥ दोहा ॥ द्रोण-पुत्र, सूर्य-पुत्र और कृपाचार्य धैर्य छोड़कर भाग गए और भीषण युद्ध देखकर भूरिश्रवा और दुर्योधन भी भाग खड़े हुए ॥ १६५१ ॥ ॥ सवैया ॥ सबको भागा हुआ देखकर युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण से कहा कि यह राजा बहुत बलशाली है और किसी से भी एक कदम पीछे नहीं हट रहा है हमने कर्ण भीष्म द्रोण अर्जुन, भीम आदि

भ्रानज भीखम द्रउण क्रिपा हम पारथ भीम घनो रन हार्यो । सो नहि नैकु टरै रन ते हमहूँ सभहूँ प्रभ पउरख हार्यो ॥१६५२॥ ॥ स्वैया ॥ भीखम भानजु अउ दुरजोधन भीम घनो हठ जुद्ध मचायो । स्री मुसली बरमाक्रित सातक कोप घनो चित मांझ बढायो । हार रहे रनधीर सभै अब का प्रभ जू तुमरे मन आयो । भागत पै गन सो रन ते तिह सो हमरो सु कछू न बसायो ॥ १६५३ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र ते आदि जिते गन देव तिते मिलि कै ध्रिप ऊपर धाए । ते सभ आवत देख बली धनु तान कै बान हकारि लगाए । एक गिरे तह घाइल ह्वै इक त्रास भरे तजि जुद्ध पराए । एक लरे न डरे बलवान निदान सोऊ ध्रिप मार गिराए ॥ १६५४ ॥ ॥ स्वैया ॥ जीत कुबेर धनेश खगेश गनेश को घाइल कै मुरछायो । भूम पर्यो बिसंभारि निहार जलेश दिनेश निसेश परायो । बीर महेश ते आदिक भाज गए इह सामुहि एक न आयो । कोप क्रिपानिधि आवत जो सु चपेट सो मारकै भूमि गिरायो ॥ १६५५ ॥ ॥ दोहरा ॥ स्री हरि सिउ हरिए कही बात धरम के तात । तिही समै शिवजू कह्यो ब्रहमे सिउ मुसकात ॥ १६५६ ॥

को साथ लेकर इससे भयंकर युद्ध किया परन्तु यह युद्ध से तनिक भी नहीं टला और हम सबको अपना पौरुष हारना पड़ा ॥ १६५२ ॥ ॥ सवैया ॥ भीष्म, कर्ण, दुर्योधन भीम आदि ने हठपूर्वक घनघोर युद्ध किया और बलराम, कृतवर्मा सात्यकि आदि भी चित्त में अत्यंत क्रोधित हो उठे । सभी योद्धा हार रहे हैं, हे प्रभु ! अब तुम्हारे मन में क्या है जो तुम करना चाहते हो । अब तो सभी सेवक भाग रहे हैं और उन पर हमारा कुछ भी वश नहीं रह गया है ॥ १६५३ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र आदि के जितने गण तथा अन्य देवता थे, वे सब मिलकर राजा खड्गसिंह पर टूट पड़े । उन सबको आता हुआ देखकर इस महाबली ने धनुष तानकर सबको ललकारा । कुछ घायल होकर गिर पड़े और कुछ भयभीत होकर भाग गए । जो वीर निडर होकर लड़ते रहे अंत में राजा ने उन्हें मार डाला ॥ १६५४ ॥ ॥ सवैया ॥ सूर्य, कुबेर, गरुड़ आदि को जीतकर राजा ने गणेश को घायल करके मूर्च्छित कर दिया । भूमि पर पड़े हुए गणेश को देखकर वरुण, सूर्य और चन्द्रमा भाग खड़े हुए । महेश जैसे वीर भी चले गए और सामने नहीं आए । जो भी क्रोधित होकर सामने आता था उसे अपने हाथ के प्रहार से मारकर राजा भूमि पर गिरा देता था ॥ १६५५ ॥ ॥ दोहा ॥ ब्रह्मा ने श्रीकृष्ण से कहा कि आप ही धर्म

॥ सवैया ॥ आपन सो सभ ही भट जूझ रहै कर कै न मरै न्रिप मार्यो । तउ चतुरानन सिउ शिव जू कबि स्याम कहै इह भांत उचार्यो । सक्र जमादिक बीर जिते हमहूं इन सो अति ही रन पार्यो । एतो नही बल हारत रंचक चउदहूं लोकनि को दलु हार्यो ॥ १६५७ ॥ ॥ दोहरा ॥ दोऊ करत बिचार इत पंकजपूत त्रिनैन । उत रवि असथाचलि गयो ससि प्रगट्यो भई रैन ॥१६५८॥ ॥ चौपई ॥ दोऊ दल अति ही अकुलाने । भूख पिआस सो तन मुरझाने । लरते लरते ह्वै गई सांझ । रहि गए ताही रन के मांझ ॥ १६५९ ॥ ॥ चौपई ॥ भोर भयो सभ सुभट सु जागे । दुह दिस मारू बाजन लागे । साजे कवच शस्त्र कर धारे । बहुर जुद्ध के हेत सिधारे ॥ १६६० ॥ ॥ सवैया ॥ शिव को जम को रवि को संग लै बसुदेव को नंद चल्यो रनधानी । मारन हो अरिकै अरिको हरि को हरि भाखत (मू०ग्रं०४६६) यों मुख बानी । स्याम के संगि घने उमडे भट पानन बाण कमाननि तानी । आइ भिरे खड़गेश के संग अशंक भए कछु शंक न मानी ॥१६६१॥ ॥ सवैया ॥ ग्यारह घाइल कै शिव के गन द्वादस सूरनि के रथ काटे । घाइ कियो

के स्वामी हैं और उसी समय शिवजी ने मुस्कराते हुए ब्रह्मा से कहा ॥१६५६॥ ॥ सवैया ॥ अपने जैसे सभी शूरवीर जूझ गए हैं और कोई भी राजा को नहीं मार सका। तब शिव ने पुनः ब्रह्मा से यह कहा कि इन्द्र, यम, आदि तथा हम सबने राजा से भीषण युद्ध किया है। चौदह लोकों का दल हार गया है परन्तु राजा का बल तनिक भी क्षीण नहीं हुआ है ॥ १६५७ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार ब्रह्मा और शिव दोनों आपस में इधर विचार-विमर्श कर रहे हैं और उधर सूर्यास्त हो गया, चन्द्रमा उदय हुआ तथा रात्रि हो गई ॥ १६५८ ॥ ॥ चौपाई ॥ दोनों दल अत्यंत व्याकुल हो उठे और भूख-प्यास से उनके तन मुरझाने लगे। लड़ते-लड़ाते संध्या हो गई और वे सब युद्धस्थल में ही पड़े रह गए ॥ १६५९ ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रातः सभी वीर जागे और दोनों दिशाओं से रणवाद्य बजने लगे। वीर शस्त्र और कवच धारण कर पुनः युद्ध के लिए चल पड़े ॥ १६६० ॥ ॥ सवैया ॥ शिव, यम, सूर्य को साथ लेकर वसुदेव के सुत वासुदेव युद्धस्थल की ओर चले और श्रीकृष्ण ब्रह्मा से कहने लगे कि निश्चित रूप से स्थिर होकर शत्रु को मारना है। कृष्ण के साथ अनेकों वीर धनुष-बाण लेकर उमड़ पड़े और अभय होकर खड़गसिंह से आ भिड़े ॥१६६१॥ ॥ सवैया ॥ शिव के ग्यारह गणों को घायल कर दिया और बारहों सूर्यों के

जम को बिरथी बसु आठन कउ ललकार कै डाटे। शत्र बिमुंडन कीने घने जु रहे रन ते तिनके पग हाटे। पउण समान छुटे न्रिप बान सभै दल बादल जिउँ चल फाटे॥ १६६२॥ ॥ सवैया॥ भाज गए रन ते डरकै भट तउ शिव एक उपाइ बिचार्यो। माटी को मानस एक कियो तिह प्रान परे जब स्याम निहार्यो। सिंघ अजीत धर्यो तिह नामु दिओ बर रुद्र मरै नही मार्यो। शस्त्र सँभार सोऊ कर मै खड़गेश के मारन हेत सिधार्यो॥ १६६३॥ ॥ अड़िल्ल॥ अति प्रचंड बलवंड बहुर मिलिकै भट धाए। अपने शस्त्र सँभारि लिए करि संख बजाए। द्वादस भानन तान कमाननि बान चलाए। हो यो बरखे सर घोर मनो परलै घन आए॥ १६६४॥ ॥ दोहरा॥ बाननि सो बाननि कटे कोप तके जुग नैन। स्री हरि सो खड़गेश तब रिस करि बोल्यो बैन॥ १६६५॥ ॥ सवैया॥ किउ रे गुमान करै घनस्याम अबै रन ते पुनि तोहि भजैहो। काहे कौ आन अर्यो सुन रे सिर केसनि ते बहुरो गहि लैहो। ऐ रे अहीर अधीर डरै नहि तोकहि जीवत जान न दैहो। इंद्र बिरंच कुबेर जलाधिप को ससि को शिव को हत कैहो॥ १६६६॥ ॥ सवैया॥ तउही लउ बीर महोत कटा

रथों को काट डाला। यम को घायल कर डाला और आठों वसुओं को ललकार कर डाँट दिया। अनेकों शत्रुओं को मुण्ड-विहीन कर दिया और जो बचे वे रण से भाग गए। राजा के बाण वायुवेग से चले और शत्रुओं के सभी दल-बादल कट गए॥ १६६२॥ ॥ सवैया॥ जब युद्ध से सभी भाग गए तो शिव ने एक उपाय सोचा। एक मिट्टी का मनुष्य बनाया, जिसमें कृष्ण ने देखते ही प्राण डाल दिया। उसका नाम अजीतसिंह रख दिया, जो कि रुद्र के सामने भी अजेय था। वह शस्त्र सँभाल कर खड्गसिंह को मारने के लिए चला॥ १६६३॥ ॥ अड़िल॥ अनेकों प्रचंड शूरवीर लड़ने के लिए चल पड़े। उन्होंने अपने शस्त्र सँभालकर शंख बजाये। बारहों सूर्यों ने बाण तानकर इस प्रकार चलाए मानो प्रलय के बादल आ गए हों और बाण-वर्षा हो रही हो॥ १६६४॥ ॥ दोहा॥ बाणों से बाणों को काट दिया और क्रोधित होकर देखते हुए तब खड्गसिंह ने श्रीकृष्ण से कहा॥ १६६५॥ ॥ सवैया॥ अरे कृष्ण! क्यों अभिमान कर रहे हो, मैं अभी पुनः तुम्हें रण से भगा दूँगा। तुम क्यों आकर अड़ गए हो मैं तुम्हारे केश पुन: पकड़ लूँगा। अरे गूजर! तुमको डर नहीं लग रहा है, मैं तुम्हें जीवित नहीं जाने दूँगा और इन्द्र, ब्रह्मा, कुबेर,

सिंघ थो रन मै मन कोप भर्यो । कर मै करवार लै धाइ चल्यो कबि स्याम कहै नही नैक डर्यो । अस जुद्ध दुहूँ न्रिप कीन बडो न कोऊ रन ते पग एक टर्यो । खड़गेश क्रिपान की तान दई बिनु प्रान कर्यो गिर भूम पर्यो ॥ १६६७ ॥ ॥ सवैया ॥ देख दशा तिह सिंघ बचित्र सु ठाढो हुतो रिस कै वह धायो । स्याम भनै धनु बानन लै तिह भूपत सिउ अति जुद्ध मचायो । स्री खड़गेश बली धन तान महा बर बान प्रकोप चलायो । लागि गयो तिह के उर मै सर घूमि गिर्यो धर इउ अरि घायो ॥ १६६८ ॥ ॥ चौपई ॥ तब अजीतसिंघ आप ही धायो । धनख बान लै (मू०ग्रं०४६७) रन मधि आयो । भूपति को तिन बचन सुनायो । तो बध हित शिव मुहि उपजायो ॥ १६६९ ॥ अजीतसिंघ यों बचन उचार्यो । खड़गसिंघ रन माहि हकार्यो । न्रिप ए बैन सुनत नही डर्यो । महाबीर पगु आगै धर्यो ॥ १६७० ॥ ॥ चौपई ॥ अजितसिंघ रच्छा हित धाए । ग्यारह रुद्र भान सभ आए । इंद्र किशन जम बसु रिस भरे । बरन कुबेर घेर सभ खरे ॥ १६७१ ॥ ॥ सवैया ॥ सिंघ अजीत जबै खड़गेश सो स्याम कहै अति जुद्ध

वरुण, चन्द्र, शिव आदि सबको मार डालूँगा ॥ १६६६ ॥ ॥ सवैया ॥ तब तक महाबलवीर कटासिंह मन में क्रोधित होकर बिना किसी भय के हाथ में तलवार लेकर राजा पर टूट पड़ा । दोनों ने भीषण युद्ध किया और उनमें से कोई भी एक पग भी पीछे नहीं हटा । अंत में खड्गसिंह ने कृपाण से प्रहार किया और उसे निष्प्राण कर भूमि पर गिरा दिया ॥१६६७॥ ॥ सवैया ॥ उसकी यह दशा देखकर वहाँ खड़ा हुआ विचित्रसिंह आगे बढ़ा और धनुष-बाण से उसने राजा से भीषण युद्ध किया । खड्गसिंह महाबली ने धनुष तानकर क्रोध में आकर इस प्रकार बाण चलाया कि हृदय में लगते ही उसका सिर कट के गिर पड़ा ॥ १६६८ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब अजीतसिंह स्वयं धनुष-बाण लेकर युद्ध में पहुँचा । उसने राजा से कहा कि तुम्हारे वध के लिए मुझे शिव ने उत्पन्न किया है ॥ १६६९ ॥ अजीतसिंह ने इस प्रकार कहा और खड्गसिंह को युद्ध में ललकारा । राजा यह सुनकर डरा नहीं और वह महावीर आगे बढ़ा ॥ १६७० ॥ ॥ चौपाई ॥ अजीतसिंह की रक्षा के लिए ग्यारहों रुद्र और सूर्य आ पहुँचे । इन्द्र, कृष्ण, यम, वरुण, कुबेर आदि सबने उसे घेरा हुआ था ॥ १६७१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब अजीतसिंह ने खड्गसिंह से भीषण युद्ध

मचायो । संग शिवादिक सूर जिते अरि मारन को तिह हाथ उचायो । बान चले अति ही रन मै न्रिप काटि सभै मन रोस तचायो । लै धनु बान महा बलवान हन्यो भट को किनहूँ न बचायो ॥१६७२॥ ॥ चौपई ॥ जब अजीतसिंघ मार गिरायो । सुभटन मन भटक्यो डर पायो । बहुरो भूपत खड़ग सँभार्यो । चक्रत भे सभहू बलु हार्यो ॥ १६७३ ॥ तब हरि हरि बिध मंत्र बिचार्यो । मरै न जरै अगन ते जार्यो । ताते जतन कछू अब कीजै । याते मार भूप इह लीजै ॥ १६७४ ॥ ब्रहमे कह्यो सु इह बिध कीजै । मोहित है मन तब बल छीजै । जब इह भूप गिर्यो लखि लइयै । तब इह जम के धाम पठइयै ॥ १६७५ ॥ ॥ चौपई ॥ पुन अपछ्छ्रन आइस दीजै । जा सो न्रिप रीझै सोइ कीजै । कउतक हेर भूप जब लैहै । घट जैहै बल मन द्रवि जैहै ॥ १६७६ ॥ ॥ दोहरा ॥ कमलजयो हरि सिउ कह्यो सुनी बात सुरराज । नभि निहार बासव कह्यो करहु न्रित सुरराज ॥ १६७७ ॥ ॥ सवैया ॥ उत देवबधू मिलि न्रित करै इत सूर सभै मिल जुद्ध मचायो । किंनर

किया तो उसके साथ में शिव आदि जितने भी शूरवीर थे सबने शत्रु को मारने के लिए अपने-अपने शस्त्र उठाए । युद्ध में बाण-वर्षा होने लगी परन्तु राजा ने क्रोधित होकर सभी बाण काट डाले । उस वीर ने धनुष-बाण लेकर किसी को नहीं छोड़ा और सभी वीरों को मार डाला ॥ १६७२ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब अजीतसिंह ने वीरों को मार गिराया तो अन्य वीर मन में भयभीत हो उठे । पुनः राजा ने खड्ग सँभाला तो सभी लोग उसके युद्ध-कौशल पर चकित हो निस्तेज हो उठे ॥ १६७३ ॥ तब कृष्ण और ब्रह्मा ने आपस में विचार किया और कहा कि यह राजा तो अग्नि से जलाने पर भी मरेगा नहीं । इसलिए अब कुछ प्रयत्न कर इसको मार डालना चाहिए ॥ १६७४ ॥ ब्रह्मा ने कहा कि जब यह (अप्सराओं पर) मोहित होकर अपने बल को क्षीण कर देगा और इस प्रकार जब हम इसे गिरा हुआ देख लेंगे तब इसे यमलोक पहुँचा दिया जायेगा ॥ १६७५ ॥ ॥ चौपाई ॥ इसलिए अप्सराओं को आज्ञा दीजिए कि वे वही कार्य करें जिससे राजा प्रसन्न होता हो । राजा जब यह दृश्य देखकर द्रवित हो जाएगा तो उसका बल घट जाएगा ॥ १६७६ ॥ ॥ दोहा ॥ ब्रह्मा ने जब यह कहा तो इन्द्र ने भी सब सुना । ब्रह्मा ने आकाश की ओर देखकर इन्द्र से कहा कि हे देवराज ! नृत्य का प्रबंध करो ॥ १६७७ ॥

सवैया उधर अप्सराएँ नृत्य करने लगी इधर शूरवीरो ने युद्ध प्रारम्भ कर

गंध्रब गावत है उत मारू बजै रन मंगल गायो। कउतक देखि बडै तिन को इह भूपति को मन तउ बिरमायो। कान्ह अचान लयो धन तान सु बान महाँ न्रिप को तन लायो ॥ १६७८ ॥ ॥ सवैया ॥ लागत ही सर मोहित भ्यो तेऊ बीरन सो बरबीर सँघारो। ग्यारह रुद्रनि के अगनंगन मार लए हरि लोक सिधारे। द्वादस भान जलाधिप अउ ससि इंद्र कुबेर के अंग प्रहारे। अउर जिते भट ठाढे रहे कबि स्याम (मू०ग्रं०४६८) कहै बिपते करि डारे ॥ १६७९ ॥ सक्र को साठ लगावत भ्यो सर द्वै सति कान के गात लगाए। चउसठि बान हने जम को रबि द्वादस द्वादस के सँग घाए। सोम को सउ सति रुद्र को चार लगावत भ्यो कबि स्याम सुनाए। स्रोन भरे सभ के पट मानहु चाचर खेल अबै भट आए ॥१६८०॥ ॥ चौपई ॥ अउर सुभट बहुते तिह मारे। जूझ परे जमधाम सिधारे। तब न्रिप पै ब्रहमा चलि आयो। स्याम भनै यह बैन सुनायो ॥ १६८१ ॥ कह्यो सु किउ इन कउ रन मारै। व्रिथा कोप कै किउ सर डारै। ताते इहै काज अब कीजै। देह सहित नभि मारग लीजै ॥ १६८२ ॥ जुद्ध कथा नही रिदै चितारो। अपनो

दिया। किन्नर, गंधर्व गाने लगे और उधर रण-वाद्य बजने लगे। यह लीला देखकर राजा का मन विचलित हो उठा और तभी अचानक कृष्ण ने धनुष तानकर राजा के शरीर में बाण मारा ॥ १६७८ ॥ ॥ सवैया ॥ बाण लगते ही राजा मुग्धावस्था में आ गया, फिर भी उसने वीरों का संहार कर दिया। उसने ग्यारह रुद्रों के अगणित गणों को मार कर परलोक भेज दिया, बारहों सूर्य, वरुण, चन्द्र, इन्द्र, कुबेर आदि पर प्रहार किया तथा कवि श्याम का कथन है कि जितने अन्य वीर वहाँ खड़े थे उन सबको सम्मान-विहीन कर दिया ॥ १६७९ ॥ इन्द्र को उसने साठ बाण, कृष्ण को दो सौ बाण, यम को चौंसठ बाण और बारह सूर्यों को बारह बाण मारकर घायल कर दिया। चन्द्रमा को सौ और रुद्र को चार बाण मारे। इन सब शूरवीरों के वस्त्र रक्त से भीगे हुए ऐसे लग रहे थे मानो ये सभी वीर होली खेलकर आए हों ॥ १६८० ॥ ॥ चौपाई ॥ अन्य बहुत से वीरों को वहाँ मार डाला गया और वे यमलोक जा पहुँचे। तब राजा के पास ब्रह्मा आ पहुँचा और उसने राजा से यह कहा ॥ १६८१ ॥ तुम क्यों इनको युद्ध में मार रहे हो और व्यर्थ ही क्रोधित होकर बाण चला रहे हो। अब तुम एक काम करो कि सदेह स्वर्ग चले जाओ ॥ १६८२ ॥ युद्ध की बात अब मत सोचो और अपने

अगलो काज सवारो । ता ते अबि बिलंब नही कीजै । मेरो कह्यो मान कै लीजै ॥ १६८३ ॥ ॥ सवैया ॥ इंद्र के धाम चलो बलवान सुजान सुनो अब ढील न कीजै । देवबधू जोऊ चाहत है तिह को मिलिऐ मिलकै सुख लीजै । तेरो मनोरथ पूरन होत है नाम कह्यो त्रिप अंम्रित पीजै । राजन राज समाज तजो इन बीरन को न ब्रिथा दुखु दीजै ॥ १६८४ ॥ ॥ दोहरा ॥ यों सुनि बतिया ब्रहम की भूप सत्र दुख दैन । अति चित हरख बढाइकै बोल्यो बिधि सो बैन ॥ १६८५ ॥ ॥ चौपई ॥ यों ब्रहमा सो बैन सुनायो । तो सिउ कहो जु मन मै आयो । मोसो बीर शस्त्र जब धरै । कहो बिशन बिन का सो लरै ॥ १६८६ ॥ ॥ दोहरा ॥ तुम सभ जानत बिश्व कर खड़गसिंघ मोहि नाउ । लाज आपने नाउ की कहो कहा भज जाउ ॥ १६८७ ॥ ॥ सवैया ॥ चतुरानन मो बतिया सुनि लै चित दै दुह स्त्रउनन मै धरियै । उपमा को जबै उमगै मन तउ उपमा भगवान ही की करियै । परियै नही आनके पाइन पै हरि के गुर के दिज के परियै । जिह को जुग चार मै नाउ जपै तिह सो लरियै मरियै तरियै ॥ १६८८ ॥ जा

भविष्य को सँवार लो। तुम अब विलम्ब मत करो और मेरा कहना मान लो ॥ १६८३ ॥ ॥ सवैया ॥ हे महाबली ! तुम अब अविलम्ब इन्द्रलोक में चले जाओ और इच्छित देवस्त्रियों से मिलकर सुख का उपभोग करो। हे राजन् ! तुम्हारा मनोरथ पूरा हो गया हैं और अब तुम प्रभु-नाम के अमृत का पान करो। तुम अब इन राजाओं का साथ छोड़ो और इन वीरों को व्यर्थ ही दुःख मत दो ॥ १६८४ ॥ ॥ दोहा ॥ ब्रह्मा की यह बात सुनकर शत्रुओं के दुःखकारक उस राजा ने मन में अत्यन्त प्रसन्न होकर ब्रह्मा से कहा ॥ १६८५ ॥ ॥ चौपाई ॥ हे ब्रह्मा ! मैं अपने मन की बात तुमसे कहता हूँ। मेरे जैसा वीर जब शस्त्र धारण करेगा तो वह भला विष्णु के अतिरिक्त और किससे लड़ेगा ॥ १६८६ ॥ ॥ दोहा ॥ हे सृष्टि की रचना करनेवाले ! तुम जानते हो कि मेरा नाम खड्गसिंह है। मुझे अपने नाम की लाज निभाना है। अतः तुम्हीं बताओ, मैं कहाँ भाग जाऊँ ? ॥ १६८७ ॥ ॥ सवैया ॥ हे ब्रह्मा ! मेरी बात सुनो और उसे कानों से सुनकर चित्त में धारण करो। जब प्रशंसा करने का मन हो तो केवल भगवान की ही प्रशंसा करनी चाहिए। ईश्वर, गुरु और ब्राह्मण के अतिरिक्त किसी और के चरण नही पूजना चाहिए तथा चारों युगों में जिसकी भक्ति की जाती हो उस परमात्मा

सनकादिक शेश ते आदिक खोजत है कछु अंत न पायो । चउदह लोकन बीच सदा सुक ब्यास महाकबि स्याम सु गायो । जाही के नाम प्रताप हू ते ध्रुअ सो प्रहलाद अछै पद पायो । सो अब मो संग जुद्ध करै जिह स्रीधर स्री हरि नाम कहायो (मू०ग्रं०४६६) ॥ १६८९ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ चतुरानन ए बचन सुनत चक्रत भयो । बिशन भगत को तबै भूप चित मै लयो । साध साध करि बोल्यो बदन निहारकै । हो मोन रह्यो गहि कमलज प्रेम बिचारकै ॥ १६९० ॥ बहुरि बिधाता भूपति को इह बिध कह्यो । भगति ग्यान को तत्तु भली बिधि तै लह्यो । ताँ ते अब तन साथहि सुरग सिधारियै । हो मुकति ओर करि द्रिश्टि न जुद्ध निहारियै ॥ १६९१ ॥ ॥ दोहरा ॥ कह्यो न मानै भूप जब तब ब्रहमे कह कौन । नारद को सिमरनि किओ मुनि आयो परबीन ॥ १६९२ ॥ ॥ सवैया ॥ तब ही मुन नारद आइ गयो तिह भूपति को इक बैन सुनायो । चउदह लोकन बीच कह्यो प्रभ तो सम राज न कोऊ बनायो । ताही ते बीरन की मन तै सु भलो कियो स्याम सों जुद्ध मचायो । स्याम कहै मुन की बतिया सुनि भूप घनो मन मै सुखु पायो ॥ १६९३ ॥ ॥ दोहरा ॥ अभिनंदनि भूपति

से ही लड़ना, मरना और भवसागर को पार करना चाहिए ॥ १६८८ ॥ जिसको सनकादिक, शेष आदि खोजते हैं और फिर भी उसका रहस्य नहीं जान पाते, चौदह लोकों में सदैव शुक, व्यास आदि जिसका गायन करते हैं तथा जिसके नाम के प्रताप से ध्रुव और प्रह्लाद ने अक्षय पद प्राप्त किया है, वही श्रीपति भगवान मुझसे युद्ध करें ॥ १६८९ ॥ ॥ अड़िल ॥ ब्रह्मा यह सुनकर चकित हो उठा और इधर राजा ने मन विष्णु की भक्ति में लगा दिया । ब्रह्मा राजा का मुख देखकर साधु-साधु कह उठा और उसके प्रेम को देखकर चुप हो गया ॥ १६९० ॥ पुनः ब्रह्मा ने राजा से यह कहा कि हे राजन् ! तुमने भक्ति के तत्त्व को भली-भाँति समझा है । इसलिए तुम सदेह स्वर्ग सिधारो और मुक्त होकर अब युद्ध की तरफ़ देखो भी मत ॥ १६९१ ॥ ॥ दोहा ॥ जब राजा ने ब्रह्मा का कहना नहीं माना तो ब्रह्मा द्वारा नारद का स्मरण किए जाने पर नारद वहाँ आ पहुँचे ॥१६९२॥ ॥ सवैया ॥ नारद ने आकर राजा से कहा कि हे राजन् ! चौदह भुवनों में तुम्हारे जैसा कोई राजा नहीं है, ऐसा प्रभु ने कहा है । इसीलिए तुमने वीरों के समान कृष्ण से घनघोर युद्ध किया है । मुनि की बातें सुनकर राजा मन में अत्यन्त आनंदित

कियो नारद को पहिचान। मुनपति इह उपदेश दिअ जुद्ध करो बलवान ॥ १६९४ ॥ ॥ दोहरा ॥ इत भूपति नारद मिले प्रेमु भगत की खान। उत महेश चलि तह गए जह ठाँढे भगवान ॥ १६९५ ॥ ॥ चौपई ॥ इते रुद्र मन मंत्र बिचार्‌यो। स्री जदुपति के निकटि उचार्‌यो। अब ही म्रितहि आइसु दीजै। तब इह भूप मारिकै लीजै ॥१६९६॥ ॥ दोहरा ॥ सर अपनै मै म्रितु धरि इह तुम करहु उपाइ। अब कसि कै धनु छाडिए भूले बडि अनिआइ ॥ १६९७ ॥ ॥ चौपई ॥ सोई काम स्याम जू कीनो। जिह बिध सों शिवजू कहि दीनो। तब चितवन हरि म्रित को कियो। मीच आइकै दरशनु दियो ॥ १६९८ ॥ ॥ दोहरा ॥ कह्यो म्रित को क्रिशन जू मो सर मै कर बासु। अब छाडत हों शत्र पै जाइ करहु तिह नासु ॥ १६९९ ॥ ॥ सवैया ॥ देवबधून कै नैन कटाछ बिलोकत ही न्रिप चित्त लुभायो। नारद ब्रहम दुहू मिलि कै रन मै संग बातन के उरझायो। स्याम तबै लखि घात भली अरि मारन को म्रित बान चलायो। मंत्रनि के बल सों छल सों तब भूपति को सिर काट गिरायो ॥ १७०० ॥

हुआ ॥ १६९३ ॥ ॥ दोहा ॥ नारद को पहचान कर राजा ने मुनि का अभिनंदन किया। तब नारद ने राजा को युद्ध करने का उपदेश दिया ॥ १६९४ ॥ ॥ दोहा ॥ इधर भक्ति की खान राजा और नारद आपस में मिले और उधर शिव वहाँ पहुँचे जहाँ भगवान कृष्ण स्थित थे ॥ १६९५ ॥ ॥ चौपाई ॥ रुद्र ने मन में विचार कर श्रीकृष्ण से कहा कि आप अभी मृत्यु को आज्ञा दीजिए और तब इस राजा को मार लीजिए ॥ १६९६ ॥ ॥ दोहा ॥ अपने बाण में मृत्यु धारण करने का उपाय कीजिए और कसकर धनुष को छोड़िए ताकि यह राजा सब अन्याय भूल जाए ॥ १६९७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिस प्रकार शिव ने कहा था श्रीकृष्ण ने वैसा ही किया। श्रीकृष्ण ने मृत्यु का स्मरण किया तथा मृत्यु का देवता साक्षात् प्रस्तुत हो गया ॥ १६९८ ॥ ॥ दोहा ॥ मृत्यु से श्रीकृष्ण ने कहा कि मेरे बाण में निवास करो और मेरे छोड़ने पर शत्रु का विनाश कर दो ॥१६९९॥ ॥ सवैया ॥ देव-अप्सराओं के नयन-कटाक्षों को देखते ही राजा मोहित हो उठा। इधर नारद और ब्रह्मा दोनों ने मिलकर राजा को बातों में उलझा लिया। तभी एक अच्छा अवसर देखकर शत्रु को मारने के लिए श्रीकृष्ण ने मृत्युबाण चलाया और मंत्रों के बल से छलपूर्वक राजा का सिर काट गिराया ॥ १७०० ॥

॥ सवैया ॥ जदिपि सीस कट्यो न हट्यो (मू०ग्रं०४७०) गहि केसनि ते हरि ओर चलायो। मानहु प्रान चल्यो दिब आनन काज बिदा ब्रिजराज पै आयो। सो सिर लाग गयो हरि के उर मूरछ ह्वै पगु ना ठहरायो। देखहु पउरख भूप के मुंड को स्यंदन ते प्रभ भूम गिरायो ॥ १७०१ ॥ ॥ सवैया ॥ भूपति जैसो सु पौरख कीनो है तैसो करी न किसी करनी। लखि जच्छनि किंन्रनी रीझ रही नभि मै सभ देवन की धरनी। म्रिद बाजत बीन म्रिदंग उपंग मुचंग लिए उतरी धरनी। सभ नाचत गावत रीझ रिझावत यौ उपमा कबि ने बरनी ॥१७०२॥ ॥ दोहरा ॥ नभ ते उतरी सुंदरी सकल लिए सुर साज। कवन हेत कबि स्याम कहि भूपत बरबे काज ॥ १७०३ ॥ ॥ सवैया ॥ मुंड बिना तब रुंड सु भूपति को चित मै अति कोप बढायो। द्वादस भान जु ठाढे हुते कबि स्याम कहै तिह ऊपर धायो। भाज गए कर त्रास सोऊ शिव ठाढो रह्यो तिह ऊपरि आयो। सो न्रिप बीर महा रनधीर चटाक चपेट दै भूम गिरायो ॥ १७०४ ॥ ॥ सवैया ॥ एकन मार चपेटन सिउ अरु एकन को धमकार गिरावै। चीरकै एकनि डार दए

॥ सवैया ॥ यद्यपि राजा का सिर कट गया परन्तु वह फिर भी अटल रहा और उसने केशों से सिर पकड़कर श्रीकृष्ण की ओर फेंका। यह ऐसा लगा कि मानो उसके प्राण विदाई लेने के लिए श्रीकृष्ण के पास पहुँचे हो। वह सिर श्रीकृष्ण को लगा और वे खड़े न रह सके; मूच्छित होकर गिर पड़े। राजा के सिर का पौरुष देखो, उसके लगते ही प्रभु रथ से भूमि पर आ गिरे ॥१७०१॥ ॥ सवैया ॥ राजा खड्गसिंह ने अभूतपूर्व पौरुष दिखाया जिसे देखकर यक्षिणियाँ किन्नरस्त्रियाँ और देवताओं की स्त्रियाँ मोहित हो रही हैं। वे वीणा, मृदंग आदि वाद्य बजाती हुई धरती पर उतर पड़ीं और सभी नाच-गाकर प्रसन्न हो रही हैं और प्रसन्न कर रही हैं ॥ १७०२ ॥ ॥ दोहा ॥ आकाश से सुंदरियाँ सजधज कर उतरीं और कवि का कथन है कि उनके आने का उद्देश्य राजा का वरण करना है ॥ १७०३ ॥ ॥ सवैया ॥ सिर-विहीन राजा ने चित्त में अत्यन्त क्रोध किया और वह वहाँ बारह सूर्यों की तरफ़ बढ़ा। वे सभी वहाँ से भाग गए परन्तु शिव वहाँ खड़े रहे और उस पर टूट पड़े। परन्तु उस महाबली ने अपने प्रहार से शिव को भूमि पर गिरा दिया ॥ १७०४ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई उसके प्रहार से और कोई उसकी धमक से गिरने लगा। किसी को उसने चीर कर फेंक दिया और किसी को आकाश की ओर चला

गहि एकन को नभि ओर चलावै । बाज सिउ बाजन लै रथ सिउ रथ अउ गज सिउ गजराज बजावै स्याम भनै रन या बिधि भूपति शत्रनि को जमधाम पठावै ॥ १७०५ ॥ ॥ सवैया ॥ ह्वैकै सुचेत चढ्यो रथ स्याम महा मन भीतर कोप बढ्यो है । आपन पउरख सोउ सँभारकै म्यानहु ते करवार कढ्यो है । धाइ परे रिस खाइ घनी अरि राइ मनो निधि नीर हढ्यो है । तान कमाननि मारत बानन सूरन के चित चउप चढ्यो है ॥ १७०६ ॥ ॥ सवैया ॥ बीरन घाइ करे जब ही तब पउरख भूप कबंध समार्‌यो । शस्त्र सँभार तबै अपुने इन नासु करो चित बीच बिचार्‌यो । धाइ पर्‌यो रिसि सिउ रन मै अरि भाजि गए जसु राम उचार्‌यो । तारन के मनो मंडल भीतर सूर चढ्यो अंधिआरि सिधार्‌यो ॥ १७०७ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर ते आदिक बीर गए भजिकै न कोऊ ठहरान्यो । आहव भूमि मै भूपति को सभ सूरन मानहु काल पछान्यो । भूप कमान ते बान चले (मू०ग्रं०४७१) मनो अंति प्रलै घन सिउ बरखान्यो । इउ लखि भाजि गए सिगरे किनहूँ न्रिप के संग जुद्धु न ठान्यो ॥ १७०८ ॥ ॥ सवैया ॥ सभ ही भट भाजि गए जब ही प्रभ को तब भूप भयो अनरागी । जूझ

फेंका। घोड़ों से घोड़े, रथों से रथ और हाथियों से हाथी बजाने लगा। इस प्रकार कवि के कथनानुसार राजा शत्रु को यमलोक पहुँचाने लगा ॥१७०५॥ ॥ सवैया ॥ चेतनावस्था में लौटने पर श्रीकृष्ण क्रोधित हो रथ पर चढ़े और अपने पौरुष का स्मरण कर उन्होंने म्यान से तलवार निकाल ली। क्रोधित होकर वे समुद्र की भाँति भयानक शत्रु पर टूट पड़े। शूरवीर भी धनुष खींच-खींचकर उत्साहित होकर बाण मारने लगे ॥ १७०६ ॥ ॥ सवैया ॥ जब वीरों ने घाव लगाए तो राजा के कबंध ने भी अपना पौरुष सँभाला और शस्त्र सँभालते हुए शत्रु के नाश करने का विचार चित्त में किया। राजा ऐसा लग रहा था मानो तारागणों में चन्द्र शोभायमान हो तथा चन्द्र के आते ही अंधकार भाग खड़ा हुआ हो ॥ १७०७ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण जैसे वीर भाग खड़े हुए और कोई भी वहाँ नहीं ठहरा। युद्धस्थल में सभी वीरों को राजा काल के समान दिखाई दे रहा था। राजा के धनुष से चलनेवाले बाण प्रलयकाल के मेघों के समान बरस रहे थे। यह सब देखकर सभी भाग खड़े हुए और किसी ने राजा के साथ युद्ध नहीं किया ॥१७०८॥ ॥ सवैया ॥ जब सभी शूरवीर भाग गए तो राजा ने प्रभु का स्मरण किया और युद्ध छोडकर

तबै तिन छाडि दयो हरि ध्यानु की तारि समाधि सी लागी। राजन राज समाज बिखै कबि स्याम कहै हरि मै मत पागी। धीर गह्यो धर ठाढो रह्यो कहो भूपति ते अब को बडभागी ॥ १७०९ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर को बीर सभो धर डारनि को जब घात बनायो। स्याम भनै मिलि कै फिरि कै इह पै पुनि बाननि ओघ चलायो। देवबधू मिलिकै सभहू इह भूप कबंध बिवान चढायो। कूद पर्‍यो न बिवान चढ्यो पुनि शस्त्र लिए रन भू मधि आयो ॥ १७१० ॥ ॥ दोहरा ॥ धनुख बान लै पान मै आन पर्‍यो रन बीच। सूरबीर बहु बिध हनै ललकार्‍यो तब मीच ॥ १७११ ॥ ॥ चौपई ॥ अंतक जम जब लैने आवै। लखि तिह को तब बान चलावै। ब्रित पेख कै इत उत टरै। मार्‍यो कालहु को नही मरै ॥ १७१२ ॥ ॥ चौपई ॥ पुनि शत्रनि दिसि रिसि करि धायो। मानहु जम मूरति धर आयो। इउ सु जुद्ध बैरन संगि कर्‍यो। हरि हरि बिध सुभटनि मनु जर्‍यो ॥१७१३॥ ॥ सवैया ॥ हारि परै मन हार करै इहै इउ न्रिप जुद्ध क्रिथा न करइयै। डारवै हाथन ते हथिआरन कोप तजो सुख सांति

परमात्मा में ध्यान जोड़ दिया। उस राजाओं के समाज में राजा (खड्गसिंह) का मन परमात्मा में लगा हुआ है। वह स्थिर होकर धरती पर खड़ा है। उसके समान अन्य कौन भाग्यशाली है ? ॥ १७०९ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण के वीरों ने राजा को भूमि पर गिराने का विचार किया तो साथ ही साथ उन्होंने पुनः बाणों के झुंड राजा पर चलाए। सभी देव-स्त्रियों ने मिलकर राजा के कबंध को विमान पर चढ़ाया परन्तु वह फिर भी विमान से कूद पड़ा और शस्त्र लेकर युद्धभूमि में आ पहुँचा ॥ १७१० ॥ ॥ दोहा ॥ धनुष-बाण हाथ में लेकर वह युद्धभूमि में आ पहुँचा और बहुत से शूरवीरों को मारकर मृत्यु को ललकारने लगा ॥ १७११ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब यम उसे लेने के लिए आते थे तब वह यम को देखकर बाण चलाने लगता था। मृत्यु को अनुभव कर इधर-उधर हटने लगा परन्तु काल के द्वारा मारे जाने पर भी नहीं मर रहा था ॥ १७१२ ॥ ॥ चौपाई ॥ पुनः वह क्रोधित होकर शत्रु की दिशा में टूट पड़ा और ऐसा लग रहा था मानो साक्षात यम चला आ रहा हो। वह इस प्रकार शत्रुओं से युद्ध करने लगा कि श्रीकृष्ण और शिव मन-ही-मन क्षुब्ध हो उठे ॥१७१३॥ ॥ सवैया ॥ हारकर वे राजा को मनाने लगे कि हे राजन्! अब व्यर्थ ही युद्ध मत करो। तुम्हारे समान कोई शूरवीर तीनों लोकों में

समइयैं। सूर न कोऊ भयो तुमरे सम तेरो प्रताप तिहू पुर गइयैं। छाडति है हम शस्त्र सभै सु बिवान चड़ो सुरधाम सिधइयैं ॥ १७१४ ॥ ॥ अड़िल्ल ॥ सभ देवन अरु क्रिशन दीन ह्वै जब कह्यो। हटो जुद्ध ते भूप ह्मो मुख तिन गह्यो। न्रिप सुनि आतुर बैन सु कोपु निवार्यो। हो धनुख बान दिओ डार राम मनु धार्यो ॥ १७१५ ॥ ॥ दोहरा ॥ किन्नर जच्छ अपच्छरनि लयो बिवान चढाइ। जैजैकार अपार सुन हरखे मुनि सुरराइ ॥ १७१६ ॥ ॥ सवैया ॥ भूप गयो सुरलोक जबै तब सूर प्रसंनि भए सबही। इह भाँति कहै रन मै सिगरे मुखि काल के जाइ बचै अबही। ससि भान धनाधिप रुद्र बिरंच सभै हरि तीर गए जबही। हरखे बरखे नभ ते सुर फूल सु जीत (मू०ग्रं०४७२) की बंब बजी तब ही ॥ १७१७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंध खड़गसिंघ बधहि धिआइ समापतम ॥

नहीं है और तुम्हारा यश तीनों लोकों में फैला है। तुम शस्त्रों को छोड़कर सुखशांति-पूर्वक महाप्रयाण करो। हम भी शस्त्रों का त्याग करते हैं, आप विमान पर बैठकर स्वर्ग जाइए ॥ १७१४ ॥ ॥ अड़िल ॥ सब देवताओं और कृष्ण ने जब दीनतापूर्वक यह कहा और मुँह में घास के तिनके लेकर युद्धभूमि से हट गए तो उनके आकुलतापूर्ण वचन सुनकर राजा ने भी क्रोध का त्याग कर दिया तथा धनुष-बाण धरती पर डाल दिया ॥ १७१५ ॥ ॥ दोहा ॥ किन्नर, यक्ष और अप्सराओं ने उसे विमान पर चढ़ा लिया तथा उसकी जय-जयकार की ध्वनि सुनकर देवराज इन्द्र भी प्रसन्न हो उठे ॥१७१६॥ ॥ सवैया ॥ राजा के सुरलोक पहुँच जाने पर सभी शूरवीर प्रसन्न हुए और कहने लगे कि हम सब काल के मुँह से बच गए हैं। चन्द्र, सूर्य, कुबेर, रुद्र, ब्रह्मा आदि सभी जब प्रभु के पास जा पहुँचे तो देवों ने आकाश से पुष्पवर्षा की और विजयनाद किया ॥ १७१७ ॥

॥ इति श्री बचित्र नाटक के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबंध में खड्गसिंह-वध अध्याय समाप्त ॥

अथ न्रिप जरासिंध को पकरकर छोरबो कथनं ॥

॥ सवैया ॥ तउ ही लउ कोप किओ मुसली अरि बीर तबै संग तीर प्रहारे । ऐंच लिए इक बार ही बैरन प्रान बिना कर भू पर डारे । एक बली गहि हाथन सो छित पै कर कोप फिराइ पछारे । जीवत जोऊ बचे बल ते रन त्याग सोऊ न्रिप तीर सिधारे ॥ १७१८ ॥ ॥ चौपई ॥ जरासिंध पै जाइ पुकारे । खड़गसिंघ रन भीतर मारे । इउ सुनिकै तिन के मुख बैना । रिसि के संग अरुन भए नैना ॥ १७१९ ॥ अपुने मंत्री सभै बुलाए । तिन प्रति भूपति बचन सुनाए । खड़गसिंघ जूझे रन माही । अउर सुभट को तिह सम नाही ॥ १७२० ॥ खड़गसिंघ सो सूरो नाही । तिह सम जाइ लरै रन माही । अब तुम कहो कउन बिधि कीजै । कउन सुभट को आइस दीजै ॥ १७२१ ॥ ॥ जरासिंध न्रिप सो मंत्री बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ तब बोल्यो मंत्री सुमत जरासिंध के तीर । साँझ परी हैं अब न्रिपत कउन लरे रनबीर ॥ १७२२ ॥ उत राजा चुप होइ रह्यो मंत्रि कही जब गाथ । इत मुसलीधर

राजा जरासंध को पकड़कर छोड़ना

॥ सवैया ॥ तब तक क्रोधित होकर बलराम ने बाणों के प्रहार से शत्रुओं को मारा और धनुष खींचकर शत्रुओं को प्राण-विहीन कर धरती पर फेंक दिया । कुछ महाबलियों को क्रोधित होकर हाथ से पकड़कर धरती पर पछाड़ दिया और इन सब में से जो बलपूर्वक बच गए वे युद्ध त्यागकर राजा जरासंध के पास जा पहुँचे ॥ १७१८ ॥ ॥ चौपाई ॥ जरासंध के पास जाकर उन्होंने कहा कि खड्गसिंह को युद्ध में मार डाला गया । उनकी यह बातें सुनकर जरासंध की आँखें क्रोध से लाल हो उठीं ॥ १७१९ ॥ उसने अपने सभी मंत्रियों को बुलाया और कहा कि खड्गसिंह रण में मारा जा चुका है और उसके समान अन्य शूरवीर कोई नहीं है ॥ १७२० ॥ खड्गसिंह के समान अन्य कोई शूरवीर नहीं है जो उसकी तरह युद्ध कर सके, अब तुम्हीं लोग बताओ की क्या किया जाए और किस वीर को आज्ञा दी जाए ? ॥ १७२१ ॥ ॥ मंत्री उवाच जरासंध के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ अब सुमति नामक मंत्री जरासंध से बोला कि अब संध्या का समय हो गया है, इस समय कौन युद्ध करेगा ॥ १७२२ ॥ उधर मंत्री के कहने पर राजा चुप होकर बैठ गया और

तह गयो जहा हुते ब्रिजनाथ ॥ १७२३ ॥ ॥ मुसली बाच कान्ह सो ॥ ॥ दोहरा ॥ क्रिपासिंध इह कउन सुत खड़गसिंघ जिह नाम । ऐसो अपुनी बंस मै नहि देख्यो बलधाम ॥१७२४॥ ॥ चौपई ॥ ता ते या की कथा प्रकासो । मेरे मन को भरमु बिनासो । ऐसी बिध सौ बल जब कह्यो । सुनि स्री क्रिशनि मोन ह्वै रह्यो ॥१७२५॥ ॥ कान्ह बाच ॥ ॥ सोरठा ॥ पुनि बोल्यो ब्रिजनाथ क्रिपावंत ह्वै बंध सिउ । सुनि बल याकी गाथ जनम कथा भूपत कहो ॥ १७२६ ॥ ॥ दोहरा ॥ खटमुख रमा गनेश पुनि सिङी रिख घनस्याम । आद बरन बिधि पंच लै धर्यो खड़गसिंघ नाम ॥ १७२७ ॥ ॥ दोहरा ॥ खरग रमय तन गरमिता सिंघनाद घमसान । पंच बरन को गुन लिओ इह भूपत बलवान ॥ १७२८ ॥ ॥ छपै ॥ खरग शकति शिव तात दई तिह हेत जीत अति । बहु सुंदरता रमा दई तिन बिमल अमल (मू०ग्रं०४७३) मति । गरमा सिद्ध गनेश सिंग रिख सिंघनाद दिय । करत अधिक घमसान इहै घनस्याम हेत किय । इह बिध प्रकाश भूपत कियो सुन हलधर इम मै कह्यो । ब्रिजनाथ अनाथ सनाथ तुम बडो शत्र रन मधि

इधर बलराम वहाँ पहुँचे जहाँ श्रीकृष्ण बैठे थे ॥ १७२३ ॥ ॥ बलराम उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ हे कृपासिंधु ! यह खड्गसिंह नामक राजा कौन था । मैंने अभी तक इतना बलशाली वीर नहीं देखा ॥ १७२४ ॥ ॥ चौपाई ॥ इसलिए इसकी कथा कहकर मेरे मन के भ्रम को दूर करो। जब बलराम ने यह कहा तो इसे सुनकर श्रीकृष्ण मौन होकर रह गए ॥१७२५॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सोरठा ॥ पुनः श्रीकृष्ण कृपापूर्वक अपने भाई से बोले कि हे बलराम ! अब मैं राजा के जन्म की कथा कहता हूँ, इसे सुनो ॥ १७२६ ॥ ॥ दोहा ॥ कार्तिकेय (खट्मुख), रमा, गणेश, सिंगी (शृंगी) तथा घनश्याम अक्षरों के प्रारंभ के वर्णों को लेकर इसका नाम खड्गसिंह रखा गया ॥ १७२७ ॥ ॥ दोहा ॥ तलवार की शक्ति रमा की रमणीयता, कुंजर शरीर, गौरव और युद्ध में सिंहनाद पाँच वर्णों के ये गुण उस बलवान राजा ने धारण किए ॥ १७२८ ॥ ॥ छप्पय ॥ युद्ध में जीतने के लिए तलवार शिव ने दी, शरीर का सौंदर्य तथा विमल बुद्धि लक्ष्मी ने दी। गणेश ने इसे गरिमा सिद्धि और शृंगीऋषि ने इसे सिंहनाद दिया। घनश्याम ने इसे घमासान युद्ध करने की ताक़त दी। हे बलराम ! जैसा मैंने बताया है, इसी तरह इस राजा का जन्म हुआ। तब बलराम ने कहा कि हे श्रीकृष्ण ! तुम्हीं हम अनाथ

हयो ॥ १७२९ ॥ ॥ सोरठा ॥ पुनि बोल्यो ब्रिज चंद संकर-खन सो क्रिपा कर । जादव इक मतिमंद गरब करै बहु भुजा को ॥ १७३० ॥ ॥ चौपई ॥ जादव बंस मान भ्यो भारी । राम स्याम हमरे रखवारी । डीठ आन को आनत नाही । ताको फल पायो जग माही ॥ १७३१ ॥ गरब प्रहारी स्रीधरि जानो । मेरो कह्यो साचु कर मानो । तिह के हेत भूप अवतरयो । इह बिध जान बिधाता करयो ॥ १७३२ ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा रंक भूपाल ए कर्यो इतो संग्राम । जादव गरब बिनास हित उपजायो स्रीराम ॥ १७३३ ॥ ॥ चौपई ॥ जादव कुल ते गरब न गयो । इन के नास हेत रिख भयो । दुख कै स्राप मुनीश्वर दैहै । एक समै सभ ही को छैहै ॥ १७३४ ॥ ॥ दोहरा ॥ पुनि बोल्यो स्रीक्रिशन जी पंकज नैन बिसाल । हे मुसलीधर बुद्ध बर सुन अब कथा रिसाल ॥ १७३५ ॥ ॥ चौपई ॥ सुनि दै स्रउन बात कहो तोसो । कवन जुद्ध करि जीतै मोसो । खड़गसिंघ मो अंतर नाही । मुहि सरूप बरतत जग माही ॥ १७३६ ॥

के नाथ हो और तुमने युद्ध में आज बहुत बड़े शत्रु का नाश किया है ॥१७२९॥ ॥ सोरठा ॥ फिर श्रीकृष्ण ने बलराम से कृपापूर्वक कहा कि यादवगण मतिमंद हैं और इनको अपनी भुजाओं पर बहुत बल हो गया है ॥ १७३० ॥ ॥ चौपाई ॥ यादवों को यह गर्व हो गया था कि बलराम और कृष्ण हमारी रक्षा करनेवाले हैं। इस कारण ये किसी को कुछ समझते ही नहीं थे। अब उसी का फल इन्हें प्राप्त हुआ है ॥१७३१॥ परमात्मा गर्व का नाश करनेवाले हैं, तुम मेरे इस कहने को सत्य मानो। इस गर्व का नाश करने के लिए ही विधाता ने इस राजा का अवतार करवाया था ॥ १७३२ ॥ ॥ दोहा ॥ इस बेचारे राजा ने इतना युद्ध किया। इसे प्रभु ने यादवों के गर्व का नाश करने के लिए ही उत्पन्न किया था ॥ १७३३ ॥ ॥ चौपाई ॥ यादव कुल के गर्व का नाश हुआ नहीं और इनके नाश के लिए भी एक ऋषि पैदा हो गया है जो दुःखी होकर इन्हें श्राप देगा और एक ही बार में सबका नाश कर देगा ॥ १७३४ ॥ ॥ दोहा ॥ पुनः कमलनयन श्रीकृष्ण ने कहा कि हे बुद्धिवर बलराम ! अब तुम रोचक कथा सुनो ॥ १७३५ ॥ ॥ चौपाई ॥ मेरी बात को ध्यान से सुनो और समझो की युद्ध में मुझसे कौन जीता है। मुझमें और खड़गसिंह में कोई अन्तर नहीं है और मेरा ही स्वरूप सारे संसार में व्याप्त है ॥ १७३६ ॥ हे बलराम मैं सच कह रहा हूँ परन्तु इस भेद को कोई नहीं

साच कह्यो है हे बलदेवा। पायो नहिन किसू इह भेवा। सूरन मै कोऊ इह सम नाही। मेरो नाम बसै रिद माही॥ १७३७॥ ॥ दोहरा॥ उदर माझ बसि मास दस तजि भोजन जलपान। पवन अहारी हुइ रह्यो बरु दीनो भगवान॥ १७३८॥ ॥ दोहरा॥ रिप जीतन को बरु लियो खड़गसिंघ बलवान। बहुरि तपस्या बन करी द्वादस बरख प्रमान॥ १७३९॥ ॥ चौपई॥ बीती कथा भयो तब भोर। जागे सुभट दुहू दिस ओर। जरासिंध दलु सजि रन आयो। जादव दलु बल लै समुहायो॥ १७४०॥ ॥ सवैया॥ स्री बलदेव सभै दलु लै इत ते उमड्यो उत ते उइ आए। जुध्ध कियो हल लै निज पान हकार हकार प्रहार लगाए। एक परे भट जूझ धरा पर एक लरै मिलकै इक धाए। मूसल लै बहुरो (मू०ग्रं०४७४) कर मै अरि मार घने जमधाम पठाए॥१७४१॥ ॥ सवैया॥ रोस भयो घनिस्याम लयो धनु बान सँभार तही उठ धायो। आन पर्यो तब ही तिन पै रिप कउ हति कै नद स्रोन बहायो। बाज करी रथपत्ति बिपत्ति परी रन मै नहि को ठहिरायो। भाजत जात सभै रिसि खात कछू न बसात कहै

जान पाया। शूरवीरों में इसके समान कोई शूरवीर नहीं जिसके हृदय में इतनी गहराई से मेरा नाम बस रहा हो॥ १७३७॥ ॥ दोहा॥ पेट में दस माह तक बस कर उसके बाद से ही उसने भोजन और जल का त्याग कर जब पवन का आहार बनाकर जीवन व्यतीत किया तो भगवान ने इसे वरदान दिया था॥ १७३८॥ ॥ दोहा॥ बलवान खड्गसिंह ने शत्रु को जीतने का वरदान लिया और पुनः बारह वर्ष तक बन में घोर तपस्या की॥ १७३९॥ ॥ चौपाई॥ यह कथा समाप्त हो गई और प्रातःकाल हो गया तथा दोनों पक्षों के वीर जग गए। जरासंध दल को सुसज्जित कर युद्ध में आया और इधर से यादव सेना भी अपने दल को एकत्र कर सामने आ डटी॥ १७४०॥ ॥ सवैया॥ इधर से बलराम और उधर से शत्रु सेना लेकर उमड़ पड़े। बलराम ने हाथ में हल लेकर और ललकार कर शत्रुओं पर प्रहार किए। कोई मरकर धरती पर गिर पड़ा, कोई लड़ा और कोई भाग खड़ा हुआ। बलराम ने पुनः हाथ में मुग्दर लेकर अनेकों शत्रुओं को यमलोक पहुँचा दिया॥ १७४१॥ ॥ सवैया॥ श्रीकृष्ण ने भी धनुष-बाण हाथ में लिया और उसी ओर चल पड़े और शत्रु पर टूट पड़कर रक्त की नदी बहा दी। घोड़ों, हाथी और रथ-पतियों पर मानो विपत्ति टूट पडी। युद्ध में कोई नहीं ठहर

दुखु पायो ।। १७४२ ।। ।। सवैया ।। आगे की सैन भजी जब ही तब पउरख सो ब्रिजराज सँभार्‌यो । ठाढो जहाँ दल को पति है तहाँ जाइ पर्‌यो चित बीच बिचार्‌यो । शस्त्र सँभार मुरार सभै न्रिप ठाढो जहा तिह ओर सिधार्‌यो । बान कमान गही घनिस्याम जरासिंध को अभिमान उतार्‌यो ।। १७४३ ।। ।। सवैया ।। स्री बलबीर सरासन ते जब तीर छुटे तब को ठहरावै । जाइ लगे जिह के उर मै सर सो छिन मै जमधाम सिधावै । ऐसो न को प्रगट्‌यो जग मै भट जो समुहाइकै जुद्ध मचावै । भूपत कउ निज बीर कहै हरि मारत सैन चल्यो रन आवै ।। १७४४ ।। ।। सवैया ।। स्याम की ओर ते बान छुटे न्रिप के दल के बहु बीरन घाए । जेतिक आइ भिरे हरि सो छिन बीच तेऊ जमधाम पठाए । कउतकि देखिकै यौ रन मै अति आतुर हुइ तिन बैन सुनाए । आवन देहु अबै हम कउ न्रिप ऐसे कह्‌यो सिगरे समझाए ।। १७४५ ।। ।। सवैया ।। भूप लख्यो हरि आवत ही संग लै प्रतना तब आप ही धायो । आगे किए निज लोग सभै तब लै करि मो बर संख बजायो । स्याम

सका । सब भागे जा रहे हैं, क्षुब्ध हैं, दुःखी हैं और उनका कोई वश नहीं चल रहा है ।। १७४२ ।। ।। सवैया ।। सामने की सेना जब भाग खड़ी हुई तब श्रीकृष्ण ने अतिरिक्त रूप से पौरुष को सँभाला और चित्त में विचार करके वहाँ पहुँचे जहाँ दल का सेनापति खड़ा था । शस्त्रों को सँभालकर श्रीकृष्ण वहाँ आ गए जहाँ राजा (जरासंध) खड़ा था । श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण पकड़ा और जरासंध का अभिमान चूर कर दिया ।। १७४३ ।। ।। सवैया ।। श्रीकृष्ण के धनुष से जब तीर छूटते थे तो भला सामने कौन टिक पाता । जिसके सीने में जा लगते वह क्षण भर में यमलोक जा पहुँचता । ऐसा कोई शूरवीर पैदा नहीं हुआ जो श्रीकृष्ण के सामने जाकर युद्ध करता । राजा से उसके वीर कहने लगे कि हमें मारने के लिए श्रीकृष्ण सेना लेकर चले आ रहे हैं ।। १७४४ ।। ।। सवैया ।। श्रीकृष्ण की ओर से बाण चलते ही राजा की ओर के बहुत से वीर मारे गए । जितने कृष्ण से आकर भिड़े वे यमलोक पहुँच गए । यह दृश्य देखकर राजा ने व्याकुल होकर कहा और अपने वीरों को समझाया कि ज़रा श्रीकृष्ण को मेरे पास आ जाने दो (तब मैं देखूँगा) ।। १७४५ ।। ।। सवैया ।। जब राजा ने श्रीकृष्ण को आते देखा तो सेना साथ लेकर स्वयं आगे बढ़ा । अपने वीरों को आगे किया और अपने हाथ में शंख लेकर बजाया । कवि का कथन है कि उस युद्ध में किसी के भी

भनै तिह आहव मै अति ही मन भीतर को डर पायो। ता धुनि को सुनि कै बर बीरन के चित मानहु चाउ बढायो ॥१७४६॥ ॥ दोहरा ॥ जरासिंध की अति चमूँ उमडी क्रोध बढाइ। धनुखबान हरि पान लै छिन मै दीनी घाइ ॥ १७४७ ॥ ॥ सवैया ॥ जदुबीर कमान तें बान छुटे अवसान गए लख शत्रन के। गजराज मरे गिर भूमि परे मनो रूख करे करवत्तन के। रिप कउन गनो जु हनै तिह ठा मुरझाइ गिरे सिर छत्रन के। रन मानो सरोवर आंधी बहै तुट फूल परे सत पत्रन के ॥ १७४८ ॥ ॥ सवैया ॥ घाइ लगे इक घूमत घाइल स्रउन सो एक फिरै चुचवातै। एक निहार के डारि हथिआर भजै बिसंभार गई सुध सातै। दै रन (मू०ग्रं०४७५) पीठ मरै लरकै तिह मास को जंबक गीध न खाते। बोलत बीर सु एक फिरै मनो डोलत कानन मै गज माते ॥ १७४९ ॥ ॥ सवैया ॥ पान क्रिपान गही घनिस्याम बडे रिप ते बिन प्रान किए। गज बाजन के असवार हजार मुरार सँघार बिदार दिए। अर एकन के सिर काट दए इक बीरन के दए फार हिए। मनो काल सरूप कराल लख्यो हरि

मन में डर नहीं है तथा उस शंखध्वनि को सुनकर वीरों के चित्त में उत्साह बढ़ उठा ॥ १७४६ ॥ ॥ दोहा ॥ जरासंध की चतुरंगिणी सेना क्रोधित होकर उमड़ पड़ी परन्तु श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लेकर क्षण भर में सबको नष्ट कर दिया ॥१७४७॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के बाण, धनुष से छूटते ही शत्रुओं की हिम्मत छूट गई। हाथी मर कर इस प्रकार धरती पर गिरने लगे मानो आरे से पेड़ काटकर धरती पर गिरा दिए जा रहे हों। मरनेवाले शत्रु असंख्य थे और उस स्थान पर क्षत्रियों के निस्तेज सिर भरे पड़े थे। युद्धस्थल मानो सरोवर बन गया जिसमें पत्तों-फूलों की तरह सिर बह रहे थे ॥ १७४८ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई घायल होकर घूम रहा है और किसी के तन से रक्त बहा चला जा रहा है। कई दौड़े जा रहे हैं और युद्ध की भीषणता से त्रस्त शेष-नाग भी अपनी सुध-बुध भूल बैठा है। जो युद्ध से पीठ दिखाकर भागने की प्रक्रिया में मारे जा रहे हैं उनके मांस को गीदड़ और गिद्ध भी नहीं खा रहे हैं। वीर इस प्रकार से दहाड़ते हुए बोल रहे हैं मानो जंगल में मदमस्त हाथी गरज रहे हों ॥ १७४९ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथ में कृपाण पकड़कर श्रीकृष्ण ने बहुत से वीरों को निष्प्राण कर दिया। हाथी-घोड़ों के हजारों सवारों को श्रीकृष्ण ने मार डाला कइयों के सिर काट दिए और कइयों के सीने फाड़

सत्र भजे इक मार लिए ।। १७५० ।। ।। कबितु ।। रोस भरे बहुरो धनुख बान पान लीनो रिपन सँघारत इउ कमला को कंतु है । केते गज मारे रथी ब्रिथी कर डारे केते ऐसो भयो जुद्ध मानो कीनो रुद्र अंतु है । सैंथी चमकावत चलावत सुदरशन को कहै कबि राम स्याम ऐसो तेजवंतु है । स्रउनत रंगीन पट सुभट प्रबीन कर फाग खेल पौढ रहे मानो बडे संत है ।।१७५१।। कान ते न डरे अरि अर राइ परे सभ कहै कबि स्याम लरबे कउ उमगति है । रन मै अडोल स्वामकार जी अभोल बीर गोल ते निकस लरै कोप मै पगत है । डोलत है आसपास जीतबे की करै आस त्रास मन नंकु नही न्रिप के भगत है । कंचन अचल जिउँ अटल रह्यो जदुबीर तीर तीर सूरमा नछत्र से डगत है ।। १७५२ ।। ।। सवैया ।। इह भांत इते जदुबीर घिर्‌यो उत कोप हलायुध बीर सँघारे । बान कमान क्रिपानन पान धरे बिन प्रान परे छित मारे । टूक अनेक किए हलि सो बल कातर देखि भजे बिसंभारे । जीतत भ्यो मुसली रन मै अरि भाजि चले तब भूप निहारे ।। १७५३ ।। ।। सवैया ।। चक्रत

दिए । श्रीकृष्ण मानो काल-रूप होकर विचरण कर रहे थे और शत्रुओं को मार रहे थे ।। १७५० ।। ।। कवित्त ।। पुनः क्रोधित होकर धनुष-बाण हाथ मे लेकर श्रीकृष्ण शत्रुओं का संहार कर रहे हैं । कितने ही मार डाले, रथी विरथी बना दिए और ऐसा युद्ध हो रहा है मानो प्रलय का समय आ पहुँचा हो । कभी कृपाण चमका रहे हैं कभी सुदर्शन चक्र तेजस्वी होकर चला रहे हैं । रक्त से भीगे हुए कपड़े पहने सभी ऐसे लग रहे हैं मानो संत महात्मा प्रसन्न होकर होली का खेल खेल रहे हों ।। १७५१ ।। शत्रु कृष्ण से नहीं डर रहे हैं और ललकार कर लड़ने के लिए उमड़ रहे हैं । युद्ध में स्थिर रहनेवाले और स्वामी के कार्य को करनेवाले वीर अपने-अपने झुंड में क्रोधित हो रहे है । वे अपने राजा जरासंध के अनन्य सेवक हैं, अतः अभय होकर श्रीकृष्ण के आस-पास विचरण कर रहे हैं । सुमेरु पर्वत की तरह श्रीकृष्ण अटल हैं और उनके बाणों की मार से शूरवीर आकाश के नक्षत्रों की तरह टूट-टूटकर गिर रहे हैं ।। १७५२ ।। ।। सवैया ।। इस प्रकार इधर कृष्ण घिर गए और उधर क्रोधित होकर बलराम ने वीरों का संहार किया । हाथ में बाण, कृपाण, धनुष पकड़कर बलराम ने वीरों को निष्प्राण कर धराशायी कर दिया । वीरों के अनेकों टुकड़े कर दिए और बड़े-बड़े वीर असहाय होकर भाग खड़े हुए । रण में बलराम जीतने लगे, शत्रु भागने लगे और राजा ने इस सारे दृश्य को

हुइ चित बीच चमू पति आपुनी सैन कउ बैन सुनायो। भाजत जात कहा रन ते भट जुद्ध निदान सभो अब आयो। इउ ललकार कह्यो दल को तब स्रउनन मै सभहू सुन पायो। शस्त्र सँभार फिरे तबही अरि कोप भरे हर जुद्ध मचायो॥ १७५४॥ बीर बडे रनधीर सोऊ जब आवत स्री जदुबीर निहारे। स्याम भनै कर कोपति ही छिन सामुहि होइ हरि शस्त्र प्रहारे। एकन के कर काटि दए इक मूँड बिना कर भू पर डारे। जीत की आस तजी अर एक निहारकै डार हथ्यार पधारे॥ १७५५॥ ॥ दोहरा॥ जब ही अति दल (मू०ग्रं०४७६) भजि गयो तब न्रिप किओ उपाइ। आपन मंत्री सुमति कउ लीनो निकटि बुलाइ॥ १७५६॥ द्वादस छूहन सैन अब लै धावहु तुम संग। शस्त्र अस्त्र भूपति दयो अपनो कवच निखंग॥ १७५७॥ सुमति चलत रन इउ कह्यो सुनिए बचन न्रिपाल। हरि हलधर केतक बली करो काल को काल॥१७५८॥ ॥ चौपई॥ इउ कहि जरासिंध सिउ मंत्री। संग लिए तिह अधिक बजंत्री। मारू राग बजावत धायो। द्वादस छूहन लै दलु आयो॥ १७५९॥ ॥ दोहरा॥ संकरखण

देखा॥ १७५३॥ ॥ सवैया॥ चकित होकर राजा ने अपनी सेना को कहा कि वीरो! युद्ध का समय तो अब आया है; तुम लोग कहाँ भागे चले जा रहे हो। राजा की इस ललकार को सब सेना ने सुना और सभी वीर पुनः हाथों में शस्त्र लेकर अत्यन्त क्रोधित होकर भीषण युद्ध करने लगे॥ १७५४॥ बड़े-बड़े पराक्रमी वीरों को जब कृष्ण ने आते हुए देखा तो सामने होकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर उन पर शस्त्रों से प्रहार किया। कइयों के सिर काट दिए और कइयों के धड़ धरती पर फेंक दिए। कइयों ने जीत की आशा छोड़ दी और शस्त्र फेंककर भाग खड़े हुए॥ १७५५॥ ॥ दोहा॥ जब सेना भाग खड़ी हुई तो राजा ने एक उपाय किया और अपने मंत्री सुमति को अपने पास बुला लिया॥ १७५६॥ तुम बारह अक्षौहिणी सेना लेकर युद्ध के लिए चले जाओ और यह कहकर राजा जरासंध ने उसे अपने शस्त्र, अस्त्र, कवच और तरकश आदि दिए॥ १७५७॥ मंत्री सुमति ने चलते समय राजा से कहा कि हे राजन्! कृष्ण और बलराम कौन से बड़े शूरवीर हैं, मैं तो काल को भी मार डालूंगा॥ १७५८॥ ॥ चौपाई॥ मंत्री, जरासंध से यह कहकर बहुत से रणवाद्य बजानेवाले अपने साथी और बारह अक्षौहिणी दल लेकर मारू राग बजाता हुआ चल पड़ा॥ १७५९॥ ॥ दोहा॥ बलराम ने कृष्ण

हरि सों कह्यो करिऐ कवन उपाइ। सुमति मंत्र दल प्रबल लै रन मधि पहुच्यो आइ ॥ १७६० ॥ ॥ सोरठा ॥ तब बोल्यो जदुबीर ढील तजो बल हलि गहो। रहियो तुम मम तीर आगै पाछै जाहि जिन ॥ १७६१ ॥ ॥ सवैया ॥ राम लियो धनु पान सँभार धर्यो तिन मै मन कोपु बढायो। बीर अनेक हने तिह ठउर घनो अरि सिउ तब जुद्धु मचायो। जो कोऊ आइ भिर्यो बल सिउ अति ही सोऊ घाइन के संग घायो। मूरछ भूम गिरे भट झूम रहे रन मै तिन सामुहि धायो ॥१७६२॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह कमान लिए कर मै रन मै जब केहरि जिउँ भभकारे। को प्रगट्यो भट ऐसो बली जग धीर धरे हरि सो रन पारे। अउर सु कउन तिहू पुर मै बलि स्याम सिउ बैर को भाउ बिचारे। जो हठकै कोऊ जुद्धु करै सु मरै पल मै जमलोक सिधारे ॥ १७६३ ॥ ॥ सवैया ॥ जब जुद्धु को स्याम जू राम चढे तब कउन बली रनधीर धरै। जोऊ चउदह लोकन को प्रतपाल त्रिपाल सु बालक जान लरै। जिह नाम प्रताप ते पाप टरै तिह को रन भीतर कउन हरै। मिलि आपसि मै सभ लोक कहै रिप सिंघ जरा बिन आइ

से कहा कि कोई उपाय किया जाना चाहिए क्योंकि सुमति नामक मंत्री अनन्त सेना लेकर युद्धस्थल में आ पहुँचा है ॥ १७६० ॥ ॥ सोरठा ॥ तब कृष्ण ने कहा कि बलराम आलस्य का त्यागकर हल को पकड़ो, मेरे पास रहो और कहीं मत जाओ ॥ १७६१ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने धनुष-बाण सम्हाल लिया और वह क्रोधित होकर युद्ध में कूद पड़ा। उसने अनेको वीर मार डाले और शत्रु से भीषण युद्ध किया। जो भी बलराम से आ भिड़ा वह बुरी तरह घायल हुआ और जो भी वीर उसके सामने आया वह या तो मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़ा अथवा मरने के लिए सिसकने लगा ॥ १७६२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कृष्ण धनुष हाथ में लेकर सिंह के समान युद्ध में ललकार रहे हैं तो कौन ऐसा महाबली है जो धैर्य नहीं छोड़ेगा और कृष्ण से युद्ध करेगा। तीनों लोकों में अन्य कौन ऐसा है जो बलराम और कृष्ण से शत्रुता कर सकता है परन्तु फिर भी जो हठपूर्वक आकर युद्ध करता है वह पल भर में यमलोक पहुँच जाता है ॥ १७६३ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम और कृष्ण को युद्ध में चढ़ा हुआ देखकर कौन महाबली धैर्य रखेगा। जो चौदह लोकों के स्वामी हैं, राजा उन्हें बालक समझकर उनसे लड़ रहा है। जिसके नाम के प्रताप से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं उनको युद्ध में कौन मार सकता है सभी लोग

मरै ॥ १७६४ ॥ ॥ सोरठा ॥ इत ते करत बिचार सुभट लोक न्रिप कटक मै । उत बल शस्त्र सँभार धाइ पर्यो नाहनि डर्यो ॥ १७६५ ॥ ॥ सवैया ॥ मूसल लै मुसली कर मै अरि को पल मै दल पुंज हर्यो है । बीर परे धरनी पर घाइल स्रउनत लिउ तन ताहि भर्यो है । ता छबि को जस उच्च महाँ मन बीच बिचार कै स्याम कर्यो है । मानहु देखन कउ रन कउतक क्रोध (मू०पं०४७७) भयानक रूप धर्यो है ॥ १७६६ ॥ ॥ सवैया ॥ इत ओर हलायुध जुद्ध करै उत स्री गरड़द्धुज कोप भर्यो है । शस्त्र सँभार मुरार तबै अर सैन के भीतर जाइ अर्यो है । मार बिदार दए दल कउरन या बिधि चित्र बचित्र कर्यो है । बाज पै बाज रथी रथ पै गज पै गज स्वार पै स्वार पर्यो है ॥१७६७॥ ॥ सवैया ॥ एक कटे अध बीच हुते भट एकन के सिर काटि गिराए । एक किए बिरथी तब ही गिर भूमि परे संग बानन घाए । एक किए कर हीन बली पग हीन किते गनती नहि आए । स्याम भनै किनहूँ नही धीर धर्यो तब ही रन छाडि पराए ॥१७६८॥

आपस में मिलकर यही कह रहे हैं कि जरासंध शत्रु बिना मौत के मारा जाएगा ॥ १७६४ ॥ ॥ सोरठा ॥ इधर राजा की सेना में इस प्रकार के विचार शूरवीरों के दिल में आ रहे हैं और उधर श्रीकृष्ण बल और शस्त्रों को सम्हालकर अभय होकर सेना पर टूट पड़े ॥ १७६५ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने साथ में मुग्दर ले क्षण भर में शत्रुओं के झुंड को मार डाला । रक्त से भीगे शरीरवाले वीर धरती पर घायल पड़े हैं और उस दृश्य का वर्णन करते हुए कवि श्याम का कथन है कि ऐसा लग रहा है मानो युद्ध-लीला देखने को क्रोध ने साक्षात् स्थूल रूप धारण किया हो ॥ १७६६ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर बलराम युद्ध कर रहे हैं और उधर श्रीकृष्ण क्रोध से भर रहे हैं । वे शस्त्र सम्हाल कर शत्रु-सेना में जाकर अड़ गए हैं और उन्होंने शत्रुओं के दल को मारकर एक विचित्र दृश्य उपस्थित कर दिया है । घोड़े पर घोड़ा और रथी रथ पर, हाथी, हाथी पर और सवार, सवार पर पड़ा दिखाई दे रहा है ॥ १७६७ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई शूरवीर आधे बीच में से कटा हुआ है और कई के सिर काट कर गिरा दिए गए हैं । कई बाणों से घायल एवं रथ-विहीन हो धरती पर पड़े हैं । कितने ही लोग हस्त-विहीन और कितने ही पद-विहीन हो गए हैं । इनकी गिनती नहीं की जा सकती । कवि का कथन है कि सबने धैर्य छोड़ दिया और सभी युद्ध छोड़कर भाग गए । १७६८ शत्रु के जिस

जा दल जीत लयो सगरो जग अउर कहू रन ते नहीं हार्यो ।
इंद्र से भूप अनेक मिले तिन ते कबहूँ नही जा पगु टार्यो ।
सो घनिस्याम भजाइ दियो पल मै न किसै धन बान सँभार्यो ।
देव अदेव करैं उपमा इम स्री जदुबीर बडो रन पार्यो ॥१७६९॥
॥ दोहरा ॥ द्वै अछूहनी सैन रन दई स्याम जब घाइ ।
मंत्री सुमति समेत दलु कोप पर्यो अरिराइ ॥ १७७० ॥
॥ सवैया ॥ धाइ परे कर कोप तबै भट दै मुख ढाल लए करवारैं । सामुहि आइ हठी हठि सिउ घनिस्याम कहाँ इह भाँत हकारैं । मूसल चक्र गदा गहिकै सु हतै हरि कौच उठै चिनगारैं । मानो लुहार लिए घन हाथन लोह करेरे को कामु सवारै ॥ १७७१ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ लग ही बरमाक्रित ऊधव आइ है स्याम सहाइ के कारन । अउर अक्रूर लए संग जादव धाइ पर्यो अरि बीर बिदारन । शस्त्र सँभार सभै अपुने कबि स्याम कहै मुख मार उचारन । ओर दुहू अति जुद्ध भयो सु गदा बरछी करवार कटारन ॥ १७७२ ॥
॥ सवैया ॥ आवत ही बरमाक्रित जू अरु सैन हुते सु घने भट

दल ने सारा विश्व जीत लिया था और कभी भी युद्ध में नहीं हारा था, इन्द्र के समान अनेकों राजाओं के मिल जाने पर भी यह दल कभी एक भी क़दम पीछे नहीं हटा था, उस सेना को श्रीकृष्ण ने पल भर में भगा दिया और किसी ने धनुष-बाण तक नहीं सम्हाला । देवता और राक्षस सभी श्रीकृष्ण के युद्ध की प्रशंसा कर रहे हैं ॥ १७६९ ॥ ॥ दोहा ॥ दो अक्षौहिणी सेना जब श्रीकृष्ण ने नष्ट कर दी तब सुमति मंत्री क्रोधित हो ललकारता हुआ टूट पड़ा ॥ १७७० ॥ ॥ सवैया ॥ तब क्रोधित हो हाथ में ढाल-तलवार लेकर शूरवीर टूट पड़े । कृष्ण ने उन्हें ललकारा और वे भी हठपूर्वक सामने आ गए । इधर श्रीकृष्ण ने भी मुद्‌गर, चक्र, गदा आदि हाथ में पकड़कर भीषण प्रहार किए और कवचों से चिनगारियाँ उठने लगीं । यह ऐसा लग रहा था मानो लोहार हाथ में हथौड़ा ले लोहे को अपनी इच्छानुसार पीटकर ठीक कर रहा हो ॥ १७७१ ॥ ॥ सवैया ॥ तब तक कृतवर्मा और उद्धव श्रीकृष्ण की सहायता के लिए आ पहुँचे । अक्रूर भी यादव वीरों को साथ ले शत्रुओं को मारने के लिए टूट पड़े । शस्त्रों को सम्हालते हुए मुख से 'मार-मार' की पुकार लगाते हुए दोनो ओर से गदा, बरछी, तलवार, कटार आदि से भीषण युद्ध हुआ ॥ १७७२ ॥ ॥ सवैया ॥ कृतवर्मा ने आते ही अनेकों शूरवीरों को काट डाला । कोई दो टुकडे हो पड़ा है और किसी का सिर फटा हुआ पड़ा

कूटे। एक परे बिब खंडत ही अरु एक गिरे धर पै सिर फूटे। एक महा बलवान कमानन तान चलावत इउ सर छूटे। काज बसेरे के रैन समै मधिआन मनो तर पै खग टूटे॥ १७७३॥ एक कबंध लिए करवार फिरै रनभूम के भीतर डोलत। धाइ परै तिह ओर बली भट जो तिह को ललकार कै बोलत। (मू०ग्रं०४७८) एक परे गिर पाइ कटे उठबे कहु बाहनि को बल तोलत। एक कटी भुज यों तरपै जलहीन जिउ मीन पर्यो झकझोलत॥ १७७४॥ एक कबंध बिना हथियारन राम कहै रनभूम मै दउरै। सुंडन तेग जरा जन को गहिकै करिकै बल सो झकझोरै। भूम गिरे म्रित अस्वन की दुहूँ हाथन सो गहि ग्रीव मरोरै। स्यंदन कै असवारन के सिर एक चपेट ही के संग तोरै॥ १७७५॥ ॥ सवैया॥ कूदत है रन मै भट एक कुलाचन दै कर जुद्ध करै। इक बान कमान क्रिपानन ते कबि राम कहै न रती कु डरै। इक काइर त्रास बढाइ चितै रनभूम हू ते तज शस्त्र टरै। इक लाज भरे पुन आइ अरै लरि कै मरिकै गिर भूम परै॥ १७७६॥ ॥ सवैया॥ ब्रिजभूखन चक्र सँभारत ही तब ही दलु बैरन को धसिकै। बिन प्रान किए बलवान घने कबि स्याम भनै सु

है। कई बलवानों के धनुषों से इस प्रकार बाण छूट रहे हैं मानो रात्रि के समय विश्राम के लिए संध्या को पक्षी पेड़ों की तरफ झुंड बना कर टूट पड़ रहे हैं॥ १७७३॥ कहीं कबंध हाथ में तलवार ले युद्धभूमि में विचर रहे हैं और युद्धस्थल में जो भी बली ललकारता है वीर उसी पर टूट पड़ते हैं। कोई पाँव कटने से गिर पड़ा है और उठने के लिए वाहन का सहारा ले रहा है और कोई कटी हुई भुजा धरती पर पड़ी ऐसे तड़प रही है जैसे जल-विहीन मछली तड़प रही हो॥ १७७४॥ कवि राम का कथन है कि कोई कबंध बिना शस्त्र के रणभूमि में दौड़ रहा है और हाथियों की सूँड़ों को पकड़कर बलपूर्वक झकझोर रहा है; भूमि पर मृत पड़े घोड़ों की दोनों हाथों से गर्दन करोड़ रहा है और घुड़सवारों के सिर एक ही चपेट में तोड़ रहा है॥ १७७५॥ ॥ सवैया॥ युद्धभूमि में शूरवीर कूद-कूदकर छलांगें मारते युद्ध कर रहे हैं और बाण, कृपाण, धनुष आदि से तनिक भी नहीं डर रहे हैं। कई कायर भयभीत होकर रणभूमि से शस्त्र त्यागकर भाग रहे हैं और कई लज्जित हो पुनः युद्धभूमि में आकर लड़-मरकर भूमि पर गिर रहे हैं॥ १७७६॥ ॥ सवैया॥ जैसे ही श्रीकृष्ण ने चक्र सँभाला, शत्रुओं का दल भयभीत हो

कछू हसिकै। इक चूरन कीन गदा गहिकै इक पास के संग लिए कसिकै। जदुबीर अयोधन मै बल कै अरि बीर लिए सभ ही बसिकै॥ १७७७॥ ॥ सवैया॥ बलभद्र इतै बहु बीर हने ब्रिजनाथ उतै बहु सूर संघारे। जो सभ जीत फिरै जग कउ अरि गाढ परी न्रिप काम सवारे। ते घनिस्याम अयोधन मै बिन प्रान किए अर भू पर डारे। इउ उपमा उपजी जिय मै कदली मनो पउन प्रचंड उखारे॥ १७७८॥ जो रन मंडन स्याम के संगि भले न्रिप धामन कउ तजि धाए। एक रथै गजराज चढै इक बाजन के असवार सुहाए। ते घनि जिउ ब्रिजराज के पउरख पउन बहै छिन माहि उडाए। काइर भाजत ऐसे कहै अब प्रान रहै मनो लाखन पाए॥ १७७९॥ ॥ सवैया॥ स्याम के छूटत बाननि चक्र सु चक्रत होइ रथ चक्र भ्रमावत। एक बली कुल लाज लिए द्रिड़ हुइ हरि के संगि जुज्झ मचावत। अउर बडे न्रिप लै न्रिप आइस आवत है बले गाल बजावत। बीर बडे जदुबीर कउ देखन चउप चड़े लरबे कहु धावत॥ १७८०॥ स्री ब्रिजनाथ तबै तिन ही धनु

उठा। श्रीकृष्ण ने मुस्कराते हुए अनेकों बलवानों को प्राण-विहीन कर दिया। कई को कसकर गदा के प्रहार से चूर कर दिया और श्रीकृष्ण ने बलपूर्वक इस युद्ध में सभी वीरों को अपने वश में कर लिया॥१७७७॥ ॥ सवैया॥ इधर बलराम ने बहुत से वीरों को मारा और उधर श्रीकृष्ण ने बहुत से शूरवीरों का संहार किया। जो वीर विश्व-विजेता थे और मुसीबत में राजा के काम आनेवाले थे, उनको श्रीकृष्ण ने निष्प्राण करते हुए इस प्रकार धराशायी कर दिया कि मानो प्रचंड पवन ने केले के पेड़ों को उखाड़कर फेंक दिया हो॥१७७८॥ अपने-अपने घरों को छोड़ जो राजा श्रीकृष्ण से युद्ध करने आये और जो रथ हाथी और घोड़ों पर सवार हो शोभायमान हो रहे थे वे श्रीकृष्ण के पौरुष के सामने इस प्रकार नष्ट हो गए जैसे पवन क्षण भर में बादलों को नष्ट कर देता है। कायर लोग भागते हुए प्राणों की सुरक्षा करते हुए अपने आप को भाग्यशाली मान रहे हैं॥ १७७९॥ ॥ सवैया॥ श्रीकृष्ण के बाण-चक्र को छूटते देखकर रथों के पहिए भी आश्चर्यचकित होकर घूमने लगे। राजागण अपने कुल की मान-मर्यादा का ध्यान रखते हुए श्रीकृष्ण के साथ युद्ध कर रहे हैं तथा अन्य कई राजा जरासंध से आज्ञा ले अहंकारपूर्वक चिल्लाते हुए युद्ध के लिए चले आ रहे हैं। बड़े-बड़े वीर श्रीकृष्ण को देखने के उत्साह को मन में लेकर उनसे लड़ने के लिए चले आ रहे हैं १७८०

तानकै बान समूह चलावत । आन लगे भट एकन कउ नटसाल भए मन मै दुखु पावत । एक तुरंगन की भुज बान लगे (मू०ग्रं०४७९) अत राम महा छबि पावत । साल मुनीश्वर काटे हुते ब्रिजराज मनो तिह पंख बनावत ॥ १७८१ ॥ ॥ चौपई ॥ तब सभ शत्र कोप मन भरे । घेरि लयो हरि नैकु न डरे । बिबिधायुध लै आहव करैं । मार मार मुख ते उचरैं ॥१७८२॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधतसिंघ क्रिपान सँभार कै स्याम कै सामुहि टेर उचार्यो । केस गहे खड़गेश बली जब छाडि दयो तब चक्र सँभार्यो । गोरस खात ग्वारन वै दिन भूल गए अब जुद्ध बिचार्यो । स्याम भनै जदुबीर कउ मानहु बैनन बानन कै सँगि मार्यो ॥ १७८३ ॥ ॥ सवैया ॥ इउ सुनिकै बतिया ब्रिजनाइक कोप किओ कर चक्र सँभार्यो । नैक भ्रमाइकै पान बिखै बलिकै अरि ग्रीव के ऊपर डार्यो । लागत सीसु कट्यो तिह को गिर भूमि पर्यो जसु स्याम उचार्यो । तार कुँभार लै हाथ बिखै मनो चाक ते कुंभ तुरंग उतार्यो ॥ १७८४ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध किओ ब्रिजनाथ कै

श्रीकृष्ण तभी धनुष तान के बाणों के झुंड चलाते हैं, जो शूरवीरों के लगते ही उन्हें तड़पाकर अत्यन्त दुःख देते हैं। घोड़ों की टाँगों में बाण लगे हुए हैं। बाण इस प्रकार लग रहे हैं कि मानो श्रीकृष्ण ने पंखदार तीर मार कर घोड़ों के शरीर ऐसे कर दिए हैं कि मुनि शालिहोत्र द्वारा काटे हुए उनके पंख फिर बन गए हों। (शालिहोत्र नामक एक मुनि ने इन्द्र की आज्ञा से पौराणिक कथानुसार घोड़ों के पंख काट दिए थे) ॥ १७८१ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब सभी शत्रु क्रोध से भर उठे और उन्होंने निडर होकर श्रीकृष्ण को घेर लिया। वे 'मार-मार' की पुकार लगाते हुए विभिन्न प्रकार के शस्त्र लेकर लड़ने लगे ॥ १७८२ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधितसिंह ने कृपाण सँभालकर श्रीकृष्ण के सामने कहा कि जब खड्गसिंह ने केशों से पकड़कर तुम्हें छोड़ दिया था तब तुमने दूर से ही लड़ना सुरक्षित समझ कर चक्र उठाया। तुम ग्वालिनों के घरों का दूध पीते थे। क्या तुम वे दिन भूल गए और अब तुमने युद्ध करने का विचार किया है। कवि का कथन है कि क्रोधितसिंह मानो उन्हें बातों के बाण से मार रहा है ॥ १७८३ ॥ ॥ सवैया ॥ यह बात सुनकर श्रीकृष्ण ने क्रोधित होकर चक्र सँभाला और आँखें तरेरते हुए बलपूर्वक शत्रु की गर्दन पर छोड़ दिया। चक्र लगते ही उसका सिर इस प्रकार धरती पर गिर पड़ा मानो कुम्हार ने तार से काटकर चाक पर से घड़ा नीचे उतार लिया

साथ सु शत्रु बिदार कहै जग जा कउ । जा दसहू दिस जीत लई छिन मै बिन प्रान किओ हरि ताकउ । जोत मिली तिह की प्रभ सिउ जिम दीपक क्रांत मिलै रबि भा भउ । सूरज मंडल छेद कै भेद कै प्रान गए हरि धाम दशा कउ ॥ १७८५ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्र बिदार हन्यो जब ही तब ही स्री ब्रिजभूखन कोप भर्यो है । स्याम भनै तजिकै सभ शंक निशंक हुइ बैरन माझ पर्यो है । भैरवि भूप सिउ जुद्ध किओ सु वहै छिन मै बिन प्रान कर्यो है । भूम गिर्यो रथ ते इह भांत मनो नभ ते ग्रहि टूट पर्यो है ॥ १७८६ ॥ ॥ सवैया ॥ एक भरे भट स्रोंनत सों भभकारत घाइ फिरै रन डोलत । एक परे गिर कै धरनी तिन के तन जंबक गीधक ढोलत । एकन के मुखि ओठन आंखन काग सु चोचन सिउ टकटोलत । एकन की उर आंतन को कढ जोगन हाथन सिउ झकझोलत ॥ १७८७ ॥ ॥ सवैया ॥ मान भरे अस पान धरे चहूं ओरन ते बहुरो अर आए । स्री जदुबीर के बीर जिते कबि स्याम कहै इत ते तेऊ धाए । बानन सैथन अउ करवार हकार हकार प्रहार लगाए । आइ खए इक जीत लए इक भाज गए इक मार

हो ॥ १७८४ ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रुहंता के नाम से विख्यात क्रोधितसिंह ने श्रीकृष्ण के साथ युद्ध किया था । दसों दिशाओं को क्षण भर में जीत लेने वाले इस वीर को निष्प्राण कर दिया । उसकी ज्योति प्रभु से इस प्रकार जा मिली जैसे दीपक की ज्योति सूर्य की ज्योति में जा मिलती है । सूर्यमंडल को भेदकर उसके प्राण परमधाम को जा पहुँचे ॥ १७८५ ॥ ॥ सवैया ॥ इस शत्रु को मारकर श्रीकृष्ण क्रोध से भर उठे और सब शंकाओं को त्यागकर शत्रु-दल में कूद पड़े । भैरवसिंह राजा से श्रीकृष्ण ने युद्ध किया और क्षण भर में उसे भी मार डाला और वह रथ से भूमि पर इस प्रकार गिरा मानो आकाश से ग्रह टूटकर गिरा हो ॥ १७८६ ॥ ॥ सवैया ॥ वीर रक्त से सने हुए और छलछलाते हुए घावों को लेकर युद्ध में घूम रहे हैं । कुछ धरती पर गिर पड़े हैं और उनके तन गीदड़ और गिद्ध खींच रहे हैं । कितनों की आँखों और मुँह को कौवे अपनी चोंच से नोच रहे हैं और कितनों की आँतों को जोगिनियाँ हाथ में लेकर हिला रही हैं ॥ १७८७ ॥ ॥ सवैया ॥ गर्व से भरे हुए हाथों में तलवार पकड़कर चारों दिशाओं से शत्रु टूट पड़े । श्रीकृष्ण के वीर भी इधर से आगे की तरफ़ बढ़े और ललकार कर बाणों, तलवारों और कटारों से प्रहार करने लगे । जो आकर भिड़ते हैं उन्हें तो जीत लिया जा रहा है, परन्तु

गिराए ॥ १७८८ ॥ ॥ स्वैया ॥ जे भट (मू०ग्रं०४८०) आहव मै कबहू अरिकै लरिकै पगु एक न टारे । जीत फिरे सभ देसन कउ सोऊ भाज गए जिह ओर निहारे । जो जम के संगि जूझ करै तब अंतक ते नही जाइ निवारे । ते भट झूम परे रन मै जदुबीर के कोप क्रिपान के मारे ॥ १७८९ ॥ एक हुतो बलबीर बडो जदुबीर लिलाट मै बान लगायो । फोक रही गडि भउहनि मै सरु छेद सभै सिर पार परायो । स्याम कहै उपमा तिह की बर घाइ लगे बहु स्रोन बहायो । मानहु इंद्र पै कोपु कियो शिव तीसरे नैन को तेज दिखायो ॥ १७९० ॥ ॥ सवैया ॥ जदुबीर महा रनधीर जबै सु धवाइ परे रथ इउ कहिकै । बल दच्छन ओर निहार किती दल धायो है शस्त्र सभै गहिकै । बलिया सुनि सो ब्रिजनाइक की हल सो बलि धाइ लिए चहिकै । तिह को अति स्रोन पर्यो भुअ मै मनो सारसुती सु चली बहिकै ॥ १७९१ ॥ ॥ सवैया ॥ एक निहार भयो अति आहव स्याम भनै तजिकै रन भागे । घाइल घूमत एक फिरै मनो नीद घनी निस के कहूँ जागे । पउरखवंत बडे

कई भाग गए हैं और कितनों को मार गिराया जा रहा है ॥ १७८८ ॥ ॥ सवैया ॥ जिन शूरवीरों ने युद्ध में लड़ते हुए एक भी क़दम पीछे नहीं हटाया, जिन्होंने सब देशों को जीत लिया तथा जिस ओर देखो शत्रु भाग खड़े हुए, जो यम के साथ भी जूझ पड़े और मृत्यु का देवता भी जिन्हें नहीं मार सका, वे वीर श्रीकृष्ण की कृपाण के क्रोध से मारे जाकर युद्धभूमि में धराशायी हो गए ॥ १७८९ ॥ शत्रु-सेना के एक महाबली ने श्रीकृष्ण के मस्तक पर बाण मारा, जिसका पिछला हिस्सा तो भौंहों में गड़ा रहा परन्तु बाण सिर को छेदकर पार हो गया । कवि के कथनानुसार उस घाव में से बहुत सा रक्त बहता हुआ ऐसा लग रहा था, मानो शिव ने क्रोध करके इन्द्र को तीसरे नेत्र का तेज दिखाया हो ॥ १७९० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण रथ को हँकवाकर यह कहते हुए चल पड़े कि देखो बलराम ! दक्षिण दिशा से कितनी शत्रुसेना शस्त्र सँभालती हुई चली आ रही है । श्रीकृष्ण की बात सुनकर बलराम अपना हल लेकर उत्साहित हो उसी ओर चल पड़े और उस सेना का भी इतना रक्त बहा मानो धरती पर सरस्वती नदी बह रही हो ॥ १७९१ ॥ ॥ सवैया ॥ कई युद्ध की भीषणता को देखकर भाग खड़े हुए । कई घायल और निस्तेज होकर इस प्रकार घूम रहे हैं, मानो कई रातों के जगे हों । पौरुष के स्वामी कई बड़े वीर केवल कृष्ण से युद्ध करने में ही अनुरक्त हैं और

भट एक सु स्याम सो जुद्ध ही कउ अनुरागे । एक त्यागकै शस्त्र सभै जदुराइ के आइकै पाइन लागे ॥१७६२॥ ॥ दोहरा ॥ भजे शत्र जब जुद्ध ते मन मै त्रास बढाइ । अउर सूर आवत भए करवारन चमकाइ ॥ १७६३ ॥ ॥ सवैया ॥ शस्त्र सँभार सभै भट आइकै धाइकै स्याम सु जुद्ध मचायो । चक्र गह्यो कर मै ब्रिजनाइक कोप भयो तिह ऊपर धायो । बीर किए बिन प्रान घने अर सैन सभै इह भाँति भजायो । पउन प्रचंड समान सु कान्ह मनो उमड्यो दलु मेघ उडायो ॥ १७६४ ॥ ॥ सवैया ॥ काटत एकन के सिर चक्र गदा गहि दूजन के तन झारे । तीजन नैन दिखाइ गिरावत चउथन चौप चपेटन मारे । चीर दए अर से उर स्री हरि सूरन के अंग अंग प्रहारे । धीर तहाँ भट कउन धरै जदुबीर जबै तिह ओर सिधारे ॥ १७६५ ॥ रोस भर्यो जबही ब्रिजनाइक दुज्जन सैन निहार परै । तुमहू धौ बिचार कहो चित मै जग कउन बिओ भट धीर धरै । जोऊ साहस कै सभ आयुध ले संगि स्याम के आइकै नैक अरै । तिह कउ जदुबीर तिही छिन मै कबि स्याम कहै (मू०ग्रं०४८१) बिन प्रान करै ॥ १७६६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भट शस्त्र सँभार

कई शस्त्र त्यागकर श्रीकृष्ण के चरणों में आ गिरे हैं ॥१७६२॥ ॥ दोहा ॥ जब भयभीत होकर शत्रु भाग खड़े हुए तो तलवारों को चमकाते हुए अन्य वीर वहाँ आ पहुँचे ॥ १७६३ ॥ ॥ सवैया ॥ शस्त्रों को सँभालते हुए शत्रु श्रीकृष्ण पर टूट पड़े और इधर श्रीकृष्ण भी हाथ में चक्र लेकर उनकी तरफ़ दौड़े। अनेकों वीरों को मारकर सेना को इस प्रकार भगा दिया कि मानो प्रचंड पवन रूपी कृष्ण ने शत्रु रूपी बादलों को उड़ा दिया ॥ १७६४ ॥ ॥ सवैया ॥ किसी का सिर चक्र से काट रहे हैं तथा दूसरे के तन पर गदा से प्रहार कर रहे हैं। तीसरे को क्रोधित आँख दिखाकर ही गिरा दे रहे हैं और चौथा भी इनके वार की चपेट से मारा जा रहा है। शूरवीरों के अंग-अंग पर प्रहार कर श्रीकृष्ण ने उनके हृदयों को चीर दिया है तथा जिस तरफ़ भी वे चले जाते हैं, सभी वीरों का धैर्य छूट जाता है ॥ १७६५ ॥ क्रुद्ध होकर जब बृजनायक शत्रु-सेना को देखते हैं तो आप ही विचारपूर्वक यह बताएँ कि संसार में अन्य कौन ऐसा वीर है जो धैर्य धारण किए रहेगा जो वीर साहसपूर्वक सभी शस्त्र लेकर श्रीकृष्ण के साथ तनिक-सा युद्ध करने का प्रयत्न करता है, उसे श्रीकृष्ण क्षण भर में मार डालते हैं ॥ १७६६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भी वीर शस्त्र सँभालकर अकड़कर श्रीकृष्ण के सामने आते

सभै ब्रिजनाइक पै अति ऐडो सु आवै । जो कोऊ दूर ते स्याम भनै धनु तान कै स्याम पै बान चलावै । जो अरि आइ सकै नही सामुहे दूर ते ठाढेई गाल बजावै । ताहि कउ स्री ब्रिजनाथ चितै सर एक ही सो परलोक पठावै ॥ १७९७ ॥ ॥ कबितु ॥ देख दशा तिन की बडेई बीर शत्रन के राम भनै ऐसी भाँति चित मै रिसात है । लीने करवार मार मार हो उचार समुहाइ आइ स्यामजू सो जुद्ध ही मचात है । एक निजकात नही मन मै डरात मुसकात घाइ खात मानो सभै एक जात है । गालहि बजात एक हरख बढात छत्र धरम करात ते वे सुरग सिधात है ॥ १७९८ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिजनाइक के बल लाइक जे कबि स्याम कहै सोऊ सामुहि आवै । बान कमान क्रिपान गदा गहि क्रुद्ध भरे अति जुद्ध मचावै । एक परे बिनु प्रान धरा इक सीस कटे रनभूमहि धावै । एकन की बर लोथ परी कर से गहिकै अरि ओर चलावै ॥ १७९९ ॥ सूर सु एक हनै तह बाज तहा इक बीर बडे गज मारै । एक रथी बलवान हनै इक पाइक मारकै बीर पछारै । एक भजे लखि आहव कउ इक घाइल घाइल को ललकारै । एक लरै न डरै घनस्याम को धाइ क्रिपान के घाइ प्रहारै ॥ १८०० ॥

है, दूर से धनुष तानकर बाण चलाता है। और दूर से दर्पपूर्ण बातें कर रहा है तथा सामने नहीं आ रहा है उसे श्रीकृष्ण दूरदृष्टि से देखकर एक ही बाण में परलोक भेज दे रहे हैं ॥ १७९७ ॥ ॥ कवित्त ॥ उनकी यह दशा देखकर शत्रुपक्ष के बड़े-बड़े वीर मन से क्रोधित हो रहे हैं। वे क्रोधित होकर 'मार-मार' की पुकार के साथ श्रीकृष्ण से युद्ध में भिड़ रहे हैं। कई तो डरते हुए पास नहीं आ रहे हैं और दूर से ही मुस्कुराते हुए घाव खा रहे हैं। कई तो केवल दूर से ही गाल बजा रहे हैं, परन्तु कई क्षत्रिय-धर्म का पालन करते हुए स्वर्ग सिधार रहे हैं ॥ १७९८ ॥ ॥ सवैया ॥ जो श्रीकृष्ण से लड़ने योग्य हैं वे उनके सामने आ रहे हैं और बाण, कृपाण, गदा-धनुष आदि पकड़कर भीषण युद्ध कर रहे हैं। कोई निष्प्राण होकर धरती पर गिरा है और कोई सिर कट जाने पर भी युद्धभूमि में विचरण कर रहा है। कोई पड़ी हुई लाशों को पकड़कर शत्रु की ओर चलाकर फेंक रहा है ॥ १७९९ ॥ शूरवीरों ने हाथी-घोड़ों और वीरों को मार डाला है; कई बलवान रथी और पैदल मारे जा चुके हैं। कई युद्ध को देखकर भाग खड़े हुए हैं और कई घायल घायलों को ललकार रहे हैं। कई अभय होकर लड़ रहे हैं और कई

॥ दोहरा ॥ घेर लिओ चहू ओर हरि बीरनि शस्त्र सँभार । बार खेत जिउँ छाप नग रवि ससि जिउँ परवार ॥ १८०१ ॥ ॥ सवैया ॥ घेरि लिओ हरि कउ जब ही तब स्री जदुनाथ सरासन लीनो । दुज्जन सैन बिखै धसिकै छिन मै बिन प्रान घनो दलु कीनो । लोथ पै लोथ गई परिकै इह भाँति कर्‌यो अति जुद्ध प्रबीनो । जो कोऊ सामुहि आइ अर्‌यो अरि सो ग्रहि जीवत जान न दीनो ॥ १८०२ ॥ ॥ सवैया ॥ बहु बीर हने लखि कै रन मै बर बीर बडे अति कोप भरे । जदुबीर के ऊपर आइ परे हठि के मन मै नही नैकु डरे । सभ शस्त्र सँभार प्रहार करै कबि स्याम कहै नही पैगु टरे । ब्रिजनाथ सरासन लै तिन के सर एक ही एक सो प्रान हरे ॥ १८०३ ॥ ॥ सवैया ॥ बहु भूमि गिरे बरबीर जबै जेऊ सूर रहै मन कोपु पगै । ब्रिज (मू०ग्रं०४८२) नाथ निहार उचारत यों सभ गूजर पूत ते कउन भगै । अब याकहु मारत है रन मै मन मै रस बीर मिले उमगै । जदुबीर के तीर छुटे ते डरे भट जिउँ कोऊ सोवत चउक जगै ॥ १८०४ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ लियो पान संभार कै चक्र भगवान जू क्रोध कै शत्रु की सैन कुट्टी । महो

दौड़-दौड़कर कृपाणों से प्रहार कर रहे हैं ॥ १८०० ॥ ॥ दोहा ॥ वीरों ने शस्त्र सँभालकर श्रीकृष्ण को चारों ओर से ऐसे घेर लिया है जैसे बाड़ खेत को, अँगूठी उसमें जड़े नग को और सूर्य-चंद्र का मंडल सूर्य-चन्द्र को घेरे रहता है ॥ १८०१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण को घेर लिया गया तो उन्होंने धनुष बाण हाथ में पकड़ा। शत्रु-सेना में घुसकर उन्होंने पल भर में अनंत सेना को मार डाला। इस प्रवीणता से उन्होंने युद्ध किया कि लाश पर लाश पट गई। जो भी शत्रु सामने आया श्रीकृष्ण ने उसे जीवित नहीं जाने दिया ॥ १८०२ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुत सी सेना को मारे जाते देखकर कई महाबली अत्यन्त क्रोधित हो उठे और हठपूर्वक अभय होकर श्रीकृष्ण पर टूट पड़े। सब शस्त्रों को सँभालकर प्रहार करने लगे और एक भी क़दम पीछे नहीं हट रहे थे। श्रीकृष्ण ने धनुष लेकर एक ही एक बाण से उनके प्राण हर लिये ॥ १८०३ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुत से सैनिकों को धराशायी होते देखकर शूरवीर क्रोधित हो उठे और श्रीकृष्ण को देखकर कहने लगे कि इस ग्वाले के पुत्र से कौन डरकर भागेगा? हम अभी इसे युद्धभूमि में मार डालेंगे। परन्तु यदुवीर श्रीकृष्ण के तीर छूटते ही सबका भ्रम टूट गया और ऐसा लगा मानो वीर निद्रा से चौंककर जगे हों ॥ १८०४ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ भगवान

चाल कीनो दसो नाग भागे रमानाथ जागे हरहि डीठ छुट्टी। घनी मार संघार बिदार दीनी घनीस्याम को देखकै सैन फुट्टी। ऐसे स्याम भाखै महाँ सूरमो की तहाँ आपनो जीत की आस तुट्टी ॥ १८०५ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ घनी मार माची तहा काल नाची घने जुद्ध कउ छाडिकै बीर भागे। क्रिशन बान कमान के लागते ही ऐसे स्याम भाखै घन्यो प्रान त्यागे। घन्यो हाथ काटे गिरे पेट फाटे फिरै बीर संग्राम मै बान लागे। घन्यो घाइ लागे बसत्र स्रउन पागे मनो पहिन आए सभै लाल बागे ॥ १८०६ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ जबै स्याम बलराम संग्राम म्याने लियो पान संभारकै चक्र भारी। केऊ बान कमान को तान धाए केऊ ढाल त्रिसूल मुगदर कटारी। जरासिंध की फउज मै चाल पारी बली दउरकै ठउर सैना सँघारी। दुहू ओर ते सार मै सार बाज्यो छुटी मैन के शत्रु की नैन तारी ॥ १८०७ ॥ मची मार घमकार तरवार बरछी गदा छुरी जमधरन अर दल सँघारे। बढी स्रउन सरता बहे जात गज बाज रथ मुंड करि सुंड भट तुंड न्यारे। बसे भूत बैताल

ने क्रोधित होकर चक्र हाथ में लिया और शत्रु की सेना को काट डाला। युद्ध की भीषणता से पृथ्वी हिल गई, दसों नाग भाग खड़े हुए, विष्णु निद्रा से जग गए और शिव का भी ध्यान छूट गया। श्रीकृष्ण ने बादलों के समान उमड़ती सेना को मार दिया और कितनी ही सेना श्रीकृष्ण को देखकर खंड-खंड हो गई। कवि श्याम का कथन है कि वहाँ वीरों को अपनी जीत की आशा समाप्त हो गई ॥ १८०५ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ वहाँ घनघोर युद्ध मच गया, मृत्यु नाचने लगी और वीर युद्ध को छोड़कर भाग खड़े हुए। कृष्ण के बाण-कमान के लगते ही अनेकों ने प्राण त्याग दिए। अनेकों, घावों को खाकर ऐसे लग रहे हैं मानो लाल वस्त्र पहनकर वे लोग आए हों ॥ १८०६ ॥ ॥ झूलना छंद ॥ जब कृष्ण-बलराम ने चक्र और कृपाण हाथ में लिये, तो कोई धनुष-बाण को तानकर चला और कोई ढाल, त्रिशूल, मुगदर, कटार सँभालकर चला। जरासंध की सेना में हलचल मच गई, क्योंकि महाबली श्रीकृष्ण ने दौड़-दौड़कर सेना का संहार किया। दोनों ओर से लोहे पर लोहा बजने लगा और युद्ध की विकरालता के कारण शिव का भी ध्यान भंग हो गया ॥१८०७॥ तलवार, बरछी, गदा, छुरी, जमदाढ़ आदि से भीषण मार मची और शत्रुदल का संहार होने लगा। खून की बहती नदी में बाढ़ आ गई और हाथी, घोड़े, रथ, मुंड और हाथियों की सूँडें उसमें बहती हुई दिखाई देने लगीं। भूत

भैरवि भगी जुग्गनी पैर खप्पर उलट उर सुधारे। भने राम संग्राम अति तुमल दारन भयो मोन तजि शिव ब्रहम जिय डरारे॥ १८०८॥ ॥ स्वैया॥ जब स्याम सु पउरख एतो कियो अरु सैनहु ते भट एक पुकार्‌यो। कान्ह बडो बलवंड प्रचंड घमंड कियो अति नैकु न हार्‌यो। ताते अबै भजिऐ तजिऐ रन याते न कोऊ बच्यो बिन मार्‌यो। बालक जानकै भूलहु रे जिन केसन ते गहि कंस पछार्‌यो॥ १८०९॥ ॥ स्वैया॥ ऐसो उचार सभै सुनिकै चित मै अति शंकति मान भए है। काइर भाजन को मन कीनो है सूरन को मन कोप तए है। बान कमान क्रिपानन लै करि मान भरे भट आइ खए है। स्याम लयो (मू०ग्रं०४८३) असि पान सँभार हकारि बिदारि सँघारि दए है॥ १८१०॥ ॥ स्वैया॥ एक भजे लखि भीर परी जदुबीर कही बलबीर सँभारो। शस्त्र जिते तुमरे पहि है जु अरै अरि ताहि हकार सँघारो। धाइ निशंक परो तिह ऊपरि शंक कछू चित मै न बिचारो। भाजत जात जिते रिपु है तिह पास के संग ग्रसे जिन मारो॥ १८११॥ ॥ स्वैया॥ स्री ब्रिजराज के आनन ते मुसलीधर बैन इहै सुन

बैताल, भैरवि त्रस्त हो गए और योगिनियाँ भी खप्पर उलटकर भाग खड़ी हुईं। कवि राम का कथन है कि इस दारुण संग्राम में शिव और ब्रह्मा भी अपनी समाधि तोड़कर भयभीत हो उठे॥ १८०८॥ ॥ सवैया॥ जब श्रीकृष्ण ने इतनी वीरता दिखाई तो शत्रु-सेना से एक वीर चिल्लाया कि कृष्ण बहुत प्रचंड वीर है और युद्ध में ज़रा भी नहीं हार रहा है। अब रण छोड़कर भागो, क्योंकि कोई भी अब बिना मरे नहीं बचेगा। इसे बालक समझकर भ्रम में मत पड़ो, यह वही कृष्ण है जिसने कंस को केशों से पकड़कर पछाड़ दिया था॥ १८०९॥ ॥ सवैया॥ यह सुनकर सभी मन में शंकित हो उठे। कायरों का मन तो भागने को हुआ परन्तु शूरवीर क्रोधित हो उठे। बाण-कृपाण और धनुष आदि लेकर गर्वपूर्ण वीर एक-दूसरे से भिड़ गए हैं। श्रीकृष्ण ने हाथ में कृपाण लेकर सभी को ललकारा और उनका संहार कर दिया॥ १८१०॥ ॥ सवैया॥ युद्ध की विपत्तिपूर्ण स्थिति में भागते हुओं को देखकर श्रीकृष्ण ने बलराम से कहा कि तुम स्थिति को सँभालो और अपने सभी शस्त्रों को पकड़कर शत्रु को ललकारकर मार डालो। इन पर निस्संकोच टूट पड़ो और जितने शत्रु भाग रहे हैं उनका वध न करके उन्हें फाँसकर पकड़ लो॥१८११॥ ॥ सवैया॥ श्रीकृष्ण के मुँह से यह बात सुनकर बलराम

धाए । मूसल अउ हल पान लयो बल पास सुधारकै पाछे ही धाए । भाजत शत्रनि को मिलकै गह डार दई रिपु हाथ बँधाए । एक लरे रन माँझ मरे इक जीवत जेल कै बंध पठाए ॥ १८१२ ॥ ॥ स्वैया ॥ स्री जदुबीर के बीर तबै अरि सैन के पाछे परे अस धारे । आइ खए सोऊ मार लए तेऊ जान दए जिन इउ कह्यो हारे । जो न टरे कबहू रन ते अरि ते बलदेव के बिक्रम टारे । भाज गए बिसंभार भए गिरगे कर ते करवार कटारे ॥ १८१३ ॥ ॥ स्वैया ॥ जो भट ठाढे रहे रन मै तेऊ दउर परे तिह ठउर रिसै कै । चक्र गदा असि लोह हथी बरछी परसे अर नैन चितै कै । नैकु डरै नही धाइ परै भट गाज सभै प्रभ काज जितै कै । अउर दुहू दिस जुद्ध करै कबि स्याम कहै सुरधाम हितै कै ॥ १८१४ ॥ ॥ स्वैया ॥ पुन जादव धाइ परे इतते उतते मिलिकै अरि सामुहि धाए । आवत ही तिन आपसि बीच हकार हकार प्रहार लगाए । एक मरे इक सास भरे तरफै इक घाइल भू पर आए । मानो मलंग अखारन भीतर लोटत है बहु भाँग चड़ाए ॥ १८१५ ॥ ॥ कबित ॥ बडे स्वामकार जो अटल सूर

हाथ में हल और मुगदर लेकर सेना के पीछे दौड़ पड़े । भागते हुए शत्रुओं के पास पहुँचकर बलराम ने अपनी फाँस से उनके हाथ बाँध लिये । कई लड़े और मर गए और कइयों को जीवित ही बंदी बना लिया ॥ १८१२ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के वीर खड्ग पकड़कर शत्रु-सेना के पीछे दौड़े । जो भिड़े उनको मार डाला गया और जिसने हार मान ली उसको छोड़ दिया गया । जो शत्रु कभी भी युद्ध से पीछे नहीं हटे थे, उन्हें बलराम के बल के सामने पीछे हटना पड़ा । वे कायर होकर धरती पर बोझ बनकर भाग खड़े हुए और उनके हाथों से तलवार-कटारें छूट गयीं ॥ १८१३ ॥ ॥ सवैया ॥ जो योद्धा युद्धभूमि में खड़े रहे वे अब क्रोधित होकर चक्र, गदा, कृपाण, बरछी फरसा आदि लेकर टूट पड़े । सभी अभय होकर गर्जना करते हुए श्रीकृष्ण को जीतने के लिए दौड़ पड़े । दोनों ओर से स्वर्ग की प्राप्ति के लिए भीषण युद्ध होने लगा ॥ १८१४ ॥ ॥ सवैया ॥ पुनः इधर से यादव और उधर से शत्रु एक-दूसरे के सामने हो भिड़े और परस्पर गुत्थमगुत्था होकर ललकार कर एक-दूसरे पर वार करने लगे । कई मर गए, कई घायल हो तड़फने लगे और कई धराशायी हो गए । ऐसा लग रहा था मानो पहलवान अत्यधिक भाँग पीकर अखाड़े में लोट रहे हों ॥ १८१५ ॥ ॥ कवित्त ॥ युद्ध में बड़े-बड़े

आहव मै शत्रनि के सामुहे ते पैगु न टरत है। बरछी क्रिपान लै कमान बान सावधान ताही समै चित मै हुलास कै लरत है। जूझकै परत भवसागर तरन भानमंडल कउ भेद ध्यान बैकुंठ करत है। कहै कबि स्याम प्रान आगे कउ धसत ऐसे जैसे नर पैर पैर कारी पै धरत है ॥ १८१६ ॥ ॥ स्वैया ॥ इह भाँति को जुद्ध भयो लखिकै भट क्रुद्धत ह्वै रिप ओर चहे। बरछी कर बान कमान क्रिपान गदा परसे तिरसूल गहे। रिपु सामुहि धाइकै घाइ करै न (मू०ग्रं०४८४) टरै बर तीर सरीर सहे। पुरजे पुरजे तन ह्वै रन मै दुखु तो मन मै मुख ते न कहे ॥ १८१७ ॥ ॥ सवैया ॥ जे भट आइ अयोधन मै करि कोप भिरे नहि शंक पधारे। शस्त्र सँभार सभै कर मै तन सउहे करै नहि प्रान पिआरे। रोस भरे जोऊ जूझ मरे कबि स्याम ररे सुर लोग सिधारे। ते इह भाँति कहै मुख ते सुर धाम बसे बडभाग हमारे ॥ १८१८ ॥ ॥ सवैया ॥ एक अयोधन मै भट यों अरिकै बरिकै लरि भूमि परै। इक देख दशा भट आपन की कबि स्याम कहै जिय कोप लरै। तब

शूरवीर स्थिर होकर लड़ रहे हैं और शत्रु के सामने से एक क़दम भी पीछे नहीं हट रहे हैं। वे बरछी, कृपाण, बाण आदि हाथ में लेकर उल्लासपूर्वक सावधान होकर लड़ रहे हैं। भवसागर पार करने के लिए वे जूझ-मर रहे हैं और सूर्यमंडल को भेदकर बैकुंठधाम में जाकर बस रहे हैं। जैसे गहरे स्थान पर पैर आगे धँसता ही जाता है वैसे ही कवि के कथनानुसार वीर आगे की तरफ़ बढ़ते ही जा रहे हैं ॥ १८१६ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार का युद्ध देखकर वीर क्रोधित होकर शत्रु की तरफ़ देख रहे हैं। उन्होंने हाथों में बरछी, बाण, कमान, कृपाँण, गदा, त्रिशूल आदि पकड़ रखे हैं। वे अभय होकर शत्रु के सामने जाकर उन पर वार कर रहे हैं और उनके वार अपने शरीर पर सह रहे हैं। शरीर खंड-खंड होकर बिंध चुका है, परन्तु फिर भी वीर मुख से 'हाय' तक का उच्चारण नहीं करते ॥ १८१७ ॥ ॥ सवैया ॥ जो वीर युद्ध-स्थल में अभय एवं निस्संकोच होकर भिड़ गए और प्राणों का मोह छोड़कर शस्त्र सँभालकर लड़े; जो क्रोध में युद्धस्थल में जूझ मरे, कवि का कथन है कि सब स्वर्गलोक में जा बैठे। वे सभी वीर अपना इस बात के लिए अहोभाग्य मान रहे हैं कि वे सभी स्वर्ग में आवास कर रहे हैं ॥१८१८॥ ॥ सवैया ॥ कोई वीर तो युद्धभूमि में लड़ते-लड़ते धराशायी हो गए और कोई अपनों की यह दुर्दशा देखकर क्रोधित होकर लड़ने लगा और शस्त्र सँभालकर श्रीकृष्ण पर

शस्त्र सँभार हकार परै घनिस्याम सो आइ अरै न टरै। तजि शक लरै रन माझ मरै ततकाल बरंगन जाइ बरै। १८१९ ॥ ॥ सवैया ॥ इक जूझ परे इक देखि डरे इक तउ चित मै अति कोप भरै। कहि आपने आपुने स्वारथी सो सु धवाइकै स्यंदन आइ अरै। तरवार कटारन संग लरै अति संघर मो नहि शंक धरै। कबि स्याम कहै जदुबीर के सामुहि मारिही मारि करै न टरै ॥ १८२० ॥ जब यौ भट आवत स्री हरि सामुहि तउ सभ ही प्रभ शस्त्र सँभारे। कोप बढाइ चिते तिन कउ इक बार ही बैरन के तन झारे। एक हने अरि पाइन सो इक दाइन सो गहि भूमि पछारे। ताही समै तिह आहव मे बहु सूर बिना कर प्रानन डारे ॥ १८२१ ॥ ॥ सवैया ॥ एक लगे भट घाइन के तज देह को प्रान गए जम के घर। सुंदर अंग सु एकनि के कबि स्याम कहै रहे स्रोनत सो भर। एक कबंध फिरै रन मै जिनको ब्रिजनाइक सीस कटे बर। एक सु शंकति ह्वै चित मै तज आहव को न्रिप तीर गए डर ॥ १८२२ ॥ ॥ सवैया ॥ भाज तबै भट आहव ते मिल भूप पै जाइकै ऐसे पुकारे। जेते सु बीर पठे तुम राज गए हरि पै हथिआर सँभारे। जीत न कोऊ सकै तिह को हम तौ सभ ही बल कै रन हारे।

ललकारते हुए टूट पड़ा। वीर शंकारहित होकर युद्ध में जूझ गए और अप्सराओं का वरण करने लगे ॥ १८१९ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई जूझ गया, कोई गिर पड़ा और कोई क्रोधित हो उठा। अपने-अपने सारथियों से रथ हँकवा कर योद्धा एक-दूसरे के सामने आ अड़े हैं और अभय होकर तलवार-कटारों के साथ युद्ध कर रहे हैं। वे श्रीकृष्ण के सामने भी बिना किसी डर के 'मार-मार' की पुकार के साथ लड़ रहे हैं ॥ १८२० ॥ वीरों को सामने आता देखकर श्रीकृष्ण ने शस्त्र सँभाले और क्रोधित होकर शत्रुओं पर बाण-वर्षा की। कइयों को पाँवों से रौंद दिया और कइयों को हाथों से पकड़कर भूमि पर पछाड़ दिया तथा अनेकों वीरों को युद्धभूमि में निष्प्राण कर दिया ॥ १८२१ ॥ ॥ सवैया ॥ कई वीर घाव खाकर यमलोक सिधार गए। कइयों के सुंदर अंग रक्त से लथपथ हो गए। सिर कटे वीर कई कबंधों के रूप में युद्ध में विचरण कर रहे हैं और कई युद्ध से भयभीत होकर युद्ध को त्यागकर राजा के पास पहुँच गए ॥ १८२२ ॥ ॥ सवैया ॥ सभी वीर युद्ध त्यागकर राजा (जरासंध) के पास पहुँचे और कहने लगे कि हे राजा! जितने भी शस्त्रों से सुसज्जित वीर तुमने भेजे थे वे सभी हार गए हैं और हममें से कोई भी जीत

बान कमान सु तानकै पान सभै तिन प्रान बिना करि डारे ॥ १८२३ ॥ ॥ सवैया ॥ इउ न्रिप कउ भट बोल कहै हमरी बिनती प्रभ जू सुनि लीजै । आहव मंत्रिन सउप चलो ग्रहि को सिगरे पुर को सुख दीजै । आज लउ लाज रही रन मै सम जुद्ध भयो अजे बीर न छीजै । स्याम ते जुद्ध (मू०ग्रं०४८५) की स्याम भनै सुपनेहू मै जीत की आस न कीजै ॥ १८२४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जरासिंध ए बचनि सुनि रिसि करि बोल्यो बैन । सकल सु भट हरि कटिक के पठऊ जम के ऐन ॥ १८२५ ॥ ॥ सवैया ॥ का भयो जो मघवा बलबंड है आज हउ ताही सो जुधु मचैहो । भान प्रचंड कहावत है हनि ताही को हउ जमधाम पठैहो । अउ जु कहा शिव मै बलु है मरिहै पल मै जब कोप बढैहो । पउरख राखत हउ इतनो कहा भूप ह्वै गूजर ते भजि जैहो ॥ १८२६ ॥ ॥ सवैया ॥ इउ कहिकै मन कोप भर्यो चतुरंग चमूं जु हुती सु बुलाई । आइ है शस्त्र सँभार सभै संग स्याम मचावन काज लराई । छत्र तनाइकै पीछे चल्यो न्रिप सैन सभै तिह आगे सिधाई । मानहु पावस की रित मै घनघोर

नहीं सका है। उन्होंने (श्रीकृष्ण ने) बाण-कमानों से सभी को निष्प्राण कर दिया है ॥ १८२३ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार वीरों ने राजा से कहा कि हे राजन् ! हम लोगों की एक प्रार्थना सुन लीजिए। यह युद्ध मंत्रियों को सौंप कर घर वापस चलो और सभी नगरवासियों को सुख प्रदान करो। आज तक आपकी इज्जत तो बची ही रही है और आपका श्रीकृष्ण से आमने-सामने युद्ध नहीं हुआ है और आपकी वीरता की गरिमा का क्षय नहीं हुआ है। वैसे श्रीकृष्ण से युद्ध में विजय की आशा सपने में भी नहीं की जानी चाहिए ॥ १८२४ ॥ ॥ दोहा ॥ जरासंध यह वचन सुनकर क्रोधित होकर बोला कि मैं श्रीकृष्ण की सेना के सभी वीरों को यमपुरी भेज दूँगा ॥ १८२५ ॥ ॥ सवैया ॥ यदि इन्द्र भी बलवान बनकर आज आ जाए तो मैं उससे भी युद्ध करूँगा; सूर्य अपने को बलशाली समझता है, मैं उसे भी युद्ध कर यमलोक में पहुँचा दूँगा। मेरे क्रोध के सामने बली शिव भी नष्ट हो जायगा। मेरे में इतना बल है तो क्या मैं अब राजा होकर एक ग्वाले के सामने भाग खड़ा होऊँ ॥ १८२६ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर राजा ने क्रोधित होकर अपनी चतुरंगिणी सेना को संबोधित किया। सारी सेना शस्त्र सँभालकर श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिए तत्पर हो उठी। सेना आगे-आगे चली और छत्र तनवाकर राजा पीछे-पीछे चला यह दृश्य ऐसा लग रहा था मानो वर्षा

घटा घुर कै उमडाई ॥ १८२७ ॥ ॥ भूप बाच हरि सो ॥ ॥ दोहरा ॥ भूप तबै हरि हेरिकै ऐसे कह्यो सुनाइ । तू गुआर छत्रीन सो जूझ करैगो आइ ॥ १८२८ ॥ ॥ क्रिशन बाच न्रिप सो ॥ ॥ सवैया ॥ छत्री कहावत आपन को भजिहो तबही जब जुद्ध मचैहो । धीर तबै लखिहो तुमको जब भीर परै इक तीर चलैहो । मूरछ ह्वै अबही छित मै गिरहो नहि स्यंदन मै ठहरैहो । एकह बान लगे हमरो नभमंडल पै अब ही उड जैहो ॥ १८२९ ॥ ॥ सवैया ॥ इउ जब बैन कहै ब्रिजभूखन तउ मन मै न्रिप कोप बढायो । सारथीआयन को कहिकै रथ तउ जदुराइ की ओर धवायो । चाँप चढाइ महाँरिस खाइकै लोहित बान सु खैंच चलायो । स्री गरड़ासनि जानकै स्याम मनो दुहबे कहु तच्छक धायो ॥१८३०॥ ॥ सवैया ॥ आवत ता सर को लखि कै ब्रिजनाइक आपने शस्त्र सँभारे । कान प्रमान लउ खैंच कमान चलाइ दए जिनके परकारे । भूप सँभारकै ढाल लई तिह मद्ध लगै नहि जात निकारे । मानहु सूरज के ग्रसबे कहु राह के बाहन पंख पसारे ॥ १८३१ ॥ ॥ सवैया ॥ भूपत पान कमान लई

ऋतु में घनघोर घटा उमड़कर चली आ रही हो ॥ १८२७ ॥ ॥ भूप उवाच श्रीकृष्ण के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ राजा ने तब कृष्ण को देखकर कहा कि तुम ग्वाले होकर क्षत्रियों से क्या युद्ध करोगे ॥ १८२८ ॥ ॥ कृष्ण उवाच राजा के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ तुम अपने आपको क्षत्रिय कहलाते हो; मैं अभी युद्ध करूँगा और तुम भाग खड़े होओगे । मैं तुम्हारे धैर्य को तभी देखूँगा जब तुम मुसीबत में पड़ोगे और एक भी बाण न चला सकोगे । अभी तुम मूच्छित होकर धरती पर गिर पड़ोगे और रथ में टिके नहीं रह सकोगे । मेरे एक ही बाण के प्रहार से तुम नभमंडल में उड़ जाओगे ॥ १८२९ ॥ ॥ सवैया ॥ ज श्रीकृष्ण ने यह कहा तो राजा मन में क्रोधित हो उठा और उसने अपना र श्रीकृष्ण की ओर हँकवाया । धनुष चढ़ाकर उसने ऐसा बाण चलाया मानो श्रीकृष्ण रूपी गरुड़ को बाँधने के लिए तक्षक नाग चला आ रहा हो ॥१८३०॥ ॥ सवैया ॥ उस बाण को आते देखकर श्रीकृष्ण ने अपने शस्त्र सँभाले और कान तक धनुष खींचकर बाण चला दिए । राजा ने ढाल सँभाली । उसमें बाण लग गए और निकालने से भी नहीं निकल पा रहे थे । यह ऐसा लग रहा था मानो सूर्य को निगलने के लिए बढ़ते राहु के वाहन ने पंख फैलाए हो ॥ १८३१ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने धनुष-बाण हाथ में लिया और श्रीकृष्ण

ब्रिजनाइक कउ लखि बान चलाए । इउ छुटके कर केबर ते उपमा तिनकी कबि स्याम सुनाए । मेघ की बूँदन जिउं बरखे सर स्री ब्रिजनाथ के ऊपर आए । मानहु सूरन ही सर सो तिह भच्छन को (मू०ग्रं०४८६) सलभा मिलि धाए ॥ १८३२ ॥ ॥ सवैया ॥ जो सर भूप चलावत है तिन को ब्रिजनाइक काट उतारे । फोकन ते फल ते मधि ते पल मै कर खंडन खंड कै डारे । ऐसिय भाँति परे छित मै मनो बीज को ईख किसान निकारे । स्याम के बान सिचान समान मनो अरि बान बिहंग संघारे ॥ १८३३ ॥ ॥ दोहरा ॥ एक ओर स्रीहरि लरे जरासिंध के संग । दुती ओर बल हल गहे हनी सैन चतुरंग ॥ १८३४ ॥ ॥ सवैया ॥ बल पान लए सु क्रिपान संघारत बाज करी रथ पैदल आयो । मार हरउल भजाइ दए न्रिप गोल के मद्धि पर्यो तब धायो । एक किए सु रथी बिरथी अरि एकन को बहु घाइन घायो । स्याम भनै सभ सूरन को इह भाँति हली पुरखत्त दिखायो ॥ १८३५ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोध भर्यो रन मौ अति क्रूर सु पान के बीच क्रिपान लिए । अभिमान सो डोलत है रन भीतर आन को आनत है न हिए । अति ही रस रुद्र के बीच छक्यो कबि

को लक्ष्य बनाकर बाण चलाए । राजा के हाथों से बाण ऐसे छूटे और श्रीकृष्ण पर बरसने लगे मानो मेघों में से बूंदें बरस रही हों। ऐसा लग रहा था मानो बाणों के रूप में पतंगे शूरवीरों की क्रोधाग्नि को खाने के लिए दौड़े चले आ रहे हों ॥१८३२॥ ॥ सवैया ॥ राजा जितने बाण चलाता है उन्हें श्रीकृष्ण काट डाल रहे हैं और बाणों के फल और मध्य भागों को क्षण भर में ऐसे खण्ड-खण्ड कर दे रहे हैं मानो किसान ने बोने के लिए ईख को खण्ड-खण्ड करके रखे हों। कृष्ण के बाण बाज़ के समान हैं और ये बाण शत्रु रूपी पक्षियों का संहार कर रहे हैं ॥ १८३३ ॥ ॥ दोहा ॥ एक ओर तो जरासंध के साथ श्रीकृष्ण लड़ रहे हैं तथा दूसरी ओर महाबली बलराम हाथ में हल लेकर सेना का नाश कर रहे हैं ॥ १८३४ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने हाथ में कृपाण लेकर घोड़े, हाथी, रथी और पैदलों का संहार किया तथा राजाओं के समूह में टूट पड़कर अपने हल से उन सबको मार भगाया। कई रथियों को रथ-विहीन कर दिया और अनेकों को घायल कर दिया। कवि श्याम का कथन है कि इस प्रकार बलराम ने शूरवीरों को अपना पौरुष दिखाया ॥ १८३५ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथ में कृपाण ले क्रोध से भरकर युद्ध में बलराम गर्वपूर्वक विचर रहे हैं और

स्याम कहै मद पान पिए । बलभद्र सँघारत शत्र फिरै जम को सु भयानक रूप किए ॥ १८३६ ॥ सीस कटै अरि बीरन के अति ही मन भीतर कोप भरे है । केतन के पद पान करे अरि केतन के तन घाइ करे है । जे बलबंड कहावत है निज ठउर को छाडिकै दउर परे है । तीर सरीरन बीच लगे भट मानहु सेह सरूप धरे है ॥ १८३७ ॥ ॥ सवैया ॥ इत ऐसे हलायुध जुद्ध कियो उति स्री ब्रिजभूखन कोपु बढायो । जो भट साम्हुहि आइ गयो सोऊ एक ही बान सो मार गिरायो । अउर जितो न्रिपसैन हुतो सु निमेख बिखै जमधाम पठायो । काहू न धीर धर्यो चित मै भजिगे जब स्याम इतो रन पायो ॥ १८३८ ॥ ॥ सवैया ॥ जे भट लाज भरे अति ही प्रभ कारज जान कै कोप बढाए । शंकहि त्याग अशंकत हुइ सु बजाइ निशाननि को समुहाए । सारंग स्री ब्रिजनाथ लै हाथ सु खैंच चढाइकै बान चलाए । स्याम भनै बलबंड बडे सर एक ही एक सौ मार गिराए ॥ १८३९ ॥ ॥ चौपई ॥ जरासिंध को दलु हरि मार्यो । भूपति को सभ गरब उतार्यो । अबि कहु कउन उपावह करो । रन मै आज जूझ ही मरो ॥ १८४० ॥

किसी की भी परवाह नहीं कर रहे हैं। रौद्र-रस में मस्त मद्यपान करनेवाले के समान वे दिखाई दे रहे हैं और यमराज का भयंकर रूप धारण कर वे शत्रुओं का संहार कर रहे हैं॥ १८३६ ॥ क्रोधित होकर शत्रुओं के सिर काट डाले गए। बहुतों के हाथ पैर कट गए हैं और बहुतों के तन के अन्य भागों पर घाव लगे हैं। अपने आपको महाबली कहलानेवाले अपने स्थान छोड़ भाग खड़े हुए हैं और बाण लगे हुए वीर साही जन्तु के समान दिखाई पड़ रहे हैं॥ १८३७ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर इस प्रकार बलराम ने युद्ध किया और उधर श्रीकृष्ण ने क्रोधित हो जो भी वीर सामने आया उसे एक ही बाण से मार गिराया। राजा की जितनी भी सेना की उसे क्षण भर में यमलोक पहुँचा दिया और श्रीकृष्ण के इस प्रकार के युद्ध को देखकर धैर्य का त्याग कर सभी भाग खड़े हुए॥ १८३८ ॥ ॥ सवैया ॥ जो वीर लज्जा का अनुभव कर रहे थे वे भी अब कृष्ण को हराने के उद्देश्य से क्रोधित हो उठे तथा शंका का त्याग कर नगाड़े बजाते हुए सामने आ गए। श्रीकृष्ण ने धनुष हाथ में पकड़कर बाण चलाये और एक-एक बाण से एक सौ शत्रुओं को मार गिराया॥ १८३९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जरासंध का दल श्रीकृष्ण ने मार गिराया और इस प्रकार राजा का गर्व चूर कर दिया। राजा ने सोचा कि अब

इउ (मू०ग्रं०४८७) चित चित धनख कर गह्यो । प्रभ के संग जूझि पुनि चह्यो । पहर्‍यो कवच सामुहे धायो । स्याम भनै मन कोप बढायो ।। १८४१ ।। ।। दोहरा ।। जरासिंध रन भूमि मै बान कमान चढाइ । स्याम भनै तब क्रिशन सो बोल्यो भउह तनाइ ।। १८४२ ।। ।। न्रिप जरासिंध बाच कान्ह सो ।। ।। सवैया ।। जो बल है तुम मै नंदनंदन सो अब पउरख मोहि दिखइयै । ठाढो कहा मुहि ओर निहारत मारत हो सर भाज न जइयै । कै अब डार हथियार गवार सँभार कै मो संग जूझ मचइयै । काहे कउ प्रान तजै रन मै बन मै सुख सो बछ गाइ चरइयै ।। १८४३ ।। ।। सवैया ।। ब्रिजराज भनै कबि स्याम भनै उह भूप के बैन सुने जब ऐसे । स्री हरि के उर मै रिसि यो प्रगटी परसे घ्रित पावक तैसे । जिउँ म्रिगराज स्रिगाल की कूक सुने बन हूँक उठे मन वैसे । ज्यों मटकी अरि की बतिया खटकै पग मै अट कंटक जैसे ।। १८४४ ।। ।। सवैया ।। क्रुद्धत ह्वै ब्रिजराज इतै सु घने लखिकै तिह बान चलाए । कोप उतै धनु लेत भयो न्रिप स्याम भनै दोऊ नैन तचाए । जो सर आवत भ्यो हरि ऊपरि सो छिन मै सभ काटि

क्या उपाय करूँ और कैसे आज ही युद्ध में जूझ मरूँ ।। १८४० ।। यह सोचकर उसने धनुष हाथ में पकड़ा और श्रीकृष्ण से पुनः युद्ध करने का विचार किया। वह कवच पहनकर क्रोधित हो सामने आया ।। १८४१ ।। ।। दोहा ।। जरासंध तब युद्धभूमि में धनुष-बाण लेकर और भृकुटि चढ़ाकर श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा ।। १८४२ ।। ।। राजा जरासंध उवाच कृष्ण के प्रति ।। ।। सवैया ।। हे कृष्ण ! यदि तुममें कोई बल-पौरुष है तो मुझे दिखाओ। तुम मेरी ओर खड़े हो क्या देख रहे हो। मैं तुम्हें बाण मार रहा हूँ, कहीं भाग मत जाना। हे मूर्ख यादव ! तुम हथियार डाल दो अन्यथा बहुत सोच-समझकर मुझसे युद्ध करना। तुम युद्ध में क्यों प्राणों का त्याग करना चाहते हो। जाओ और सुखपूर्वक वन में गाय-बछड़े चराओ ।। १८४३ ।। ।। सवैया ।। जब श्रीकृष्ण ने राजा की ये बातें सुनी तो उनके मन में क्रोध उसी प्रकार प्रज्वलित हो उठा जैसे घी डाले जाने पर आग धधक उठती है अथवा जैसे गीदड़ों की चिल्लाहट सुनकर शेर क्रोधित हो उठता है अथवा कपड़ों में काँटों के चुभ जाने से जैसे मन क्षुब्ध हो उठता है ।। १८४४ ।। ।। सवैया ।। इधर श्रीकृष्ण क्रोधित हो रहे हैं और उन्होंने अनेकों बाण चलाये। उधर राजा ने क्रोधित हो आँखें लाल करते हुए धनुष हाथ में लिया। जो तीर श्रीकृष्ण पर आ रहे हैं उन्हें

गिराए। स्री हरि के सर भूपति कै तन कँउ तनको नहि भेटन पाए ॥ १८४५ ॥ ॥ सवैया ॥ इत सो न्रिप जूझि करै हरि सिउ उत ते मुसली इक बैन सुनायो। मार बिदार दए तुमरे भट तै मन मै नही नैक लजायो। रे न्रिप काहे कउ जूझ मरै फिर जाहु घरै लर का फल पायो। ता ते बडो जढहै न्रिग भूपति केहरि सो रन जीतन आयो ॥ १८४६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जिह सुभटनि बलि लरत है ते सभ गए पराइ। कै लरि मरि कै भाजि सठि कै पर हरि के पाइ ॥ १८४७ ॥ ॥ जरासिंध न्रिप बाच हली सो ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा भयो मम ओर के सूर हने संग्राम। लरबो मरबो जीतबो इह सुभटनि के काम ॥ १८४८ ॥ ॥ सवैया ॥ यों कहिकै मन कोप भर्यो तब भूप हली कहु बानु चलायो। लागति ही नट साल भयो तन मै बलभद्र महां दुखु पायो। मूरछ ह्वै करि स्यंदन बीच गिर्यो तिह को कबि ने जसु गायो। मानहु बान भुजंग डस्यो धनु धाम सभै मन ते बिसरायो ॥१८४९॥ ॥ सवैया ॥ (मू०ग्रं०४८८) बहुरो चित चेत भयो बलदेव चितै अरि को अति कोप बढायो। भारी गदा गहिकै करि मै न्रिप के बध कारन ता रन आयो। पाउ

पल भर में श्रीकृष्ण ने काट गिराया और श्रीकृष्ण के बाण राजा को छू तक नहीं पा रहे हैं ॥ १८४५ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर राजा श्रीकृष्ण से जूझ रहा है और उधर बलराम ने राजा से कहा कि हमने तुम्हारे वीर मार डाले हैं परन्तु तुमको फिर भी लज्जा नहीं आती। हे राजन्! तुम जाओ अपने घर लौट जाओ। लड़ाई का फल तुमको क्या प्राप्त होगा। हे राजा! तुम मृग के समान हो और सिंह से युद्ध जीतने का स्वप्न देख रहे हो ॥ १८४६ ॥ ॥ दोहा ॥ जिन वीरों के बल पर तुम लड़ रहे हो वे सब भाग खड़े हुए, इसलिए हे मूर्ख! या तो लड़ते-मरते हुए भाग जाओ या श्रीकृष्ण के चरण पकड़ लो ॥१८४७॥ ॥ जरासंध उवाच बलराम के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ क्या हुआ यदि मेरी तरफ़ के वीर युद्ध में मारे जा चुके हैं। लड़ना, मरना और जीतना यही तो वीरों के काम हैं ॥ १८४८ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कह क्रोधित होकर राजा ने बलराम पर बाण चलाया जिसके शरीर में लगते ही बलराम को अत्यन्त कष्ट हुआ। बलराम मूर्च्छित हो इस प्रकार रथ के बीच में गिर पड़े मानो उसे बाण रूपी सर्प ने डस लिया हो और वह धनधाम सबको भूलकर गिर पड़े हों ॥ १८४९ ॥ ॥ सवैया ॥ जब बलराम को वापस होश आया तो वह अत्यन्त क्रोधित हो उठा। उसने भारी गदा पकड़ी और शत्रु का वध

धिआदे हुइ स्यंदन ते कबि स्याम कहै इह भांत सिधायो । अउर किसी भट जान्यो नही कबि दउर पर्‍यो न्रिप ने लखि पायो ॥ १८५० ॥ आवत देख हलायुध को सु भयो तबही न्रिप कोप मई है । जुद्ध ही कउ समुहाइ भयो निज पान कमान सु तान लई है । ल्यायो हुतो चपला सी गदा सर एक ही सिउ सोऊ काट दई है । शत्रु के मारनि की बलभद्रहि मानहु आस टुटूक भई है ॥ १८५१ ॥ ॥ सवैया ॥ काट गदा जब ऐसे दई तबही बल ढाल क्रिपान सँभारी । धाइ चल्यो अरि मारनि कारनि शंक कछू चित मै न बिचारी । भूप निहारकै आवत को गरज्यो बरखा करि बाननि भारी । ढाल दई सतधा करिकै कर की करवार त्रिधा करि डारी ॥ १८५२ ॥ ॥ सवैया ॥ ढाल कटी तरवार गई कटि ऐसे हलायुध स्याम निहार्‍यो । मारत है बल को अबही न्रिप यों अपने मन माझि बिचार्‍यो । चक्र सँभार मुरार तबै कर जुद्ध के हेत चल्यो बल धार्‍यो । रे न्रिप तू भिर मो संग आइकै राम भनै इम स्याम पुकार्‍यो ॥ १८५३ ॥ ॥ सवैया ॥ यों बतिया रन मै सुनि भूपति जूझ मचावन स्याम सिउ आयो । रोसि बढाइ घनो चित मै कर केबर सो धनु तान चढायो । दीरघ कउच सजे

करने के लिए वह पुनः युद्धभूमि में तत्पर हो उठा। रथ को छोड़कर वह पैदल ही दौड़ पड़ा और राजा के अतिरिक्त उसे कोई न देख सका ॥ १८५० ॥ बलराम को आता हुआ देखकर राजा क्रोधित हो उठा और हाथ में कमान तानकर युद्ध के लिए तैयार हो गया। विद्युत् के समान आती गदा को एक ही बाण से राजा ने काट दिया और इस प्रकार शत्रु को मारने की बलराम की आशा खंड-खंड हो गई ॥ १८५१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब राजा ने गदा को काट दिया तो बलराम ने कृपाण और ढाल को सँभाला तथा शत्रु को अभय होकर मारने को चला। राजा उसे आता हुआ देखकर बाण-वर्षा कर गरजा तथा उसने बलराम की ढाल के सौ टुकड़े तथा कृपाण के तीन टुकड़े कर दिए ॥ १८५२ ॥ ॥ सवैया ॥ कटी हुई ढाल और तलवार वाले बलराम को कृष्ण ने देखा और इधर राजा जरासंध ने भी उसे तत्क्षण मारने का विचार कर लिया। तभी चक्र को सँभालकर श्रीकृष्ण युद्ध के लिए चल पड़े और राम कवि के कथनानुसार राजा को युद्ध के लिए ललकारने लगे ॥ १८५३ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण की ललकार सुनकर राजा युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा। उसने क्रोधित होकर धनुष पर बाण चढ़ा लिया। उसके तन पर दीर्घ कवच

तन मै कबि के मन मै जसु इउ उपजायो। मानहु जुद्ध समै रिस कै रघुनाथ के ऊपर रावन आयो ॥ १८५४ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत भ्यो न्रिप स्याम के सामुहि तउ धन स्री ब्रिजनाथ सँभार्यो। धावत भ्यो इत ते हरि सामुहि तास कछू चित मै न बिचार्यो। कान प्रमान लउ तान कमान सु बान लै शत्र के छत्र पै मार्यो। खंड हुइ खंड गिर्यो छित मै मनो चंद को राहु ने मार बिदार्यो ॥ १८५५ ॥ ॥ सवैया ॥ छत्र कट्यो न्रिप को जबही तबही मन भूपत कोप भयो है। स्याम की ओर कुद्रिष्टि चितै करि उग्र सरासन हाथ लयो है। जोर सो खैंचन लाग्यो तहा नहि ऐंच सकै कर कंप भयो है। लै धनु बान मुरार तबै तिह चांप चटाक दै काटि दयो है ॥ १८५६ ॥ ॥ स्वैया ॥ ब्रिजराज सरासन (मू०ग्रं०४८६) काट दयो तब भूपत कोपु कियो मन मै। करवार सँभार महा बल धार हकार पर्यो रिप के गन मै। तहा ढाल सो ढाल क्रिपान क्रिपान सो यों अटके खटके रन मै। मनो ज्वाल दवानल की लपटै चटकै पटकै त्रिन जिउं बन मै ॥ १८५७ ॥ घूमत घाइल हुइ इक बीर फिरै इक स्रउन भरे भभकाते। एक कबंध फिरै बिन सीस लखै तिन काइर

चढा होने के कारण राजा जरासंध ऐसा लग रहा था मानो युद्ध में क्रोधित होकर रावण श्रीराम पर टूट पड़ा हो ॥ १८५४ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा को सामने आता देखकर श्रीकृष्ण ने धनुष सँभाला और अभय होकर राजा के सामने आ गए। कान तक धनुष खींचकर कृष्ण ने शत्रु के छत्र पर बाण मारा और पल भर में राजा का छत्र इस प्रकार खंड-खंड होकर गिर पड़ा मानो राहु ने चन्द्र को खंड-खंड कर डाला हो ॥१८५५॥ ॥ सवैया ॥ छत्र के कटते ही राजा क्रोधित हो उठा और उसने उग्रदृष्टि से कृष्ण की ओर देखते हुए अपना भीषण धनुष हाथ में लिया। वह धनुष को ज़ोर से खींचने लगा परन्तु उसका हाथ काँप गया और धनुष नहीं खींचा जा सका। उसी समय धनुष-बाण से श्रीकृष्ण ने जरासंध का धनुष झटके से काट डाला ॥ १८५६ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने जरासंध का धनुष काट दिया तो वह क्रोधित होकर तथा ललकार कर हाथ में तलवार ले शत्रुदल पर टूट पड़ा। ढाल से ढाल और कृपाण से कृपाण इस तरह बजने लगी मानो जंगल में आग लगने पर तिनके चटककर जल रहे हों ॥ १८५७ ॥ कोई घायल होकर रक्त फेंकता हुआ घूम रहा है और कोई बिना सिर का कबंध बनकर घूम रहा है, जिसे

है बिललाते। त्याग चले इक आहव को इक डोलत जुद्दह के रंगराते। एक परे भट प्रान बिना मनो सोवत है मदरा मदमाते ॥१८५८॥ ॥ सवैया ॥ जादव जे अति क्रोध भरँ गहि आयुध सिंध जरा पहि धावत। अउर जिते सिरदार बली करवार सँभार हकार बुलावत। भूपत पान लै बान कमान गुमान भर्‌यो रिप ओर चलावत। एक ही बान के साथ किए बिन माथ सुनाथ अनाथ हुइ आवत ॥ १८५९ ॥ ॥ सवैया ॥ एकन की भुज काटि दई अरु एकन के सिर काटि गिराए। जादव एक किए बिरथी पुनि स्री जदुबीर को तीर लगाए। अउर हने गजराज घने बर बाज घने हनि भूमि गिराए। जोगनि भूत पिसाच स्रिगालनि स्रउनत सागर माझ अन्हाए ॥ १८६० ॥ ॥ सवैया ॥ बीर सँघार कै स्री जदुबीर के भूप भयो अति कोप मई है। जुद्ध बिखै मन देत भयो तन की सिगरी सुध भूल गई है। ऐन ही सैन हनी प्रभ की सु परी छित मै बिन प्रान भई है। भूपति मानहु सोसन की सभ सूरनि हू की जगात लई है ॥ १८६१ ॥ ॥ सवैया ॥ छाडि

देखकर कायर लोग डर रहे हैं। कई युद्ध को छोड़कर भाग चले हैं और कई मस्त होकर युद्ध में लीन हैं। निष्प्राण होकर कई वीर ऐसे पड़े हैं, मानो कोई मदिरा पान कर मदमस्त पड़ा हो ॥ १८५८ ॥ ॥ सवैया ॥ अत्यन्त क्रोधित होकर यादव-गण शस्त्र पकड़कर जरासंध पर टूट पड़ रहे हैं। महाबली शूरवीर तलवारें लेकर सबको ललकार रहे हैं। राजा जरासंध हाथ में धनुष लेकर गर्वपूर्वक शत्रुओं की ओर बाण चला रहा है और एक ही बाण से अनेकों को मुण्ड-विहीन करके खदेड़ दे रहा है ॥ १८५९ ॥ ॥ सवैया ॥ किसी की उसने भुजा काट दी और किसी का सिर काटकर गिरा दिया। किसी यादव को रथविहीन कर दिया और पुनः उसने श्रीकृष्ण को बाण मारा। अनेकों हाथियों और घोड़ों को मारकर उसने भूमि पर गिरा दिया और युद्धस्थल से योगिनियाँ, भूत-पिशाच, गीदड़ आदि रक्त-सागर में नहाने लगे ॥ १८६० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के वीरों का संहार करके राजा अत्यन्त क्रोधित हो उठा और वह युद्ध में इतना लीन हो गया कि उसे अपने तन की सुध-बुध भी भूल गई। श्रीकृष्ण की सेना को उसने नष्ट करके धरती पर बिखेर दिया है, मानो राजा ने सभी शूरवीरों से उनके सिरों के रूप में कर वसूल किया हो ॥ १८६१ ॥ ॥ सवैया ॥ जिन्होंने सत्य का अनुसरण करने की बात की उन्हें छोड़ दिया और जो शठ का साथ देनेवाले

दए जित साच कै मानहु मार दए मन झूठ न भायो । जो भट घाइल भूम परे मनो दोश कियो कछु दंडु दिवायो । एक हने कर पाइन ते जिन जैसो कियो फल तैसोइ पायो । राज सिंघासन स्यंदन बैठकै भूरन को ब्रिप न्याउ चुकायो ॥ १८६२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब भूप इतो रन पारत भ्यो तब स्री ब्रिजनाइक कोप भर्यो । ब्रिप सामुहि जाइकै जूझ मचात भयो चित मै न रतीकु डर्यो । ब्रिजनाइक साइक एक हन्यो ब्रिप को उर लाग कै भूम पर्यो । इम भेद सो बान चल्यो ब्रिप को मनो पंनग दूध को पान कर्यो ॥ १८६३ ॥ ॥ सवैया ॥ सहि कै सर स्री हरि को उर मै ब्रिप स्याम ही (मू०ग्रं०४६०) कउ इक बान लगायो । सूत के एक लगावत भ्यो सर दारक लागत ही दुखु पायो । हुइ बिसंभार गिर्यो ई चहै तिह को रथु आसन ना ठहरायो । ताही समै चपलंग तुरंगनि आपनी चाल को रूप दिखायो ॥ १८६४ ॥ ॥ दोहरा ॥ भुजा पकर कै सारथी रथ तब डार्यो धीर । स्यंदन हाकत आपही चल्यो लरत बलबीर ॥ १८६५ ॥ ॥ सवैया ॥ सारथी स्यंदन पै न लख्यो बलदेव कह्यो रिसि ताहि सुनैकै । जिउं दल तोर जित्यो सभ

थे उन्हें मार गिराया गया । युद्धस्थल में पड़े घायल वीर ऐसे लग रहे थे, मानो दंडित किए हुए दोषी पड़े हों। कई हाथों और पाँवों से मार डाले गये और जिसने जैसा किया वैसा फल पाया । ऐसा लग रहा था कि मानो राजा रथ रूपी सिंहासन पर बैठकर दोषी और निर्दोष से सम्बन्धित न्याय कर रहा हो ॥ १८६२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा के इस प्रकार के भीषण युद्ध को देखकर श्रीकृष्ण क्रोध से भर उठे और भय को त्यागकर राजा के सम्मुख भीषण युद्ध करने लगे । श्रीकृष्ण का एक बाण हृदय में लगने पर राजा पृथ्वी पर गिर पड़ा और श्रीकृष्ण का बाण राजा की श्वेत मेदा में इस प्रकार धँस गया, मानो सर्प दूध पी रहा हो ॥ १८६३ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के बाण को हृदय में सहन कर राजा ने श्रीकृष्ण की ओर एक तीर चलाया, जो दारुक को लगा और उसके लगते ही उसे घोर कष्ट हुआ । वह रथ के आसन से गिरने ही वाला था कि उसी समय चपल घोड़ों ने अपनी गति का स्वरूप दिखाया और दौड़ पड़े ॥ १८६४ ॥ ॥ दोहा ॥ सारथी की भुजा पकड़कर और रथ को थामकर श्रीकृष्ण स्वयं ही रथ हाँकते हुए लड़ने लगे ॥ १८६५ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कृष्ण के सारथी को रथ पर बलराम ने नहीं देखा तो क्रोधित होकर कहा कि हे राजा जिस प्रकार मैंने तुम्हारे दल को जीता है उसी

ही तैसो तो जितहै जस डंक बजैकै । मूढ भिरै पति चउदह लोक के संगि सु आप कउ भूप कहैकै । कीट पतंग सु बाजन संग उड्यो कछु चाहत पंख लगैकै ॥१८६६॥ ॥ सवैया ॥ छाडत है अजहू तुह कउ पति चउदह लोकन के संग ना लरु । ग्यान की बात धरो मन मै सु अग्यान की चित्त ते बाद बिदा करु । रच्छक है सभ को ब्रिजनाथ कहै कबि स्याम इहै जिअ मै धरु । त्याग कै आवहु शस्त्र सभै सु अबै घनिस्याम के पाइन पै परु ॥ १८६७ ॥ ॥ चौपई ॥ जबै हलायुध ऐसे कह्यो । क्रोध डीठ राजा तन चह्यो । कह्यो न्रिपत सभ को संघरहो । छत्री होइ ग्वार ते टरहो ॥ १८६८ ॥ ॥ सवैया ॥ भाखबो इउं न्रिप को सुनकै जदुबीर सभै अति कोप भरे है । धाइ परे तजि शंक निशंक चितै अरि कउ चित मै न डरे है । भूप अयोधन मै धनु लै तिह सीस कटे गिरि भूमि परे है । मानहु पउन प्रचंड बहे छुट बेलन ते टुट फूल झरे है ॥ १८६९ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन संघारत भूप फिरै भट आन कउ आँख तरै नही आने । बाज घने गन राजन के सिर पाइन लउ संगि स्रउन के साने । अउर रथीन करे बिरथी बहु भांत हने जेऊ बांधत

प्रकार तुम्हें जीतकर मैं विजय का डंका बजवाऊँगा । हे मूर्ख ! तुम स्वयं को राजा कहलवाकर चौदह लोकों के स्वामी के साथ भिड़ रहे हो और ठीक वैसे ही लग रहे हो जैसे छोटे-मोटे कीट-पतंगे पंख लगाकर आकाश में उड़ने वाले बाज़ पक्षी की बराबरी करने का प्रयत्न कर रहे हों ॥ १८६६ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं आज तुम्हें छोड़ रहा हूँ, तुम चौदह लोकों के स्वामी के साथ मत लड़ो । बुद्धिमत्तापूर्ण बात को ग्रहण करो और अज्ञान का त्याग करो । तुम यह मान लो कि श्रीकृष्ण सबके रक्षक हैं । इसलिए तुम शस्त्रों का त्याग कर शीघ्र ही अभी चरणों पर आ गिरो ॥ १८६७ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब बलराम ने ऐसा कहा तो राजा क्रोधित हो उठा । राजा ने कहा कि मैं सबका संहार कर दूँगा और क्षत्रिय होकर ग्वालों से नहीं डरूँगा ॥ १८६८ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा की यह बात सुनकर श्रीकृष्ण क्रोध से भरकर राजा पर निःसंकोच टूट पड़े । राजा ने धनुष हाथ में लेकर सैनिकों को इस प्रकार काट कर भूमि पर गिरा दिए मानो प्रचंड पवन के चलने पर वृक्ष के बेल के फल टूटकर गिरे हों ॥ १८६९ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा सेना का संहार करता हुआ किसी भी वीर को कुछ भी नहीं समझ रहा है । राजाओं के घोड़े सिर से पाँव तक रक्त से सने हुए हैं । अनेकों रथियों को उसने विरथी कर दिया है

बाने । सूरन को प्रतअंग गिरे मानो बीज बुयो छित माहि क्रिसाने ॥ १८७० ॥ ॥ सवैया ॥ इह भांत बिरुध निहार भयो मुसलीधर स्याम सो तेज तए है । भाख दोऊ निज सूतन को रिप सामुहि जुद्ध के काज गए है । आयुध लै सु हठी कवची रिसकै संगि पावक बेख भए है । स्याम भनै इम धावत भे मानो केहरि दुइ म्रिग हेर धए है ॥ १८७१ ॥ ॥ सवैया ॥ धनु साइक लै रिस भूपत के तन घाइ करे (मू०ग्रं०४६१) ब्रिजराज तबै । पुनि चारोई बानन सो हय चारोई राम भनै हन दीने सबै । तिल कोटिक स्यंदन काटि दियो धनु काटि दियो कपि कोप जबै । न्रिप प्यादो गदा गहि सउहे गयो अति जुद्ध भयो कहिहो सु अबै ॥ १८७२ ॥ ॥ सवैया ॥ पाइन धाइकै भूप बली सु गदा कहु धाइ हली प्रति झार्‍यो । कोप हुतो सु जितो तिह मै सभ सूरन को सु प्रतच्छ दिखार्‍यो । कूद हली भुअ ठाढो भयो जसु ता छबि को कबि स्याम उचार्‍यो । चारोई अस्वन सूत समेत सु कै सभ ही रथ चूरन डार्‍यो ॥ १८७३ ॥ ॥ सवैया ॥ इत भूप गदा गहि आवत भ्यो उत लैके गदा मुसलीधर धायो । आइ अयोधन बीच दुहूं

तथा शूरवीरों के अंग धरती पर ऐसे छिटके पड़े हैं, जैसे किसान ने धरती पर बीज बिखेरा हो ॥ १८७० ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार एक दूसरे को देखकर श्रीकृष्ण और बलराम दोनों अत्यधिक तेजयुक्त हो गये हैं और अपने-अपने सारथियों को कहकर युद्ध के लिए शत्रु के सामने जा पहुँचे हैं। शस्त्र पकड़कर, कवच-युक्त में क्रोधित वीर अग्नि-सम दीख रहे हैं और दोनों वीरो को आते हुए देखकर ऐसा लग रहा है, मानो दो शेर जंगल में मृगों को दौड़ा रहे हों ॥ १८७१ ॥ ॥ सवैया ॥ उसी समय श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लेकर राजा पर वार किया। पुनः चार बाणों से राजा के चारों घोड़ों को मार डाला। क्रोधित होकर राजा के रथ को, धनुष को काट डाला और तत्पश्चात् राजा पैदल ही गदा लेकर जिस प्रकार आगे बढ़ा अब मैं उसका वर्णन करता हूँ ॥ १८७२ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने पैदल चलकर गदा से बलराम पर वार किया और उसका संपूर्ण क्रोध शूरवीरों को साक्षात् दिखाई देने लगा। बलराम कूदकर धरती पर आ खड़ा हुआ और राजा ने चारों घोड़ों और सारथी-सहित उसका रथ चूर कर डाला ॥ १८७३ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर राजा गदा लेकर आगे बढ़ा और उधर बलराम भी अपनी गदा लेकर आगे की ओर चला दोनों ने युद्धस्थल में घोर युद्ध किया और

कबि स्याम कहै रन दुंद मचायो । जुधु कीयो बहुते चिर लउ नहि आपि गिर्यो उह कउ न गिरायो । ऐसे रिझावत भ्यो सुरलोगन धीरन बीरन को रिझवायो ॥ १८७४ ॥ ॥ सवैया ॥ हारकै बैठ रहै दोऊ बीर संभार उठै पुन जुधु मचावै । रंच न शंक करै चित मै रिसकै दोऊ मार ही मार उचारै । जैसे गदाहव की बिध है दोऊ तैसे लरै अरु घाव चलावै । नैक टरै न अरै हठ बांध गदा को गदा संग वार बचावै ॥ १८७५ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम भनै अति आहव मै मुसली अरु भूपत कोप भरे है । आपस बीच हकार दोऊ भट चित्त बिखै नही नैक डरे है । भारी गदा गहि हाथन मै रन भूमह ते नहि पैगु टरे है । मानहु मद्ध महांबन के पल के हित द्वै बर सिंघ अरे है ॥ १८७६ ॥ ॥ सवैया ॥ काटि गदा बलदेव दई तिह भूपत की अरु बानन मार्यो । पउरख याहि भिर्यो हम सो रिसकै अरि कउ इह भांति पचार्यो । इउ कहिकै पुन बाननि मार सरासन लै तिह ग्रीवहि डार्यो । देव करै उपमा सु कहै जदुबीर जित्यो सु बडो अरि हार्यो ॥१८७७॥ ॥ सवैया ॥ कंपत हो जिह ते सु खगेश महेश मुनी जिह ते भै

काफी समय तक युद्ध होने के बावजूद कोई भी एक-दूसरे को न गिरा सका। इस प्रकार उनके युद्ध से सभी धीर-वीर मन ही मन प्रसन्न होने लगे ॥ १८७४ ॥ ॥ सवैया ॥ दोनों वीर थककर बैठ जाते थे और पुन: उठ कर युद्ध करते थे। दोनों अभय होकर मार-मार की ध्वनि के साथ क्रोधपूर्वक युद्ध कर रहे थे। गदायुद्ध की विधि के अनुरूप दोनों लड़ रहे थे और तनिक भी अपने स्थान से न टलकर गदा का वार गदा के साथ ही बचा रहे थे ॥ १८७५ ॥ ॥ सवैया ॥ कवि के कथनानुसार बलराम और जरासंध दोनों युद्ध में क्रोध से भरे हुए हैं। दोनों वीर एक-दूसरे को ललकार रहे हैं और मन में तनिक भी नहीं डर रहे हैं। भारी गदाओं को हाथ में पकड़कर युद्धभूमि में दोनों एक पग भी पीछे न हटते हुए ऐसे लग रहे हैं मानो शेर वन के बीच शिकार के लिए तैयार खड़े हों ॥ १८७६ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने राजा की गदा को काट दिया और उस पर बाण चलाए तथा उसे यह कहा कि क्या इसी पौरुष के बल पर तुम मुझसे भिड़े थे। इतना कहकर पुन: बाण चलाते हुए बलराम ने अपना धनुष राजा की गर्दन में डाल दिया। इस युद्ध में यदुवीर बलराम जीत गया और वह विकट शत्रु हार गया ॥ १८७७ ॥ ॥ सवैया ॥ जिससे गरुड़राज और शिव भी कांपते हों जिससे मुनि शेषनाग,

भीत्यो । शेश जलेश दिनेश निसेश सुरेश हुते चित मै न निचीत्यो । ता न्रिप के सिर पै कबि स्याम कहै इह काल इसो अब बीत्यो । धंनहि धंनु कहै सभ सूर भले भगवान बडो अरि जीत्यो ॥ १८७८ ॥ ॥ सवैया ॥ बलभद्र गदा गहिकै इत ते रिस साथ कह्यो (मू०ग्रं०४९२) अरि कउ हरिहौ । इह प्रान बचावत हो हम सो जम जउ भिरि है न तऊ डरिहौ । घनि स्याम सभै संग जादव लै तजि याह कहै न भया टरिहौ । कबि स्याम कहै मुसली इह भांति अबै इह हो बधु ही करिहौ ॥१८७९॥ सुनि भूप हलायुध की बतिया अपुने मन मै अतिही डरु मान्यो । मानुख रूप लख्यो न बली निहचै बल कउ जम रूप पछान्यो । स्री जदुबीर की ओर चितै तजि आयुध पाइन सो लपटान्यो । मेरी सहाइ करो प्रभ जू कबि स्याम कहै कहि यो घिघियान्यो ॥ १८८० ॥ ॥ सवैया ॥ करुनानिधि देख दशा तिह की करुनारस कउ चित बीच बढायो । कोपहि छाडि दयो हरिजू दुहूं नैननि भीतर नीर बहायो । बीर हलायुध ठाढो हुतो तिह को करकै इह बैन सुनायो । छाडि दै जो हम जीतन आयो हो सो हम जीत लयो बिलखायो ॥ १८८१ ॥

वरुण, सूर्य, चन्द्र, इन्द्र आदि सभी मन में भयभीत होते हों उस राजा के सिर पर अब काल सवार हो गया । सभी शूरवीर धन्य-धन्य कहते हुए यह कहने लगे कि भगवान श्रीकृष्ण की कृपा से बड़े-बड़े शत्रु जीते गए हैं ॥ १८७८ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने हाथ में गदा पकड़कर क्रोधित होते हुए कहा कि मैं शत्रु को मार डालूंगा । इसका प्राण बचाने के लिए यदि यमराज भी आयेंगे तो मैं उनसे भिड़ जाऊँगा । यदि सभी यादवों को साथ लेकर श्रीकृष्ण भी मुझसे कहेंगे तो भी मैं इसे जीवित नहीं छोड़ूंगा । इस प्रकार बलराम ने कहा कि मैं अभी इसका वध कर डालूंगा ॥ १८७९ ॥ बलराम की बातों को सुनकर जरासंध अत्यन्त भयभीत हो उठा और उसने देखा कि बलराम मनुष्य के रूप में दिखाई न देकर यमराज के रूप में दिखाई दे रहा था । अब राजा श्रीकृष्ण की ओर देखते हुए शस्त्रों को त्यागकर उनके चरणों में लिपट गया और घिघियाते हुए कहने लगा कि हे प्रभु ! मेरी रक्षा कीजिए ॥१८८०॥ ॥ सवैया ॥ करुणानिधि श्रीकृष्ण उसकी यह दशा देखकर द्रवित हो उठे और क्रोध त्यागकर दोनों आँखों से आंसू बहाने लगे । वीर बलराम को वहाँ खड़ा देखकर उन्होंने यह कहा कि तुम इसे छोड़ दो । जिसको हम जीतने आये थे उसे हमने जीत लिया ॥ १८८१ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने कहा कि

॥ सवैया ॥ इह छोड हली नही छोडत हो किह काज कह्यो तुहि बानिन मार्यो । जीत लयो तो कहा भयो स्याम बडो अरि है इह पउरख हार्यो । आछो रथी है भयो बिरथी अरु पाइ गहे प्रभ तेरे उचार्यो । तेइस छोहनी को पति है तो कहा इह को सभ सैन संघार्यो ॥ १८८२ ॥ ॥ दोहरा ॥ सैन बडो संगि शत्र के जीत ताहि ते जीत । छाडत है नहि बधत तिह इहै बडन की रीत ॥ १८८३ ॥ ॥ सवैया ॥ पाग दई अरु बागो दयो इक स्यंदन दै तिह छाडि दयो है । भूप चितै हरि को चित मै अति ही कर लज्जतवान भयो है । ग्रीव निवाइ महा दुखु पाइ घनो पछुताइ कै धाम गयो है । स्री जदुबीर कउ चउदह लोकन स्याम भनै जसु पूर रह्यो है ॥ १८८४ ॥ ॥ सवैया ॥ तेइस छोहन तेइस बार अयोधन ते प्रभ ऐसे ही मारे । बाज घने गजपति हने कबि स्याम भनै बिपते कर डारे । एक ही बान लगे हरि को जमधाम सोऊ तजि देह पधारे । स्री ब्रिजराज की जीत भई अर तेइस बारन ऐसे ई हारे ॥ १८८५ ॥ ॥ दोहरा ॥ देवन जो उसतत करी पाछे कही सुनाइ । कथा सु आगै होइ है कहिहौ वही

मैंने इसे बाणों से मारकर छोड़ने के लिए नहीं जीता है। इसको जीत लिया तो क्या हुआ। यह बहुत बड़ा पौरुषशाली शत्रु है जो कि एक अच्छा रथी है और इस समय मात्र रथविहीन होने के कारण, हे प्रभु! तुम्हारे पांव पड़ कर इस प्रकार की बातें कह रहा है। यह तेईस अक्षौहिणी सेना का स्वामी है और यदि हमें इसे छोड़ना ही था तो इसकी इतनी सेना का संहार क्यों किया ॥ १८८२ ॥ ॥ दोहा ॥ शत्रु के साथ बहुत बड़ी सेना को जीत लेना ही जीत माना जाता है और बड़प्पन की यही मर्यादा रही है कि वध करने की बजाय शत्रु को छोड़ दिया जाता है ॥ १८८३ ॥ ॥ सवैया ॥ जरासंध को एक पगड़ी, वस्त्र और रथ देकर छोड़ दिया गया। राजा श्रीकृष्ण का बड़प्पन मन में अनुभव कर अत्यंत लज्जित हुआ और दुःखपूर्वक पछताता हुआ वापस घर चला गया। श्रीकृष्ण का यश इस प्रकार चौदह लोकों में व्याप्त हो गया ॥ १८८४ ॥ ॥ सवैया ॥ तेईस अक्षौहिणी सेना को युद्ध में इसी प्रकार श्रीकृष्ण ने तेईस बार नष्ट किया। अनेकों घोड़ों, हाथियों को मार डाला और एक ही बाण से वे शरीर त्यागकर यमलोक चले गए। श्रीकृष्ण जीत गए और इस प्रकार जरासंध तेईस बार हारा ॥ १८८५ ॥ ॥ दोहा । देवगणों ने जो स्तुति की उसका वर्णन हो चुका है और यह कथा

बनाइ ॥ १८८६ ॥ ॥ सवैया ॥ उत भूपति हार गयो ग्रहि कउ रन जीत इतै हरिजी ग्रहि आयो । मात पिता को जुहार कियो (मू०ग्रं०४६३) पुनि भूपति के सिर छत्र तनायो । बाहरि आइ गुनीन सु दान दियो तिन इउ जसु भाख सुनायो । स्री जदुबीर महा रन धीर बडो अरि जीत भलो जसु पायो ॥ १८८७ ॥ ॥ सवैया ॥ अउर जिती पुर नार हुती मिलि कै सभि स्याम की ओर निहारैं । भूखन अउर जितो धनु है पट स्री जदुबीर के ऊपरि वारैं । बीर बडो अरि जीत लयो रन यो हसिकै सभ बैन उचारैं । सुंदर तैसोई पउरख मै कहि इउ सभ शोक बिदा करि डारैं ॥ १८८८ ॥ ॥ सवैया ॥ हसि कै पुरि नार मुरार निहार सु बात कहै कछु नैंन नचैकै । जीत फिरे रन धामहि को संगि बैरन के बहु जूझ मचैकै । एई सु बैन कहै हरि सो तब स्याम भनै कछु शंक न कैकै । राधका साथ हसो प्रभ जैसे सु तैसे हसो हम ओर चितैकै ॥ १८८९ ॥ ॥ सवैया ॥ इउ जब बैन कहै पुर-बासनि तउ हसि कै ब्रिजनाथ निहारे । चारु चितौन कउ

जिस प्रकार से आगे चली अब मैं उसका वर्णन करता हूँ ॥ १८८६ ॥ ॥ सवैया ॥ उधर राजा हारकर अपने घर गया और इधर श्रीकृष्ण युद्ध जीतकर अपने घर आये । उन्होंने माता-पिता को प्रणाम किया और पुनः राजा उग्रसेन के सिर पर छत्र झुलवाया । बाहर आकर गुणी जनों को दान आदि दिया और उन लोगों ने यह कहकर श्रीकृष्ण की प्रशंसा की कि श्रीकृष्ण जैसे महा रणधीर ने बहुत बड़ा शत्रु जीतकर सुयश का अर्जन किया है ॥ १८८७ ॥ ॥ सवैया ॥ नगर की सभी स्त्रियाँ श्रीकृष्ण को देखने लगीं और धन तथा आभूषण आदि श्रीकृष्ण पर न्योछावर करने लगीं । सभी हँस कर कहने लगीं कि इन्होंने बहुत बड़ा वीर युद्ध में जीत लिया है । इनका पौरुष भी इनके समान ही सुन्दर है । यह कहकर सबने अपने शोक का त्याग कर दिया ॥ १८८८ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण को देखकर नगर की स्त्रियाँ नयन नचाती और मुस्कुराती हुई कहने लगीं कि श्रीकृष्ण भीषण युद्ध करके युद्ध जीतकर वापस आए हैं । इतना कहकर स्त्रियाँ निस्संकोच होकर यह कहने लगीं कि हे प्रभु ! जैसे आप राधा को देखकर हँसते थे वैसे ही हमारी तरफ़ देखकर भी हँसिए ॥ १८८९ ॥ ॥ सवैया ॥ जब नगरवासियों ने यह कहा तो श्रीकृष्ण सबकी तरफ़ देखकर मुस्कुराने लगे । उनकी सुंदर चितवन को देखकर उनके शोक संताप दूर हो गए । स्त्रियाँ प्रेमरस में झूम

हेरि तिनो मन को सभ शोक संताप बिडारे । प्रेम छकी तिय भूम के ऊपर झूम गिरी कबि स्याम उचारे । भउह कमान समान मनो द्रिग साइक यों ब्रिजनाइक मारे ॥ १८९० ॥ ॥ सवैया ॥ उत संकत हुइ त्रिय धाम गई इत बीर सभा महि स्याम जो आयो । हेरि कै स्री ब्रिजनाथह भूपति दउर कै पाइन सीस लुडायो । आदर सो कबि स्याम भनै न्रिप लै सु सिंघासन तीर बठायो । बारनी लै रसु आगे धर्‍यो तिह पेखि कै स्याम महा सुख पायो ॥ १८९१ ॥ ॥ सवैया ॥ बारुनी को रस सौ जब सूर छकै सभ ही बलभद्र चितार्‍यो । स्री ब्रिजराज समाज मै बाज हने गजराज न कोऊ बिचार्‍यो । सो बिन प्रान कियो छिन मै रिस कै जिह बान सु एक प्रहार्‍यो । बीरन बीच सराहत भ्यो सु हली जुधु स्याम इतो रन पार्‍यो ॥ १८९२ ॥ ॥ दोहरा ॥ सभा बीच स्री क्रिशन सो हली कहै पुन बैन । अति ही मदरा सौं छके अरुन भए जुग नैन ॥१८९३॥ ॥ सवैया ॥ दीबो कछू मय पीबो घनो कहि सूरन सो इह बैन सुनायो । जूझबो जूझ कै प्रान तजै जुझवाइबो छत्रन को बन आयो । बारनी कँउ कबि स्याम भनै कचु के हित तो भ्रिग निंद करायो । राम

कर धरती पर गिर पड़ीं । श्रीकृष्ण की भौंहें कमान के समान थीं और नयन-दृष्टि रूपी बाणों से वे सबको मार रहे थे ॥ १८९० ॥ ॥ सवैया ॥ उधर श्रीकृष्ण के प्रेम के भ्रम-जाल में ग्रसित स्त्रियाँ अपने घरों को गयीं, इधर श्रीकृष्ण वीरों की सभा में आ पहुँचे । श्रीकृष्ण को देखकर राजा उनके चरणों में आ पड़ा और उन्हें आदरपूर्वक अपने सिंहासन पर बैठाया । वारुणी आसव राजा ने श्रीकृष्ण के सामने प्रस्तुत किया जिसे देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ १८९१ ॥ ॥ सवैया ॥ वारुणी का पान करके बलराम ने सबको बताया कि श्रीकृष्ण ने हाथी-घोड़ों को मार गिराया था । जिसने एक भी बाण श्रीकृष्ण पर चलाया उसे इन्होंने निष्प्राण कर डाला । इस प्रकार बलराम वीरों में श्रीकृष्ण के युद्ध की प्रशंसा करने लगे ॥ १८९२ ॥ ॥ दोहा ॥ सभा के बीच में वारुणी के प्रभाव से लाल आँखों वाले बलराम ने श्रीकृष्ण जी से कहा ॥१८९३॥ ॥ सवैया ॥ शूरवीरो ! प्रसन्न होकर वारुणी का पान करो और क्षत्रियों का कर्तव्य है कि वे युद्ध में ही जूझते हुए प्राणों का त्याग कर दें । इसी वारुणी (मदिरा) की कच-देवयानी के प्रसंग में भृगु ने निंदा की थी । (नोट : यहाँ कवि भृगु ऋषि की बात कहता है जबकि

कहै चतुराननि सो सु इही रस कउ रस देवन पायो ॥ १८९४ ॥ (मू०ग्रं०४९४) ॥ दोहरा ॥ जैसे सुख हरिजू किए तैसे करे न अउर । ऐसो अरि जित इंद्र से रहत सूर नित पउर ॥ १८९५ ॥ ॥ सवैया ॥ रीझ कै दान दियो जिन कौउ तिन मागनि कै न कहूँ मनु कीनो । कोप न काहू सिउ बैन कह्यो जुपै भूल भरी चितकै हस दीनो । दंड न काहू लयो जनते लख मारन ताको कछू धनु छीनो । जीत न जान दयो ग्रहि कउ अरि स्री ब्रिजराज इहै ब्रत लीनो ॥ १८९६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भूअ को नल राज भए कबि स्याम कहै सुख हाथ न आयो । सो सुखु भूमि न पायो तबै मुर मार जबै जमधाम पठायो । जो हरिनाकश भ्रात समेत भयो सुपने प्रिथुना दरसायो । सो सुखु कान्ह की जीत भए अपनै चित मै पुहमी अति पायो ॥ १८९७ ॥ ॥ स्वैया ॥ जोर घटा घनघोर घनै जुर गाजत है कोऊ अउर न गाजै । आयुध सूर सजै अपने करि आननि आयुध अंगहि साजै । दुंदभ द्वार बजै प्रभ के बिन ब्याह न काहू कै द्वारहि बाजै । पाप न होत कहू पुर मै जित ही कित धरम ही धरम

वास्तव में यह बात शुक्राचार्य से सम्बन्धित मानी जाती है।) कवि राम का कथन है कि देवताओं ने रसों के भी रस इस वारुणी को ब्रह्मा से प्राप्त किया है ॥ १८९४ ॥ ॥ दोहा ॥ जैसा सुख श्रीकृष्ण ने दिया वैसा अन्य कोई नहीं दे सकता, क्योंकि उन्होंने ऐसे शत्रु को जीता जिसके पाँवों पर इन्द्र जैसे देवता पड़े रहते थे ॥ १८९५ ॥ ॥ सवैया ॥ जिनको प्रसन्न होकर दान दिया गया पुनः उनको माँगने की इच्छा न रही । क्रोधित होकर किसी से बात नहीं की और यदि किसी से भूल भी हो गई हो तो हँसकर उसे टाल दिया । किसी को दंड नहीं दिया गया और न ही किसी को मारकर उसका धन छीना गया तथ कोई जीतकर भी वापस न चला जाय यह व्रत श्रीकृष्ण ने ले रख. था ॥ १८९६ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा नल को पृथ्वी का राजा होने पर भी जो सुख नहीं प्राप्त हुआ था; पृथ्वी को जो सुख मुर नामक राक्षस के मारे जाने पर भी नहीं मिला था; हिरण्यकशिपु के मारे जाने पर भी जिस हर्ष-उल्लास का दर्शन नहीं हुआ था वह सुख कृष्ण की जीत होने पर मन ही मन पृथ्वी को प्राप्त हुआ ॥ १८९७ ॥ ॥ सवैया ॥ अपने अंगों पर शस्त्र सजाकर घनघोर घटाओं की तरह वीर गरज रहे हैं। जो दुंदुभियाँ शादी-ब्याह पर किसी के द्वार पर बजती हैं ये श्रीकृष्ण के द्वार पर बज रही थी। सारे नगर में धर्म

बिराजै ॥ १८९८ ॥ ॥ दोहरा ॥ क्रिशन जुद्ध जो हउ कह्यो अतिही संग सनेह । जिह लालच इह मै रच्यो मोहि वहै बरु देहि ॥ १८९९ ॥ ॥ सवैया ॥ हे रवि हे ससि हे करुनानिध मेरी अबै बिनती सुनि लीजै । अउर न मांगत हउ तुम ते कछु चाहत हउ चित मै सोई कीजै । शत्रुन सिउ अति ही रन भीतर जूझ मरो कहि साच पतीजै । संत सहाइ सदा जग माइ क्रिपा करि स्याम इहै बरु दीजै ॥ १९०० ॥ जउ किछु इच्छ करो धन की तउ चल्यो धनु देसन देस ते आवै । अउ सभ रिद्धन सिद्धन पै हमरो नही नैकु हिया ललचावै । अउर सुनो कछु जोग बिखै कहि कउन इतो तप कै तनु तावै । जूझ मरो रन मै तजि भै तुम ते प्रभ स्याम इहै बरु पावै ॥ १९०१ ॥ पूर रह्यो सिगरे जग मै अब लउ हरि को जसु लोक सु गावै । सिद्ध मुनीश्वर ईश्वर ब्रहम अजौ बल को गुन ब्यास सुनावै । अत्र परासुर नारद सारद स्री सुच शेश न अंतह पावै । ता

ही धर्म विराजमान था और कहीं पर भी पाप दिखाई नहीं देता था ॥ १८९८ ॥ ॥ दोहा ॥ यह कृष्ण-युद्ध मैंने प्रेमपूर्वक कहा है। हे प्रभु ! मैंने जिस लालच से इसका वर्णन किया है, मुझे कृपया वही वरदान दीजिए ॥१८९९॥ ॥ सवैया ॥ हे सूर्य-चन्द्र एवं करुणानिधि रूपी परमात्मा ! मेरी एक विनती सुन लो। मैं तुमसे अन्य कुछ नहीं माँग रहा हूँ, जो मैं मन में चाहता हूँ, कृपापूर्वक वही कीजिए। मैं शत्रुओं से युद्ध में यदि युद्ध करता हुआ जूझ जाऊँ तो मैं समझूंगा कि मैंने सत्य को प्राप्त कर लिया है। हे जगत के पोषण-कर्ता मैं सदैव इस संसार में संतों की सहायता करता रहूँ (और दुष्टो का नाश करता रहूँ) ॥ १९०० ॥ जब मैं धन की इच्छा करता हूँ तो धन देश-विदेश से चला आता है। किसी रिद्धि-सिद्धि के प्रति भी मुझे तनिक लालच नहीं है। योगविद्या भी मेरी किसी काम की नहीं है, क्योंकि उसमें समय लगाकर तन को तपाने से कोई लाभ नहीं है। हे प्रभु ! मैं तो तुमसे यही वरदान माँगता हूँ कि मैं निडर होकर युद्धभूमि में ही वीरगति प्राप्त करूँ ॥ १९०१ ॥ सारे विश्व में परमात्मा का यश व्याप्त हो रहा है और इसी यश की महिमा सिद्ध, मुनीश्वर, शिव, ब्रह्मा और व्यास आदि गा रहे हैं। अत्रि ऋषि, पराशर, नारद, शारदा, शेष आदि भी उसके रहस्य को नहीं जान

कौ कबित्तन मै कबि स्याम कह्यो कहिकै कबि कउन रिझावैं ॥ १९०२ ॥ (मू०ग्रं०४९५)

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जुद्ध प्रबंधे न्रिप जरासिंध को पकर कर छोर दीबो समापतं ॥

अथ कालजमन को ले जरासिंध फिर आए ॥

॥ सवैया ॥ भूप सुदुक्खयत हुइ अति ही अपने लिख मित्र कउ पाती पठाई । सैन हन्यो हमरो जदुनंदन छोर दयो मुहिकै करुनाई । बाचत पाती चड़ो तुम हू इत आवत हउ सभ सैन बुलाई । ऐसी दशा सुनि मित्रह की तब कीनी है कालजमन्न चड़ाई ॥ १९०३ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन कियो इकठो अपने जिह सैनहि को कछु पार न पइयै । बोल उठे कई कोट बली जब एक को लैकर नामु बुलइयै । दुंदभ कोट बजै तिन की धुनि सौ तिन की धुनि ना सुनि पइयै । ऐसे कहा सभ ह्यां न टिको चलि स्याम ही सो चलि जुद्ध मचइयै ॥ १९०४ ॥ ॥ दोहरा ॥ कालनेम आयो प्रबल एतो सैन बढाइ । बन पत्रन

पाये । उसको कवि श्याम ने कवित्तों में वर्णन किया है तथा हे प्रभु ! मैं तुम्हारी शोभा का वर्णन कर तुम्हें कैसे रिझाऊँ ॥ १९०२ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार के युद्ध-प्रबन्ध में राजा जरासंध को पकड़कर छोड़ देना समाप्त ॥

कालयवन को लेकर जरासंध का पुनः आगमन

॥ सवैया ॥ राजा ने दुःखित होकर अपने मित्र को पत्र लिखा कि श्रीकृष्ण ने मेरी सेना का नाश कर दिया है और मुझे पकड़कर कृपापूर्वक छोड़ दिया है। पत्र पढ़ते ही तुम उधर से चढ़ाई करो और इधर से मैं भी सेना को इकट्ठा करता हूँ । मित्र की यह दशा सुनकर कालयवन ने श्रीकृष्ण पर चढ़ाई कर दी ॥ १९०३ ॥ ॥ सवैया ॥ उसने इतनी सेना एकत्र कर ली कि उसकी गणना करना असंभव था। जब किसी एक का नाम पुकारा जाता था तो करोड़ों वीर बोल उठते थे। वीरों की दुंदुभियाँ बज रही थीं और उसमें किसी की आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती थी। अब सभी कह रहे थे कि यहाँ नहीं टिके रहना चाहिए और चलकर श्रीकृष्ण से युद्ध करना चाहिए ॥ १९०४ ॥ ॥ दोहा ॥ कालयवन इतनी प्रबल और असंख्य सेना को लेकर आया कि कोई

कोऊ गन सकै उनो न गनबो जाइ ॥१९०५॥ ॥ सवैया ॥ डेरो परै तिन को जु जहाँ लघ घेरन की नदिआ उठ धावै। तेज चले हहराट किए अति ही चित शत्रन के डरु पावै। पारसी बोल मलेछ कहै रन ते टरिकै पगु एक न आवै। स्याम जू को टुक हेरि कहै सर एक ही सउ जमलोक पठावै ॥ १९०६ ॥ ॥ सवैया ॥ अगने इत कोप मलेछ चड़े उत सिंधजरा बहु लै दलु आयो। पत्र सकै बनकै गन कै कोऊ जालि न को कछु पार न पायो। ब्रिजनाइक बारुनी पीतो हुतो तह ही तिन दूतन जाइ सुनायो। अउर जु ह्वै डरु प्रान तजै इत स्री जदुबीर महाँ सुखु पायो ॥ १९०७ ॥ ॥ सवैया ॥ इत कोप मलेछ चड़े अगने उत आयो लै सिंध जरा दल भारो। आवत है गजराज बने मनो आवत है उमड्यो घन कारो। स्याम हली मथुरा ही के भीतर घेर लए जस स्याम उचारो। शेर बडे दोऊ घेर लए बहु बीरन को मनो कै करि बारो ॥ १९०८ ॥ ॥ सवैया ॥ काल हली सभ शस्त्र संभार कै क्रोध घनो चित बीर बिचार्‌यो। सैन मलेछन को जह थो तिह ओर ही स्याम

यदि चाहता तो वन में पत्तों को तो गिन सकता था परन्तु उनकी गणना असंभव थी ॥ १९०५ ॥ ॥ सवैया ॥ जहाँ उनके खेमे लगते थे, वहीं नदी के बाढ़ के समान सैनिक उमड़ पड़ते थे। सैनिकों की तेज और धमाकेदार गति के कारण शत्रुओं के मन भयभीत हो रहे थे। म्लेच्छ लोग फ़ारसी भाषा में कह रहे थे कि युद्ध से एक पग भी पीछे नहीं हटेंगे और श्रीकृष्ण को देखते ही एक ही बाण से यमलोक पहुँचा देंगे ॥ १९०६ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर म्लेच्छ क्रोधित होकर चढ़े और उधर जरासंध बहुत सी सेना लेकर आ पहुँचा। वन के पत्तों को गिना जा सकता है परन्तु इस सेना का पार नहीं पाया जा सकता। वारुणी पान करते हुए श्रीकृष्ण को दूतों ने जाकर सब हाल सुनाया। अन्य सबके तो प्राण डर के मारे तड़फड़ाने लगे, परन्तु श्रीकृष्ण को यह समाचार सुनकर अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ ॥१९०७॥ ॥ सवैया ॥ इधर क्रोधित होकर म्लेच्छ चढ़े और उधर जरासंध विशाल सेना के साथ आ पहुँचा। सभी हाथियों के समान मस्त चले आ रहे हैं, मानो काले बादल उमड़कर चले आ रहे हों। कृष्ण और बलराम को मथुरा के भीतर ही घेर लिया गया और यह ऐसा लग रहा था कि अन्य वीरों को बालक समझकर दो बड़े शेरों को घेर लिया गया हो ॥ १९०८ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने शस्त्र सँभालकर मन में अत्यंत क्रोध किया और जिस ओर म्लेच्छों की सेना थी

भनं पग धार्यो । प्रान किए बिन बीर घने घन घाइल कै घनु सूरन डार्यो । नैक सँभार रही न तिनै इह भाँत सो स्याम जू यौ दलु मार्यो ॥ १६०६ ॥ एक परो भट घाइल होइ धर एक परे बिन प्रान ही मारे । पाइ परे तिनके सु कटे कहूँ हाथ (मू०ग्रं०४१६) पर तिनके कहूँ डारे । एकसु शंकत हुइ भटवा तजि तउन सनै रनभूँम सिधारे । ऐसो सु जीत भई प्रभ की जु मलेछहु ते सभ या बिध हारे ॥ १६१० ॥ ॥ सवैया ॥ वाहद खाँ फरजुल्लहि खाँ बरबीर निजाबत खाँ हरि मार्यो । जाहद खाँ लतफुल्लह खाँ इनहूँ कर खंडन खंडहि डार्यो । हिंमत खाँ पुन जाफर खाँ इनहूँ मुसली जू गदा सिउ प्रहार्यो । ऐसे सु जीत भई प्रभ की सभ सैन मलेछन को इम मार्यो ॥ १६११ ॥ ॥ सवैया ॥ ए उमराव हने जदुनंदन अउर घनो रिसि सो दलु घायो । जो इन ऊपर आवत भ्यो ग्रहि को सोई जीवत जान न पायो । जैसे मधिआन को सूर दिपै इह भाँति को क्रुद्ध कै तेज बढायो । भाज मलेछन के गन गे जदुबीर के सामुहि एक न आयो ॥ १६१२ ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसो सु जुद्ध कियो नंदनंदन या सँग जूझ कउ एक न आयो । होर दशा तिह कालजमंन करोर कई दल अउर

उसी तरफ़ बढ़ चला । अनेकों वीरों को निष्प्राण कर दिया और अनेकों को घायल कर फेंक दिया । श्रीकृष्ण ने इस प्रकार शत्रुदल का विनाश किया कि किसी को तनिक भी होश न रहा ॥ १६०६ ॥ कोई घायल होकर पड़ा है और कोई धरती पर निष्प्राण होकर पड़ा है । कहीं कटे हाथ और कहीं कटे पैर पड़े हैं । कई वीर शंकित होकर युद्धभूमि से भाग खड़े हुए । इस प्रकार श्रीकृष्ण की विजय हुई और सभी म्लेच्छ हार गए ॥ १६१० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने वाहिद ख़ाँ, फ़रजुल्लाह ख़ाँ, निजावत ख़ाँ, जाहिद ख़ाँ, लतफ़ुल्लाह ख़ाँ आदि को खण्ड-खण्ड करके मार डाला । हिम्मत ख़ाँ, जाफर ख़ाँ आदि पर बलराम ने गदा से प्रहार किया और इन म्लेच्छों की सारी सेना को मारते हुए श्रीकृष्ण विजयी हुए ॥ १६११ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार श्रीकृष्ण ने क्रोधित होकर शत्रु-सेना और उसके राजाओं को मार डाला । जो भी इन पर टूट पड़ा, वह जीवित जाने नहीं पाया । दोपहर के सूर्य की तरह तेजस्वी होकर श्रीकृष्ण ने अपना क्रोध बढ़ाया और इस प्रकार म्लेच्छ गण भाग गए तथा श्रीकृष्ण के सामने कोई भी नहीं टिका ॥ १६१२ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने ऐसा युद्ध किया कि फिर उनके साथ लड़नेवाला कोई

पठायो । सोऊ महूरत दुइक भिर्यो न टिक्यो फिर अंत के धाम सिधायो । रीझ रहे सभ देव कहै इव स्री जदुबीर भलो रन पायो ॥ १९१३ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोध भरे रनभूमि बिखे इक जादव शस्त्रन को गहिकै । बल आप बराबर सूर निहार कै जूझ को जाति तहा चहिकै । कर कोप भिरे न टरै तहले दोऊ मार ही मार बली कहिकै । सिर लागे क्रिपान परै कटिकै तन भी गिर नैकु खरे रहिकै ॥१९१४॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिजराज को बीच अयोधन के संगि शस्त्रन कै जब जुद्ध मच्यो । भटवान के लाल भए पटवा ब्रहमा मनो आरण लोक रच्यो । अउर निहार भयो अति आहव खोल जटा सभ ईस नच्यो । पुन यौं सभ सैन मलेछन ते कबि स्याम कहै नही एक बच्यो ॥ १९१५ ॥ ॥ दोहरा ॥ ल्यायो थो जो सैन संगि तिन ते बच्यो न बीर । जुद्ध करन को कालजमन आप धर्यो तब धीर ॥ १९१६ ॥ ॥ सवैया ॥ जंग दराइद कालजमंन बगोइद कीमत फौज को शाहम । बामन जंग बुगो कुन ब्या हरगिज दिल मो न जरा कुन वाहम । रोज मयाँ दुनिआ अफताबम स्याम शबे अदली सभ शाहम । कान्ह गुरेजी मकुन तु बिआ खुसमातुकु नेम जि

नहीं बचा। अपनी यह दशा देखकर कालयवन ने कई करोड़ दल और भेजा जो कि दो मुहूर्त तक लड़ा और अंत में यमलोक जा पहुँचा। सभी देवता प्रसन्न होकर यह कहने लगे कि श्रीकृष्ण बहुत ही कुशल युद्ध कर रहे हैं ॥ १९१३ ॥ ॥ सवैया ॥ यादवगण शस्त्रों को पकड़कर मन में क्रोधित होकर युद्धभूमि में अपने बराबर का शूरवीर देखकर उससे लड़ रहे हैं। वे क्रोधित होकर भिड़ रहे हैं और 'मार-मार' चिल्ला रहे हैं। वीरों के सिर कृपाण लगते ही तथा धड़ कुछ देर खड़े रहने के बाद धरती पर गिर पड़ रहे हैं ॥ १९१४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने युद्धभूमि में भीषण युद्ध किया तो शूरवीरों के वस्त्र इस प्रकार लाल हो गए मानो ब्रह्मा ने किसी लाल लोक की रचना की हो। युद्ध को देखकर जटाओं को खोलकर शिव भी नृत्य करने लगे और इस प्रकार म्लेच्छ सेना में से एक भी नहीं बचा ॥ १९१५ ॥ ॥ दोहा ॥ साथ लाये हुए वीरों में से एक भी न बचा और कालयवन स्वयं युद्ध करने के लिए आ पहुँचा ॥ १९१६ ॥ ॥ सवैया ॥ जंग करने के लिए आया हुआ कालयवन कहता है कि कृष्ण! सभी शंकाओं को छोड़कर युद्ध करो, मैं अपनी सेना का स्वामी हूँ। मैं इस संसार में सूर्य की भाँति उदित हुआ हूँ और मैं धन्य तथा ऐश्वर्यवान हूँ मैं ही रात्रिपति चन्द्र भी हूँ हे कृष्ण

जंग गुआहम ॥ १९१७ ॥ (मू०ग्रं०४१७) ॥ सवैया ॥ यौ सुनि कै तिह की बतिया ब्रिजनाइक ताही की ओर सिधारे । क्रोध बढाइ चितै तिह को अगनायुध लै तिह ऊपरि झारे । सूत हन्यो प्रिथमै तिहको फिरकै तिहके हय चारही मारे । अउर जिते बिबधा स हुते कबि स्याम कहै सभ ही कटि डारे ॥ १९१८ ॥ ॥ चौपई ॥ जो मलेछ रिस शस्त्र सँभारो । सो कटि स्री ब्रिजनाथह डारे । आयो भिरन इही बलु कह्यो । जब अरि पाइ पिआदा रह्यो ॥ १९१९ ॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह बिचार कियो चित मै भई सोन मलेछ जो मुशट लरैहै । तउ कबि स्याम कहै हमरे सभ ही तन को अपवित्र करैहै । आयुध कउच सजे तन मै सभ सैन जुरै मुह नाइ बधैहै । जो इह को सिर काटत हो तु निरस्त्र भयो हमरो बलु जैहै ॥ १९२० ॥ ॥ सवैया ॥ एक बिचार कियो चित मै भजहौ इत तो इह पाछे परैहौ । जैहो हउ तोरोई बीच चल्यो तन भेटन याह मलेछ न वैहौ । सोवत है मुचकंद जहाँ धसि वाही गुफा महि जाइ जगैहौ । जैहो बचाइ मै आपन कै तिह डीठह सो इह को

अब युद्ध को टालना मत । प्रसन्नतापूर्वक आओ ताकि हम जंग की गेंद रूपी बाज़ी को जीत सकें ॥ १९१७ ॥ ॥ सवैया ॥ उसकी ये बातें सुनकर श्रीकृष्ण उसकी ओर चले और क्रोधित होकर उस पर आग्नेयास्त्र चलाया । पहले उसका सारथि मार गिराया और पुनः उसके चारों घोड़े मार डाले । जितने भी विविध अस्त्र उसने प्रयुक्त किए उन सबको श्रीकृष्ण ने काट डाला ॥ १९१८ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिस म्लेच्छ ने भी शस्त्र सँभाला उसे श्रीकृष्ण ने काट डाला । जब शत्रु पैदल ही रह गया अर्थात् रथविहीन हो गया तो श्रीकृष्ण ने कहा कि क्या इसी बल पर तुम मुझसे लड़ने आए थे ॥ १९१९ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण ने मन में विचार किया यदि यह म्लेच्छ मुष्टिका युद्ध हमसे करेगा तो हमारे सारे शरीर को अपवित्र कर देगा । यदि यह कवच और शस्त्र सजाकर सारी सेना समेत आ जाय तो भी मुझे नहीं मार सकता और यदि मैं इसे इस निःशस्त्र रूप में मारता हूँ तो मेरे बल का नाश होगा ॥ १९२० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने चित्त में विचार किया कि यदि मैं भागूंगा तो यह मेरे पीछे भागेगा । मैं किसी गुफा में घुस जाऊँगा परन्तु इस म्लेच्छ को अपना तन छूने नहीं दूंगा । जहाँ मुचुकुंद (मान्धाता का पुत्र जिसे वरदान था कि जो उसको सोते से जगाएगा भस्म हो जाएगा) सोया हुआ है उसे मैं जगा दूंगा मैं स्वयं छुप जाऊँगा परन्तु इसको उसकी दृष्टि की वह्नि

जरवैहो ॥ १९२१ ॥ ॥ सोरठा ॥ तउ इह स्वरगहि जाइ जउ इह रन भीतर हनउ । अगन भए जरवाइ रवैहो धरम मलेछ को ॥ १९२२ ॥ ॥ सवैया ॥ छोरकै स्यंदन शस्त्रन त्याग कै कान्ह भग्यो जनु त्रास बढायो । वाहि लख्यो जि भज्यो मुहि ते मथुराहू के नाइक ह्वै कहि धायो । सोवत थो मुचकंद जहाँ सु तहाँ ही गयो तिह जाइ जगायो । आप बचाइ गयो तन को इह आवत थो इह को जरवायो ॥१९२३॥ ॥ सोरठा ॥ आपन को बचवाइ गयो कान्ह मुचकंद ते । तजी नीद तिह राइ हेरत भसम मलेछ भ्यो ॥ १९२४ ॥ ॥ सवैया ॥ जर छार मलेछ भयो जब ही मुचकंद पै जउ ब्रिज भूखन आयो । आवत ही तिह कान्ह को हेरकै पाइन ऊपरि सीस झुकायो । अउर जितो दुखु थो तिहको हरि बातन सो तिह ताप बुझायो । ऐस समोध कै ता तिह जार कै स्री ब्रिजनाइक डेरन आयो ॥ १९२५ ॥ (मू०ग्रं०४१८)

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिसनाबतारे कालजमन बधहि धिआइ समापत ॥

से भस्म करवा दूँगा ॥ १९२१ ॥ ॥ सोरठा ॥ यदि मैं इसे (कालयवन को) युद्ध में मारता हूँ तो यह स्वर्ग चला जायगा इसलिए इसे अग्नि से भस्म करवाऊँगा ताकि इसका म्लेच्छ-धर्म बना रहे ॥ १९२२ ॥ ॥ सवैया ॥ रथ को छोड़कर और शस्त्रों को त्यागकर श्रीकृष्ण जी सबको भयभीत करते हुए भागे । कालयवन ने सोचा कि मुझसे डरकर भगे हैं, इसलिए वह भी कृष्ण को पुकारता हुआ उनके पीछे भागा । कृष्ण वहीं पहुँचे जहाँ मुचुकुंद सोए हुए थे और उन्होंने उसे (ठोकर मारकर) जगा दिया तथा स्वयं छुप गए । इस प्रकार कृष्ण ने स्वयं को तो बचा लिया, परन्तु कालयवन को भस्म करवा दिया ॥ १९२३ ॥ ॥ सोरठा ॥ कृष्ण ने स्वयं को मुचुकुंद से बचा लिया परन्तु निद्रा का त्याग करते हुए जब उसने राजा कालयवन को देखा तो वह भस्म हो गया ॥ १९२४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कालयवन जलकर राख हो गया तो श्रीकृष्ण मुचुकुंद के पास आए । मुचुकुंद ने कृष्ण को देखते ही उनके चरणों पर शीश झुकाया । भगवान श्रीकृष्ण ने अपने वचनों से उसका दु:ख दूर किया और मुचुकुंद को उपदेश देकर तथा कालयवन को भस्म कर वापस अपने घर आए ॥ १९२५ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में कालयवन-वध अध्याय समाप्त ॥

अथ जरासिंध को पकरकर छोरबो कथनं ॥

॥ सवैया ॥ जउ लगि डेरन आवत थो तब लउ इक आइ संदेश सुनायो । धाम चलो ब्रिजनाथ कहा तुम पै सजि सैन जरासिंध आयो । अउ सुनिकै बतिया तिहकी मन मै भट अउरन त्रास बढायो । स्याम भनै जदुबीर हलो अति ही मन आपन मै सुख पायो ॥ १६२६ ॥ ॥ दोहरा ॥ एई बातै करत भट निज पुर पहुचे आइ । भूप बैठ बुधवंत सभ अपने लिए बुलाइ ॥ १६२७ ॥ ॥ सवैया ॥ जोर घनो दलु सिंध जरा ब्रिप आयो है कोप अबै कहि कइयै । सैन घनो इह के संगि है जो पै जुधु करै नही जात बचइयै । कै इह को सभ जाइ मिलै पुर छाड नही अनतै कउ सिधइयै । बात कुपेच बनी सभ ही इन बातन ते ये कहा अब कइयै ॥१६२८॥ ॥ सोरठा ॥ कीनो इहै बिचार पुर तजि कै अनतै बसहि । ना तर डारै मार जरासिंध भूपति प्रबल ॥ १६२६ ॥ कीजै सोऊ बिचार जो भावै सभ जनन मन । अपने चितह बिचार बात न कीजै ठान हन ॥ १६३० ॥ ॥ सवैया ॥ तजिकै मथुरा सुनि कै इह शत्रु

जरासंध को पकड़कर छोड़ना

॥ सवैया ॥ जब तक श्रीकृष्ण अपने खेमे में पहुँचे, किसी ने आकर संदेश दिया कि हे श्रीकृष्ण ! आप घर की तरफ़ क्यों जा रहे हैं ? उधर जरासंध सेना से सुसज्जित होकर आ रहा है। उसकी बातें सुनकर वीरों के मन भयभीत हो उठे, परन्तु श्रीकृष्ण और बलराम को अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ ॥ १६२६ ॥ ॥ दोहा ॥ ये ही बातें करते हुए सभी वीर नगर में आ पहुँचे। राजा (उग्रसेन) ने तब अपने सभी विद्वानों को बुला भेजा ॥ १६२७ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने कहा कि जरासंध बहुत सेना के साथ क्रोधित होकर आ रहा है और युद्ध करके उससे बचा नहीं जा सकता। उसे या तो आगे से जाकर मिलें अन्यथा नगर को छोड़कर कहीं अन्यत्र भाग चलें। यह मामला बड़ा गंभीर है अब केवल बातें करने से कोई लाभ नहीं होगा ॥ १६२८ ॥ ॥ सोरठा ॥ अन्त में यही विचार किया गया कि नगर को छोड़कर दूसरे स्थान पर बसा जाय नहीं तो प्रबल राजा जरासंध सबको मार डालेगा ॥ १६२६ ॥ निर्णय वही लिया जाना चाहिए जो सबके मन को अच्छा लगे। केवल अपने चित्त की बात को ही हठपूर्वक नहीं मानना चाहिए ॥ १६३० ॥ ॥ सवैया ॥ शत्रु के बारे में सुनकर यादवगण अपने

सु लैके कुटंबन जादो पराए । एक बडो गिर थो तिह भीतर नैंकु टिकै चित मै सुखु पाए । घेरत भ्यो नग सिंघ गरा तिह की उपमा कबि स्याम सुनाए । पातन के जन भच्छन कउ भटबानहि बादर ही मिलि आए ॥ १६३१ ॥
॥ दोहरा ॥ जरासिंध तब मंत्रिअन संगि यो कह्यो सुनाइ । नगभारी इह सैन ते नैंकु न सोख्यो जाइ ॥ १६३२ ॥
॥ सोरठा ॥ दीजै आग लगाइ दसो दिशा ते घेरि गिर । आपन ही जर जाइ स्री जदुबीर कुटंब सन ॥ १६३३ ॥
॥ सवैया ॥ घेर दसो दिस ते गिर कउ कबि स्याम कहै दई आग लगाई । तैसे ही पउन प्रचंड बह्यो तिह पउन सो आग घनी हहराई । जीव बदो त्रिन रूख घनो छिन बीच बए फुन ताहि जराई । तउन घरी तिन लोगन पै फुन होत भई अति ही दुखदाई ॥१६३४॥ ॥ चौपई ॥ जीव मनुच्छ जरे त्रिन जबै । शंका करत भए भट तबै । मिल सभ ही जदुपति पहि आए । दीन भाति हुइ अति घिघिआए ॥ १६३५ ॥ ॥ सभ जादो बाच ॥ ॥ चौपई ॥ प्रभ जू हमरी (मू०ग्रं०४६६) रच्छा कीजै । जीव राख इन सभ को लीजै । आपह कोऊ उपाव बतइयै । कै भजिअै कै जूझ मरइयै ॥ १६३६ ॥

परिवारों को लेकर मथुरा को छोड़कर चल पड़े और एक बड़े पर्वत (की कन्दराओं) में टिककर प्रसन्न होने लगे। राजा जरासंध ने पर्वत घेर लिया और ऐसा लग रहा था कि मानो नदी पार करने के लिए घाट पर खड़े लोगों को समाप्त करने के लिए ऊपर से वीर बादल उमड़कर आ रहे हों॥ १६३१ ॥
॥ दोहा ॥ जरासंध ने तब मंत्रियों से कहा कि यह बहुत बड़ा पर्वत है इस पर यह सेना चढ़ नहीं पाएगी ॥ १६३२ ॥ ॥ सोरठा ॥ दसों दिशाओं से पर्वत को घेरकर इसमें आग लगा दो जिससे सभी यादव परिवारों समेत स्वयं ही जल जाएँगे ॥१६३३॥ ॥ सवैया ॥ कवि श्याम का कथन है कि दसों दिशाओं से घेरकर पर्वत को आग लगा दी गई। प्रचंड पवन के बहने से वह आग और धधक उठी। जब तिनके, वृक्ष, जीवादि सभी क्षण भर में नष्ट हो गए तो वे क्षण यादवों के लिए अत्यन्त दुःखदायी थे ॥ १६३४ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब जीव और तृण जलने लगे तो सभी यादव वीर शंकाग्रस्त होकर श्रीकृष्ण के पास आए और घिघियाते हुए अपना दुःख सुनाने लगे ॥ १६३५ ॥ ॥ सर्व यादव उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ हे प्रभु ! हमारी रक्षा कीजिए और इन सब जीवों को बचा लीजिए। आप ही कोई उपाय बताएँ ताकि या तो हम जूझ

॥ सवैया ॥ तिन की बतिया सुनिकै प्रभ जू गिर कउ संगि पाइन के मसक्यो । न सक्यो सह भार सु ता पग को कबि स्याम भनै जल लउ धसिक्यो । उसक्यो गिर ऊरध को धसिकै कोऊ पावक जीव जरा न सक्यो । जदुबीर हली तिह सैन मै कूद परो नहि या तिनको कसिक्यो ॥ १९३७ ॥ ॥ सवैया ॥ एकहु हाथ गदा गहि स्याम जू भूपत के बहुते भट मारे । अउर घने असवार हने बिन प्रान घने गजिकै भुअ पारे । पाइन पंत हनै अगने रथ तोर रथी बिरथी कर डारे । जीत भई जदुबीर कियो कबि स्याम कहै सभ यौं अर हारे ॥ १९३८ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भट स्याम सो जूझ के आवत जूझत है सु लगे भट भीरन । स्री ब्रिजनाथ के तेज के अग्र कहै कबि स्याम धरै कोऊ धीर न । भूपत देख दसा तिन की सु कह्यो इह भांति भयो अति ही रन । मानो तँबोली ही को सम ह्वै ब्रिप फेहत पानन की जिम बीरनि ॥ १९३९ ॥ ॥ सवैया ॥ इत कोप गदा गहि कै मुसलीधर सत्रन सैन भले झकझोर्यो । जो भट आइ भिरे समुहे तिह एक चपेटहि सो सिर तोर्यो । अउर जिती चतुरंग चमूं तिनको मुख ऐसी ही भांत सो मोर्यो । जीत लए सभ ही अरिवा तिन तो अजित्यो भट एक न

मरें अन्यथा भाग जाएँ ॥ १९३६ ॥ ॥ सवैया ॥ उनकी बातें सुनकर भगवान ने पर्वत को पैरों से दबाया जो कि उनका भार सहन न कर सका और जल के समान नीचे धसक गया । पर्वत नीचे धँसकर पुन: ऊपर उठा और इस प्रकार अग्नि किसी को भी जला न सकी । इसी समय श्रीकृष्ण और बलराम चुपचाप शत्रु की सेना में कूद पड़े ॥ १९३७ ॥ ॥ सवैया ॥ एक हाथ में गदा पकड़कर श्रीकृष्ण ने राजा के बहुत से वीर मार डाले । अनेकों सवारों को मार कर धरती पर गिरा दिया । पैदलों की पंक्तियों को नष्ट कर डाला और रथियों को विरथी कर डाला । इस प्रकार सब वीरों को मारकर श्रीकृष्ण की जीत हो गई और शत्रु हार गया ॥१९३८॥ ॥ सवैया ॥ जो वीर श्रीकृष्ण से लड़ने के लिए आते हैं, वे अत्यन्त मनोयोग से जूझते हैं । राजा (उग्रसेन) युद्ध में वीरों की दशा देखकर कहते हैं राजा (जरासंध) तंबोली की तरह है जो पान को चबाने के समान सेना को नष्ट किए जा रहा है ॥१९३९॥ ॥ सवया ॥ इधर क्रोधित होकर गदा हाथ में लेकर बलराम ने शत्रु-सेना को झकझोर डाला और जो वीर सामने आया, एक ही चपेट से उसका सिर तोड़ डाला । अन्य जितनी भी सेना थी उसका मुँह तोड दिया और शत्रु-सेना को

छोर्‌यो ॥ १६४० ॥ कान हली मिलि भ्रात दुहूँ जब सैन सभै तिह भूप को मार्‌यो । सो कोऊ जीत बच्यो तिह ते जिम दांतन घास गह्यो बलु हार्‌यो । ऐसी दसा जब ही दल की तब भूपत आपने नैन निहार्‌यो । जीत अउ जीव की आस तजी हठ ठानत भ्यो पुरखत्त सँभार्‌यो ॥१६४१॥ ॥ सोरठा ॥ दीनी गदा चलाइ स्री जदुपति न्रिप हेरिकै । सूतहि दयो गिराइ अस्व चार संग ही हने ॥ १६४२ ॥ ॥ दोहरा ॥ पाद पिआदा भूप भ्यो अउर गदा तब झार । स्याम भनै संग एक ही घाइ भयो बिसंभार ॥ १६४३ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ जब सिंध जरा बिसंभार भयो । गहिकै तब स्री घनिस्याम लयो । गहिकै तिह को इह भांत कह्यो । पुरखत्त इही जड़ जुद्ध चह्यो । (मू०ग्रं०२००) ॥ १६४४ ॥ ॥ दोहरा ॥ ॥ हली बाच कान सो ॥ काटत हो अब सीस इह मुसलीधर कह्यो आइ । जो जीवत इह छाडिहो तउ इह रार मचाइ ॥१६४५॥ ॥ जरासिंध बाच ॥ ॥ सवैया ॥ सुध लै तब भूप डरातुर ह्वै तजि शस्त्रन स्याम के पाइ पर्‌यो । बध मोरो करो न अबै प्रभजू न लह्यो तुमरो बल भूल पर्‌यो । इह भाँति भयो

पूरी तरह जीत लिया ॥ १६४० ॥ कृष्ण और बलराम दोनों भाइयों ने जब मिल शत्रु की सारी सेना को मार डाला तो वही जीवित बचा जिसने दाँतों में घास के तिनके पकड़कर शरण ग्रहण कर ली । यह दशा जब जरासंध ने अपनी आँखों से देखी तो विजय और जीवन की आशा को छोड़कर उसने भी युद्ध के लिए अपना पौरुष सँभाला ॥ १६४१ ॥ ॥ सोरठा ॥ श्रीकृष्ण ने राजा को देखकर उस पर गदा चला दी और उसके चार घोड़ों को मारते हुए राजा को भी गिरा दिया ॥ १६४२ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा अब पैदल हो गया । तब उस पर कृष्ण ने पुन: गदा का वार किया और राजा अपने आपको सँभाल न सका ॥ १६४३ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ जब राजा लुढ़ककर गिर गया तब श्रीकृष्ण ने उसे पकड़कर यह कहा कि हे मूर्ख ! क्या इसी पौरुष के बल पर तुम युद्ध करने चले थे ॥ १६४४ ॥ ॥ दोहा ॥ ॥ बलराम उवाच कृष्ण के प्रति ॥ बलराम ने कहा कि अब मैं इसका सिर काटता हूँ क्योंकि यदि इसे जीवित छोड़ दिया गया तो यह पुन: लड़ाई करेगा ॥ १६४५ ॥ ॥ जरासंध उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ राजा तब होश सँभालकर भयभीत होकर शस्त्र त्यागकर श्रीकृष्ण के चरणों में आ पड़ा और कहने लगा कि हे प्रभु ! मेरा वध मत कीजिए, मैंने आपके बल को अच्छी तरह जाना नहीं । इस प्रकार शरणागत होकर

घिघयात घनो न्रिप ह्वै शरनागत ऐसे रर्यो । कबि स्याम कहै इह भूप की देख दशा करुनानिध लाज भर्यो ॥ १६४६ ॥ ॥ कान्ह जू बाच हली सो ॥ ॥ तोटक छंद ॥ इह दै रे हली कह्यो छोर अबै । मन ते तजि क्रोध की बात सभै । कहिओ किउ हम सो इह जूझ चह्यो । तब यो हसिकै जदुराइ कह्यो ॥ १६४७ ॥ ॥ सोरठा ॥ बडो शत्र जो होहि तजि शस्त्रन पाइन परै । नैक न करि चित रोहि बडे न बध ता को करत ॥ १६४८ ॥ ॥ दोहरा ॥ जरासिंध को छोर प्रभ कह्यो कहा सुनि लेहु । जो बतिया तुहि सो कहौं तुम तिन सो चितु देहु ॥ १६४६ ॥ ॥ सवैया ॥ रे न्रिप न्याइ सदा करियो दुख दैकै अन्याइ न अनाथह दीजो । अउर जिते जन है तिन दै कछु कै कै क्रिपा सभ ते जसु लीजो । बिप्पन सेव सदा करियौ दग बाजन जीवत जान न दीजो । यौ हम सो संग छत्रनि को कबहू रिस मांडकै जुद्ध न कीजो ॥ १६५० ॥ ॥ दोहरा ॥ जरासिंध सिर नाइकै धाम गयो पछुताइ । इत ग्रहि आए स्याम जू हरख हिए हुसलाइ ॥ १६५१ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जरासिंध पकरके छोरबो धिआइ समापतम ॥

राजा घिघियाने लगा और उसकी यह दशा देखकर श्रीकृष्ण भी ग्लानि से भर उठे ॥ १६४६ ॥ ॥ श्रीकृष्ण उवाच हलधर के प्रति ॥ ॥ तोटक छंद ॥ हे बलराम ! इसे अभी छोड़ दो और मन से सारा क्रोध दूर कर दो । तब बलराम ने कहा कि यह हम लोगों से लड़ता क्यों है ? तब श्रीकृष्ण ने हँसकर उत्तर दिया ॥ १६४७ ॥ ॥ सोरठा ॥ यदि बड़ा शत्रु शस्त्र त्यागकर पाँव पड़ता है तो मन में तनिक भी क्रोध न रखते हुए बड़े लोग उसका वध नहीं करते ॥ १६४८ ॥ ॥ दोहा ॥ जरासंध को छोड़कर प्रभु ने कहा कि हे राजा ! मैं तुमसे जो बात कह रहा हूँ उसे ध्यानपूर्वक सुनो ॥ १६४६ ॥ ॥ सवैया ॥ हे राजा ! सदा न्याय करना और अनाथों के साथ कभी अन्याय न करना । सभी को कुछ न कुछ दान देकर यश-अर्जन करना, विप्रों की सेवा करना, धोखेबाजों को कभी जीवित न छोड़ना और हमारे जैसे क्षत्रियों के साथ क्रोधित होकर कभी युद्ध न छेड़ देना ॥ १६५० ॥ ॥ दोहा ॥ जरासंध सिर झुकाकर पछताता हुआ अपने घर चला गया और इधर प्रसन्न होकर श्रीकृष्ण वापस अपने घर आ गए ॥ १६५१ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में जरासंध को पकड़कर छोड़ना अध्याय समाप्त ॥

अथ स्री क्रिशन द्वारा द्वारका निर्माण बरननं ॥

॥ चौपई ॥ सुनत जीत फूले सभ आवह। ध्रिप छोर्यो सुनि सीसु ढुरावह। याते हियाउ सभन का डर्यो। कहत स्याम घट कारज कर्यो ॥१९५२॥ ॥ सवैया ॥ कारज कियो लरकाहू को स्याम जी ऐसो बली तुमरे कर आयो। छोर दयो करकै करुना तिन काढि दयो पुर ते फल पायो। ऐसो अजानन काम करै जु कियो हरि तै कह्यो सीसु ढुरायो। छाड दयो नहो जीत अबै अर अउर चमूं बहु लैन पठायो ॥ १९५३ ॥ ॥ सवैया ॥ एक कहै मथुरा को चलो इक फेरि कहै ध्रिप (मू०ग्रं०५०१) लै दल ऐहै। स्याम कहै तिह के सभ संग कहो भट कउन सो जूझ मचैहै। अउर कदाच कोऊ हठ ठानकै जउ लरिहै तऊ जीत न ऐहै। ताते न धाइ बसो पुर मै बिधना जोऊ लेख लिख्यो सोऊ ह्वैहै ॥ १९५४ ॥ ॥ सवैया ॥ छाडिबो भूपत को सुनकै सभ ही मन जादव त्रास भरे। निध नीर के भीतर जाइ बसे मुख ते सभ ऐसि चले सु

श्रीकृष्ण द्वारा द्वारिकापुरी-निर्माण-वर्णन

॥ चौपाई ॥ जीत की बात सुनकर सभी फूले नहीं समा रहे थे, परन्तु राजा जरासंध को छोड़ दिया है यह जानकर सभी सिर धुन रहे थे। इससे सबका मन भयभीत था और सभी कह रहे थे कि कृष्ण ने यह ठीक कार्य नहीं किया (कि राजा जरासंध को जीवित छोड़ दिया) ॥१९५२॥ ॥ सवैया ॥ सभी कहने लगे कि श्रीकृष्ण ने बच्चों वाला काम किया कि इतना बड़ा बली हाथ में आया था और उसे छोड़ दिया। उसे पहले छोड़ दिया था तो उसका फल हमें यह मिला कि हमें अपना नगर छोड़ना पड़ा। सभी श्रीकृष्ण के बच्चों जैसे कार्य पर दुःख में माथा हिलाने लगे। उसे अब जीतकर छोड़ दिया है, वास्तव में हम तो यह समझते हैं कि उसे और सेना लेने के लिए भेजा है ॥ १९५३ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई कहने लगा कि वापस मथुरा चला जाय, तो कोई कहने लगा कि राजा फिर दल लेकर आ चढ़ेगा तब उसके साथ कौन जूझ मरेगा। तथापि, कोई लड़ा भी तो उससे जीत नहीं सकेगा। इसलिए अभी जल्दी नगर में नहीं चलना चाहिए, जो विधाता को मंजूर होगा वही होगा और देखा जायगा ॥ १९५४ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा का छोड़ा जाना सुनकर सभी यादवों के मन भयभीत हो उठे। वे सभी विभिन्न प्रकार की

रहे । किनहूँ नही स्याम कहै अपुने पुर की पुन ओर कउ पाइ धरे । अति ही है डरे बलवंत खरे बिन आयुध ही सभ मार मरे ॥ १९५५ ॥ ॥ सवैया ॥ सिंध पै जाइ खरे भए स्याम जू सिंध हुते सु किछू करि चाह्यो । छोर कह्यो भुअ छोर दई तिन कै धन कौ जिह लउ सर बाह्यो । कंचन के ग्रहि कै दीए स्यार भले किनहू तिन कउन अचाह्यो । ऐसे कहै सभ ही अपने मन तैं प्रभ जू सभ को दुख दाह्यो ॥ १९५६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो सनकादिक कै रहे सेव घनी तिनके हरि हाथ न आए । पूजत है बहुते हित कै तिन कउ मुन पाहन मै सह पाए । अउर घन्यो मिलि बेदन के मत मै कबि स्याम कहे ठहराए । ते कहै ईहा ही है प्रभ जी जब कंचन के ग्रहि स्याम बनाए ॥ १९५७ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम भनै सभ सूरन सो मुसकाइ हली इह भांत उचार्यो । याके लह्यो न कछू तुम भेद अरे इह चउदह लोक सवार्यो । याही हन्यो दसकंध मुरार सुबाहु इही बक को मुख फार्यो । अउर सुनो अरि दानव संख बली इह एक गदा ही सो मार्यो ॥ १९५८ ॥ ॥ सवैया ॥ हजार ही बरख इही लरिकै मधुकीटभ के घटि ते

बातें करते हुए समुद्र के किनारे जा बसे और किसी ने भी अपने नगर (मथुरा) की ओर पाँव नहीं बढ़ाया । सभी वीर बिना शस्त्र की मार के मारे हुए अत्यन्त भयभीत खड़े थे ॥ १९५५ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण समुद्र के किनारे जा खड़े हुए और उन्होंने समुद्र से कुछ करने को कहा । जब बाण-धनुष पर रखकर समुद्र को धरती छोड़ने के लिए कहा गया तो उसने धरती छोड़ दी और किसी के न चाहने पर भी सोने के घर तैयार कर दिये । यह देखकर सभी अपने मन में कहने लगे कि श्रीकृष्ण ने हम सबके कष्टों को दूर कर दिया है ॥ १९५६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो सनक-सनन्दन आदि की सेवा करते रहे, भगवान उनके भी हाथ नहीं लगे । कई मुनि उनको पत्थरों में पूजते हैं और कइयों ने वेदों के मतानुसार उनका स्वरूप निर्धारित किया है परन्तु जब श्रीकृष्ण की कृपा से यहीं पर सोने के घर बन गए तो सभी लोग यहीं भगवान का दर्शन करने और उन्हें मानने लगे ॥ १९५७ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम सब शूरवीरों से मुस्कुराते हुए कहने लगे कि इस श्रीकृष्ण ने चौदह लोकों को सँवार दिया है इसका रहस्य तुम लोग अभी तक नहीं समझ सके । इसी ने रावण, मुर, सुबाहु को मारा है और बकासुर का मुख फाड़ डाला है । इसने एक ही गदा से शंखासुर नामक बली दैत्य को मार डाला है ॥१९५८॥

जिउ काढ्यो। अउर जबै निध नीर मथ्यो तब देवन रच्छ करी सुख बाढ्यो। रावन एही हन्यो रन मै हलिकै तिह के उर मै सर गाढ्यो। अउर घनी हम ऊपरि भीर परी सु रह्यो रनखंभ सो ठाढ्यो॥ १९५९॥ अउर सुनो मन लाइ सभै तुमरे हित कंस से भूप पछारे। अउर हने तिह बाज घने गज मानहु मूल ते रूख उखारे। अउर जिते हम पै मिलिकै अरि आइ हुतो सु सभै इह मारे। माटी के धाम तुमै छडवाइकै कंचन के अब धाम सवारे॥ १९६०॥ ॥ सवैया॥ यौ जब बैन कहे मुसलीधर तउ सभ के मन मै (मू०ग्रं०५०२) सचु आयो। याही हन्यो बक अउर अघासुर याही चंडूर भली बिध घायो। कंस ते इंद्र न जीत सक्यो इन सो गहि केसन ते पटकायो। कंचन के अब धाम दिए कहि स्री ब्रिजनाथ सही प्रभ पायो॥ १९६१॥ ॥ सवैया॥ ऐसे ही दिवस बतीत किए सुख सो दुखु पै किनहू नही पायो। कंचन धाम बने सभ के सु निहारि जिनै शिव सो ललचायो। इंद्र त्याग कै इंद्रपुरी

॥ सवैया॥ इसी ने एक हज़ार वर्ष तक लड़कर मधु और कैटभ को निष्प्राण किया और जब समुद्र का मंथन हुआ तब देवताओं की रक्षा कर इसी ने उनके सुख में वृद्धि की। इसी ने रावण के हृदय में तीर मार उसे युद्ध में मारा और जब हम लोगों पर विपत्ति पड़ी तो यह युद्धस्थल में स्तम्भ की तरह डटा रहा॥ १९५९॥ तुम मन लगाकर सुनो कि इसने तुम सबके हित के लिए कंस जैसे राजा को पछाड़ फेंका और हाथी-घोड़ों को ऐसे मार फेंका मानो पेड़ों को जड़ से उखाड़ फेंका हो। जितने भी शत्रु हम सब पर चढ़ आए सबको इसने मार गिराया और अब तुम लोगों से मिट्टी के घर छुड़वाकर सोने के घर तुम्हें प्रदान किए हैं॥ १९६०॥ ॥ सवैया॥ यह बात जब बलराम ने कही तो सबने उसे सच करके माना कि इसी श्रीकृष्ण ने बकासुर, अघासुर और चण्डूर आदि को मारा था। कंस को इन्द्र भी न जीत सका था परन्तु श्रीकृष्ण ने उसे केशों से पकड़कर पछाड़ मारा था और इसने हमको सोने के घर दे दिए हैं, इसलिए अब वास्तविक प्रभु यही हैं॥ १९६१॥ ॥ सवैया॥ ऐसे ही सुख से दिन व्यतीत होने लगे और किसी ने दुःख नहीं पाया। सोने के सुन्दर घर ऐसे बने थे कि उन्हें देख शिव भी ललचा उठे। इन्द्र भी देवताओं को साथ लेकर इन्द्रपुरी का त्याग कर इस नगर को देखने

सभ देवन लै तिन देखन आयो । द्वारवती हू कउ स्याम भनै जदुराइ भली बिध ब्योत बनायो ॥ १९६२ ॥

॥ इति स्री दसम सकंध्रे बचित्र नाटक क्रिशनावतारे स्री क्रिशन द्वारा द्वारका निर्माण बरननं ध्याइ समापतम ॥

अथ बलभद्र ब्याह बरननं ॥

॥ दोहरा ॥ ऐसे क्रिशन बतीत बहु दिवस किए सुखु मान । तब लग रेवत भूप इक हली पाइ गहे आन ॥१९६३॥ नाम रेवती जाह को मम कन्या को नाम । कह्यो भूप सु प्रसंनि ह्वै ताहि बरै बलराम ॥ १९६४ ॥ ॥ सवैया ॥ भूप की यौ सुनिकै बतिया बलराम घनो चित मै सुखु पायो । ब्याह को जोर समाज सभै तिह ब्याह के काज तबै उठ धायो । ब्याह कियौ सुखु पाइ घनो बहु बिप्पन लोकन दान दिवायो । ऐसे ब्याह हुलास बढाइकै स्याम भनै अपने ग्रहि आयो ॥१९६५॥ ॥ चौपई ॥ जब पिय तीअ की ओर निहार्यो । छोटे हम इह बडी बिचार्यो । तिह के हलु लै कंधहि धरिओ । मन

आया और कवि श्याम का कथन है कि श्रीकृष्ण ने इस द्वारिका नगरी की रूप-रेखा भली प्रकार तैयार की थी ॥ १९६२ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध के बचित्र नाटक के कृष्णावतार में द्वारिका पुरी-निर्माण का अध्याय समाप्त ॥

बलभद्र-विवाह-वर्णन

॥ दोहा ॥ इस प्रकार कृष्ण जी के सुखपूर्वक बहुत से दिन व्यतीत हुए और उसके बाद रेवत नामक एक राजा बलराम के चरणों में आ पहुँचा ॥ १९६३ ॥ मेरी कन्या का नाम रेवती है और मेरी प्रार्थना है कि श्रीबलराम उसका वरण करें ॥ १९६४ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा की यह बात सुनकर बलराम अत्यन्त प्रसन्न हुए और अपने समाज को साथ लेकर विवाह के लिए तत्काल चल पड़े । प्रसन्नतापूर्वक विवाह किया और विप्रगणों को दान दिलवाया । इस प्रकार विवाह कर प्रसन्नतापूर्वक वे अपने घर वापस आ गए ॥ १९६५ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब बलराम ने अपनी पत्नी की तरफ़ देखा तो पाया कि हम तो छोटे हैं और यह बड़ी है । यह देखकर उन्होंने अपना हल उसके कंधे पर रख दिया और अपनी इच्छानुसार उसके शरीर को बना

आवत ताको तनु करिओ ॥ १९६६ ॥ ॥ दोहरा ॥ ब्याह भयो बलदेव को नाम रेवती संग । सु कबि स्याम पूरन भयो तब ही कथा प्रसंग ॥ १९६७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिसनावतारे बलभद्र ब्याह बरननं ॥

अथ रुकमन ब्याह कथनं ॥

॥ सवैया ॥ बलराम को ब्याह भयो जब ही मिलि कै नर नार तबै सुखु पायो । स्री ब्रिजनाथ के ब्याहहु कउ कबि स्याम कहै जिअरा ललचायो । भीखम ब्याह उतै दुहता को रच्यो अपनो सभ सैन बुलायो । मानहु आपने ब्याहहु कउ जदुबीर भली बिध ब्योत बनायो ॥ १९६८ ॥ ॥ सवैया ॥ भीखम भूप बिचार कियो दुहता इह स्री जदुबीर कउ दीजै । याते भलो न कछू (मू०ग्रं०५०३) कछू है हम स्याम लहै जग मै जसु लीजै । तउ लगि आइ गयो रुकमी रिस बोल उठ्यो सु पिता कस कीजै । जा कुल कीन बिबाहत है हम ता दुहता दै कहा जगु जीजै ॥१९६९॥ ॥ रुकमी बाच म्रिप सो ॥ ॥ स्वैया ॥ है

लिया ॥ १९६६ ॥ ॥ दोहा ॥ बलराम का विवाह रेवती के साथ हुआ और इस प्रकार सुकवि श्याम के कथनानुसार यह विवाह-प्रसंग पूर्ण हुआ ॥ १९६७ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में बलभद्र-विवाह-वर्णन समाप्त ॥

रुक्मिणी-विवाह-कथन

॥ सवैया ॥ जब बलराम का विवाह हो गया और सभी नर-नारियों को सुख प्राप्त हुआ तो श्रीकृष्ण का मन भी विवाह करने के लिए ललचाने लगा। राजा भीष्मक ने अपनी पुत्री का विवाह रचाया और अपनी सेना के योद्धाओं को एकत्र किया। यह ऐसा लग रहा था, मानो श्रीकृष्ण ने अपने विवाह की योजना भली प्रकार तैयार की हो ॥ १९६८ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा भीष्मक ने अपनी कन्या श्रीकृष्ण को देने का यह सोचकर विवाह किया कि इससे भला कार्य और हमारे लिए कोई नहीं हो सकेगा और श्रीकृष्ण द्वारा मेरी कन्या का वरण किए जाने पर मुझे यश भी प्राप्त होगा। तब तक भीष्मक का पुत्र रुक्मी आ गया और क्रोधित होकर पिता से कहने लगा कि यह आप क्या कर रहे हैं। जिस कुल के साथ हमारी दुश्मनी है, हम वहाँ अपनी पुत्री देकर

शशपाल चंदेरी मै बीर सु ताहि बियाह के काज बुलइयै। गूजर को कह्यो दै दुहता जग मै संग लाजन के मर जइयै। स्रेशट एक बुलाइ भलो दिज ताही के ल्यावन काज पठइयै। ब्याह की जो बिध बेद लिखी दुहता सोऊ कै बिध ताहि कउ दइयै॥ १९७०॥ ॥ स्वैया॥ यों सुनिकै सुति की बतिया न्रिप बामन ताही को लैन पठायो। दै दिज सीस चल्यो उत कउ दुहता इत भूपति की सुनि पायो। सीस धुनै कबि स्याम भनै तिन नैनन ते अति नीर बहायो। मानहु आसहि की कटिगी जर सुंदर रूख सु है मुरझायो॥ १९७१॥ ॥ रुकमनी बाच सखीन सों॥ ॥ सवैया॥ संग सहेलन बोलत भी सजनी प्रन एक अबै करिहउ। कितो जोगन भेस करो तज देस नही बिरहागन सों जरिहउ। मोर पिता हठ जिउं करिहै तु बिसेख कह्यो बिख खा मरिहउ। दुहिता न्रिप की कह्यो ना तिह कउ बरिहो तु स्याम ही को बरिहउ॥१९७२॥ ॥ दोहरा॥ अउर बिचार सु मन बिखै करिहो एक उपाइ। पतिआ दै कोऊ भेजहो प्रभ दैहै सुध जाइ॥ १९७३॥ इह चिंता कर चित

संसार में कैसे जीवित रहेंगे॥ १९६९॥ ॥ रुक्मी उवाच राजा के प्रति॥ ॥ सवैया॥ चन्देरी का राजा शिशुपाल वीर है, उसे विवाह के लिए बुलवाइए। एक गूजर को पुत्री देकर हम संसार में लज्जा से मर जायेंगे। एक श्रेष्ठ ब्राह्मण बुलाइए और उसे शिशुपाल को लाने के लिए भेजिए। विवाह की जो विधि वेदों में लिखी है उसी के अनुसार अपनी कन्या का दान राजा शिशुपाल को कीजिए॥ १९७०॥ ॥ सवैया॥ पुत्र की बातें सुनकर राजा ने एक ब्राह्मण को शिशुपाल को लाने के लिए भेजा। शीश झुकाकर वह ब्राह्मण उधर चल पड़ा और इधर राजा की कन्या ने यह बातें सुनीं। यह सुनकर वह सिर धुनने लगी और आँसू बहाने लगी। उसकी तो मानो आशा ही समाप्त हो गई और सुन्दर वृक्ष के मुरझा जाने के समान वह मुरझा गई॥ १९७१॥ ॥ रुक्मिणी उवाच सखियों के प्रति॥ ॥ सवैया॥ सखियों को रुक्मिणी कहने लगी कि हे सखी! मैं अभी एक प्रण कर रही हूँ कि मैं देश का त्याग कर योगिनी का भेष धारण करूँगी अन्यथा विरह की अग्नि में जल मरूँगी। यदि मेरे पिता विशेष रूप से हठ करेंगे तो मैं विष खाकर प्राण दे दूँगी। मैं वरण करूँगी तो केवल श्रीकृष्ण का ही वरण करूँगी अन्यथा राजा की पुत्री नहीं कहलाऊँगी॥ १९७२॥ ॥ दोहा॥ एक अन्य विचार मेरे मन में है कि एक उपाय और किया जाय और पत्र देकर किसी को भेजा जाय जो

बिखै इक दिज लयो बुलाइ । बहु धनु दे ताको कह्यो प्रभ दै पतिआ जाइ ॥ १९७४ ॥ ॥ रुकमनी पाती पठी कान प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ लोचन चार बिचार करो जिन बाचत ही पतिआ उठ धावहु । आवत है शशपाल इतै मुहि ब्याहन कउ प्रभ ढील न लावहु । मार इनै मुहि जीत प्रभू चलो द्वारवती जग मै जसु पावहु । मोरी दशा सुनिकै सभ यौ कबि स्याम कहै करि पंखन आवहु ॥ १९७५ ॥ ॥ सवैया ॥ हे पति चउदहि लोकन के सुनिऐ चित दै जु संदेस कहे है । तेरे बिना सु अहं अर क्रोधु बढ्यो सभ आतमे तोन बहे है । यौं सुनिऐ तिपरार ते आदिक चित्त बिखै कबहूं न चहे है । बाचत ही पतिया उठि आवहु जू ब्याह बिखै दिन तीन रहे है ॥ १९७६ ॥ ॥ दोहरा ॥ तीन ब्याह मै (मू०ग्रं०५०४) दिन रहे इउ कहिऐ दिज गाथ । तजि बिलंब आवहु प्रभू पतिआ पड़ दिज साथ ॥ १९७७ ॥ ॥ सवैया ॥ अउ जदुबीर सो यौ कहियौ तुमरे बिन देख निसा डरु आवै । बार ही बार अति आतुर ह्वै तन त्याग कह्यो जिअ मोर परावै । प्राची प्रतच्छ भयो

श्रीकृष्ण को यह सारी खबर दे दे ॥ १९७३ ॥ यह विचार मन में बनाकर उन्होंने एक ब्राह्मण को बुलाया और उसे बहुत सा धन देकर श्रीकृष्ण के पास पत्र ले जाने को कहा ॥ १९७४ ॥ ॥ रुक्मिणी ने पत्र कृष्ण के प्रति भेजा ॥ ॥ सवैया ॥ हे सुन्दर नयनोंवाले ! अधिक विचार नहीं करना और पत्र को पढ़ते ही उठकर दौड़े चले आना । मुझसे विवाह करने के लिए शिशुपाल आ रहा है। इसलिए तुम तनिक भी देर नहीं लगाना । उसे मारकर और मुझे जीतकर हे प्रभु ! तुम द्वारका ले चलो और संसार में यश अर्जित करो। मेरी यह दशा सुनकर आप पंख लगाकर उड़कर चले आइए ॥ १९७५ ॥ ॥ सवैया ॥ हे चौदह लोकों के स्वामी, जो सन्देश है उसे ध्यानपूर्वक सुनिए, आपके बिना सबकी आत्मा में अहंकार और क्रोध बढ़ गया है। हे तीनों लोकों के स्वामी एवं संहारक ! मैं यह चित्त में कभी नहीं चाहती हूँ कि जो मेरे पिता और भाई चाहते हैं वह हो जाय । आप पत्र पढ़ते ही चले आइए, क्योंकि विवाह में मात्र तीन दिन ही शेष बचे हैं ॥ १९७६ ॥ ॥ दोहा ॥ हे ब्राह्मण ! तुम यह कहना कि विवाह में केवल तीन दिन बचे हैं और हे प्रभु ! आप अविलम्ब इस ब्राह्मण के साथ ही चले चलिए ॥ १९७७ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण से यह कहना कि तुम्हारे बिना रात में डर लगता है और मेरी आत्मा अत्यन्त व्याकुल होकर शरीर को त्यागना

सस पूरन सो हमको अतिसै करि तावै । मैन मनो मुख आरन कै तुमरे बिनु आइ हमो डरु पावै ॥१९७८॥ ॥ सवैया ॥ लाग रह्यो तुहि ओरहि स्याम जी मै इह बेर घनी हटके । घनि स्याम की बंक बिलोकन फासके संगि फसै सु नही छुटके । नही नैकु मुराइ मुरै हमरे तुहि मूरत हेरन ही अटके । कबि स्याम भने सँग लाज के आज भए दोऊ नैन बटा नटके ॥१९७९॥ साज दयो रथ बामन को बहुतै धनु दै तिह चित्त बढायो । स्री ब्रिजनाथ लिआवन काज पठ्यो चित मै तिनहूँ सुखु पायो । यों सोऊ लै पतिया कै चल्यो सु प्रबंध कथा कहि स्याम सुनायो । मानहु पउन के गउन हूँ ते सिताब दै स्री जदुबीर पै आयो ॥ १९८० ॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथ को बास जहाँ सु कहै कबि स्याम पुरी अति नीकी । बज्र खचे अरु लाल जवाहरि जोत जगै अति ही सु मनी की । कउन सराह करै तिह की तुम ही न कहो ऐसी बुद्ध किसी की । शेश निशेश जलेश की अउर सुरेश पुरी जिह अग्रज फीकी ॥ १९८१ ॥ ॥ दोहरा ॥ ऐसी पुरी निहारकै अति चित हरख बढाइ । स्री ब्रिजपत को ग्रहि जहा तह दिज पहुच्यो जाइ ॥ १९८२ ॥

चाह रही है। पूर्व दिशा में निकला हुआ चन्द्रमा मुझे जलाता है और तुम्हारे बिना कामदेव का लाल मुख मुझे भयभीत करता है ॥ १९७८ ॥ ॥ सवैया ॥ हे कृष्ण ! मेरा मन बार-बार रोकने पर भी तुम्हारे ही तरफ लगा हुआ है और तुम्हारी बाँकी चितवन की फाँस में फँसकर रह गया है। मेरे लाख समझाने पर भी नहीं मानता और तुम्हारी ही मूर्ति में अटककर रह गया है। लज्जा के मारे आज मेरे दोनों नयन नट के समान अपने स्थान पर स्थिर हो गये ॥१९७९॥ ब्राह्मण को रथ और बहुत सा धन देकर उसको उत्साह देते हुए श्रीकृष्ण को ले आने के लिए उसे भेजकर सबने सुख प्राप्त किया। वह भी पत्र लेकर इतनी तेज़ी से चला कि मानो पवन के वेग से भी तीव्र गति से वह श्रीकृष्ण के पास आ पहुँचा हो ॥१९८०॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के आवास का नगर अत्यन्त सुन्दर था और चारों तरफ़ रत्नजड़ित एवं लाल, जवाहरों से युक्त वातावरण झिलमिला रहा हो। उस नगर का वर्णन हर एक की बुद्धि से परे की बात है, क्योंकि शेषनाग, चन्द्र, वरुण एवं इन्द्र की पुरियाँ भी द्वारका नगरी के सामने फीकी दिखाई दे रही हैं ॥ १९८१ ॥ ॥ दोहा ॥ नगर को देखकर अत्यन्त प्रसन्न होते हुए वह ब्राह्मण श्रीकृष्ण के महल के पास जा पहुँचा १९८२ सवैया ब्राह्मण को देखकर

॥ स्वैया ॥ देखत ही ब्रिजनाथ दिजोतम ठाढ भयो उठ आगै बुलायो । लै दिज आगै धरी पतिआ तिह बाचत ही प्रभ जी सुख पायो । स्यंदन साज चड़्यो अपुने सोऊ संगि लयो मनो पउन ह्वै धायो । मानो छुधातुर होइ अति ही म्रिग झुंडन के उठ केहरि धायो ॥ १९८३ ॥ ॥ स्वैया ॥ इत स्याम जू स्यंदन साज चड़्यो उत लै शशपाल घनो दलु आयो । आवत सो इनहूं सुनिकै पुर द्वार बजार जु थे सु बनायो । सैन बनाइ भली इतते रुकमादिक आगे ते लैन कउ धायो । स्याम भनै सभ ही भटवा अपने मन मै अति ही सुखु पायो ॥ १९८४ ॥ ॥ सवैया ॥ अउर बडे न्रिप आवत भे चतुरंग चमूं सु घनो (मू०ग्रं०५०५) संग लैकै । हेरन ब्याह रुकमन को अति ही चित मै सु हुलास बढैकै । भेर घनी सहनाइ संगे रन दुंदभ अउ तुरहीन बजैकै । स्याम इते छप आवत भ्यो कबि स्याम भनै तिन कारन छैकै ॥ १९८५ ॥ स्याम भनै जोऊ बेद के बीच लिखी बिध ब्याह की सो दुहूँ कीनी । मंत्रन सो अभिमंत्रन कै भुअ फेरन की सु पवित्र कै लीनी । अउर जिते दिज स्रेष्ट हुते तिन को अति ही दछना तिन दीनी । बेदी रची भली भांतह सो जदुबीर बिना सभ लागत हीनी ॥१९८६॥ ॥ सवैया ॥ तउही

श्रीकृष्ण उठ खड़े हुए और उन्होंने उसे बुलाया। ब्राह्मण ने पत्र आगे रख दिया जिसे पढ़कर श्रीकृष्ण अत्यन्त प्रसन्न हुए। अपने रथ में सवार होकर वे पवन वेग से इस प्रकार चल पड़े, मानो भूखा सिंह मृगों के झुंड के पीछे दौड़ रहा हो ॥ १९८३ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर श्रीकृष्ण रथ लेकर चले और उधर शिशुपाल बहुत सी सेना लेकर आ पहुँचा। शिशुपाल का आना सुनकर नगर में विशेष द्वार आदि सजाए गये और रुक्मी आदि सेना साथ लेकर उसका स्वागत करने के लिए पहुँचे। श्याम कवि के कथनानुसार सभी शूरवीर अपने मन में अत्यन्त प्रसन्न थे ॥ १९८४ ॥ ॥ सवैया ॥ अन्य बड़े-बड़े राजा भी चतुरंगिणी सेनाएँ लेकर मन में अत्यन्त प्रसन्न होकर रुक्मिणी का विवाह देखने के लिए पहुँचे। भेरियाँ, शहनाइयाँ, तुरहियाँ, दुन्दुभियाँ इतने जोरों से बज रही थीं कि कानों के परदे फट रहे थे ॥ १९८५ ॥ वेदविहित विधि के अनुसार दोनों का विवाह हुआ और मंत्रों की ध्वनि के बीच फेरे हुए। श्रेष्ठ विप्रों को बहुत दान-दक्षिणा दी गई। सुन्दर वेदी बनाई गई परन्तु श्रीकृष्ण के बिना वह सब अच्छा नहीं लग रहा था ॥१९८६॥ ॥ सवैया ॥ तब

लउ लै किह संग परोहति देवी की पूजा के काज सिधारे। स्यंदन पै चड़वाइ तबै तिह पाछै चलै तिह के भट भारे। या बिध देख प्रताप घनो मुख ते रुकमै इह बैन उचारे। राखी प्रभू पति मोर भली बिध धंन्य कह्यो अब भाग हमारे॥१९८७॥ ॥ चौपई ॥ जब रुकमन तिह मंदर गई। दुख संग बिह्बल अति ही भई। तिन इब रोइ शिवा संग ररिओ। तुहि ते मोहि इही बरु सरिओ॥ १९८८ ॥ ॥ सवैया ॥ दूर दई सखिआं करिकै करि लीन छुरी कह्यो घात करैहउ। मै बहु सेव शिवा की करी तिह ते सभहों सु इहै फलु पैहउ। प्रानन धाम पठो जम के इह देहरे ऊपर पाप चड़ैहउ। कै इह को रिझवाइ अबै बरिबो हरि को इह ते बरु पैहउ॥ १९८९ ॥ ॥ देवी जू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ देख दशा तिह की जगमात प्रतच्छ ह्वै ताहि कह्यो हसि ऐसे। स्याम की बाम तै आपनै चित्त करो दुचिता फुन रंच न कैसे। जो सिसपाल के है चित मै नहि ह्वैहै सोऊ तिह की सु रुचै से। हुइहै अवशिश सोऊ सुनि री कबि स्याम कहै तुमरे जिय जैसे॥ १९९० ॥ ॥ दोहरा ॥ यौ बरु लैकै शिवा ते प्रसंन चली हुइ चित्त। स्यंदन पै चड़ मन

पुरोहितों को साथ लेकर देवी की पूजा के लिए सभी चले। पीछे-पीछे अनेक शूरवीर रथों पर सवार हो चले। इस प्रकार का वातावरण देखकर रुक्मिणी के भाई रुक्मी ने यह कहा कि हे प्रभु! मेरे बड़े भाग्य हैं, तुमने मेरी इज्जत रख ली॥ १९८७॥ ॥ चौपाई॥ जब रुक्मिणी मंदिर में गई तो वह दु:ख-पूर्ण होकर अत्यन्त व्याकुल हो गई। उसने रोकर चंडी से प्रार्थना की कि क्या मेरे लिए यही वर अपेक्षित था?॥ १९८८॥ ॥ सवैया॥ सखियों को दूर करके उसने छुरी हाथ में पकड़ी और कहा कि मैं आत्मघात कर लूँगी। मैंने चंडी की बहुत सेवा की और उसका मुझे यही फल प्राप्त हुआ है। मैं प्राण दे दूँगी और इस स्थान पर ही मेरी हत्या का पाप चढ़ेगा। नहीं तो मैं अभी इसको प्रसन्न करूँगी और श्रीकृष्ण के वरण का वरदान प्राप्त करूँगी॥ १९८९॥ ॥ देवी उवाच॥ ॥ सवैया॥ उसकी यह दशा देखकर जगत्माता ने प्रत्यक्ष होकर उससे यह कहा कि तुम श्रीकृष्ण की पत्नी हो, इस बारे में तुम्हें तनिक भी दुविधा नहीं होनी चाहिए। जो शिशुपाल के मन में है वह नहीं होगा और जो तुम्हारे मन में है अवश्य वही होगा॥ १९९०॥ ॥ दोहा॥ यह वर लेकर चंडिका से प्रसन्नता प्राप्त कर वह रथ पर सवार हो

बिखै चहि स्री जदुपति मित्त ॥ १९९१ ॥ ॥ सवैया ॥ चड़ी जात हुती सोऊ स्यंदन पै ब्रिजनाइक द्रिश्टि बिखै करिकै। अरु शत्रन सैन निहार घनी तिहते नही स्याम भनै डरिकै। प्रभ आइ पर्यो तिह मद्धि बिखै इह लेत हो रे इम उच्चरिकै। बल धार लई रथ भीतर डार मुरार तबै बहिया धरिकै ॥१९९२॥ ॥ सवैया ॥ डार (मू०ग्रं०५०६) रुकंमन स्यंदन पै सभ सूरन सो इह भाँति सुनाई। जात हो रे इह को अब लै इह कै रुकमै अब देखत भाई। पउरख है जिह सूर बिखै सोऊ याह छडाइ न माँड लराई। आज सभो मरिहो टरिहो नही स्याम भनै मुहि राम दुहाई ॥ १९९३ ॥ ॥ सवैया ॥ यौ बतिया सुनि कै तिह की सभ आइ परे अति क्रोध बढैकै। रोस भरे भट ठोक भुजा कबि स्याम कहै अति क्रोधत ह्वैकै। भेर घनी शहनाइ सिंगे रन दुंदभ अउ अति ताल बजैकै। सो जदुबीर सरासन लै छिन बीच दए जमलोक पठैकै ॥ १९९४ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भट काहू ते नैक टरै नहि सो रिसकै तिह सामुहि आए। गाल बजाइ बजाइकै दुंदभ जिउँ घन सावन के घहराए। स्री जदुबीर के बान छुटे न टिके पल एक तहाँ

मन में श्रीकृष्ण को मित्र मान चल पड़ी ॥ १९९१ ॥ ॥ सवैया ॥ वह श्रीकृष्ण को मन में बसाते हुए रथ पर सवार हो चल पड़ी और शत्रुओं की विशाल सेना को देखकर उसने डर के मारे श्रीकृष्ण का नाम मुँह से उच्चारण नहीं किया। उसी समय श्रीकृष्ण जी वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने रुक्मिणी का नाम लेकर उसे पुकार लिया और बाँह पकड़कर बलपूर्वक उसे अपने रथ में डाल लिया ॥ १९९२ ॥ ॥ सवैया ॥ रुक्मिणी को रथ में लेकर श्रीकृष्ण ने सब शूरवीरों को यह सुनाते हुए कहा कि मैं रुक्मी के देखते-देखते इसको ले जा रहा हूँ और जिसमें पौरुष हो वह युद्ध करके इसको मुझसे छुड़वा ले। मैं आज सबको मार डालूंगा परन्तु अपने इस कार्य से टलूंगा नहीं ॥ १९९३ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण की यह बातें सुनकर सभी क्रोधित होते हुए तथा भुजाओं को ठोंकते हुए रुष्ट होकर उन पर टूट पड़े। भेरियाँ, शहनाइयाँ, रणसिंगे, दुन्दुभियाँ बजाते हुए सभी श्रीकृष्ण पर चढ़ चले और श्रीकृष्ण ने धनुष-बाण हाथ में लेकर क्षण भर में सबको यमलोक पहुँचा दिया ॥ १९९४ ॥ ॥ सवैया ॥ किसी से तनिक भी न डरनेवाले शूरवीर प्रलाप करते एवं दुन्दुभियाँ बजाते हुए सावन के बादलों की तरह घहराते हुए श्रीकृष्ण के सामने आ पहुँचे। श्रीकृष्ण के बाण छूटते ही वे एक भी पल वहाँ न ठहर सके।

ठहराए । एक परे ही कराहत बीर बली इक अंत के धाम सिधाए ॥ १९९५ ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसी निहार दशा दल की ससपाल तबै रिस आपहि आयो । आइकै स्याम सो ऐसो कह्यो न जरासिध हउ जोऊ तोहि भगायो । यों बतिया कहिकै कस कै धनु कान प्रमान लउ तान चलायो । मानहु क्रोध सभै तिह को सु प्रतच्छ ह्वै स्याम के ऊपरि धायो ॥ १९९६ ॥ ॥ दोहरा ॥ सो सर आवत देखकै क्रुद्धत हुइ ब्रिजनाथ । कटि मारग भीतर दयो एक बान के साथ ॥१९९७॥ ॥ सवैया ॥ सरि काटिकै स्यंदन काट दयो अरु सूत को सीस दयो कटिकै । अरु चारो ही अस्वन सीस कटे बहु ढालन के तबही झटिकै । फिर दउर चपेट चटाक हन्यो गिर गयो जब चोट लगी भटिकै । तुम हीन कहो भट कउन बियो जग मै जोऊ स्याम जू सो अटिकै ॥ १९९८ ॥ ॥ सवैया ॥ चित मै जिन ध्यान धर्यो हित कै सोऊ स्री पति लोकहि को सटक्यो । पग रोप जोऊ अटक्यो प्रभ सो कबि स्याम कहै पल सो न टिक्यो । अटक्यो जोऊ प्रेम सो बेध कै लोक चल्यो तिन कउन किनही हटक्यो । जिह नैंक बिरोधही यो सटक्यो नर सो सभ ही भुअ सो

कोई धरती पर पड़ा कराह रहा है और कोई मृत्यु को प्राप्त कर यमलोक पहुँच रहा है ॥ १९९५ ॥ ॥ सवैया ॥ सेना की यह दशा देखकर शिशुपाल स्वयं क्रोधित होकर सामने आया और श्रीकृष्ण से कहने लगा कि मुझे जरासंध मत समझो जिसे तुमने भगा दिया था । यह कहकर उसने अपने धनुष को कान तक खींचकर ऐसा बाण चलाया, मानो उसका सारा क्रोध वाण के रूप में प्रत्यक्ष होकर श्रीकृष्ण पर टूट पड़ा हो ॥ १९९६ ॥ ॥ दोहा ॥ उस बाण को आता हुआ देखकर श्रीकृष्ण क्रोधित हुए और अपने वाण से उसे रास्ते मे ही काट फेंका ॥ १९९७ ॥ ॥ सवैया ॥ वाण को काटकर इन्होंने रथ को काट दिया, सारथी के सिर को काट दिया और अपने बाणों के वार से झटक कर चारों घोड़ों के सिर काट डाले । पुन: दौड़कर उस पर वार किया और चोट खाकर वह गिर पड़ा । संसार में कौन ऐसा वीर है जो श्रीकृष्ण के सामने डट सकता है ॥ १९९८ ॥ ॥ सवैया ॥ जिसने मन में प्रभु का ध्यान किया वह प्रभु के लोक को प्राप्त हुआ और जो पाँव जमाकर श्रीकृष्ण के सामने अड़ा वह एक पल भी नहीं टिक सका । जो उनके प्रेम में लीन हो गया वह सब लोकों को वेध कर बिना रोक-टोक प्रभु-लोक को प्राप्त हुआ । जिसने ज़रा-सा भी विरोध किया उस व्यक्ति को पकड़कर भूमि पर पटक

पठयो ॥ १९९९ ॥ ॥ सवैया ॥ फउज बिदार घनी ब्रिजनाथ बिमुंछत कै ससपाल गिरायो । अउर जितै दलु ठाढो हुतो सोऊ देख दशा करि त्रास परायो । फेर रहे (मू०ग्रं०५०७) तिनको बहु बार कोऊ फिरि जुद्ध के काज न आयो । तउ रुकमी दल लै बहुतो संगि आपने आप ही जुद्ध को धायो ॥ २००० ॥ ॥ सवैया ॥ बीर बडे इह की दिस के रिस सो जदुबीर कउ मारन धाए । जात कहा फिर स्याम लरो हम सो सभ ही इह भाँत बुलायो । ते ब्रिजनाथ हने सभ ही कहि कै उपमा कबि स्याम सुनाए । मानहु हेर पतंग दिआ कहु टूट परे फिरि जीत न आए ॥ २००१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब सैन हन्यो घनिस्याम सभै रुकमी कुप कै तब ऐसे कह्यो । जब गूजर ह्वै धनबान गह्यो छत्रापन छत्रन तैतो गह्यो । जिम बोलत थो बधकै सर स्याम बिमुंछत कै सु सिखा ते गह्यो । गहिकै तिह मूँड को मूँड दयो उपहास कै जिउँ चित बीच चह्यो ॥ २००२ ॥ ॥ दोहरा ॥ भ्रात दसा पिख रुकमनी प्रभ जू कै गहि पाइ । अनिक भाँति सो स्याम कबि भ्रात लयो छुटकाइ ॥ २००३ ॥ ॥ सवैया ॥ जोऊ ताहि सहाइ कउ आवत भे सु हने सभ ही

दिया गया ॥ १९९९ ॥ ॥ सवैया ॥ अनन्त सेना को मारकर श्रीकृष्ण ने शिशुपाल को मूर्च्छित कर गिरा दिया । वहाँ जितनी सेना खड़ी थी वह इस दशा को देख डरकर भाग खड़ी हुई । उनको मोड़ने का प्रयत्न किया गया । परन्तु कोई भी युद्ध के लिए वापस नहीं आया । तब रुक्मी बहुत सेना साथ लेकर स्वयं युद्ध के लिए चला ॥ २००० ॥ ॥ सवैया ॥ इसकी तरफ़ के बहुत से वीर क्रोधित होकर श्रीकृष्ण को मारने के लिए चले और कहने लगे कि हे कृष्ण ! कहाँ जाते हो, हमसे लड़ो । उन्हें श्रीकृष्ण ने इस प्रकार मार डाला, जैसे पतंगे ढूँढ़कर दीपक पर टूट पड़ते हैं, परन्तु वापस जीवित नहीं जाते ॥ २००१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब सेना को श्रीकृष्ण ने मार डाला तब क्रोधित होकर रुक्मी ने अपनी सेना से कहा कि जब कृष्ण गूजर होकर धनुष-बाण पकड़ सकता है तो क्षत्रियों को भी यह कार्य दृढ़तापूर्वक करना चाहिए । जब वह यह बोल ही रहा था तो श्रीकृष्ण ने आगे बढ़कर अपने बाण से उसे मूर्च्छित कर उसकी चोटी पकड़ लिया तथा उसके सिर को मूँड़ कर उसे उपहासास्पद बना दिया ॥ २००२ ॥ ॥ दोहा ॥ अपने भाई की यह दशा देखकर रुक्मिणी ने श्रीकृष्ण के चरण पकड़ लिये और अनेक प्रकार से मिन्नत कर अपने भाई को छुड़ा लिया २००३ सवैया जो उसकी सहायता

चित मै चहिकै । जोऊ सूर हन्यो न हन्यो छल सो अरे मारत हउ तुहि यौ कहिकै । बहु भूप हने गज बाज रथी सरता बह स्रोन चली बहिकै । फिर त्रिय के कहे पिय छोड दयो रुकमी रनजीत भले गहिकै ॥ २००४ ॥ ॥ सवैया ॥ तउ लउ गदा गहिकै बलभद्र पर्यो तिन मै चित रोस बढायो । शत्रन सैन भज्यो जोऊ जात हो स्याम भने सभ कउ मिलि घायो । घाइकै सैन भली बिध सो फिरकै ब्रिजनाइक को ढिग आयो । सीस मुंड्यो रुकमी को सुन्यो जब ते हरि सिउ इह बैन सुनायो ॥ २००५ ॥ ॥ बलभद्र बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ भ्रात त्रिआ को रन बिखै कान्ह जीत जो लीन । सीस मूंड ताको दयो कह्यो काज घट कीन ॥ २००६ ॥ ॥ सवैया ॥ अनि ते पुर बांध रह्यो रुकमी उत द्वारवती प्रभ जू इत आए । आइ है कान जू जीत त्रिआ सभ यों सुनिकै जन देखन धाए । ब्याह के काज कउ जे थे दिजोतम ते सभ ही मिलिकै सु बुलाए । अउर जिते बलबंड बडे कबि स्याम कहै सभ बोल पठाए ॥ २००७ ॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह को ब्याह सुन्यो पुरनारिन आवत भी सभ ही मिल गावत । नाचत डोलत भांत भली कबि स्याम भनै मिल ताल बजावत । (मू०ग्रं०५०८)

के लिए आये उन्हें भी इच्छानुसार मार डाला गया । जिस भी शूरवीर को मारा उसे छल से नहीं अपितु ललकार कर मारा । बहुत से राजा, हाथी-घोड़े, रथी मार डाले गए और रक्त की नदी बह चली । स्त्री के कहने पर श्रीकृष्ण ने रुक्मी की ओर के अनेकों वीरों को पकड़कर छोड़ दिया ॥२००४॥ ॥ सवैया ॥ तब तक गदा पकड़कर बलराम भी क्रोधित होकर सेना पर टूट पड़े और भागती हुई सेना को उन्होंने मार गिराया । सेना को मारकर वह श्रीकृष्ण के पास आये और रुक्मी के सिर मूंड़े जाने की बात को सुनकर उन्होंने श्रीकृष्ण से यह कहा ॥२००५॥ ॥ बलभद्र उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ स्त्री के भाई को कृष्ण ने युद्ध में जीत तो लिया परन्तु उसके सिर को मूंड़कर छोटा काम ही किया है (जो कि नहीं करना चाहिए था) ॥ २००६ ॥ ॥ सवैया ॥ रुक्मी को इधर नगर में ही बाँधकर छोड़कर श्रीकृष्ण द्वारिका आ गए । यह जानकर कि श्रीकृष्ण जी स्त्री को जीतकर ले आए हैं, लोग देखने के लिए चल पड़े । विवाह कार्य करवानेवाले उत्तम विप्र बुलवाए गए तथा सभी शूरवीरों को भी निमंत्रण दिया गया ॥२००७॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के विवाह की बात सुनकर नगर की स्त्रियाँ गाते-बजाते आने लगीं वे ताल

आपसि मै मिलिकै तरुनी सभ खेलन कउ अति ही ठट पावत । अउर की बात कहा कहिऐ पिखबे कहु देवबधू मिलि आवत ॥ २००८ ॥ ॥ सवैया ॥ सुंदर नारि निहारन कउ तजिकै ग्रहि जो इह कउतक आवै । नाचत कूदत भाँत भली ग्रहि की सुध अउर सभै बिसरावै । देखकै ब्याहह की रचना सभ ही अपनो मन मै सुखु पावै । ऐसे कहै बलि जाहि सभै जब कान्ह कउ देख सभै ललचावै ॥ २००९ ॥ ॥ सवैया ॥ जब कान्ह के ब्याह कउ बेदी रची पुरनारि सभै मिल मंगल गायो । नाचत भे नटुआ तिह ठउर म्रिदंगन ताल भली बिध द्यायो । कोट कंतूहल होत भए अर बेस्यन के कछुअंत न आयो । जो इह कउतक देखन कउ दल आयो हुतो सभ ही सुखु पायो ॥ २०१० ॥ ॥ सवैया ॥ एक बजावत बेन सखी इक हाथ लिए सखी ताल बजावै । नाचत एक भली बिध सुंदर सुंदर एक भली बिध गावै । झाँझर एक म्रिदंग के बाजत आइ भले इक हाव दिखावै । भाइ करै इक आइ लबै चित केरन वारन मोद बढावै ॥ २०११ ॥ ॥ सवैया ॥ बारनी के रस संग छके जह बैठे है क्रिशन हुलास बढै कै । कुंकम रंग रँगे पटवा भटवा अपने अति आनंद कै कै । मंगन लोगन देत

पर नाचने-गाने लगीं और युवतियाँ आपस में मिलकर हँसने-खेलने लगी। अन्यों की क्या बात कहें, देववधुएँ भी यह दृश्य देखने के लिए आने लगीं ॥ २००८ ॥ ॥ सवैया ॥ सुंदर स्त्री (रुक्मिणी) को और यह लीला देखने के लिए जो भी आता है, वह नाचते-कूदते अपने घर-बाहर की सुधि भूल जाता है। विवाह की योजना देखकर सभी प्रसन्न हो रहे हैं और श्रीकृष्ण को देखकर सबका मन ललचा रहा है ॥ २००९ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के विवाह की बेदी बन जाने पर सब स्त्रियों ने मंगलगीत गाए। नट आदि वहाँ मृदगों को ताल पर नृत्य करने लगे। अनेकों वेश्याओं ने अनेक प्रकार के स्वाँग दिखाए। जो भी यह दृश्य देखने आया उसने अत्यन्त सुख प्राप्त किया ॥ २०१० ॥ ॥ सवैया ॥ कोई सखी बाँसुरी और कोई हाथों से ताली बजा रही है। कोई विधिपूर्वक नृत्य कर रही है और कोई गा रही है। कोई झाँझर बजा रही है, कोई मृदंग बजा रही है और कोई हाव-भाव दिखा रही है। कोई हावभाव दिखाकर सबको प्रसन्न कर रही है ॥ २०११ ॥ ॥ सवैया ॥ वारुणी के रस में मस्त जहाँ श्रीकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक बैठे हैं और उन्होंने आनंदपूर्वक लाल रंग के वस्त्र पहन रखे हैं वहाँ से वे नाचनेवालों को

धनो धनु स्याम भनै अति ही नचवैकै । रीझ रहै मन मै सभ ही पुन स्री जदुबीर की ओर चितै कै ॥ २०१२ ॥ ॥ सवैया ॥ बेद के बीच लिखी बिधि जिउँ जदुबीर बियाह तिही बिध कीनो । जो रुकमी ते भली बिध कै रुकमन्न्रहि को पुन जीत कै लीनो । जीतहि की बतिआ सुनि कै अति भीतर मोद बढ्यो पुर कीनो । स्याम भनै इह कउतक कै सभ ही जदुबीरन कउ सुख दीनो ॥ २०१३ ॥ ॥ सवैया ॥ सुख मान कै माइ पियो जल वारकै अउ दिज लोकन दान दियो है । ऐसे कह्यो सभ ही भुअ को सुख आज सभै हम लूट लियो है । आज हुलास भयो सजनी उमग्यो न रहै कह्यो मोर हियो है । आज के दिवस हू पै बलि जाउ अरी जब मो सुत ब्याह कियो है ॥ २०१४ ॥ (मू०ग्रं०५०६)

॥ इति स्री दसम सिकंधे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे रुकमनी हरन इत ब्याह करन बरनन धिआइ ॥

प्रदुमन का जनम कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ पुरख तिआ आनंद सो बहु दिन भए बितीत । गरभ भयो तब रुकमनी प्रभ ते परम पुनीत ॥२०१५॥

तथा अन्य माँगनेवालों को धन-धान्य दे रहे हैं तथा सभी मन-ही-मन श्रीकृष्ण को देखकर प्रसन्न हो रहे हैं ॥ २०१२ ॥ ॥ सवैया ॥ वेद-रीति के अनुसार श्रीकृष्ण ने उस रुक्मिणी के साथ विवाह किया जिसे उन्होंने रुक्मी से जीता था। जीत की बात से सबके मन प्रसन्नता से भरे हुए थे और इस लीला से सभी यादव अत्यन्त सुखी थे ॥ २०१३ ॥ ॥ सवैया ॥ माता ने जल न्योछावर कर उसका पान किया और विप्रों को दान दिया। सभी यह मानने लगे कि आज उन्हें विश्व का सम्पूर्ण सुख प्राप्त हो गया है। माता यह कहने लगी कि हे सखी ! मेरा मन अत्यन्त प्रसन्न है। मैं आज के दिन पर क़ुर्बान हूँ जिस दिन मेरे पुत्र का विवाह हुआ है ॥ २०१४ ॥

॥ श्री दशम स्कंध के बचित्र नाटक के कृष्णावतार के रुक्मिणी-हरण एवं विवाह-करण-वर्णन अध्याय समाप्त ॥

प्रद्युम्न का जन्म-कथन

॥ दोहा ॥ पति-पत्नी के बहुत से दिन सुखपूर्वक व्यतीत हुए और तब रुक्मिणी गर्भवती हुई ॥ २०१५ ॥ ॥ सोरठा ॥ प्रद्युम्न नामक एक वीर

॥ सोरठा ॥ उपज्यो बालक बीर नाम धर्‌यो तिह परदुमन। महाँरथी रनधीर प्रभ जानत है जगत जिह॥ २०१६ ॥ ॥ सवैया ॥ दस दिउस को बालक भ्यो जब ही तब संबर दैंत लै ताहि गयो है। सिंध के भीतर डार दयो इक मच्छ हुतो तिह लील लयो है। मच्छ सोऊ गहि झीवरि एकु सु संबर पै फिर ल्याइ दयो है। मच्छन को फुन ताहि रसोइ मै भेज दयो सु उलास कयो है॥ २०१७ ॥ ॥ सवैया ॥ जब मच्छ को पारन पेट लगे तब सुंदर बारक एक निहार्‌यो। होइ दयालवती सु त्रिआ करुना रसु पै चित मै तिन धार्‌यो। तेरो कह्यो पति है इम नारद स्याम भने इह भांति उचार्‌यो। सो बतिआ सुनि कै मुन नार भली बिध सों भरता कर पार्‌यो॥ २०१८ ॥ ॥ चौपई ॥ पोखन बहुतु दिवस जब करी। तब इह द्रिश्टि त्रिआ की धरी। काम भाव चित भीतर चह्यो। रुकमन सुत सिउ बच इह कह्यो॥ २०१९ ॥ मैनवती तब बैन सुनाए। तुम मो पति रुकमन के जाए। तुम को संबर दानव हरियो। आन सिंध के भीतर डरियो॥ २०२० ॥ ॥ चौपई ॥ तब इक मच्छ लील तुहि लयो। सो भी मच्छ फास बसि भयो। झीवर फिर संबर पै

बालक पैदा हुआ जिसे जगत ने महारथी एवं रणधीर के रूप में जाना॥ २०१६ ॥ ॥ सवैया ॥ जब बालक दस दिन का हुआ तो शंबर नामक दैत्य उसे (चुरा) ले गया और उसे उसने समुद्र में फेंक दिया, जहाँ उसे एक मछली हड़प कर गई। उसी मछली को एक मछुआरे ने पकड़ा और लाकर पुनः शंबर के सामने प्रस्तुत किया। शंबर ने उसे प्रसन्न होकर खाने के लिए रसोई में भिजवा दिया॥ २०१७ ॥ ॥ सवैया ॥ जब मछली का पेट फाड़ा जाने लगा तब एक सुन्दर बालक दिखाई दिया। रसोई पकाने वाली स्त्री करुणा से अभिभूत हो उठी। उसे नारद ने आकर कहा कि यह तेरा पति है अतः उस स्त्री ने उसे पति मानकर उसका पालन-पोषण किया॥२०१८॥ ॥ चौपाई ॥ जब बहुत समय तक इसका पालन-पोषण हुआ तब इसके मन में भी स्त्री का विचार उत्पन्न हुआ। स्त्री ने भी कामासक्त होकर रुक्मिणी के पुत्र से यह कहा॥ २०१९ ॥ मैनवती ने तब कहा कि तुम रुक्मिणी के पुत्र और मेरे पति हो। तुम्हें शंबर दैत्य चुराकर समुद्र में डाल आया था॥ २०२० ॥ ॥ चौपाई ॥ तब तुम्हें एक मछली ने हड़प लिया था और वह मछली भी पकड़ी गई थी। मछुआरा उसे फिर शंबर के पास ले आया,

ल्यायो। तिह हम पै भच्छन हित दिआयो ॥ २०२१ ॥ जब हम पेट मच्छ को फार्‌यो। तब तोहि कउ मै नैन निहार्‌यो। मोरे ह्रिदै दया अति आई। अउ नारद इह भाँत सुनाई ॥ २०२२ ॥ इह अवतार मदन को आरी। ढूँढत फिरत रैन दिन जारी। मै पति लखि तुहि सेवा करी। अब मै मदन कथा चित धरी ॥ २०२३ ॥ रुद्र कोप कांइआ तुहि जरी। तब मै पूजा शिव की करी। बरु शिव दयो हुलास बढैहै। भरता वही सूरत तू पैहै ॥ २०२४ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब हउ संबर दैत की भई रसोइन आइ। अब भरता मुहि रुद्र तूँ सुंदर दयो बनाइ ॥ २०२५ ॥ ॥ सवैया ॥ सुत कान्ह के यौ बतिया सुनि कै अपने चित मै अति क्रोध बढायो। बान कमान क्रिपान गदा गहि (मू०ग्रं०५१०) कै अरि के बध कारन धायो। धाम जहा तिह बैरी को थो तिह द्वार पै जाइ कै बैन सुनायो। जाहि कउ सिंध पै डार दयो अब सो तुहि सो लरबे कहु आयो ॥ २०२६ ॥ ॥ सवैया ॥ यो जब बैन कहै सुत स्याम तौ संबर शस्त्र गदा गहि आयो। जैसे कही बिधि जुद्धहि की तिह भाँत सो ताही ने जुद्ध मचायो।

जहाँ से उसने खाने में पकाने के लिए उसे मेरे पास भेजा ॥ २०२१ ॥ जब मैंने मछली का पेट फाड़ा तो तुम्हें उसमें देखा। मेरे हृदय में दया उत्पन्न हुई और उसी समय नारद ने भी मुझसे कहा ॥ २०२२ ॥ (कि) यह कामदेव का अवतार है जिसे तुम रात-दिन ढूँढा करती हो। मैंने तुम्हें पति मानकर तुम्हारी सेवा की है और तुम्हें देखकर अब मैं कामपीड़ित हूँ ॥ २०२३ ॥ जब रुद्र के प्रकोप से तुम्हारा शरीर जल गया था तो मैंने शिव की आराधना की थी। मुझे शिव ने प्रसन्न होकर वरदान दिया था कि तुझे वही पति प्राप्त होगा ॥ २०२४ ॥ ॥ दोहा ॥ तब मैं शंबर दैत्य की रसोई पकानेवाली का काम करने लगी। अब शिव ने पुन: तुम्हें सुन्दर बना दिया है ॥ २०२५ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण का पुत्र यह बातें सुनकर अत्यन्त क्रोधित हो उठा और बाण-कृपाण-गदा पकड़कर शत्रु का वध करने के लिए चल पड़ा। जहाँ शत्रु का स्थान था वहाँ जाकर प्रद्युम्न ललकारने लगा कि जिसे तुम समुद्र में फेंक आए थे वही अब तुमसे लड़ने के लिए आया है ॥ २०२६ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के पुत्र ने जब ये बातें कहीं तो शंबर शस्त्र और गदा पकड़कर आगे बढ़ा तथा युद्ध की विधियों को अपनाते हुए उसने भीषण युद्ध प्रारम्भ कर दिया। वह

आप भज्यो नहि ता भुअ ते कहि वाहि कउ त्रास दै पंगु भजायो। आहव या बिधि होत भयो कहि कै इह भांत सो स्याम सुनायो ॥ २०२७ ॥ ॥ सवैया ॥ अति ही तिह ठाँ जब मार मची अरि जात भयो नभि मै छलु कै कै। लै करि पाहुन ब्रिसट करी सुत स्याम के पै अति क्रुद्धत ह्वै कै। सो इन पाहन ब्यरथ करे तिनको सर एकहि एक लगै कै। शस्त्रन सों तिनको तन बेध कै भूम डर्यो अति रोस बढै कै ॥ २०२८ ॥ असि ऐंच झटाक लयो कटि ते सिर संबर कै सु झटाक दै झार्यो। देवन के गन हेरत जे तिन पउरख देखकै धंनि उचार्यो। भूमि गिराइ दयो कै बिमुच्छत स्रोन संबूह धरा पै बिथार्यो। कान को पूत सपूत भयो जिन एक क्रिपान ते संबर मार्यो ॥२०२९॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे परदुंमन संबर दैत हरि लै गयो इत संबर को परदुंमन बध कीओ धिआइ समापत ॥ अफजू ॥

अथ परदुंमन संबर को बध रुकमन को मिले ॥

॥ दोहरा ॥ तिह को बध कै परदुमन आयो अपने ग्रेह। रति अपने पति संगि तबै कह्यो बढैकै नेह ॥ २०३० ॥ चील

युद्ध से भागा नहीं और डराकर प्रद्युम्न को युद्ध से हटाने लगा। इस प्रकार श्याम कवि के कथनानुसार यह युद्ध वहाँ होने लगा ॥२०२७॥ ॥ सवैया ॥ जब वहाँ भीषण युद्ध हुआ तो शत्रु छलपूर्वक आकाश में जा पहुँचा और वहाँ से उसने श्रीकृष्ण के पुत्र पर पत्थरों की वर्षा की। उन पत्थरों को प्रद्युम्न ने एक-एक बाण से व्यर्थ कर दिया और शस्त्रों से उसके तन को वेधकर उसे भूमि पर गिरा दिया ॥ २०२८ ॥ झटाक से प्रद्युम्न ने तलवार चलाई और झटककर शंबर का सिर काट फेंका। देवों के गण इस पौरुष को देखकर धन्य-धन्य पुकार उठे। दैत्य को मूर्च्छित कर धरती पर गिरा मारा। श्रीकृष्ण का पुत्र धन्य है जिसने एक ही कृपाण से शंबर को मार डाला ॥ २०२९ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में प्रद्युम्न को शंबर दैत्य हरकर ले गया, शंबर का प्रद्युम्न ने वध किया अध्याय समाप्त ॥ क्रमश: ॥

प्रद्युम्न का शंबर का वध कर रुक्मिणी को मिलना

॥ दोहा ॥ उसको मारकर प्रद्युम्न अपने घर आए तब रति अपने पति को मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुई ॥ २०३० ॥ उसने स्वयं चील का रूप धारण

आप हुइ आपने ऊपरि पतहि चड़ाइ । रुकमन को ग्रहि थो जहा तहही पहुची आइ ॥ २०३१ ॥ ॥ सवैया ॥ छोर कै चील को रूप दयो तिआ को अति सुंदरि रूप बनायो । वाह उतारकै कंधहि ते तिह कंप पटंबर पीत धरायो । सोरह हज़ार तिआ सभ थी जह ठाढ तिनो इह रूप दिखायो । सो सुकची चित बीच सभै इह भाँति लख्यो ब्रिजनाइक आयो ॥ २०३२ ॥ ॥ स्वैया ॥ ताहि निहारि कै स्याम सी मूरति बीअ सभै मन मै सुकचाही । ल्यायो है आन बधू कोऊ ब्याह कहै सखी की सु सखी गहि बाही । एक निहार कहै तिह के उर ओर बिचार भले मन माही । लच्छन अउर सभै हरि के (मू०ग्रं०५११) इह एक लता भ्रिग की उर नाही ॥ २०३३ ॥ ॥ स्वैया ॥ पेखत ताहि रुकंमन के सु पयोधरवा पय सो भरि आए । मोहु बढ्यो अति ही चित मै करुनारसु सो हुरि बैन सुनाए । ऐसो सखी कह्यो मो सुत थो प्रभ दै हम को हम ते जु छिनाए । यौ कहि सास उसार लयो कबि स्याम कहै दोऊ नैन बहाए ॥ २०३४ ॥ इत ते ब्रिजनाइक आइ गयो इह मूरत ओर रहे टक लाई । तउ ही लउ नारद आइ गयो बिरथी सभही तिन भाख सुनाई ।

किया और अपने ऊपर अपने पति को सवार किया तथा जहाँ रुक्मिणी का महल था वहाँ आ पहुँची ॥ २०३१ ॥ ॥ सवैया ॥ चील का रूप त्यागकर पुन उसने सुन्दर स्त्री का रूप धारण किया । प्रद्युम्न को कंधे से उतारकर उसे पीताम्बर पहनाया । वहाँ सोलह हज़ार स्त्रियों ने प्रद्युम्न को देखा और मन-ही-मन सकुचा गयीं कि शायद श्रीकृष्ण जी वहाँ आ गए हैं ॥ २०३२ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण के समान प्रद्युम्न को देखकर स्त्रियाँ मन में लजा गईं और कहने लगीं कि श्रीकृष्ण अब किसी अन्य को ब्याहकर ले आए हैं । एक स्त्री उनकी ओर देखकर मन-ही-मन कहने लगी की बाक़ी तो सभी लक्षण इनके श्रीकृष्ण के समान हैं, मात्र एक भृगु ऋषि के पाँव का निशान इनकी छाती पर नहीं हैं ॥ २०३३ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रद्युम्न को देखकर रुक्मिणी के उरोजो में दूध भर आया । मोहवश होकर तथा विनम्र होकर उसने कहा कि हे सखी ! मेरा पुत्र भी ऐसा ही था । हे भगवान ! मुझे भी मेरा पुत्र वापस दे दो । यह कहकर उसने लंबी साँस ली और उसके दोनों नेत्रों से जल बहने लगा ॥ २०३४ ॥ इधर से श्रीकृष्ण आ गए और सब टकटकी लगाकर उनकी तरफ़ देखने लगे । तब तक नारद आ गए और उन्होंने सारी क़था कह सुनाई । उन्होंने कहा कि हे श्रीकृष्ण ! यह आपका ही पुत्र है । यह सुनकर

कान्ह जू पूत तिहारो ई है इह यो सुनि कै पुर बाजी बधाई । भागन की निध स्याम भनै जदुबीर मनो इह दिवसहि पाई ॥ २०३५ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे बचित्र नाटक क्रिशनावतारे परदुमन संबर दैत बध कै रुकमन कान्ह जू को आइ मिलत भए ॥

अथ सत्राजित सूरज ते मनि लिआए जामवंत बध कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ इत सूरज सेवा करी सत्राजित बलवान । रवि तिह के तब मनि दई उज्जल आप समान ॥ २०३६ ॥ ॥ स्वैया ॥ लै मनि सूरज ते अरि जीत जु ताँ दिन आपने धामहि आयो । जो कबि स्याम भनै करि सेव घनो रवि को चित ताँ रिझवायो । अउ करि कै तपस्या अति ही तिह की हित सौ तिह कउ जब गायो । सो सुनिकै सु ब्रिया पुर लोगन यौ जदुबीर पैं जाइ सुनायो ॥ २०३७ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ स्वैया ॥ कान्ह बुलाइ अरीजित कउ हसिकै मुख ते इह आइस दीनो । भूप कउ दै तू कह्यो अब ही रबि ते जु रिझाइ कै तै धनु लीनो । जो चहिकै चित मै चपला दुति याहि कह्यो इन नैकु न कीनो । मोन ही ठानकै बैठ रह्यो ब्रिजनाथ

सारे नगर में मंगल-ध्वनियाँ होने लगीं और ऐसा लगता था कि मानो श्रीकृष्ण को भाग्य रूपी समुद्र मिल गया हो ॥ २०३५ ॥

॥ श्री दशम स्कंध बचित्र नाटक के कृष्णावतार में प्रद्युम्न शंबर दैत्य का बध करके कृष्ण जी से आ मिले समाप्त ॥

सत्राजित का सूर्य से मणि लाना और जामवंत-वध-कथन

॥ दोहा ॥ बलवान सत्राजित (एक यादव) ने सूर्य की सेवा की और सूर्य ने अपने समान उज्ज्वल मणि उसे प्रदान की ॥२०३६॥ ॥ सवैया ॥ सत्राजित सूर्य से मणि लेकर अपने घर आया और उसने अत्यन्त सेवा कर सूर्य को प्रसन्न किया था। अब उसने और घोर तपस्या की और प्रभु का गुणानुवाद किया उसकी यह व्यथित अवस्था देखकर नगरवासियों ने उसका वर्णन श्रीकृष्ण को जा सुनाया ॥ २०३७ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण ने सत्राजित को बुलाकर कहा कि तुमने जो धन रूपी मणि सूर्य से प्राप्त की है उसे राजा को दे दो उसके मन मे बिजली कौंध गई और उसने श्रीकृष्ण के कहने के

को उतरु नैक न दीनो ॥ २०३८ ॥ ॥ स्वैया ॥ प्रभ यो बतिया कहि बैठ रह्यो इह भ्रात अखेट के काज पधार्यो । बांध भले मनि कउ सिर पै सभहूं जन दूसर भान बिचार्यो । कानन के जब बीच गयो म्रिगराज बडो इक याह निहार्यो । तान कै बान चलावत भ्यो सर वा सहि कै इह को फिरि मार्यो ॥ २०३९ ॥ ॥ चौपई ॥ जब तिन को हरि के सिर मार्यो । तब केहरि पुरखत संभार्यो । एक चपेट चउक तिह मारी । मनि समेत लई पाग उतारी ॥ २०४० ॥ ॥ दोहरा ॥ तिह बध कै मनि (मू०ग्रं०५१२) पाग लै सिंघ धस्यो बन जाइ । भालक एक बडो हुतो तिहि हेर्यो म्रिगराइ ॥ २०४१ ॥ ॥ सवैया ॥ भालक देख मनी दुति कउ सु लख्यो कोऊ केहरि लै फलु आयो । या फल कउ अब भच्छ करो सु छुधातरु ह्वै तह भच्छन धायो । ज्यों म्रिगराज थो जात चल्यो । तिउ अचानक आइ कै जुद्ध मचायो । एक चपेट चटाक कै मार झटाक दै सिंघ को मार गिरायो ॥२०४२॥ ॥ दोहरा ॥ जामवान बध सिंघ को मनि लै मन सुखु पाइ । जाइ ग्रेह आपन सुतो तह ही पहुच्यो आइ ॥ २०४३ ॥

अनुरूप कुछ भी नहीं किया । वह चुपचाप बैठा रहा और उसने श्रीकृष्ण की बात का कोई उत्तर नहीं दिया ॥ २०३८ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रभु यह बात कहकर चुप बैठे रहे परन्तु उसका भाई शिकार खेलने वन की ओर चल दिया । उसने सिर पर मणि धारण कर रखी थी और ऐसा लगता था मानो दूसरा सूर्य निकल आया हो । जब यह जंगल के बीच में गया तो वहाँ उसने एक शेर देखा । वहाँ उसने एक के बाद एक बाण सिंह को मारा ॥ २०३९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब बाण सिंह के सिर पर मारा गया तो सिंह ने भी अपना पौरुष सँभाला । उसने एक चपेट मारी और मणि-समेत इसकी पगड़ी उतार ली ॥ २०४० ॥ ॥ दोहा ॥ उसको मारकर और मणि तथा पगड़ी को लेकर सिंह वन में चला गया और वहाँ उसने एक बड़े भालू को देखा ॥२०४१॥ ॥ सवैया ॥ भालू ने मणि को देखकर समझा कि शेर कोई फल पकड़कर ला रहा है । उसने सोचा कि मुझे भूख लगी है, मैं अभी इस फल का भक्षण करूँगा । मृगराज चला जा रहा था, अचानक भालू ने उस पर धावा बोल दिया और भीषण युद्ध करते हुए एक ही चपेट में सिंह को मार गिराया ॥ २०४२ ॥ ॥ दोहा ॥ जामवंत सिंह का वध करके प्रसन्न मन से अपने घर लौटा और सो रहा २०४३ इधर सत्राजित ने रहस्य का

सत्राजित लखि भेद नहि सभनन कह्यो सुनाइ । क्रिशन मारि मुहि भ्रात कउ लीनी मनि छुटकाइ ॥२०४४॥ ॥ सवैया ॥ यौं सुनिकै चरचा प्रभ जू अपने ढिग जा तिह को सु बुलायो । सत्राजीत कहै मुहि भ्रात हन्यो हरिजू मनि हेत सुनायो । ऐसो कुबोल सुनो मनूआ हमरो अति क्रोधहि के संगि तायो । ताते चलो तुमहूँ तिह सोध कउ हउ हू चलो कहि खोजन धायो ॥ २०४५ ॥ ॥ सवैया ॥ जादव लै ब्रिजनाथ जबै अपने संग खोजन ताहि सिधारे । अस्वपती बिनु प्रान परे सु तही ए गए दोऊ जाइ निहारे । केहरि को तह खोज पिख्यो इह वाही हने भट ऐसो पुकारे । आगे जौ जाहि तौ सिंघ पिख्यो म्रित चउक परे सभ पउरख वारे ॥ २०४६ ॥ ॥ दोहरा ॥ तह भालक के खोज कउ चितै रहै सिर नाइ । जहा खोज तिह जात पग तहा जात भट धाइ ॥ २०४७ ॥ ॥ कबि बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जा प्रभ के बरदान दए असुरार जिते सभ दानव भागे । जा प्रभ शत्रन नास कयो सस सूर थपे फिर कारज लागे । सुंदर जाहि करी कुबिजा छिन बीच सुगंध लगावत बागे । सो प्रभ आपने कारज हेत सु जात है रीछ के

अनुमान लगाकर सबसे सुनाते हुए कहा कि कृष्ण ने मेरे भाई को मारकर मणि छीन ली है ॥ २०४४ ॥ ॥ सवैया ॥ यह चर्चा सुनकर भगवान ने उसे अपने पास बुलाया । सत्राजित ने पुन: कहा कि मेरा भाई श्रीकृष्ण ने मणि के लिए मार डाला है । यह सुनकर श्रीकृष्ण का मन क्रोधित हो उठा । उन्होंने कहा कि तुम भी हमारे साथ अपने भाई को खोजने के लिए चलो ॥ २०४५ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण यादवों को साथ लेकर सत्राजित के भाई को खोजने के लिए निकल पड़े और वहाँ आ पहुँचे जहाँ अश्वपति निष्प्राण पड़ा था । शेर को लोगों ने इधर-उधर देखा और अनुमान किया कि इसे शेर ने ही मारा है । जब ज़रा-सा आगे बढ़े तो वहाँ इन सबने मृत सिंह को देखा । उसे देखकर सभी चकित और व्याकुल हो गए ॥ २०४६ ॥ ॥ दोहा ॥ सभी उस भालू की खोज में सिर झुकाकर चल पड़े और जिधर भालू के पैर के निशान जाने लगे थे सब उस ओर चलने लगे ॥ २०४७ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ जिस प्रभु के वरदान देने से असुरों को जीता गया और सभी दानव भी भाग खड़े हुए । जिस प्रभु ने शत्रुओं का नाश किया और सूर्य तथा चन्द्र पुन अपने-अपने कामों में लगे जिसने क्षण भर में कुब्जा को सुंदर बना दिया और सुगंधित कर दिया वे ही प्रभु अब

खोजहि लागे ।। २०४८ ।। ।। स्वैया ।। खोज लिए सभ एक गुफा हू मै जात भए हरि ऐसे उचार्‍यो । है कोऊ सूर धसै इह बीच न काहूँ बली पुरखत्त सँभार्‍यो । याही के बीच धस्यो सोई रीछ सभो मन मै इह भाँति बिचार्‍यो । कोऊ कहै नहि था मै कह्‍यो हरि रे हम खोज इही महि डार्‍यो ।। २०४६ ।। कोऊ न बीर गुफा मै धस्यो तब आप ही ताहि मै स्याम गयो है। भालक लै सुध बीच गुफाहू के (मू०ग्रं०५१३) जुधु को सामुहि कोप भयो है । स्याम जू स्याम भनै उह सो दिन द्वादस बाहन जुद्धु कयो है । जुद्धु इते जुग चारन मै नह ह्वैहै कबै कबहू न भयो है ।। २०५० ।। ।। सवैया ।। द्वादस दिउस भिरे दिन रैन नही तिहते हरि नैक डरानो । लातन मूकन को अति ही फुन तउन गुफा महि जुद्धु मचानो । पउरख भालक को घट भ्यो इह मै बहु पउरखता पहचानो । जुद्धु को छाडिकै धाइ पर्‍यो जदुबीर को राम सही कर जानो ।। २०५१ ।। ।। सवैया ।। पाइ पर्‍यो घिघिआनो घनो बतिया अति दीन ह्वै या बिध भाखी । हो तुम रावन के मरिआ तुम ही पुन लाज दरोपती राखी । भूल भई हम ते प्रभजू सु छिमा करियै शिव

अपने काम के लिए रीछ को खोजने के लिए चले जा रहे हैं ।। २०४८ ।। ।। सवैया ।। सबने एक गुफा में उसे खोज लिया । तब श्रीकृष्ण ने कहा कि कोई ऐसा बली है जो इस गुफा में प्रवेश करे । परन्तु किसी वीर ने भी हाँ नहीं की । सबने यह सोचा कि रीछ इसी में घुसा है, परन्तु फिर भी कुछ कहने लगे कि नहीं इसमें नहीं घुसा है । श्रीकृष्ण ने कहा कि नहीं रीछ इसी में है ।। २०४६ ।। जब कोई भी वीर गुफा में नहीं गया तो श्रीकृष्ण स्वयं उसमें गए । भालू ने भी किसी के आने का अनुमान लगाया और क्रोधित होकर युद्ध के लिए आगे बढ़ा । कवि कहता है कि श्रीकृष्ण ने वहाँ उससे बारह दिन ऐसा युद्ध किया कि ऐसा युद्ध चारों युगों में न तो हुआ और न ही होगा ।। २०५० ।। ।। सवैया ।। बारह दिन और रात श्रीकृष्ण भिड़ते रहे और तनिक भी नहीं डरे । लातों-घूंसों से भीषण युद्ध हुआ, और श्रीकृष्ण के बल को अनुभव कर भालू की शक्ति क्षीण हो गयी । वह युद्ध को छोड़कर श्रीकृष्ण को राम-रूप में देखकर उनके चरणों में आ पड़ा ।। २०५१ ।। ।। सवैया ।। वह चरणों में गिरकर गिड़गिड़ाने लगा और दीनतापूर्वक कहने लगा कि तुम ही रावण को मारनेवाले और द्रौपदी को लाज बचानेवाले हो । हे प्रभु ! ये सूर्य और चन्द्र को साक्षी मानकर मैं अपनी भूल की क्षमा माँगता

सूरज साखी । यौ कहिकै दुहिता जु हुती सोऊ लै ब्रिजनाथ कै अग्रज राखी ॥ २०५२ ॥ ॥ सवैया ॥ उत जुद्ध कै स्याम जू ब्याह कयो इत ह्वैकै निरास ए धामन आए । कान्ह गुफाहू के बीच धसे सोऊ काहू हने सु इही ठहराए । नीर ढरै भटवान की आंखन लोटत है चित मै दुख पाए । सीस धुनै इक ऐसे कहै हमहूँ जदुबीर के काम न आए ॥ २०५३ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन जितो जदुबीर के संग गयो सोऊ भूप पै रोवत आयो । भूपति देख दशा तिन की अति ही अपने मन मै दुखु पायो । धाइ गयो बलभद्र पै पूछन रोइ इही तिन बैन सुनायो । कान्ह गुफा के बिखै धसिकै तिहते बहुरो नही बाहरि आयो ॥ २०५४ ॥ ॥ हली बाच ॥ ॥ सवैया ॥ कै लरिकै अरि काहू के संग तन आपन को जमलोक पठायो । खोजत कै मनि या जड़ की बलि लोक गयो कोऊ मारग पायो । कै मनि लै इह भ्रात के प्रान गयो जम लै तिन लैन कउ धायो । कै इह मूरख को सु कुबोल लग्यो हुइ लजातुर धाम न आयो ॥२०५५॥ ॥ सवैया ॥ रोइ जबै संग भूपति के मुख ते मुसली इह भाँति उचार्‍यो । तउ शत्राजित कउ मिलिकै सभ जादव लातन मूकन मार्‍यो । पाग उतार दई मुशकै गहि गोडन ते मधि कूप ते डार्‍यो । छोडबे ताको कह्यो न किहू सभहू तिह को बधबो चित

हैं। यह कहकर उसने अपनी पुत्री श्रीकृष्ण के सामने भेंटस्वरूप प्रस्तुत की ॥ २०५२ ॥ ॥ सवैया ॥ उधर युद्ध करके श्रीकृष्ण ने विवाह किया और इधर उनके बाहर खड़े साथी वापस घरों को आ गए। उन्होंने यही मान लिया कि गुफा में गए श्रीकृष्ण को भालू ने मार डाला। वीरों की आँखों से पानी बहने लगा और वे दुःखपूर्ण हो धरती पर लोटने लगे। कई सिर धुनने लगे और कहने लगे कि हम भी श्रीकृष्ण के किसी काम न आ सके ॥ २०५३ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के साथ गई सेना राजा के पास आकर रोने लगी जिसे देखकर राजा अत्यन्त दुःखी हुआ। वह भागा हुआ बलराम से पूछने गया परन्तु उसने भी वही बात बताई कि कृष्ण गुफा में घुसे परन्तु फिर वापस नहीं लौटे ॥ २०५४ ॥ ॥ बलराम उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ या तो श्रीकृष्ण शत्रु के हाथों मारे गए अथवा वे इस मूर्ख (सत्राजित) की मणि खोजते हुए पाताललोक को चले गए हैं। या इसके भाई के हरण किए हुए प्राणों को यम से वापस लेने चले गए हैं अथवा इस मूर्ख की बातों से लज्जित होकर वापस

धार्‌यो ॥ २०५६ ॥ कान्हर की जब ए बतिया प्रभ की सभ नारन जउ सुन पाई । रोवत भी कोऊ भूमि परी गिर पीटत भी (मू०ग्रं०५१४) करिकै दुचिताई । एक कहै पति प्रान तजे अब हुइहै कहा हमरी गत माई । अउर रुकम्मनि देत दिजोतम दान सती फुन होबे कउ आई ॥२०५७॥ ॥ दोहरा ॥ बासुदेव अरु देवकी दुबिधा चितहि बढाइ । प्रभ गति द्वै बिध हेरिकै बरज्यो रुकमन आइ ॥ २०५८ ॥ ॥ सवैया ॥ पुत्रबधू हू को देवकी आइ सु स्याम भनै बिध या समझायो । जो हरि जूझ मरे रन मो जरबो तुहि को निसचै बनि आयो । जउ मनि ढूँढत या जड़ को ब्रिजनाथ घने पुन कोस सिधायो । ता ते रहो चुप कै सुध लै अरु यौ कहि पाइन सीस झुकायो ॥ २०५९ ॥ ऐसे समोध कै पुत्रबधू को भवानी को पै तिन जाइ मनायो । ठाइस दिवस लउ सेव करी तिह की तिह को अति ही रिझवायो । रीझि शिवा तिन पै तबही कबि स्याम इही बर दान दिवायो । आइ है स्याम न शोक करो तब लउ हरि लीने ब्रिआ मनि

नहीं आए हैं ॥ २०५५ ॥ ॥ सवैया ॥ जब रोकर इस प्रकार बलराम ने राजा से यह सब कहा तो सभी यादवों ने उधर मिलकर सत्राजित को लात-घूँसों से मारा । उसकी पगड़ी उतार दी और हाथ-पाँव बाँधकर उसे कुएँ में फेंक दिया । किसी ने उसे छोड़ने की सलाह नहीं दी अपितु उसका वध करने का विचार कर लिया ॥ २०५६ ॥ कृष्ण से संबंधित ये बातें जब स्त्रियों ने सुनीं तो कोई तो रोती हुई भूमि पर गिर पड़ी और कोई सिर पीटने लगी । कोई कहने लगी कि मेरे पति ने प्राण त्याग दिए हैं, अब मेरी क्या गति होगी । रुक्मिणी ब्राह्मणों को दान देने लगी और सती होने का उपक्रम करने लगी ॥ २०५७ ॥ ॥ दोहा ॥ वसुदेव और देवकी ने अत्यन्त चिन्तित होकर प्रभु-गति को अगम्य मानकर रुक्मिणी को सती होने से रोका ॥ २०५८ ॥ ॥ सवैया ॥ देवकी ने अपनी पुत्रवधू को इस प्रकार समझाया कि यदि श्रीकृष्ण युद्ध में मृत्यु को प्राप्त हो गए होते तो निश्चित रूप से तुम्हारा सती होना ठीक था; परन्तु यदि इसकी मणि ढूँढ़ते हुए वे बहुत दूर जा निकले हों तो ऐसा करना ठीक नहीं है । इसलिए अभी उसकी खोज-खबर लेनी चाहिए । यह कहकर उन्होंने रुक्मिणी के पाँवों पर सिर झुकाया और उसे विनम्रता-पूर्वक मना किया ॥ २०५९ ॥ पुत्रवधू को ऐसे समझाकर उन्होंने चंडिका की आराधना की और अट्ठाइस दिन तक सेवा कर उसे प्रसन्न किया । चंडिका ने प्रसन्न होकर यही वरदान दिया कि शोक मत करो श्रीकृष्ण वापस

आयो ।। २०६० ।। कान्ह को हेरि लिआ मनि के जुत शोक की बात सभै बिसराई । डार कमंडल मै जलु सीतल माइ पियो पुन वारकै आई । जादव अउर सभै हरखे अरु बाजत भी पुर बीच बधाई । अउर कहै कबि स्याम शिवा सु सभै जग माइ सही ठहराई ।। २०६१ ।।

।। इति जामवंत को जीत कै दुहिता तिस की मनि सहित लिआवत भए ।।

अथ सत्राजित को मनी दीबो ।।

।। सवैया ।। हेर कै स्याम शत्राजित कउ मनि लै करि कै फुनि ता सिर मारी । जा हित दोश दयो सोई लै जड़ कोप भरे इह भाँति उचारी । चउक कहै सभ जादव यौ सु पिखो रिस कैसी करी गिरधारी । सो इह भाँति कबित्तन बीच कथा जग मै कबि स्याम बिथारी ।।२०६२।। ।। सवैया ।। हाथि रह्यो मनि को धरिकै तिन नैक न काहू की ओर निहार्‌यो । लज्जत ह्वै खिसियानो घनो दुबिधा करि धाम की ओर सिधार्‌यो । बैर पर्‌यो हमरो हरि सउ औ कलंक चड्यो ग्यो

आएँगे ।। २०६० ।। मणि से संयुक्त श्रीकृष्ण को देखकर रुक्मिणी सभी बातें भूल गई और कमंडल में जल लेकर चंडिका पर चढ़ाने के लिए आ पहुँची। सभी यादव प्रसन्न हो उठे और नगर में बधाइयाँ बजने लगीं। कवि का कथन है कि इस प्रकार सबने जगत्माता को सही पाया ।। २०६१ ।।

।। इति जामवंत को जीतकर उसकी पुत्री-समेत मणि ले आये ।।

सत्राजित को मणि-प्रदान

।। सवैया ।। सत्राजित को ढूँढ़कर श्रीकृष्ण ने मणि हाथ में लेकर उसके सामने फेंकी और कहा कि हे मूर्ख ! जिसके लिए तुमने मुझे दोषी ठहराया था, ये अपनी मणि ले। श्रीकृष्ण के इस क्रोध को सभी यादव चकित होकर देखने लगे और उसी कथा को श्याम कवि ने इस संसार में अपने कवित्तों के माध्यम से कहा है ।। २०६२ ।। ।। सवैया ।। उसने मणि को हाथ में लिया और बिना किसी की ओर देखे लज्जित होकर खिसियाकर वह घर की तरफ़ चल पड़ा। मेरी शत्रुता अब श्रीकृष्ण जी से हो गई है, यह तो मेरे लिए कलंक है ही साथ-

भ्रातर मार्यो । भीर परी ते अधीर भयो दुहिता देउ स्याम इही चित धार्यो ॥ २०६३ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे सत्राजित को मनी दीबो ॥

अथ शत्राजित की दुहिता को ब्याह कथनं ॥

॥ सवैया ॥ बोल दिजोतम बेदन की बिध जैस कही तस ब्याह रचायो । सति (मू०ग्रं०५१५) भामन को कबि स्याम भनै जिहको सभ लोगन मै जसु छायो । पावत है उपमा लछमी की न ता सम यौ कहिबो बनि आयो । ताही के ब्याहन काज सु दै मनि मान भलै घनिस्याम बुलायो ॥ २०६४ ॥ स्री ब्रिजनाथ सुने बतिया सुभ साज जनेत तहाँ को सिधाए । आवत सो सुनिकै प्रभ को सभ आगे ही ते मिलिबे ही कउ धाए । आदर संग लवाइकै जाइ बिवाह कियो दिजदान दिवाए । ऐसे बिवाह प्रभू सुखु पाइ तिया संग लै करि धामहि आए ॥ २०६५ ॥

॥ इति बिवाह संपूरन होत भयो ॥

ही-साथ मेरा भाई भी मारा गया । अतः मैं मुसीबत में फँस गया हूँ, इसलिए अब मुझे अपनी पुत्री श्रीकृष्ण को दे देनी चाहिए ॥ २०६३ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण के बचित्र नाटक के कृष्णावतार में सत्राजित को मणि देना समाप्त ॥

सत्राजित की पुत्री का विवाह-कथन

॥ सवैया ॥ विप्रों को बुलाकर वेद-मर्यादा के अनुसार सत्राजित ने पुत्री का विवाह रचाया । उसकी पुत्री का नाम सत्यभामा था जिसका यश सारे लोगों में छाया हुआ था । लक्ष्मी भी उसके समान नहीं थी । उसी को वरण करने के लिए आदर-सहित श्रीकृष्ण को बुलवाया गया ॥ २०६४ ॥ श्रीकृष्ण यह समाचार पाकर बारात लेकर उसकी ओर चल पड़े । प्रभु के आने की खबर पाकर वे सब आगे ही स्वागत के लिए पहुँचे । आदरपूर्वक उन्हें ले जाकर विवाह करवाया और विप्रों को दान दिया और श्रीकृष्ण विवाह करने के बाद सुखपूर्वक घर वापस लौटे ॥ २०६५ ॥

॥ इति विवाह संपूर्ण हुआ ॥

अथ लछिआ ग्रहि परसंग ॥

॥ सवैया ॥ तउ ही लउ ऐसो सुनी बतिया लछिआग्रहि मै सुत पंड के आए । गाइ समेत सभो मिलि कौरन चित्त बिखै करुना न बसाए । ऐसो बिचार किए चित मै सु तहाँ को चलै सभ बिशन बुलाए । ऐसे बिचार सु साज कै स्यंदन स्री ब्रिजनाथ तहा को सिधाए ॥ २०६६ ॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह चले उत कउ जबही बरमाक्रित तो इत मंत्र बिचार्यो । लै अक्रूर कउ आपने संगि कह्यो अरे कान्ह कहूँ कउ पधार्यो । छीन लै याते अरे मिलि कै मनि ऐसे बिचारि कियो तिह मार्यो । लै बरमाक्रित वा बध कै मन आपने धाम की ओर सिधार्यो ॥ २०६७ ॥ ॥ चौपई ॥ सतिधंना भी संग चलायो । जब सत्राजित को तिन घायो । ए तिन बध कै डेरन आए । उतै संदेश स्याम सुन पाए ॥ २०६८ ॥ ॥ दूत बाच कान्ह सो ॥ ॥ चौपई ॥ प्रभ सो दूतन बैन उचारे । सत्राजित क्रितबरमा मारे । मनि धन छीन ताहि ते लयो । तोहि त्रिआ को अति दुखु दयो ॥ २०६९ ॥ जब जदुपति इह बिध सुन पायो । छोर अउर सभ कारज आयो । हरि आवन

लाक्षागृह-प्रसंग

॥ सवैया ॥ यह सब बातें सुनकर तब तक पाण्डव लाक्षागृह में आये । उन सबों ने मिलकर कौरवों से प्रार्थना की परन्तु कौरवों को तनिक भी दया नहीं आई । उन्होंने विचार करके श्रीकृष्ण को बुलाया और श्रीकृष्ण रथ सजाकर उस ओर चल दिये ॥ २०६६ ॥ ॥ सवैया ॥ कृष्ण जब उधर चले तब कृतवर्मा ने कुछ सोचा और अक्रूर को साथ लेकर उनसे पूछा कि श्रीकृष्ण किधर गये ? आओ मिलकर (सत्राजित से) मणि छीन लें और यह विचार करके सत्राजित को मार दिया तथा उसका वध करके कृतवर्मा अपने घर की ओर चल दिया ॥ २०६७ ॥ ॥ चौपाई ॥ शतधन्वा भी उस समय इनके साथ था जब इन्होंने सत्राजित को मारा । इधर ये तीनों उसका वध करके अपने घर आये और उधर श्रीकृष्ण को भी यह समाचार मिल गया ॥ २०६८ ॥ ॥ दूत उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ चौपाई ॥ दूत ने प्रभु से कहा कि कृतवर्मा ने सत्राजित को मार डाला । उससे मणि छीन ली है और इस प्रकार तुम्हारी पत्नी (सत्यभामा) को बहुत दुःख दिया है ॥ २०६९ ॥ जब श्रीकृष्ण ने यह सुना तो वे सभी काम छोड़कर इस तरफ चल दिये जब कृतवर्मा ने

क्रितबरमै जानी। सतिधंना सो बात बखानी ॥ २०७० ॥ ॥ अड़िल ॥ कहु सतिधंना बात अबै हम किआ करै। कहो परै कै जाइ कहो लरिकै मरै। दुइ मै इक मुहि बात कहो समझाइकै। हो को उपाइकै स्यामहि मारै जाइकै ॥ २०७१ ॥ क्रितबरमा की बात सुनत तिन यों कह्यो। जदुपति बली प्रचंड हन्यो अर जो चह्यो। तासो हम पै बल न लरै पुन जाइकै। हो कंस से छिन मै (मू०ग्रं०५१६) मार दए सुख पाइकै ॥ २०७२ ॥ ॥ अड़िल ॥ बतिया सुनि तिन को अकरूर पै आइयो। प्रभ दुबिधा को भेद सु ताहि सुनाइयो। तिह कह्यो अब सुन तेरो इही उपाइ है। हो प्रभ ते बच है सोऊ जु प्रान बचाइ है ॥ २०७३ ॥ ॥ स्वैया ॥ दै मनि ताहि उदास भयो किह ओर भजो चित मै इह धार्यो। मै अपराध किओ हरि को मनि हेत बली सत्राजित मार्यो। ताहि के हेत गुसा करि धाम सभै अपनो पुरखत्त सँभार्यो। जउ रहिहउ तउ मारत है इह कै डर उत्तर ओर सिधार्यो ॥ २०७४ ॥ ॥ दोहरा ॥ सतिधंना भन लै जहाँ

श्रीकृष्ण के आने की बात सुनी तो उसने शतधन्वा से कहा ॥ २०७० ॥ ॥ अड़िल ॥ हे शतधन्वा! अब हम क्या करें? कहो तो हम भाग जाएँ और कहो तो लड़कर मर जाएँ। मुझे दोनों में से एक बात समझाकर कहो और बताओ कि क्या कोई उपाय है जिससे कृष्ण को मारा जा सके ॥ २०७१ ॥ कृतवर्मा की बात सुनकर उसने कहा कि जिस शत्रु कृष्ण को मारना चाहते हो, वह प्रचण्ड महाबली है और मुझमें इतना बल नहीं है कि मैं उससे लड़ सकूँ। उसने बिना किसी परिश्रम के कंस जैसों को क्षण भर में मार डाला है ॥२०७२॥ ॥ अड़िल ॥ उसकी बातों को सुनकर अक्रूर के पास आया और श्रीकृष्ण से सम्बन्धित दुविधा के बारे में उसको कहा। उसने कहा कि अब एक ही उपाय है कि प्रभु से बचने के लिए प्राण बचाकर भाग जाओ ॥ २०७३ ॥ ॥ सवैया ॥ कृतवर्मा उसको मणि देकर उदास हो गया और सोचने लगा कि अब किस ओर भागूँ। मैंने मणि के लिए सत्राजित जैसे बली को मारकर श्रीकृष्ण के प्रति अपराध किया है। उसी के कारण क्रोधित होकर श्रीकृष्ण अपने पौरुष को सँभालते हुए यहाँ वापस प चे हैं। यदि मैं यहाँ रहता हूँ तो वे मुझे मार डालेंगे, इस भय से वह उत्तर दिशा की ओर भाग खड़ा हुआ ॥ २०७४ ॥ ॥ दोहा ॥ शतधन्वा भयभीत होकर मणि को लेकर जहाँ

भज ग्यो त्रास बढाइ । स्यंदन पै चड़ स्याम जू तह ही पहुचयो जाइ ॥ २०७५ ॥ पाव पिआदा शत्र होइ भज्यो सु त्रास बढाइ । तब जदुबीर क्रिपान सो मार्‌यो ता के जाइ ॥२०७६॥ खोजत भ्यो तिह मारके मनि नही आई हाथ । मनि नही आई हाथ यौ कही हली के साथ ॥ २०७७ ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसे लख्यो मुसली मन मै सु प्रभू हम ते मनि आज छपाई । लै अकरूर बनारस ग्यो मनि कउ तिह की न कछू सुध पाई । स्याम जू मो इक सिख्य है भूपत जात तहाँ हउ सो ऐसे सुनाई । यों बतिया कहि जात रह्यो जदुबीर की कै मन मै दुचिताई ॥ २०७८ ॥ ॥ दोहरा ॥ जउ मुसली तिह पै गयो तउ भूपति सुखु पाइ । लै अपने तिह धाम ग्यो आगे ही ते आइ ॥२०७९॥ गदा जुद्ध मै अति चतुर यों सभ ते सुन पाइ । तबै द्रुजोधन हली ते सभ सीखी बिध आइ ॥ २०८० ॥ ॥ सवैया ॥ सतधंना कउ मार जबै जदुनदंन द्वारवतीहूँ के भीतर आयो । कंचन को अकरूर बनारस दान करै बहु यौ सुनि पायो । सूरजि वित्त उही पहि है मनि यौं अपने मन मै सु जनायो । मानस भेज भलो तिह ते तिह को अपने पहि बोल

भागकर पहुँचा, श्रीकृष्ण रथ पर सवार होकर वहीं जा पहुँचे ॥ २०७५ ॥ शत्रु पैदल ही भयभीत होकर भागा और तब श्रीकृष्ण ने कृपाण से उसे वहीं मार डाला ॥ २०७६ ॥ उसको मारकर खोजने पर भी मणि इनके हाथ नहीं लगी और इन्होंने मणि के न मिलने की बात बलराम को बताई ॥ २०७७ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने विचार किया कि इसने हम लोगों से मणि को छिपा लिया है । अक्रूर की कहीं खोज-ख़बर न मिलने पर यह पता लगा कि अक्रूर मणि लेकर बनारस चला गया । हे कृष्ण ! मेरा वहाँ एक शिष्य है जो राजा है और मै वहीं जा रहा हूँ । यह कहकर बलराम बनारस की ओर श्रीकृष्ण की परेशानी के बारे में सोचता हुआ चल पड़ा ॥ २०७८ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा के पास बलराम के पहुँचने पर राजा को अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ और वह इन्हें अगवानी करके अपने घर ले गया ॥ २०७९ ॥ जब लोगों को यह पता लगा कि बलराम गदायुद्ध में अत्यन्त प्रवीण है तब दुर्योधन ने यह विद्या वहाँ उनसे आकर सीखी ॥ २०८० ॥ ॥ सवैया ॥ शतधन्वा को मारकर जब श्रीकृष्ण द्वारका में आये तो श्रीकृष्ण ने सुना कि बनारस में अक्रूर बहुत-सा सोने इत्यादि का दान कर रहा है । श्रीकृष्ण ने मन में यह जान लिया कि स्यमन्तक मणि उसी के पास है श्रीकृष्ण ने एक व्यक्ति को भेजकर उसको

पठायो ॥ २०८१ ॥ जउ हरि पै सोऊ आवत भ्यो तिह ते मनि तो इन माग लई है। सूरज जे तिह रीझ दई धनसत्ति की जा हित देह गई है। जा हित स्याम त्रिया हरि भ्रातहि भानहि की मन बात ठई है। सो दिखराइ सभो हरखाइकै ले अक्रूरह फेरि दई है ॥२०८२॥ ॥ सवैया ॥ जो सत्राजित कै कर सेव सु सूरज की फुन ताहि ते पाई। जा हरि कै इह (मू०पं०५१७) कै बध कै धनसत्ति सु आपनी देह गवाई। ताहि गयो अक्रूर थो लै तिह ते फिर सो ब्रिजनाथ पै आई। सो हरि देत भयो तिह को मुँदरी मनो स्याम जू राघव हाई ॥ २०८३ ॥ ॥ दोहरा ॥ बडे जसहि पावत भयो मनि दै स्री जदुबीर। जो कटिआ सिर दुरजनन हरता साधन पीर ॥ २०८४ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिशना अवतारे सतधंने को बध कै अक्रूर को मनि देत भए ॥

कान्ह जू को दिल्ली महि आवन कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जब अक्रूरहि को मनि दई। जदुपति

अपने पास बुलाया ॥ २०८१ ॥ जब वह श्रीकृष्ण के पास आया तो इन्होंने वह मणि उससे माँग ली। सूर्य ने प्रसन्न होकर वह मणि दी थी और इसी के लिये शतधन्वा को शरीर को त्यागना पड़ा। जिसके लिए श्रीकृष्ण के भाई बलराम ने मन में ठाना था कि वे उसे लेकर ही आएँगे, उस मणि को लेकर श्रीकृष्ण ने सबको दिखाकर पुनः अक्रूर को लौटा दिया ॥ २०८२ ॥ ॥ सवैया ॥ जिस मणि को सूर्य की सेवा करके सत्राजित ने प्राप्त किया था, जिस मणि के लिए शतधन्वा का वध श्रीकृष्ण ने किया और जिसको लेकर अक्रूर चला गया था और पुनः वह श्रीकृष्ण के पास आ गयी थी, उसे श्रीकृष्ण ने उसी प्रकार अक्रूर को वापस कर दिया, मानो श्रीरामचन्द्र जी अपने सेवक को मुद्रिका प्रदान की ॥२०८३॥ ॥ दोहा ॥ दुर्जनों का सिर काटनेवाले और सन्तों के कष्टों को दूर करनेवाले श्रीकृष्ण को मणि दे देने पर अपार यश प्राप्त हुआ ॥ २०८४ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में शतधन्वा का वध कर अक्रूर को मणि देना समाप्त ॥

कृष्ण जी का दिल्ली-आगमन-कथन

॥ चौपाई ॥ जब अक्रूर को मणि दे दी तब श्रीकृष्ण ने दिल्ली जाने का

दिल्ली कउ सुध कई । तब दिल्ली के भीतर आए । पांडव पाँच चरन लपटाए ॥ २०८५ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब कुंती के ग्रहि गए कुशल पूछियो जाइ । जो दुख इन कैरवि दए सो सभ दए बताइ ॥ २०८६ ॥ इंद्रप्रसत मै क्रिशन जू रहे मास जब चार । तब अरजन को संग लै इक दिन चड़े शिकार ॥ २०८७ ॥ ॥ स्वैया ॥ सोध शिकार को लै हरिजू सु घनो जह थो तिह ओर सिधारे । गोइन सूकर रीछ बडे बहु चीतरु अउर ससे बहु मारे । गंडे हने महिखास के मत्त करी अर सिंघन झुंडहि झारे । नैक सँभार रही न परै बिसंभार जिनो सर स्याम प्रहारे ॥ २०८८ ॥ ॥ स्वैया ॥ पारथ को संग लै प्रभजू बन मै धसिकै बहुते म्रिग घाए । एक हने करवारन सो तकि एकन के तन बान लगाए । अस्वन को दवराइ भजाइकै कूकर तेऊ हने जु पराए । स्री ब्रिजनाथ के अग्रज जे उठ भाजत भे तेऊ जान न पाए ॥ २०८९ ॥ ॥ स्वैया ॥ पारथ एक हने म्रिगवा इक आपहि स्री ब्रिजनाइक घाए । जे उठ भाजत भे बन मै सोऊ कूकर डार सभै गहवाए । तीतर जे उडिकै नभि ओर गए तिनको प्रभ बाज चलाए । चीतन एक म्रिगा गहिकै कबि स्याम कहै जमलोक

विचार किया और दिल्ली पहुँचे, जहाँ पाँचों पाण्डव आपके चरणों में आ गिरे ॥ २०८५ ॥ ॥ दोहा ॥ तब आप कुन्ती के घर में कुशल-क्षेम पूछने गए और जो दुःख कौरवों ने इन लोगों को दिये थे, कुन्ती ने वे सब बताए ॥२०८६॥ चार महीने इन्द्रप्रस्थ में रहने के बाद एक दिन श्रीकृष्ण ने अर्जुन को साथ लेकर शिकार खेलने के लिए निकले ॥ २०८७ ॥ ॥ सवैया ॥ जिस तरफ़ अधिक शिकार था श्रीकृष्ण जी उस ओर चले और नीलगाय, सुअर, रीछ, चीते एवं बहुत से खरगोश आदि मारे। गैण्डे, जंगल के मस्त हाथी और सिंहों के झुण्ड मार डाले तथा जिस पर भी श्रीकृष्ण ने बाण से वार किया, वह वार न सहन कर सका और अचेत होकर गिर पड़ा ॥२०८८॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन को साथ लेकर श्रीकृष्ण जी ने जंगल में घुसकर बहुत से मृगों को मारा। कइयों को तलवार से और कइयों को शरीर में बाण मारकर मार डाला। घोड़ों को दौड़ाकर और कुत्तों को छोड़कर भागते हुए जानवरों को मार डाला और इस प्रकार श्रीकृष्ण के सामने से भागता हुआ कोई जा न पाया ॥२०८९॥ ॥ सवैया ॥ एक मृग अर्जुन ने तथा एक स्वयं श्रीकृष्ण ने मारा और दौड़ते हुओं को कुत्ते छोड़कर लिया में उड़नेवाले तीतरों के लिए

पठाए ॥ २०६० ॥ ॥ स्वैया ॥ बेसरे अउर कुही बहरी अरु बाज जुरे बहुले संग लीने । बासो घनो लगरा चरगे सिकरेन को फोट भली बिध कीने । धूती उकाब बसीनन कउ सज कंठ जगोलन द्वार नवीने । जा संग हेर चलावत भे तिन पाछन ते इक जान न दीने ॥२०६१॥ ॥ स्वैया ॥ पारथ (मू०ग्रं०२१८) अउ प्रभ जी मिलिकै जब ऐसो शिकार कियो सुख पायो । आपस मै कबि स्याम भनै तिह ठउर दुहू अति हेत बढायो । अउ दुहू को जल पीवन को मन अउ सरतड़न सु है ललचायो । छोर अखेटक दीन दुहूँ चलिकै प्रभ जू जमना तट आयो ॥२०६२॥ ॥ स्वैया ॥ जात हुते जल पीवन के हित तउ ही लउ सुंदर नार निहारी । पूछहु को है कहा इह देसु कह्यो संगि पारथ यो गिरधारी । आइस मान पुरंदर को सु भयो तिह के संग बात उचारी । कउन की बेटी है देस कहा तुहि को तोहि भ्रात तू कउन की नारी ॥ २०६३ ॥ ॥ अथ जमना बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ अरजन से जमना तबै ऐसे कह्यो सुनाइ । जदुपति बर ही चाह चित तपु कीनो मै आइ ॥ २०६४ ॥ ॥ सवैया ॥ तब पारथ आइकै सीस निवाइ सु स्याम जू सिउ

श्रीकृष्ण जी ने बाज़ छोड़े और इस प्रकार इन बाज़ों ने शिकार पकड़कर मार गिराया ॥ २०६० ॥ ॥ सवैया ॥ बेसरे, कुही, बहरी आदि जातियों के बाज़ तथा लगरा, चरग, शिकरा आदि जातियों के बाज़ इन लोगों ने साथ लिये । इसी प्रकार धूर्त, उकाब आदि बाज़ों को सजाकर इन्होंने साथ लिया और उनको जिस भी पक्षी के पीछे निशाना ताक कर भेजा, उसे इन्होने जाने नहीं दिया ॥ २०६१ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण और अर्जुन ने इस प्रकार मिलकर शिकार का सुख प्राप्त किया और परस्पर उनका प्रेम बहुत बढ़ गया । अब उनका मन पानी पीने के लिए और नदी की तरफ़ आने के लिए ललचाने लगा तथा दोनों शिकार छोड़कर यमुना के तट पर चले आये ॥ २०६२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब ये पानी पीने के लिए जा रहे थे तो वहाँ इन्होंने सुन्दर स्त्री को देखा । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को उस स्त्री के बारे में पूछने को कहा । श्रीकृष्ण की आज्ञा मानकर अर्जुन ने पूछा कि हे स्त्री ! तुम किसकी पुत्री हो, तुम्हारा कौन सा देश है, तुम किसकी बहन हो तथा किसकी पत्नी हो ? ॥२०६३॥ ॥ यमुना उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ अर्जुन से यमुना ने तब कहा कि मेरे हृदय में श्रीकृष्ण के वरण की इच्छा थी इसलिए मैंने यहाँ पर तपस्या की है ॥ २०६४ ॥ सवैया तब अर्जुन ने सिर झुकाकर श्रीकृष्ण जी से निवेदन किया कि हे

इह बैन उचारे । सूरज की दुहिता जमना इह नाम प्रभू जग जाहरि सारे । भेस तपोधन काहे कियो इन अउ ग्रहि के सभ काज बिसारे । अरजन उतर ऐसे दियो घनिस्याम सुनो बर हेत तुमारे ॥ २०९५ ॥ ॥ सवैया ॥ पारथ की बतिया सुन यौ बहिया गह डार लई रथ ऊपर । चंद सो आनन जाहि लसै अति जोति जगै सु कपोलन दू पर । कै कै क्रिपा अतिही तिह पै न क्रिपा करि स्याम जू ऐसी किसी पर । आपने धाम लिआवत भ्यो सभ ऐस कथा इह मालम भू पर ॥ २०९६ ॥ ॥ सवैया ॥ डार जबै रथ पै जमना कह स्री ब्रिजनाइक डेरन आयो । ब्याह के बीच सभाहू जुधिशटर ग्यो भ्रिप पाइन सो लपटायो । द्वारका जैसि रची प्रभ जू तुम मो पुर तैसि रचो सु सुनायो । आइस देत भयो प्रभ जू करमाबिस्व सो तिन तैसो बनायो ॥ २०९७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे शिकार खेलबो संपूरन । जमना को बिबाहत भए ॥

प्रभु ! यह सूर्य की पुत्री यमुना है और इसे सारा संसार जानता है। तब श्रीकृष्ण ने कहा कि इसने घर का कामकाज छोड़कर तपस्विनी का वेश क्यों धारण किया है ? अर्जुन ने उत्तर दिया कि ऐसा उसने आपको प्राप्त करने के लिए किया है ॥ २०९५ ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन की बात सुनकर श्रीकृष्ण ने यमुना की बाँह पकड़कर उसे रथ पर चढ़ा लिया। उसका मुख चन्द्रमा के समान था और उसके गालों की ज्योति जगमगा रही थी। श्रीकृष्ण ने उस पर इतनी कृपा की जितनी अन्य किसी पर नहीं की और उसको घर ले आने की कथा तो जगत-प्रसिद्ध है ॥ २०९६ ॥ ॥ सवैया ॥ यमुना को रथ पर बिठाकर श्रीकृष्ण अपने निवासस्थान पर ले आये। उससे विवाह करने के बाद वह सभा में युधिष्ठिर के पास गये और राजा युधिष्ठिर उनके चरणों में आ गिरा। युधिष्ठिर ने कहा कि हे प्रभु ! आपने द्वारका नगरी की रचना किस प्रकार की है ? कृपया उसके बारे में बताइए। तब श्रीकृष्ण जी ने विश्वकर्मा को आदेश दिया और विश्वकर्मा ने द्वारका के ही समान रचना वहाँ कर दी ॥ २०९७ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में शिकार खेलना और यमुना से विवाह करना समाप्त ॥

अथ उजैन की दुहिता को ब्याह कथनं ॥

॥ सवैया ॥ पंड के पुत्रन ते अरु कुंती ते लैके बिदा घनिस्याम सिधायो । भूप उजैन पुरी को जहा कबि स्याम कहै तिहपै चलि आयो । ता दुहिताहू को ब्याहन काज दुरजोधनहूं को भी चित्त लुभायो । सैन बनाइ भली अपनी तिह ब्याहन कउ इतते तिह धायो ॥ २०९८ ॥ ॥ सवैया ॥ सजु सैन दुर्जोधन (मू०ग्रं०५११) आयो उते पुर जाही इतै ब्रिजनाइक आए । भूपति अउर बडे बलवंड सु वाह बियाह कउ देखन धाए । स्याम भनै तिहकी भगनी हित आनंद दुंदभ कोट बजाए । तउही लउ स्याम जी ब्याह कै ताह को पारथ लै संगि अउध सिधाए ॥ २०९९ ॥ ॥ चौपई ॥ जब जदुबीर अजुध्या आयो । सुनि भूपत लैबे कहु धायो । सिघासन अपने बैठार्यो । चित को शोक दूर करि डार्यो ॥ २१०० ॥ चरन प्रभू के गहि करि रह्यो । तुम दरशन पावत दुख बह्यो । अरु न्रिप चित मै प्रेम बढायो । मन अपनो संगि स्याम मिलायो ॥ २१०१ ॥ ॥ कान्ह बाच न्रिप सो ॥ ॥ सवैया ॥ देखकै प्रीत न्रिपोतम की हसिकै तिह सो इम स्याम

उज्जैन राजा की कन्या का विवाह-कथन

॥ सवैया ॥ पाण्डवों से और कुंती से बिदा लेकर श्रीकृष्ण उज्जैन नगर में आ पहुँचे । उस राजा की पुत्री से विवाह करने के लिए दुर्योधन का मन भी ललचा रहा था । वह भी सेना सजाकर इस कार्य के लिए इधर से आ पहुँचा ॥ २०९८ ॥ ॥ सवैया ॥ उधर से सेना-सहित दुर्योधन पहुँचा और इधर से श्रीकृष्ण जी पहुँचे । अन्य कई बड़े-बड़े राजा भी विवाह देखने के लिए आए और राजकन्या के विवाह के आनन्द में दुंदुभियाँ बजाने लगे । तब श्रीकृष्ण उससे विवाह करके अर्जुन के साथ अयोध्या आ गए ॥ २०९९ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब श्रीकृष्ण अयोध्या आए तो उन्हें ले आने के लिए राजा स्वयं गया । उन्हें अपने सिंहासन पर बैठाया और अपने दुःखों को नष्ट किया ॥ २१०० ॥ उसने प्रभु के चरण पकड़ लिये और कहा कि आपके दर्शन से मेरे दुःख दूर हो गए हैं । राजा ने अपने प्रेम को और बढ़ाते हुए अपना मन श्रीकृष्ण में लगा दिया ॥ २१०१ ॥ ॥ कृष्ण उवाच राजा के प्रति सवैया राजा के प्रेम को देखकर श्रीकृष्ण ने हँसकर राजा से

उचारो। हो तुम राघव के कुल ते जिन रावन सो रिस शत्र पछारो। मागवो छत्रन को न कह्यो तऊ मांगत हो नहि शंक बिचारो। आपनी दै दुहता हम कउ तिह को चित चाहत है सु हमारो ॥ २१०२ ॥ ॥ त्रिप बाच कान्ह सो ॥ ॥ चौपई ॥ तब यौ भूप स्याम सौ भाखी। एक प्रतग्या मै कर राखी। जो इन सत ब्रिखभन को नाथै। सो इह को लै जाकरि साथै ॥ २१०३ ॥ ॥ सवैया ॥ कट सो कसि स्याम पितंबर को अपनो पुन सातऊ बेख बनाए। देखबे भीतर एक ही स्याम लगै किनहू लखि भेद न पाए। पागहि दाब नचाइकै भउहन सूर सभो महि सूर कहाए। धंनि ही धंनि कह्यो सभ ही जब सातही बैलन को नथ आए ॥ २१०४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब नाथत भ्यो प्रभ सात ब्रिखभ तब भाखत भे भटवा इह साथे। आवत जो बलवंत इहो तिह सो पुरए इन सींगन साथे। कउन बली प्रगट्यो जग मै इन सातन के जोऊ नाकहि नाथे। बीर कहै हसकै रनधीर बिना रिप चीर सु स्री ब्रिजनाथे ॥ २१०५ ॥ ॥ सवैया ॥ साध कहै इक यो हसि कै सम स्याम को को जग बीर भयो है। जा मघवाजित

कहा कि हे राजन् ! आप श्रीराम के कुल के हैं जिन्होंने क्रोध में आकर रावण जैसे शत्रुओं को मार डाला था। माँगना क्षत्रियों का कार्य नहीं है, परन्तु फिर भी शंका-रहित होकर मैं माँग रहा हूँ और आपसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरी इच्छानुसार आप अपनी पुत्री मुझे दे दें ॥ २१०२ ॥ ॥ नृप उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ चौपाई ॥ तब राजा ने कहा कि मैंने एक प्रतिज्ञा कर रखी है। जो इन सात बैलों को नाथ देगा मैं उसी के साथ अपनी कन्या भेजूँगा ॥२१०३॥ ॥ सवैया ॥ अपनी कमर पर पीताम्बर बाँधकर श्रीकृष्ण ने अपने सात वेश बनाए जो देखने में एक ही समान प्रतीत हो रहे थे। पगड़ी को कसकर उन्होंने शूरवीरों की तरह भौंहों को नचाया। जब श्रीकृष्ण ने सातों बैलों को नाथ दिया तो सभी धन्य-धन्य कहने लगे ॥ २१०४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण बैलों को नाथ रहे थे तो साथ के वीर आपस में बातें कर रहे थे कि कोई ऐसा बली नहीं है जो इन बैलों के सींगों से भिड़ सके। कौन ऐसा वीर है जो इन सातों को नाथ देगा। तभी वीर हँसकर कहने लगे कि ये श्रीकृष्ण ही हैं जो इस कार्य को कर सकते हैं ॥ २१०५ ॥ ॥ सवैया ॥ साधु मुस्कुरा कर कहने लगे कि श्रीकृष्ण जैसा वीर संसार में कोई नहीं है। इसने इन्द्र को जीतनेवाले रावण का सिर उसका कबंध बना दिया, गज पर विपत्ति

जीत लयो सिर रावन काटि कबंध कयो है। गाढ़ परी गज पै जबही तिह नाकहि ते प्रभ राख लयो है। भीर परे रन धीर भयो जन पीर निहार अधीर भयो है ॥२१०६॥ ॥ सवैया ॥ जो बिध बेद के बीच लिखी बिध ताही सो ब्याह (मू०ग्रं०५२०) सिआम को कीनो। आनंद कै अतिही चितमै सभ दीन सु बिप्रन साज नवीनो। अउ गजराज बडे अरु बाज घने धन लै ब्रिजनाथ को दीनो। स्याम भने इह भाँति सो भूपत लोक बिखै अति ही जसु लीनो ॥ २१०७ ॥ ॥ न्रिप बाच सभा सो ॥ ॥ सवैया ॥ भूप सिंघासन ऊपरि बैठके मद्धि सभा इह भाँत बखान्यो। तैसोई काम कियो जदुनंदन जिउ धन स्री रघुनंदन तान्यो। जीत उजैन के भूप की भैन पुरी इह अउध जबै पगु ठान्यो। देखत ही सभ ही मन मै ब्रिजनाइक सूर सही करि जान्यो ॥ २१०८ ॥ ॥ सवैया ॥ भूप जबै अपने मन मै जदुबीर को बीर सही करि जान्यो। स्री ब्रिजनाइक जुद्ध सभै अरि अउर न आँखन अग्रज आन्यो। मंत्रन हेर सभै हरि को बरु लाइ कहै इह भाँति बखान्यो। अउध के राइ तबै अपने मन मै कबि स्याम महाँ सुखु मान्यो ॥ २१०६ ॥ ॥ सवैया ॥ करमन मै दिज स्रेष्ट जु थे जब सो इह भूप सभा हू मै आए। दैकै असीस त्रिपोतम को कबि स्याम भनै इह बैन सुनाए। जा दुहता के सुनो तुम हेतु घने दिज देसन देस

पड़ी तो उसको बचाया और सामान्य जन पर जब भी विपत्ति पड़ी तो उसकी मुसीबत से अधीर हो उठा ॥ २१०६ ॥ ॥ सवैया ॥ वेदोक्त रीति के अनुसार श्रीकृष्ण का विवाह हुआ और दीन विप्रों को नये वस्त्रादि दिये गये। बड़े-बड़े हाथी और घोड़े श्रीकृष्ण को दिये गये और इस प्रकार सारे संसार में राजा का यश फैल गया ॥२१०७॥ ॥ नृप उवाच सभा के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ राजा ने सभा में बैठते हुए कहा कि श्रीकृष्ण ने वही कार्य किया है जो (शिव) धनुष को तानकर श्रीराम ने किया था। उज्जैन के राजा की बहिन को जीतकर जब ये अवध नगरी में आए थे तो उसी समय सबने इनको वीर मान लिया था ॥ २१०८ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण युद्ध में किसी शत्रु राजा को टिकने नहीं देते थे, यह जानकर राजा ने उन्हें वीर माना। मंत्रों से अभिहित कर तब वर पाणिग्रहण आदि संस्कार हुए और राजा ने अत्यन्त सुख का अनुभव किया ॥ २१०६ ॥ ॥ सवैया ॥ कर्म (-काण्ड) में श्रेष्ठ द्विज तब राजसभा में आए और उन्होंने राजा को आशीर्वाद देते हुए ये बातें कहीं कि हे राजा

पठाए । सो तुम राइ अचानक ही बरु लाइक स्री ब्रिजनाइक पाए ।। २११० ।। ।। सवैया ।। यो सुनिकै बतिया तिन की चित के ब्रिप बीच हुलास बढैकै । दाज दयो जिह अंत न आवत बाजन द्वार अनेक बजैकै । बिप्रन दीन घनी दछना सुखु पाइ किते जदुबीर चितैकै । सुंदर जो अपनी दुहता सु दई घनिस्याम के संगि पठैकै ।। २१११ ।। ।। सवैया ।। जीत सुअंबर मै हरि अउध के भूपत की दुहता जब आयो । बाग के भीतर सैल करै संग पारथ के चित मै ठहरायो । पोसत भांग अफीम घनो मदपीवन के तिन काज मँगायो । मंगन लोगन बोल पठ्यो बहु आवत भे जनि पार न पायो ।। २११२ ।। ।। सवैया । बहु रामजनी तह नाचत है इक झाझर बीन म्रिदंग बजावै । दै इक भूमक आवत है इक भामन दै हरि भूमक जावै । कान्ह पटंबर देत तिनै मन लाल घने चित को जु रिझावै । स्याम भनै बहु मोल खरे सुरराजहि को जोऊ हाथ न आवै ।।२११३।। पावत रामजनी नचकै धन पावत (मू०ग्रं०४२१) है बहु दान गवय्या । एक रिझावत है हरि को कबि स्याम भनै पड़ छंत सवय्या । अउर दिसा कै बिखै सु घने मिलि नाचत

इसी पुत्री के वर के लिए आपने देश-देशान्तरों में ब्राह्मण भेजे थे, परन्तु आज भाग्य से अचानक श्रीकृष्ण जैसा वर आपको प्राप्त हो गया ।। २११० ।। ।। सवैया ।। उनकी इन बातों को सुनकर प्रसन्न-मन होकर राजा ने वाद्य बजवाते हुए अनेकों प्रकार का दहेज दिया । विप्रों को पर्याप्त दक्षिणा दी गई और सुखपूर्वक श्रीकृष्ण को अपनी पुत्री अर्पित की ।। २१११ ।। ।। सवैया ।। जब अवधनरेश की पुत्री को स्वयंवर में जीतकर श्रीकृष्ण जी आए तब उन्होंने अर्जुन के साथ उद्यान में भ्रमण करने का विचार किया । वहाँ उन्होंने पोस्ता, भाँग, अफ़ीम और विभिन्न प्रकार की शराबें पीने के लिए मँगाई । वहाँ कई माँगने-गानेवालों को बुलाया जो कि झुंड-के-झुंड बाँधकर चले आए ।। २११२ ।। ।। सवैया ।। बहुत सी वेश्याएँ झाँझर-वीणा और मृदंग बजाती हुई वहाँ नाचने लगीं । कोई गोल-गोल घूमकर नृत्य कर रही है और कोई स्त्री श्रीकृष्ण के चारों ओर घूम रही है । कृष्ण उन्हें सुख देनेवाले वस्त्र, मणियाँ और लाल दे रहे हैं । वे इतनी क़ीमती वस्तुएँ दे रहे हैं जो इन्द्र को भी हाथ नहीं लग सकती ।। २११३ ।। वेश्याएँ नृत्य करके और गायक गा-गाकर बहुत सा दान प्राप्त कर रहे हैं । कोई कृष्ण को छंद और कोई सवैया सुनाकर प्रसन्न कर रहा है सभी दिशाओं में गोल-गोल घूमकर

है कर गान भवय्या । कउन कमी कहो है तिन को जोउ श्री जदुबीर के धाम अवय्या ॥ २११४ ॥ तिन को बहु दै सँगि पारथ लै हरि भोजन की भुअ मै पग धार्‌यो । पोसत भांग अफीम मँगाइ पियो मद शोक बिदा करि डार्‌यो । मत्ति हो चारोइ कैफन सो सुत इंद्र कै सो इम स्याम उचार्‌यो । काम कियो ब्रह्मा घटि किउ मदरा को न आठवो सिंध सवार्‌यो ॥ २११५ ॥ ॥ दोहरा ॥ तब पारथ करि जोरि कै हरि सिउ कह्‍यो सुनाइ । जड़ बामन इन रसन को जानै कहा उपाइ ॥ २११६ ॥

इति स्री दसम सिकंधे पुराण बचित्र नाटके क्रिशनावतारे ब्रिखभ-नाथ अवध-राजे की दुहिता बिवाहुत भए ॥

अथ इंद्र भूमासुर के दुख ते आवत भए कथनं ॥

॥ चौपई ॥ द्वारवती जब जदुपति आयो । इंद्र आइ पाइन लपटायो । भूमासुर को दूख सुनायो । प्रभ तिह ते मै अति दुखु पायो ॥ २११७ ॥ ॥ दोहरा ॥ सो मो पर अति

सभी मिलकर नाच रहे हैं। जो श्रीकृष्ण के घर पर आ गया, भला बताओ उसको किस बात की कमी है ॥ २११४ ॥ उनको बहुत कुछ देकर श्रीकृष्ण अर्जुन के साथ भोजन करने के लिए पधारे। उन्होंने पोस्ता, भाँग, अफ़ीम, और मद का पान किया और अपने सभी शोकों को दूर कर दिया। इन चारों नशों से मदमस्त होकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि आठवाँ समुद्र शराब का न बनाकर ब्रह्मा ने बहुत बुरा काम किया है ॥ २११५ ॥ ॥ दोहा ॥ तब अर्जुन ने हाथ जोड़कर श्रीकृष्ण से कहा कि जड़ ब्राह्मण भला इन रसों के आनन्द-उपभोग के बारे में क्या जानते हैं ॥ २११६ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण बचित्र नाटक के कृष्णावतार में बैलों को नाथ कर अवधनरेश की पुत्री से विवाह कथा समाप्त ॥

इन्द्र का भूमासुर के दुःख से (पीड़त होकर) आगमन

॥ चौपाई ॥ जब श्रीकृष्ण द्वारिका आए तो इन्द्र आकर उनके चरणों से लिपट गया। उसने भूमासुर से प्राप्त कष्ट के बारे में बताया और कहा कि हे प्रभु! उससे मैं बहुत दुखी हूँ ॥ २११७ ॥ ॥ दोहा ॥ वह बहुत प्रबल है मैं उसे ठीक नहीं कर सकता इसलिए हे प्रभु ! उसको नाश करने का कुछ

प्रबल है मो पै सध्यो न जाइ। ताको आपन ही प्रभू कीजै नास उपाइ ॥ २११८ ॥ ॥ सवैया ॥ तब इंद्र बिदा कै दयो प्रभ जू तिह को सु समोध भलै करिकै। मन मै कह्यो चिंतन तू करि रे चलि हउ नही हउ तिह ते टरिकै। कुपकै जब ही रथ पै चड़िहउ सभ शस्त्रन हाथन मै धरिकै। डरि तू न अरे डरि हउ तुमरे अरि कउ पलि मै सतिधा करिकै ॥ २११६ ॥ ॥ सवैया ॥ मघवा सिर न्याइ गयो ग्रहि को तिह को चित भै बपु स्याम बसायो। संग लई जदुबी प्रतना नहि पारथ को करि संग चलायो। एक त्रिया हित लै संग कउतकि यों कहि कै कबि स्याम सुनायो। स्याम चले तिह ओरन ही तिह ऊपरि अंत दसानहि धायो ॥ २१२० ॥ ॥ सवैया ॥ गरड़ा पर स्याम जबै चड़ कै तिह शत्रहि की जब ओर सिधार्यो। पाहन कोटि पिख्यो प्रिथमै दुतिए बर लोह को नैन निहार्यो। नीर को हेरत भ्यो त्रितिए अरु आग को चउथी सु ठउर बिचार्यो। पांचवो पउन पिख्यो खट फासन क्रोध कियो इह भांति (मू०ग्रं०५२२) हकार्यो ॥ २१२१ ॥ ॥ कान जू बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ अरे दुरगपति दुरग के रह्यो कहा छपे बीच। रिस हम सो रन मांड तुहि ठाढ पुकारत मीच ॥ २१२२ ॥ ॥ सवैया ॥ जउ इह भांति कह्यो जदुनंदन तउ उह शस्त्र

उपाय कीजिए ॥ २११८ ॥ ॥ सवैया ॥ तब श्रीकृष्ण जी ने इन्द्र को समझा बुझा कर विदा कर दिया और कहा कि तुम मन में चिंता न करो। मैं उसके हिलाये हिल तक नहीं पाऊँगा। जब मैं कुपित होकर रथ पर चढूंगा और शस्त्र पकड़ूंगा तो मैं तुम्हारे शत्रु को पल भर में सौ खंडों में बाँट दूंगा। इसलिए तुम भयभीत मत हो ॥ २११६ ॥ ॥ सवैया ॥ इन्द्र सिर झुकाकर घर को चला गया और उसके भय को श्रीकृष्ण ने गहराई से अनुभव किया। उन्होंने यादव सेना साथ ली और अर्जुन को भी बुला लिया। एक स्त्री को साथ ले लिया और लीला करते हुए श्रीकृष्ण ऊपर की ओर चल दिए ॥ २१२० ॥ ॥ सवैया ॥ गरुड़ पर सवार हो जब शत्रु की ओर चले तब पहले उन्होंने पत्थर का किला, फिर लोहे के द्वार, पानी, आग और पाँचवे, पवन को रक्षापाश रूप में (किले की रक्षा करते) देखा। यह देखकर श्रीकृष्ण ने क्रोधित हो ललकारा ॥ २१२१ ॥ ॥ कृष्ण उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ अरे, किले के स्वामी, तुम कहाँ छुपकर बैठे हो। हमसे युद्ध छेड़कर तुमने अपनी मौत को बुलाया है ॥ २१२२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने यह कहा तो साथ ही उन्होंने

लख्यो कोऊ आयो । अउर सुन्यो जिह एक ही चोट सो कोटन कोप चटाक गिरायो । बार के कोट बिखै मुर दैत हुतो सुन शोर सोऊ उठ धायो । स्याम के बाहन को तिन कोपि त्रिसूल कै आइकै घाव चलायो ॥ २१२३ ॥ ॥ स्वैया ॥ सो खगराज न चोट गनी तिन दउर गदा गहि कान को मारी । आवत है सिर सामुहि चोट चितै इम स्री ब्रिजनाथ बिचारी । कोप बढाइ तबै अपने सु कमोदकी हाट के बीच सँभारी । चोट जु आवत ही अर की इह एकहि चोट चटाक निवारी ॥ २१२४ ॥ ॥ सवैया ॥ घाव बिअर्थ गयो जब ही तब गाज कै राछस कोप बढायो । देह बढाइ बढाइकै आनन स्याम जू के बध कारन धायो । नंदग काढ तबै कटि ते ब्रिजनाथ तबै तकि ताहि चलायो । जैसे कुम्हार कटै घटि को अरि को सिर तैसे ही काटि गिरायो ॥ २१२५ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके क्रिशना अवतारे मुर दैत बधह ॥

अथ भूमासुर जुद्ध कथनं ॥

॥ सवैया ॥ मुर मार मुरार जबै अस सिउ तिह प्रान

देखा कि कोई शस्त्र आया और उसने एक ही वार से कइयों को मार गिराया है। उस पानी से घिरे किले में मुर नामक दैत्य रहता था जो शोर सुनकर स्वयं लड़ने के लिए चल पड़ा। उसने आते ही त्रिशूल से श्रीकृष्ण के वाहन को घायल कर दिया ॥ २१२३ ॥ ॥ सवैया ॥ गरुड़ को कोई विशेष चोट का अनुभव नहीं हुआ परन्तु अब मुर ने गदा खींचकर श्रीकृष्ण को मारी। श्रीकृष्ण ने अपने सिर पर हो रहे प्रहार को देखा और कुमोदकी नामक गदा को अपने हाथ में सँभाला और शत्रु के प्रहार का एक वार से निवारण कर दिया ॥ २१२४ ॥ ॥ सवैया ॥ जब वार खाली गया तो राक्षस क्रोधित हो गर्जने लगा। वह देह और मुंह बढ़ाकर श्रीकृष्ण जी के वध के लिए आगे बढ़ा। श्रीकृष्ण ने अपना नंदक नामक खड्ग कमर से निकाला और दैत्य पर वार कर उसका सिर ऐसे उतार लिया जैसे कुम्हार चाक से घड़े को काटकर उतार लेता है ॥ २१२५ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक के कृष्णावतार में मुर दैत्य के वध की समाप्ति ॥

भूमासुर-युद्ध-कथन

सवैया ॥ मुर दैत्य को जब श्रीकृष्ण ने यमलोक पहुँचा

तबै जमलोकु पठाए । बान कमान क्रिपानन सो कबि स्याम कहै अति जुद्ध मचाए । थो सु कुटंब जितो तिह को सु सुन्यो तिह यौ मुर स्यामहि घाए । लै कै अनी चतुरंग घनी हरि पै तिह के सुत सात ही धाए ॥२१२६॥ घेर दसोदिस ते हरि को तिह स्याम भनै तकि बान प्रहारे । एक गदा गहि हाथन बीच भिरे मन को फुन त्रास निवारे । सो सभ आयुध स्याम सहार कै जो अपने रिस शस्त्र संभारे । सूर न काहू को छोरत भ्यो सभ ही पुरजे पुरजे करि डारे ॥ २१२७ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन निहार हनी अपनी सुन सातऊ भ्रातर क्रोध भरे । घनिस्याम जू पै कबि स्याम भनै सभ शस्त्रन लै किलकार परे । चहूँ ओर ते घेरत भे हरि को अपने मन मै न रतीकु डरे । तब लउ जब लउ जदुबीर सरासन लै नही खंडन खंड करे ॥ २१२८ ॥ ॥ दोहरा ॥ (मू०ग्रं०५२३) तब कर सारिंग स्याम लै अति चिति क्रोध बढाइ । पीट शत्र भ्रातन सहित जमपुर दयो पठाइ ॥ २१२९ ॥ ॥ सवैया ॥ भुअ बालक तो इह भांत सुन्यो मुर बीर सु पुत मुरार खपायो । अउर जितो दलु थ्यो तिन के सु सोऊ छिन मै जमलोक पठायो । या संग जुज्झ की लाइक हउ ही हउ यौ कहि कै चित क्रोध बढायो । सैन बुलाइ

दिया और धनुष-बाण, कृपाण आदि से भीषण युद्ध किया तो मुर के कुटुम्ब ने सुना कि मुर को श्रीकृष्ण ने मार डाला है। यह सुन मुर के सात पुत्र चतुरंगिणी सेना लेकर श्रीकृष्ण को मारने चल पड़े॥ २१२६ ॥ श्रीकृष्ण को दशों दिशाओं से घेर कर बाण-वर्षा की और अभय होकर हाथों में गदा ले सभी श्रीकृष्ण से भिड़ पड़े। उन सबके शस्त्रों के प्रहार को सहन कर जब क्रोधित हो श्रीकृष्ण ने शस्त्र सम्हाले तो उस शूरवीर ने किसी को भी नही छोड़ा और सबको खण्ड-खण्ड कर डाला ॥ २१२७ ॥ ॥ सवैया ॥ अपनी सेना को नष्ट हुआ देखकर सातों भाई क्रोधित हो उठे और शस्त्र ले ललकारते हुए श्रीकृष्ण पर टूट पड़े। उन्होंने विना किसी डर के श्रीकृष्ण को चारों ओर से घेर लिया और तब तक लड़ते रहे जब तक श्रीकृष्ण ने धनुष हाथ में लेकर उनको खण्ड-खण्ड नहीं कर दिया ॥ २१२८ ॥ ॥ दोहा ॥ तब श्रीकृष्ण ने अत्यन्त क्रोधित हो धनुष हाथ में लिया और शत्रुओं को इन सब भाइयों सहित यमपुर भेज दिया ॥ २१२९ ॥ ॥ सवैया ॥ भूमासुर ने जब यह सुना कि श्रीकृष्ण ने मुर दैत्य को मार दिया है तथा जितनी सेना थी उसको क्षण भर में नष्ट कर डाला है तो उसने यह कि श्रीकृष्ण युद्ध करने लायक

सभै अपनी जदुबीर से कारन जुद्ध को धायो ।। २१३० ।। जब भूम को बारक जुद्ध के काज चढ़्यो तब कउच सु सूरन गाजे । आयुध अउर सँभार सभै अरि घेरि लयो ब्रिजनाइक साजे । मानहु काल प्रलै दिन को प्रगट्यो घन ही इह भाँति बिराजे । मानहु अंतक के पुर मै भटवानहि बाजत है जनु बाजे ।। २१३१ ।। अरि सैन जबै घनि जिउँ उमड्यो पुन स्री ब्रिजनाथ चितै हित जान्यो । अउर भूमासुर भूम को बारक भूपत है इन कउ पहिचान्यो । मानहु अंत समै निध नीर हिऐ उमड्यो कबि स्याम बखान्यो । स्याम जू हेर तिनो अपनो चित भीतर नैक नही डरपान्यो ।। २१३२ ।। ।। सवैया ।। अरिपुंज गइंदन मै धनु ताहि लसै सभ ही जिह लोक फटा । बक को जिन कोप बिनास किया मुर को छिन मै जिह मूँड कटा । मद मत्ति करी दल आवत यो जिम जोर कै आवत मेघ घटा । तिन मै धनु स्याम की यौ चमकै जिम अभ्रन भीतर बिज्ज छटा ।। २१३३ ।। बहु चक्र के संग हने भटवा बहुते प्रभ धाइ चपेटन मारे । एक गदा ही सो धाइ हने गिर भूम परे बहुरो न सँभारे । एक कटे करवारन सो अधबीच ते होइ परे भट

हैं, मन में अत्यन्त क्रोध किया और सारी सेना सहित श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिए चल पड़ा ।। २१३० ।। भूमासुर चढ़ाई करते हुए शूरवीरों की तरह गरजने लगा तथा शस्त्र सम्हाल कर श्रीकृष्ण नामक शत्रु को घेर लिया। वह प्रलय में काल के समान प्रकट होनेवाले बादल के समान दिखाई दे रहा था और इस प्रकार गरज रहा था मानो यमलोक में वाद्य बज रहे हों ।। २१३१ ।। जब शत्रु सेना बादलों की तरह उमड़ पड़ी तब श्रीकृष्ण ने मन में विचार किया तथा पृथ्वी-पुत्र भूमासुर को पहचाना। ऐसा लग रहा था मानो प्रलय काल में समुद्र उमड़ रहा हो परन्तु श्रीकृष्ण भूमासुर को देखकर तनिक भी नहीं डरे ।। २१३२ ।। ।। सवैया ।। शत्रु-सेना के हाथी-समूह में श्रीकृष्ण इन्द्र-धनुष की तरह शोभायमान हो रहे थे। श्रीकृष्ण ने ही बकासुर का नाश किया था और मुर का क्षण भर में सिर काट डाला था। सामने से मदमस्त हाथियों का झुण्ड घटाओं के समान घहराता हुआ चला आ रहा था और उनमें श्रीकृष्ण जी का धनुष इस प्रकार चमक रहा था मानो बादलों में बिजली चमक रही हो ।। २१३३ ।। बहुत से वीरों को चक्र के साथ और बहुत से वीरों को सीधे प्रहार के साथ मार डाला कइयों को गदा से भूमि पर गिरा दिया और वे पुन सम्हल न सके कई वीर कृपाण द्वारा अधबीच

न्यारे । मानो तथानन कानन मै कटिकै करवलण सो द्रुम डारे ॥ २१३४ ॥ ॥ सवैया ॥ एक परे भट जूझ धरा इक देख दशा तिह सामुहि धाए । नैक न त्रास धरे चित मै कबि स्याम भनै नही त्रास बणाए । दै मुख ढाल लिए करवार निशंक दै स्याम के ऊपर आए । ते सर एक ही सो प्रभ जू हन अंतक के पुर बीच पठाए ॥ २१३५ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर जबै रिस सो सभ ही भटवा जमलोक पठाए । अउर जिते भट जीत बचे इन देख दशा डरिकै सु पराए । जे हरि ऊपरि धाइ गए बधबे कहु ते फिर (मू०पं०५२४) जीतन आए । ऐसो उघाइकै सीस ढुराइकै आपहि भूपत जुद्ध कौ धाए ॥२१३६॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध को आवत भूप जबै ब्रिजनाइक आपने नैन निहार्यो । ठाढ रह्यो नहि तउन धरा पर आगे ही जुद्ध को आप सिधार्यो । मारत हउ तुहकौ अब ही रहु ठाढ अरे इह भाँति उचार्यो । यो कहि कै पुन सारंग को तन कै सर शत्र हिदै महि मार्यो ॥ २१३७ ॥ ॥ सवैया ॥ सारंग तान जबै अरि को ब्रिजनाइक तीछन बान चलायो । लागत ही गिर घूम भूमासुर झूम पर्यो जमलोक सिधायो । त्रउन लग्यो नहि

से कटकर इस प्रकार पड़े हुए थे कि मानो जंगल में बढ़ई ने आरे से पेड़ काट डाले हों ॥ २१३४ ॥ ॥ सवैया ॥ कई वीर मरकर धरती पर पड़े थे और कई उनकी यह दशा देखकर सामने आये। वे सब पूर्णतः निर्भय थे और मुख के सामने ढाल करते हुए तथा हाथ में तलवार ले वे श्रीकृष्ण पर टूट पड़े। श्रीकृष्ण ने एक ही बाण से उन सबको मारकर यमलोक पहुँचा दिया ॥२१३५॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने क्रोधित हो सभी वीरों को मार डाला तो जितने वीर बचे थे वे इस स्थिति को देखकर भाग खड़े हुए। जो श्रीकृष्ण पर उनको मारने के लिए टूट पड़े वे फिर जीवित वापस नहीं आ सके। इस प्रकार झुण्ड बाँधकर सिरों को हिलाते हुए राजा युद्ध को चला ॥२१३६॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने राजा को युद्ध में आते देखा तो ये भी वहाँ खड़े न रहकर युद्ध के लिए आगे बढ़े। श्रीकृष्ण ने यह कहा कि राजा खड़े रहो, मैं तुम्हें अभी मारता हूँ। इतना कहकर धनुष तानकर इन्होंने बाण शत्रु के हृदय में मारा ॥ २१३७ ॥ ॥ सवैया ॥ जब धनुष तानकर श्रीकृष्ण ने तीक्ष्ण बाण छोड़ा तो बाण लगते ही भूमासुर घूमकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और यमलोक जा पहुँचा बाण इतनी तीव्रता से उसके शरीर से पार हुआ कि त्राण में

ता सर कौ इह भाँति चलाकी सो पार परायो। जोग के साधक जिउं तन त्याग चल्यो नभ पाप न भेटन पायो ॥२१३८॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे भूमासुर बधे ॥

अथ उसके पुत्र को राज देत भे ॥

सोला सहंस्र राज सुता बिआह कथनं ॥

॥ सवैया ॥ ऐसी दशा जब भइ इह की तब माइ भूमासुर की सुनि धाई। भूम के ऊपर झूम गिरी सुध बस्त्रन की चित ते बिसराई। पाइ न डारत भी पनिआ सु उतावल सो चलि स्याम पै आई। देखत स्याम को रीझ रही दुख भूल गयौ सु तो कौन बडाई ॥ २१३९ ॥ ॥ दोहरा ॥ बहु उसतत जदुपति करी लीनो स्याम रिझाइ। पउत्र आन पाइन डर्यो सो लीनो बखशाइ ॥ २१४० ॥ ॥ सवैया ॥ भूपत ताही को बालक थाप क्रिपानिध छोरन बंद सिधायो। सोलह सहंसर भूपन की दुहता थी जहाँ तिह ठउरहि आयो। सुंदर हेर कै स्याम जू कउ तिन तीअन को अति चित्त लुभायो। या लखि

रक्त तक नहीं लगा और वह साधक योगी की तरह अपने तन और पापों को त्याग आकाश (स्वर्ग) की ओर चल पड़ा ॥ २१३८ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ के कृष्णावतार में भूमासुर-वध समाप्त ॥

उसके पुत्रों को राज्य प्रदान

सोलह हज़ार राजकुमारियों से विवाह-कथन

॥ सवैया ॥ जब भूमासुर की यह दशा हुई तब उसकी माँ आई और वस्त्रादि का ध्यान त्यागते हुए बेहोश हो भूमि पर गिर पड़ी। वह व्याकुल हो नंगे पाँव श्रीकृष्ण के पास आई और श्रीकृष्ण को देखते ही अपना दुःख भूल उन पर प्रसन्न हो उठी ॥ २१३९ ॥ ॥ दोहा ॥ उसने श्रीकृष्ण की स्तुति कर उन्हें प्रसन्न कर लिया और उसका पौत्र भी श्रीकृष्ण के चरणों पर गिर पड़ा जिसे उन्होंने जीवन दान दे दिया ॥ २१४० ॥ ॥ सवैया ॥ उसी के पुत्र को राजा बनाकर श्रीकृष्ण उस स्थान पर पहुँचे जहाँ राजाओं की सोलह हज़ार कन्याएँ भूमासुर की क़ैद में थी श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को देख उन स्त्रियों का चित्त ललचा उठा और श्रीकृष्ण ने भी उनकी यह इच्छा देख उन सबको

पाइ बिवाह सभो करि स्याम भने जसु डंक बजायो ॥ २१४१ ॥
॥ चौपई ॥ जे सभ जोरि भूमासुर राखी । कहि लगि गनउ तिनन की साखी । तिन यौ कह्यो इही हउ करिहउ । बीस हज़ार एकठी बरिहउ ॥ २१४२ ॥ ॥ दोहरा ॥ जुद्ध समै अति क्रोध हुइ जदुपति बध कै ताहि । सोरह सहंसर सुंदरी आपहि लई बिवाहि ॥ २१४३ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध समै अति क्रोध हुइ स्याम जू शत्र सभै छिन माहि पछारे । राज दयो फिर ता सुत को सुखु देत भयो तिन शोक निवारे । फेर बर्यो त्रिअ सोरह सहंस्र सुता पुर मै (मू०ग्रं०५२५) अति कै कै अखारे । बिप्पन दान दै लै तिनको संगि द्वारवती जदुराइ सिधारे ॥२१४४॥
॥ सवैया ॥ सोरह सहंस्र कउ सोरह सहंस्र ही धाम दिए सु हुलास बढैकै । देत भयो सभ त्रीअन को सुख रूप अनेकन भाँत बनैकै । ऐसे लख्यो सभहू हमरे ग्रिहि स्याम बसै न बसै अनतैकै । सो कबि स्याम पुरानन ते सुन भेदु कह्यो सभ संत सुनैकै ॥ २१४५ ॥

॥ इति भूमासुर बधहि सुत को राज देत सोरह सहंस्र राज सुता बिवाहत भए ॥

विवाह कर अपने यश का डंका बजवाया ॥ २१४१ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिन सबको भूमासुर ने इकट्ठा किया था, मैं उन स्त्रियों की वार्ता का क्या वर्णन करूँ। श्रीकृष्ण ने कहा इन सबकी इच्छानुसार मैं बीसों हज़ार स्त्रियों से इकट्ठा ही विवाह कर लूंगा ॥ २१४२ ॥ ॥ दोहा ॥ युद्ध में क्रोधित हो और भूमासुर का वधकर श्रीकृष्ण ने सोलह हज़ार सुन्दरियों से स्वयं विवाह कर लिया ॥ २१४३ ॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध में क्रोधित हो श्रीकृष्ण ने क्षण भर में सभी शत्रुओं को मार डाला और भूमासुर के पुत्र को राज्य देकर उसके शोक को दूर किया। पुनः युद्ध के पश्चात् सोलह सहस्र स्त्रियों के साथ विवाह किया और विप्रों को दान देकर श्रीकृष्ण द्वारिका वापस आ पहुँचे ॥ २१४४ ॥ ॥ सवैया ॥ सोलह हज़ार स्त्रियों को सोलह हज़ार घर बनवा कर दिए और सबको सुख प्रदान किया। सभी यह चाहती थीं कि श्रीकृष्ण केवल हमारे ही घर में बसें और इसी कथा का वर्णन कवि ने पुराणों से पढ़-सुनकर सन्तों के लिए किया है ॥ २१४५ ॥

॥ भूमासुर-वध कर उसके पुत्र को राज्य देकर सोलह हज़ार राजपुत्रियों से विवाह कथन समाप्त ॥

अथ इंद्र को जीतकर कलपब्रिछ लिआइबो कथनं ॥

॥ सवैया ॥ यौ सुख दै तिन तीअन कउ फिर स्याम पुरंदर लोक सिधायो । कंकन कुंडल देत भयो तिह पाइकै शोक सभै बिसरायो । सुंदर एक पिख्यो तिह रुख तिही पर स्याम को चित्त लुभायो । माँगति भ्यो न दयो सुरराज तही हरि सिउ हरि जुद्ध मचायो ॥ २१४६ ॥ ॥ सवैया ॥ रिस राज पुरंदर सैन चड़्यो चलि कै सभ स्याम के सामुहि आए । घोरत मेघ लसै चपला बरखा बरसै रथ साज बनाए । द्वादस सूर सभै उमडै बस रावन से जिनहू बिचलाए । भेद लह्यो नही नैक चले मद मत्ति सियाम पै घूमत धाए ॥ २१४७ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत ही मिलिकै सभहूँ जदुबीर के ऊपर सिंधर पेले । पंख सुमेर चले करिकै जिनके रिस सो दुक दांत कठेले । सुंड कटे तिन के ब्रिजनाथ क्रिपानिध सो झटि दै जिम केले । स्रउन भरे रमनीय रमापति फागुन अंति बसंत से खेले ॥२१४८॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाइक बैरन सो जब ही रिस मांडि कियो

इन्द्र को जीतकर कल्पवृक्ष लाना

॥ सवैया ॥ इस प्रकार उन स्त्रियों को सुख देकर श्रीकृष्ण इन्द्रलोक गए । इन्द्र ने उन्हें कवच और कुण्डल दिए जिनको पाकर सभी शोक दूर हो जाते हैं । वहाँ श्रीकृष्ण ने एक सुन्दर वृक्ष देखा और उस मन को लुभाने वाले वृक्ष को इन्होंने इन्द्र से माँग लिया.। जब वह वृक्ष उसने नहीं दिया तो श्रीकृष्ण ने उससे युद्ध प्रारम्भ कर दिया ॥ २१४६ ॥ ॥ सवैया ॥ उसने भी क्रोधित हो सेना लेकर श्रीकृष्ण पर चढ़ाई की । चारों तरफ़ बादलों का गर्जन और विद्युत् की चमक में चल रहे रथ दिखाई दे रहे थे । रावण जैसे वीरों को भी विचलित करनेवाले बारहों वीर उमड़ पड़े और मदमस्त हो बिना किसी रहस्य को समझे श्रीकृष्ण के चारों ओर मँड़राने लगे ॥ २१४७ ॥ ॥ सवैया ॥ आते ही सबने श्रीकृष्ण पर हाथी चढ़ा दिए । वे हाथी ऐसे लग रहे थे मानो सुमेरु पर्वत पंख लगाकर चला आ रहा हो । वे क्रोध से दाँत कटकटा रहे थे । श्रीकृष्ण ने केलों को काटने के समान उनके सूंड़ शीघ्रता से काट डाले और श्रीकृष्ण रक्त से भरे ऐसे लग रहे थे मानो फाल्गुन के महीने में फाग खेल रहे हों ॥ २१४८ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने जब क्रोधित हो शत्रुओं से युद्ध किया तो उनके भीषण गर्जन को सुनकर बहुत से वीर

खरका । बहु बीर भए बिन प्रान तबै जब नाद प्रचंड सुन्यो हरका । जदुबीर फिरावत भ्यो गहि कै गज सुंडन सौ बर कै करका । उपमा उपजी कबि के मन यो घिसुआ मनो फेरत है लरका ॥ २१४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जीवत सो न दयो ग्रहि जान्न जोऊ ब्रिजनाथ के सामुहि आयो । जीत सुरेश दिवाकरि द्वादस आनंद कै चित संख बजायो । रूख चलो तुम ही हमरे ग्रहि लै उन को इह भाँत सुनायो । सो तरु लै हरि संगि चलै सु कबित्तन भीतर स्याम बनायो ॥ २१५० ॥ स्री ब्रिजनाथ रुकंमन के ग्रहि आवत भे तरु सुंदर लैकै । लाल लगे जिन धामन को ब्रहमा रहै देखत जाहि लुभैकै । तउन (मू०ग्रं०५२६) समै सोऊ स्याम कथा जदुबीर कही तिन कउ सु सुनैकै । सो कबि स्याम कबित्तन बीच कही सुनियो सभ हेत बढैकै ॥२१५१॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे इंद्र को जीतकर कलपब्रिछ लिआवत भए ॥

रुकमन साथ कान्ह जी हासी करन कथनं ॥

॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथ कह्यो त्रिय सो ग्रिहि भोजन

निष्प्राण हो गए। श्रीकृष्ण हाथियों को सूँड़ों से पकड़कर इस प्रकार घुमा रहे थे जैसे बच्चे एक दूसरे को खींचने का खेल खेल रहे हों ॥ २१४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जो भी श्रीकृष्ण के सामने आया उसे उन्होंने जीवित नहीं जाने दिया। बारहों सूर्य और इन्द्र को जीतकर उन्होंने उन लोगों से यह कहा कि इस वृक्ष को तुम ही लोग हमारे घर तक लेकर चलो। तब उस वृक्ष को लेकर वे सब श्रीकृष्ण के संग चले और इस सबका वर्णन श्याम कवि ने कविता में किया है ॥२१५०॥ श्रीकृष्ण उस सुन्दर वृक्ष को लेकर रुक्मिणी के उस घर में पहुँचे जिसमें हीरे-जवाहरात लगे हुए थे और ब्रह्मा भी जिसको देखकर ललचा रहे थे। तब श्रीकृष्ण ने अपने घर के अन्य लोगों से सम्पूर्ण कथा कही और उस सबको ही श्याम कवि ने आनन्दपूर्वक कविता में कहा है ॥ २१५१ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण के बचित्र नाटक के कृष्णावतार में इन्द्र को जीतकर कल्पवृक्ष को ले आना समाप्त ॥

रुक्मिणी के साथ कृष्ण जी की हास्य-क्रीडा-कथन

। सवैया श्रीकृष्ण ने अपनी पत्नी से कहा कि मैंने गोपियों के घर

गोपन धाम कर्‌यो । सुन सुंदरता दिन ते हमरो बिचिआ दध को फुन नाम पर्‌यो । जब सिंध जरा दलु साज चड़्यो भजगे तब नैकु न धीर धर्‌यो । तिहते तुमरी मति कउ अब का कहिऐ हम सउ कहि आनि बर्‌यो ॥ २१५२ ॥ राज समाज नहो सुन सुंदर ना धन काहू ते माँग लयो है । सूर नहीं जिन त्याग कै आपनो देस समुंद्र मो बास कयो है । चोरि पर्‌यो मम को फुन नाम सु याही ते क्रोधत भ्रात भयो है । ताही ते मो तजिकै बरु आनहि तेरो कछू अब लउ न गयो है ॥२१५३॥ ॥ रुकमनी बाच सखी सों ॥ ॥ सवैया ॥ चिंत करी हम सौ मन मै न थी जानत स्याम इती करिहै । बरु मो तजिकै तुम आनहि कउ बचना इह भाँति के उच्चरिहै । हमरो मरबोई बन्यो इह ठाँ जिअ है ना अवस्सि अबै मरिहै । मरिबो जु न जात भले सजनी आपन पति सो हठि कै जरिहै ॥२१५४॥ ॥ सवैया ॥ तिअ कान्ह सो चिंतत हुइ मन मै मरिबोई बन्यो चित बीच बिचार्‌यो । मो संगि किउ ब्रिजनाथ अबै कबि स्याम कहै कटु बैन उचार्‌यो । क्रोध सो खाइ तवार धरा पर

भोजन और दूध पिया था और हे सुन्दरी उस दिन से मेरा नाम दूध को बेचने वाला ग्वाला डाल दिया गया। जब जरासंध ने चढ़ाई की थी तो मैं धैर्य छोड़कर भाग खड़ा हुआ था। अब मैं तुम्हारी बुद्धि को क्या कहूँ; पता नहीं तुमने मुझसे विवाह क्यों किया ॥ २१५२ ॥ हे सुन्दरी सुनो, न तो मेरा कोई राज-समाज है और न ही मेरे पास धन-दौलत है। यह सब वैभव तो माँगा हुआ है। मैं शूरवीर भी नहीं हूँ क्यों कि मैंने अपना देश त्यागकर समुद्र के किनारे (द्वारिका में) निवास किया है। मेरा नाम (माखन) चोर है इसीलिए मेरा भाई बलराम भी मुझसे क्रोधित रहता है। इसलिए मैं तुम्हें सलाह देता हूँ कि तुम्हारा अभी कुछ नहीं बिगड़ा है तुम मुझे छोड़कर दूसरे के साथ विवाह कर लो ॥ २१५३ ॥ ॥ रुक्मिणी उवाच सखी के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ मेरे मन में तो चिन्ता हो रही है और मैं नहीं जानती थी कि श्रीकृष्ण मेरे साथ इस प्रकार का व्यवहार करेंगे तथा मुझसे यह कहेंगे कि मुझे छोड़कर तुम किसी अन्य से विवाह कर लो। अब तो मेरा मरना ही उचित है और मैं इसी स्थान पर अवश्य मर जाऊँगी और यदि मरना ठीक नहीं समझा जाता तो मैं अपने पति से हठ करके उसकी विरहाग्नि में ही जल मरूँगी ॥ २१५४ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के प्रति रुष्ट होकर रुक्मिणी ने मरने का ही विचार किया तथा सोचा कि क्यों श्रीकृष्ण ने इस प्रकार के मुझसे कहे

झूम गिरी नही नैक सँभार्यो । यों उपमा उपजी जिअ मै जन टूट गयो रुख ब्यार को मार्यो ॥ २१५५ ॥ ॥ दोहरा ॥ अंक लियो भर कान्ह तिह दूर करन को क्रोध । सावधान कर रुकमनी जदुपति कियो प्रबोध ॥ २१५६ ॥ ॥ सवैया ॥ तेरे ही धरम ते मै सुनि सुंदर केसन ते गहि कंस पछार्यो । तेरे ही धरम ते सिध जराहू को सैन सभै छिन माहि सँघार्यो । तेरे ही धरम जित्यो मघवा अरु तेरे ही धरम भूमासुर मार्यो । तोसो कियो उपहास अबै मुहि तै अपने जिअ साच बिचार्यो ॥ २१५७ ॥ ॥ रुकमनी बाच ॥ ॥ सवैया ॥ यों पिअ की तिअ बात (मू०ग्रं०५२७) सुनी दुखु की तब बात सभै बिसराई । भूल परी प्रभ कीजै छिमां मुहि नार निवाइकै नार सुनाई । अउर करी उपमा प्रभ की जु कबित्तन मै बरनी नहि जाई । ऊतर देत भई हसिकै हरि मै उपहास की बात न पाई ॥ २१५८ ॥ ॥ दोहरा ॥ मान कथा रुकमनी की स्याम कही चित लाइ । आगै कथा सु होइगी सुनिअहु प्रेम बढाइ ॥ २१५९ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर की जेती त्रिआ सभ को दसहूँ दस पुत्र दिए । अरु एकहि एक दई दुहिता तिन के सु हुलास बढाइ हिए । सभ

क्रोध से चक्कर खा वह धरती पर गिर पड़ी और ऐसे लगी मानो वायु के चपेट से वृक्ष टूटकर गिर पड़ा हो ॥ २१५५ ॥ ॥ दोहा ॥ उसका क्रोध दूर करने के लिए श्रीकृष्ण ने रुक्मिणी को आलिंगन में ले लिया और उसे प्यार करते हुए इस प्रकार कहा ॥ २१५६ ॥ ॥ सवैया ॥ हे सुन्दरी ! मैंने तुम्हारे ही कारण कंस को केशों से पकड़कर पछाड़ा, जरासंध का क्षण भर में संहार किया, इन्द्र को जीता और भूमासुर का नाश किया । मैंने तो तुम्हारे साथ हँसी की थी परन्तु तुमने उसे सच मान लिया ॥ २१५७ ॥ ॥ रुक्मिणी उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ प्रियतम की बात सुनकर रुक्मिणी सब दुःख भूल गई । वह सिर झुकाकर कहने लगी कि हे प्रभु ! मुझसे भूल हो गई, मुझे क्षमा कीजिए । उसने प्रभु की जो प्रशंसा की उसका वर्णन नहीं किया जा सकता । रुक्मिणी कहने लगी कि हे प्रभु, मैं आपकी हंसी की बात को नहीं समझी थी ॥ २१५८ ॥ ॥ दोहा ॥ श्याम कवि ने रुक्मिणी की यह मान-कथा मन लगाकर कही है और अब आगे जो कुछ होगा उसे भी प्रेमपूर्वक सुनिये । २१५९ कवि उवाच सवैया श्रीकृष्ण की जितनी स्त्रियाँ थीं उनको उन्होंने प्रसन्न हो दस-दस पुत्र और एक-एक पुत्री प्रदान की ।

कान्ह की मूरत स्याम भनै सभ कंध पटंबर पीत लिए। करुनानिध कउतक देखन कउ इह भू पर आइ चरित्र किए ॥ २१६० ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटक क्रिशना अवतारे रुकमनी उपहास समापतम ॥

अनरुद्ध जी को ब्याह कथनं ॥

॥ सवैया ॥ तउही लउ पौत्र को ब्याह क्रिपानिध स्याम भनै रुच मान बिचार्यो। सुंदर थी रुकमी की सुता तिह ब्याहहि को सभ साजि सवार्यो। टीका दियो तिह भाल मै कुंकम अउ मिलि बिप्रन बेद उचार्यो। स्री जदुबीर त्रिआ संग लै बलभद्र सु कउतक काज सिधार्यो ॥ २१६१ ॥ ॥ चौपई ॥ किशन जबै तिह पुर मै गए। अति उपहास ठउर तिह भए। रुकमन जब रुकमी दरसायो। भैन भ्रात अति ही सुख पायो ॥ २१६२ ॥ ब्याह भलो अनरुध को कयो। जदुपति आपि सेहरा दयो। जूप मंत्र उत रुकम बिचार्यो। खेल हली हम संग उचार्यो ॥ २१६३ ॥ ॥ सवैया ॥ संग

कंधे पर पीताम्बर डाले हुए वे सब श्रीकृष्ण की मूर्तियाँ थीं। करुणा के सागर श्रीकृष्ण लीला देखने के लिए इस धरती पर अवतरित हुए थे ॥२१६०॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक में रुक्मिणी-उपहास समाप्त ॥

अनिरुद्ध जी का विवाह-कथन

॥ सवैया ॥ तब अपने पौत्र अनिरुद्ध का विवाह करने का विचार श्रीकृष्ण जी ने किया और रुक्मिणी की पुत्री भी सुन्दर थी और उसके विवाह का भी सारा उपक्रम था। उसके मस्तक पर कुमकुम का टीका दिया गया और सब द्विजों ने मिलकर वेद का उच्चारण किया। श्रीकृष्ण पत्नियों समेत बलभद्र को साथ लेकर यह सब लीला देखने के लिये आ पहुँचे ॥२१६१॥ ॥ चौपाई ॥ कृष्ण जब उस नगर में गये तो वहाँ अनेक प्रकार की हँसी-मजाक आदि की बातें हुईं। रुक्मिणी ने जब अपने भाई रुक्मी को देखा तो दोनों भाई-बहिन अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ २१६२ ॥ भली प्रकार से अनिरुद्ध का विवाह हुआ और श्रीकृष्ण ने स्वयं सेहरा पहनाया। रुक्मी ने जुआ खेलने का विचार किया और को खेलने के लिए कहा ।२१६३। । सवैया। तब

हली के तबै रुकमी कबि स्याम जुआहूँ को खेलु मचायो। भूप घने जिह थे तिन देखत दरब घनो तिह माँझि लगायो। दाव पर्‌यो मुसली को सभो रुकमीहूँ को दाव पर्‌यो यौ सुनायो। हास कियो मिल कै अति ही गरड़ध्वुज भ्रात घनो रिसवायो॥ २१६४॥ ॥ चौपई॥ ऐसे घनी बेर डहकायो। जदुपति भ्रात क्रोध अति आयो। एक गदा उन कर मै धरी। सभ भूपन की पूजा करी॥ २१६५॥ घने चाइ सो भूप सँघारे। परे भूम कै भुअ बिसंभारे। गिरे स्रउन के रस सो राते। खेड बसंत मनो मदमाते॥ २१६६॥ फिरत भूत सो तिन मै हली। (मू०ग्रं०५२८) जैसे अंत काल शिव बाली। जिउँ रिस डंड लिए जमु आवै। तैसे ही मुसली छब पावै॥२१६७॥ रुकमी भयो गदा गहि ठाढो। घनो क्रोध ताकै चित बाढो। भाजत भयो न सामुहि आयो। आइ हली सो जुद्ध मचायो॥ २१६८॥ हली गदा तब ता पर मारी। उनहूँ कोप सु ता पर झारी। स्रउनत छुट्यो अरुन दोऊ भए। मानहु क्रोध रूप हुइ गए॥ २१६९॥ ॥ दोहरा॥ दाँत काढ

रुक्मी ने बलराम के साथ जुआ खेलना प्रारम्भ कर दिया और वहाँ खड़े अनेकों राजाओं ने अनन्त धन दावों पर लगा दिया। रुक्मी के दाँव पड़ने पर बलराम के पक्ष की बात करते हुए सबने खूब हँसी-मज़ाक़ किया और श्रीकृष्ण जी तो प्रसन्न हुए परन्तु उनका भाई बलराम क्रोधित हो उठा॥ २१६४॥ ॥ चौपाई॥ इसी प्रकार कई बार चिढ़ाए जाने पर बलराम बहुत गुस्से में भर उठे और उन्होंने हाथ में गदा पकड़कर सभी राजाओं की गदा से सेवा-पूजा की अर्थात सबकी मरम्मत की॥ २१६५॥ अनेकों राजाओं का संहार कर दिया और वे इस धरती पर अचेत होकर गिर पड़े। वे रक्त से सने हुए ऐसे लग रहे थे मानो वसन्त ऋतु में मदमस्त घूम रहे हैं॥ २१६६॥ उन सब में भूत के समान बलराम इस प्रकार घूम रहे थे जैसे प्रलयकाल में काली घूम रही हो। बलराम ऐसे लग रहे थे जैसे यमराज यमदण्ड लिये चला आ रहा हो॥ २१६७॥ रुक्मी गदा लेकर खड़ा हो गया और भीषण रूप से क्रोधित हो उठा। वह भागा नहीं और सामने आकर बलराम से युद्ध करने लगा॥ २१६८॥ बलराम ने जब उस पर गदा से वार किया तो उसने भी क्रोधित होकर बलराम पर गदा चलाई। रक्त के बहते ही दोनों लाल हो गये और ऐसे लग रहे थे मानो साक्षात् क्रोध का रूप हों॥ २१६९॥ ॥ दोहा। एक वीर यह देखकर दाँत निकालते हुए हँस रहा था रुक्मी से

इक हसत थो सो इह नैन निहार । रुकमन जुद्ध को छोर कै ता पर चल्यो हकार ॥ २१७० ॥ ॥ सवैया ॥ सभ तोर कै दाँत दए तिह के बलभद्र गदा सँग पै गहिकै । दोऊ मूछ उखार लई तिह की अति स्रउन चल्यो तिह ते बहिकै । फिर अउर हने बलवंड घने कबि स्याम कहै चित मै चहिकै । फिर आइ भिर्‍यो रुकमी संग यौ तुहि मारत हउ मुख ते कहिकै ॥ २१७१ ॥ ॥ सवैया ॥ धावत भ्यो रुकमी पै हली कबि स्याम कहै चित रोस बढै कै । रोम खरे करि कै अपने पुन अउर प्रचंड गदा करि लै कै । आवत भ्यो उत ते सोऊ बीर सु आपस मै रन दुंद मचै कै । हुइ बिसँभार परे दोऊ बीर धरा पर घाइन के संग घै कै ॥ २१७२ ॥ ॥ चौपई ॥ पहर दोइ तह जुद्ध मचायो । एकन दो मै मार न पायो । बिहबल होइ दोऊ धर परे । जीवत बचे सु मानहु मरे ॥ २१७३ ॥ मुरछत ह्वै फिरि जुद्ध मचायो । कउतक सभ लोकन दरसायो । क्रोधत होइ सु या बिधि अरे । केहरि दुइ जन बन मै लरे ॥ २१७४ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध बिखै थक ग्यो रुकमी तब धाइ हली इक घाइ चलायो । तउ उनहूँ अरि को पुनि घाइ सु आवत मारग मै लखि पायो । तउ हो सँभार गदा अपनी अरु चित्त बिखै अति

युद्ध को छोड़कर बलराम ललकार कर उस पर टूट पड़े ॥ २१७० ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने गदा से उसके सभी दाँत तोड़ दिये । उसकी दोनों मूँछें उखाड़ दीं तथा उनसे रक्त बह निकला । फिर बलराम ने अनेकानेक वीरों को मार डाला तथा पुनः रुक्मी के संग यह कहते हुए कि मै तुझे मार डालूँगा, आ भिड़े ॥ २१७१ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर बलराम रुक्मी पर क्रोध से अपने रोम खड़े करते हुए तथा प्रचण्ड गदा हाथ में लेकर टूट पड़े । उधर से दूसरा वीर भी आ रहा है और इनका आपस में भीषण द्वन्द्व मच गया है । दोनों वीर घायलों के साथ घायल होकर धरती पर बेसुध गिर पड़े ॥ २१७२ ॥ ॥ चौपाई ॥ दो प्रहर तक वहाँ युद्ध हुआ और दोनों में से कोई भी एक-दूसरे को मार न पाया । व्याकुल होकर दोनों धरती पर जीवित मुर्दों के समान गिर पड़े ॥ २१७३ ॥ मूर्च्छित होकर भी दोनों युद्ध करते रहे और सब लोगों ने इस लीला को देखा । क्रोधित होकर दोनों इस प्रकार एक दूसरे से भिड़े जैसे जंगल में दो शेर आपस में भिड़े हों ॥ २१७४ ॥ ॥ सवैया ॥ रुक्मी जब युद्ध में थक गया तो बलराम ने एक वार उस पर किया रुक्मी ने आते हुए वार को देखा और गदा सँभालकर क्रोधित होकर

रोस बढायो । स्याम भनै तिह बीर तबै सु गदा को गदा संगि घाइ बचायो ॥ २१७५ ॥ ॥ सवैया ॥ स्याम भनै अरि को जब ही इह आवत घाइ को बीच निवार्यो । तउ बलभद्र महाँरिस ठान सु अउर गदा हू को घाउ प्रहार्यो । सो इह के सिर भीतर लाग गयो इनहूँ नही नैक सँभार्यो । झूमकै देह पर्यो धरनी रुकमी पुन अंत के धाम सिधार्यो ॥२१७६॥ भ्रात जिते रुकमी के (मू०ग्रं०५२६) हुते बधु भ्रात निहार कै क्रोध भरे । बरछी अरु बान कमान क्रिपान गदा गहि या पर आइ परे । किलकार दसो दिस घेरत मे मुसलीधर ते न रती कु डरे । निस को मनो हेर पतंग दिआ पर नैक डरे नही टूट परे ॥ २१७७ ॥ ॥ सवैया ॥ संग हलायुध के उनहूँ सु उतै अति क्रोध हुइ जुद्धु मचायो । भ्रात को जुद्धु भयो तिअ भ्रात के संग इहै प्रभ जू सुनि पायो । बैठ बिचार कियो सभहूँ जु सभै जदुबीर कुटंब बुलायो । अउर कथा दई छोर हलो को सहाइ कउ कोप क्रिपानिध धायो ॥२१७८॥ ॥ दोहरा ॥ जम रूपी बलभद्र पिख हरि आगम सुन पाइ । बुधवंतन तिह भाइअन कही सु कहउ सुनाइ ॥ २१७९ ॥ ॥ सवैया ॥ देख

गदा से गदा के वार को रोककर अपने आप को बचाया ॥ २१७५ ॥ ॥ सवैया ॥ जब शत्रु ने इस प्रकार मार्ग में ही वार को बचा लिया तो बलराम ने क्रोधित होकर गदा का एक और वार किया । वह वार रुक्मी के सिर पर लगा और वह तनिक भी सँभल न सका । झूमकर उसका शरीर धरती पर गिर पड़ा और इस प्रकार रुक्मी परलोक सिधार गया ॥ २१७६ ॥ रुक्मी के सभी भाई अपने भाई का वध देखकर क्रोध से भर उठे और बरछी, बाण, कृपाण, गदा आदि लेकर बलराम पर टूट पड़े । ललकारते हुए अभय होकर उन्होंने दसों दिशाओं से बलराम को इस प्रकार घेर लिया जिस प्रकार दीपक को देखकर बिना किसी डर के पतंगे दीपक पर टूट पड़ते हैं ॥ २१७७ ॥ ॥ सवैया ॥ उन सबों ने बलराम के साथ अत्यन्त क्रोधित होकर युद्ध किया । श्रीकृष्ण ने भी सुना कि हमारे भाई का युद्ध हमारी पत्नी के भाई के साथ हुआ । उन्होंने विचार करके अपने सारे कुटुम्ब को बुलाया । परन्तु अन्ततः बलराम की बाक़ी सब बातों को छोड़कर उसकी सहायता के लिए चल पड़े ॥ २१७८ ॥ ॥ दोहा ॥ यमरूपी बलराम ने जब श्रीकृष्ण के आने की बात सुनी तो रुक्मी के सब भाइयों को जो बुद्धिमत्तापूर्ण बात उसने कही मै उसका वर्णन करता हूँ २१७९ सवैया श्रीकृष्ण सेना को लेकर चले

अनी जदुबीर घनी लिए आवत है डरु तोहि न आवै । कउन बली प्रगट्यो भुअ मै तुमहीन कहो इन सो समुहावै । जउ जड़ कै हठ ही भिर है तु कहा फिर जीवत धामहि आवै । आज सोऊ बचि है इह अउसर जो भजिकै हट प्रान बचावै ॥२१८०॥ ॥ सवैया ॥ तउ लग ही जुत कोप क्रिपानिध आहव की छित भीतर आए । स्रउन भर्यो बलभद्र लिखयो बिन प्रान परै रुकमी दरसाए । भूपत अउर घनेरी पिखे कबि स्याम भनै हरि घाइन आए । भ्रात कउ देख प्रसंन भए बलि नार को देखत नैन निवाए ॥ २१८१ ॥ ॥ सवैया ॥ रथ ते तब आपहि धाइकै स्याम जू जाइ हली कह अंक लियो । फुन अउरन जाइ गह्यो रुकमी तिह को सु भली बिध दाह कियो । उत दउर रुकमन भइयन बीच गई तिन जाइ समोध कियो । किह काज कह्यो इनसो तुम जूझ कियो जिनसो भट को न बियो ॥२१८२॥ ॥ चौपई ॥ तिन यो स्याम समोध करायो । पौतबधू लै डेरन आयो । स्याम कथा ह्वै है मै कैहउ । स्रोतन भली भाँत रिझवैहउ ॥ २१८३ ॥

॥ इति स्री क्रिशनावतारे पौत बिआह रुकम बध करत भए बिआह समापतम ॥

आ रहे हैं, क्या तुम लोगों को डर नहीं लग रहा है। धरती पर कौन ऐसा बली है जो श्रीकृष्ण से भिड़ेगा। यदि कोई मूर्ख हठपूर्वक लड़ेगा भी, तो क्या यह संभव है कि वह बच निकलेगा। आज केवल वही बच सकेगा जो भागकर अपने प्राण बचा लेगा ॥ २१८० ॥ ॥ सवैया ॥ तब तक कृपानिधि श्रीकृष्ण युद्धक्षेत्र में आ पहुँचे और वहाँ उन्होंने रक्त से सने हुए बलराम तथा निष्प्राण रुक्मी को देखा। वहाँ और भी कई घायल राजाओं को देखा, परन्तु भाई को देखकर वे प्रसन्न हो उठे और बलभद्र की स्त्री को देखकर उन्होंने आँखें झुका लीं ॥ २१८१ ॥ ॥ सवैया ॥ तब श्रीकृष्ण ने रथ से उतरकर बलराम को गले से लगा लिया। तब अन्यों ने रुक्मी को उठाया और उसका भली प्रकार दाह संस्कार किया। उधर रुक्मिणी भाइयों के बीच पहुँचकर उनको समझाने लगी कि तुम इनसे युद्ध क्यों करते हो। इनके समान अन्य कोई भी वीर नहीं है ॥ २१८२ ॥ ॥ चौपाई ॥ श्रीकृष्ण ने भी उनको समझाया और पौत्र-वधू को लेकर अपने स्थान पर आ गए। मैं श्याम कथा को कहता हूँ और श्रोताओं को प्रसन्न कर रहा हूँ ॥ २१८३ ॥

॥ में पौत्र-विवाह रुक्मी-वध किया ॥

अथ ऊखा को बिआह कथनं ।।

दस सै भुजा को गरबु हरन कथनं ।।

।। चौपई ।। जदुपति पौत्र ब्याह घर आयो । अति चिति अपने हरख बढायो । गरब उतै दस सै भुज कीनो । मै बर महारुद्र ते लीनो (मू०ग्रं०५३०) ।।२१८४।। ।। स्वैया ।। गाल बजाइ भली बिध सो अरु ताल सभो मिलि हाथन दीनो । जैसे लिखी बिध बेद बिखै तिह भूपत ही बिध सो तपु कीनो । जग्ग करे सभ ही बिध पूरब कउन बिधान बिना नही हीनो । रुद्र रिझाइ कह्यो इह भाँति सु हो कुटवार इही बरु लीनो ।।२१८५।। ।। स्वैया ।। रुद्र जबै कुटवार कयो तब देस निदेशन धरम चलायो । पाप की बात गई छपकै सभ ही जग मै जसु भूपति छायो । शत्र त्रिसूल के बसि भए अरि अउर किहू नही सीस उठायो । लोगन तउन समै जग मै कबि स्याम भनै अति ही सुखु पायो ।। २१८६ ।। रुद्र प्रताप भऐ अरि बस्सि किहूँ अरि आन न सीस उठायो । करि लै कबि स्याम भनै अति ही इह पाइन ऊपर सीस झुकायो । भूप न रंचक बात लही इह

ऊषा का विवाह-कथन ।

सहस्रबाहु का गर्व-हरण-कथन

।। चौपाई ।। श्रीकृष्ण पौत्र का विवाह करके घर आए और मन में अत्यन्त प्रसन्न हुए । इधर सहस्रबाहु को यह गर्व हो गया कि मैंने रुद्र से वरदान प्राप्त कर लिया है ।। २१८४ ।। ।। सवैया ।। उसने अपनी प्रशंसा स्वयं करते हुए अपने सभी हाथों से तालियाँ बजाई । वेद-विहित विधि के अनुसार राजा ने तप किया और विधिपूर्वक यज्ञ किया । रुद्र को प्रसन्न करके उससे रक्षा करने की शक्ति का वरदान प्राप्त कर लिया ।। २१८५ ।। ।। सवैया ।। रुद्र ने जब वरदान दे दिया तब राजा ने देश-विदेशों में धर्म की स्थापना की । पाप समाप्त हो गया और सारे संसार में राजा का यश फैल गया । सभी शत्रु राजा के त्रिशूल के वश में आ गए और किसी ने मारे डर के सिर नहीं उठाया । कवि का कथन है कि लोग उसके राज्यकाल में अत्यन्त सुखी थे ।। २१८६ ।। रुद्र की कृपा से सभी शत्रु वश में हो गए और किसी ने सिर नहीं उठाया । सभी कर देकर राजा के चरणों पर सिर झुकाते थे । राजा ने रुद्र की कृपा के रहस्य को न　　यह सोचा कि यह सब

पउरख मेरो इहै लखि पायो । पउरख क्यो भुजदंडन रुद्र ते जुद्ध ही को बरु माँगन धायो ॥ २१८७ ॥ ॥ सोरठा ॥ मूरख लह्यो न भेदु जुद्ध चहनि शिव पै चल्यो । करि बिरथा स्रम खेद जिव रवि तप बारू तपै ॥ २१८८ ॥ ॥ न्रिप बाच रुद्र सो ॥ ॥ स्वैया ॥ सीस निवाइकै प्रेम बढाइकै यौ न्रिप रुद्र सो बैन सुनावै । जात हो हउ जिह शत्रु पै रुद्र जू कोऊ न आगे ते हाथ उठावै । ता ते अयोधन कउ हमरो कबि स्याम कहै मनुआ ललचावै । चाहत हो तुम ते बरु आज कोऊ हमरे संग जुझ मचावै ॥ २१८९ ॥ ॥ रुद्र बाच न्रिप सो ॥ ॥ चौपई ॥ यौ सुनिकै शिव क्रोध बढायो । यौ कहिकै तिह बचन सुनायो । जबै धुजा तुमरी गिर परि है । तबै सूर कोऊ तुम संगि लरिहै ॥ २१९० ॥ ॥ स्वैया ॥ ह्वै करि क्रोध जबै शिवजू तिन भूपति को तिन बैन सुनयो । भूप लख्यो नह भेद कछू सु लख्यो चित चाहत हो सोऊ पायो । बाग के भीतर फूल गयो भुजदंडन को अति ओज जनायो । यौ दस सै भुज स्याम कहै अति आनंद सो फिर मंदर आयो ॥ २१९१ ॥ एक हुती दुहिता तिह की तिह सोत निसा सुपनो इक पायो । मैन से रूप अनूप सी मूरत सो इहके चल मंदर आयो । भोग

मेरी शक्ति के कारण ही है। अपनी भुजाओं के पौरुष को ध्यान में रखकर वह शिव से युद्ध का वर माँगने के लिए चल पड़ा ॥२१८७॥ ॥ सोरठा ॥ सूर्य द्वारा तपाई हुई बालू के समान तमतमाता हुआ वह मूर्ख राजा रहस्य को न समझता हुआ शिव से युद्ध माँगने के लिए चल पड़ा ॥ २१८८ ॥ ॥ नृप उवाच रुद्र के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ सिर झुकाकर प्रेमपूर्वक राजा ने रुद्र से कहा कि मैं जहाँ भी जाता हूँ कोई मेरे सामने हाथ नहीं उठाता। मेरा मन युद्ध के लिए ललचा रहा है और मैं तुमसे वरदान चाहता हूँ कि कोई मेरे साथ युद्ध करे ॥ २१८९ ॥ ॥ रुद्र उवाच राजा के प्रति ॥ ॥ चौपाई ॥ यह सुनकर शिव क्रोधित होकर बोले कि जब तुम्हारी ध्वजा गिर पड़ेगी तभी तुमसे कोई युद्ध करेगा ॥ २१९० ॥ ॥ सवैया ॥ जब क्रोधित होकर शिवजी ने राजा को कहा तो राजा ने इस रहस्य को नहीं समझा और उसने सोचा कि मुझे मनोवांछित वरदान मिल गया है। अपने उद्यान में अपनी भुजाओं के बल पर वह फूल उठा और इस प्रकार सहस्रबाहु आनंदपूर्वक अपने घर वापस आ गया ॥ २१९१ ॥ राजा की एक कन्या थी। उसने एक दिन स्वप्न में देखा कि एक कामदेव के समान सुन्दर राजकुमार उसके घर आया है। उसने

कियो तिह सो मिलिकै इन चित्त बिखै अतिही सुख पायो । चउक परी नही पीय पिख्यो कबि स्याम कहै (मू०ग्रं०५३१) तिन शोक जनायो ॥ २१६२ ॥ ॥ स्वैया ॥ जागति ही बिरलाप कियो अतिही चित शोक की बात जनाई । अंगन मै डगरी सी फिरै पतिकी करिकै मन मै दुचताई । प्रेत लग्यो किधौ प्रीत लगी कि कछू अब या ठगमूरी सी खाई । भाखत भी सखी मोकउ अबै मोरो दै गयो प्रीतम आजु दिखाई ॥ २१६३ ॥ ॥ सवैया ॥ एती ही कै बतिया मुख ते गिर भू पै परी सभ सुद्ध भुलाई । यौ बिसंभार परी धरनी कबि स्याम भनै मनो नागन खाई । मानहु अंत समै पहुच्यो इह दै गयो प्रीतम सोत दिखाई । तउ लगि चित्रेखा जु हुती सु सखी इह को इह के ढिग आई ॥ २१६४ ॥ ॥ चौपई ॥ सखिह दशा जब याहि सुनाई । चित्रेख तब सोच जनाई । इह जिए जियहो नही मरिहो । जान्त जतन एक सो करिहो ॥ २१६५ ॥ जो मै नारद सो सुन पायो । वहै जतन मेरे मन आयो । जतन आज सोऊ मै करिहो । बानासुर ते नैकु न डरिहो ॥ २१६६ ॥ ॥ सखी बाच चित्रेख सो ॥ ॥ दोहरा ॥ आतुर ह्वै तिहकी

उसके साथ संभोग किया जिससे उससे परम सुख प्राप्त हुआ। वह चौंक कर जगी और व्याकुल हो उठी ॥ २१६२ ॥ ॥ सवैया ॥ जगते ही उसने विलाप किया और मन में दुखी हो उठी। वह अंगों में वेदना अनुभव करने लगी और पति के प्रति मन में दुविधा को सहन करने लगी। वह ठगी सी घूम रही थी और ऐसी लग रही थी मानो उसे कोई प्रेत-बाधा आ लगी हो। वह अपनी सखी से कहने लगी कि हे सखी ! आज मुझे मेरा प्रियतम दिखाई दिया है ॥ २१६३ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर वह धरती पर गिरकर सुध भूल गई। वह इस प्रकार अचेत होकर धरती पर गिर पड़ी मानो उसे नागिन ने काट लिया हो। ऐसा लग रहा था मानो उसके अंतिम समय में उसे उसका प्रियतम दिखाई दिया हो। तब तक उसकी चित्रेखा नामक सखी उसके पास आ पहुँची ॥ २१६४ ॥ ॥ चौपाई ॥ इसने जब अपनी सखी से अपनी दशा कही तो वह भी चिंतित हो उठी। वह सोचने लगी कि यह अब जीवित नहीं बचेगी। अब एक ही प्रयत्न है उसे किया जाय ॥ २१६५ ॥ जो मैंने नारद से सुना वही उपाय मेरे मन में आया है। मैं वही यत्न करूँगी और बाणासुर से तनिक भी नहीं डरूँगी ॥ २१६६ ॥ ॥ सखी उवाच चित्ररेखा के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ व्याकुल होकर उसकी सखी ने दूसरी से कहा कि जो

सखी तिह को कह्यो सुनाइ । जो जानत है जतन तूं सो अब तुरतु बनाइ ।। २१९७ ।। ।। सवैया ।। यौ सुनि कै तिह की बतिया तब ही इह चउदह लोक बनाए । जीव जनावर देव निसाचर भीत के बीच लिखे चित लाए । अउर सभै रचना जगहू की लिखी कहि लउ कबि स्याम सुनाए । तउ इह आइ समुच्छत कै बहियाँ गहि या सभ ही दरसाए ।। २१९८ ।। ।। सवैया ।। जउ बहियाँ गहिकै इह की उन चित्र सभै इहकै दरसाए । देखति देखति गी तिह ठाँ जह द्वारवती ब्रिजनाथ बनाए । संबर कुअरि थो जिह ठउर लिख्यो इह ता पिख नैन निवाए । ता सुइ देख कह्यो इह भाँति सही मेरे प्रीतम ए सखी पाए ।। २१९९ ।। ।। चौपई ।। कह्यो सखी अब ढील न कीजै । प्रीतम मुहि मिलाइकै दीजै । जब सजनी इह कारज कैहो । जीव दान तब मोकहु दैहो ।।२२००।। ।। सवैया ।। यौ बतिया सुनिकै भई चील चली उड द्वारवती महि आई । पौत्र हुतो जिह स्याम जू को छिप स्याम भनै तिह बात सुनाई । एक त्रिया अटकी तुम पै तुहि ल्याइबे के हित हउहूँ पठाई । ताते चलो (मू०ग्रं०४३२) तह बेग बुलाइ लिउ मेट सभै चित की दुचिताई ।। २२०१ ।। ।। सवैया ।। बैन सुनाइ कै स्याम भनै

कुछ तुम कर सकती हो उसे तुरन्त करो ।। २१९७ ।। ।। सवैया ।। उसकी ये बातें सुनकर इस सखी ने चौदह लोकों का निर्माण किया और जीव-जन्तु, देव-अदेव सबका निर्माण कर दिया। संसार की सब रचना उसने बना दी। अब उसने ऊषा की बाँह पकड़कर उसे सब दिखाया ।। २१९८ ।। ।। सवैया ।। जब उसकी बाँह पकड़कर उसने सभी चित्र उसे दिखाए तो वह देखते-देखते श्रीकृष्ण की बनाई द्वारिका नगरी में जा पहुँची। शंबर कुमार जहाँ लिखा था वहाँ तक पहुँचकर उसने नयन झुका लिये और कहने लगी कि हे सखी ! यही मेरा प्रियतम है ।। २१९९ ।। ।। चौपाई ।। उसने कहा, हे सखी ! अब विलम्ब मत करो और मुझे मेरे प्रियतम से मिला दो। हे सखी ! अगर तुम यह कार्य कर दोगी तो समझ लो मुझे प्राणदान मिल जायगा ।। २२०० ।। ।। सवैया ।। ऊषा की यह बात सुनकर वह चील बनकर उड़ी और द्वारिका नगरी में आ पहुँची। वहाँ श्रीकृष्ण के पौत्र को छिपकर उसने सब बात बताई। एक स्त्री तुम्हारे प्रेम में लीन है और मैं उसके लिए तुम्हें ले जाने को आई हूँ। इसलिए मन की व्याकुलता को समाप्त करने के लिए शीघ्र ही वहाँ चले चलो । २२०१ सवैया यह कहकर उसने

तिह आपनो रूप प्रतच्छ दखायो । जो तिय मो पर है अटकी तिह जाहि पिखों मन याहि लुभायो । खैंच निखंग कस्यो कट सो धनु लै चलिबे कहु साज बनायो । दूती को संग लए अपने इह ता तिय लिआवन काज सिधायो ॥ २२०२ ॥ ॥ दोहरा ॥ संग लयो अनरुद्ध को दूती हरख बढाइ । ऊखा को पुर थो जहाँ तहाँ पहूँची आइ ॥२२०३॥ ॥ सोरठा ॥ त्रिअ पिय दयो मिलाइ चतुर त्रिआ कर चतुरता । कियो भोग सुख पाइ ऊखा अरु अनरुद्ध मिल ॥ २२०४ ॥ ॥ सवैया ॥ चार प्रकार को भोग कियो नर नार हुलास हियैं मै बढकै । आसन कोक के बीच जिते कबि भाखत है सु सभै इन कैकै । बात कही अनरुद्ध कछू मुसकाइ त्रिआ संग नैन नचैकै । जिउँ हमरी तुम हुइ रही सुंदरि तिउ हमहू तुमरे रहे ह्वैकै ॥ २२०५ ॥ सुंदर थी जु धुजा न्रिप की सु गिरी भुअ पै लख भूपति पायो । जो बरदान दयो मुहि रुद्र वहै प्रगट्यो चित मै सु जनायो । तउ ही लउ आइ कही इक यौ तुमरी दुहता ग्रहि मो कोऊ आयो । यौ न्रिप बात चल्यो सुनिकै अपने चित मै अति रोस बढायो ॥ २२०६ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत ही करि शस्त्र सँभारत कोप भयो चित रोस बढायो । कान्ह के पौत्र सो स्याम भनै

अपना रूप प्रत्यक्ष होकर दिखाया । तब राजकुमार के मन में आया कि जिस स्त्री को मुझसे प्रेम है उसे जाकर देखूँ । उसने धनुष कमर में बाँध लिया और बाण पकड़कर चलने का उपक्रम किया । दूती के संग वह उस स्त्री को ले आने के लिए चल पड़ा ॥२२०२॥ ॥ दोहा ॥ दूती ने प्रसन्न होकर अनिरुद्ध को साथ लिया और ऊषा के नगर में आ पहुँची ॥२२०३॥ ॥ सोरठा ॥ उस स्त्री ने चतुरता से प्रिय और प्रियतमा को मिला दिया तथा ऊषा और अनिरुद्ध ने भी सुखपूर्वक भोग-विलास किया ॥ २२०४ ॥ ॥ सवैया ॥ हृदय में प्रसन्न होकर उन्होंने कोका पण्डित के बताये हुए आसनों के माध्यम से चार प्रकार से भोग-विलास किया । अनिरुद्ध ने मुस्कुराते हुए तथा नयन नचाते हुए ऊषा से कहा कि जिस प्रकार तुम मेरी हो, मैं भी तुम्हारा होकर रह गया ॥ २२०५ ॥ इधर राजा ने देखा कि उसकी सुन्दर ध्वजा धरती पर गिर पड़ी, उसने मन में जान लिया कि रुद्र का दिया हुआ वरदान अब प्रत्यक्ष होने जा रहा है । उसी समय किसी ने आकर बताया कि तुम्हारी कन्या के घर में कोई रह रहा है । इसे सुनकर चित्त में क्रोधित होकर राजा चल पड़ा । २२०६ । । सवैया । आते ही उसने शस्त्र सँ तथा कुपित

दुहता हू के मंदर जुद्ध मचायो । हुइ बिसंभार पर्‌यो जब सो तब ही इह के करि भीतर आयो । नाद बजाइ दिखाइ सभो बलु लै इह को ग्रिप धाम सिधायो ॥२२०७॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह के पोत्र को बाधकै भूप फिर्‌यो उत नारद जाइ सुनाई । कान चलो उठ बैठे कहा अपनी जदुबी सभ सैन बनाई । यौ सुनि स्याम चले बतिया अपने चित मै अति क्रोध बढाई । शस्त्र सँभार सभै रिस सो जिन को अस तेजु लख्यो नही जाई ॥ २२०८ ॥ ॥ दोहरा ॥ बतिया सुनि मुन की सकल जदुपति सैन बनाइ । जह भूपत को पुर हुतो तह ही पहुच्यो आइ ॥ २२०९ ॥ ॥ सवैया ॥ आवत स्याम जी को सुनिकै ग्रिप मंत्र पुछ्यो तिन मंत्रन दीनो । एक कही हम जो दुहता इह दै सु कह्यो तुहि मानन (मू०ग्रं०५३३) लीनो । साँग लयो शिव ते रन को बर जानत है तूँ भयो मति हीनो । छोरि हो दुै करि कै कर आजु सु यौ ब्रिजनाथ इहै प्रन कीनो ॥ २२१० ॥ ॥ सवैया ॥ मानो तो बात कहो ग्रिप एक जो स्रोनन मै हितकै धरिऐ । दुहता अनरुद्ध को लै अपने संगि स्याम के पाइन पै परिऐ । तुमरे ग्रिप पाइ परं सुनिऐ नही स्याम के संगि कबै

होकर कृष्ण के पौत्र के साथ अपनी पुत्री के घर में ही युद्ध छेड़ दिया। जब वह गिर पड़ा तो राजा नाद करते हुए श्रीकृष्ण के पौत्र को लेकर अपने घर की तरफ़ चल पड़ा ॥ २२०७ ॥ ॥ सवैया ॥ इधर राजा कृष्ण के पौत्र को बाँधकर ले चला और उधर नारद ने जाकर सारी बात श्रीकृष्ण से कह दी। नारद ने कहा कि हे कृष्ण! उठो और सभी यादव-सेना के साथ चलो। श्रीकृष्ण भी यह सुनकर क्रोधित होकर चल पड़े और शस्त्र धारण किये हुए उनका तेज देख पाना कठिन था ॥२२०८॥ ॥ दोहा ॥ मुनि की बात सुनकर श्रीकृष्ण सभी सेना को लेकर वहाँ आ पहुँचे, जहाँ राजा सहस्रबाहु का नगर था ॥ २२०९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के आने की बात सुनकर राजा ने मंत्रियों से सलाह की। मंत्रियों ने कहा कि जो कन्या है, वे उसे लेने आये हैं और तुम्हें यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं। तुमने मतिहीन होकर शिव से युद्ध का वरदान माँग लिया है, परन्तु इधर श्रीकृष्ण ने भी यह प्रण किया है इसलिए तुम इन दोनों (ऊषा-अनिरुद्ध) को कर देते हुए छोड़ दो ॥ २२१० ॥ ॥ सवैया ॥ हे राजन्! यदि तुम बात मानो तो हम यही कहते हैं— ऊषा और अनिरुद्ध को अपने साथ लेकर श्रीकृष्ण के पैरों पर जा पड़ो। हे राजन्, हम तुम्हारे पाँव पड़ते हैं कि तुम श्रीकृष्ण के साथ कभी मत लड़ना श्रीकृष्ण

लरिऐ। अरिहो न जो स्याम भने हरि सो भुअ पै तब राज सदा करिऐ ॥ २२११ ॥ स्री ब्रिजनाइक जो रिसकै रन मै कर जो धनु सारंग लैहै। कउन बली प्रगट्यो भुअ पै तुमहूँ न कहो बल जो ठहरैहै। जो हठ कै भिर है तिह सो तिह कउ छिन मै जमलोक पठैहै। अउर भुजा कटिकै तुमरी सभ द्वै भुज राखि त्वै प्रान बचैहै ॥ २२१२ ॥ ॥ सवैया ॥ मंत्री की बात न मानत भ्यो न्रिप आपनो ओज अखंड जनायो। शस्त्र सँभार कै हाथन मै फुन बीरन मै अति ही गरबायो। सैन प्रचंड हुती जितनो तिस कउ न्रिप आपने धाम बुलायो। रुद्र मनाइ जनाइ घनो बलु स्यामजू सो लरबे कह धायो ॥ २२१३ ॥ उत स्यामजू बान चलावत भ्यो उत ते दस सै भुज बान चलाए। जादव आवत भे उत ते इत ते इनके सभ ही भट धाए। घाइ करै मिल आपस मै तिन यो उपमा कबि स्याम सुनाए। मानहु फागन की रुत भीतर खेलन बीर बसंतह आए ॥ २२१४ ॥ ॥ सवैया ॥ एक भिरे करवारन सो भट एक भिरे बरछी करि लै कै। एक कटारन संग भिरे कबि स्याम भनै अति रोसि बढै कै। बान कमानन कउ इक बीर सँभारत भे अति क्रोधत

जैसा शत्रु और कोई नहीं होगा और यदि इस शत्रु को मित्र बना लिया जाय तो सारी पृथ्वी पर सदा के लिए राज किया जा सकता है ॥ २२११ ॥ श्रीकृष्ण जब क्रोधित होकर युद्ध में धनुष-बाण हाथ में लेंगे तो तुम ही बताओ कि धरती पर कौन ऐसा बली है, जो उनके सामने ठहरेगा। जो हठपूर्वक उनसे भिड़ेगा, उसे वे क्षण भर में यमलोक भेज देंगे। तुम्हारी सब भुजाओं को काटकर केवल तुम्हारी दो भुजाओं को छोड़कर वे तुम्हें जीवित छोड़ देंगे ॥ २२१२ ॥ ॥ सवैया ॥ मंत्री की बात को न मानकर राजा ने अपनी ही शक्ति को अखण्ड माना। शस्त्र सँभालकर वह वीरों में गर्वपूर्वक विचरण करने लगा तथा उसने जितनी भी प्रचण्ड सेना थी उसको पास बुलाया। रुद्र की पूजा कर वह बलपूर्वक श्रीकृष्ण से लड़ने के लिए चल पड़ा ॥ २२१३ ॥ इधर से श्रीकृष्ण बाण चला रहे हैं और उधर से सहस्रबाहु बाण चला रहा है। उधर से यादव आ रहे थे और इधर से इनके शूरवीर टूट पड़ रहे थे। वे आपस में मिलकर इस प्रकार घाव लगा रहे थे कि मानो वसन्त ऋतु में वीर-गण फाग-क्रीड़ा करते घूम रहे हों ॥ २२१४ ॥ ॥ सवैया ॥ कोई कृपाण और कोई बरछी लेकर, कोई कटार लेकर और कोई क्रोधित होकर धनुष-बाण लेकर भिड़ रहा है। उधर से राजा और इधर से श्रीकृष्ण यह सब

हवै कै। कउतक देखत भ्यो उत भूप इतै ब्रिजनाइक आनंद कै कै ॥ २२१५ ॥ जा भट आहव मै कबि स्याम कहै भगवान से जुधु मचायो। ताही कौ एक ही बान सो स्याम धरा पर कै बिन प्रान गिरायो। जो धनु बान सँभार बली कोऊ अउ इह के रिस ऊपर आयो। सो कबि स्याम भने अपनै ग्रहि कउ फिर जीवत जान न पायो ॥ २२१६ ॥ ॥ सवैया ॥ गोकलनाथ जू बैरन सो कबि स्याम भनै जबही रन मांड्यो। जेतिक शत्रन सामुहि भे रिस सो सभि गिद्ध स्रिगालन बांड्यो। पत्ति रथी गजि बाज घने बिन प्रान (मू०ग्रं०५३४) किए कोऊ जीत न छांड्यो। देव सराहत भे सभ सु ही भले भगवान अखंडन खांड्यो ॥ २२१७ ॥ जीते सभै भयभीत भए तजि आहव को सभ ही भट भागे। ठाढो बनासुर थो जिह ठउर सभै चलिकै तिह पाइन लागे। छूट गयो सभहून ते धीरज त्रासहि के रस मै अनुरागे। भाखत भे ब्रिप सो भजिऐ बचहै न कोऊ ब्रिजनाथ के आगे ॥ २२१८ ॥ भीर परी जब भूपत पै तब आपने जानकै ईस निहार्यो। संत सहाइ को जाइ भिर्यो ब्रिजनाइक सो चित बीच बिचार्यो। आयुध लै अपने सभ ही हरि ओर सु

लीला देख रहे हैं ॥ २२१५ ॥ जिन शूरवीरों ने श्रीकृष्ण से युद्ध किया उन्हें एक ही बाण से श्रीकृष्ण ने निष्प्राण कर धरती पर फेंक दिया। जो कोई बली क्रोधित होकर धनुष-बाण हाथ में लेकर इन पर टूट पड़ा, कवि श्याम का कथन है कि वह पुनः वापस जीवित नहीं जा पाया ॥ २२१६ ॥ ॥ सवैया ॥ गोकुलपति श्रीकृष्ण ने जब शत्रुओं से युद्ध किया तो जितने भी शत्रु सामने थे, उन सबको क्रोधित होकर मारकर गिद्धों और गीदड़ों में बाँट दिया। पैदल-रथी, हाथी-घोड़े अनेकों निष्प्राण कर दिये और किसी को जीवित न छोड़ा। सभी देवगण भी प्रशंसा करने लगे कि श्रीकृष्ण ने अखण्ड वीरों को भी खण्डित कर डाला ॥ २२१७ ॥ जीते हुए तथा भयभीत योद्धा युद्ध को छोड़कर भाग खड़े हुए और जहाँ बाणासुर खड़ा था उस स्थान पर आकर उसके चरणों में लोट गये। डर के मारे सबका धैर्य छूट गया था और सभी कह रहे थे कि श्रीकृष्ण के सामने कोई नहीं बच पाएगा। अतः हे राजन्! हमें भाग जाना चाहिए ॥ २२१८ ॥ जब राजा पर मुसीबत पड़ी तो उसने शिव को याद किया और शिव ने भी यह अनुभव किया कि राजा सन्तों के सहायक श्रीकृष्ण से जा भिड़ा है। शिव अपने हाथ में शस्त्र लेकर युद्ध के लिए श्रीकृष्ण की ओर चल पड़ा और अब मैं वर्णन करता हूँ कि उन्होंने कैसे

जुद्ध के काज सिधार्यो । आवत ही सु कहो अब हुउ जिह भाँति दुहूँ तिह ठाँ रन पार्यो ॥ २२१९ ॥ रुद्र ह्वै रुद्र जबै रन मै कबि स्याम भनै रिस नाद बजायो । सूर न काहू ते नैकु टिकयो गयो भाज गए न रती कु द्रिड़ायो । शत्रन के दुहू शत्रुन संग ले रोख हली सु सोऊ डर पायो । स्री ब्रिजनाथ सो स्याम भनै जबही शिव आइकै जुद्धु मचायो ॥ २२२० ॥ ॥ सवैया ॥ जे सभ घाइ चलावत भ्यो शिव ते सभ ही ब्रिजनाथ बचाए । तउन सभै शिव को अपने सभ स्याम भनै तक घाइ लगाए । जुद्धु कियो बहु भाँति दुहू जिहको सभ ही सुर देखन आए । अंत खिसाइ रिसाइ क्रिपानिध एक गदा हू सो रुद्र गिराए ॥ २२२१ ॥ ॥ चौपई ॥ जब रुद्रहि हरि घाइ लगायो । बिसुधो करि कै भूमि गिरायो । शंकत भयो न फिर धनु तान्यो । स्री जदुबीर सही प्रभ जान्यो ॥ २२२२ ॥ ॥ सोरठा ॥ रुद्र कोप द्यो त्यागि जदुपति को बलु हेरकै । पाइन लाग्यो आइ रह्यो चरन गहि हरि दोऊ ॥ २२२३ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र की देख दशा इह भाँति सु आपहि जुद्धु को भूपत आयो । स्याम भनै दस सै भुज स्याम के ऊपर बानन ओघ चलायो । ओघ जो आवत बानन को सभ ही हरि मारग

भीषण युद्ध किया ॥ २२१९ ॥ जब रौद्र रूप से क्रुद्ध होकर शिव ने नाद किया तो कोई भी शूरवीर वहाँ थोड़ी देर के लिए भी न टिक सका । दोनों ओर के शत्रु भयभीत हो उठे जब श्रीकृष्ण के साथ शिव ने आकर युद्ध प्रारम्भ कर दिया ॥ २२२० ॥ ॥ सवैया ॥ शिव के किये हुए वारों को श्रीकृष्ण ने बचाया और शिव को निशाना साधकर घाव लगाया । दोनों ने विभिन्न प्रकार से युद्ध किया और उस युद्ध को देखने के लिए देवगण भी आ पहुँचे और अन्त में क्रोधित एवं खिसियाए हुए रुद्र को कृष्ण ने गदा के वार से गिरा दिया ॥ २२२१ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार जब श्रीकृष्ण ने रुद्र को घायल कर भूमि पर गिरा दिया तो वह भी भयभीत हो उठे और उन्होंने फिर धनुष को नहीं ताना तथा श्रीकृष्ण को वास्तविक रूप से प्रभु के रूप में पहचान लिया ॥ २२२२ ॥ ॥ सोरठा ॥ श्रीकृष्ण के बल को देख रुद्र ने क्रोध त्याग दिया और श्रीकृष्ण के चरणों में आ पड़े ॥ २२२३ ॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र की यह दशा देख राजा स्वयं युद्ध के लिए आया और उसने अपनी एक हज़ार भुजाओं से श्रीकृष्ण पर बाणों के झुण्ड छोड़े इन आते हुए बाणों को श्रीकृष्ण

मै निवरायो । सारंग आपन हाथ बिखै धरिकै अरिको बहु घाइन घायो ॥ २२२४ ॥ ॥ सवैया ॥ स्त्री ब्रिजनाइक क्रुद्धत हुइ अपने करि मै धनु सारंग लै कै । जुद्धु मचावत भयो दस सै भुज सो अति ओज अखंड जनै कै । अउर हने बलवंड घने कबि स्याम भनै अति पउरख कै कै । छोरि दयो तिह भूपत (मू०ग्रं०५३५) कउ रन मै तिहको सु भुजा फुन द्वै कै ॥ २२२५ ॥ ॥ कबि बाच ॥ ॥ सवैया ॥ बाहु सहंस्र कहो तुमरी अब लउ जग मै नहि काहू की होई । अउर कहो इह भूप इती अपनै ग्रहि बीच संपत्ति समोई । एते पै संत सुनो हित कै शिव सो छरिया पुन राखत कोई । ता न्रिप को बर था बिधि ईस दयो जगदीश कियो भयो सोई ॥ २२२६ ॥ ॥ चौपई ॥ जब तिह माइ बात सुन पाई । न्रिप हार्यो जीत्यो जदुराई । सभ तजि बस्त्र नगन हुइ आई । आइ स्याम को दई दिखाई ॥ २२२७ ॥ ॥ चौपई ॥ तब प्रभ द्रिग नीचे हुइ रह्यो । नैक न जूझब चित मो चह्यो । भूपत समै भजन को पायो । भाजि गयो नहि जुद्धु मचायो ॥ २२२८ ॥ ॥ न्रिप बाच बीर सो ॥ ॥ सवैया ॥ बिप्पत हुइ बहु घाइन

ने मार्ग में ही निष्क्रिय कर दिया । उन्होंने अपना धनुष हाथ में लेकर शत्रु को बुरी तरह घायल कर दिया ॥ २२२४ ॥ ॥ सवैया ॥ क्रोधित होकर धनुष-बाण हाथ में लेकर श्रीकृष्ण ने सहस्रबाहु से उसके अखण्ड तेज को पहचानते हुए भीषण युद्ध किया । अनेकों बलवानों को अपने पौरुष से मार डाला और राजा की दो भुजाओं को छोड़ बाक़ी उसकी सब भुजाएँ काट डाली और उसे छोड़ दिया ॥२२२५॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ हे सहस्रबाहु ! तुम्हारी ऐसी बुरी दशा आज तक किसी की नहीं हुई और तुम बताओ कि हे राजा ! तुमने अपने घर में इतनी सम्पत्ति क्यों एकत्र कर रखी है । इतने पर भी भला कोई शिव जैसे महाबली को अपनी रक्षा के लिए रखता है । उसे शिव ने वरदान अवश्य दिया परन्तु होता वही है जो परमात्मा को स्वीकार होता है ॥ २२२६ ॥ ॥ चौपाई ॥ जब राजा की माँ ने यह सुना कि राजा हार गया है और श्रीकृष्ण जीत गए हैं तो वह नग्न होकर श्रीकृष्ण के सम्मुख आ खड़ी हुई ॥ २२२७ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब प्रभु ने आँखें नीची कर ली और मन में विचार कर लिया कि अब मैं युद्ध नहीं करूँगा । इसी में राजा को भागने का समय मिल गया और वह युद्ध छोड़ भाग गया ॥२२२८॥

सो श्रिप बीरन मै इह भांत उचार्‌यो । कोऊ न सूर टिक्यो मुहि अग्रज हउ जिह की रिस ओर पधार्‌यो । गाजबो मो सुनिकै अब लउ किनहू करि मै नहि शस्त्र सँभार्‌यो । एते पै मो संगि आइ भिर्‌यो सु सही ब्रिजनाइक बीर निहार्‌यो ॥२२२६॥ ॥ सवैया ॥ स्री जदुबीर ते जो सहस्र भुज भाज गयो नह जुद्ध मचायो । द्वै भुज देख भई अपनी अपने चित मै अति त्रास बढायो । सो जग मै जसु लेति भयो जिन स्री ब्रिजनाथहि को गुन गायो । तउ ही जथामति संत प्रसादि ते यौ कहिकै कछू स्याम सुनायो ॥ २२३० ॥ आवत भ्यो रिसकै शिवजू फिरि आपने संग सभै गन लैकै । स्री जदुबीर के सामुहि बीर कहै कबि स्याम सु क्रुद्धत ह्वैकै । बान क्रिपान गदा बरछी गहि आवत भे रिस नाद बजैकै । सो छिन मै प्रभ जू सभ बीर दए फुन अंत के धाम पठैकै ॥ २२३१ ॥ ॥ सवैया ॥ एक हनै जदुराइ गदा गहि एक बली रिप संबर घाए । एक भिरे मुसलीधर सो सु तो जीवत धामहूँ जान न पाए । जो फिर आइ भिरे हरि सों चित मै फुन कोप की ओप बढाए । यौ फिर छेदत भ्यो तिन कउ जोऊ जंबुक गीधन हाथ न

॥ नृप उवाच वीरों के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ घावों से त्रस्त होकर राजा ने अपने वीर सैनिकों से कहा कि मैं जिस ओर भी गया हूँ मेरे सामने कोई शूरवीर टिक नहीं सका है । मेरी गर्जना को सुनकर किसी ने भी आज तक शस्त्र हाथ में नहीं पकड़ा है । जो इतने सब पर भी मुझसे आ मिला है वह श्रीकृष्ण वास्तव में वीर हैं ॥ २२२६ ॥ ॥ सवैया ॥ जब सहस्रबाहु श्रीकृष्ण के सामने से भाग गया तो उसने अपनी दो बची हुई भुजाओं को देखा तथा मन में अत्यन्त भयभीत हो उठा । जिसने भी श्रीकृष्ण का गुणानुवाद किया है उसने जग में यश अर्जित कर लिया है । उन्हीं गुणों को कवि श्याम ने सन्तों की कृपा से अपनी बुद्धि के अनुसार कहा है ॥ २२३० ॥ शिव जी पुनः क्रोधित होकर अपने गणों को ले श्रीकृष्ण के सामने आ पहुँचे । बाण, कृपाण, गदा, बरछी पकड़कर वे सब घोर नाद करते चले आ रहे थे । श्रीकृष्ण ने क्षण भर में उन सबको यमलोक पहुँचा दिया ॥ २२३१ ॥ ॥ सवैया ॥ बहुतों को श्रीकृष्ण ने गदा से और बहुतों को शम्बर ने मार डाला । जो बलराम से भिड़े वे भी जीवित नहीं लौटे । जो पुनः श्रीकृष्ण से क्रोधित हो आ भिड़े वे भी श्रीकृष्ण द्वारा ऐसे खण्ड-खण्ड किए गए कि वे टुकड़े गिद्धों और गीदड़ों

आए ॥ २२३२ ॥ ऐसो निहार भयो तह आहव चित्त बिखै अति क्रोध बढायो । ठोक भुजा अपनी दोऊ आपही हाथ लै आपनै नाद बजायो । जिउं कुप अंधक दैत पै धावत भ्यो तिम कोप कै स्याम पै धायो । यौ (मू०ग्रं०५३६) उपजी उपमा लखै कहु केहरि सो जनु केहरि आयो ॥ २२३३ ॥ जुद्ध मँड्यो अतिही तबही शिव ताप हुतो इक सोऊ सँभार्यो । स्यामजू भेद सभै लहि कै जुर सीत सु ताही की ओर पचार्यो । देखत ही जुर सीत कउ सो जुर भाजि गयो न रतीक सँभार्यो । यौ उपमा उपजी जिय मै बदरा बह्यो जात बियार को मार्यो ॥ २२३४ ॥ ॥ सवैया ॥ गरब जितो शिव बीच हुतो सभ ही हरि क्रुद्ध कै जुद्धु मिटायो । जो तिन तीरन ब्रिशट करी तिह ते हर एक न भेटन पायो । अउर जिते गन संग हुते सभ को हरि घाइ घने संग घायो । ऐसो निहारकै पउरख स्याम गनप्पति पाइन सो लपटायो ॥ २२३५ ॥ ॥ शिव बाच ॥ ॥ सवैया ॥ भूल पर्यो प्रभ मै घट काम कियो तुम सो जु पै जुद्ध चह्यो । तो कहा भयो जो रिस आइ भिर्यो तु कहा इह ठाँ मेरो मान रह्यो । तुमरे गुन गावत ही सहसफनि अउ चतुरानन हार रह्यो । तुमरे गुन कउन गनै

के हाथ न आ सके ॥ २२३२ ॥ इस प्रकार का भयंकर युद्ध देखकर शिव ने क्रोध से अपनी भुजाओं को ठोंक घनघोर नाद किया । जिस प्रकार कुपित होकर अन्धकासुर दैत्य पर आक्रमण किया गया था, उसी प्रकार क्रोधित हो वे श्रीकृष्ण पर टूट पड़े और ऐसा लग रहा था कि मानो सिंह से लड़ने के लिए दूसरा सिंह चला आया हो ॥ २२३३ ॥ अत्यन्त भयंकर युद्ध करते हुए शिव ने तेजयुक्त अपनी एक शक्ति को सम्हाला । श्रीकृष्ण ने यह रहस्य समझकर उनकी ओर तुषार-वर्षा करनेवाला बाण चलाया जिसे देख वह शक्ति निष्क्रि हो गई । ऐसा लग रहा था मानो पवन का मारा बादल उड़ा चला जा रहा हो ॥ २२३४ ॥ ॥ सवैया ॥ शिव के सारे गर्व को श्रीकृष्ण ने युद्ध में मिटा डाला । शिव ने जितनी भी बाण-वर्षा की उनमें से एक भी बाण श्रीकृष्ण को नहीं लगा । शिव के साथ जितने गण थे श्रीकृष्ण ने उन्हें घायल कर दिया । इस प्रकार श्रीकृष्ण का पौरुष देख गणपति शिव श्रीकृष्ण के चरणों पर गिर पड़े ॥ २२३५ ॥ ॥ शिव उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ हे प्रभु ! मैंने छोटा काम किया जो आप से युद्ध करने की सोची । क्या हुआ यदि मैं क्रोधित होकर आ भिड़ा परन्तु इस स्थान पर आपने मेरा गर्व चूर कर दिया । शेषनाग

कह लउ जिह बेद सकै नहि भेद कह्यो ॥२२३६॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ का भयो जो धर मूँड जटा सु तपोधन को जग भेख दिखायो । का भयो जो कोऊ लोचन मूँद भली बिध सों हरि के गुन गायो । अउर कहा जू पै आरती लैकरि धूप जगाइ कै संख बजायो । स्याम कहै तुमही न कहो बिन प्रेम किहू ब्रिजनाइक पायो ॥ २२३७ ॥ तिउ चतुरानन तिखहू खड़ानन तिउ सहसानन ही गुन गायो । नारद सक्र सदा शिव स्याम इतो गुन स्याम को गाइ सुनायो । चारोई बेद न भेद लह्यो जग खोजत है सभ धार न पायो । स्याम भनै तुमही न कहो बिन प्रेम किहू ब्रिजनाथ रिझायो ॥ २२३८ ॥ ॥ शिव बाच कान्ह सो ॥ ॥ सवैया ॥ पाइ पर्यो शिव जू हरि के कह्यो मो बिनती हरिजू सुन लीजै । सेवक माँगत है बरु एक वहै अब रीझ दयानिध दीजै । हेर हमै कबि स्याम भनै कबहू करनारस के संग भीजै । बाहै कटी सहस्राभुज की तु भलो तह को अब नासु न कीजै ॥ २२३९ ॥ ॥ कान्ह जू बाच ॥ ॥ सवैया ॥ सो करिहो अब हउ सुनि रुद्रजू तो संग बैन

और ब्रह्मा भी आपके गुण गाते थक चुके हैं। तुम्हारे गुणों का वर्णन कहाँ तक किया जाय क्योंकि वेद भी तुम्हारे भेद को पूर्णत: नहीं कह सके ॥२२३६॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ क्या हुआ यदि कोई जटाएँ धारण करके जगत में विभिन्न प्रकार के वेष बनाकर घूमता रहा; आँखें बन्द कर परमात्मा के गुण गाता रहा; धूप जलाकर और शंख बजाकर तुम्हारी आरती करता रहा। परन्तु श्याम कवि का कथन है कि भला कोई बिना प्रेम किए हुए व्रजनायक परमात्मा को प्राप्त कर सका है ॥ २२३७ ॥ ब्रह्मा, कार्तिकेय, शेषनाग, नारद, इन्द्र, शिव, व्यास आदि सभी परमात्मा का गुणगान कर रहे हैं। चारों वेद भी उसी को खोजते हुए उसका रहस्य नहीं समझ पाए हैं और श्याम कवि का कथन है कि तुम ही कहो भला बिना प्रेम किए क्या कोई उस व्रजनाथ को रिझा सका है ॥ २२३८ ॥ ॥ शिव उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ शिव जी ने श्रीकृष्ण के चरण पकड़कर कहा कि हे प्रभु ! मेरी एक प्रार्थना सुनिए। यह सेवक एक वरदान माँग रहा है, वह कृपापूर्वक दीजिए। हे प्रभु ! मेरी ओर देखकर दया करके मेरी एक बात मानिए कि सहस्रबाहु की भुजाएँ तो काट ली गयी हैं, अब कृपापूर्वक उसे जान से मत मार डालिए ॥ २२३६ ॥ ॥ कृष्ण उवाच । । सवैया हे शिव ! आप सुनो मैं अब वही करूँगा उसकी बाँहें कटी हुई देखकर और उसकी भूल को

उचारत हउ। बाहै कटी तिह भूल निहार अब हउहूँ सु क्रोध (मू०ग्रं०५२७) निवारत हउ। प्रहलाद को पौत्र कहावत है सु इहै जिअ माहि बिचारत हउ। ता ते डंड ही दै करि छोरि दयो इह ते नहि ताहि सँघारत हउ॥ २२४०॥
॥ सवैया॥ यौ बखशाइकै स्याम जू सो तह भूप को स्याम के पाइन डारो। भूल कै भूपत काम कर्यो अब हे प्रभ जू तुम क्रोध निवारो। पौत्र को ब्याह करो इह की दुहता संग अउर कछू न बिचारो। यौ करि ब्याह संग ऊखह लै अनरुद्ध को स्याम जू धाम सिधारो॥ २२४१॥ ॥ सवैया॥ जो सुनि है गुन स्याम जू के फुन अउरन ते अरु आपन गैहै। आपन जो पड़्हैं पड़्वाइ है अउर कबित्तन बीच बनैहै। सोवत जागत धावत धाम सु स्री ब्रिजनाइक की सुध लैहै। सोऊ सदा कबि स्याम भनै फुन या भव भीतर फेर न ऐहै॥ २२४२॥

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटके क्रिशनावतारे बनासुर को जीत अनरुध ऊखा को ब्याह लिआवत भए॥

अथ डिग राजा को उधार कथनं॥

॥ चौपाई॥ एक भूप छत्री डिग नामा। धर्यो ताहि

देख मैं भी अब क्रोध का निवारण करता हूँ। मैं भी यह सोचता हूँ कि यह प्रह्लाद का पौत्र है, इसलिए इसको दण्ड देकर छोड़ देता हूँ और इसका संहार नहीं करता हूँ॥ २२४०॥ ॥ सवैया॥ इस प्रकार उसकी भूल मनवाकर शिव ने राजा को श्रीकृष्ण के चरणों में डाल दिया और कहा कि सहस्रबाहु ने गलत काम किया है और हे प्रभु! अब आप क्रोध का त्याग कीजिए। अब बिना विचार किए अपने पौत्र का विवाह इसकी कन्या के साथ कीजिए और ऊषा तथा अनिरुद्ध को साथ ले अपने घर जाइए॥२२४१॥
॥ सवैया॥ जो श्रीकृष्ण के गुण अन्यों से सुनेगा तथा स्वयं उनका गुणगान करेगा; जो उनके गुणों को पढ़ेगा, पढ़ाएगा और कविता में गाएगा; सोते-जागते, चलते-फिरते श्रीकृष्ण को याद रखेगा वह कभी भी पुनः इस संसार-सागर में नहीं आएगा॥ २२४२॥

॥ श्री दसम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक के ———— में बाणासुर को जीत अनिरुद्ध तथा ऊषा को ब्याह कर ले आना समाप्त॥

किरला को जामा । सभ जादव मिलि खेलन आए । प्यासे भए कूप पिख धाए ॥ २२४३ ॥ इक किरला तिह माहि निहार्‌यो । काढै याको इहै बिचार्‌यो । काढन लगे न काढ्यो गयो । अति असचरज सभहिन मन भयो ॥ २२४४ ॥ ॥ जादव बाच कान्ह सो ॥ ॥ दोहरा ॥ सभ सु चित जादव भए गए क्रिशन पै धाइ । कहि किरला इक कूप मै ता को करहु उपाइ ॥ २२४५ ॥ ॥ कबितु ॥ सुनत ही बातै सभ जादव की जदुराइ जान्यो सभ भेद कही बात मुसकाइ कै । कहा वह कूप कहा पर्‌यो है किरला तामै बोलत भयो यौ मुहि दीजिए दिखाइकै । आगे आगे सोऊ घनस्याम तिन पाछै पाछै चलत चलत जो निहार्‌यो सोऊ जाइकै । मिटि गए पाप ताके एको न रहन पाए भयो नर जबै हरि लीनो है उठाइकै ॥२२४६॥ ॥ सवैया ॥ ताही की मोछ भई छिन मै जिन एक घरी घन-स्याम जू ध्यायो । अउर तरी गनका तब ही जिह हाथ लयो सुक स्याम पढ़ायो । को न तर्‌यो जग मै नर जाहि नराइन को चित नाम बसायो । एते पै किउ (मू०ग्रं०५३८) न तरै किरला जिह को हरि आपन हाथ लगायो ॥२२४७॥ ॥ तोटक छंद ॥ जब ही सोऊ स्याम उठाइ लयो । तब मानुख को सोऊ

में जन्म लिया । जब सभी यादव खेल रहे थे तो प्यास लगने पर वे एक कुएँ के पास आए ॥ २२४३ ॥ कुएँ में एक गिरगिट को देखकर उन सबने उसको निकालने का विचार किया । उसको निकालने पर भी न निकलता देखकर सबको मन में आश्चर्य हुआ ॥ २२४४ ॥ ॥ यादव उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ दोहा ॥ सभी विचार करते हुए श्रीकृष्ण के पास पहुँचे और कहने लगे कि कुएँ में एक गिरगिट है उसे निकालने का उपाय कीजिए ॥ २२४५ ॥ ॥ कबित्त ॥ यादवों की बातें सुनकर और सारे रहस्य को समझकर श्रीकृष्ण ने मुस्कुराते हुए कहा कि वह कुआँ कहाँ है, मुझे दिखा दो । आगे-आगे यादव और पीछे श्रीकृष्ण चले और वहाँ जाकर उन्होंने कुएँ को देखा । जब श्रीकृष्ण ने उस गिरगिट को पकड़ा तब उसके सारे पाप समाप्त हो गए और वह मनुष्य की देह को प्राप्त हुआ ॥ २२४६ ॥ ॥ सवैया ॥ जिसने एक पल भी श्रीकृष्ण का स्मरण किया उसकी मुक्ति हो गई । तोते को राम-राम पढ़ाते हुए गणिका का भी उद्धार हो गया तथा कौन ऐसा व्यक्ति है जिसने नारायण का स्मरण किया हो और वह से पार न हुआ हो तब जिस गिरगिट को स्वयं श्रीकृष्ण ने छुआ हो उसका भला उद्धार क्यों न होता २२४७ ।

बेख भयो। तब यौ ब्रिजनाथ सु बैन ररे। तह देसु कहा तह नाम अरे ॥ २२४८ ॥ ॥ किरला बाच कान्ह सो ॥ ॥ सोरठा ॥ डिग मेरो थो नाउ एक देस को भूप हौ। सो तुम कथा सुनाउँ जाते हउ किरल भयो ॥२२४९॥ ॥ कबितु ॥ नाथ हउ तौ नितप्रति सोने को बनाइ साज गऊ सति देतो दिज सुत कउ बुलाइ कै। एक गऊ मिली मेरी पुंन करी गउअन सो जो हउ पुंन करबे कउ राखत मँगाइ कै। जोऊ पुंन करी डीठ ताही दिज परी कह्यो मेरी गऊ ताँको धनु दै रह्यो सुनाइ कै। था न धन लयो मोहि इहै स्राप दयो होहु किरला कुआ को हउ सु भयो ताते आइ कै ॥ २२५० ॥ ॥ दोहरा ॥ तुमरे कर ते छुअत अब मिट गए सगरे पाप। सो फल लह्यो जु बहुतु दिन मुनि कर पावत जाप ॥ २२५१ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे किरला को रूप ते काढकै उधार करत भए धिआइ समापतं ॥

॥ तोटक छंद ॥ जब श्रीकृष्ण ने उसे उठाया तो वह मनुष्य के वेश में उठ खड़ा हुआ। तब श्रीकृष्ण ने पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है और तुम्हारा देश कौन सा है ? ॥ २२४८ ॥ ॥ गिरगिट उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ सोरठा ॥ मेरा नाम डिग है और मैं एक देश का राजा हूँ। मैं कैसे गिरगिट हुआ, यह कथा कहता हूँ ॥ २२४९ ॥ ॥ कवित्त ॥ हे नाथ ! मैं नित्य ब्राह्मणों को सौ गाय और स्वर्णदान किया करता था। दान की हुई गायों में से एक गाय मेरे द्वारा दी जानेवाली गायों में आ मिली। तब दी जानेवाली गायों में से ब्राह्मण ने अपनी गाय पहचान ली और कहा कि मेरा ही धन तुम मुझको दान कर रहे हो। अतः उसने दान नहीं लिया और मुझे गिरगिट होकर कुएँ में रहने का शाप दे दिया। इस प्रकार मैं इस अवस्था को प्राप्त हुआ हूँ ॥२२५०॥ ॥ दोहा ॥ आपके द्वारा हाथ से छूने पर मेरे सभी पाप नष्ट हो गये और मुझे वह फल प्राप्त हुआ है जो मुनियों को कई दिनों तक जाप करने पर प्राप्त होता है ॥ २२५१ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ के कृष्णावतार में गिरगिट को कुएँ से निकालकर उद्धार किया अध्याय समाप्त ॥

अथ गोकल बिखे बलभद्र जू आए ॥

॥ चौपई ॥ तिह उधार प्रभ जू ग्रहि आयो । गोकल कउ बलभद्र सिधायो । आइ नंद के पाइन लाग्यो । सुख अति भयो शोक सभ भाग्यो ॥ २२५२ ॥ ॥ सवैया ॥ नंद के पाइन लाग हली चलि कै जसुधाहू के मंदर आयो । देखत ही तिह को कबि स्याम सु पाइन ऊपरि सीस झुकायो । कंठ लगाइ लयो कह्यो ताहि सो यौ मन मै कबि स्याम बनायो । स्यामजू लेत कबै हमरी सुध माइ यौ रोइ कै तात सुनायो ॥ २२५३ ॥ ॥ कबितु ॥ गोपी सुनि पायो इह ठउर बलभद्र आयो स्याम आयो ह्वैहै माँग संधर भरत है । बेसर बिंदुआ तन भूखन बनाइ कबि स्याम चार लोचनन अंजन धरत है । दामनी सी दमक दिखाइ निज काइ आइ बूझै मात भ्रात की न शंका को करत है । दीजै घनस्याम की बताइ सुद्ध हाइ हमै स्याम बलिराम हाहा पाइन परत है ॥ २२५४ ॥ ॥ कबियो बाच ॥ ॥ सोरठा ॥ हली कियो सनमान सभ ग्वारन को तिह समै । (मू०ग्रं०५२१) हउ करिहउ सु बखान जिउँ कथ आगे होइ

गोकुल में बलभद्र जी का आगमन

॥ चौपाई ॥ उसका उद्धार कर प्रभु घर पर आये और उन्होंने बलराम को गोकुल भेज दिया। गोकुल आकर उन्होंने नन्द बाबा के चरण छुए जिससे उन्हें अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ और उनका शोक समाप्त हो गया ॥ २२५२ ॥ ॥ सवैया ॥ नन्द के चरण स्पर्श करने के बाद हलधर यशोदा के स्थान पर पहुँचे और उन्हें देखकर चरणों पर शीश झुकाया। माँ ने गले से लगाते हुए और रोते हुए पुत्र से कहा कि कभी तो श्रीकृष्ण जी ने हमारी खोज-खबर ली ॥ २२५३ ॥ ॥ कवित्त ॥ गोपियों ने जब यह सुना कि बलराम आये हैं तो उन्होंने यह जाना कि श्रीकृष्ण भी आये होंगे और यह सोचकर वे माँग में सिन्दूर, बेसर, बिन्दी, आभूषण और नेत्रों में अंजन धारण करने लगीं। वे बिजली के समान दमकने लगीं और माता-पिता एवं भाइयों की लज्जा को त्यागकर बलराम के पैरों पर गिरकर कहने लगीं कि हे बलराम ! हम तुम्हारे पाँव पड़ती हैं, हमें श्रीकृष्ण के बारे में कुछ तो बताओ ॥ २२५४ ॥ ॥ कबि उवाच ॥ ॥ सोरठा ॥ बलराम ने सब गोपियों का सम्मान किया और जिस प्रकार यह कथा आगे चली अब मैं उसका वर्णन करता हूँ २२५५

है ॥ २२५५ ॥ ॥ सवैया ॥ एक समै मुसलीधर ताही कै आनंद सो इक खेलु मचायो । याही के पीवन को मदरा हित स्याम जलाधिप देकै पठायो । पीवत भ्यो तब सो मुसली मदिमत्ति भयो मन मै सुख पायो । नीर चह्यो जमना कियो मान सु ऐंच लई हलि सिउ कबि गायो ॥ २२५६ ॥ ॥ जमना बाच हली सो ॥ ॥ सोरठा ॥ लेहु हली तुम नीरु बिनु दीजै नह दोश दुख । सुनहु बात रनधीर हउ चेरी जदुराइ की ॥ २२५७ ॥ ॥ सवैया ॥ दुइ ही सु मास रहे तिह ठौं फिर लेन बिदा चल नंद पै आए । फेर गए जसुधा हू के मंदर ता पग पै इह माथ छुहाए । मागत भ्यो जबही सु बिदा तब शोक कियो दुह नैन बहाए । कीनो बिदा फिर यौ कहि कै तुम यौ कहियो हरि किउ नही आए ॥२२५८॥ ॥ सवैया ॥ नंद ते लै जसुधा ते बिदा चड़ि स्यंदन पै बलभद्र सिधायो । लाँघत लाँघत देश कई नग अउर नदी पुर के निजकायो । आ पहुँच्यो ब्रिप के पुर के जन काहू ते यौ हरिजू सुन पायो । आपहु स्यंदन पै चड़ कै अति भ्रात सो हेत कै आगे ही आयो ॥२२५९॥ ॥ दोहरा ॥ अंक भ्रात दोऊ मिलै अति पायो सुख चैन । मदरा पीवत अति हसति आए अपने ऐन ॥ २२६० ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे बलभद्र गोकल बिखै जाइ कर आवत भए ॥

॥ सवैया ॥ एक बार बलराम ने एक खेल किया । वरुण ने इनके पीने के लिये मदिरा भेजी जिसे पीकर ये मदमस्त हो गये । यमुना ने इनके सामने कुछ गर्व किया तो इन्होंने अपने हल से यमुना के पानी को खींच लिया ॥२२५६॥ ॥ यमुना उवाच हलधर के प्रति ॥ ॥ सोरठा ॥ हे बलराम ! तुम जल ले लो, इसमें कोई दोष या दुःख मुझे नहीं है । परन्तु हे रणधीर ! तुम मेरी बात सुनो, मैं केवल श्रीकृष्ण की दासी हूँ ॥२२५७॥ ॥ सवैया ॥ दो माह तक बलराम वहाँ रहे और फिर विदा लेने के लिए नन्द और यशोदा के निवास पर गए । जब इन्होंने चरणों पर मस्तक रख करके विदा माँगी तो दोनों ने शोकपूर्ण होकर आँखों से आँसू बहाए तथा उसे विदा देते हुए कहा कि श्रीकृष्ण से पूछना कि वे स्वयं क्यों नहीं आए ॥ २२५८ ॥ ॥ सवैया ॥ नन्द और यशोदा से विदा लेकर रथ पर सवार होकर बलराम चल पड़े और कई देशों, पर्वतों, नदियों को पार करते हुए अपने नगर को आ पहुँचे । इनके आने का समाचार जब श्रीकृष्ण जी ने सुना तो स्वयं रथ पर सवार होकर इनकी अगवानी करने के लिए चल पड़े ॥ २२५९ ॥ ॥ दोहा ॥ दोनों भा

सुखपूर्वक गले मिले और वारुणी पान करते हुए तथा हँसते हुए अपने घर आ गये ।। २२६० ।।

।। श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में बलभद्र का गोकुल में जाकर वापस आना समाप्त ।।

अथ स्त्रिगाल को दूत भेजबो जु हउ क्रिशन हो कथनं ।।

।। दोहरा ।। दोऊ भ्रात अति सुख करत निज ग्रहि पहुचे आइ । पउडरीक की इक कथा सो मै कहत सुनाइ ।। २२६१ ।। ।। सवैया ।। दूत स्त्रिगाल पठ्यो हरि कउ कहिहो हरि हउ तुहि किउ कहिवायो । भेख सोऊ करि दूर सभै कबि स्याम अबै जो तै भेख बनायो । तै रे गुआर है गोकल नाथ कहावत है डरु तोहि न आयो । कै इह दूत को मान कह्यो नही पेख हो लीने सभै बल आयो ।। २२६२ ।। ।। सोरठा ।। क्रिशन न मानी बात जो तिह दूत उचारयो । कही जाइ तिन बात पत आपन चड़ि आइयो ।। २२६३ ।। ।। सवैया ।। काशी के भूपति आदिक भूपन कउ सु स्त्रिगालहि सैन बनायो । स्री ब्रिजनाथ इतै अति ही मुसलीधर आदिक (मू०ग्रं०५४०) सैन बुलायो । जादव अउर सभै संग लै हरि सो हरि जुद्ध मचावन आयो । आइ दुहू दिस ते प्रगटे भट यौ कहि कै कबि

श्रृगाल का दूत द्वारा संदेश भेजना कि "मैं कृष्ण हूँ"

।। दोहा ।। दोनों भाई सुखपूर्वक अपने घर आ पहुँचे और अब मैं पौंड्रक की कथा कहता हूँ ।। २२६१ ।। ।। सवैया ।। श्रृगाल ने श्रीकृष्ण के पास दूत भेजकर कहलवाया कि मैं कृष्ण हूँ और तुम अपने-आपको कृष्ण (वासुदेव) क्यों कहलाते हो । जो तुमने वेष बना रखा है उसका त्याग करो और तुम केवल ग्वाले हो, तुम्हें अपने आप को गोकुलनाथ (कृष्ण) कहलाते हुए क्या डर नहीं लगता । दूत से यह भी कहला भेजा कि या तो वह इस दूत की कोई भी बात का मान रखे अन्यथा मेरी सेना उस पर चढ़ाई कर देगी ।। २२६२ ।। ।। सोरठा ।। दूत की कही बात को कृष्ण ने नहीं माना और दूत के इस कथन पर राजा ने श्रीकृष्ण पर चढ़ाई कर दी ।। २२६३ ।। ।। सवैया ।। काशी के एक नरेश तथा अन्य राजाओं को साथ लेकर श्रृगाल ने सेना इकट्ठी की और इधर श्रीकृष्ण ने बलराम आदि को साथ लेकर सेना एकत्र की अन्य यादवों को साथ लेकर श्रीकृष्ण पौंडक से युद्ध करने के लिए चल पड़े और इस

स्याम सुनायो ॥ २२६४ ॥ ॥ सवैया ॥ सैन जबै दुहू ओरन की जु दई अब आपसि बीच दिखाई । मानहु मेघ प्रलै दिन के उमडे दोऊ इउ उपमा जिय आई । बाहर ह्वै ब्रिजनाइक सैन ते सैन दुहू इह बात सुनाई । ठाढे रहै दोऊ सैन दोऊ हम मांडि है या भुअ बीच लराई ॥२२६५॥ ॥ सवैया ॥ या घनिस्याम कहा यौं सुनो सभ मैहो ते तैं घनिस्याम कहायो । याही ते सैन स्रिगाल लै आयो है हउहू तबै दलु लै संगि धायो । काहे कउ सैन लरै दोऊ आप मै कउतक देखउ ठाढ सुनायो । याम भनै लरबो रन मै हमरो अरु याही ही को बनि आयो ॥ २२६६ ॥ ॥ दोहरा ॥ मान बात ठाँढै रहै सैन दोऊ तज क्रुद्ध । दोऊ हरि आवत भए हरि समान हित जुद्ध ॥ २२६७ ॥ ॥ सवैया ॥ आए है मत्ति करी जनु दुइ लरबे कहु सिंघ दोऊ जन आए । अंतकि अंत समै जनु ईस सपच्छ मनो गिर जूझन धाए । कै दोऊ मेघ प्रलै दिन के निध नीर दोऊ किधो क्रोध बढाए । मानहु रुद्रहि क्रोध भरे दोऊ है मन मै लखियो कबि पाए ॥ २२६८ ॥ ॥ कबितु ॥ जैसे झूठ साच सों पखान जैसे काच सों अउ पारा जैसे आँच सों पतउआ

प्रकार दोनों ओर के शूरवीर युद्धस्थल में इकट्ठा हो गए ॥ २२६४ ॥ ॥ सवैया ॥ दोनों तरफ़ की एकत्र सेना इस प्रकार लग रही थी मानो प्रलय-कालीन बादल उमड़ रहे हों। श्रीकृष्ण ने दोनों सेनाओं से अलग हटकर ललकारते हुए कहा कि दोनों सेनाएँ खड़ी रहें और इस युद्धस्थल पर हम दोनों (कृष्ण और पौंड्रक) लड़ाई करेंगे ॥ २२६५ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने यह कहा कि मैं अपने आपको घनश्याम कहलाता हूँ। इसीलिए शृगाल सेना लेकर चढ़ आया है और मैं भी सेना लेकर यहाँ पहुँचा हूँ। दोनों सेनाएँ आपस में क्यों लड़ें। ये सब खड़े होकर देखें और मेरा और पौंड्रक का युद्ध करना ही उचित होगा ॥ २२६६ ॥ ॥ दोहा ॥ बात मानकर दोनों सेनाएँ क्रोध को त्यागकर खड़ी रहीं और दोनों वासुदेव युद्ध करने के लिए आगे बढ़े ॥ २२६७ ॥ ॥ सवैया ॥ वे ऐसे लग रहे थे कि मानो दो मस्त हाथी या दो सिंह आपस में लड़ने के लिए आए हों, प्रलयकाल में मानो पर्वत पंख लगा कर एक-दूसरे से लड़ने के लिए उड़ रहे हों, अथवा प्रलयकाल में बादल समुद्र की तरह क्रोधित होकर गरज-बरस रहे हों। वे ऐसे लग रहे थे कि मानो रुद्र क्रोध से भरे दिखाई दे रहे हों ॥ २२६८ ॥ ॥ कवित्त ॥ जिस प्रकार झूठ सत्य के सामने शीशा पत्थर के सामने पारा अग्नि के सामने पत्ता महर

जिउँ लहरि सों। जैसे ग्यान मोह सों बिबेक जैसे द्रोह सों तपस्सी दिज द्रोह सों अनर जैसे नर सों। लाज जैसे काम सों सु सीत जैसे घाम सों अउ पाप रामनाम सों अछर जैसे छर सों। सूमता जिउँ दान सों जिउँ क्रोध मदमान सों सु स्याम कबि ऐसे आइ फिर्‌यो हरि हरि सों ॥ २२६९ ॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध भयो अति ही सु तहाँ तब स्री ब्रिजनाइक चक्र सँभार्‌यो। मारत हउ तुहि ए रे स्रिगाल मै स्याम भनै इम स्याम पचार्‌यो। छोर सुदरशन देत भयो सिर शत्र को मार जुदा करि डार्‌यो। मानहु कुम्हार लै तागहि को चक ते फुन बासन काट उतार्‌यो ॥ २२७० ॥ देखि स्रिगाल हन्यो रन मै इक काशी को भूप हुतो सोऊ धायो। स्री ब्रिजनाथ सो स्याम भनै अति ही तिह आइ कै जुद्ध मचायो। मार मची अति जो तिह ठाँ सु तबै इह स्याम जू चक्र चलायो। (मू०ग्रं०५४१) जिउँ अरि आगल को कट्‌यो सीसु तिही बिध याही को काटि गिरायो ॥ २२७१ ॥ स्री ब्रिजनाइक जू जब ए दोऊ सैन के देखत कोप सँघारे। फूल भई मन सभनन के तब बाज उठी सहिनाइ नगारे। अउर जिते अरि बीर हुते सभ आपने आपने

के सामने नहीं टिक सकता; जैसे मोह ज्ञान के सामने और द्रोह विवेक के सामने, अभिमान तपस्वी ब्राह्मण के सामने और पशु मनुष्य के सामने नहीं टिक सकता; जैसे लज्जा काम के सामने, शीत गर्मी के सामने, पाप राम-नाम के सामने और अस्थायी पदार्थ स्थायी पदार्थ के सामने, कृपणता दान के सामने और क्रोध आदर के सामने नहीं टिक सकता, उसी प्रकार एक-दूसरे के विरोधी गुणों वाले ये दोनों वासुदेव आपस में भिड़ गए ॥ २२६९ ॥ ॥ सवैया ॥ जब वहाँ भीषण युद्ध हुआ तब अंत में श्रीकृष्ण ने चक्र सँभालते हुए शृगाल को ललकारा और कहा कि मैं तुम्हारा वध कर रहा हूँ। उन्होंने अपना सुदर्शन चक्र छोड़ा और उसने शत्रु के सिर को काटकर ऐसे अलग कर डाला, मानो कुम्हार ने घूमते हुए चाक से धागे की सहायता से बर्तन को काटकर अलग कर दिया हो ॥ २२७० ॥ शृगाल को मरा हुआ देखकर काशी का एक राजा आगे बढ़ा और उसने श्रीकृष्ण से भीषण युद्ध किया। वहाँ भीषण मार-काट मच गई और तब यहाँ भी श्रीकृष्ण ने चक्र चलाकर जिस प्रकार पहले राजा का सिर काटा था इसका भी सिर काट गिराया ॥ २२७१ ॥ श्रीकृष्ण को इन दोनों सेनाओं ने क्रोध से नरसंहार करते हुए देखा। सब प्रसन्न हो उठे और शहनाइयाँ तथा नगाड़े बजने लगे शत्रु-सेना के सभी वीर अपने-अपने

धाम सिधारे । फूल परे नभमंडल ते घनि जिउं घनिस्याम पै स्याम उचारे ॥ २२७२ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे सिगाल कांसी के भूप सहत बधह धिआइ संपूरनं ॥

अथ सुदच्छ जुद्ध कथनं ॥

॥ सवैया ॥ सैन भज्यो जब शत्रन को तब आपने सैन मै स्याम जू आए । आवत देव हुते जितने तितने हरि पाइन सो लपटाए । दै कै प्रदच्छन स्याम सभो तिन संख बजाइ कै धूप जगाए । स्याम भनै सभहू मन मै ब्रिजनाइक बीर सही कर पाए ॥ २२७३ ॥ उत कै उपमा ग्रहि दच्छ गए इति द्वारवती ब्रिजनाइक आयो । जाइ उतै सिर भूप को कांशी के बीच पर्यो पुर शोक जनायो । भाखत भे सभ यौ बतिया सोई यौ कहिके कबि स्याम सुनायो । स्याम जू सौ हमरे जैसे भूपत काज कियो फलु तैसोई पायो ॥ २२७४ ॥ जा चतुरानन नारद कौ शिव कौ उठ कै जग लोकु धिआवै । नार निवाइ भले तिन कौ फुन संख बजाइकै धूप जगावै । डार कै फूल

घरों को चले गए और आकाश से श्रीकृष्ण पर बादलों के समान पुष्प-वर्षा होने लगी ॥ २२७२ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में शृगाल का काशी के राजा सहित बध-अध्याय समाप्त ॥

सुदक्ष-युद्ध-कथन

॥ सवैया ॥ जब शत्रु की सेना भाग खड़ी हुई तब कृष्ण अपनी सेना में आए । वहाँ जितने देवता थे वे इनके चरणों से लिपट गए । उन्होंने श्रीकृष्ण की परिक्रमा करके शंख आदि बजाकर, धूप-अगरबत्ती जलाकर श्रीकृष्ण को वास्तविक वीर के रूप में पहचाना ॥ २२७३ ॥ उधर दक्ष गुणानुवाद करके अपने घर गए और इधर श्रीकृष्ण द्वारिका में आ गए । उधर काशी में राजा का कटा हुआ सिर लेकर लोगों ने शोक मनाया । लोग इस प्रकार बात करने लगे कि हमारे राजा ने जो व्यवहार श्रीकृष्ण के साथ किया उसी का यह फल इसे प्राप्त हुआ ॥ २२७४ ॥ जिस ब्रह्मा, नारद, शिव का लोग ध्यान करते हैं और धूप शंख आदि से सिर झुकाते हुए जिनकी

भली बिध सौ कबि स्याम भनै तिह सो सिर नावैं । ते ब्रिजनाथ के साधन को गुन गावत गावत पार न पावैं ।। २२७५ ।। ।। स्वैया ।। काँशी के भूप को पूत सुदच्छन ता मन मै अति क्रोध बढायो । मेरे पिता को कियो बधु जाइ हउ ताहि हनो चित बीच बसायो । सेव करी शिव की हित सौ तिह गाल बजाइ प्रसंन करायो । स्याम हनो झट दै छिन मै तिन स्याम भनै तट दै बरु पायो ।। २२७६ ।। ।। रुद्र बाच दच्छ सो ।। ।। चौपई ।। तब शिव जू फिर यौ उचरो । हरि के बध हित होमहि करो । ताते मूरति एक निकरिहै । सो हरि जी के प्रानन हरिहै ।। २२७७ ।। ।। दोहरा ।। एक कहो तिह जुद्ध मै जो कोऊ बिमुख कराइ । ता पै बलु नहि चलि सकै तुम मारै फिरि आइ ।। २२७८ ।। (मू०ग्रं०५४२) ।। सवैया ।। ऐसे सुदच्छन को जब ही कबि स्याम भनै ऐसे रुद्र बखान्यो । सो उन काज कियो उठकै अपने मन मै अति ही हरखान्यो । होम किओ तिन पावक मै घ्रित अच्छत कउ जैसे बेदन मान्यो । रुद्र को भाखबे को सु कछू कबि स्याम भनै जड़ भेद न जान्यो ।।२२७९।। तउ निकसी तिहते प्रतमा तिह देखत ही सभ कउ डरु आवै । कउन बली प्रगट्यो जग मै इह धावत अग्रज को ठहरावै ।

पूजा करते हैं, फूल, पत्ती से जिसके सामने सिर झुकाते हैं वे ब्रह्मा, नारद आदि भी श्रीकृष्ण का रहस्य नहीं समझ सके ।। २२७५ ।। ।। सवैया ।। काशी-नरेश के पुत्र सुदक्ष ने मन में अत्यन्त क्रोधित होकर यह सोचा कि जिसने मेरे पिता का वध कर दिया है मैं भी उसे मार डालूँगा । उसने मनोयोग से शिव की सेवा की और उसे प्रसन्न करते हुए क्षण भर में श्रीकृष्ण को मार डालने का वरदान प्राप्त कर लिया ।। २२७६ ।। ।। रुद्र उवाच सुदक्ष के प्रति ।। ।। चौपाई ।। तब शिव ने फिर यह कहा कि कृष्ण के वध के लिए तुम होम करो । उसमें से एक मूर्ति निकलेगी जो कृष्ण के प्राण हर लेगी ।। २२७७ ।। ।। दोहा ।। युद्ध में यदि कोई उसको विमुख करके पीछे धकेल देगा तो वह शक्ति तुमको ही आकर मार डालेगी ।। २२७८ ।। ।। सवैया ।। सुदक्ष को जब रुद्र ने यह कहा तो वह प्रसन्न हो उठा और उसने रुद्र के कथनानुसार कार्य किया । वेद-विधि के अनुसार उसने अग्नि, घी तथा अक्षत आदि-सहित हवन किया । उस मूर्ख ने रुद्र के कहने का रहस्य नहीं समझा ।। २२७९ ।। उस होम से एक प्रतिमा निकली जिसे देखते ही सबको डर लगने लगा । कौन ऐसा बली इस संसार में है जो इसके सामने ठहर सके वह मूर्ति क्रोध

ठाढी भई करि लै कै गदा अति रोसकै दाँत सो दाँत बजावै । ऐसे लख्यो सभहूँ इह ते ब्रिजनाइक जीवत जान न पावै ।। २२८० ।। ।। चौपई ।। तब दिस द्वारवती को धाई । अति चिति अपने क्रोध बढाई । स्री ब्रिजनाथ इतै सुन पायो । एक तेज कोऊ हम पै आयो ।। २२८१ ।। जो इह के फुन अग्रज आवै । सो सभ भसम होत ही जावै । जो इन संग माँड रन लरै । सो जमलोक पयानो करै ।। २२८२ ।। ।। सवैया ।। जो उह के मुख आइ गयो प्रभ सो उनहू छिन माहि जरायो । यौ सुनि बात चड्यो रथ पै हरि ताही की सामुहि चक्र चलायो । चक्र सुदरशन के तिन अग्रज ताही को पउरख नैकु बसायो । अंत खिसाइ चली फिरकै कबि स्याम कहै सोऊ भूपति घायो ।।२२८३।। ।। कबियो बाच ।। ।। सवैया ।। स्री ब्रिजनाइक को जिनहू कबि स्याम भनै नहि ध्यान लगायो । अउर कहा भयो जउ गुन काहू को गावत है गुन स्याम न गायो । अउर कहा भयो जउ जगदीश बिना सु गनेश महेश मनायो । लोक परलोक कहै कबि स्याम सदा तिह आपनो जन्म गवायो ।। २२८४ ।।

।। इति स्री बचित्र नाटके मूरत सुदच्छन भूप सुत को बधहि समापतं ।।

से दाँत किटकिटाते हुए भारी गदा लेकर खड़ी हो गई और सबने यह समझा कि अब श्रीकृष्ण जीवित नहीं जाने पावेंगे ।। २२८० ।। ।। चौपाई ।। तब वह मूर्ति चित्त में अत्यन्त क्रोधित हो द्वारिका की तरफ़ चल पड़ी । इधर श्रीकृष्ण ने सुना कि कोई तेज मेरे लिए चला आ रहा है ।। २२८१ ।। जो इसके सामने आएगा वह सब भस्म हो जाएगा । जो इसके साथ युद्ध करेगा वह यमलोक पहुँच जाएगा ।। २२८२ ।। ।। सवैया ।। जो उसके सामने आता है वह क्षण भर में जल जाता है । यह बात सुन श्रीकृष्ण रथ पर चढ़े और उसकी तरफ़ उन्होंने चक्र चला दिया । सुदर्शन चक्र के सामने उसका पौरुष क्षीण-सा लग रहा था । वह अन्ततः खिसियाकर वापस चली गई और उसने राजा सुदक्ष का नाश कर दिया ।।२२८३।। ।। कवि उवाच ।। ।। सवैया ।। श्रीकृष्ण का जिसने स्मरण नहीं किया और क्या हुआ यदि वह अन्यों के गुण गाता रहा तथा श्याम के गुण उसने नहीं गाए तथा परमात्मा के बिना गणेश और महेश की मनौतियाँ मानता रहा । ऐसे व्यक्ति ने तो कवि श्याम के कथन के अनुसार लोक-परलोक और अपना जन्म व्यर्थ ही गँवा दिया है ।। २२८४ ।।

श्री बचित्र नाटक में मूर्ति सुदक्ष राजा का वध समाप्त ।

अथ कप बध कथनं ॥

॥ सवैया ॥ सोऊ जीत कै छोर दयो रन मै न्रिप जो रन ते कबहू न टरै । दई काट सहस्र भुजा तिह की जिह ते फुन चउदह लोक डरै । करि कंचन धाम दए तिह को दिज माँग सदा जोऊ पेट भरै । फुन राखकै लाज लई द्रुपती ब्रिजनाथ बिना ऐसी कउन करै ॥ २२८५ ॥ ॥ चौपई ॥ रेवत नगर हलधर जू गयो । त्रिय संगि लै हुलास चित भयो । सभन तहा मिल मदरा पियो । गावत भयो (मू०ग्रं०५४१) उमग कै हियो ॥ २२८६ ॥ इक कप हुतो तहा सो आयो । मदरा सकल फोर घट ग्वायो । फाधत भयो रतीकु न डर्यो । मुसलीधर अति क्रोधहि भर्यो ॥ २२८७ ॥ ॥ दोहरा ॥ उठ ठाढो मुसली भयो दोऊ अस्त्र सँभार । जिउँ कप नाचत फिरत थो छिन मै दयो सँघार ॥ २२८८ ॥

॥ इति कप को बलभद्र बध कीबो समापत ॥

वानर-वध-कथन

॥ सवैया ॥ युद्ध में न टलनेवाले राजाओं को भी जीतकर छोड़ दिया गया। जिससे चौदह लोक डरते थे उसकी सहस्र भुजाएँ भी काट डाली गयीं। जो ब्राह्मण (सुदामा) माँगकर गुज़ारा करता था उसको स्वर्ण के घर दे दिए गए और पुन: द्रौपदी की लाज भी बचाई गई। यह सब श्रीकृष्ण के बिना अन्य कौन कर सकता है ॥ २२८५ ॥ ॥ चौपाई ॥ बलराम अपनी पत्नी के साथ प्रसन्नतापूर्वक रेवत नामक नगर में गए। वहाँ उन सबने मिलकर मदिरा-पान किया और प्रसन्न हो नृत्य-गान आदि किया ॥ २२८६ ॥ वहाँ एक वानर आया और उसने मदिरा से भरे घड़ों को फोड़ दिया। वह अभय हो इधर-उधर कूदने लगा और इस सबसे बलराम क्रोधित हो उठे ॥ २२८७ ॥ ॥ दोहा ॥ अपने अस्त्रों को सम्हालकर बलराम उठ खड़े हुए और नाचते-कूदते वानर को क्षण भर में मार डाला ॥ २२८८ ॥

॥ वानर का वध बलभद्र ने किया समाप्त ॥

गजपुर के राजा की दुहता साबर बरी ॥

॥ सवैया ॥ बीर गजापुर के रुच सो दुहता को द्रुजोधन ब्याह रचायो । भूप जिते भुअमंडल के तिन कउतक हेरबे काज बुलायो । अंध के पूतहि ब्याह रच्यो सो सु ताही को द्वारवती सुन पायो । सांब हुतो इक कान्ह को बालक जांबवती हूं ते सो चलि आयो ॥ २२८९ ॥ गहि कै बहिया पुन भूप सु ताहू को स्यंदन भीतर डार सिधार्‌यो । जो भट ताहि सहाइके काज लर्‌यो सोऊ एक ही बान सो मार्‌यो । धाइ परो छि रथी मिलिकै सु घनो दलु लै जब भूप पचार्‌यो । जुद्ध भयो तिह ठउर घनो सोऊ यौ मुख ते कबि स्याम उचार्‌यो ॥ २२९० ॥ पारथ भीखम द्रोण क्रिपारु क्रिपी सुत कोप भर्‌यो मन मै । अरु अउर सु करन चल्यो रिस सो अकटो धर कउच तबै तन मै । छबि पावत भ्यो कबि स्याम भनै सोऊ यौ इन सूरन के गन मै । जिम सूरज सोभत दिवतन मै इह सो छब पावत भ्यो रन मै ॥ २२९१ ॥ ॥ स्वैया ॥ जंग भयो जिह ठउर निशंग सु छूटत भे दुहू ओर ते भाले । धाइन लाग भजे भट यौ मनो खाइ चले ग्रहि के सु निवाले । बीर फिरै अति घूमति

गजपुर के राजा की कन्या का वरण

॥ सवैया ॥ गजपुर के राजा की कन्या से विवाह करने का दुर्योधन ने उपक्रम किया और भूमण्डल के सारे राजाओं को यह विवाह-लीला देखने के लिए बुलाया । धृतराष्ट्र के पुत्र ने विवाह का कार्यक्रम बनाया है इसकी खबर द्वारिका में पहुँची । कृष्ण का एक बालक साम्ब नाम का था वह भी अपनी माँ जाम्बवती के पास से इस विवाह के लिए चल पड़ा ॥ २२८९ ॥ साम्ब ने राजा की कन्या की बाँह पकड़कर उसे अपने रथ में डाल लिये और जो वीर उसकी सहायता में थे उन सबको एक ही बाण से मार डाला । जब राजा ने ललकारा तो छः रथी मिलकर टूट पड़े और वहाँ पर घनघोर युद्ध हुआ ॥ २२९० ॥ अर्जुन, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य आदि क्रोध से भर उठे । कर्ण भी अकाट्य कवच धारण कर चला । वह इन शूरवीरों में अत्यन्त शोभायमान हो रहा था और ऐसा लग रहा था मानो देवताओं में सूर्य चमक रहा हो २२९१ सवैया । वहाँ भयंकर युद्ध हुआ तथा दोनों ओर से भाले आदि चलने लगे शूरवीर घायल हो ऐसे भाग रहे थे मानो घर में

ही सु मनो अति पी मदरा मतवाले । बासन ते धन अउर निखंग फिरै रन बीच खतंग पिआले ।। २२६२ ।। सांब सरासन लै कर मै बहु बीर हने तिह ठउर करारे । एकन के बिब पाग कटे अरु एकन के सिर ही कटि डारे । अउर निहार भजे भट यौ उपमा तिन की कबि स्याम उचारे । साध की संगत पाइ मनो जनु पुंनि के अग्रज पाप पधारे ।। २२६३ ।। ।। सवैया ।। एकन की दई काट भुजा अरु एकन के करि ही कटि डारे । एक कटे अधबीच हुते रथ काटि रथी बिरथी करि मारे । सीस कटे भट ठाढे रहे इक स्रोण उठ्यो (मू०ग्रं०५४४) छबि स्याम उचारे । बीरन को मनो बाग बिखै जन छूटे है एसु अनेक फुहारे ।। २२६४ ।। स्री जदुबीर के पुत्र जबै बहु बीर हने रन मै चहिकै । इक भाज गए न मुरे बहुरो इक घाइन आइ परे सहिकै । बहु हुइ कै निरायुध ह्वै इह कै हम राखहु पाइ परो कहि कै । इक ठाढे भए घिघियात बली तिन को तृहूँ दाँतन मै गहिहै ।। २२६५ ।। ।। स्वैया ।। जुद्ध कियो सुत कान्ह इतो नहि हुइकै कबै किनहूँ नही कीनो । द्वै घटि आठ रथी बलवंड तिनो हुते एक बली नही हीनो । सो मिलिकै

भोजन करने के लिए दौड़ रहे हों। सभी वीर ऐसे लग रहे थे मानो मदिरा पी मतवाले होकर घूम रहे हों। धनुष-बाण ही उनके पात्र बने थे और भाले ही उनके प्याले ।। २२६२ ।। साम्ब ने हाथ में धनुष ले बहुत से वीरों को मारा। कइयों की पगड़ियाँ और सिर काट डाले। कई वीर देखकर इस तरह भाग खड़े हुए जैसे साधु की संगति से पुण्य के सामने पाप भाग खड़ा होता है ।। २२६३ ।। ।। सवैया ।। किसी की भुजा और किसी का हाथ काट डाला गया। कइयों को बीचोबीच से दो टुकड़े कर दिया गया और कइयों के रथों को काटकर उन्हें रथविहीन कर दिया गया। सिर-कटे वीर खड़े थे और उनके धड़ से रक्त इस प्रकार उछल रहा था जैसे उद्यानों में पानी के फौव्वारे उछल रहे हों ।। २२६४ ।। श्रीकृष्ण के पुत्र ने इस प्रकार जब युद्ध में बहुत से वीरों को मार डाला तो बहुत से वीर भाग खड़े हुए और बहुत से घायल होकर तड़पने लगे। बहुत से शस्त्र-विहीन होकर पाँव पकड़कर सुरक्षा की भिक्षा माँगने लगे और बहुत से वीर दाँतों में घास के तिनके पकड़कर खड़े होकर गिड़गिड़ाने लगे ।। २२६५ ।। ।। सवैया ।। श्रीकृष्ण के सुपुत्र ने अभूतपूर्व युद्ध किया। वह उन छः रथियों से बल में किसी प्रकार भी कम नहीं था। परन्तु वे भी क्रोधित हो सभी मिलकर श्रीकृष्ण के पुत्र

करि कोप परे सुत कान के ऊपर जान न दीनो । रोस बढाइ मचाइकै मार हकार कै केसन ते गहि लीनो ॥ २२९६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ इन बीरन की जब जीत भई । दुहता तब भूप की छीन लई । सोऊ छीन कै मंदरि आन धरी । दुबिधा मन की सभ दूरि करी ॥ २२९७ ॥ ॥ चौपई ॥ इतै द्रुजोधन हरख जनायो । उत हलधर हरि जू सुन पायो । सुन बसुदेव क्रोध अति भरि कै । स्याम भनै मूछहि रह्यो धरि कै ॥ २२९८ ॥ ॥ बसुदेव बाच ॥ ॥ चौपई ॥ तिह सुध कउ कोऊ दूत पठय्यै । पौत्र सोध कौ बेग मँगय्यै । मुसलीधर तिह ठउर पठायो । चलि हलधर तिह पुर मै आयो ॥२२९९॥ ॥ सवैया ॥ आइस पाइ पिता को जबै चलिकै बलिभद्र गजापुर आयो । आइस ऐसे दयो हमरे त्रिप छोर इनै सुत अंध सुनायो । सो सुन बात रिसाइ गयो ग्रहि ते अपने इह ओज जनायो । ऐंच लयो पुर त्रास भर्यो सोऊ लै दुहिता इह पूजन आयो ॥ २३०० ॥ ॥ सवैया ॥ सांब सो ब्याह सुता को कियो दुरजोधन चित्त घनो सुख पायो । दान दयो जिह अंत कछू नहि बिप्रन को कहि स्याम सुनायो । भ्रात के पुत्र को संग हलायुध लै करि द्वारवती को सिधायो । स्याम

साम्ब पर टूट पड़े । क्रोधित होकर ललकारते हुए उन्होंने साम्ब के साथ युद्ध करते हुए उसे केशों से पकड़ लिया ॥ २२९६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ इन वीरों की जब विजय हो गई तो इन्होंने राजा की कन्या को छीन लिया । लड़की को पुनः घर में लाए और इस प्रकार परेशानी को दूर किया ॥२२९७॥ ॥ चौपाई ॥ इधर दुर्योधन प्रसन्न हुआ और उधर बलराम तथा श्रीकृष्ण ने यह सब सुना । वसुदेव क्रोध से भरकर अपनी मूँछों पर हाथ फेरने लगे ॥ २२९८ ॥ ॥ वसुदेव उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ उस तरफ कोई दूत भेजो और मेरे पौत्र की कोई खोज-खबर मँगाओ । बलराम को उधर भेजा गया और वहाँ जा पहुँचे ॥ ॥ २२९९ ॥ ॥ सवैया ॥ पिता की आज्ञा पाकर जब बलराम गजपुर पहुँचे तो इन्होंने दुर्योधन से अपने आने का मन्तव्य कहा और साम्ब को छोड़ देने के लिए कहा । यह बात सुनकर दुर्योधन क्षुब्ध हो उठा कि मेरे घर पर आकर ये मुझे अपनी शक्ति दिखा रहे हैं । परन्तु बलराम के भय ने सारे नगर को भयभीत कर दिया और दुर्योधन कन्या-सहित इनकी पूजा करने के लिए आ गया ॥ २३०० ॥ ॥ सवैया ॥ साम्ब से कन्या का विवाह कर दुर्योधन मन में प्रसन्न हुआ उसने विप्रों को अनन्त दान दिया ।

चरित्र उतै पिखबे कहु स्याम भनै चलि नारद आयो ॥ २३०१ ॥ (मू०ग्रं०५४५)

॥ इति स्री दसम सकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे द्रुजोधन की बेटी सांब को ब्याह लिआवत भए ॥

नारद को आइबो कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ नारद रुकमन के ग्रिथम ग्रहि मे पहुच्यो आइ । जहाँ कान्ह बैठो हुतो उठ लागो रिख पाइ ॥ २३०२ ॥ ॥ सवैया ॥ दूसरे मंदर भीतर नारद जात भयो तिह स्याम निहार्यो । अउर गयो ग्रहि स्याम तबै रिख आनंद ह्वै इह भाँति उचार्यो । पेख भयो सभहू ग्रहि स्याम सु यौ कबि स्यामहि ग्रंथ सुधार्यो । कान्हजू को मन मै मुन ईस सही करि कै जगदीश बिचार्यो ॥ २३०३ ॥ ॥ सवैया ॥ भाँति कहूँ कहूँ गावत है कहूँ हाथ लिए प्रभ बीन बजावै । पीवत है सु कहूँ मदरा अउ कहूँ लरकान को लाड लडावै । जुद्ध करै कहूँ मल्लन सो कहूँ नंदग हाथ लिए चमकावै । इउ हरि केल करै

अब बलराम अपने भतीजे को साथ लेकर द्वारका की तरफ चल पड़े और उधर यह सारी लीला देखने के लिए नारद भी आ पहुँचे ॥ २३०१ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में दुर्योधन की पुत्री साम्ब के साथ व्याह कर लाना समाप्त ॥

नारद-आगमन-कथन

॥ दोहा ॥ रुक्मिणी के घर में नारद आ पहुँचे जहाँ श्रीकृष्ण बैठे हुए थे । उन्होंने ऋषि के चरण स्पर्श किए ॥ २३०२ ॥ ॥ सवैया ॥ नारद को दूसरे घर में प्रवेश करते हुए श्रीकृष्ण ने देखा । तब श्रीकृष्ण भी घर में अन्दर गए जहाँ ऋषि ने आनन्दपूर्वक यह कहा कि हे कृष्ण ! मैं घर में तुम्हें सब ओर देख रहा हूँ । नारद मुनि ने श्रीकृष्ण को वास्तव में परमात्मा माना ॥ २३०३ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण कहीं पर गाते हुए और कहीं हाथ से वीणा-वादन करते हुए दिखाई दे रहे हैं । कहीं वे वारुणी-पान और कहीं लड़कों के साथ प्रेमपूर्वक खेलते दिख रहे हैं । कहीं मल्लों के साथ युद्ध कर रहे हैं और कहीं हाथ में गदा लेकर उसे घुमा रहे हैं । इस प्रकार श्रीकृष्ण यह लीला कर रहे हैं उस लीला के रहस्य को कोई समझ नहीं पा रहा

तिह ठाँ जिह कउतक को कोऊ पार न पावै ।। २३०४ ।।
।। दोहरा ।। यौ रिख देख चरित्र हरि चरन रह्यो लपटाइ ।
चलत भयो सभ जगत को कउतक देखो जाइ ।। २३०५ ।।

अथ जरासिंध बध कथनं ।।

।। सवैया ।। ब्रहम महूरत स्याम उठे उठ नाइ हिदै हरि ध्यान धरै । फिर संध्या कै रवि होत उदै सु जलांजलु दै अरु मंत्र ररै । फिर पाठ करै सति सय सलोक को स्याम निता प्रति पै न टरै । तब करमन कउन करै जग मै जब आप न स्याम जू करम करै ।। २३०६ ।। ।। सवैया ।। न्हाइकै स्याम जू लाइ सुगंध भले पट धारकै बाहरि आवै । आइ सिंघासन ऊपर बैठ कै स्याम भली बिधि न्याउ करावै । अउ सुखदेव को तात भला सु कथा करि स्री नंदलाल रिझावै । तउ लगि आइ कही बतिआ इक सो मुख ते कबि भाख सुनावै ।। २३०७ ।। ।। दूत बाच ।। ।। स्वैया ।। कान्ह जू जो तुम जीत कै भूपत छोरि दयो तिह ओज जनायो । पै दल तेइस छूहन लै संग तेइस बार सु जुद्ध मचायो । कान को अंत

है ।। २३०४ ।। ।। दोहा ।। इस प्रकार प्रभु के चरित्र देखकर मुनि उनके चरणों से लिपट गए और फिर सारे संसार की लीला देखने के लिए चल पड़े ।। २३०५ ।।

जरासंध-वध-कथन

।। सवैया ।। ब्रह्ममुहूर्त में उठकर श्रीकृष्ण ने परमात्मा का ध्यान किया । पुनः सूर्योदय होने पर जल-तर्पण एवं संध्या आदि करके मंत्र-पाठ किया और नित्य की भाँति सप्तशती का पाठ किया । भला यदि श्रीकृष्ण जी नित्य-कर्म नहीं करेंगे तो संसार में अन्य कौन करेगा ।।२३०६।। ।। सवैया ।। श्रीकृष्ण जी स्नान कर, सुगन्ध आदि लगाकर, वस्त्र धारण कर बाहर आते हैं और सिंहासन पर बैठकर भली प्रकार न्याय आदि करते हैं । शुकदेव के पिता भली प्रकार श्रीनन्दलाल को कथा सुनाकर प्रसन्न करते थे । तब तक एक दिन एक दूत ने आकर जो उनसे कहा वह कवि कहकर सुना रहा है ।। २३०७ ।। ।। दूत उवाच ।। ।। सवैया ।। हे श्रीकृष्ण ! जिस राजा (जरासंध) को आपने छोड़ दिया था, वह फिर से बल-प्रदर्शन कर रहा है

भजाइ रह्यो मथुरा के बिखै रहने हू न पायो । बेच कै खाई है लाज मनो तिन यौ जड़ आपन को गरबायो ॥२३०८॥ (मू०ग्रं०५४६)

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे कथनं ॥

अथ दिल्ली को आवन राजसूइ जग्ग करन कथनं ॥

॥ दोहरा ॥ तब लउ नारद क्रिशन की सभा पहूच्यो आइ । दिल्ली कौ ब्रिजनाथ को लै चलिओ संग ल्वाइ ॥२३०९॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथ कही सभ सौ हम दिल्ली चलै किधो ताही को मारै । जो मत वारन के मन भीतर आवत है सोऊ बात बिचारै । ऊधव ऐसो कह्यो प्रभ जू प्रिथमै फुन दिल्ली की ओर सिधारै । पारथ भीम को लै संग आपने तौ तिह शत्र को जाइ सँघारै ॥ २३१० ॥ ॥ सवैया ॥ ऊधव जो सभ शत्र कउ मारि कह्यो सु सभै हरि मान लयो । रथपति भले गज बाजन के ब्रिजनाइक सैन भले रचयो । मिलि टाँक अफीमन भाँग चड़ाइ सु अउ मदरा सुख मान पियो । सुध कैबे कउ नारद भेज दयो कह्यो ऊधव सो मिल काज कयो ॥ २३११ ॥

उसकी तेईस अक्षौहिणी सेना के साथ आपने तेईस बार युद्ध किया था और उसने अन्ततः श्रीकृष्ण को मथुरा से भगा दिया था । उस मूर्ख ने मानो अब लज्जा को भी बेच खाया है और वह जड़ घमंड में आ गया है ॥ २३०८ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार का कथन समाप्त ॥

दिल्ली आना और राजसूय यज्ञ-वर्णन

॥ दोहा ॥ तब तक नारद श्रीकृष्ण की सभा में आ पहुँचे और उन्हें लेकर दिल्ली की तरफ़ चल पड़े ॥ २३०९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण ने सबसे कहा कि हम उसी जरासंध को मारने के लिए दिल्ली की तरफ़ जा रहे हैं और जो बात हमारे मतवाले वीरों के मन में आई है उसी का विचार कर हम जा रहे हैं । उद्धव ने भी लोगों को यही समझाया कि अर्जुन और भीम को साथ लेकर श्रीकृष्ण शत्रु का संहार करेंगे ॥ २३१० ॥ ॥ सवैया ॥ उद्धव ने शत्रु मारने की जो बात कही उसे सबने मान ली । रथियों, हाथियों और घोड़ों को साथ ले श्रीकृष्ण ने सेना बनाई और अफ़ीम, भाँग तथा मदिरा का सुखपूर्वक उपभोग किया । नारद को खबर देने के लिए उद्धव के साथ पहले ही दिल्ली भेज दिया ॥ २३११ ॥ ॥ चौपाई ॥ सारी सेना सज-धजकर दिल्ली

॥ चौपई ॥ दिल्ली सज सभ ही दल आए । कुंती सुत पाइन लपटाए । जदुपति की अति सेवा करी । सभ मन की चिंता परहरी ॥ २३१२ ॥ ॥ सोरठा ॥ कही जुधिश्टर बात इक प्रभ हउ बिनती करत । जो प्रभ स्रवन सुहात राजसूअ तब मै करो ॥२३१३॥ ॥ चौपई ॥ तब जदुपति इह भाँति सुनायो । मै इह कारज ही कउ आयो । पहिले जरासिंध कउ मारै । नाम जग्य को बहुर उचारै ॥ २३१४ ॥ ॥ सवैया ॥ भीम पठ्यो तब पूरब को अरु दच्छन को सहदेव पठायो । पच्छम भेजत मे नुकलक्कहि बिउत इहै न्रिप जग्य बनायो । पारथ ग्यो तब उत्तर कौ न बच्यो जिह या संग जुद्ध मचायो । जोर घनो धनु स्याम भनै सु दिलीपति पै चलि अरजन आयो ॥ २३१५ ॥ ॥ सवैया ॥ पूरब जीत कै भीम फिर्यो अरु उत्तर जीत कै पारथ आयो । दच्छन जीत फिर्यो सहदेव घनो चित मै तिन ओज जनायो । पच्छम जीत लियो नुकले न्रिप कै तिन पाइन पै सिर न्यायो । ऐसे कह्यो सभ जीत लए हम सिंध जरा नही जीतन पायो ॥२३१६॥ ॥ सोरठा ॥ कही क्रिशन दिज भेख तासौ हम अब रन चहै । भिर हम सिउ हुइ

आ पहुँची जहाँ कुन्ती के पुत्र श्रीकृष्ण के चरणों से लिपट गए। उन्होंने श्रीकृष्ण की बहुत सेवा की और मन की सब चिन्ताओं का त्याग कर दिया ॥ २३१२ ॥ ॥ सोरठा ॥ युधिष्ठिर ने कहा कि हे प्रभु ! मेरी एक प्रार्थना है कि यदि आपको अच्छा लगे तो मैं राजसूय यज्ञ करूँ ॥ २३१३ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब श्रीकृष्ण ने यह कहा कि मैं भी इसी कार्य के लिए आया हूँ। परन्तु जरासंध को मारने पर ही कोई यज्ञ की बात कर सकता है ॥ २३१४ ॥ ॥ सवैया ॥ तब भीम को पूर्व दिशा में, सहदेव को दक्षिण और नकुल को पश्चिम दिशा में भेजने की योजना राजा ने बनाई। अर्जुन उत्तर की तरफ़ गया और वहाँ उसने युद्ध में किसी को नहीं छोड़ा। इस प्रकार महा बलशाली अर्जुन पुनः दिल्लीपति युधिष्ठिर के पास आ पहुँचा ॥ २३१५ ॥ ॥ सवैया ॥ पूर्व दिशा को जीतकर भीम, उत्तर को जीतकर अर्जुन तथा दक्षिण दिशा को जीतकर सहदेव गर्वपूर्वक वापस आ गया। नकुल ने पश्चिम दिशा को जीत लिया और आकर राजा के चरणों में शीश झुका दिया। नकुल ने यह कहा कि हमने सबको तो जीत लिया लेकिन जरासंध को नहीं जीत सके ॥ २३१६ ॥ ॥ सोरठा ॥ कृष्ण ने कहा कि ब्राह्मण के भेष में होकर अब हम उससे युद्ध करना चाहते हैं। अब हमारी उसकी सेना को

एक सुभट संन सभ छोर कै ॥ २३१७ ॥ ॥ सवैया ॥ भेख धरो तुम बिप्पन को संग (मू०ग्रं०५४७) पारथ भीम के स्याम कह्यो हमहू तुमरै संग बिप्प के भेखहि धारत है नहि जात रह्यो । चित चाहत है चहिहैं तिह ते फुन एकल कै कर खग्ग गह्यो । कहिओ फिर आपन बिप्प को रूप धर्‌यो नही काहू ते जात लह्यो ॥ २३१८ ॥ ॥ सवैया ॥ बामन भेख जबै धरिकै त्रिप सिंध जरा के गए त्रिप जानी । नैन निहार बडे भुजदंड सु छत्रन की सभ रीत पछानी । तेइस बार भिर्‌यो हम सो सोऊ है जिह द्वारवती रजधानी । भेद लह्यो सभ ही छलिकै इह आयो है गोकल नाथ गुमानी ॥ २३१९ ॥ स्याम जू आपन ही उठकै तिह भूपति को इह भांति सुनायो । तेइस बेर भज्यो हरि सिउ हरि को तुहि एक ही बार भजायो । एते पै बीर कहावत हैं सु इहै हमरे चित पै अब आयो । बामन हुइ तुहि संग सु छत्री के चाहत है कर जुद्ध मचायो ॥ २३२० ॥ ॥ सवैया ॥ बल माप कै देह दई हरि कउ सभ होर रहे न बिचार कियो । कह्यो का तनु है भगवानु सो भिच्छकु मांगत देह बियो न बियो । सुन राम जू रावन मारकै राजु भभीछन

अलग छोड़ते हुए लड़ाई होगी ॥ २३१७ ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन और भीम को श्रीकृष्ण ने ब्राह्मण का वेश धारण करने को कहा और कहा कि हम भी तुम्हारे साथ ब्राह्मण-वेश धारण करते हैं। पुनः उन्होंने इच्छानुसार एक खड़्ग भी छुपाकर रख लिया। स्वयं ऐसा ब्राह्मण-वेश बना लिया कि किसी से भी पहचाना न जा सके ॥ २३१८ ॥ ॥ सवैया ॥ जब ब्राह्मण का वेश धारण कर ये सब जरासंध राजा के पास गए तो उसने इन सबकी बड़ी-बड़ी भुजाओं को देखकर इनको क्षत्रिय के रूप में पहचान लिया। उसने पहचान लिया कि यही द्वारिका में हमसे तेईस बार भिड़ चुका है और अब वही श्रीकृष्ण छल करने यहाँ आया है ॥ २३१९ ॥ श्रीकृष्ण ने स्वयं खड़े होकर राजा से कहा कि तुम तेईस बार कृष्ण के सामने से भाग चुके हो और एक बार तुमने श्रीकृष्ण को भगाया है। मेरे चित्त में यही विचार आया है कि इतने पर ही तुम अपने आपको वीर कहला रहे हो। हम लोग ब्राह्मण होकर तुम्हारे जैसे क्षत्रिय के साथ युद्ध करना चाहते हैं ॥२३२०॥ ॥ सवैया ॥ राजा बलि ने बिना किसी अन्य विचार के भगवान को अपना शरीर यह सोचकर दे दिया कि मेरे द्वार पर कोई अन्य नहीं स्वयं भगवान भिक्षुक बनकर खड़े हैं। राम ने रावण को मारकर विभीषण को राज्य दे दिया और उससे वापस नहीं

दे तिह ते न लियो । हमरे अर माँगत है न्रिप कउ चुप ठान रह्यो सुकचात हियो ॥ २३२१ ॥ देख दयो ब्रहमासुत सूरज चित्त बिखै नही त्रास कियो है । दास भयो हरिचंद सुन्यो सुत काज न लाज की ओर धयो है । मूँड दयो मध काटि मुरार रतीक न शंकत मान भयो है । जुद्धहि चाहत हो तिन ते तुमरो बकहा बलु घाट गयो है ॥ २३२२ ॥ पच्छम सूर चड़्यो सुनियै उलटी फिरि गंग बही अब आवै । सत्ति टर्यो हरिचंद हूं को धरनीधर त्याग धरा ते परावै । सिंघ चलै म्रिग ते टरिकै गजराज उड्यो नभ मारग जावै । पाथर स्याम कह्यो तब भूपत त्रास भरै नहि जुधु मचावै ॥ २३२३ ॥ ॥ जरासिंध बाच ॥ ॥ सवैया ॥ पारथ जो ब्रिजनाथ जबै कबि स्याम कहै इह भाँत बखानो । स्री ब्रिजनाथ इही इह पारथ भीम इहै तिह भूपति जानो । कान्ह भज्यो हम ते इह बालक या संग हौ लरिहौ सु बखानो । जुद्धु के कारन ठाढो भयो उठि स्याम कहै कछु त्रास न मानो ॥ २३२४ ॥ ॥ सवैया ॥ (मू०ग्रं०५४८) भारी गदा हुती धाम घनी इक भीम कौ आप को अउर मँगाई । एक दई कर भीमहि के इक आपने हाथ के बीच सुहाई । रात को सोइ रहै सुख पाइ सु दिवस करै उठ नित्त लराई ।

लिया । अब मेरे साथी राजा तुम्हें माँग रहे हैं और तुम संकोचवश चुपचाप खड़े हो ॥ २३२१ ॥ सूर्य ने अपूर्व शक्ति (कवच-कुंडल) दे दिए वह फिर भी नहीं डरा, राजा हरिश्चन्द्र दास हो गया परन्तु पुत्र (स्त्री) का मोह उसे नहीं डिगा सका । क्षत्रिय श्रीकृष्ण ने अभय होकर मुर दैत्य का वध कर दिया; अब तुमसे वही श्रीकृष्ण युद्ध चाहते हैं । परन्तु ऐसा लगता है कि तुम्हारा बल क्षीण हो गया है ॥ २३२२ ॥ सूर्य पश्चिम से उग सकता है, गंगा उलटी बह सकती है, हरिश्चन्द्र अपने सत्य से टल सकते हैं, पर्वत धरती छोड़कर भाग सकते हैं, सिंह मृग से डर सकता है और हाथी उड़ सकता है, परन्तु अर्जुन ने कहा कि मैं समझता हूँ, यह सब हो जाय, पर राजा इतना डर गया कि युद्ध नहीं कर सकता ॥ २३२३ ॥ ॥ जरासंध उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ अर्जुन ने जब श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा तो राजा ने समझ लिया कि यह कृष्ण है, यह अर्जुन है और यह भीम है । उसने कहा कि कृष्ण तो मेरे सामने से भाग चुका है, क्या मुझे अब इन बच्चों से लड़ना पड़ेगा । इतना कहकर वह निर्भय युद्ध के लिए उठ खड़ा हुआ ॥ २३२४ ॥ ॥ सवैया ॥ घर में एक बहुत बड़ी गदा थी । राजा ने एक अपने लिए और दूसरी भीम के लिए मँगाकर उसे भीम

ऐसे कथा दुहू बीरन की मन बीच बिचारकै स्याम सुनाई ॥ २३२५ ॥ ॥ सवैया ॥ भीम गदा गहि भूप पै मारत भूप गदा गहि भीम पै मारी । रोस भरे बलवंत दोऊ लरै कानन मै जन केहरि भारी । जुद्ध करै न मुरै तिह ठउर ते बाँटत है तिह ठाँ जनधारी । यौ उपजी उपमा चतुरे जन खेलत है फुलवाँ सो खिलारी ॥ २३२६ ॥ ॥ सवैया ॥ दिवस सताइस जुद्ध भयो जब भूप जित्यो बलु भीमहि हार्यो । स्री ब्रिजनाथ दयो तब ही बलु जुद्ध को क्रोध की ओर पचार्यो । लै तिनका इक हाथहि भीतर चीर दयो इह भेद निहार्यो । तैसे ही भीम ने चीर दयो न्रिप यौ मुख ते कबि स्याम उचार्यो ॥ २३२७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिशना अवतारे जरासिंध बधहि ॥

अथ जरासिंध को बध कर सभ भूपन को छुराइबो कथनं ॥

॥ सवैया ॥ मारके भूप गए तिह ठाँ जह बाँधे कई पुन भूप परे । हरि देखत शोक मिटे तिन के इत स्यामजू के द्रिग

के हाथ में दे दी और एक स्वयं ले लिया । ये रात को सोते थे और दिन में युद्ध करते थे और दोनों वीरों की युद्ध-कथा का वर्णन श्याम कवि ने सुनाकर कहा है ॥ २३२५ ॥ ॥ सवैया ॥ भीम राजा को गदा मारता है और राजा भीम पर गदा से प्रहार करता है । दोनों वीर क्रोध से ऐसे भिड़ रहे हैं मानो जंगल में दो शेर लड़ रहे हों । वे युद्ध कर रहे हैं और अपने निश्चित स्थान से नहीं हिल रहे हैं । ऐसा लग रहा है कि मानो खिलाड़ी चिकई खेलने समय स्थिर खड़े हों ॥ २३२६ ॥ ॥ सवैया ॥ सत्ताईस दिन युद्ध के बाद राजा जीत गया और भीम हार गया । तब श्रीकृष्ण ने उसे अपना बल देते हुए क्रोध से ललकारा । एक तिनका हाथ में लेकर उसे चीर दिया और रहस्यपूर्ण दृष्टि से भीम की तरफ़ देखा । भीम ने वैसे ही कवि श्याम के कथनानुसार राजा को चीर दिया ॥ २३२७ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में जरासंध-वध समाप्त ॥

जरासंध को मारकर सब राजाओं का छुड़ाना

॥ सवैया ॥ जरासंध को मारकर वे सब उस स्थान पर गए जहाँ उसने कई राजाओं को बाँध रखा था को देखते ही उनके दुखों का नाश

लाज भरे। बंधन जेतिक थे तिन के सभ ही छिन भीतर काटि डरे। दए छोर सभै कबि स्याम भनै करुनारसु सो जब कान ढरे ॥ २३२८ ॥ ॥ सवैया ॥ बंधन काटि सभै तिन के तिन कउ ब्रिजनाइक ऐसे उचारो। आनद चित्त करो अपने अपने चित को सभ शोक निवारो। राज समाज जितो तुम जाइकै स्याम भनै धन धाम सँभारो। स्री ब्रिजनाथ कही तिह को तुम आपने आपने देस सिधारो ॥ २३२९ ॥ बंधन छोर कह्यो हरि यौ सभ भूपन तौ इह भाँति उचारी। राज समाज कछू नही तेरो ही ध्यान लहै सु इहै जिअ धारी। राज करोर इहै लहिहो कबि स्याम कह्यो इह भाँति मुरारी। सो उन मान कही हरि इउ सु सदा रहियौ सुध लेत हमारी ॥ २३३० ॥ (मू०ग्रं०५४९)

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे जरासिंध को बध कर सभ भूपन को छुराइ दिल्ली मो आवत भए ॥

अथ राजसू जग्ग सिसपाल बध कथनं ॥

॥ सवैया ॥ उत सीस निवाइ गए न्रिप धाम इतै जदुराइ

हो गया। परन्तु इधर श्रीकृष्ण जी के नेत्र लज्जायुक्त हो उठे (कि मैं इन राजाओं को पहले नहीं छुड़ा सका)। क्षण भर में उन सबके बंधन काट डाले गये और श्रीकृष्ण की कृपा से उन्हें छोड़ दिया गया ॥ २३२८ ॥ ॥ सवैया ॥ सबके बंधन काटकर श्रीकृष्ण ने उनसे कहा कि आप सब शोक-रहित होकर मन में आनन्द का अनुभव कर अपने राज्य-समाज-धन-धाम आदि की खोज-खबर लो और अपने-अपने देशों को लौट जाओ ॥ २३२९ ॥ बंधन-मुक्त कर जब श्रीकृष्ण ने वह कहा तो सभी राजाओं ने उत्तर दिया कि हमारा राज-समाज कुछ नहीं है। हम तो केवल आपका ही स्मरण करते हैं। श्रीकृष्ण ने कहा कि यहीं पर मैं आप सबको राज्य दे दूंगा। श्रीकृष्ण की बात मानकर राजाओं ने प्रार्थना की कि हे प्रभु! कृपापूर्वक हमारी खोज-खबर लेते रहिएगा ॥ २३३० ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में जरासंध का वध करके सब राजाओं को छुड़ाकर दिल्ली में आ पहुंचने का वर्णन समाप्त ॥

राजसूय यज्ञ और शिशुपाल-वध-कथन

सवैया उधर राजा अपने-अपने घर गए और इधर श्रीकृष्ण की

दिल्ली महि आयो । भीम कह्यो सभ भेद सु मै बलु याही ते पाइकै शत्रहि घायो । बिप्र बुलाइ भली बिधि सो फिर राजसुअउ इक जग्गु रचायो । आरँभ जग को भयो तबही जसु दुंदभ जो ब्रिजनाथ बजायो ॥ २३३१ ॥ ॥ जुधिशटर बाच सभा प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ जोर सभा द्विज छत्रन की प्रिथमै न्रिप यौ कह्यो कउन मनइयै । को इह लाइक बीर इहा जिह भाल मै कुंकम अच्छत लइयै । बोल उठ्यो सहदेव तबै ब्रिजनाइक लाइक याह चड़इयै । स्री ब्रिजनाथ सही प्रभ है कबि स्याम भनै जिहके बलि जइयै ॥ २३३२ ॥ जाही की सेव सदा करिऐ मन अउर न काजन मै उरझइयै । छोर जंजार सभै ग्रहि के तिह ध्यान के भीतर चित्त लगइयै । जाहि को भेदु पुरानन ते मत साधन बेदन ते कछू पइयै । ताही को स्याम भनै प्रथमै उठकै किउ न कुंकम भाल लगइयै ॥ २३३३ ॥ यों जब बैन कहै सहदेव ते भूपत के मन मै सचु आयो । स्री ब्रिजनाइक को मन मै कबि स्याम सही प्रभ कै ठहरायो । कुंकम अच्छत भाँति भली करि बेदन की धुन भाल चड़ायो । बैठो हुतो सिसपाल तहाँ अति सो अपनो मन बीच

दिल्ली पहुँच गए । भीम ने सबको बताया कि मैंने श्रीकृष्ण से बल पाकर शत्रु का संहार किया । फिर भली प्रकार ब्राह्मणों को बुलाकर राजसूय यज्ञ प्रारंभ कर दिया गया और यह यज्ञ श्रीकृष्ण के दुन्दुभि-वादन के साथ प्रारम्भ हुआ ॥ २३३१ ॥ ॥ युधिष्ठिर उवाच सभा के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ क्षत्रियो-ब्राह्मणों की सभा में राजा ने कहा कि अब सबसे पहले किसकी पूजा की जानी चाहिए ? इस योग्य कौन वीर यहाँ है जिसके माथे पर कुमकुम और अक्षत लगाया जाय ? तभी सहदेव बोल उठा कि श्रीकृष्ण ही इस योग्य हैं, वे ही वास्तविक प्रभु हैं और हम सब इन पर न्योछावर हैं ॥२३३२॥ हे मन ! सदा इन्हीं की सेवा करो और अन्य कार्यों में अपने-आप को मत उलझाओ । घर के सभी जंजालों से युक्त होकर श्रीकृष्ण में ही अपना मन लगाओ । इसी का रहस्य थोड़ा बहुत हमें वेद-पुराण और साधु-संगति में प्राप्त होता है । इसलिए सर्वप्रथम इन्हीं के मस्तक पर कुमकुम, अक्षत आदि लगाया जाना चाहिए ॥ २३३३ ॥ सहदेव के इस कथन को सभी राजाओं ने सत्य माना और मन-ही-मन श्रीकृष्ण को भगवान-रूप में देखा । वेदमंत्रों की ध्वनि में भली प्रकार कुमकुम और अक्षत उनके मस्तक पर लगाया गया जिसे देखकर वहाँ बैठा हुआ शिशुपाल अपने मन में अत्यंत क्रोधित हो उठा २३३४

रिसायो ।। २३३४ ।। ।। सिसपाल बाच ।। ।। सवैया ।। बीर बडौ हम सो तजिकै इह का जिह कुंकम भाल चड़ायो । गोकल गाँउ के बीच सदा इन ग्वारन सो मिल गोरसु खायो । अउर सुनो डरु शत्रुन के गयो द्वारवती भज प्रान बचायो । ऐसे सुनाइ कही बतिया अरु कोपहि सो अति ही भर आयो ।।२३३५।। ।। सवैया ।। बोलत भ्यो सिसपाल नबै सु सुनाइ सभा सभ क्रोध बढैकै । कोप भर्यो उठ ठाढो भयो सु गरिष्टि गदा करि भीतर लैकै । गूजर हुइ जदुराइ कहावत गारी दई दोऊ नैन नचैकै । सो सुन फूफी के बैन चितार रह्यो ब्रिजनाइक जू चुप ह्वैकै ।। २३३६ ।। ।। चौपई ।। फूफी बचन चित्त हरि धर्यो । सत गारन लौ क्रोध न भर्यो । सोब ठाढ बर त्रास न कीनो । तब जदुबीर चक्र करि लीनो ।। २३३७ ।। ।। कान्ह जू बाच ।। ।। सवैया ।। लै कर चक्र भयो उठ ठाढ सु यौ (मू०ग्रं०५५०) तिह सौ रिस बात कही । फुन फूफी के बैन चितै अब लउ तुह नास कियो नही मोन गही । सति गारन ते बढ एक कही तुहि जानत आपनी म्रित चही । पिख

।। शिशुपाल उवाच ।। ।। सवैया ।। मेरे जैसे बड़े वीर को छोड़कर यह कौन है जिसके मस्तक पर कुमकुम का टीका लगाया गया । इसने तो गोकुल गाँव में मात्र ग्वालिनों के बीच रहकर उनका दूध-दही आदि ही खाया है । यह वही है जो शत्रु के डर से प्राण बचाकर भागकर द्वारिका चला गया था । इस प्रकार शिशुपाल ने क्रोधित होकर ये सब बातें कहीं ।। २३३५ ।। ।। सवैया ।। शिशुपाल क्रोधित होकर सारी सभा को सुनाकर यह सब कहने लगा और अपने हाथ में एक भारी गदा लेकर क्रोधित होते हुए उठ खड़ा हुआ । शिशुपाल ने दोनों आँखें नचाते हुए और गाली देते हुए श्रीकृष्ण से कहा कि तुम गूजर होकर अपने आपको किस आधार पर यदुराज कहलाते हो । श्रीकृष्ण ने यह सब देखा और बुआ को दिए हुए वचन को स्मरण कर चुप बैठे रहे ।। २३३६ ।। ।। चौपाई ।। बुआ के वचन को स्मरण कर सौ गालियाँ सुनने तक श्रीकृष्ण क्रोध से नहीं भरे । सौ तक उसको किसी प्रकार से भयभीत नहीं किया, परन्तु सौ तक पहुँचते-पहुँचते श्रीकृष्ण ने अपना चक्र हाथ में पकड़ लिया ।। २३३७ ।। ।। कृष्ण उवाच ।। ।। सवैया ।। चक्र हाथ में लेकर कृष्ण खड़े हो गए और क्रोधित होकर उन्होंने कहा कि मैंने बुआ के वचनों को स्मरण कर तुम्हें अभी तक नहीं मारा और चुप रहा । सौ गालियों से अधिक अगर एक भी गाली तुमने अधिक कही तो समझ लो कि तुमने अपनी

है सभ भूप जिते इह ठां अब हउही न ह्वै हउ कि तू ही नही ॥२३३८॥ ॥ सिसपाल बाच कान्ह सो ॥ ॥ सवैया ॥ कोप कै उत्तर देत भयो इह भाँति सुन्यो जब ही अभमानी । तेरे मरे मरिहउ अरे गूजर इउ मुख ते तिन बात बखानी । अउर कहा जु पै ऐसी सभाहू मै जूझब छित्रही है निजकानी । तउ अरे बेद पुरानन मै चलिहै जग मै जुग चार कहानी ॥ २३३९ ॥ ॥ सवैया ॥ का भयो जो चमकाइकै चक्रहि ऐसे कह्यो तुहि मारि डरोगो । गूजर तो ते हउ छत्री कहाइकै ऐसी सभा हूं के बीच टरोगो । मात सु भ्रात अरु तात की सउह रे तुहि मरिहौ नहि आप मरोगो । क्रोध रुकंमन को धरकै हरि तो संग आज निदान करोगो ॥ २३४० ॥ कोप प्रचंड कियो तब स्याम जब ए बतिया सिसपालहि भाखी । कान्ह कह्यो जड़ चाहत छित्र को यौ सभ लोगनि सूरज साखी । चक्र सुदरशन लै कर भीतर कूद सभा सभही सोऊ नाखी । धावत भ्यो कबि स्याम कहै सु भयो तिह के बध को अभिलाखी ॥ २३४१ ॥ धावत भ्यो ब्रिजनाइक जू इत ते उत ते सोऊ सामुहि आयो । रोस बढाइ घनो चित मै तकि कै तिह शत्र को चक्र चलायो । जाइ लग्यो

मौत को स्वयं बुला लिया है। ये सभी राजा यहाँ देखेंगे कि या तो मैं नही रहूँगा या तुम नहीं रहोगे ॥ २३३८ ॥ ॥ शिशुपाल उवाच श्रीकृष्ण के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ उस अभिमानी ने जब यह सुना तो क्रोधित होकर कहने लगा कि अरे गूजर ! मैं क्या तुम्हारे कहने से तुम्हारे मारने पर मर जाऊँगा। लगता है इसी सभा में तुम्हारी मृत्यु तुम्हारे समीप आ गई है। यह कहानी भी वेदो-पुराणों में चारों युगों तक चलती रहेगी ॥ २३३९ ॥ ॥ सवैया ॥ चक्र चमका कर तुम मुझे मारने की धमकी दे रहे हो, क्या मैं इससे डर जाऊंगा। मैं क्षत्रिय कहलाकर क्या तुम्हारे जैसे गूजर से इस सभा में डर जाऊँगा। माँ-पिता, भाई की क़सम ! मैं आप न मरके तुम्हें आज मार डालूंगा और आज रुक्मिणी का बदला भी तुमसे ले लूंगा ॥ २३४० ॥ जब शिशुपाल ने यह कहा तो श्रीकृष्ण प्रचंड रूप से क्रोधित हो उठे और कहने लगे कि हे मूर्ख ! यह सारी सभा और सूर्य साक्षी हैं कि तुम मृत्यु चाहते हो। श्रीकृष्ण सुदर्शन चक्र हाथ में लेकर कूद पड़े और शिशुपाल का वध करने के लिए आगे की तरफ़ बढ़े ॥ २३४१ ॥ इधर से श्रीकृष्ण आगे बढ़े और उधर से शिशुपाल सामने आया। कृष्ण ने अत्यन्त क्रोधित होकर शत्रु की ओर चक्र चलाया

तिह कंठ बिखै कटि देत भयो छुट भू पर आयो । इउ उपमा उपजी जिय मै दिव ते रवि कौ मानो मार गिरायो ॥ २३४२ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिसनावतारे सिसपाल बधहि धिआइ ॥

अथ कानजू कोप राजा युधिशटर छिमापन करत भए ॥

॥ सवैया ॥ काट कै सीस दयो सिसपाल को कोप भर्यो दोऊ नैन नचावै । कउनु बली इह बीच सभा हू को है हम सो सोऊ जुद्ध मचावै । पारथ भीम ते आदिक बीर रहे चुप होइ अति ही डर आवै । सुंदर ऐसे सरूप के ऊपरि स्याम कबीसर पै बलि जावै ॥ २३४३ ॥ ॥ सवैया ॥ जोत जिती अर भीतर थी सु सभै मुख स्याम के बीच समानी । बोल सकै न रहे चुप ह्वै कबि स्याम कहै जु बडे अभिमानी । बाँके बली सिसपाल (मू०ग्रं०५५१) हन्यो जिह को हुती चंद्रवती रजधानी । या सम अउर न कोऊ बियो जग स्री जदुबीर सही प्रभु जानी ॥ २३४४ ॥ एक कहै जदुराइ बडो भट जाहि बली ससपाल सो घायो । इंद्र ते सूरज ते जम ते हुतो जात न सो जमलोक पठायो । सो इह एक ही आँख के फोरकै भीतर मार

जो उसके गले में लगा और उसका सिर कटकर धरती पर ऐसे आ गिरा मानो सूर्य को मार कर धरती पर फेंक दिया गया हो ॥ २३४२ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में शिशुपाल-वध अध्याय समाप्त ॥

श्रीकृष्ण क्रोधित हुए और राजा युधिष्ठिर का क्षमा माँगना

॥ सवैया ॥ शिशुपाल का सिर काटकर क्रोधित होकर श्रीकृष्ण आँखें नचाने लगे और कहने लगे कि कौन ऐसा बली है जो मुझसे युद्ध कर सके। अर्जुन-भीम जैसे वीर डर के मारे चुप होकर बैठे रहे। श्याम कवि का कथन है कि उनके सुन्दर स्वरूप पर कविगण न्योछावर हैं ॥ २३४३ ॥ ॥ सवैया ॥ शिशुपाल की जितनी शक्ति थी वह श्रीकृष्ण के मुख में विलीन हो गई। वहाँ बड़े अभिमानी वीर चुप होकर बैठे रहे क्योंकि चन्देरी के महाबली शिशुपाल का वध श्रीकृष्ण ने कर दिया था। सबने यह मान लिया कि श्रीकृष्ण जितना अन्य कोई बली संसार में नहीं है ॥ २३४४ ॥ सभी कहने लगे कि श्रीकृष्ण भी महाबली हैं जिन्होंने शिशुपाल जैसे शूरवीर को जो कि इंद्र सूर्य और यम के लिए भी अजेय था मार गिराया उस शत्रु को इन्होंने

दयो जिअ आयो । चउदह लोकह को करता कर स्री ब्रिजनाथ सही ठहरायो ॥ २३४५ ॥ ॥ सवैया ॥ चउदह लोकन को करता इह साधन संत इहै जिय जान्यो । देव अदेव किए सभ याही के बेद न ते गुन जानि बखान्यो । बीरन बीर बडोई लख्यो हरि भूपन भूपन ते खुनसान्यो । अउर जिते अरि ठाढे हुते तिन स्याम सही करि काल पछान्यो ॥२३४६॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाइक ठाँढ तहाँ कर बीच सुदरशन चक्र लिए । बहु रोस ठने अति क्रोध भर्यो अरि आन को आनत है न हिए । तिह ठउर सभाहू मै गाजत भ्यो सभ कालहि को मनो भेख किए । जिह देखत प्रान तजै अरि वा बहु संत निहार कै रूप जिए ॥२३४७॥ ॥ न्रिप जुधिशटर बाच ॥ ॥ सवैया ॥ आप ही भूप कही उठकै करि जोरि दोऊ प्रभ क्रोध निवारो । थो सिसपाल बडो खल सो तुम चक्रहि लै छिन माहि सँघारो । यो कहि पाइ रह्यो गहिकै दुहू आपने नैनन ते जलु ढारो । कानजू जो तुम रोस करो तो कहा तुम सो बसु हैब हमारो ॥ २३४८ ॥ ॥ सवैया ॥ दास कहै बिनती कर जोरिकै स्याम भनै हरिजू सुनि लीजै । कोप चिते तुमरे मरिऐ सु क्रिपा करि हेरत ही

पलक झपकते ही मार दिया अतः यही श्रीकृष्ण चौदह लोकों के कर्ता हैं ॥ २३४५ ॥ ॥ सवैया ॥ चौदह लोकों के स्वामी श्रीकृष्ण हैं, ऐसा सभी साधु-संत मानते हैं। देव-अदेव सब इसी के बनाए हुए हैं और वेद भी इसी के गुणों का वर्णन करते हैं। राजाओं पर ही क्रोधित होनेवाले श्रीकृष्ण को वीरों ने महान वीर माना और सब शत्रुओं ने उन्हें वास्तविक काल के रूप में पहचाना ॥ २३४६ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण हाथ में सुदर्शन चक्र लेकर वहाँ खड़े थे। वे अत्यन्त क्रोधित थे अतः क्रोधावस्था में उनको अन्य शत्रु का स्मरण नहीं हो रहा था। वे कालवेश में सभा में गरज रहे थे। श्रीकृष्ण ऐसे थे जिनको देखकर शत्रु प्राण त्याग देते थे और संत उन्हें देखकर जीवन प्राप्त करते थे ॥ २३४७ ॥ ॥ राजा युधिष्ठिर उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ स्वयं राजा युधिष्ठिर ने हाथ जोड़कर कहा कि हे प्रभु ! क्रोध का त्याग करो। शिशुपाल बहुत बड़ा दुष्ट था, आपने उसको मारकर भला कार्य किया है। यह कहकर राजा ने दोनों पाँव पकड़कर नेत्रों से जल बहाना आरम्भ कर दिया। राजा युधिष्ठिर कहने लगे कि हे कृष्ण ! यदि आप नाराज़ हो जायँ तो भला हमारा इस पर क्या वश है ॥ २३४८ सवैया हे स्याम ! यह दास हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रहा है इसे सुन लीजिए आपके क्रोधित

चल जीजै । आनंद कै चिति बैठो सभा महि देखहु जग्य के हेत पतीजै । हउ प्रभ जान करो बिनती प्रभ जू पुन कोप छिमापन कीजै ॥ २३४६ ॥ ॥ दोहरा ॥ बैठायो जदुराइ को बहु बिनती करि भूप । कंजन से द्रिग जिह बने बन्यो सु मैन सरूप ॥ २३५० ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे कानजू को कोप राजा जुधिशटर छमापन करत भए धिआइ ॥

अथ राजा जुधिशटर राजसूअ जग्ग करत भए ॥

॥ सवैया ॥ सउपी है सेव ही पारथ कउ दिज लोकन की जो पै नीकी करै । अरु पूज (मू०ग्रं०५५२) करै दोऊ माद्री के पुत्र रिखीन को आनंद चित धरै । भयो भीम रसोइआ द्रुजोधन धाम पै ब्यास ते आदिक बेद ररै । कियो सूर को बालक कंबे को दान सु जाही ते चउदह लोक डरै ॥ २३५१ ॥ सूरज चंद गनेश महेश सदा उठकै जिह ध्यान धरै । अर नारद सो सुक सो दिज ब्यास सो स्याम भनै जिह जाप ररै । जिह मार दयो

होने पर हम मारे जाएँगे, इसलिए कृपादृष्टि ही बनाए रखिए । आनन्दपूर्वक आप सभा में बैठिए और यज्ञ का अवलोकन कीजिए । हे प्रभु ! मैं आपसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि आप क्रोध को समाप्त कर हम सबको क्षमा कीजिए ॥ २३४६ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा युधिष्ठिर ने विभिन्न प्रकार से प्रार्थना कर यदुराज को बैठाया । अब पुनः उनके नेत्र कमल के समान और स्वरूप कामदेव के समान सुशोभित होने लगा ॥ २३५० ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में कृष्ण जी के क्रोध की राजा युधिष्ठिर द्वारा क्षमा माँगने का अध्याय समाप्त ॥

राजा युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ करना

॥ सवया ॥ विप्रगणों की सेवा का कार्य अर्जुन को सौंपा गया तथ. माद्री के पुत्र नकुल और सहदेव आनन्दपूर्वक ऋषियों की सेवा कर रहे थे भीम रसोइया बन गया और दुर्योधन घर का काम-काज देखने लगा । व्या. आदि वेदपाठ कर रहे थे और चौदह लोकों को भयभीत कर देनेवाले क· को दान आदि का कार्य दिया गया ॥ २३५१ ॥ सूर्य, चन्द्र, गणेश, महेश सदै जिसका ध्यान करते हैं नारद शुक और व्यास आदि जैसे जिसका जाप करत हैं जिस महाबली ने शिशुपाल को मार दिया और जिससे सभी लोक डरते

सिसपाल बली जिह्के बल ते सभ लोकु डरै। अब बिप्पन के पग धोवत है ब्रिजनाथ बिना ऐसी कउन करै ॥ २३५२ ॥ ॥ सवैया ॥ आहव कै संग शत्रन के तिनि ते कबि स्याम भनै धनु लीनो। बिप्रन को जिम बेद के बीच लिखी बिध ही तिही भांतहि दीनो। एकन को सनमान कियो अरु एकन दै सभ साज नवीनो। भूप जुधिशटर तउन समै सु सभै बिध जग्य संपूरन कीनो ॥ २३५३ ॥ न्हान गयो सरता दयो दान सु दै जल पै पुरखा रिझवाए। जाचक थे तिह ठउर जिते धन दीन घनो तिन कउ सु अघाए। पुत्र लउ पौत्र लउ पै तिन के ग्रहि के अनतै नहि मांगन धाए। पूरन जग्य कराइकै यौ सुखु पाइ सभै मिलि डेरनि आए ॥ २३५४ ॥ ॥ दोहरा ॥ जबै आपने ग्रहि बिखै आए भूप प्रबीन। जग्ग काज बोले जिते सभै बिदा करि दीन ॥ २३५५ ॥ ॥ सवैया ॥ कान्ह रहे बहु दिवस तहा सु बधू अपनी सभ ही संग लैकै। कंचन देह दिपै जिनकी तिन मैन रहै पिख लज्जत ह्वैकै। भूखन अंग सजे अपने सभ आवत भी द्रुपती सिरि न्यैकै। कैसे ब्याह्यो है स्याम तुमै सभ मोहि कहो तुम आनंद कैकै ॥ २३५६ ॥ ॥ दोहरा ॥ जब

वही श्रीकृष्ण अब विप्रों के चरण धो रहे हैं और ऐसा उनके अतिरिक्त और कर भी कौन सकता है ॥ २३५२ ॥ ॥ सवैया ॥ युद्ध में शत्रुओं से युद्ध कर कवि श्याम का कथन है कि इन महावीरों ने कर वसूल किया और वेद-विहित विधि के अनुसार विप्रों को दान दिया। अनेकों का सम्मान किया और अनेकों को नए राज्य दे दिए। इस प्रकार उस समय राजा युधिष्ठिर ने सभी विधियों से यज्ञ संपूर्ण किया ॥ २३५३ ॥ तब वे नदी-स्नान के लिए गए और वहाँ जल-तर्पण कर उन्होंने पित्रों को प्रसन्न किया। वहाँ जितने याचक थे उनको दान देकर तृप्त किया। उन्हें इतना दान दिया कि उनके पुत्र-पौत्र कभी माँगने के लिए नहीं गए। इस प्रकार यज्ञ संपूर्ण कर सभी पुनः अपने घरों को वापस आये ॥ २३५४ ॥ ॥ दोहा ॥ जब ये प्रवीण राजा अपने घर आये तो इन्होंने यज्ञ के लिए बुलाए हुए सभी लोगों को विदाई दी ॥ २३५५ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण अपनी पत्नी के साथ बहुत दिनों तक वहीं रहे। उनकी कंचन जैसी देह को देखकर कामदेव भी लजा रहा था। अंगों में आभूषण धारण कर द्रौपदी भी वहाँ आ उपस्थित हुई और श्रीकृष्ण रुक्मिणी से उनके विवाह का वर्णन पूछने लगे २३५६ दोहा जब द्रौपदी ने प्रेमपूर्वक यह सब पूछा तो सबने अपनी-अपनी कथा उसे

तिन कउ यो द्रोपती पूछ्यो प्रेम बढाइ । अपनी अपनी तिह ब्रिथा सभहू कही सुनाइ ।। २३५७ ।। ।। सवैया ।। जगि निहारि जुधिस्टरि को मन भीतर कउरन कोप बसायो । पंड कै पुत्रन जग्ग कियो तिह ते इन को जग मै जसु छायो । ऐसो न लोक बिखै हमरो जसु होत भयो कहि स्याम सुनायो । भीखम ते सुत सूरज ते सु नही हम ते ऐसो जग ह्वै आयो ।। २३५८ ।। (मू०ग्रं०५५३)

।। इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे राजसूअ जग्ग समापतं ।

जुधिशटर को सभा बनाइ कथनं ।।

।। स्वैया ।। मै इक दैत हुतो तिन आइकै सुंदर एक सभा सु बनाई । लज्जत होइ रहे अमरावत ऐसी प्रभा इह भूमहि आई । बैठ बिराजत भूप तहा जदुबीर लिए संग चारो ई भाई । स्याम भनै तिह आभहि की उपमा मुख ते बरनी नहि जाई ।। २३५९ ।। ।। स्वैया ।। नीर ढरे कहूँ चादर छत्तन छूटत है कहूँ ठउर फुहारे । मल्ल भिरे कहूँ मत्त करी कहूँ नाचत बेस्यन के सु अखारे । बाज लरै कहूँ साज सजै भट

सुनाई ।। २३५७ ।। ।। सवैया ।। युधिष्ठिर के यज्ञ को देखकर कौरव मन-ही-मन क्रोधित हो कहने लगे कि पाण्डवों द्वारा यज्ञ किए जाने पर ही उनका यश सारे संसार में फैल गया। हमारे साथ भीष्म और कर्ण जैसे महाबली हैं, फिर भी हम ऐसा यज्ञ न कर सके और हमारा यश संसार में नहीं फैला ।। २३५८ ।।

।। श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में राजसूय यज्ञ समाप्त ।।

युधिष्ठिर का सभा-निर्माण-कथन

।। सवैया ।। मय नामक एक दैत्य था, उसने वहाँ पहुँचकर एक ऐसे सभा-स्थल का निर्माण किया कि उसे देखकर देवपुरी भी लज्जित होती थी। वहाँ चारों भाइयों और श्रीकृष्ण को लेकर युधिष्ठिर विराजमान थे और श्याम कवि का कथन है कि उस शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता ।। २३५९ ।। ।। सवैया ।। उस सभास्थल में कहीं छतों से जल के फौव्वारे छूट रहे थे और कहीं जल बह रहा था। कहीं मल्लयुद्ध हो रहा था और कहीं मस्त हाथी आपस में भिड़ रहे थे तथा कहीं नर्तकियाँ नृत्य कर रही थीं। कहीं घोड़े

छाजत है अति डील डिलारे । राजत स्री ब्रिजनाथ तहाँ जिम तारन मै ससि स्याम उचारे ॥ २३६० ॥ जोति लसै कहूँ बज्जरन की कहूँ लाल लगे छब मंदर पावैं । नागन को परलोक पुरी सुर देख प्रभा जिह सीस निवावैं । रीझ रहे जिह देख चतुरमुख हेर प्रभा शिव सो ललचावैं । भूम जहाँ तहाँ नीर सो लागत नीर जहाँ नही चीनबो आवै ॥ २३६१ ॥ ॥ जुधिशटर बाच द्रुजोधन सो ॥ ॥ स्वैया ॥ ऐसी सभा रचि कै सु जुधिशटर अंध को बालकु बोल पठायो । सूरज को सुत संग लिए अरु भीखम मान भर्‌यो सोऊ आयो । भूम जहाँ हुती ताहि लख्यो जल बार हुतो जह भूम जनायो । जाइ निशंक पर्‌यो जल मै कबि स्याम कहै कछु भेद न पायो ॥ २३६२ ॥ जाइ पर्‌यो तब ही सर मै तन बस्त्र धरे पुन बूड गयो है । बूडत जो निकस्यो सोऊ भूपत चित्त बिखै अति कोप कयो है । कान्ह जू भार उतारन के हित आँख सो भीमहि भेद दयो है । सो इह भाँत सो बोल उठ्‌यो अरे अंध के अंध ही पुत्र भयो है ॥ २३६३ ॥ यों जब भीम हस्यो तिह कउ तु घनो

आपस में भिड़ रहे थे और कहीं बड़े डील-डौल वाले वीर शोभायमान हो रहे थे। श्रीकृष्ण वहाँ तारागणों के बीच चन्द्रमा की तरह शोभायमान हो रहे थे ॥ २३६० ॥ कहीं पत्थरों की और कहीं लालों की शोभा दिखाई पड़ रही थी। नगों की शोभा को देखकर परलोक की पुरियाँ भी अपना शीश झुका रही थीं। उस सभास्थल की शोभा देखकर ब्रह्मा प्रसन्न हो रहे थे और शिव का मन भी ललचा रहा था। जहाँ भूमि थी वहाँ जल दिखाई दे रहा था और कहीं-कहीं जहाँ जल होता था वह पहचान में नहीं आता था ॥२३६१॥ ॥ युधिष्ठिर उवाच दुर्योधन के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ ऐसे सभास्थल की रचना करके युधिष्ठिर ने दुर्योधन को बुला भेजा। वह गर्व से पूर्ण होकर भीष्म और कर्ण को साथ लेकर वहाँ पहुँचा और जहाँ पर धरती थी वहाँ उसे जल दिखाई दिया और जहाँ जल था उसे उसने भूमि समझा। इस प्रकार वह भेद को समझे बिना जल में जा गिरा ॥ २३६२ ॥ वह सरोवर में जा गिरा और वस्त्रों-सहित भीग गया। डूबता हुआ वह जब बाहर निकला तो दुर्योधन मन में अत्यन्त क्रोधित हो उठा। तब कृष्ण ने भीम को आँख से इशारा किया और भीम तुरन्त बोल उठा कि अंधे के पुत्र भी अंधे ही हैं ॥ २३६३ ॥ जब भीम इस प्रकार कहकर हँसा तो राजा मन में अत्यन्त क्रोधित हो उठा। मेरे ऊपर पांडु के पुत्र हँस रहे हैं। मैं अभी भीम का वध

चित भीतर भूप रिसायो। मोकउ पंड को पुत्र हसै अब ही बध याको करो जिअ आयो। भीखम द्रोण रिसे मन मै जड़ भीम भयो कह स्याम सुनायो। धाम गयो अपुने फिरकै सु सभा इह भीतर फेर न आयो॥ २३६४॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिशना अवतारे दुरजोधन सभा देख धाम गए ध्याइ॥

अथ दैत बकत्र जुद्ध कथनं॥

॥ स्वैया॥ उत कोप द्रुजोधन धाम गयो इत दैत हुतो तिह कोपु बसायो। कान्ह हत्यो सिसपाल हुतो (मू०ग्रं०५५४) मेरो मित्र मर्यो न रती सुकचायो। लै शिव तै बर हौ इह को बधु जाइ करो जिअ भीतर आयो। धाइ किदार की ओर चल्यो कबि स्याम इहै चित मै ठहरायो॥ २३६५॥ बद्री किदार के भीतर जाइ कै सेव करी महा रुद्र रिझायो। लैकै बिवान चल्यो उत ते जब ही हरि के बधु को बरु पायो। द्वारवती हूँ के भीतर आइकै कान्ह के पुत्र सो जुद्धु मचायो। सो सुनि स्याम बिदा लैकै भूप ते स्याम भनै तिह ठउर

कर दूँगा। जब भीष्म और द्रोण भी क्रोधित हो उठे तो भीम भयभीत हो उठा और दौड़कर अपने घर चला गया तथा पुनः वापस नहीं आया॥ २३६४॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में दुर्योधन सभा को देखकर वापस घर गए अध्याय समाप्त॥

बकत्र दैत्य-युद्ध-कथन

॥ सवैया॥ उधर दुर्योधन गया और इधर एक दैत्य यह सोचकर क्रोधित हो उठा कि कृष्ण ने मेरे मित्र शिशुपाल का वध बिना किसी भय के कर दिया। उसने यह सोचा कि मैं शिव से वरदान लेकर कृष्ण का वध कर दूंगा और वह यही सोचकर केदार धाम की ओर चल दिया॥ २३६५॥ बद्री-केदारनाथ के भीतर जाकर उसने सेवा करके महारुद्र को प्रसन्न किया और जब श्रीकृष्ण के वध का वरदान प्राप्त कर लिया तो विमान लेकर चल पड़ा। द्वारका में आकर उसने कृष्ण के पुत्र से युद्ध प्रारम्भ कर दिया श्रीकृष्ण ने जब यह सुना तो वे राजा युधिष्ठिर से विदा लेकर उस तरफ

सिधायो ॥ २३६६ ॥ ॥ सवैया ॥ द्वारवती हूँ के बीच जबै हरिजू गयो तउ सोऊ शत्रु निहार्यो । स्याम भनै तब ही तिह कउ लरु रे हम सो ब्रिजनाथ उचार्यो । यौ सुनि वा बतिया हरि को कसि कान प्रमान लउ बान प्रहार्यो । मानो तबैअति पावक ऊपर काहू बुझाइबे को ध्रित डार्यो ॥ २३६७ ॥ मारत भ्यो अर बान जबै हरि स्यंदन वाही को ओर धवायो । आवत भ्यो उत ते अर सो इत ते एऊ गे मिलि कै रन पायो । स्यंदन हूँ बलि कै संगि स्यंदन ढाहि दयो कब यौ जसु गायो । जिउँ सहबाज मनो चकवा संग एक धका हूँ के मार गिरायो ॥ २३६८ ॥ रथ तोर कै शत्रु की नंदग सो कबि स्याम कहै कटि ग्रीव गिराई । अउर जिती तिह के संग सैन हुती सु भले जमलोक पठाई । रोस भर्यो हरि ठाढो रह्यो रन सो उपमा कबि स्याम सुनाई । स्री ब्रिजनाइक चउदहूँ लोक मै पावत भ्यो बडी यौ सु बडाई ॥ २३६९ ॥ ॥ दोहरा ॥ दंतबक्र तब चित्त मै अति ही कोप बढाइ । स्री जदुपति जह ठाढहो तह ही पहुच्यो जाइ ॥ २३७० ॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाइक कउ जब ही तिन आइ अयोधन बीच हकार्यो । हउ मरि हउ नही यौ कह्यो ताहि सु जिउँ सिसपाल बली तुहि मार्यो । ऐसे सुन्यो जब स्याम जू बैन तबै

चल पड़े ॥ २३६६ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण जी द्वारका में पहुँचे तो उन्होंने शत्रु को देखा और उसे ललकार कर लड़ने को कहा । श्रीकृष्ण की यह बात सुनकर उसने कान तक धनुष खींचकर इस प्रकार बाण से प्रहार किया कि मानो किसी ने अग्नि को बुझाने के लिए उस पर घी डाला हो ॥ २३६७ ॥ जब शत्रु बाण चला रहा था तो श्रीकृष्ण ने रथ उसकी तरफ हँकवाया । उधर से शत्रु आ रहा था, इधर से वे उससे जा टकराए और इन्होंने रथ के बल से उसके रथ को ऐसे गिरा दिया जैसे बाज़ ने चकवा नामक पक्षी को एक ही धक्के से मार गिराया हो ॥ २३६८ ॥ अपने खड़ग से शत्रु का रथ काटते हुए उसकी गरदन काट गिराई तथा उसकी जितनी सेना थी उसे भी यमलोक भेज दिया । श्रीकृष्ण क्रोध से भरे हुए युद्धस्थल में खड़े रहे और इस प्रकार उनका यश चौदह लोकों में फैल गया ॥ २३६९ ॥ ॥ दोहा ॥ वक्रत दैत्य तब चित्त में क्रोधित होकर श्रीकृष्ण जी जहाँ खड़े थे पुनः वहाँ आ पहुँचा ॥ २३७० ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण को उसने युद्ध में पुनः ललकारा और कहा कि जिस प्रकार तुमने बली शिशुपाल को मार डाला

हरि जू पुन बान सँभार्यो । शत्र को स्याम भनै रथ ते फुन मूरछ कै कर भू पर डार्यो ॥ २३७१ ॥ ॥ सवैया ॥ लै सुध ह्वै सोऊ लोप गयो फिरि कोप भर्यो रन भीतर आयो । कान्ह के बाप को कान्ह ही कउ कटि माया को कै इक मूंड दिखायो । कोप कियो घनिस्याम तबै अरु नैन दुहून ते नीर बहायो । हाथ पै चक्र सुदरशन लै अरि को सिर काटि कै (मू०ग्रं०५५५) भूम गिरायो ॥ २३७२ ॥

॥ इति बकत्र दैत बधह धिआइ ॥

अथ बैदूरथ दैत बध कथनं ॥

॥ कबियो बाच ॥ ॥ सवैया ॥ जाहि शिवादि ब्रहम निमयो सु सदा अपने चित बीच बिचार्यो । स्याम भनै तिन कउ तबही कबही किरपानिध रूप दिखार्यो । रंग न रूप अउ राग न रेख इहै चहूँ बेदन भेद उचार्यो । ता धर मूरत जुद्ध बिखै इह स्याम भनै रन बीच सँघार्यो ॥ २३७३॥ ॥ दोहरा ॥ क्रिशन कोप जब शत्रु द्वै रन मै दए खपाइ ।

है, मैं वैसे नहीं मरूँगा । श्रीकृष्ण ने यह सुनकर पुनः हाथ में बाण सँभाला और शत्रु को मूर्च्छित करके धरती पर गिरा दिया ॥२३७१॥ ॥ सवैया ॥ होश में आकर बकत्र दैत्य लोप हो गया और पुनः क्रोध से भरकर अपनी माया के प्रभाव से उसने श्रीकृष्ण के पिता का सिर काटकर श्रीकृष्ण को दिखाया । श्रीकृष्ण अत्यन्त क्रोधित हुए और उनकी आँखों से जल बहने लगा । अब उन्होंने हाथ में सुदर्शन चक्र लिया और शत्रु का सिर काटकर ज़मीन पर गिरा दिया ॥ २३७२ ॥

॥ बकत्र दैत्य-वध अध्याय समाप्त ॥

विदूरथ दैत्य-वध-कथन

॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ शिव, ब्रह्मा आदि को पदा करनेवाले को जिसने अपने मन में स्मरण किया है उसे उस कृपासागर ने अपने दर्शन तत्काल दिये । जिसका कोई रूप रंग और आकार नहीं है और जिसके रहस्य को चारों बेदों ने उच्चरित किया है वही साकार होकर युद्ध में संघार कर रहा है ॥ २३७३ ॥ ॥ दोहा ॥ कृष्ण ने कुपित होकर जब युद्ध में दो शत्रुओं को मार दिया तो तीसरा जो बचा था वह भी युद्धस्थल में आ

तीसर जो जीवत बच्यो सो तिह पहुच्यो आइ ॥ २३७४ ॥ दाँतन सो दोऊ होठ कटि दोऊ नचावत नैन । तब हलधर तिह सो कहे कहित स्याम ए बैन ॥ २३७५ ॥ ॥ सवैया ॥ किउ जड़ जुद्ध करैं हरि सिउ मधकीटभ से जिह शत्रु खपाए । रावन से हरनाखश से हरनाछहूँ से जग जान न पाए । कंसहि से अरु सिध जरा संग देसन देसन के न्रिप आए । तैरे कहा अरे सो छिन मै इह स्याम भनै जमलोक पठाए ॥ २३७६ ॥ स्री ब्रिजनाथ तबै तिह सै कबि स्याम कहै इह भाँत उचार्यो । मै बक बीर अघासुर मार सु केसनि ते गहि कंस पछार्यो । तेइस छूहन सिध जरा हूँ की मै सुन सैन सुधार बिदार्यो । तै हमरे बल अग्रज स्याम कह्यो घनस्याम ते कउन बिचार्यो ॥ २३७७ ॥ मोह डरावत है कहि यों मुह कंस को बीर बकी बक मार्यो । सिध जरा हूँ की सैन सभै मोह भाखत हो छिन माहि सँघार्यो । मोकउ कहै बलुबीर अरे मेरे पउरख अग्रज कउन बिचार्यो । सूरन की इह रीत नही हरि छत्री है तू कि भयो भठिआर्यो ॥२३७८॥ ॥ सवैया ॥ आपने कोप की पावक मै बल तेरो सभै सम फूस जरैहो । स्रउन जितो तुहू अंगन मै सु सभै सम नीरह की अवटैहो । देगचा

पहुँचा ॥ २३७४ ॥ दाँतों से दोनों होठों को काटते हुए और दोनों आँखों को नचाते हुए बलराम ने उससे यह कहा ॥ २३७५ ॥ ॥ सवैया ॥ हे मूर्ख ! जिसने मधु-कैटभ जैसे दैत्यों को मार डाला; रावण, हिरण्यकशिपु, कंस, जरासन्ध और देश-देशान्तरों के राजाओं को समाप्त कर दिया उससे तुम क्यों युद्ध कर रहे हो। तुम तो कुछ भी नहीं हो, इसने तुमसे बड़े-बड़े शत्रुओं को यमलोक पहुँचा दिया है ॥ २३७६ ॥ तब श्रीकृष्ण जी ने भी उससे यह कहा कि मैंने बकासुर, अघासुर को मार डाला, कंस को केशों से पकड़कर पछाड़ डाला। जरासन्ध को तेईस अक्षौहिणी सेना समेत नष्ट कर डाला, अब तुम ही बताओ, तुम हमसे अधिक बलवान किसको समझते हो ? ॥ २३७७ ॥ तब उसने उत्तर दिया कि मुझे यह कहकर डरा रहे हो कि मैंने कंस को, बकासुर को और जरासंध आदि की सेना को क्षण भर में मार डाला है। तुम मुझसे पूछ रहे हो कि तुम्हारे पौरुष से बढ़कर अन्य कौन शक्तिशाली है ? यह शूरवीरों की परम्परा नहीं है; अतः हे कृष्ण ! तुम क्षत्रिय हो या भठियार हो ॥ २३७८ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं अपनी क्रोध की अग्नि में तेरे क्रोध को घास के तिनके के समान जला दूंगा। तुम्हारे शरीर में जितना रक्त है उसे मैं

आपने पउरख को रन मै जब ही कबि स्याम चड़ैहो । तउ तेरो अंग को मासु सभै तिह भीतर डारहै आछे पकैहो ॥२३७९॥ ॥ स्वैया ॥ ऐसे बिबाद कै आहव मै दोऊ क्रोध भरे अति जुद्ध मचायो । बानन सिउ दिव अउर दिवाकरि धूरि उठी रथ पइयन छायो । कउतक देखन कउ सस सूरज आए हुते तिन मंगल गायो । अंत न स्याम ते (मू०ग्रं०५५६) जीत सक्यो सोऊ अंतहि को पुन धाम सिधायो ॥ २३८० ॥ स्री ब्रिजनाथ हन्यो अरि को कबि स्याम कहै करि गाढ अयोधन । ह्वै कै कुरूप पर्यो धरि जुद्ध की तउन समै बयदूरथ को तन । स्रउनत संगि भर्यो पर्यो देख दया उपजी करुनानिध के मन । छोर सरासन टेर कह्यो दिज आज के तै करिहो न कबै रन ॥ २३८१ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटक क्रिशना अवतार बयदूरथ दैंत बधह ॥

बलभद्र जू तीरथ गवन कथनं ॥

॥ चौपई ॥ तीरथ करन बलभद्र सिधायो । नेमखुआरन भीतर आयो । आइ तहा न्हावन इन कयो । चित

जल की तरह उबालकर नष्ट कर दूँगा। जब मैं अपने पौरुष रूपी बर्तन को क्रोध की अग्नि पर चढ़ाऊँगा तो निश्चित रूप से तेरे अंगों का मांस उसमें भली प्रकार पकेगा ॥ २३७९ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार वाद-विवाद करते हुए युद्धस्थल में दोनों ने भीषण युद्ध किया। बाणों से इस प्रकार की धूल उठी कि सब रथ आदि पर छा गई। युद्ध-लीला देखने के लिए मंगल गीत गाते हुए सूर्य और चन्द्र आदि देवगण भी पहुँचे। शत्रु अन्ततः श्रीकृष्ण से जीत न सका और अन्त में यमलोक जा पहुँचा ॥ २३८० ॥ उस भीषण युद्ध में श्रीकृष्ण ने शत्रु को मार डाला। विदूरथ दैत्य का शरीर कुरूप होकर धरती पर गिर पड़ा। रक्त से भरे हुए उसके शरीर को देखकर श्रीकृष्ण जी ने दया और वैराग्य से परिपूर्ण होकर धनुष-बाण को छोड़ते हुए कहा कि अब आज से मैं युद्ध नहीं करूँगा ॥ २३८१ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक के कृष्णावतार में विदूरथ दैत्य-वध समाप्त ॥

बलभद्र जी का तीर्थ-गमन-कथन

॥ चौपाई ॥ बलराम जी तीर्थ करने के लिए नैमिषारण्य में आ पहुँचे

को शोक दूर करि दयो ॥ २३८२ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ रोम हरखन थो तहा सोऊ आयो तह दउर । हली मदरा पीत थो कबि स्याम ताही ठउर । सोऊ आइ ठाढ भयो तहा जड़ याहि सिर न निवाइकै । बलभद्र कुप्यो कमान करि लै मारियो तिह धाइ कै ॥ २३८३ ॥ ॥ चौपई ॥ सभ रिख उठ ठाढे तब भएं । आनंद बिसर चित्त के गए । इक रिख थो तिन ऐस उचार्‍यो । बुरा किओ हलधर दिज मार्‍यो ॥ २३८४ ॥ तब हलधर पुन ऐस उचरियो । बैठ रह्यो किउ न हम ते डरियो । तब मै क्रोध चित्त मै कीयो । मार कमान संग इह दीयो ॥ २३८५ ॥ ॥ स्वैया ॥ छत्री को पूत थो कोप भरे तिह नास कियो बिनती सुनि लीजै । ठाढ भए उठ कै रिख सो जड़ बैठि रह्यो कह्यो साच पतीजै । बात वहै करिऐ संग छत्रन जाके किए जग भीतर जीजै । ताही ते मै बधु ताको कियो सु अबै मोरी भूल छिमापन कीजै ॥ २३८६ ॥ ॥ रिख बाच हली सो ॥ ॥ चौपई ॥ मिलि सभ रिखन हली सो भाखी । कहै स्याम तिह दिज की साखी । इह बालक थापि रोस को हरो । बहुरो जाइ तीरथ सभ करो ॥ २३८७ ॥

वहाँ आकर इन्होंने स्नान किया और चित्त के शोक को दूर किया ॥ २३८२ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ रोमहर्ष वहाँ दौड़कर आ पहुँचा जहाँ बलराम मधुपान कर रहे थे। वहाँ आकर वह सिर झुकाकर खड़ा हो गया और बलराम ने दौड़कर हाथ में धनुष-बाण लेकर क्रोधित होकर उसे मार डाला ॥ २३८३ ॥ ॥ चौपाई ॥ मन के आनन्द को त्यागकर सभी ऋषि-मुनि उठ खड़े हुए और उनमें से एक ऋषि ने कहा कि हे बलराम ! तुमने ब्राह्मण को मारकर बुरा काम किया है ॥ २३८४ ॥ तब बलराम ने कहा कि मैं यहाँ बैठा था, यह मुझसे डरा क्यों नहीं। इसलिए मैंने क्रोधित होकर इसे धनुष हाथ में लेकर मार डाला ॥ २३८५ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं क्षत्रिय का पुत्र था और क्रोध में भरा हुआ था इसलिए मैंने इसका नाश कर दिया। बलराम यह प्रार्थना करते हुए उठ खड़ा हुआ और कहने लगा कि मैं सत्य कह रहा हूँ कि यह मूर्ख मेरे पास व्यर्थ ही बैठा रहा। क्षत्रियों के साथ वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए, जिससे संसार में जीवित रहा जा सके। इसीलिए मैंने इसका वध किया है, परन्तु मेरी भूल को अब क्षमा कर दीजिए ॥ २३८६ ॥ ॥ ऋषि उवाच हलधर के प्रति ॥ ॥ चौपाई ॥ सब ऋषियों ने द्विज के वध की साक्षी बनते हुए बलराम से कहा कि हे बालक ! अब तुम क्रोध का निवारण

॥ कबियो बाच ॥ ॥ स्वैया ॥ चारोई बेद मुखाग्रज होइ है ता सुत को बर ऐसो दियो । सोऊ ऐसे पुरान लग्यो रटने मनो तात सोऊ तिह फेरि जियो । चित आनंद कै सभहूँ रिखके मन कउ जिह को सम कउन बियो । सिर न्याइ तिनै सुख पाइ कै तीरथन स्याम सुरामह पैंड लियो ॥ २३८८ ॥ ॥ स्वैया ॥ गंगहि सिंध जरा मिलयो प्रिथमै बलभद्र (मू०ग्रं०५५७) तहा चलि नायो । फेर त्रिबेनी मै कै इशनान दे दानु बली हरिद्वार सिधायो । न्हाइ तहाँ पुन बद्री किदार गयो अति ही मन मै सुख पायो । अउर गनो कह लउ जग के सभ तीरथ कै तिह ठउरहि आयो ॥ २३८९ ॥ ॥ चौपई ॥ फेर नेमखवारन महि आयो । आइ रिखन कउ माथ निवायो । तीरथ कह्यो मै सभ ही करे । बिध पूरब जिउं तुमो उचरे ॥ २३९० ॥ ॥ हली बाच ॥ ॥ चौपई ॥ अब आइस जो होइ सु करो । हे रिख तुमरे पाइन परो । अब आइस जो होइ सु कीजै । हे रिख बातहि सत्ति पतीजै ॥ २३९१ ॥ ॥ रिख बाच ॥ ॥ चौपई ॥ तब मिल रिखन इहै जिय धारो । एक शत्रु है बडो हमारो । बलल नाम हलधर तिह मारो । मानो तिह पै

कर पुन: जाकर सभी तीर्थों का स्नान करो ॥ २३८७ ॥ ॥ कवि उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ उस ब्राह्मण के पुत्र को ऐसा वरदान दिया कि चारों वेद उसे कंठस्थ हो जाय । वह पुराण आदि का पाठ ऐसे करने लगा कि मानो पुन: उसका पिता जीवित हो उठा हो । अब उसकी तरह अन्य कोई आनन्दित नहीं था और इस प्रकार उसे सिर झुकाकर सुख प्राप्त कर शूरवीर बलराम तीर्थों के लिए निकल पड़ा ॥ २३८८ ॥ ॥ सवैया ॥ बलराम ने पहले गंगासागर में स्नान किया, फिर त्रिवेणी में स्नान कर यह महाबली हरिद्वार पहुँचा । वहाँ स्नान कर यह बद्री-केदारनाथ सुखपूर्वक गया । अब और कहाँ तक गिनती की जाय । यह सभी तीर्थ-स्थानों पर पहुँचा ॥ २३८९ ॥ ॥ चौपाई ॥ पुन: यह नैमिषारण्य में वापस आया और इसने सब मुनियों के सामने सिर झुकाया । तब बलराम ने कहा कि जिस प्रकार आपने कहा था, मैंने विधिपूर्वक सभी तीर्थों का स्नान किया है ॥ २३९० ॥ ॥ बलराम उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ हे ऋषिगण ! मैं अपने पाँव पड़ता हूँ और अब जैसी आज्ञा दें, वही करूँगा । हे मुनिवर ! मेरी बात का विश्वास करो । आप जो आज्ञा देंगे वही करूँगा ॥ २३९१ ॥ ॥ ऋषि उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ तब मुनियों ने मन में यह सोचा कि हमारा एक बहुत बड़ा शत्रु है जिसका नाम

काल पचारो ॥ २३९२ ॥ ॥ हली बाच ॥ ॥ दोहरा ॥ कहा ठउर तिह शत्रु की कहो रिखन के राज । मोहि बतावै जाहि कउ ताहि हनो हउ आज ॥ २३९३ ॥ ॥ चौपई ॥ तब इक रिख ने जाइ बतायो । जहाँ ठउर हो शत्रु बनायो । जह बलधरि सो शत्रु निहार्‌यो । हम संगि लरि इह भाँति पचार्‌यो ॥ २३९४ ॥ ॥ चौपई ॥ सुनत बचन तब शत्रु रिसायो । हाथ गाँगलो या परि आयो । हलधरि संग जुध या कयो । जिह सम अउर बीर नही हयो ॥ २३९५ ॥ बहुत जुद्ध तिह ठाँ दुहूँ धारो । दुहू सूर ते एक न हारो । जउ थकि जाहि बैठ तह रहै । मुच्छत होह जुद्ध फिरि चहै ॥ २३९६ ॥ ॥ चौपई ॥ फिर दोऊ गाज गाज रन पारै । आपसि बीच गदा बहु मारै । ठाढ रहै थिरु पैग न टरै । मानहु रिस परबत दोऊ लरै ॥ २३९७ ॥ दोऊ भट अभ्रन जिउ गाजै । बचन सुनत जिनकै जम लाजै । अति ही बीर रिसहि मै भरे । दोऊ बीर क्रोध सो लरे ॥ २३९८ ॥ जिन कउतक देखन सुर आए । भाँतिन भाँति बिवान बनाए ।

बलल है, हे बलराम! तुम कालरूप होकर उसका नाश करो ॥ २३९२ ॥ ॥ हलधर उवाच ॥ ॥ दोहा ॥ हे ऋषिराज! वह शत्रु कहाँ रहता है, मुझे उसका स्थान बताएँ ताकि मैं उसे आज ही मार डालूँ ॥ २३९३ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब एक ऋषि ने वह स्थान बताया जहाँ शत्रु था। बलराम ने शत्रु को देखा और उसे लड़ने के लिए ललकारा ॥ २३९४ ॥ ॥ चौपाई ॥ ललकार सुनकर शत्रु क्रोधित हो उठा और इधर इन लोगों ने हाथ के इशारे से बलराम को सब समझा दिया। उसने बलराम के साथ युद्ध किया। बलराम के समान अन्य कोई वीर नहीं हुआ है ॥ २३९५ ॥ उस स्थान पर घनघोर युद्ध हुआ और दोनों वीरों में से कोई भी नहीं हारा। थककर वे बैठ जाते थे और मूर्च्छित होने पर भी दोनों युद्ध की इच्छा ही व्यक्त करते थे ॥ २३९६ ॥ ॥ चौपाई ॥ फिर दोनों गरज-गरजकर युद्ध करने लगे और एक-दूसरे पर गदा से प्रहार करने लगे। वे स्थिर थे और एक भी क़दम पीछे नहीं हटते थे। ऐसा लग रहा था मानों दो पर्वत आपस में लड़ रहे हों ॥ २३९७ ॥ दोनों शूरवीर बादलों की तरह गरज रहे थे। उनकी आवाज़ सुनकर यमराज भी भयभीत हो रहे थे। अत्यन्त क्रोध से भरकर दोनों वीर एक-दूसरे से जूझ रहे थे २३९८ इस लीला को देखने के लिए देवगण भी भिन्न भिन्न प्रकार के विमानों मे बैठकर आ गए

उत रंभादिक त्रित्तर करैं। इत ते बीर भूम मै लरैं ॥२३९९॥ बहुत गदा तन लगैं न जानै। मुख ते मार ही मार बखानै। रन की छित ते पैग न टरै। रीझ रीझ दोऊ भट लरैं ॥२४००॥ ॥ सवैया ॥ जुद्ध भयो बहुतो तिह ठाँ तब मूसल कउ मुसली जू सँभार्यो। कै बल हाथन दोउन कै (मू०ग्रं०५१८) कबि स्याम कहै तकि ताहि प्रहार्यो। लागत घाइ हुयो मर ग्यो अरि अंतहि के फुन धाम सिधार्यो। यौ बलभद्र हन्यो तिन को सभ बिप्पन को फुन काज सवार्यो ॥ २४०१ ॥ ॥ सवैया ॥ पउरख जो मुसली धरि को कह्यो सो न्रिप कउ सुखदेव सुनायो। जाहि कथा दिज के मुख ते सभ स्रउन सुनी तिनहूं सुख पायो। जाके किए ससि सूर निसा दिव ताही की बात सुनो जिय आयो। ताही की बात सुनाउ दिजोतम बेदन कै जोऊ भेद न पायो ॥ २४०२ ॥ ॥ सवैया ॥ जाहि खरानन से सहसानन खोज रहे कछु पार न पायो। स्याम भनै जिह कउ चतुरानन बेदन के गुन भीतर गायो। खोज रहे शिव से जिह अंत अनंत कह्यो थक अंत न पायो। ताही की बात सुनो तुमरे मुख ते सुकदेव इहै ठहरायो ॥ २४०३ ॥ भूपति जौ इह भाँति कह्यो

उधर रंभा आदि अप्सराएँ नृत्य करने लगीं और इधर ये वीर धरती पर लड़ रहे थे ॥ २३९९ ॥ गदाओं के वारों की वे ज़रा परवाह नहीं कर रहे थे और मुख से मार ही मार की आवाज़ निकाल रहे थे। युद्धस्थल से एक भी क़दम पीछे नहीं हट रहे थे और प्रसन्नतापूर्वक दोनों शूरवीर लड़ रहे थे ॥ २४०० ॥ ॥ सवैया ॥ बहुत युद्ध चलने के बाद बलराम ने मुग्दर को सँभाला और दोनों हाथों से बलपूर्वक शत्रु पर प्रहार किया। प्रहार के लगते ही वह मरकर परलोक सिधार गया और इस प्रकार उसे मारकर बलराम ने विप्रों का कार्य सम्पूर्ण किया ॥ २४०१ ॥ ॥ सवैया ॥ इस प्रकार शुकदेव ने बलराम का पौरुष राजा को सुनाया। इस कथा को ब्राह्मण के मुँह से जिसने सुना उसने सुख प्राप्त किया। सूर्य-चन्द्र जिसकी रचना है उसकी बात ही सुननी चाहिए। हे विप्रवर ! उसी की कथा कहो, जिसका रहस्य वेद भी नहीं समझ सके ॥ २४०२ ॥ ॥ सवैया ॥ जिसे कार्तिकेय, शेषनाग खोजते थक गए पर उसका अन्त नहीं पा सके; जिसका गुणानुवाद ब्रह्मा ने वेदों में किया है; जिसे शिव आदि खोजते रहे पर उसके रहस्य को न समझ सके, हे शुकदेव उसी प्रभु की बात ही मुझे सुनाओ ॥२४०३॥ राजा ने जब यह कहा

सुक कउ सु कहूँ इह भाँति सुनाई । दीनदिआल की बात सुनावत हउ तुहि कउ तुहि भेदु छपाई । बिप्र सुदामा हुतो बिपता तिह की हउ कहउ हरि जैसे मिटाई । सो हउ सुनावत हउ तुहि कउ सुन लै सोऊ स्त्रउनन दै न्रिपराई ॥ २४०४ ॥

॥ इति श्री दसम सिकंधे पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे बलभद्र तीरथ इशनान करि दैत को मारत ग्रहि को आवत भए धिआइ ॥

सुदामा बारता कथनं ॥

॥ सवैया ॥ एक बधू जुत ब्राहमन थो तिह या जगु बीच बडो दुखु पायो । दूखत ह्वै इक दिवस कह्यो तिह मित्र है मो प्रभ जो जगरायो । ताकी त्रिया कह्यो जाहु तहा सुन मानत भ्यो तिह मूंड मुडायो । तंदल दै दिज दारदी हाथ सु द्वारवती हू की ओर सिधायो ॥ २४०५ ॥ ॥ दिज बाच ॥ हउ अरु स्याम संदीपन के ग्रहि बीच पड़े हित है अति ही करि । हउ चित मै धरि स्याम रह्यो रहै ह्वैहै सु स्यामहि मो चित मै धरि । दै धन पाइ घनो घरि मै कछु दीनन देतन नैक क्रिपा करि । ईस लहै किधो मोह निहार कै कैसी क्रिपा करि है हम पै हरि ॥ २४०६ ॥ मारग नाथ कै बिप्र जबै ग्रहि स्त्री जदुबीर

तो शुकदेव ने उत्तर दिया कि मैं आपसे दीनदयालु प्रभु के रहस्य को ही कह रहा हूँ । अब मैं यह बताता हूँ कि सुदामा नामक ब्राह्मण की विपत्ति प्रभु ने कैसे मिटाई । हे राजा ! अब मैं वह कहता हूँ आप ध्यानपूर्वक सुनें ॥ २४०४ ॥

॥ श्री दशम स्कंध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में बलभद्र तीर्थ-स्नान कर दैत्य को मार कर घर आए अध्याय समाप्त ॥

सुदामा-वार्त्ता-कथन

॥ सवैया ॥ एक विवाहित ब्राह्मण था जिसने बहुत दुःख भोगा था दुःखी होकर उसने एक दिन (अपनी पत्नी से) कहा कि श्रीकृष्ण मेरे मित्र हैं। उसकी पत्नी ने कहा कि तुम वहाँ अपने मित्र के पास जाओ। विप्र ने मान लिया। सिर मुँड़वाकर उस दरिद्र ने थोड़े चावल लिये और द्वारिका की ओर चल पड़ा ॥ २४०५ ॥ ॥ द्विज उवाच ॥ मैं और श्रीकृष्ण संदीपन गुरु के पास इकट्ठे पढ़ते रहे हैं। मुझे जब श्रीकृष्ण याद हैं तो उन्हें मैं भी याद होऊँगा ये दीनों को कितना कुछ देते हैं मुझे भी कृपा कर कुछ दे दें पता

के भीतर आयो। स्री ब्रिजनाथ निहारत ताहि सु बिप्र सुदामा इहै ठहरायो। आसन ते उठ आतुर हुइ अति प्रीत बढाइ कै (म्०पं०५५६) लैबे कउ धायो। पाइ पर्‌यो तिह को हरि जी फिर स्याम भनै उठ कंठ लगायो॥ २४०७॥ लै तिह मंदर माहि गयो तिह को अति ही करि आदरु कीनो। बारु मँगाइ तही दिज के दोऊ पाइन ध्वै चरनाम्रित लीनो। झौपरी ते तिह ठाँ हरि जू सुभ कंचन को पुन मंदर कीनो। तउ न सक्यो सु बिदा करि बिप्पहि स्याम भनै तिह रंच न दीनो॥ २४०८॥ ॥ दोहरा॥ जब दिज के ग्रहि पड़त तब मो सो हुतो गरोह। अब लालच बस हरि भए कछू न दीनो मोह॥२४०९॥ ॥ कबियो बाच॥ ॥ सवैया॥ जो ब्रिजनाथ की सेव करै पुन पावत है बहुतो धन सोऊ। लोग कहा तिह भेदहि पावत आपनी जानत है पुन ओऊ। साधन के बरता हरिता दुख बैरन के सु बडे घर खोऊ। दीनन के जग पालबे काज गरीबनिवाज न दूसर कोऊ॥ २४१०॥ ॥ सवैया॥ सो सिसपाल हन्यो छिन मै जिह सो कोऊ अउर न मान धरै। अरु दंतबक्त्र हन्यो जमलोक ते जो कबहू न रतीकु डरै। रिस

नहीं ईश्वर जाने, मुझे देखकर वे मुझ पर कैसी कृपा करेंगे॥ २४०६॥ मार्ग तय कर जब विप्र श्रीकृष्ण के निवास पर पहुँचा तो श्रीकृष्ण ने पहचान लिया कि यह विप्र सुदामा है। वे आसन छोड़कर प्रीतिपूर्वक उसे ले आने के लिए आगे बढ़े। श्रीकृष्ण ने उसके चरण छुए और फिर उसे गले से लगा लिया॥ २४०७॥ उसे लेकर वे महल में गए और उसका स्वागत-सत्कार किया। जल मँगाकर विप्र के चरण धोये और चरणामृत ग्रहण किया। उधर झोंपड़े से उसका घर महल बना दिया। यह सब करके श्रीकृष्ण ने विप्र को विदा कर दिया और उसे (प्रत्यक्ष रूप में) कुछ भी नहीं दिया॥२४०८॥ ॥ दोहा॥ जब गुरु के घर पर पढ़ते थे तब मुझसे स्नेह था। किन्तु अब श्रीहरि लालची हो गये हैं, इसलिए मुझे कुछ भी नहीं दिया॥ २४०९॥ ॥ कवि उवाच॥ ॥ सवैया॥ जो श्रीकृष्ण की सेवा करता है, वह अत्यन्त धन प्राप्त करता है; परन्तु लोग इस रहस्य को कहाँ समझते हैं और अपनी ही बात को समझते हैं। श्रीकृष्ण साधुओं के पोषक, उनके दुःखों को दूर करनेवाले तथा दुष्टों के घरों को नष्ट करनेवाले हैं। दीनों का भरण-पोषण करनेवाला श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य दूसरा कोई नहीं है॥ २४१०॥ ॥ सवैया॥ जो किसी की परवाह न करनेवाला था उस शिशुपाल को इन्होंने क्षण भर में मार

साथ भुमासुर जीत लयो जोऊ इंद्र से बीरन संग अरै । अब कंचन धाम कियो द्विज को ब्रिजनाथ बिना ऐसी कउन करै ॥२४११॥ जा मधु कीटभ को बधु कै भुअ इंद्र दई करिकै करुनाई । अउर जिती इह सामुहि शत्रन सैन गई सभ याह खपाई । जाहि भभीछन राज दयो अरु रावन मारकै लंक लुटाई । कंचन को तिह धाम दयो कबि स्याम कहै कहे कउन बडाई ॥ २४१२ ॥ ॥ बिशन पद ॥ ॥ धनासरी ॥ जिह म्रिग राखे नैन बनाइ । अंजन रेख स्याम पर अटकल सुंदर फांधि चड़ाइ । म्रिग मन हेर जिनै नर नारिन रहत सदा उरझाइ । तिन के ऊपरि अपनी रुच सिउ रीझ स्याम बलि जाइ ॥ २४१३ ॥ हरि के नैना जलज ठए । दिपत जोति दिन मन दुत मुख ते कबहु न मुदत भए । तिन कउ देख जनन द्रिग पुतरी लगी सु भाव भए । जनु पराग कमलन की ऊपर भ्रमर कोट भ्रमए ॥ २४१४ ॥ (मू०ग्रं०५६०)

॥ इति स्री दसम सिकंध्रे पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे दिज सुदामा के दारद दूर करत कंचन धाम कर देत भए ॥

डाला; यमलोक से भी न डरनेवाला बकल दैत्य भी इन्होंने मारा; इंद्र के समान वीरों से लड़नेवाले भूमासुर को भी इन्होंने जीत लिया और अब सोने का महल इन्होंने ब्राह्मण सुदामा को दे दिया। भला इनके सिवा ऐसा कौन कर सकता है ॥ २४११ ॥ जिसने मधु-कैटभ का वध कर करुणापूरित होकर इन्द्र को धरती प्रदान की। जिसके सामने जितनी भी सेना गई उसका उसने संहार किया; जिसने विभीषण को राज दिया और रावण को मारकर लंका को लुटा दिया उसने यदि आज ब्राह्मण को सोने का महल दे दिया तो भला उसके लिए यह कौन सी बड़ी बात है ॥ २४१२ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ धनासरी ॥ जिसके नयन मृग के समान हैं उन सुन्दर नेत्रों पर अंजन की रेखा शोभायमान है। वह रेखा उस फन्दे के समान है जिसमें सभी नर-नारी सदा उलझे रहते हैं। श्रीकृष्ण भी अपनी रुचि के अनुसार सब पर प्रसन्न होते रहते हैं ॥ २४१३ ॥ श्रीकृष्ण के नेत्र कमल के समान हैं जो कि मुख पर देदीप्यमान होते हुए कभी भी मुँदते नहीं। उनको देखकर माँ की आँखें भी प्रसन्न भाव से उन्हीं नेत्रों से ऐसे लगी रहती हैं जैसे परागयुक्त कमल पर भौंरे मँडरा रहे हों ॥ २४१४ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रन्थ के कृष्णावतार में विप्र सुदामा की दरिद्रता दूर कर ——— दिया समाप्त ॥

ग्रहन सूरज के दिन कुरखेत्र आवन कथनं ॥

॥ सवैया ॥ जउ रवि के ग्रसबे हुको दिवस लग्यो कहि जोतिकी यौत सुनायो । कान्ह की मात बिमात अरु भ्रात चले कुरखेत्र इहै ठहरायो । तात चल्यो ब्रिजनाथ को लै संगि भांतन भांत को सैन बनायो । जो कोऊ अंत चहै तिह को तिन को कछु आवत अंत न पायो ॥ २४१५ ॥ इत ते ब्रिजनाइक आवत भे उत नंद ते आदि सभै तिह आए । चंद्रभगा ब्रिखभान सुता सभ ग्वारनि स्याम जबै दरसाए । रूप निहार रही चकि कै जकि गी कछु बैन कह्यो नही जाए । नंद जसोमत मोह बढाइ कै कान्ह जू के उर मै लपटाए ॥ २४१६ ॥ नंद जसोमत प्रेम बढाइ कै नैनन ते दोऊ नीर बहायो । ऐसे कह्यो ब्रिज कउ तुम त्याग गए मथुरा जिय ऐसे ही भायो । का भयो जो तुम मार चंडूर प्रहार केसं गहि कंसहि घायो । हउ निरमोह निहार दशा हमरी तुमरे मन मोह न आयो ॥ २४१७ ॥ ॥ सवैया ॥ प्रीत बढाइ जसोमत यौ ब्रिजभूखन सौ इक बैन उचारो । पाल किए जब पूत बडे तुम देखयो तबै तुम हेत

सूर्यग्रहण के दिन कुरुक्षेत्र-आगमन-कथन

॥ सवैया ॥ जब ज्योतिषी ने सूर्यग्रहण के बारे में बताया तब कृष्ण की माता तथा भाई आदि ने कुरुक्षेत्र जाने का विचार किया। विभिन्न प्रकार के दल बनाकर श्रीकृष्ण को साथ लेकर उनके पिता चल पड़े और यह सब इतना रहस्यपूर्ण तथा अद्भुत था कि कोई भी इस रहस्य को समझ न सका ॥ २४१५ ॥ इधर से श्रीकृष्ण आ रहे थे और उधर से नन्द आदि सब लोग चन्द्रभगा राधा तथा गोपियाँ श्रीकृष्ण को आती हुई दिखाई दीं। वे सब श्रीकृष्ण का सौन्दर्य देखकर चकित और चुप हो गईं। नन्द और यशोदा ने अत्यन्त प्रेम का अनुभव करते हुए श्रीकृष्ण को गले से लिपटा लिया ॥२४१६॥ नन्द-यशोदा ने प्रेमपूर्वक आँखों से नीर बहाते हुए कहा कि हे कृष्ण! तुम तो ब्रज को एकदम ही त्यागकर चले आये और तुम्हें तो लगता है कि अब केवल मथुरा ही प्रिय है। क्या हुआ, यदि तुमने चंडूर को मारा और कंस को केशों से पकड़कर उसका संहार किया; हे निर्मोही! तुमको हम लोगों की दशा देखकर जरा-सा भी मोह नहीं हुआ ॥ २४१७ ॥ ॥ सवैया ॥ तब प्रेमपूर्वक यशोदा ने भी श्रीकृष्ण से कहा कि हे पुत्र! मैंने तुम्हें पालकर बड़ा किया है,

तुहारो । तोकह दोश लगाउ हउ किउ हरि है सभ ही फुन दोश हमारो । ऊखल सो तुहि बाँध कै मार्‌यो है जानत हउ सोऊ बैर चितारो ॥ २४१८ ॥ माइ हउ बात कहो तुम सो सु तो मै बतिआ सुन साच पतीजै । अउरन की सिख लै तब जिउँ तैसो काज करो जिन यौ सुन लीजै । नैक बिछोह भए तुमरे मरिऐ तुमरे पल हेरत जीजै । बाल बलाइ लिउ हउ बहुरो ब्रिज को ब्रिजभूखन भूखत कीजै ॥ २४१९ ॥ ॥ दोहरा ॥ नंद जसोदह क्रिशन मिलि अति चित मै सुख पाइ । सभै गोपका जिह हुती तह ही पहुचे जाइ ॥ २४२० ॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथह को जबही लखिकै तिह ग्वारन आगम पायो । आगे ही एक चली उठ कै नहि एकन ए उर आनंद मायो । भेख मलीन जे ग्वार हुती तिन भेख नवीन सजे कबि गायो । मानहु म्रितक जाग उठ्‌यो तिन के तन मै बहुरो जिय आयो ॥२४२१॥ ॥ ग्वारनि बाच ॥ ॥ सवैया ॥ यौ इक भाखत है मुख ते मिलि ग्वारन स्री ब्रिजनाथ चितैकै । जउ अक्रूर के संग गए चड़ स्यंदन नाथ हुलास बढैकै । दूर हुलास (मू०ग्रं०५६१) कियो ब्रिज ते कछु ग्वारन की करना नहि कै कै । एक कहै इह भाँति सखी

परन्तु तुम्हारा कोई दोष नहीं है, सब दोष मेरा ही है। लगता है मैंने जो तुम्हें ऊखल से बाँधकर एक बार पीटा था तुम उसी दुःख को स्मरण कर यह सब बदला निकाल रहे हो ॥ २४१८ ॥ हे माँ ! मैं जो तुमसे कह रहा हूँ उसे सच मानना और किसी अन्य की बात को मानकर कोई धारणा मत बनाना। तुमसे क्षण भर भी बिछुड़ने पर मरण की स्थिति आ जाती है और तुम्हें देखकर ही जीवित रहा जा सकता है। हे माँ ! मेरे बालस्वरूप में आपने मेरी सब बलाएँ अपने ऊपर ली हैं। अब पुनः मुझे ब्रज का आभूषण बना रहने का सम्मान दो ॥ २४१९ ॥ ॥ दोहा ॥ नन्द, यशोदा और कृष्ण मन में अत्यन्त सुख प्राप्त कर जहाँ सभी गोपिकाएँ थीं, वहाँ आ पहुँचे ॥ २४२० ॥ ॥ सवैया ॥ जब गोपियों ने श्रीकृष्ण को आते हुए देखा तो एक उठकर आगे की ओर चली और अनेकों के मन में आनन्द भर उठा। मलिन वेष वाली गोपियों पर भी नयापन ऐसे आ गया मानो कोई मृतक उठकर खड़ा हो गया हो और उसको पुनः प्राण मिल गये हों ॥ २४२१ ॥ ॥ गोपी उवाच ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण को देखकर एक गोपी ने कहा कि जब से श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर अक्रूर के साथ रथ पर चढ़कर गए हैं तब से इन्होंने गोपियों पर से कृपा हटाकर सारे ब्रज के आनन्द को समाप्त कर दिया है। कोई इस प्रकार

मुख जोवत एक रही चुप ह्वैकं ॥ २४२२ ॥ ॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाथ गयो मथुरा कछु चित्त बिखै सखी हेत न धार्यो। नैक न मोह कियो चित्त मै निरमोह ही आपन चित्त बिचार्यो। यौ ब्रिजनाइक ग्वार तजी जसु ता छब को कबि स्याम उचार्यो। आपनी चउपहि ते अपनी मानो कुंजहि त्याग भुजंग सिधार्यो ॥ २४२३ ॥ चंद्रभगा ब्रिखभान सुता ब्रिजनाइक कउ इह भाँति सुनाई। स्री ब्रिजनाथ गए मथुरा तजि के ब्रिज प्रीत सभै बिसराई। राधका जा बिध मान कियो हरि तैसे ही मान कियो जिय आई। ता दिन के बिछुरे बिछुरे सु दई हम कउ अब आन दिखाई ॥ २४२४ ॥ ॥ सवैया ॥ एक मिली कहि यौ बतिया जु हुती ब्रिजभूखन कउ अति प्यारी। चंद्रभगा ब्रिखभान सुता जु धरे तन बीच कुसुंभन सारी। केल कथा दई छोर रही चक चित्रह की पुतरी सी सवारी। स्याम भनै ब्रिजनाथ तबै सभ ग्वारन ग्यान ही मै करि डारी ॥ २४२५ ॥ ॥ बिशन पद ॥ ॥ धनासरी ॥ सुन पाई ब्रिज बाला मोहन आए है कुरखेत। दरशन देख सभै दुख बिसरे बेद कहत जिह

की बातें कर रही है और कोई चुपचाप खड़ी हुई है ॥२४२२॥ ॥ सवैया ॥ हे सखी ! श्रीकृष्ण मथुरा चले गये हैं, उन्होंने कभी भी हमारे लिए मन में प्रेम धारण नहीं किया। उन्हें तनिक भी हम लोगों के लिए मोह नही हुआ और वे अपने मन में निर्मोही हो गये। श्रीकृष्ण ने गोपियों को इस प्रकार त्याग दिया जिस प्रकार सर्प अपनी केंचुल त्यागकर चला जाता है ॥ २४२३ ॥ चन्द्रभगा और राधा ने श्रीकृष्ण को यह कहा कि श्रीकृष्ण ब्रज की प्रीति त्याग कर मथुरा चले गये हैं। जिस प्रकार राधा ने मान किया था, श्रीकृष्ण ने सोचा कि मैं भी वैसे ही मान करूँ। इतने दिनों के बिछड़े अब हम एक-दूसरे को देख सके हैं ॥ २४२४ ॥ ॥ सवैया ॥ यह कहकर चन्द्रभगा और राधा लाल रंग की साड़ी पहने हुए रूप में शोभायमान श्रीकृष्ण जी को मिली। केलिकथा को छोड़कर वे सब चकित होकर श्रीकृष्ण को देख रही हैं और श्याम कवि का कथन है कि श्रीकृष्ण ने गोपियों को ज्ञान का उपदेश दिया ॥ २४२५ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ धनासरी ॥ ब्रजबालाओं ने सुना कि कुरुक्षेत्र को मोहित करने के लिए श्रीकृष्ण जी आए हैं। ये वे श्रीकृष्ण हैं जिनके दर्शन करके सभी दुःख दूर हो जाते हैं और वेद जिन्हें 'नित्य' कहते हैं। हमारा तन-मन उन्हीं के ~~चरण-कमलों~~ में अटका हुआ है और हमारा धन भी उन्ही पर न्योछावर है तभी कृष्ण ने सबको एकान्त में बुलाया और ज्ञान

नेत । तन मन अटिक्यो चरन कवल सौ धन निवछावर देत । क्रिशन इकांत कियो तिह ही छिन कह्यो ग्यान सिख लेहु । मिल बिछुरन दोऊ इह जग मै मिथिआ तनु असनेहु ॥ २४२६ ॥ ॥ सवैया ॥ ब्रिजनाइक ठाँढ भए उठके सभ ग्वारन कौ ऐसे ग्यान द्रिड़ाए । नंद जसोमत पंड के पुत्रन संगि मिले अति हेत बढाए । कैरवि आइ हुतो जितने सभ आपने आपने धाम सिधाए । स्याम भनै बहुरो ब्रिजनाइक द्वारवती हूँ के भीतर आए ॥ २४२७ ॥ ॥ दोहरा ॥ जग्य तहा करि कै चल्यो स्याम भनै बसुदेव । जिह को सुत चउदह भवन सभ देवन को देव ॥ २४२८ ॥ ॥ चौपई ॥ चल्यो स्याम जू प्रेम बढाई । पूज्यो चरन पिता के जाई । तात जबै लखि आवत पाए । त्रिभवन के करता ठहराए ॥ २४२९ ॥ बहु बिध हरि की उसतत करी । मूरत हरि की चित मै धरी । अपनो प्रभ लखि पूजा (मू०ग्रं०५६२) कीनी । स्री जदुबीर जान सभ लीनी ॥ २४३० ॥

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे कुलखेत्र बिखै जग करके ग्वारनि को ग्यान दिड़ाइ द्वारवती जात भए धिआइ ॥

का उपदेश ग्रहण करने के लिए कहते हुए उन सबसे कहा कि मिलना और बिछुड़ना तो इस संसार की परम्परा है तथा तन से किया हुआ स्नेह मिथ्या है ॥ २४२६ ॥ ॥ सवैया ॥ सभी गोपियों को इस प्रकार ज्ञान का उपदेश देकर उठ खड़े हुए। नन्द और यशोदा पाण्डवों से मिलकर भी प्रसन्न हुए। इधर कौरव भी अपने-अपने घरों को चले गये तथा श्रीकृष्ण भी पुनः द्वारका में आ गए ॥ २४२७ ॥ ॥ दोहा ॥ श्रीकृष्ण ने चलने से पहले यज्ञ किया क्योंकि वसुदेव का पुत्र चौदह लोकों में देवताओं का भी देव है ॥ २४२८ ॥ ॥ चौपाई ॥ श्रीकृष्ण जी प्रेमपूर्वक चले और उन्होंने घर पहुँचकर पिता के चरणों की पूजा की। पिता ने जब उन्हें आते हुए देखा तो उन्हें त्रिलोकी के कर्ता के रूप में पहचाना ॥ २४२९ ॥ उन्होंने विभिन्न प्रकार से श्रीकृष्ण की स्तुति की और श्रीकृष्ण की मूर्ति को अपने मन में धारण किया। अपना प्रभु मानते हुए इनकी पूजा की और श्रीकृष्ण ने भी मन-ही-मन सब रहस्य जान लिया ॥ २४३० ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में कुरुक्षेत्र में यज्ञ कर गोपियों को ज्ञान देकर द्वारका गये अध्याय समाप्त

देवकी के छठ ही पुत्र लिआइ देन कथनं ॥

॥ सवैया ॥ स्री ब्रिजनाइक पै तबही कबि स्याम कहै चलि देवकी आई । चउदह लोकन के करता तुम सत्ति इहै मन मै ठहराई । हो मधकीटभ के करता बध ऐसे करी हरि जान बडाई । पुत्र जिते हमरे हने कंस सोऊ हम कउ तुम देहु मँगाई ॥ २४३१ ॥ आन दिए बल लोक ते बालक माइ के बैन जबै सुन पाए । देवकी बालक जान तिनै कबि स्याम कहै उठ कंठ लगाए । जनमन की सुध भी तिनको हम बामन है इह बैन सुनाए । मात पिताहूँ के देखत ही तेऊ ब्रहम के लोक की ओर सिधाए ॥ २४३२ ॥

अथ सुभद्रा को ब्याह कथनं ॥

॥ चौपई ॥ तीरथ करन पार्थ तब धायो । द्वारवती जदुपति दरसायो । अउर सुभद्रा रूप निहार्यो । चित को शोक दूर कर डार्यो ॥ २४३३ ॥ ॥ चौपई ॥ याको बरो इहै चित

देवकी के सभी छः पुत्र लाकर देना

॥ सवैया ॥ कवि श्याम का कथन है कि तब श्रीकृष्ण के पास देवकी आई और मन में यह सत्य रूप में मानने लगी कि हे प्रभु ! तुम चौदह लोकों के कर्ता हो और मधु तथा कैटभ का संहार करनेवाले हो। इस प्रकार श्रीकृष्ण की स्तुति करते हुए देवकी ने कहा कि हे प्रभु ! कंस ने हमारे जितने पुत्रों को मारा है, मुझे वे सब ला दें ॥ २४३१ ॥ माता के वचन सुनकर पाताललोक से सभी बालक प्रभु ने ला दिये। देवकी ने भी उन बच्चों को अपना मानकर गले से लगा लिया। उनको भी अपने जन्म की सुधि हो गई और उन्हें अपने उच्च कुल का भी बोध हो गया। माता-पिता के दर्शन करते ही वे सभी ब्रह्मलोक की ओर चल पड़े ॥ २४३२ ॥

सुभद्रा-विवाह-कथन

॥ चौपाई ॥ तब अर्जुन तीर्थयात्रा पर निकला और उसने द्वारका में श्रीकृष्ण के दर्शन किए। वहीं उसने रूपवती सुभद्रा को देखा तथा उसके मन का शोक दूर हो गया ॥ २४३३ ॥ ॥ चौपाई ॥ सुभद्रा से विवाह करने के

आयो। उहको उते चित्त ललचायो। जदुपति बात सभै इह जानी। बर्‌यो चहत अरजन अभमानी ॥ २४३४ ॥ ॥ दोहरा ॥ पारथ निकटि बुलाइकै कही क्रिशन समझाइ। तुम सु सुभद्रा को हरो हउ नहि लरिहो आइ ॥ २४३५ ॥ ॥ चौपई ॥ तब अरजन सोई फुन कर्‌यो। पूजन जात सुभद्रा हर्‌यो। जादव सभै कोप तब भरे। स्री जदुपति पै आइ पुकरे ॥ २४३६ ॥ ॥ सवैया ॥ स्रीब्रिजराज तबै तिन्न सो कबि स्याम कहै इह भांत सुनाई। बीर बडे तुमहूं को कहावत जाइ मंडो तिह संग लराई। पारथ सो रन मांडन काज चले तुमरी म्रित ही निजकाई। किउ न चलो तुम मै तब तै तज्यो आहव स्याम इहै ठहिराई ॥ २४३७ ॥ ॥ चौपई ॥ तब जोधा जदुपति के धाए। पारथ कउ ए बैन सुनाए। सुन रे अरजन तो ते डरिहै। महां पतित तेरो बध करिहै ॥२४३८॥ ॥ दोहरा ॥ पंड पुत्र जानी इहै मारत जादव मोर। जिय आतर होइ स्याम (मू०ग्रं०५६२) कहि चल्यो द्वारका ओर ॥ २४३९ ॥ ॥ सवैया ॥ सूक गयो मुख पारथ को मुसलीधरि जीत जबै ग्रहि आयो। स्री ब्रिजनाथ समोध किओ

लिए अर्जुन का दिल ललचा उठा। श्रीकृष्ण ने भी यह सब जान लिया कि अर्जुन सुभद्रा से विवाह करना चाहता है ॥ २४३४ ॥ ॥ दोहा ॥ अर्जुन को पास बुलाकर कृष्ण ने समझाया कि तुम सुभद्रा का हरण कर लो, मैं तुमसे युद्ध नहीं करूँगा ॥ २४३५ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब अर्जुन ने वही किया और पूजन को जाती हुई सुभद्रा का हरण कर लिया। तब सभी यादव क्रोध से भरकर श्रीकृष्ण के पास आकर पुकारने लगे ॥ २४३६ ॥ ॥ सवैया ॥ तब श्रीकृष्ण ने उन लोगों से कहा, तुम लोग बहुत बड़े वीर कहलाते हो। तुम लोग जाओ और उसके साथ युद्ध करो। अर्जुन से युद्ध करने तुम लोग चले हो तो इसका अर्थ है कि तुम लोगों की मृत्यु पास आ चुकी है। मैंने तो पहले ही युद्ध त्याग दिया है। इसलिए तुम लोग जाओ और युद्ध करो ॥ २४३७ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब श्रीकृष्ण के योद्धा चले और उन्होंने अर्जुन से कहा कि अरे अर्जुन, हम तुमसे डरते नहीं हैं। तुम महापतित हो, हम तुम्हारा वध करेंगे ॥ २४३८ ॥ ॥ दोहा ॥ अर्जुन ने जब यह समझा कि यादव मुझे मार डालेंगे तो वह व्याकुल होकर द्वारका की तरफ़ चल पड़ा ॥ २४३९ ॥ ॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण के लोगों द्वारा जीते जाने पर जब अर्जुन द्वारका पहुँचा तब श्रीकृष्ण ने उसको कि हे अर्जुन तुम चित्त में इतना डरे हुए

अरे पारथ किउ चित मै डरपायो । ब्याह सुभद्रा को कोन तबै जबही मुसली धरि कउ समझायो । दाज दयो जिह पार न पइयत लै तिह अरजन धाम सिधायो ।। २४४० ।।

।। इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे पारथ सुभद्रा कउ हरि कै ब्याह करि ल्यावत भए ।।

अथ मिथलापुर राजे अरु ब्रहमन का प्रसंग अरु भसमागद दैत को छलकै मार रुद्र की छडावत भए ।।

।। दोहरा ।। मिथल देस को भूप इक अति हुलास तिह नाम । जदुपति की पूजा करै निसदिन आठो जाम ।। २४४१ ।। मत के दिज इक थो तहा बिन हरि नाम न लेइ । जो हरि की बातै करै ताही मै चित देइ ।। २४४२ ।। ।। स्वैया ।। भूपत जाइ दिजोतम के ग्रहि हेरहि स्री ब्रिजनाथ बिचारै । अउर कछू नहि बात करै कबि स्याम कहै दोऊ साँझ सवारै । बिप्र कहै घनिस्याम ही आइहै स्याम ही आइहै भूप उचारै । स्री ब्रिजनाइक की चरचा संग सात घरी पुन जाम न टारै ।।२४४३।।

क्यों हो । तब उन्होंने हलधर को समझाकर सुभद्रा का विवाह अर्जुन से कर दिया । अर्जुन को बहुत सा दहेज दिया जिसे लेकर वह घर की ओर च पड़ा ।। २४४० ।।

।। श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में अर्जुन सुभद्रा का हरण कर विवाह कर ले आये अध्याय समाप्त ।।

मिथिलापुरी के राजा और ब्राह्मण की कथा तथा भस्मांगद दैत्य को छल करके मारकर रुद्र को छुड़ाना

।। दोहा ।। मिथिला देश का एक राजा था जिसका नाम अतिहुलास ा । वह आठों प्रहर श्रीकृष्ण की पूजा-अर्चना किया करता था ।। २४४१ ।। वहाँ एक ब्राह्मण था जो सिवा परमात्मा के नाम के अन्य कोई बात नहीं करता था । जो परमात्मा की बातें करता था वह उसी में अपना मन लगाता था ।। २४४२ ।। ।। सवैया ।। राजा उस ब्राह्मण के घर जाकर श्रीकृष्ण को देखने का विचार करता है और यह दोनों श्रीकृष्ण जी के अलावा सुबह-शाम किसी अन्य की बात नहीं करते । ब्राह्मण कहता है कि श्रीकृष्ण जी आयेंगे और राजा भी कहता है कि श्रीकृष्ण जी आयेंगे इस प्रकार सात घड़ी तक

॥ सवैया ॥ भूप दिजोतम की अति ही हरिजू मन मै जब प्रीत बिचारी । मेरे है ध्यान के बीच परे इह अउर कथा ग्रहि की सु बिसारी । दारक कउ कहि स्यंदन पै जु करी प्रभ जी तिह ओर सवारी । सा धन जाइ सनाथ करो अब स्री बिजनाथ इहै जिअ धारी ॥ २४४४ ॥ ॥ चौपई ॥ तब जदुपति दुइ रूप बनायो । इक दिज के इक न्रिप के आयो । दिज न्रिप अति सेवा तिह करी । चित की सभ चिंता परहरी ॥ २४४५ ॥ ॥ दोहरा ॥ चार मास हरिजू तहा रहे बहुतु सुख पाइ । बहुरु आपने ग्रहि गए जिसकी बंब बजाइ ॥ २४४६ ॥ इक कहिगे दिज भूप कउ ब्रिजपति करइ सनेह । बेद चार जिउ मुहि जपै तिउ मुहि जपु सुनि लेहु ॥२४४७॥ (मू०ग्रं०५६४)

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे मिथलापुर राजे अरु ब्रहमन का प्रसंग समापतम ॥

सुक जी राजा प्रीछत पहि कहित है ॥

॥ सवैया ॥ का बिध गावत है गुन बेद सुनो तुम ते सुक

श्रीकृष्ण जी की ही चर्चा चलती रहती है ॥ २४४३ ॥ ॥ सवैया ॥ राजा और ब्राह्मण के प्रेम को श्रीकृष्ण जी ने अनुभव किया और उन्होंने सोचा कि ये लोग घर का अन्य कामकाज छोड़कर मेरे ही ध्यान में रमे हुए हैं। अपने सारथि दारुक को बुलवाकर उन्होंने रथ पर उस ओर जाने के लिए सवारी की और यह सोचा कि उन अनाथों को चलकर दर्शन देकर कृतार्थ किया जाय ॥ २४४४ ॥ ॥ चौपाई ॥ तब श्रीकृष्ण दो रूप बनाए और एक रूप में ब्राह्मण के पास और दूसरे में राजा के पास पहुँचे। राजा और ब्राह्मण दोनों ने अत्यन्त सेवा की तथा चित्त की सभी चिन्ताओं का त्याग कर दिया ॥२४४५॥ ॥ दोहा ॥ चार माह तक श्रीकृष्ण जी वहाँ सुखपूर्वक रहे और पुनः यश के नगाड़े बजवाते हुए वापस अपने घर आ गये ॥ २४४६ ॥ श्रीकृष्ण ने स्नेहपूर्वक राजा और ब्राह्मण को यह कहा कि जिस प्रकार चारों वेद मेरा जाप करते हैं, तुम भी जाप और मेरे नाम को श्रवण करते रहो ॥ २४४७ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में मिथिलापुर के राजा और ब्राह्मण का प्रसंग समाप्त ॥

सुकदेव जी का राजा परीक्षित से कहना

॥ सवैया ॥ हे राजा ! सुनो कि वेद किस प्रकार उसका गुणगान करते

इउ जिय आई। त्यागि सभै फुन धाम कै लालच स्याम भनै प्रभ की जसताई। इउ गुन गावत बेद सुनो तुम रंग न रूप लख्यो कछु जाई। इउ सु कबै न कहै न्रिप सो न्रिप साच रिदे अपने ठहराई ॥ २४४८ ॥ रंग न रेख अभेख सदा प्रभ अंत न आवत है जु बतइयै। चउदहू लोकन मै जिहको दिन रैन सदा जसु केवल गइयै। ग्यान बिखै अरु ध्यान बिखै इशनान बिखै रस मै चित कइयै। बेद जपै जिहको लिह जाप सदा करियै न्रिप यौ सुन लइयै ॥ २४४९ ॥ जाहि की देह सदा गुन गावत स्याम जू के रस के संग भीनी। ताहि पिता हमरे संग बात कही तिह ते हमहूं सुन लीनी। जाप जपै सभ ही हरि को सु जपै नहि है जिह की मति हीनी। ताहि सदा रुच सो जपिऐ न्रिप को सुकदेव इहै मद दीनी ॥ २४५० ॥ ॥ सवैया ॥ कष्ट किए जो न आवत है करि सीस जटा धरे हाथ न आवै। बिद्या पड़े न कड़े तपसो अरु जो द्रिग मूंद कोऊ गुन गावै। बीन बजाइ सु न्रित्त दिखाइ बताइ भले हरि लोक रिझावै। प्रेम बिना कर मो नही आवत ब्रहमहू सो जिह भेद न पावै ॥ २४५१ ॥ खोज रहे रवि से ससि से तिहको तिहको

हैं और घर-बार के सभी लालचों का त्याग करवाकर प्रभु का यश-गान करते हैं। वेद कहते हैं कि उस प्रभु का रूप-रंग देखा नहीं जा सकता। हे राजा! मैंने ऐसा उपदेश तुम्हें कभी नहीं दिया है। इसलिए इस उपदेश को अपने मन में बसाओ ॥ २४४८ ॥ उस प्रभु का रूप-रंग, वेश और अन्त नहीं है। उसी का ही दिन-रात चौदह लोकों में यशोगान होता है। ज्ञान-ध्यान, स्नान में उसी का ही चित्त में प्रेम अनुभव करना चाहिए। हे राजन्! जिसका जाप वेद करते हैं, हमेशा उसी का ही स्मरण करते रहना चाहिए ॥ २४४९ ॥ जिस प्रभु का प्रेमपूर्वक सभी गुणगान करते हैं उसी प्रभु का गुणानुवाद हमारे पिता (व्यास) किया करते थे जिसे मैंने सुना है। जो नीच मति के हैं वे ही उस प्रभु का जाप नहीं करते हैं। इस प्रकार शुकदेव ने राजा से कहा कि हे राजन्! सदैव उस प्रभु का स्मरण प्रेमपूर्वक करते रहना चाहिए ॥२४५०॥ ॥ सवैया ॥ जो अनेकों कष्ट सहने पर तथा सिर पर जटाएँ धारण करने पर हाथ नहीं आता; विद्या पढ़ने पर, तप करने पर आँखें मूँद लेने पर हाथ नहीं आता और जिसे अनेक प्रकार के वाद्य बजाकर एवं नृत्य दिखाकर प्रसन्न नहीं किया जा सकता वह ब्रह्म प्रेम किए बिना किसी के हाथ नहीं लग सकता। २४५१। उसको सूर्य-चन्द्र खोज रहे हैं परन्तु उसके रहस्य को

कछु अंत न आयो। रुद्र ते पार न पइयत जाहि को बेद सकै नहि भेद बतायो। नारद तूँबर लैकर बीन भले बिध सों हरि के गुन गायो। स्याम भनै बिन प्रेम किए ब्रिजनाइक सो ब्रिजनाइक पायो॥ २४५२॥ ॥ दोहरा॥ जब ंत्रिप सो सुक यौ कह्यो तब ंत्रिप सुक के साथ। हरिजन दुखी सुखी सु शिव रहै सु कहु मुहि गाथ॥ २४५३॥ ॥ चौपई॥ जब सुक सो ंत्रिप या बिध कहियो। दीबो तब सुक उत्तर चहियो। इहै जुधिशटर कै जिय आयो। हरि पूछ्यो हरि भेद सुनायो॥ २४५४॥ ॥ सुक बाच॥ ॥ दोहरा॥ सुन भूपति या जगत मै दुखी रहत हरि संत। अंत लहत है मुकतफल पावत है भगवंत॥ २४५५॥ ॥ सोरठा॥ रुद्र भगत जग माहि सुख के दिवस सदा भरै। मरि फिरि आवहि जाहि फल कछु लहै न मुकति को॥ २४५६॥ ॥ सवैया॥ सुन लै भसमांगद दैंत हुतो तिह नारद ते जबही (मू०ग्रं०५६५) सुन पायो। रुद्र की सेव करी रुच सो बहुते दिन रुद्रहि को रिझवायो। आपने मासहि काटिकै आग मै होम कर्यो न

नहीं समझ सके। रुद्र के समान तपस्वी और वेद भी उसके रहस्य को नहीं बता सके। नारद भी वीणा लेकर उसके गुण गाते हैं, परन्तु श्याम कवि का कथन है कि परमात्मा रूपी श्रीकृष्ण को बिना प्रेम किए कोई नहीं पा सका है॥ २४५२॥ ॥ दोहा॥ जब राजा से शुक ने यह कहा तो राजा ने शुकदेव से यह पूछा कि यह कैसे हो सकता है कि हरि के जन्म तो दुःखी रहें और शिव स्वयं सुखी रहें। कृपया मुझे इस कथा का वर्णन करो॥ २४५३॥ ॥ चौपाई॥ जब राजा ने शुकदेव से यह कहा तो शुकदेव ने उत्तर देते हुए यह कहा कि यही बात युधिष्ठिर के मन में भी आई थी और उन्होंने श्रीकृष्ण से यही पूछा था। श्रीकृष्ण ने भी युधिष्ठिर को यही रहस्य समझाया था॥ २४५४॥ ॥ शुक उवाच॥ ॥ दोहा॥ हे राजन्! सुनो परमात्मा के सन्त इस जगत में तो दुःखी रहते हैं परन्तु अन्त में वे ही मुक्ति और ईश्वर को प्राप्त होते हैं॥ २४५५॥ ॥ सोरठा॥ रुद्र के (संसारी) भक्त संसार में सदा सुखी रहते हैं परन्तु मुक्ति को प्राप्त नहीं कर पाते और आवागमन के चक्कर में पड़े रहते हैं॥ २४५६॥ ॥ सवैया॥ भस्मांगद नामक दैत्य ने जब नारद से रुद्र की दयालुता के बारे में सुना तो उसने बड़े मनोयोग से रुद्र की सेवा की और रुद्र को प्रसन्न किया अपने मास को उसने

रतीक डरायो । हाथ धरो जिह के सिर पै तिह छार उडै सु इहै बरु पायो ॥ २४५७ ॥ ॥ स्वैया ॥ हाथ धरो जिह के सिर पै तिह छार उडै जब ही बरु पायो । रुद्र ही कउ प्रथमै हति कै जड़ चाहत तउ तिह तीअ छिनायो । रुद्र भज्यो तब भाइ है स्याम जू आइकै सो छल सो जरवायो । भूप कहो बडो सो तुमही कि बडो हरि है जिह ताहि बचायो ॥ २४५८ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशनावतारे भसमांगद दैत बधह ॥

अथ भ्रिग लता को प्रसंग कथनं ॥

॥ स्वैया ॥ बैठे हुते रिख सात तहाँ इकठे तिनके जिअ मै अस आयो । रुद्र भलो ब्रहमा किधो बिशन जू पै प्रिथमै जिहको ठहरायो । तीनो अनंत है अंति कछू नहि है इन को किनहूँ नही पायो । भेद लहो इन को तिन मै भ्रिग बैठो हुतो सोऊ देखन धायो ॥ २४५९ ॥ ॥ स्वैया ॥ रुद्र के धाम गयो कहिओ तुम जीव हनो तिह सूल सँभार्यो । ग्यो चतुरानन

बिना किसी डर के अग्नि में होम किया । उसने यह वरदान प्राप्त किया कि तुम जिसके भी सिर पर हाथ रखोगे वह जलकर राख हो जायगा ॥ २४५७ ॥ ॥ सवैया ॥ हाथ रखते ही भस्म कर देने का वरदान जब उसे मिल गया तो उस मूर्ख ने सर्वप्रथम रुद्र को ही भस्म कर पार्वती को छीन लेना चाहा । तब रुद्र भागे और उन्होंने छल से भस्मासुर को जलवाया । इसलिए हे राजन् ! अब तुम्हीं बतलाओ कि तुम बड़े हो या परमात्मा बड़ा है जिसने तुम्हारी रक्षा की ॥ २४५८ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में भस्मांगद दैत्य-वध समाप्त ॥

भृगु द्वारा लात-प्रहार का प्रसंग कथन

॥ सवैया ॥ एक बार सात ऋषि इकट्ठे बैठे हुए थे । उनके मन में विचार आया कि रुद्र अच्छे हैं या ब्रह्मा अच्छे हैं अथवा विष्णु सबसे अच्छे हैं । तीनों की लीला अनन्त है; इनके रहस्य को कोई नहीं समझ सका । इनके स्वर को समझने के लिए उन ऋषियों में से भृगु नामक ऋषि, जो वहाँ बैठे थे, चल दिए ॥२४५९॥ ॥ सवैया ॥ रुद्र के घर गए । ऋषि ने रुद्र से कहा कि तुम जीवों का संहार करते हो (अतः अच्छे नहीं हो) । इतना सुनने पर रुद्र ने त्रिशूल सँभाल लिया । तब वे ऋषि ब्रह्मा के पास गए और कहा कि तुम

के चलिकै इह बेद ररै इह जानन पार्यो । बिशन के लोक गयो सुख सोवत कोप भर्यो रिख लातहि मार्यो । कोप कियो न गहे रिख पा इहि स्रीपति स्री ब्रिजनाथ बिचार्यो ॥ २४६० ॥ ॥ बिशन बाच भ्रिग सो ॥ ॥ स्वैया ॥ पाइ को घाइ रह्यो सहिकै हसकै दिज सो इह भाँति उचार्यो । बज्र समान ह्रिदै हमरो लगि पाइ दुख्यो हुइहै तुहि मार्यो । माँगति हउ इक जो तुम देहु जु पै छिप कै अपराध हमार्यो । जेतक रूप धरो जग हउ तु सदा रहै पाइ को चिहन तुहार्यो ॥ २४६१ ॥ ॥ स्वैया ॥ इउ जब बैन कहे जदुनंदन तउ रिख चित्त बिखै सुखु पायो । कैं कैं प्रनाम घने प्रभ कउ पुन आपने आश्रम मै फिरि आयो । रुद्र को ब्रहम को बिशन कथान को भेद सभै इकनो समझायो । स्याम को जाप जपै सभ ही हम स्री ब्रिजनाथ सही प्रभ पायो ॥ २४६२ ॥ ॥ स्वैया ॥ जाप कियो सभ ही हरि को जब यो भ्रिग आइकै बात सुनाई । हैरे अनंत कह्यो करुनानिध बेद सके नही जाहि बताई । क्रोधी है रुद्र गरे रुंडमाल कउ (मू०ग्रं०५६६) डारिकै बैठो है डिंभ जनाई । ताहि जपउ न जपो हरि को प्रभ स्री ब्रिजनाथ सही

व्यर्थ ही वेद रटते रहते हो ! यह बात ब्रह्मा को भी अच्छी नहीं लगी। विष्णु के धाम पहुँचने पर विष्णु को सोता हुआ पाकर ऋषि ने लात से उन पर प्रहार किया। विष्णु ने क्रोध नहीं किया और ऋषि के चरण पकड़कर उनसे इस प्रकार कहा ॥ २४६० ॥ ॥ विष्णु उवाच भृगु के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ लात के प्रहार को हँसते हुए सहकर विष्णु ने ब्राह्मण से यह कहा कि मेरा हृदय वज्र के समान है और आपके चरण को अवश्य कष्ट हुआ होगा। मैं आपसे एक वरदान माँगता हूँ। आप कृपापूर्वक मेरे अपराध को क्षमा कर मुझे वह वरदान दें। मैं जब भी संसार में अवतरित होऊँ तो आपके चरण का चिह्न सदैव मेरे वक्ष पर अंकित रहे ॥ २४६१ ॥ ॥ सवैया ॥ जब श्रीकृष्ण ने यह कहा तो ऋषि को अत्यन्त सुख प्राप्त हुआ। वह प्रणाम करके पुनः आपने आश्रम में आ गए और रुद्र, ब्रह्मा और विष्णु का भेद उन्होंने सबको समझाया तथा सबसे कहा कि श्रीकृष्ण ही वास्तविक प्रभु हैं। हम सबको इनका ही जाप करना चाहिए ॥ २४६२ ॥ ॥ सवैया ॥ जब भृगु ने सबको आकर यह बात सुनाई तो सबने श्रीकृष्ण का ध्यान किया और पाया कि श्रीकृष्ण अनन्त करुणा के सागर हैं और वेद भी उनका वर्णन नहीं कर सकते रुद्र तो गले में मुण्डमाल डालकर और एक

ठहराई ॥ २४६३ ॥ ॥ सवैया ॥ जाप जप्यो सभहू हरि को जब यौ भ्रिग आन रिखो समझायो । जिउं जग भूत पिसाचन मानत तैसो ई लै इक रुद्र बनायो । को ब्रहमा करि माला लिए जपु ताको करै तिन को नहि पायो । स्री ब्रिजनाथ को ध्यान धरो सु धर्‍यो तिन अउर सभै बिसरायो ॥ २४६४ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिसना अवतारे भ्रिग लता प्रसंग बरननं नाम धिआइ ॥

पारथ दिज के नमित चिखा साज आप जलन लगा ॥

॥ चौपई ॥ इक दिज हुतो सु हरि घरि आयो । चित बित ते अति शोक जनायो । मेरे सुत सभ ही जम मारे । प्रभ जू या जग जियत तुहारे ॥ २४६५ ॥ ॥ सवैया ॥ देख बिलाप तबै दिज पारथ तौन समै अति अउज जनायो । राखहो हउ नहि राखे गए तब लज्जत ह्वै जरबो जिय आयो । स्री ब्रिजनाथ तबै तिह पै चल आवत भ्यो हठ ते समझायो । ताही कउ लै संगि आपि अरूड़त ह्वै रथ पै तिन ओर

बैठे रहते हैं। हम उनका जाप न करके श्रीकृष्ण भगवान का ही स्मरण करेंगे ॥ २४६३ ॥ ॥ सवैया ॥ जब भृगु ऋषि ने आकर सबको समझाया तो सबने श्रीकृष्ण का जाप किया। जिस प्रकार यज्ञ में भूत-पिशाच का निषेध माना जाता है उसी प्रकार से रुद्र की स्थापना की गई और यह भी ठहराया गया कि ब्रह्मा का जाप करने से भी कोई उनको पा नहीं सकेगा। इसलिए श्रीकृष्ण का ध्यान करो तथा बाकी सबका विस्मरण करो ॥ २४६४ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में भृगुलता-प्रसंग-वर्णन नामक अध्याय समाप्त ॥

अर्जुन का ब्राह्मण के निमित्त चिता सजाकर स्वयं भस्म होने लगना

॥ चौपाई ॥ एक ब्राह्मण श्रीकृष्ण के घर पर और अत्यन्त दुःखी होकर कहने लगा कि मेरे सभी पुत्र यमराज ने मार दिए हैं। हे प्रभु ! मैं भी तुम्हारे राज में जीवित हूँ ॥ २४६५ ॥ ॥ सवैया ॥ उसके विलाप और दुःख को देखकर तब अर्जुन क्रोध से भर उठा। वह यह सोचकर कि हम इसकी रक्षा नहीं कर सके लज्जित हो उठा और जल मरने के लिए विचार करने

सिधायो ॥ २४६६ ॥ ग्यो हरि जी चलकै तिह ठाँ अँधिआर घनो जिह द्रिष्ट न आवै । द्वादस सूर चड़ै तिह ठाँ तु सभै तिन की गति ह्वै तम जावै । पारथ ताही चड़्यो रथ पै डरपाति भयो प्रभ यौ समझावै । चिंत करो न सुदरशनि चक्र बिपै जब ही हरि मारग पावै ॥ २४६७ ॥ ॥ चौपई ॥ जहा शेख साई थो सोयो । अहि आसन पर सभ दुखु खोयो । जग्यो स्याम जब ही दरसायो । अपने मन अति ही सुखु पायो ॥ २४६८ ॥ ॥ चौपई ॥ किह कारन इह ठाँ हरि आए । हम जानत हम अब सुख पाए । जानत दिज बालक अबलीजै । एक घरी इह ठाँ सुख दीजै ॥ २४६९ ॥ ॥ बिशन बाच कान्ह सो ॥ ॥ चौपई ॥ जब हरि करि दिज बालक आए । तब तिह कउ ए बचन सुनाए । जात जाइ दिज बालक दैहो । बडो सुजसु जग भीतर लैहो ॥ २४७० ॥ तब हरि नगर द्वारका आयो । दिज बालक दै अति सुख पायो । जरत (मू०ग्रं०५६७) अगन ते संत बचाए । इउ प्रभ जू सभ संतन गाए ॥ २४७१ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे क्रिशना अवतारे दिज को जमलोक ते सात पुत्र सेख साई ते ल्याइ देत भए धिआइ ॥

लगा । तभी श्रीकृष्ण वहाँ आ पहुँचे और उसे समझाते हुए उसे साथ ले रथ पर सवार हो चल दिए ॥ २४६६ ॥ चलते हुए श्रीकृष्ण एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ इतना घना अँधेरा था कि बारह सूर्य उगने पर वहाँ का अँधेरा समाप्त होता । डर रहे अर्जुन को श्रीकृष्ण ने समझाते हुए कहा कि चिन्ता मत करो, सुदर्शन चक्र के प्रकाश में हमें मार्ग दिखाई दे जाएगा ॥ २४६७ ॥ ॥ चौपाई ॥ वे वहाँ आ पहुँचे जहाँ सबके स्वामी शेषशय्या पर सोए हुए थे । श्रीकृष्ण को देखकर वे जग गए और अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ २४६८ ॥ ॥ चौपाई ॥ आप हे श्रीकृष्ण ! किस कारण से यहाँ आए हैं, मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है । द्विज बालकों को आप जाते समय लेते जाइएगा । एक घड़ी यहाँ बैठकर मुझे सुख प्रदान करने की कृपा कीजिए ॥ २४६९ ॥ ॥ विष्णु उवाच कृष्ण के प्रति ॥ ॥ चौपाई ॥ जब बालक श्रीकृष्ण के पास आ गए तो विष्णु ने कहा कि जाकर इन बालकों को वापस कर दीजिए और जगत् में सुयश का अर्जन कीजिए ॥ २४७० ॥ तब श्रीकृष्ण द्वारिका आ गए और बालकों को द्विज को वापस लौटा कर उन्होंने अत्यन्त सुख प्राप्त किया

इस प्रकार भले पुरुषों को अग्नि से बचाया और संतों ने प्रभु का गुणानुवाद किया ॥ २४७१ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार में द्विज को यमलोक से सात पुत्र शेख साँई (विष्णु) से लाकर देना अध्याय समाप्त ॥

अथ कान्ह जू जल बिहार तीआ संग ॥

॥ सवैया ॥ कंचन की जिह द्वारवती तिह ठा जबही बिजभूखन आयो। लाल लगे जिह ठा मनो बज्र भले बिजनाइक ब्योत बनायो। ताल के बीच तरे जदुनंदन शोक सधै चित को बिसरायो। लै लिया बालक दै दिज कउ जब स्री बिजनाथ बडो जसु पायो ॥ २४७२ ॥ ॥ सवैया ॥ तीअन सो जल मै बिजनाइक स्याम भनै कच सिउ लपटाए। प्रेम बढ्यो उनके अति ही प्रभ के लगि अंग अनंग बढाए। प्रेम सो एक ही हुइ गई सुंदर रूप निहार रही उरझाए। पास ही शाम जू रूप रचो लिआ हेर रही हरि हाथ न आए ॥ २४७३ ॥ ॥ सवैया ॥ रूप रचो सभ सुंदर स्याम के स्याम भनै दसहूं दिस दउरै। कुंकम बेंद लिलाट दिए सु दिए तिन ऊपर चंदन खउरै। मैन के बसि भई सभ भामन धाई फिरै फुन धामन ओरै। ऐसे रटै मुख ते हम कउ तजिहौ ब्रिजनाथ गयो किह ठउरै ॥ २४७४ ॥ ढूढत एक फिरै हरि

श्रीकृष्ण जी का स्त्रियों के साथ जल-विहार करना

॥ सवैया ॥ श्रीकृष्ण जी स्वर्णमयी द्वारिका में आ पहुँचे जहाँ विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत लाल और हीरे जड़ित थे। मन का शोक दूर कर श्रीकृष्ण सरोवर में तैरने लगे। स्त्रियों को साथ लेकर और बालकों को विप्र को सौंपकर श्रीकृष्ण ने अत्यधिक यश अर्जन किया ॥२४७२॥ ॥ सवैया ॥ जल में प्रेमपूर्वक श्रीकृष्ण जी स्त्रियों से लिपट गए। स्त्रियाँ भी प्रभु के अंगों से लिपटकर कामोन्मत्त हो उठीं। वे प्रेम से उन्मत्त हो श्रीकृष्ण के साथ एक-रूप हो गईं। स्त्रियाँ श्रीकृष्ण को पाने के लिए व्यग्र हैं परन्तु वे हाथ नहीं आ रहे हैं ॥ २४७३ ॥ ॥ सवैया ॥ श्याम के रूप में मग्न वे दसों दिशाओं में दौड़ रही हैं। उन्होंने कुंकुम, बिंदिया, चंदन आदि लगा रखा है। काम के वशीभूत हो घर से बाहर-अंदर दौड़ रही हैं और पुकार रही हैं कि श्रीकृष्ण

सुंदरि चित बिखै सभ भरम बढाई। बेख अनूप सजे तन पै तिन बेखन को बरन्यो नही जाई। शंक करै न रहै हरि ही हरि लाजहि बेच मनो तिह खाई। ऐसे कहै तजि ग्यो किह ठाँ तिह हो ब्रिजनाइक देहु दिखाई॥ २४७५ ॥ ॥ दोहरा॥ बहुतु काल मुंछत भई खेलत हरि के साथ। मुंछत ह्वै तिन यो लख्यो हरि आए अब हाथ॥ २४७६ ॥ हरिजन हरि संग मिलत है सुनत प्रेम की गाथ। जिउँ डार्‍यो मिलि जात है नीर नीर के साथ॥२४७७॥ ॥ चौपई॥ जल ते तब हरि बाहरि आए। अंगह सुंदर बस्त्र बनाए। का उपमा तिह की कबि कहै। पेखत मैन रीझ कै रहै॥२४७८॥ बस्त्र त्रिअनहूँ सुंदर धरे। दान बहुत बिप्रन कउ करे। जिह तिह ठाँ हरि को गुन गायो। तिह दारद धन देइ गवायो॥ २४७९ ॥

हमको छोड़कर कहाँ चले गए हैं॥ २४७४ ॥ कोई चित्त में भ्रम रखते हुए उस श्रीकृष्ण को ढूँढ़ रही है। उन स्त्रियों ने अनेकों अनुपम वेश धारण कर रखे हैं, जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। वे तो इस प्रकार श्रीकृष्ण का नाम रट रही हैं मानो उन्हें तनिक भी लज्जा न हो। वे कह रही हैं कि हे श्रीकृष्ण ! हमें छोड़कर किस स्थान पर चले गए हो, हमें दर्शन दो॥ २४७५ ॥ ॥ दोहा॥ बहुत देर तक श्रीकृष्ण के साथ खेलते-खेलते वे मूर्च्छित हो गए और मूर्च्छित अवस्था में उन्होंने यह देखा कि श्रीकृष्ण उनके हाथ आ गए हैं॥ २४७६ ॥ हरि के भक्त हरि से प्रेम की कथा सुनते हुए इस प्रकार मिलकर एक हो जाते हैं, जैसे जल को जल में डालने पर जल एक हो जाता है॥ २४७७ ॥ ॥ चौपाई॥ तब श्रीकृष्ण जल से बाहर आये और उन्होंने सुन्दर वस्त्र धारण किए। उनकी शोभा का वर्णन कवि क्या करे, उन्हें तो देखकर कामदेव भी मोहित हो रहा है॥ २४७८ ॥ स्त्रियों ने भी सुन्दर वस्त्र धारण कर विप्रों को बहुत सा दान दिया। जिसने भी वहाँ प्रभु का गुणानुवाद किया, उसे इन लोगों ने बहुत सा धन देकर उसकी दरिद्रता को दूर कर दिया॥ २४७९ ॥

अथ प्रेम कथा कथनं ॥

॥ कबियो बाच ॥ ॥ चौपई ॥ हरि के संतक बडी सुनाऊ । ताते प्रभ (मू०ग्रं०२६८) लोगन रिझवाऊ । जो इह कथा तनक सुन पावै । ताको दोख दूर होइ जावै ॥ २४८० ॥ ॥ सवैया ॥ जैसे त्रिनाव्रत अउ अघ को सु बकासुर को बध जा मुख फार्यो । खंड किओ सकटासुर को गह केसन ते जिह कंस पछार्यो । सिंघ जराहूँ को सैन मथ्यो अरु शत्रहु को जिह मानहि टार्यो । तिउँ ब्रिजनाइक सा धन के पुन चाहत है सभ पापन टार्यो ॥ २४८१ ॥ ॥ सवैया ॥ जो ब्रिजनाइक के रुच सो कबि स्याम भनै फुन गीतन गैहै । चातुरता संग जो हरि के जसु बीच कबित्तन के सु बनैहै । अउरन ते सुन जो चरचा हरि की हरि के मन भीतर दैहै । सो कबि स्याम भनै धरि कै तन या भव भीतर फेर न ऐहै ॥ २४८२ ॥ जो उपमा ब्रिजनाथ की गाइ है अउर कबित्तन बीच करैगे । पापन की लेऊ पावक मै कबि स्याम भनै कबहू न जरैगे । चिंत सभै मिट है जु रहो छिन मै तिनके अघ ब्रिद टरैगे । जे नर स्याम जू के परसे पग

प्रेमकथा-कथन

॥ कवि उवाच ॥ ॥ चौपाई ॥ प्रभु के भक्तों की महिमा सुनाता हूँ और सन्तों को प्रसन्न करता हूँ। जो इस कथा को तनिक भी सुनेगा उसके सभी दोष दूर हो जायेंगे ॥ २४८० ॥ ॥ सवैया ॥ जिस प्रकार तृणावर्त, अघासुर, बकासुर का वध करके उनके मुख को फाड़ डाला, शकटासुर को खण्ड-खण्ड कर कंस को केशों से पकड़कर पछाड़ा, जरासंध की सेना का मंथन कर शत्रु के गर्व को चूर किया, उसी प्रकार श्रीकृष्ण उन स्त्रियों के सभी पापों को समाप्त करना चाह रहे हैं ॥ २४८१ ॥ ॥ सवैया ॥ जो प्रेमपूर्वक श्रीकृष्ण के गीत गाएगा, उनके यश का सुन्दर ढंग से कविता में वर्णन करेगा तथा अन्यों से सुनकर प्रभु की मन-ही-मन चर्चा करेगा, कवि श्याम का कथन है कि वह पुनः शरीर धारण कर आवागमन में नहीं पड़ेगा ॥ २४८२ ॥ श्रीकृष्ण की महिमा गानेवाले और उसका कविता में वर्णन करनेवाले कभी भी पाप की अग्नि में नहीं जलेंगे। उनकी सब चिन्ताएँ नष्ट हो जायँगी और क्षण भर में उनके पापों के समूह समाप्त हो जायेंगे। जो व्यक्ति श्रीकृष्ण जी के चरण स्पर्श करेगा वह कभी भी पुन देह धारण नहीं करेगा। २४८३ ।

ते नर फेर न देह धरैंगे ॥२४८३॥ ॥ सवैया ॥ जो ब्रिजनाइक को रुच सो कबि स्याम भनै फुन जाप जपैंहैं। जो तिह के हित कै मन मै बहु मंगन्न लोगन कउ धनु दैहैं। जो तजि काज सभै घर के तिह पाइन के चित भीतर दैहैं। भीतर ते अब या जग के अघ ब्रिदन बीर बिदा करि जैहैं॥ २४८४॥ प्रेम किओ न किओ बहुतौ तप कष्ट सह्यो तन कउ अति तायो। काँशी मै जाइ पड़्यो अति ही बहु बेदन को करि सार न आयो। दान दिए बसि ह्वै गयो स्याम सभै अपनो तिह दरब गवायो। अंतरि की रुचिकै हरि सिउ जिह हेत किओ तिनहू हरि पायो॥ २४८५॥ का भयो जो बक लोचन मूंद कै बैठ रह्यो जग भेख दिखाए। मीन फिर्‌यो जल न्हात सदा तु कहा तिह के करि मो हरि आए। दादर जो दिन रैंन रटै सु बिहंग उडै तिन पंख लगाए। स्याम भनै इह संत सभै बिन प्रेम कहूँ ब्रिजनाथ रिझाए॥ २४८६॥ लालच जो धन के किनहू जू पै गाइ भलै प्रभ गीत सुनायो। नाच नच्यो न खच्यो तिह मै हरि लोक अलोक को पेंड न पायो। हास कर्‌यो जग मै अपने

॥ सवैया ॥ जो रुचिपूर्वक श्रीकृष्ण का जाप करेगा, उनका स्मरण करते हुए माँगनेवालों को धन आदि देगा और गृहस्थी के प्रपंचों को त्यागकर मन श्रीकृष्ण के चरणों में लगाएगा तो उसके मन से इस संसार के सभी पाप विदा हो जायँगे॥ २४८४॥ प्रेम तो नहीं किया परन्तु अनेकों कष्ट तन पर सहकर तन को तपाते हुए तपस्या की, काशी में जाकर वेदपाठ की शिक्षा तो ली परन्तु उसके तत्त्व को नहीं समझा। यह सोचकर अपना सारा धन लुटा दिया कि मात्र दान देने से प्रभु वश में हो जायंगे परन्तु जिसने अन्तर्मन से प्रभु से प्रेम किया है, वही प्रभु को प्राप्त कर सका है॥ २४८५॥ क्या हुआ यदि कोई बगुला (भक्त) आँखें बंद करके लोगों को अपना पाखण्ड दिखाता रहा हो; कोई मछली के समान सारे तीर्थों के जलों में स्नान करता रहा हो, क्या उसके हाथ में भी भगवान आ सके हैं। मेंढक भी दिन-रात रटता रहता है और पक्षी भी हमेशा उड़ते रहते हैं, परन्तु श्याम कवि का कथन है कि रटने और इधर-उधर दौड़ते भागते रहने की अपेक्षा कोई भी प्रेम किए बिना श्रीकृष्ण को प्रसन्न नहीं कर सकता॥ २४८६॥ जो धन के लालचवश प्रभु का गुणानुवाद करता है और बिना उससे प्रेम किए नृत्य करता है, वह प्रभु के मार्ग को प्राप्त नहीं कर सका। जिसने सारा जीवन हँसी-खेल में बिता दिया और स्वप्न में भी ज्ञान के तत्त्व को नही जाना उसे भी प्रभ प्राप्त नहीं हो

सुपने हूँ न ध्यान को ततु जनायो । प्रेम बिना कबि स्याम भनै करि काहू के मै ब्रिजनाइक आयो ॥२४८७॥ हार (मू०ग्रं०५६६) चले ग्रहि आपने कउ बन मो बहुतो तिन ध्यान लगाए । सिद्ध समाध अगाध कथा मुन खोज रहै हरि हाथ न आए । स्याम भनै सम बेद कतेबन संतन के मति यौ ठहराए । भाखत है कबि संत सुनो जिह प्रेम किए तिन स्रीपति पाए ॥ २४८८ ॥ ॥ सवैया ॥ छत्री को पूत हौ बामन को नहि कै तपु आवत है जु करो । अरु अउर जंजार जितो ग्रहि को तुहि त्याग कहा चित ता मै धरो । अब रीझकै देहु वहै हम कउ जोऊ हउ बिनती कर जोर करो । जब आउ की अउध निदान बनै अति ही रन मै तब जूझ मरो ॥ २४८९ ॥ ॥ दोहरा ॥ सत्रह सै पैताल महि सावन सुदि थिति दीप । नगर पाँवटा सुभ करन जमना बहै समीप ॥ २४९० ॥ दसम कथा भागउत की भाखा करी बनाइ । अवर बासना नाहि प्रभ धरम जुद्ध के चाइ ॥ २४९१ ॥ ॥ सवैया ॥ धंन जिओ तिह को जग मै मुख ते हरि चित्त मै जुधु बिचारै । देह अनित्त न नित्त रहै जसु नाव चड़ै भवसागर तारै । धीरज धाम बनाइ इहै तन बुद्धि

सका) । बिना प्रेम किए कोई भी प्रभु श्रीकृष्ण को प्राप्त भला कैसे कर सकता है ? ॥ २४८७ ॥ बन में ध्यान लगानेवाले भी अन्तत: वापस थककर घर आ जाते हैं । सिद्धगण तथा मुनिगण समाधियों के माध्यम से उसको खोजते रहे हैं पर वह प्रभु के किसी के हाथ नहीं आया । सभी वेदों, कतेबों और सन्तों का यही मत है कि जिसने प्रेम किया है, उसी ने ही परमात्मा को प्राप्त किया है ॥ २४८८ ॥ ॥ सवैया ॥ मैं क्षत्रिय का पुत्र हूँ, ब्राह्मण का नहीं, जो कि घोर तप करने का उपक्रम करे । तुम्हें छोड़कर भला मैं अपना मन संसार के जंजालों में कैसे लगाऊँ । मैं जो प्रार्थना हाथ जोड़कर कर रहा हूँ, हे प्रभु ! प्रसन्न होकर कृपया मुझे वही वरदान दें कि जब मेरा अन्तिम समय आ बने, तो मैं भीषण रूप से युद्ध करता हुआ जूझ मरूँ ॥ २४८९ ॥ ॥ दोहा ॥ सम्वत् १७४५ की श्रावण सुदि ने बहती हुई यमुना के समीप पाँवटा नगर में ॥ २४९० ॥ मैंने भागवत के दशम स्कन्ध की कथा को सामान्य भाषा में कहा है । हे प्रभु ! मेरी अन्य कोई मनोकामना नहीं है, मुझे केवल धर्मयुद्ध का ही उत्साह एवं चाव है ॥ २४९१ ॥ ॥ सवैया ॥ वह जीव इस जगत में धन्य है जो मुख से प्रभु का स्मरण करते हुए मन में हमेशा बुराई पर भलाई की विजय के लिए संघर्षरत रहने का विचार बनाए रखता

सु दीपक जिउँ दुजिआरै । ग्यानहि की बढनी मनु हाथ लै कातरता कुतवार बुहारै ॥ २४९२ ॥

॥ इति स्री दसम सिकंध पुराणे बचित्र नाटके ग्रंथे क्रिसनावतारे ध्याइ समापतम सतु सुभम सतु ॥ २१ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

अथ नर अउतार कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अब बाईस्वो गनि अवतारा । जैस रूप कह धरो मुरारा । नर अवतार भयो अरजना । जिह जीते जग के भट गना ॥ १ ॥ प्रिथम निवात कवच सभ मारे । इंद्र तात के शोक निवारे । बहुरो जुद्ध रुद्र तन कीआ । रीझे भूति राट बरु दीआ ॥ २ ॥ बहुर द्रुजोधन कह मुकतायो । गंध्रब राज बिमुख फिर आयो । खांडव बन पावकहि चरावा । बूंद एक पैठै नही पावा ॥ ३ ॥ जउ कहि कथा प्रसंग सुनाऊँ ।

है । जो इस शरीर को नश्वर मानते हुए इसके द्वारा अधिक से अधिक भले कार्य कर यश की नाव पर सवार होकर संसार-सागर को तैरकर पार कर जाता है । वह व्यक्ति धन्य है जो इस शरीर को धैर्य का घर बनाकर इस घर को बुद्धि के दीपक से प्रकाशित करता है और बौद्धिकता से तथा प्रेम से उत्पन्न ज्ञान की झाड़ को हाथ में लेकर असहायता एवं निराशा के कूड़े-करकट को (संसार भर से) साफ़ कर देता है ॥ २४९२ ॥

॥ श्री दशम स्कन्ध पुराण के बचित्र नाटक ग्रंथ के कृष्णावतार अध्याय की शुभ सत् अध्याय समाप्ति ॥ २१ ॥

नर-अवतार-कथन

॥ चौपाई ॥ अब मैं बाईसवें अवतार की गणना करता हूँ कि कैसे प्रभु ने यह रूप धारण किया । अर्जुन नर-अवतार हुआ जिसने सारे संसार के वीरों को जीता ॥ १ ॥ सर्वप्रथम इसने अमोघ कवच धारण करनेवाले सब वीरों को मारकर अपने पिता इन्द्र के शोक को दूर किया । पुनः इन्होंने रुद्र से युद्ध किया और भूतराज शिव ने इन्हें वरदान दिया ॥ २ ॥ फिर इन्होंने दुर्योधन को मुक्त किया और गंधर्वराज को खाण्डव वन की आग में जला दिया । यह सब उसका भेद नहीं समझ सके ॥ ३ ॥ इन सब कथाओं को

ग्रंथ बढन ते हिदै डराऊँ। ताँते थोरियै कथा कहाई। भूल देखि कब लेहु बनाई ॥ ४ ॥ कउरव जीत गाव सभ आनी। भाँति भाँति तन महाँ अभिमानी। (मू०पं०५७०) क्रिशन चंद कह बहुरि रिझायो। जाते जैत पत्र कह पायो ॥ ५ ॥ गांगेव भानज कह मार्यो। घोर भयान अयोधन धार्यो। दुरजोधन जीता अत बला। पावत भए राज अब चला ॥ ६ ॥ कह लगि करत कथा कहु जाऊँ। ग्रंथ बढन ते अधक डराऊँ। कथा ब्रिध कस करौ बिचारा। बाईसवो अरजन अवतारा ॥ ७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके नर अवतार संपूरणम सतु ॥ २२ ॥

अथ बउध अवतार तेईसवौ कथनं ॥

अब मै गनो बउध अवतारा। जैस रूप कह धरा मुरारा। बउध अवतार इही को नाऊ। जाकर नाव न थाव न गाऊ ॥ १ ॥ जाकर नाव न ठाँव बखाना। बउध अवतार वही पहचाना। सिला सरूप रूप तिह जाना। कथा न जाह

वर्णन सुनाने पर मेरा हृदय ग्रंथ के बड़े हो जाने से डरता है, इसीलिए मैंने संक्षेप में कहा है और मेरी भूलों को कविगण स्वयं सुधार कर समझ लेंगे ॥४॥ कौरवों के सभी स्थानों को जहाँ पर कि भिन्न-भिन्न अभिमानी रहते थे, इन्होंने जीता। इन्होंने श्रीकृष्ण को प्रसन्न किया और युद्ध का विजय-पत्र प्राप्त किया ॥ ५ ॥ गंगापुत्र भीष्म एवं सूर्यपुत्र कर्ण को इन्होंने घनघोर युद्ध करके मार डाला। महाबली दुर्योधन को इन्होंने जीता और अटल राज प्राप्त किया ॥ ६ ॥ कहाँ तक मैं इस कथा का वर्णन करूँ, क्योंकि मैं ग्रंथ के बढ़ जाने से अधिक डर रहा हूँ। लम्बी कथा का क्या विचार करूँ, बस यही कहता हूँ कि अर्जुन बाईसवाँ अवतार है ॥ ७ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक में नर-अवतार सम्पूर्ण ॥ २२ ॥

बुद्ध-अवतार तेईसवाँ कथन

अब मैं बुद्ध-अवतार का वर्णन करता हूँ कि यह रूप प्रभु ने कैसे धारण किया। बुद्ध-अवतार उसी का नाम है जिसके नाम, स्थान, गाँव का ठिकाना नहीं ॥ १ ॥ जिसके नाम, स्थान का (विश्वस्त) वर्णन नहीं है उसे ही बुद्ध अवतार के नाम से जाना जाता है। सौन्दर्य को पत्थर के रूप में देखनेवाले

कलू महि माना ॥ २ ॥ ॥ दोहरा ॥ रूप रेख जा करन कछु अरु कछु नहि नाकार। सिला रूप बरतत जगत सो बऊध अवतार ॥ ३ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे बउध अवतार समापतम सतु सुभम सतु ॥ २३ ॥

अथ निहकलंकी चौबीसवौ अवतार कथनं ॥

॥ चौपई ॥ अब मै महा सुद्ध मति करिकै। कहो कथा चितु लाई बिचरकै। चउबीसवो कलकी अवतारा। ता कर कहो प्रसंग सुधारा ॥ १ ॥ भाराक्रित होत जब धरणी। पाप ग्रसत कछू जात न बरणी। भाँत भाँत तन हो उतपाता। पुत्रह सेज सोवत लै माता ॥ २ ॥ सुता पिता तन रमत निशंका। भगनी भरत भ्रात कह अंका। भ्रात बहिन तन करत बिहारा। इसत्री तजी सकल संसारा ॥ ३ ॥ शंकर बरन प्रजा सभ होई। एक ग्यात को रहा न कोई। अति बिभचार फसी बर नारी। धरम रीत की प्रीति बिसारी ॥ ४ ॥ घर घर झूठ अमस्सिआ

इस अवतार की बात कलियुग में किसी ने नहीं मानी ॥ २ ॥ ॥ दोहा ॥ न तो ये सुन्दर हैं और न ही किसी कार्य को करते हैं; सारे संसार को ये पत्थर के समान मानते हैं और अपने-आपको बौद्ध अवतार कहलाते हैं ॥ ३ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ में बुद्ध अवतार समाप्त ॥ २३ ॥

निष्कलंकी चौबीसवाँ अवतार-कथन

॥ चौपाई ॥ अब मैं अपनी बुद्धि को अत्यन्त परिष्कृत करके मनोयोग से विचार कर कथा कहता हूँ। चौबीसवाँ अवतार निष्कलंकी है। उसकी कथा को मैं सुधार कर कहता हूँ ॥ १ ॥ जब धरती पाप के बोझ से दब जाती है और उसके दु:ख का वर्णन नहीं किया जा सकता। भाँति-भाँति के उपद्रव होते हैं और माँ अपने पुत्र के साथ ही शय्या पर (भोग-विलास के लिए) सोती है ॥ २ ॥ पुत्री पिता के साथ नि:संकोच रमण करती है और बहिन भाई का आलिंगन करती है। भाई बहिन के शरीर के साथ विहार करता है और सारा संसार पत्नी को त्याग देता है ॥ ३ ॥ सभी प्रजा वर्ण-शंकर हो जाती है और किसी को किसी का कुछ पता नहीं। सुन्दर स्त्रियाँ व्यभिचार में फँस जाती हैं और धर्म की परम्पराएँ तथा प्रेम भूल जाती हैं ॥ ४ ॥ घर-घर में झूठ की अमावस्या में सत्य रूपी चन्द्रमा की कलाएँ

भई । साच्च कला सस की दुर गई । जह तह होन लगे उतपाता । भोगत पूत सेज चड़ि माता ।। ५ ।। ढूढत साच न कतहूं पाया । झूठ ही संग सभो चित लाया । भिन भिन ग्रहि ग्रहि मत होई । शास्त्र व सिम्रिति छुऐ न कोई ।। ६ ।। हिंदव्र कोई न तुरका रहिहै । भिन भिन घर घर मत गहिहै । एक एक के पंथ न चल है । एक एक की बात उथल है ।। ७ ।। (मू०ग्रं०५७१) भाराक्रित धरा सभ हुइहै । धरम करम पर चलै न कुइ है । घर घर अउर अउर मत होई । एक धरम पर चलै न कोई ।। ८ ।। ।। दोहरा ।। भिन भिन घर घर मतो एक न चलिहै कोइ । पाप प्रचुर जह तह भयो धरम न कतहूं होइ ।। ९ ।। ।। चौपई ।। शंकर बरन प्रजा सभ होई । छत्री जगत न देखिऐ कोई । एक एक ऐसे मत कैहै । जा ते प्राप्त सूद्रता ह्वैहै ।। १० ।। हिंदू तुरक मत दुहूँ प्रहरि कर । चलिहै भिन भिन मत घर घर । एक एक के मंत्र न गहिहै । एक एक के संग न रहिहै ।। ११ ।। आप आप पारब्रहम कहैहै । नीच ऊच कह सीस न नैहै । एक एक मत इक इक धामा । घर घर होइ बैठहै रामा ।। १२ ।।

छिप जाती हैं । जहाँ-तहाँ उत्पात होते हैं और माँ की शय्या पर चढ़कर पुत्र उससे भोग करता है ।। ५ ।। ढूँढ़ने पर भी सत्य नहीं मिलता और सबका मन झूठ में ही लगा होता है । घर-घर में अलग-अलग मत होगा और कोई शास्त्र-स्मृतियों को छुयेगा भी नहीं ।। ६ ।। न कोई सच्चा हिन्दू और न कोई मुसलमान रह जायगा । घर-घर में भिन्न-भिन्न मत होंगे । कोई भी किसी के बताए हुए रास्ते पर नहीं चलेगा और एक-दूसरे की बात का विरोध करेगा ।।७।। धरती बोझ से दब जायगी और धर्म-कर्म पर कोई नहीं चलेगा। घर-घर में भिन्न-भिन्न मत होंगे और कोई भी किसी एक धर्म का पालन नहीं करेगा ।। ८ ।। ।। दोहा ।। घर-घर में भिन्न-भिन्न मत होंगे, कोई एक मत पर नहीं चलेगा, पाप प्रचुर मात्रा में बढ़ जायगा और धर्म कहीं नहीं रहेगा ।। ९ ।। ।। चौपाई ।। प्रजा वर्णसंकर हो जायगी और संसार में कोई भी क्षत्रिय दिखाई नहीं देगा । सब ऐसे-ऐसे कार्य करेंगे कि सभी शूद्र बन जायेंगे ।। १० ।। हिन्दू-मुस्लिम सभी धर्मों को छोड़कर भिन्न-भिन्न मत घर-घर में चलेंगे। कोई किसी का विचार नहीं सुनेगा, कोई किसी के साथ नहीं रहेगा ।।११।। सभी स्वयं को भगवान कहेंगे और कोई छोटा बड़े के सामने सिर नहीं झुकाएगा । एक-एक घर में अलग-अलग मत होगा और घर-घर में अपने को राम का अवतार कहनेवाले पैदा हो जाएंगे ।।१२।। कोई भूलकर भी पुराण नहीं पढ़ेगा और हाथ

पड़िहै कोई न भूल पुराना । कोऊ न पकरहै पान कुराना । बेद कतेब जवन करि लहिहै । ताकह गोबरागन भो दहिहै ॥१३॥ चली पाप की जगत कहानी । भाजा धरम छाड रजधानी । भिन भिन घर घर मत चला । याते धरम भरम उड टला ॥ १४ ॥ एक एक मत ऐसउ चैहै । जाते सकल सूद्र हुइ जैहै । छत्नी ब्रहमन रहा न कोई । शंकर बरन प्रजा सभ होई ॥ १५ ॥ सूद्र धाम बसिहैं ब्रहमनी । बईस नार होइहै छतनी । बसिहै छत धाम बैसानी । ब्रहमन ग्रहि इस्त्री सूद्रानी ॥ १६ ॥ एक धरम पर प्रजा न चलहै । बेद कतेब दोऊ मत दलहै । भिन भिन मत घर घर होई । एक पैंड चलहै नही कोई ॥ १७ ॥ ॥ गीतामालती छंद ॥ भिन भिन मतो घरो घर एक एक चलाइहै । ऐंड बैंड फिरै सभै सिर एक एक न न्याइहै । पुन अउर अउर नए नए मत मासमास उचाँहिगे । देव पितरन पीर कौ नही भूल पूजन जाँहिगे ॥१८॥ देव पीर बिसार कै परमेस्र आप कहाँहिगे । नर भाँत भाँतन एक को जुर एक एक उडाँहिगे । एक मास दुमास लौ अध मास लौ त चलाँहिगे । अंत बूबर पान जिउँ मत आप ही मिट

में क़ुरान शरीफ़ नहीं पकड़ेगा । जो वेद-कतेब को हाथ लगाएगा उसे गोबर की अग्नि में जलाकर मार डाला जाएगा ॥ १३ ॥ सारे संसार में पाप की कहानी चलेगी और लोगों के हृदयों में से धर्म भाग खड़ा होगा । घरों में भिन्न-भिन्न मत होंगे, जिससे धर्म और प्रेम उड़कर भाग जायगा ॥ १४ ॥ ऐसी ऐसी धारणाएँ प्रचलित होंगी कि सभी शूद्र हो जायँगे । क्षत्रिय-ब्राह्मण कोई नहीं रहेगा और सभी प्रजा वर्णशंकर हो जायगी ॥ १५ ॥ ब्राह्मण-स्त्रियाँ शूद्रों के घर में रहेंगी और वैश्य-स्त्रियाँ क्षत्रिय और क्षत्रिय-स्त्रियाँ वैश्यों के घरों में बस जायँगी । ब्राह्मणों के घर में शूद्र-स्त्रियाँ रहेंगी ॥ १६ ॥ एक धर्म पर प्रजा नहीं चलेगी और वेद-कतेब दोनों के मतों की अवज्ञा होगी; भिन्न-भिन्न मत, भिन्न-भिन्न घरों में चलेंगे और एक रास्ते पर कोई नहीं चलेगा ॥ १७ ॥ ॥ गीतामालती छंद ॥ हर घर में जब भिन्न-भिन्न मत चलेंगे तो सभी अकड़-अकड़कर चलेंगे और कोई किसी के सामने सिर नहीं झुकाएगा । हर माह नये-नये मत पैदा होंगे और लोग भूलकर भी देवों-पितरों और पीरों की पूजा नहीं करेंगे ॥ १८ ॥ देवों-पीरों को भुलाकर लोग स्वयं को परमेश्वर कहलाएँगे । भिन्न-भिन्न प्रकार के लोग इकट्ठा होकर भिन्न प्रकार की बातें उड़ाएँगे । ये मत महीना दो महीना या आधा महीना तक

जाँहिगे ॥ १९ ॥ बेद अउर कतेब के दो दूख कै मत डारहैं। हित आपने तिह ठउर भीतर जंत्र मंत्र उचारहैं। मुख बेद अउर कतेब के कोई नाम लेव न देहगे। किसहूँ (मू०ग्रं०२७२) न कउडी पुंन ते कबहूँ न किउ ही देहगे ॥ २० ॥ पाप करम करै जहाँ तहाँ धरम करम बिसारकै। नही द्रब देखत छोड है लै पुत्र मित्र सँघार कै। एक नेक उठाइ है मति भिन्न भिन्न दिनं दिना। फोकटै धरमं सभै कलि केवलं प्रभणं बिना ॥२१॥ एक दिवस चलै कोऊ मत दोइ दिउस चलाहिगे। त्रिप जोर क्रोर करोर कै दिन तीसरै मिट जाहिगे। पुन अउर अउर उचाहगे मतणोगतं चतुरथ दिनं। धरम फोकटणो सभं इक केवलं कलिनं बिनं ॥ २२ ॥ छंद बंद जहाँ तहाँ नर नार नित्त नए करहि। पुन जंत्र मंत्र जहाँ तहाँ नही तंत्र लात कछू डरहि। धरम छत्र उतार कै रन छोर छत्री भाज हैं। सूद्र बैस जहाँ तहाँ गहि अस्त्र आहव गाज हैं ॥ २३ ॥ छत्रीआनी छोर कै नर नाह नीचन राव है। तज राज अउर समाज को ग्रहि नीच रानी जाव है। सूद्र ब्रहमसुता भए रत ब्रहम सूद्री होहिगे। बेसिया बाल बिलोक कै मुनराज धीरज खोहिगे ॥ २४ ॥ धरम भरम

चलेंगे और अन्त में पानी के बुलबुलों के समान स्वयं मिट जायेंगे ॥ १९ ॥ वेदों-कतेबों के मतों में दोष दिखाकर उन्हें छोड़ दिया जायगा और लोग अपने-अपने हितों में यंत्रों-मंत्रों का उच्चारण करेंगे। वेद-कतेब का नाम तक नहीं लेने दिया जायगा और कोई किसी को भी देने के नाम पर कौड़ी भी नहीं देगा ॥ २० ॥ धर्म-कर्म भुलाकर पाप-कर्म किए जायेंगे और द्रव्य को पुत्र और मित्र को भी मार कर प्राप्त किया जायगा। नित्यप्रति एक से एक मत उठेंगे और ये धर्म प्रभु के नाम से विहीन खोखले धर्म होंगे ॥ २१ ॥ कोई मत एक या दो दिन चलेगा और सत्ता के बल पर चलनेवाले ये मत तीसरे दिन समाप्त हो जायेंगे। पुन: चौथे दिन अन्य मत चलेंगे परन्तु वे सब कल्याण की भावना से विहीन होंगे ॥ २२ ॥ जहाँ-तहाँ छल-बल के कार्य नर-नारियाँ करेंगे। पुन: यंत्र-मंत्र और तंत्रों की भरमार होगी। धर्म-छत्रों का त्याग कर क्षत्रिय युद्ध छोड़कर भागेंगे और शूद्र तथा वैश्य अस्त्र-शस्त्र पकड़कर युद्ध में गरजेंगे ॥ २३ ॥ क्षत्रिय का कर्तव्य छोड़कर राजा नीच कार्य करेंगे। रानियाँ राजाओं को छोड़कर नीच समाज में जायेंगी। शूद्र ब्राह्मण-कन्याओं के साथ अनुरक्त होंगे और इसी प्रकार ब्राह्मण भी करेंगे। को देखकर मुनिराज भी धैर्य को देंगे ॥ २४ ॥ धर्म-

उड्यो जहाँ तहाँ पाप पग पग होहिंगे । निज सिक्ख नार गुरू रमै गुर दारा सो सिख सोहिंगे । अबबेक अउर बबेक को न बबेक बैठ बिचार हैं । पुन झूठ बोल कमाहिंगे सिर साच बोल उतार हैं ॥ २५ ॥ ॥ ब्रिध निराज कहातु नो छंद ॥ अक्रित्त क्रित्त कार मो अनित्त नित्त होहिंगे । तिआग धरमणो तिअं कुनारि साध जोहिंगे । पवित्र चित्र चित्रतं बचित्र मित्र धोहिंगे । अमित्र मित्र भावणो सु मित्र अमित्र सोहिंगे ॥ २६ ॥ कल्यं क्रितं करंमणो अभच्छ भच्छ जाहिंगे । अकज्ज कज्जणो नरं अधरम धरम पाहिंगे । सुधरम धरम धोहि हैं छितं धरा धरेसणं । अधरम परमणं छितं कुकरम करमणो क्रितं ॥ २७ ॥ कि उलंघ धरम करमणो अधरम धरम बिआप हैं । सु त्याग जग्गि जापणो अजोग जाप जाप हैं । सु धरम करमणं भयो अधरम करम निरभ्रमं । सु साध संक्रतं चितं असाध निरभयं डुलं ॥ २८ ॥ अधरम करमणो क्रितं सु धरम करमणो तजं । प्रहरख बरखणं धनं न करख सरबतो त्रिपं । अकज्ज कज्जणो क्रितं त्रिलज्ज

सम्मान उड़ जायगा और क़दम-क़दम पर पापाचार होगा, शिष्यों की पत्नियों से गुरु और गुरु-पत्नियों से शिष्यगण रमण करेंगे । मूर्खता और बुद्धिमता पर ध्यान नहीं दिया जायगा और सच बोलनेवालों का सिर उतार लिया जायगा । झूठ का ही बोलबाला होगा ॥२५॥ ॥ बृहद नाराज छंद ॥ विवर्जित कृत्य नित्य होंगे । साधु धर्म का त्यागकर वेश्याओं का रास्ता देखा करेंगे । विचित्र प्रकार की मित्रता, मैत्री की पवित्रता को धोकर नष्ट कर देगी । दोस्त-दुश्मन (स्वार्थ के लिए) एक साथ रहेंगे (और मौक़े की तलाश करते रहेंगे) ॥ २६ ॥ कलियुग के कृत्यों में अभक्ष्य का भक्षण किया जायगा । छिपानेवाली बातें खुले आम होंगी और अधर्म के मार्गों से धर्म की प्राप्ति की जायगी । धरती के नरेश ही धर्म को साफ़ करने का अर्थात नष्ट करने का कार्य करेंगे । अधर्म का जीवन ही प्रामाणिक जीवन माना जायगा और कुकर्मों को करने योग्य कृत्य माना जाएगा ॥ २७ ॥ लोग धर्म की अवहेलना कर देंगे और अधर्म धर्म सब जगह व्याप्त होगा । यज्ञ-जाप का त्याग कर लोग निषिद्ध जापों का जाप करेंगे । अधर्म के कार्य निस्संकोच धर्म के कार्य मानेंगे । साधु शंकित मन से भयभीत होकर तथा असाधु अभय होकर विचरण करेंगे ॥ २८ ॥ धर्म के कर्मों को त्याग लोग अधर्म के कार्य करेंगे और राजा लोग धनुष-बाण का त्याग कर देंगे । दुष्कर्मों का ढिंढोरा पीटते हुए लोग निर्लज्ज होकर मर्मोंमे धरती पर होगा और भोग निरर्थक काम

सरबते फिरं। अनरथ बरतितं भुअं न अरथ कत्थतं नरं ॥ २९ ॥ (मू०ग्रं०५७१) ॥ तर नराज छंद ॥ बरन है अबरन को। छाडि हरि शरन को ॥ ३० ॥ छाड सभ साज को। लाग है अकाज को ॥ ३१ ॥ त्याग है नाम को। लाग है काम को ॥ ३२ ॥ लाज को छोर है। दान मुख मोर है ॥ ३३ ॥ चरन नही ध्याइ है। दुष्ट गति पाइ है ॥ ३४ ॥ नरककहि जाहिगे। अंत पछुताहिगे ॥३५॥ धरम कह खोहिगे। पाप कर रोहिगे ॥ ३६ ॥ नरक पुन बास है। त्रास जम त्रास है ॥ ३७ ॥ ॥ कुमार ललत छंद ॥ अधरम करम कै है। न भूल नाम लैहै। किसू न दान देह गे। सु साध लूट लेह गे ॥ ३८ ॥ न देह फेर लै कै। न देह दान कै कै। हरि नाम को न लै है। बसेख नरक जैहै ॥ ३९ ॥ न धरम ठाढ रहिहै। करै न जउन कहिहै। न प्रीत मात संगा। अधीन अरधंगा ॥ ४० ॥ अभच्छ भच्छ भच्छै। अकच्छ काछ कच्छै। अभाख बैण भाखैं। किसू न काण राखैं ॥ ४१ ॥ अधरम करम करिहै। न तात मात डरिहै। कुमंत्र मंत्र कैहै। सु मंत्र को न लैहै ॥ ४२ ॥ अधरम करम कैहै।

करेंगे ॥ २९ ॥ ॥ तरु नाराज छंद ॥ अवर्ण ही वर्ण होगा और हरि-शरण का सभी त्याग करेंगे ॥ ३० ॥ सभी अच्छे कर्मों को त्यागकर दुष्कर्मों में प्रवृत्त होंगे ॥ ३१ ॥ प्रभु-नाम को त्याग, सभी कामासक्त होकर विचरण करेंगे ॥ ३२ ॥ लज्जा को त्यागकर दान देने से मुँह मोड़ लेंगे ॥ ३३ ॥ प्रभु-चरणों का ध्यान नहीं करेंगे और दुष्टों की ही जय-जयकार होगी ॥ ३४ ॥ सब नरक में जायँगे और अन्त में पछताएँगे ॥ ३५ ॥ धर्म को खोकर अन्त में सब पछताएँगे ॥ ३६ ॥ इनका नरक में वास होगा और यम इन्हें भयभीत करेगा ॥ ३७ ॥ ॥ कुमार ललित छंद ॥ अधर्म के कार्य करते हुए लोग भूल कर भी परमात्मा का नाम नहीं लेंगे। किसी को दान नहीं देंगे, बल्कि साधुओं को लूट लिया करेंगे ॥ ३८ ॥ लिया हुआ क़र्ज़ वापस नहीं देंगे और कहकर भी दान का धन नहीं देंगे। हरि-नाम नहीं लेंगे और ऐसे व्यक्ति विशेष रूप से नरक में जायँगे ॥३९॥ अपने धर्म पर स्थित नहीं रहेंगे और जो कहेंगे उसे नहीं करेंगे। माता के साथ प्रेम नहीं रहेगा और लोग पत्नियों के अधीन हो जायँगे ॥४०॥ अभक्ष्य का भक्षण होगा और निषिद्ध स्थानों पर गमन होगा। न बोलने योग्य वचन लोग बोलेंगे और किसी की परवाह नहीं करेंगे ॥ ४१ ॥ अधर्म के काम करेंगे और माता-पिता व किसी से नहीं डरेंगे सब कुमंत्रणाएँ

सु भरम धरम खुऐहै। सु काल फाँस फसहै। निदान नरक बसिहै ॥ ४३ ॥ कुकरम करम लागे। सुधरम छाड भागे। कमात नित्त पापं। बिसार सरब जापं ॥ ४४ ॥ सु मदृ मोह मत्ते। सु करम के कुपत्ते। सु काम क्रोध राचे। उतार लाज नाचे ॥ ४५ ॥ ॥ नग सरूपी छंद ॥ न धरम करम कौ करैं। ब्रिथा कथा सुने ररैं। कुकरम करम सो फसैं। सति छाड धरमवा नसैं ॥ ४६ ॥ पुराण काबि ना पड़ैं। कुरान लै न ते रड़ैं। अधरम करम को करैं। सु धरम जास ते डरैं ॥ ४७ ॥ धराकि वरणता भई। सु भरम धरम की गई। ग्रिहं ग्रिहं नये मतं। चले भुअं जथा तथं ॥ ४८ ॥ ग्रिहं ग्रिहं नए मतं। भई धरं नई गतं। अधरम राजता लई। निकार धरम देस दी ॥ ४९ ॥ प्रबोध एक ना लगै। सुधरम अधरम ते भगै। कुकरम प्रचुरयं जगं। सु करम पंख कै भगं ॥ ५० ॥ प्रपंच पंच हुइ गडा। अप्रपंच पंख कै उडा। कुकरम बिचरतं जगं। सुकरम सुभ्रमं भगं ॥५१॥ (पृ०ग्रं०५७४)

करेंगे और अच्छी सलाह कोई नहीं लेगा ॥४२॥ अधर्म के कार्य करेंगे और भ्रमों में धर्म को खो देंगे। वे सब काल के फंदे में फँसेंगे और अन्त में नरक में बसेंगे ॥ ४३ ॥ कुकर्मों में लगे लोग सुधर्म छोड़कर भाग जायेंगे। सब साधनाओं को भुलाकर वे पाप के कार्य करेंगे ॥ ४४ ॥ मद और मोह में मस्त लोग कर्मों से शरारती होंगे और काम-क्रोध में अनुरक्त वे लज्जा को त्यागकर नाचेंगे ॥ ४५ ॥ ॥ नग सरूपी छंद ॥ धर्म-कर्म कोई नहीं करेगा और व्यर्थ की बातों में लोग झगड़ेंगे। लोग कुकर्मों में इतना फँस जायँगे कि धर्म और सत्य का पूर्ण त्याग कर देंगे ॥ ४६ ॥ पुराण और काव्यों को नही पढ़ेंगे और न ही क़ुरान (शरीफ़) का पाठ करेंगे। अधर्म के ऐसे कार्य करेंगे कि धर्म भी उन कार्यों से डरेगा ॥ ४७ ॥ सारी धरती (पाप के) एक वर्ण वाली हो जायगी और धर्म का भरोसा समाप्त हो जायगा। धरती पर घर-घर नये मत चलेंगे। धरती पर लोग जैसा-तैसा (आचरण) करेंगे ॥ ४८ ॥ हर घर में नये मत होंगे। धरा पर नयी युक्ति होगी। अधर्म का राज होगा और धर्म को देशनिकाला मिल जायगा ॥ ४९ ॥ ज्ञान का असर किसी पर नहीं पड़ेगा और सुधर्म अधर्म के सामने भाग खड़ा होगा। कुकर्म प्रचुर मात्रा में होंगे और सुधर्म पंख लगाकर उड़ जायगा ॥ ५० ॥ प्रपंच ही न्याय करानेवाला पंच स्थापित होगा और सरलता पंख लगाकर उड़ जायगी। सारा संसार कुकर्मों में विचरण करेगा और सुकर्म भाग जायेंगे ५१

।। रमाण छंद ।। सुक्रितं तजिहैं । कुक्रितं भजिहैं ।। ५२ ।। भ्रमणं भरिहैं । जस ते टरिहैं ।। ५३ ।। करिहैं दुक्रितं । हरिहैं अधियं ।। ५४ ।। जपहैं अजपं । कुथपेण थपं ।। ५५ ।। ।। सोमराजी छंद ।। सुने देस देसं मुनं पाप करमा । चुनं जूठ कूठं स्रुतं घोर धरमा ।। ५६ ।। तजैं धरम नारी तकैं पाप नारं । महा रूप पापी कुक्रिताधिकारं ।। ५७ ।। करैं नित अनरथं समरथं न एती । करै पाप तेतो परालब्ध जेती ।। ५८ ।। नए नित्त मत्तं उठै एक एकं । करैं नित्त अनरथं अनेकं अनेकं ।। ५९ ।। ।। प्रिआ छंद ।। दुख दंद हैं सुखकंद जी । नही बंद हैं जगबंद जी ।। ६० ।। नही बेद बाक प्रमान हैं । मत भिन भिन बखान हैं ।। ६१ ।। न कुरान को मतु लेह गे । न पुरान देखन देह गे ।। ६२ ।। नही एक मंत्रहि जाप हैं । दिन द्वैक थापन थाप हैं ।। ६३ ।। ।। गाहा छंद दूजा ।। कीअतं पापणो करमं न अधरमं भरमणं त्रसताइ । कुकरम करम क्रितं न देवलोकेण प्रापतहि ।। ६४ ।। रत्यं अरथ अनरथं अरथ अरथं न बुझ्याम । न महरख बरखणं धनं चितं बसीअं

।। रमाण छंद ।। लोग अच्छे कार्यों को त्याग कर बुरे कामों का ध्यान करेंगे ।। ५२ ।। भ्रमों से भर जायेंगे और यश का त्याग करेंगे ।। ५३ ।। दुष्कृत्य करेंगे और व्यर्थ ही लड़ेंगे ।।५४।। कुमंत्रों का जाप करेंगे और निकृष्ट मान्यताओं की स्थापना करेंगे ।। ५५ ।। ।। सोमराजी छंद ।। देश-देशान्तरों में मुनि पापकर्म करते सुने जायेंगे । श्रुतियों के धर्म को छोड़कर वे जूठन और झूठे कर्मों को चुनेंगे ।। ५६ ।। नर और नारियाँ धर्म को त्यागकर पाप-कर्मों में प्रवृत्त होंगे और महान पापीगण अधिकारी होंगे ।। ५७ ।। अपनी सामर्थ्य से बढ़कर पाप करेंगे और अपने-अपने कर्मों के अनुसार पुन: पापकर्म करेंगे ।। ५८ ।। नये से नये मत नित्य चलेंगे और अनेकों अनर्थ होंगे ।। ५९ ।। ।। प्रिया छंद ।। लोग दु:ख-द्वन्द्व को दूर करनेवाले महाप्रभु की वंदना नहीं करेंगे ।। ६० ।। वेद-वाक्य प्रमाण नहीं होंगे और लोग भिन्न मतों का वर्णन करेंगे ।। ६१ ।। न तो कोई क़ुरान का मत स्वीकार करेगा और न कोई पुराण को ही देखने देगा ।। ६२ ।। किसी भी एक मत और मंत्र का चलन एक दो दिन से अधिक नहीं होगा ।। ६३ ।। ।। गाहा छंद दूसरा ।। पापकर्म करने वाले अधर्म और भ्रमों से डरेंगे नहीं और कुकर्म करनेवाले कभी भी देवलोक की प्राप्ति नहीं कर सकेंगे ।। ६४ ।। अनर्थों में अनुरक्त लोग वास्तविक अर्थ

बिराटकं ।। ६५ ।। भातवं मद्दयं कुनारं अनरतं धरमणो लीआइ । कुकरमणो कथतं बदितं लज्जिणो तजतं नरं ।। ६६ ।। सज्जयं कुतसितं करमं भजतं तजतं न लजा । कुबिरतं नितप्रति क्रितणे धरम करमेण त्यागतं ।।६७।। ।। चतुर पदी छंद ।। कुक्रितं नित करिहैं सुक्रितानु सर हैं अघ ओघन रुचि राजे । मानहैं न बेदन सिंम्रिति कतेबन लोक लाज तजि नाचे । चीनहै न बानी सुभग भवानी पाप करम रति हुइहैं । गुरदेव न मानै भल न बखानै अंत नरक कह जैहैं ।। ६८ ।। जपहै न भवानी अकथ कहानी पाप करम रति ऐसे । मनिहै न देवं अलख अभेवं दुहक्रितं मुनिवर जैसे । चीनहै न बातं परत्रिअ रातं धरमणि करम उदासी । जानिहै न बातं अधिक अगिआतं अंत नरक के बासी ।। ६९ ।। नित नव मत करहैं हरि ननुसरिहैं प्रभ को नाम न लैहैं । स्रुति सिंम्रिति न मानै तजत कुरानै अउर ही पैंड बतैहैं । परत्रिय रस राचे सत के काचे निज त्रिय

को नहीं समझेंगे । धन की वर्षा होने पर भी लोगों की तृष्णाएँ तृप्त नहीं होंगी तथा वे और अधिक धन की इच्छा करेंगे ।। ६५ ।। लोग मदमस्त होकर दूसरों की स्त्रियों से रमण करने को धर्म मानेंगे । 'कथनी' और 'करनी' दोनों कुकर्मों से पूर्ण होंगी और लज्जा का पूर्ण त्याग होगा ।। ६६ ।। लोग पापकर्मों से अपने आपको सुसज्जित करेंगे और लज्जा का प्रदर्शन करते हुए भी उसका त्याग ही करेंगे । उनका नित्यकर्म कुवृत्तियों से परिपूर्ण होगा और वे धर्म को त्याग देंगे ।। ६७ ।। ।। चतुर्पदी छंद ।। लोग नित्य बुरे कर्म करेंगे और अच्छे कर्मों को छोड़कर उनकी रुचि पापकर्मों में बढ़ेगी । बेद-कतेब और स्मृतियों को न मानकर तथा लोकलाज को छोड़कर लोग नाचेंगे । अपने ही वचनों तथा देवी-देवता आदि किसी को नहीं पहचानेंगे और पापकर्मों में रत रहेंगे । गुरु की बात नहीं मानेंगे, भलाई का वर्णन नहीं करेंगे तथा अन्त में नरक में जायँगे ।। ६८ ।। देवी की पूजा न करके पापकर्मों में लीन रहने का अकथनीय कार्य लोग करेंगे । परमात्मा को नहीं मानेंगे और मुनिगण भी दुष्कृत्य करेंगे । धर्म-कर्म से उदासीन होकर लोग पराई स्त्रियों में अनुरक्त रहते हुए किसी को नहीं पहचानेंगे । किसी के वचन की परवाह न करते हुए अत्यधिक रूप से अज्ञानी बनते हुए लोग अन्त में नरक के निवासी बनेंगे ।। ६९ ।। नित्य नये मतों को धारण करेंगे और परमात्मा का नाम न लेकर उसका अनुसरण नहीं करेंगे । श्रुति-स्मृतियों और कुरान आदि का त्याग कर अन्य रास्ते अपनायेंगे तथा पराई स्त्रियों के रस में लीन होकर

गमन न करहै। मानहैं न एकं पूज (मू०ग्रं०५७५) अनेकं अंत नरक महि परहै ॥ ७० ॥ पाहन पुजैहै एक न धिऐहै मत के अधक अधेरा। अंम्रित कहु तजिहै बिख कहु भजिहै साझहि कहहि सवेरा। फोकट धरमणि रति कुक्रित बिना मत कहो कहा फल पैहै। बांधे भ्रितसालै जाहि उतालै अंध अधोगति जैहै ॥ ७१ ॥ ॥ बेला छंद ॥ करहै नित्त अनरथ अरथ नही एक कमैहैं। नहि लैहैं हरि नाम दान काहू नही देहैं। नित्त इक्क मत तजैं इक्क मति नित्त उचैहैं ॥ ७२ ॥ नित्त इक्क मत मिटै उठैहै नित्त इक्क मत। धरम करम रहि गयो भई बसुधा अउरै गति। भरम धरम को गयो पाप प्रचुर्यो जहाँ तह ॥ ७३ ॥ भ्रिष्ट इष्ट तजि दीन करत आरिष्ट पुष्ट सभ। बिष्ट त्रिष्ट से मिटी भए पापिष्ट भ्रिष्ट तब। इक्क इक्क निंदहै इक्क इक्क कहि हस चल्लैं ॥ ७४ ॥ तजी आन जहान कान काहू नही मानहि। तात मात की निंद नीच ऊचह सम जानहि। धरम भरम को गयो भई इक

सत्य मार्ग को छोड़कर अपनी स्त्री के साथ प्रेम नहीं करेंगे। एक परमात्मा को न मानकर अनेकों की पूजा करेंगे और अन्त में नरक में जायँगे ॥ ७० ॥ पत्थरों की पूजा कर एक परमात्मा का ध्यान नहीं करेंगे तथा मत-मतान्तरों का अधिक अन्धकार होगा। अमृत को छोड़कर विष को चाहेंगे और संध्या को प्रातःकाल की संज्ञा देंगे। सभी खोखले धर्मों में अनुरक्त होकर बुरे काम करेंगे और तदनुसार फल प्राप्त करेंगे। वे बँधे हुए मृत्युलोक में जायँगे और अधोगति को प्राप्त करेंगे ॥ ७१ ॥ ॥ बेला छंद ॥ लोग सदैव अनर्थक कार्य करेंगे और अर्थपूर्ण कार्य नहीं करेंगे। प्रभु-नाम नहीं लेंगे और कभी दान नहीं देंगे। सदैव एक मत को छोड़कर दूसरे मत के गुणगान का उच्चारण करेंगे ॥ ७२ ॥ रोज़ एक मत मिटेगा, दूसरा प्रचलित होगा। धर्म-कर्म समाप्त हो जायगा तथा धरती की गति भी विलक्षण हो जायगी। धर्म का सम्मान समाप्त हो जायगा और जहाँ-तहाँ पाप का प्रचार होगा ॥ ७३ ॥ धरती के लोग अपने धर्म का त्याग कर बड़े-बडे पापों में लिप्त हो जायँगे और जब सभी पापों के कारण भ्रष्ट हो जायँगे तो धरती पर वर्षा भी नहीं होगी। प्रत्येक दूसरे की निन्दा करेगा और एक-दूसरे की हँसी उड़ाकर चलता बनेगा ॥ ७४ ॥ मान-सम्मान का त्यागकर कोई भी संसार मे किसी की बात नहीं मानेगा माता-पिता की निन्दा होगी

बरण प्रजा सभ ॥ ७५ ॥ ॥ घत्ता छंद ॥ करिहैं पाप अनेक न एक धरम कर हैं नर । मिट जैहै सभ खशट करम के धरम धरम घर । नहि सुक्रित कमैहै अधोगति जैहै अमर लोग जैहै न बर ॥ ७६ ॥ धरम न करहै एक अनेक पाप कैहै सभ । लाज बेच तज फिरैं सकल जग । पाप कमैवह दुरगत पैहैं पाप समुंद जैहै न तर ॥ ७७ ॥ ॥ दोहरा ॥ ठउर ठउर नव मत चले उठा धरम को दौर । सुक्रित जह तह दुर रही पाप भयो सरमौर ॥ ७८ ॥ ॥ नवपदी छंद ॥ जह तह करन लगे सभ पापन । धरम करम तजि कर हरि जापन । पाहन कउ सु करत सभ बंदन । डारत धूप दीप सिर चंदन ॥ ७९ ॥ जह तह धरम करम तज भागत । उठ उठ पाप करम सौ लागत । जह तह भई धरम गत लोपं । पापह लगी चउगनी ओपं ॥ ८० ॥ भाज्यो धरम भरम तज अपना । जानक हुतो लखा इह सुपना । सभ संसार तजी तिअ आपन । मंत्र कुमंत्र लगे मिल जापन ॥ ८१ ॥ चहुदिस घोर प्रचुर भयो पापा ।

और नीचों को ऊँचा माना जायगा । धर्म का भय समाप्त हो जायगा और सभी प्रजा भ्रष्टाचार के एक ही वर्ण वाली हो जायगी ॥ ७५ ॥ ॥ घत्ता छंद ॥ लोग अनेकों पाप करेंगे और एक भी धर्म का काम नहीं करेंगे । षट्-कर्म सभी घरों से समाप्त हो जायँगे और कोई भी अच्छे कर्म न करने की वजह से अमरलोक को नहीं जाएगा तथा सभी अधोगति को प्राप्त होंगे ॥७६॥ धर्म का एक भी कार्य न कर सभी पाप-कार्य करेंगे तथा लज्जा को त्यागकर सारे संसार में विचरण करेंगे । पाप की कमाई करेंगे, दुर्गति को प्राप्त होंगे तथा पाप के समुद्र को तैरने में असमर्थ होंगे ॥ ७७ ॥ ॥ दोहा ॥ स्थान-स्थान पर नये मत चलेंगे और धर्म का प्रभाव समाप्त हो जायगा । अच्छाई यहाँ-वहाँ छिपी पड़ेगी और पाप ही सब जगह नेतृत्व करेगा ॥ ७८ ॥ ॥ नवपदी छंद ॥ जहाँ-तहाँ सभी धर्म-कर्म को तथा परमात्मा के जाप को त्याग कर पाप करने लगेंगे । पत्थरों की पूजा-वंदना की जायगी और उन्हीं पर धूप, दीप, चंदन आदि डाला जायगा ॥ ७९ ॥ जहाँ-तहाँ धर्म-कर्मों को त्यागकर लोग भाग खड़े होंगे और पाप-कर्मों में लीन होंगे । धर्म का लोप हो जायगा और पाप की चौगुनी वृद्धि हो जायगी ॥ ८० ॥ लोग अपना धर्म-कर्म त्यागकर इस प्रकार भागेंगे कि मानो उन्होंने कोई दु:स्वप्न देखा हो सभी लोग अपनी स्त्रियों का त्याग कर देंगे और कुविचारों का जाप करेंगे । ८१ चारों दिशाओं में घोर पाप होने से कोई भी हरि-स्मरण नहीं

कोऊ न जाप सकै हरि जापा। पाप क्रिआ सभ जा चल पई। धरम क्रिआ (मू०ग्रं०५७६) या जग तै गई॥ ८२॥ ॥ अड़िल दूजा॥ जहाँ तहाँ आधरम उपजिआ। जानक धरम पंख कर भजिआ। डोलत जह तह पुरख अपावन। लागत कतही धरम को दावन॥ ८३॥ अरथह छाड अनरथ बतावत। धरम करम चित एक न ल्यावत। करम धरम की क्रिआ भुलावत। जहा तहा आरिशट बतावत॥ ८४॥ ॥ कुलक छंद॥ धरम न करहीं। हरि न उचरहीं। पर घर डोलैं। जलह बिरोलैं॥ ८५॥ लहै न अरथं। कहै अनरथं। बचन न साचे। मत कर काचे॥ ८६॥ पर तिअ राचैं। घर घर जाचैं। जह तह डोलैं। रहि रहि बोलैं॥ ८७॥ धन नही छोरैं। निस घर फोरैं। गहि बहु मारिअत। नरकह डारिअत॥ ८८॥ अस दुर करमं। छुट जग धरमं। मति पित भरमैं। धसत न घर मैं॥ ८९॥ सिख मुख मोरैं। भ्रित भ्रिप छोरैं। तज त्रिय भरता। बिसरो करता॥९०॥ नव नव करमं। बढि गयो भरमं। सभ जग पापी। कहूं

कर सकेगा। पापक्रियाएँ ऐसी चल निकलेंगी कि धर्म के कर्म संसार से समाप्त हो जायँगे॥ ८२॥ ॥ अड़िल दूसरा॥ यत्र-तत्र अधर्म के पैदा हो जाने से सुधर्म पंख लगाकर उड़ जायगा। यहाँ-वहाँ बुरे लोग विचरण करेंगे और धर्म की बारी कभी भी नहीं आयेगी॥ ८३॥ लोग अर्थ का अनर्थ करते हुए कभी भी मन में धर्म-कर्म को नहीं आने देंगे। धर्म-कर्म की क्रियाओं को भुलाकर यत्र-तत्र पाप का प्रचार करेंगे॥ ८४॥ ॥ कुलक छंद॥ धर्म नहीं करेंगे, प्रभु-नाम उच्चारण नहीं करेंगे, पराये घरों में घुसेंगे और जल को ही मथकर उसमें से तत्त्व निकालने की कोशिश करेंगे॥ ८५॥ अर्थ को ग्रहण न कर निरर्थक भाषण करेंगे और कच्चे मतों को धारण कर कभी भी सच्चाई की बात नहीं करेंगे॥ ८६॥ घर-घर में घुसकर यहाँ-वहाँ डोल और बोलकर पराई स्त्रियों में अनुरक्त रहेंगे॥ ८७॥ धन के लालच में रात को चोरियाँ करेंगे। उनका सामूहिक नाश होगा और वे नरक में जायँगे॥ ८८॥ इस प्रकार के दुष्कर्मों के कारण संसार से धर्म छूट जायेगा। माता-पिता डरते हुए घर में नहीं घुसेंगे॥ ८९॥ शिष्य गुरु से मुख मोड़ लेंगे और नौकर राजा को छोड़ देंगे तथा स्त्री पति को छोड़कर भगवान को भी भुला देगी ९०। नये-नये कर्मों से भ्रम बढ़ जायेंगे। सारा जगत पापी हो जायगा और कहीं पर कोई भी जप और तप नहीं

न जापी ॥ ९१ ॥ ॥ पदमावती छंद ॥ देखिअत सभ पापी नह हरि जापी तदप महा रिस ठानैं । अति बिभचारी परतिअ भारी देव पितर नही मानैं । तदप महा बर कहत धरमधर पाप करम अधकारी । ध्रिग ध्रिग सभ आखैं मुख पर नही भाखैं देह प्रिष्ट चड़ि गारी ॥ ९२ ॥ देखिअत बिन करमं तज कुल धरमं तदप कहात सु मानस । अति रति लोभं रहत सु छोभं लोक सगल भल जानस । तदप बिना गति चलत बुरी मति लोभ मोह बसि भारी । पित मात न मानैं कछू न जानैं लैह घरण ते गारी ॥ ९३ ॥ देखिअत जे धरमी ते भए अकरमी तदप कहात महा मत । अत बस नारी अबगति भारी जानत सकल बिना जत । तदप न मानत कुमत प्रठानत मत अरु गत के काचे । जिह तिह घर डोलत भले न बोलत लोग लाज तज नाचे ॥ ९४ ॥ ॥ किलका छंद ॥ पाप करैं नित प्रात घने । जन दोखन के तर सुद्ध बने । जग छोर भजा गत धरमन की । सु जहाँ तहाँ पाप क्रिआ प्रचुरी ॥ ९५ ॥ संग

होगा ॥ ९१ ॥ ॥ पद्मावती छंद ॥ सब तरफ़ पापी दिखाई देंगे, कोई भी प्रभु-चिन्तक नहीं होगा तब भी आपस में घोर ईर्ष्या रहेगी । परस्त्रियगामी, व्यभिचारी लोग देव और पितरों को नहीं मानेंगे । पापकर्मों को करनेवाले फिर भी धर्माधिकारी बने रहेंगे । लोग मुँह पर बात नहीं करेंगे और पीठ-पीछे गाली देंगे तथा सबको धिक्कारेंगे ॥ ९२ ॥ बिना अच्छे कर्म किये हुए और कुलधर्म का त्याग कर भी लोग अच्छे मनुष्य कहलायेंगे । लोग उन व्यक्तियों को अच्छा समझेंगे जो काम-क्रीड़ा के लोभ को मन में बसाते हुए हमेशा चिन्तित रहेंगे । लोग बुरे सिद्धान्तों पर भारी लोभ और मोह के वश में होकर चलेंगे । माता और पिता को कुछ नहीं मानेंगे और अपनी स्त्रियों से गाली खायेंगे ॥ ९३ ॥ धर्मी लोग देखते-देखते बुरे कर्म करने लग जायँगे, फिर भी अपने आप को अच्छे कहलवायेंगे । सभी नारियों के वश में होंगे और बिना संयम के रहने से उनकी अधोगति होगी । इतने पर भी बुद्धि से विहीन लोग बुरे कर्मों को करने की धारणा से चूकेंगे नहीं । बुरे वचनों को बोलते हुए इधर-उधर लोग विचरण करेंगे और लोक-लज्जा को त्यागकर नाचते घूमेंगे ॥ ९४ ॥ ॥ किलका छंद ॥ नित्य नये पाप करेंगे और लोगों के दोष निकालते हुए स्वयं शुद्ध बने रहेंगे । धर्म को माननेवाले लोग जगत छोड़ कर भाग जायँगे और यत्र-तत्र सबके हृदय में पाप-क्रियाओं की प्रचुरता होगी ॥ ९५ ॥ सब पापकर्मों के साथ घूमेंगे और संसार से पाठ-पूजा की

लए फिरै पापन हो। तज (मू०ग्रं०५७७) भाज क्रिआ जग जापन की। दिव पितन पावक मानहू गे। सभ आपन ते घटि जानहू गे ॥ ९६ ॥ ॥ मधुभार छंद ॥ भज्ज्यो सु धरम। प्रचुर्यो कुकरम। जहू तहू जहान। तज भाज आन ॥ ९७ ॥ नितप्रति अनरथ। करहै समरथ। उठ भाज धरम। लै संग सु करम ॥ ९८ ॥ कर है कुचार। तज सुभ अचार। भई क्रिआ अउर। सभ ठौर ठौर ॥ ९९ ॥ नही करत संग। प्रेरति अनंग। कर सुता भोग। जो है अजोग ॥ १०० ॥ तज लाज भाज। संजुत समाज। घट चला धरम। बढिओ अधरम ॥ १०१ ॥ क्रीड़त कुनार। तज धरम बार। बढि गयो भरम। भाजंत धरम ॥ १०२ ॥ देसन बिदेस। पापी नरेश। धरमी न कोइ। पाप अति होइ ॥ १०३ ॥ साधू सत्रास। जहू तहू उदास। पापीन राज। ग्रहि सरब साज ॥ १०४ ॥ ॥ हरि गीता छंद ॥ सभ द्रोन गिरवर सिखर तर नर पाप करम भए भनौ। उठ भाज धरम सभरम हुऐ चमकंत दामन सो मनौ। किधौ सूद्र सुभट समाज संजुत जीत है बसुधा थली। किधौ अत्र छत्र तजे भजे अरु अउर अउर

क्रियाएँ भाग खड़ी होंगी। देव-पितरों आदि किसी को नहीं मानेंगे और सबको अपने से कम ही समझेंगे ॥ ९६ ॥ ॥ मधुभार छंद ॥ धर्म भाग खड़ा होगा और कुकर्मों का प्रचार होगा। संसार में मर्यादा कहीं नहीं रहेगी ॥ ९७ ॥ समर्थ लोग नित्य अनर्थ करेंगे और सुकर्मों को साथ ले धर्म भाग खड़ा होगा ॥ ९८ ॥ शुभ आचरण को त्यागकर सभी अनाचार में लिप्त होंगे और स्थान-स्थान पर विचित्र क्रियाएँ होंगी ॥ ९९ ॥ स्त्रियों से काभभोग न कर अयोग्य पुत्रियों के साथ लोग भोग करेंगे ॥ १०० ॥ पूरा समाज लज्जा-त्याग की दौड़ लगाएगा। अधर्म बढ़ जायगा और धर्म घट जायगा ॥ १०१ ॥ धर्म त्यागकर लोग वेश्याओं के साथ क्रीड़ा करेंगे। भ्रम बढ़ जायँगे और धर्म भाग जायगा ॥ १०२ ॥ देश-विदेशों के पापी राजाओं में कोई भी धर्म पर आचरण करनेवाला नहीं रहेगा ॥ १०३ ॥ साधु त्रासयुक्त होकर जहाँ-तहाँ उदास दिखाई देंगे। सभी घरों में पाप का राज होगा ॥ १०४ ॥ ॥ हरिगीता छंद ॥ कहीं द्रोणगिरि पर्वत के शिखर के समान बड़े-बड़े पाप होंगे। सब धर्म को छोड़कर भ्रम की चमकती हुई बिजली में विचरण करेंगे। कहीं शूद्र वीरों से सुसज्जित हो धरती को जीतेंगे और कहीं क्षत्रिय अस्त्रों-शस्त्रों को भागे फिरेंगे तथा भिन्न-भिन्न प्रकार

क्रिआ चली ॥ १०५ ॥ न्रिप देस देस बिदेस जह तह पाप करम सभै लगे । नर लाज छाड निलाज हुइ फिरैं धरम करम सभैं भगे । किधौ सूद्र जह तह सरब महि महा राज्य पाइ प्रहरथ है । किधौ चोर छाडि अचोर को गहि सरब दरब आकरख है ॥ १०६ ॥ ॥ त्रिभंगी छंद ॥ सभ जग पापी कहू न जापी अथपन थापी देस दिसं । जह तह मतवारे भ्रमत भ्रमारे मत न उजियारे बाध रिसं । पापन रस राते दुरमत माते कुमतन दाते मत नेकं । जह तह उठ धावै चित ललचावै कछूहू न पावै बिन एकं ॥ १०७ ॥ तजि हरि धरमं गहत कुकरमं बिन प्रभ करमं सभ भरमं । लागत नही तंतं फुरत न मंतं चलत न जंतं बिन मरमं । जप है न देवी अलख अभेवी आदि अजेवी परम जुधी । कुबुधन तन राचे कहत न साचे प्रभहि न जाचे तमक बुधी ॥ १०८ ॥ ॥ हीर छंद ॥ अपंडत गुण मंडत सुबुध निखंडत देखिऐ । छत्री बर धरम छाड अकरम धरम लेखिऐ । (मू०पं०५७८) सति रहत पाप ग्रहत क्रुद्ध चहत जानिऐ । अधरम लीण अंग छीण क्रोध पीण मानिऐ ॥ १०९ ॥

की क्रियाओं का चलन होगा ॥ १०५ ॥ देश-विदेशों के राजा पापकर्मों में लगेंगे । व्यक्ति लज्जा का त्याग कर निर्लज्ज होकर घूमेंगे और धर्म-कर्म भाग खड़े होंगे । कहीं ब्राह्मण शूद्रों के चरण स्पर्श करेंगे और कहीं चोर को छोड़कर अचोर को पकड़कर उसका धन-द्रव्य लूट लिया जायगा ॥ १०६ ॥ ॥ त्रिभंगी छंद ॥ सारा जगत पापी हो जायगा, कोई तप-साधना करनेवाला नहीं होगा और सारे देशों में गर्हित मूल्यों की स्थापनाएँ होंगी । जहाँ-तहाँ अपने मद में मस्त ईर्ष्यालु व्यक्ति घूमेंगे । पाप-रस में लिप्त दुर्मति के उत्पादक अनेकों मत प्रचलित होंगे । चित्त के बढ़े लालच के कारण लोग जहाँ-तहाँ उठकर दौड़ेंगे, परन्तु प्राप्ति कुछ नहीं होगी ॥ १०७ ॥ प्रभु-धर्म को छोड़कर सभी कुकर्मों को ग्रहण करेंगे परन्तु प्रभु-कर्म से विहीन सब व्यर्थ होगा । तंत्र-मंत्र और यंत्र-रहस्य को जाने बिना सब व्यर्थ हो जायँगे । परम योद्धा, अजेय एवं अलक्ष्य देवी का जाप भी लोग नहीं करेंगे । तमस् बुद्धि में लीन सच्चे प्रभु से विहीन लोग दुष्कर्मों में लगे रहेंगे ॥ १०८ ॥ ॥ हीर छंद ॥ मूर्ख गुणों से मंडित और बुद्धिमान खंडित बुद्धि हो जायँगे । क्षत्रिय श्रेष्ठ धर्म को छोड़कर बुरे कर्मों को ही धर्म मानेंगे । सत्य से रहित गर्हित पाप के क्रोध की ही प्रतिष्ठा होगी और व्यक्ति अधर्मों से लीन और क्रोध के कारण क्षीण (बुद्धि एवं काया वाले) हो जाएँगे १०९ कुलटा स्त्रियों के रस में

कुलीअन रस चाही गुणन न ग्राही जानिअत। सत्त करम छाडके असत्त करम मानिअत। रूप रहित जूप ग्रहित पाप सहित देखिऐ। अकरम लीन धरम छीन नार अधीन पेखिऐ॥ ११०॥ ॥ पधिसटका छंद॥ अति पापन ते जग छाइ रह्यो। कछु बुध बल धरम न जात कह्यो। दिस बदिसन के जिअ देख सभै। बहु पाप करम रत है सु अबै॥ १११॥ प्रितमानन नर कहूँ देख परै। कछु बुध बल बचन बिचार करै। नर नारन एकन नेक मतं। नित अरथानरथ गनिस्त गतं॥ ११२॥ ॥ मारह छंद॥ हित संग कुनारन अति बिभचारन जिनके ऐस प्रकार। बड कुल जद्दपु उपजी बहु छबि तद्दप प्रिअ बिभचार। चित्रत बहु चित्रन कुसम बचित्रन सुंदर रूप अपार। किधौ देवलोक तज सुढर सुंदरी उपजी बिबिध प्रकार॥ ११३॥ हित अति दुर मानस कछू न जानस नरहर अरु बटपार। कछु शास्त्र न मानत सिम्रित न जानत बोलत कुबिध प्रकार। कुशटित ते अंगन गलत कुरंगन अलप अजोगि अछज्जि। किधौ नरक छोर अवतरे महा पसु डोलत प्रिथी निलज्ज॥ ११४॥

लीन लोग गुणों को ग्रहण नहीं करेंगे। सत्याचरण को छोड़कर असत्य कर्मों को लोग मानगे। रूप-सौन्दर्य से विहीन व्यक्तियों के झुंड पाप एवं गर्हित कर्मों में लिप्त देखे जायँगे और धर्म-कर्म से क्षीण सभी स्त्रियों के वश में ही पाये जायँगे॥ ११०॥ ॥ पधिष्टका छंद॥ पाप जगत पर छा गए हैं और बुद्धि और धर्म का कुछ भी बल नहीं रह गया है। देशों-विदेशों के जीव (कलियुग की पूर्व संध्या में) पापकर्मों में रत हैं॥ १११॥ लोग (पत्थर की) मूर्तियों की तरह दिखाई पड़ रहे हैं और कहीं-कहीं बुद्धि के बल से संयुक्त बातचीत हो रही है। नर और नारियों के अनेक मत हैं और नित्य अर्थ का अनर्थ हो रहा है॥ ११२॥ ॥ मारह छंद॥ लोगों का प्रेम कुलटाओं, व्यभिचारियों से होगा और बेशक स्त्रियाँ ऊँचे कुलों में पैदा होंगी तथापि वे व्यभिचारिणियाँ होंगी। फूल के समान विचित्र रंगों और कोमलताओं वाली स्त्रियाँ ऐसी होंगी मानो वे देवलोक से नीचे उतरी हों॥ ११३॥ मनुष्य अपना हित छिपकर साधेंगे और सभी राहजनी करेंगे। शास्त्र, स्मृतियों को जानें-मानेंगे नहीं और कुबुद्धिपूर्ण तरीके से बात करेंगे। उनके अंगों में कुष्ठ होने से उनके अंग गलेंगे और कभी न ठीक होनेवाली व्याधियाँ उन्हें होंगी। पृथ्वी पर पशु-रूप में इस प्रकार निर्लज्ज होकर लोग विचरण करेंगे मानो नरक से पृथ्वी पर धारण किया हो ११४ । दोहा॥ सभी

।। दोहरा ।। शंकर बरन प्रजा भई इक ब्रन रहा न कोइ। सकल सूद्र प्रापत भई दइव करै सो होइ ।।११५।। ।। दोहरा ।। शंकर बरन प्रजा भई धरम न कतहु रहान। पाप प्रचुर राजा भए भई धरम की हान ।। ११६ ।। ।। सोरठा ।। धरम न कतहूं रहान पाप प्रचुर जग मो धरा। धरम सभन बिसरान पाप कंठ सब जग किओ ।। ११७ ।। कलजुग चड़्यो असंभ जगत कवन बिध बाच है। रंगहु एकहि रंग तब छुटिहो कल-काल ते ।। ११८ ।। ।। हंसा छंद ।। जह तह बढा पाप का करम। जग ते घटा धरम का भरम ।। ११९ ।। पाप प्रचुर जह तह जग भइयो। पंखन धार धरम उड गइयो ।। १२० ।। नई नई होन लगी नित बात। जह तह बाढ चल्यो उतपात ।। १२१ ।। सभ जग चलत और ही करम। जह तह घट (म्रू०ग्रं०५७९) गयो धरा ते धरम ।।१२२।। ।। मालती छंद ।। जह तह देखीअत। तह तह पेखीअत। सकल कुकरमी। कहूँ न धरमी ।।१२३।। जह तह गुनिअत। तह तह सुनिअत। सभ जग पापी। कहूँ न जापी ।। १२४ ।। सकल कुकरमं। भज गयो

प्रजा वर्णसंकर हो गई और कोई भी एक वर्ण नहीं बचा है। सभी शूद्र-बुद्धि को प्राप्त हो गए हैं और ईश्वर ही जो चाहेगा वही होगा। ११५ ।। ।। दोहा ।। धर्म कहीं नहीं बचा और प्रजा वर्णसंकर हो गई। राजा प्रचुर पाप कमानेवाले हो गए तथा धर्म की हानि हो गई है ।। ११६ ।। ।। सोरठा ।। धर्म कहीं नहीं रहा और धरती पर पाप प्रचुर मात्रा में हो गया। सबों ने धर्म को भुला दिया और सारा संसार आकण्ठ पाप में डूब गया ।। ११७ ।। आसंभव कलियुग आ गया है। संसार किस विधि बचेगा, जब तक एक परमात्मा के रंग में नहीं रँगेंगे, तब तक कलियुग के प्रभाव से नही छूटा जा सकेगा ।। ११८ ।। ।। हंसा छंद ।। यत्न-तत्र पाप-कर्म बढ़ गए और जगत से धर्म-कर्म समाप्त हो गए ।। ११९ ।। जगत में पाप प्रचुर मात्रा में बढ़ गया और धर्म पंख लगाकर उड़ गया ।। १२० ।। नित्य नई-नई बातें होने लगीं और इधर-उधर उत्पात होने लगे ।। १२१ ।। सारा संसार उलटे कर्म करने लगा और धरती से सर्वत्र धर्म समाप्त हो गया ।। १२२ ।। ।। मालती छंद ।। जहाँ-जहाँ देखो वहाँ-वहाँ कुकर्मी ही दिखाई देते हैं और धर्म को मानने वाले कोई भी दिखाई नहीं देते ।। १२३ ।। जहाँ तक सुनाई और दिखाई पड़ता है सब जगत पापी ही होता है १२४ कुकर्मों के कारण

धरमं । जग्ग न सुनिअत । होम न गुनिअत ॥१२५॥ सकल कुकरमी । जगु भयो अधरमी । कहूँ न पूजा । बस रह्यो दूजा ॥ १२६ ॥ ॥ अत मालती छंद ॥ कहूँ न पूजा कहूँ न अरचा । कहूँ न स्रुत धुनि सिम्रत न चरचा । कहूँ न होमं कहूँ न दानं । कहूँ न संजम कहूँ न शनानं ॥ १२७ ॥ कहूँ न चरचा कहूँ न बेदं । कहूँ निवाज न कहूँ कतेबं । कहूँ न तसबी कहूँ न माला । कहूँ न होमं कहूँ न ज्वाला ॥ १२८ ॥ अउर ही करमं अउर ही धरमं । अउर ही भावं अउर ही मरमं । अउर ही रीतं अउर ही चरचा । अउर ही गीतं अउर ही अरचा ॥ १२९ ॥ अउर ही भाँतं अउर ही बसत्रं । अउर ही बाणी अउर ही असत्रं । अउर ही रीता अउर ही भायं । अउर ही राजा अउर ही न्यायं ॥ १३० ॥ ॥ अभीर छंद ॥ अत साधू अत राजा । करन लगे बुर काजा । पाप हिरदे महि ठान । करत धरम की हान ॥ १३१ ॥ अति कुचाल अरु क्रूर । अति पापिष्ट कठूर । थिर नही रहत पलाप । करत अधरम की साध ॥ १३२ ॥ अति पापिष्ट अजान । करत धरम की हान । मानत जंत्र न तंत्र । जापत कोई न मंत्र ॥ १३३ ॥ जह तह बडा अधरम । धरम भजा

धर्म भाग गया है और कोई भी हवन-यज्ञ की बात नहीं करता है ॥ १२५ ॥ सभी कुकर्मी और अधर्मी हो गए हैं । कहीं भी पूजा आदि नहीं होती है तथा सभी के हृदयों में परायापन बना हुआ है ॥१२६॥ ॥ अतमालती छंद ॥ कहीं पूजा-अर्चना नहीं, कहीं श्रुतियों-स्मृतियों की चर्चा नहीं, कहीं होम और दान नहीं तथा कहीं संयम और स्नान नहीं दिखाई पड़ता ॥ १२७ ॥ कहीं वेदचर्चा, नमाज़, कतेब, माला और यज्ञज्वाला आदि दिखाई नहीं दे रही है ॥ १२८ ॥ विपरीत कर्म-धर्म, भाव, रहस्य, रीति-रिवाज और चर्चाएँ तथा अर्चना-पूजा दिखाई दे रही है ॥ १२९ ॥ अजीब वस्त्र, वाणी, अस्त्र-शस्त्र, रीति-रिवाज, प्रेम, राजा और उसका न्याय दिखाई दे रहा है ॥ १३० ॥ ॥ अभीर छंद ॥ राजा, साधु आदि सभी दुष्कर्म कर रहे हैं और हृदय में पाप बसाकर धर्म की हानि कर रहे हैं ॥ १३१ ॥ सभी लोग क्रूर आचरणहीन, पापी और कठोर हो गए हैं । आधे पल के लिए भी स्थिर नहीं रहते और अधर्म की इच्छा बनाए रखते हैं ॥ १३२ ॥ ये अत्यन्त अज्ञानी और पापी धर्म की हानि करते हुए सब क़िस्म के यंत्र-मंत्र और तंत्रों के प्रति अनास्थावान बने हुए हैं ॥ १३३ ॥ सब-तरफ अधर्म के बढ़ जाने से धर्म भयभीत होकर भाग गया

कर भरम । नव नव क्रिआ भई । दुरमत छाइ रही ॥ १३४ ॥
॥ कुंडरीआ छंद ॥ नए नए मारग चले जग मो बढा अधरम ।
राजा प्रजा सभै लगे जह तह करन कुकरम । जह तह करन
कुकरम प्रजा राजा नर नारी । धरम पंख कर उडा पाप की
क्रिआ बिथारी ॥१३५॥ धरम लोप जग ते भए पाप प्रगट बपु
कीन । ऊच नीच राजा प्रजा क्रिआ अधरम की लीन ।
क्रिआ पाप की लीन नार नर रंक अर राजा । पाप प्रचुर बपु
कीन धरम धर पंखन भाजा ॥ १३६ ॥ पापाक्रांत धरा भई
पल न सकत ठहराइ । कालपुरख को ध्यान धर (मू०ग्रं०५८०)
रोवत भई बनाइ । रोवत भई बनाइ पाप भारन भर धरणी ।
महा पुरख के तीर बहुत बिधि जात न बरणी ॥ १३७ ॥
॥ सोरठा छंद ॥ करकै प्रियम समोध बहुर बिदा प्रिथवी करी ।
महा पुरख बिन रोध भार हरण बसुधा निमित ॥ १३८ ॥
॥ कुंडरीआ छंद ॥ दीनन की रच्छा निमित कर है आप उपाइ ।
परमपुरख पावन सदा आप प्रगट है आइ । आप प्रगट है आइ
दीन रच्छा के कारण । अवतारीवतार धरा के भार
उतारण ॥ १३९ ॥ कलजुग के अंतह समै सतिजुग लागत
आदि । दीनन की रच्छा लिए धरिहै रूप अनाद । धरिहै

हुआ । नई-नई क्रियाएँ चल पड़ीं और चारों ओर दुर्मति छाने लगी ॥१३४॥
॥ कुण्डलिया छंद ॥ नये-नये मार्ग चल निकले और जगत में अधर्म बढ़ गया ।
राजा-प्रजा जहाँ-तहाँ सभी कुकर्म करने लगे और राजा-प्रजा नर-नारियों के
इस प्रकार के आचरण से धर्म नष्ट हो गया और पाप की क्रियाओं का विस्तार
होने लगा ॥ १३५ ॥ जगत से धर्म का लोप हो गया और पाप साक्षात्
विचरण करने लगा । राजा-प्रजा, ऊँच-नीच सबने अधर्म की क्रियाओं को
अपना लिया । पाप प्रचुर मात्रा में बढ़ गया और धर्म लुप्त हो गया ॥ १३६ ॥
धरती पाप से दुःखी हो डगमगाने लगी और अकालपुरुष का ध्यान कर रोने
लगी । पाप के बोझ से दबी धरती परमात्मा के पास विभिन्न प्रकार से
प्रलाप करने लगी ॥ १३७ ॥ ॥ सोरठा छंद ॥ अकालपुरुष ने धरती को
समझा-बुझाकर विदा किया और धरती के बोझ को समाप्त करने के लिए
विचार किया ॥१३८॥ ॥ कुण्डलिया छंद ॥ दीन-दुखियों की रक्षा के निमित्त
वे स्वयं कुछ उपाय करेंगे और वे परमपुरुष स्वयं प्रकट होंगे । दीनों की
रक्षा के लिए और धरती का बोझ उतारने के लिए वे स्वयं अवतरित
होंगे ॥ १३९ ॥ कलियुग के अन्त में और सतयुग के प्रारम्भ होते ही दीनों

रूप अनाद कलहि कबतक कह भारी। शत्रन के नासार्थ नमित अवतार अवतारी ॥ १४० ॥ ॥ स्वैया छंद ॥ पाप संबूह बिनासन कउ कलिकी अवतार कहावह गे। तुरकच्छि तुरंग सपच्छ बडो करि काढ क्रिपान खपावह गे। निकसे जिम केहरि परबत ते तस सोभ दिवालय पावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥ १४१ ॥ रूप अनूप सरूप महा लख देव अदेव लजावह गे। अरि मार सुधारकै टार घणे बहुरौ कलि धरम चलावह गे। सभ साध उबार लहै कर दै दुख आँच न लागन पावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥ १४२ ॥ दानव मार अपार बडे रणि जीत निशान बजावह गे। खल टार हज़ार करोर किते कलकी कलि क्रिति बढावह गे। प्रगटे जित ही तित धरम दिशा लख पापन पुंज परावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥ १४३ ॥ छीन महा दिज दीन दशा लख दीन दिआल रिसावह गे। खग काढ अभंग निशंग हठी रण रंग तुरंग नचावह गे। रिप जीत अजीत अभीत बडे अवनी पै सभै

की रक्षा के लिए आप स्वयं अवतरित हो कलियुग में लीलाएँ करेंगे और इस प्रकार अवतारी पुरुष शत्रुओं का नाश करने के लिए आयेंगे ॥ १४० ॥ ॥ सवैया छंद ॥ पापों का नाश करने के लिए वे कल्कि-अवतार कहलायेंगे और घोड़े पर सवार हो तलवार धारण कर सबका नाश करेंगे। वे ऐसे शोभा से युक्त होंगे मानो पर्वत से शेर उतर आया हो। संभल (नगर) के बड़े भाग होंगे क्योंकि वहीं श्रीहरि प्रकट होंगे ॥ १४१ ॥ उनके अनुपम स्वरूप को देख देव-अदेव सभी लज्जित होंगे। वे शत्रुओं को मारकर सुधार कर कलियुग में पुनः धर्म चलायेंगे। सभी साधुओं का उद्धार होगा और किसी को भी दुःख की आँच तक नहीं लगेगी। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीहरि प्रकट होंगे ॥ १४२ ॥ बड़े-बड़े दैत्यों को मार कर वे जीत का डंका बजायेंगे और हज़ारों-करोड़ों दुर्जनों को मारकर वे कल्कि-अवतार के रूप में अपनी कीर्ति फैलायेंगे। वे जहाँ प्रकट होंगे वहीं धर्म की दशा प्रारम्भ हो जायेगी और पापों के पुंज भाग खड़े होंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीहरि प्रकट हुए ॥ १४३ ॥ गुणवान विप्रों की दीन-हीन दशा को देख भगवान क्रोधित होंगे और खड्ग निकालकर वे हठी के रूप में युद्धभूमि में अपने घोड़े को नचायेंगे। बड़े-बड़े शत्रुओं को जीत लेंगे और धरती पर सभी उनके बल का गुणानुवाद करेंगे। संभल नगर के बडे भाग्य हैं जहाँ श्रीहरि

जसु गावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥ १४४ ॥ शेश सुरेश महेश गनेश निशेश भले जसु गावह गे। गण भूत परेत पिसाच परी जय सद्द ननद्द सुनावह गे। नर नारद तुंबर किंनर जच्छ सु बीन प्रवीन बजावह गे। भल भाग भया इह संभल (मू०पं०५८१) के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥ १४५ ॥ ताल म्रिदंग मुचंग उपंग सुरंग से नाद सुनावह गे। डफ बार तरंग रबाब सुरी रण संख असंख बजावह गे। रण दुंधभ ढोलन घोर घनी सुन शत्र सभै मुरछावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरिमंदर आवह गे ॥ १४६ ॥ तीर तुफंग कमान सुरंग दुरंग निखंग सुहावह गे। बरछी अरु बैरख बान धुजा पट बात लगे फहरावह गे। गण जच्छ भुजंग सु किंनर सिद्ध प्रसिद्ध सभै जसु गावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ॥१४७॥ कउच क्रिपान कटारी कमान सु रंग निखंग छकावह गे। बरछी अरु ढाल गदा परसो कर सूल त्रिसूल भ्रमावह गे। अति क्रुद्धत ह्वै रण सूरधन भो सर ओघ प्रओघ चलावह गे। भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरिमंदर आवह गे ॥ १४८ ॥ तेज प्रचंड अखंड महाँ छब दुज्जन देख परावह गे। जिम पउन प्रचंड बहै

प्रकट होंगे ॥ १४४ ॥ शेषनाग, इन्द्र, शिव, गणेश, चन्द्र सभी उसका यश गायेंगे। गण, भूत, प्रेत, पिशाच और परियाँ उसको जय-जयकार करेंगे। नर, नारद, किन्नर, यक्ष आदि अपनी वीणा लेकर उसके स्वागत में बजायेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं क्योंकि वहीं श्रीहरि प्रगट होंगे ॥ १४५ ॥ ताल-मृदंग आदि की ध्वनियाँ सुनाई देंगी। डफलियाँ, जलतरंग, रबाब, शंख आदि बज उठेंगे और ढोलों तथा दुंदुभियों की ध्वनि सुन शत्रु मूर्च्छित हो उठे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीहरि प्रकट होंगे ॥ १४६ ॥ धनुष-बाण, तरकस आदि से वे शोभायमान होंगे। बरछी, भाला एवं ध्वजाएँ फहरेंगी। गण, यक्ष, सर्प, किन्नर और सभी प्रसिद्ध सिद्धगण उसका गुणानुवाद करेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ भगवान प्रकट होंगे ॥ १४७ ॥ कवच, कृपाण, कटार, धनुष, तरकस आदि से सबको भरपूर माला में मारेंगे। बरछी, ढाल, गदा, फरसा, शूल, त्रिशूल आदि चलायेंगे और क्रोधित होकर युद्ध में बाण-वर्षा करेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ भगवान प्रकट होंगे ॥ १४८ ॥ उसकी प्रचंड छवि और तेज को

पतुआ सभ आपन ही उडि जावहगे । बदिहै जित ही तित धरम दशा कहूँ पाप न ढूंढत पावहगे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवहगे ॥ १४९ ॥ छूटत बान कमाननि के रण छाडि भटवा भहरावहगे । रणबीर बिताल कराल प्रभा रण मूरधन मद्धि सुहावहगे । गणि सिद्ध प्रसिद्ध समृद्ध सभै करि उचाइ कै कित सुनावहगे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरिमंदर आवहगे ॥ १५० ॥ रूप अनूप सरूप महाँ अंग देख अनंग लजावहगे । भव भूत भविक्ख भवान सदा सभ ठउर सभै ठहरावहगे । भव भार अपार निवारन को कलिकी अवतार कहावहगे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवहगे ॥ १५१ ॥ भूम को भार उतार बडे बड आस बडी छब पावहगे । खलटार जुझार बरिआर हठी घनघोखन जिउँ घहरावहगे । कल नारद भूत पिसाच परी जैपत्र धरत्र सुनावहगे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवहगे ॥१५२॥ झार क्रिपान जुझार बडे रण मद्ध महा छब पावहगे । धर लुत्थ पलुत्थ बिथार घणी घन की घट जिऊँ (मू०पं०५८२) घहरावतगे । चतुरानन रुद्र चराचर जे जय सद्द ननद्द सुनावहगे । भल

देखकर दुर्जन ऐसे भाग खड़े होंगे जैसे प्रचण्ड पवन बहने से पत्ते उड़ जायेंगे । वे जिधर जायँगे, उधर ही धर्म की वृद्धि होगी और पाप ढूंढ़ने पर नहीं दिखाई देगा । संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ भगवान प्रकट होंगे ॥ १४९ ॥ धनुष से बाण छूटते ही शूरवीर भरभरा कर गिर पड़ेंगे और युद्धस्थल में अनेकों रणवीर और भयंकर बैताल शोभायमान होंगे । प्रसिद्ध गण और सिद्ध पुरुष हाथ उठा-उठाकर उसका कीर्तिगान करेंगे । संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्री भगवान प्रकट होंगे ॥ १५० ॥ उसके सुन्दर स्वरूप और अंगों को देखकर कामदेव भी लज्जित होंगे और भूतकाल, वर्तमानकाल तथा भविष्य उसको देखकर अपने स्थान पर ठहर जायेंगे । धरती के बोझ का निवारण करने के लिए वे कलंकी अवतार कहलायेंगे । संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ॥ १५१ ॥ धरती का बोझ उतारकर वे शोभायमान होंगे । उस समय बड़े-बड़े शूरवीर और हठी बादलों की तरह गरजेंगे और नारद, भूत, पिशाच तथा परियाँ उसके विजयपत्र का गान करेंगी । संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ॥ १५२ ॥ बड़े-बड़े वीरों को कृपाण से मारकर वे युद्धस्थल में शोभायमान होंगे और लाशों पर लाशें गिराते हुए वे बादल की तरह घहरायेंगे । ब्रह्मा रुद्र तथा सभी

भाग भया इह संभल के हरिजू हरिमंदर आवह गे ।। १५३ ।। तार प्रमान उचान धुजा लख देल अदेव त्रसावह गे । कलगी गजगाह गदा बरछी गहि पाण क्रिपाण भ्रमावह गे । जग पाप संबूह बिनासन कउ कलकी कलि धरम चलावह गे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ।। १५४ ।। पान क्रिपान अजान भुजा रणि रूप महान दिखावह गे । प्रित मान सुजान अप्रमान प्रभा लख ब्योम बिवान लजावह गे । गणि भूत पिसाच परेत परी मिल जीतके गीत गवावह गे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ।। १५५ ।। बाजत डंक अतंक समै रण रंग तुरंग नचावह गे । कसि बान कमान गदा बरछी करि सूल तिसूल भ्रमावह गे । गण देव अदेव पिसाच परी रण देख सभै रहसावह गे । भल भाग भया इह संभल के हरिजू हरि मंदर आवह गे ।। १५६ ।। ।। कुलक छंद ।। सरसिज रूपं । सभ भट भूपं । अति छब सोभं । मुन गन लोभं ।। १५७ ।। कर अर धरमं । परहर करमं । धर धर वीरं । परहर धीरं ।। १५८ ।। जल थल पापं । परहर जापं । जह जह

चराचर उसका जयघोष सुनायेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ।। १५३ ।। आकाश के समान उनके ऊँचे ध्वज को देखकर सभी देव और अदेव भयभीत हो उठेंगे। वे कलँगी धारण कर गदा, बरछी, कृपाण हाथ में पकड़कर भ्रमण करेंगे और जगत में से पाप का नाश करने के लिए कलिधर्म चलायेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ।। १५४ ।। अजानबाहु भगवान हाथ में कृपाण पकड़कर रणभूमि में अपना महान रूप दिखलायेंगे और उनकी असाधारण प्रभा को देखकर आकाश में देवगण भी लज्जित होंगे। भूत, पिशाच, प्रेत, परियाँ, गण आदि मिलकर जीतगान गायेंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ।। १५५ ।। युद्ध के समय डंके बजेंगे और वे घोड़ों पर नचायेंगे। बाण-धनुष, गदा, बरछी, शूल, त्रिशूल आदि को लेकर वे चलेंगे और देव-दानव, पिशाच, परियाँ आदि उन्हें देखकर प्रसन्न होंगे। संभल नगर के बड़े भाग्य हैं कि वहाँ श्रीभगवान प्रकट होंगे ।।१५६।। ।। कुलक छंद ।। कमल के समान सुन्दर रूपवाले राजाओं के राजा अत्यन्त शोभा से युक्त और मुनिगणों के मन की इच्छा के स्वरूप तुम भगवान हो ।। १५७ ।। अच्छे कर्मों को त्यागकर सभी शत्रु-धर्म को अपनायेंगे और धैर्य को त्यागकर घर-घर में क्षय होंगे । १५८ । जहाँ-जहाँ तक दिखाई देगा जल और स्थल पर

देखा । तह तह पेखा ॥ १५९ ॥ घर घर पेखै । दर दर लेखै । कहूँ न अरचा । कहूँ न चरचा ॥ १६० ॥ ॥ मधुभार छंद ॥ सभ देस ढाल । जह तह कुचाल । जह तह अनरथ । नही होत अरथ ॥ १६१ ॥ सभ देस राज । नितप्रति कुकाज । नही होत न्याइ । जह तह अन्याइ ॥ १६२ ॥ छित भई सुद्र । क्रित करत छुद्र । तह बिप्र एक । जिह गुन अनेक ॥ १६३ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ नित जपत बिप्र देबी प्रचंड । जिह कीन धूम्रलोचन दुखंड । जिह कीन देव देविस सहाइ । जिह लीन रुद्र करि दै बचाइ ॥ १६४ ॥ जिह हते सुंभ नैसुंभ बीर । जिन जीत इंद्र कीने फकीर । तिन गही शरन जगमात जाइ । तिह किअस चंडका देव राइ ॥ १६५ ॥ तिह जपत रैण दिन दिज उदार । जिह हण्यो रोस रण (मू०ग्रं०५८१) बासवार । ग्रहि हुती तास इस्त्री कुवार । तह गयो नाह दिन इक निहार ॥१६६॥ ॥त्रियो बाच पति सो ॥ किह काज मूड़ सेवंत देव । किह हेत तास बुल्लत अभेव । किह कारण वाहि पगिअन परंत । किम जान बूझ दोजक

का नाम छोड़कर सर्वत्र पाप ही दृष्टिगोचर होगा ॥१५९॥ घर घर में देखने पर भी कहीं पर भी पूजा-अर्चना और वेद-चर्चा दिखाई-सुनाई नहीं पड़ेगी ॥१६०॥ ॥ मधुभार छंद ॥ सभी देशों में कुचक्र होते हुए दिखाई पड़ेंगे और यत्र-तत्र-सर्वत्र अर्थ का अनर्थ होगा ॥ १६१ ॥ पूरे देश में नित्य कुकर्म होने लगा और जहाँ-तहाँ न्याय के बदले अन्याय होने लगा ॥ १६२ ॥ सारी धरती शूद्र हो गयी और सभी नीच कार्य करने लगे । वहीं एक ब्राह्मण था जो अनेक गुणों से युक्त था ॥ १६३ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ एक ब्राह्मण नित्य उस देवी की पूजा करता था जिसने धूम्रलोचन नामक दैत्य के दो टुकड़े कर दिए थे, जिसने देवताओं की सहायता की थी और जिसने रुद्र को भी बचाया था ॥ १६४ ॥ उस देवी ने शुंभ-निशुंभ का नाश किया था और इन शुंभ-निशुंभ ने इन्द्र को भी जीतकर उसे निर्धन बना दिया था । इन्द्र ने जगतमाता की शरण ली थी और उसे इसी चण्डिका ने पुनः देवराज बना दिया था ॥ १६५ ॥ वह ब्राह्मण रात-दिन उसी की पूजा करता था जिसने क्रोध में आकर युद्धस्थल में पाताललोक के दैत्यों को भी मार डाला था । उस ब्राह्मण के घर में एक कुलटा स्त्री थी और उसने एक दिन अपने पति को पूजा-अर्चना करते हुए देखा १६६ ॥ स्त्री उवाच पति के प्रति हे मूर्ख ! तुम ये देवी की पूजा क्यों कर रहे हो और किसलिए ये रहस्यमय मंत्र बोल रहे हो ? क्यों इसके

गिरंत ॥ १६७ ॥ किह काज मूरख तिह जपत जाप । नही डरत तउन के थपत थाप । कैहो पुकार राजा समीप । दैहै निकार तुहि बाँध दीप ॥ १६८ ॥ नही लखा ताहि ब्रहमा कुनार । परमारथ आन लिन्नो वतार । सूद्रं समस्त नासार्थ हेत । कलकी वतार करबे सचेत ॥ १६९ ॥ हित जान तास हटक्यो कुनार । नही लोक त्रास बुल्लै भतार । तब कुड़ी नार चित रोस ठान । संभल नरेश तन कही आन ॥ १७० ॥ पूजंत देवे दीनो दिखाइ । तिह गहा कोप करि सूद्र राइ । गहि ताहि अधिक दीनी सजाइ । कै हनत तोह कै जप न माइ ॥१७१॥ ॥ राजा सूद्र बाच ॥ नही हनत तोह दिज कही आज । नही बोर बार मो पूज साज । कै तजहु सेव देवी प्रचंड । नही करत आज तोको दुखंड ॥ १७२ ॥ ॥ बिप्र बाच राजा सो ॥ कीजै दुखंड नही तजो सेव । सुन लेहु साचु तुह कहो देव । किउ न होहि टूक तन के हजार । नही तजो पाइ देवी उदार ॥ १७३ ॥ सुन

पैरों में गिर रहे हो और जान-बूझकर नरक में जाने का उपक्रम कर रहे हो ? ॥ १६७ ॥ हे मूर्ख ! किस कारण से इसका जाप कर रहे हो और जाप करते हुए तुम्हें भय प्रतीत नहीं होता । मैं राजा को तुम्हारी इस पूजा के बारे में बताऊँगी और वह तुम्हें बाँधकर इस देश से निकाल देगा ॥ १६८ ॥ उस कुलटा ने परमात्मा को नहीं जाना कि उस भगवान ने धर्म के लिए अवतार ले लिया । वह नहीं जानती कि शूद्र (बुद्धि वाले) लोगों का नाश करने के लिए और लोगों को सचेत करने के लिए कल्कि-अवतार हो गया है ॥ १६९ ॥ उसके भले को पहचानते हुए उसने स्त्री को डाँटा और लोकापवाद के भय से पति चुप रहा । इस पर वह स्त्री मन में क्रोधित हो उठी और संभल नगर के राजा के पास आकर उसने सारा वृत्तान्त कहा ॥ १७० ॥ देवी की पूजा करता हुआ उसने विप्र दिखा दिया और शूद्र राजा ने उसे क्रोधित होकर पकड़ लिया और उसे कठोर सजा देते हुए राजा ने कहा कि मैं तुझे मार डालूंगा अथवा तुम देवी की पूजा मत करो ॥१७१॥ ॥ राजा शूद्र उवाच ॥ अरे विप्र ! ये पूजा की सामग्री जल में फेंक दो नहीं तो मैं तुम्हें आज मार डालूँगा । देवी की पूजा छोड़ दो नहीं तो मैं तुम्हारे दो टुकड़े कर दूंगा ॥ १७२ ॥ ॥ विप्र उवाच राजा के प्रति ॥ हे राजा ! मैं तुम्हें सत्य कह रहा हूँ कि तुम बेशक मेरे दो टुकड़े कर दो पर मैं देवीपूजा नहीं छोड़ सकता । बेशक मेरे हज़ार टुकड़े कर दो मैं देवी के चरण नहीं छोडूंगा १७३ यह बात सुनकर

भयो बैण शूदर सु क्रुद्ध । जणु जुट्यो आणि मकराछ जुद्ध । दोऊ ब्रिग सक्रुध स्रोनत चुचान । जन काल ताहि दोनो निशान ॥ १७४ ॥ अति गरब मूड़ भ्रित्तन बुलाइ । उच्चरे बैण इह हणो जाइ । लै गए तास द्रोही तुरंत । जह संभ्र सुभ्र देवल सुभंत ॥ १७५ ॥ तिह बाध आंख मुसकै चड़ाइ । कर लीन काढ असि को नचाइ । जब लगे देन तिह तेग तान । तब कियो काल को बिप्र ध्यान ॥ १७६ ॥ जब कियो चित मो बिप्र ध्यान । तिह दीन दरस तब काल आन । नही करो चित चित मांझि एक । तव हेत शत्र हनि है अनेक ॥ १७७ ॥ तब परी शूंक भोरह मझार । उपजिओ आन कलकीवतार । ताड़ प्रमानु करिअस उतंग । तर कच्छ सु कच्छ ताजी सुरंग ॥ १७८ ॥ ॥ सिरखंडी छंद ॥ वज्जे नाद सुरंगी धक्का धोरिआ । नच्चे जाण फिरंगी वज्जे घुंघरू । गदा त्रिसूल निखंगी झूलन बैरखां । सावण जाण उमंगी (मू०ग्रं०५८४) घटा डरावणी ॥ १७९ ॥ बाणे अंग भुजंगी सावण सोहणे । बैसै हस्थ उतंगी खंडा धूरिआ । ताजी भउर पिलंगी छाला पाइआ । भंगी जाण भिड़ंगी नच्चे दाइरी ॥ १८० ॥ वज्जे नाद सुरंगी

शूद्र इस प्रकार क्रुद्ध होकर टूट पड़ा मानो मकराक्ष दैत्य शत्रु पर टूट पड़ा हो। काल के स्वरूप वाले राजा के दोनों नेत्रों से रक्त उमड़ने लगा ॥ १७४ ॥ उस मूर्ख ने नौकरों को बुलाकर कहा कि इस विप्र को मार डालो। वे दुष्ट उसे वहाँ ले गए जहाँ देवी का मंदिर था ॥ १७५ ॥ उसकी आँखों पर पट्टी बांध और उसके हाथ बांधकर उन्होंने चमचमाती तलवार निकाल ली। जब वे कृपाण से वार करने लगे तो उस विप्र ने काल का स्मरण किया ॥१७६॥ जब विप्र ने काल का ध्यान किया तो काल ने उसे दर्शन दिए और कहा कि तुम चित्त में चिंता मत करो, मैं तुम्हारे लिए अनेकों शत्रुओं को मार डालूंगा ॥ १७७ ॥ तब (मंदिर के) तहखाने से एक भीषण ध्वनि सुनाई दी और कल्कि-अवतार प्रकट हो गया। वह ताड़ के पेड़ के समान लंबा था। उसने वक्ष पर तरकस सजा रखा था और वह सुन्दर घोड़े पर सवार था ॥ १७८ ॥ ॥ सिरखंडी छंद ॥ घनघोर ध्वनि होने लगी और वीर घुंघरू बांधकर नाचने लगे। गदाएँ त्रिशूल, तरकस भाले झूलने लगे और सावन की काली घटाओं के समान भयानक लगे ॥ १७९ ॥ (कल्कि-अवतार के साथ सेना ने सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे थे और वह तीन सौ हाथ ऊँचे आकार

अणिआं जुट्टिआं। पैरै धार पवंगी फउजां चीरकै। उठै छैल छलंगी छालां पाइआँ। झाड़ झड़ाक झड़ंगी तेगां वज्जिआं ॥ १८१ ॥ ॥ समानका छंद ॥ जु देख देख कै सबै। सु भाज भाज गे तबै। कह्यो सु सोभ सोभही। बिलोक लोक लोभ ही ॥ १८२ ॥ प्रचंड रूप राजई। बिलोक भान लाजई। सु चंड तेज इउं लसैं। प्रचंड जोत को हसैं ॥१८३॥ सु कोप कोप कै हठी। चपे चिराइ जिउं भठी। प्रचंड मंडली लसैं। कि मारतंड को हसैं ॥ १८४ ॥ सु कोप ओप दै बली। कि राज मंडली चली। सु अस्त्र शस्त्र पान लै। बिसेख बीर मान कै ॥ १८५ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ भट शस्त्र अस्त्र नचाइ। चित कोप ओप बढाइ। तर कच्छ अच्छ तुरंग। रण रंग चार उतंग ॥ १८६ ॥ कर क्रोध पीसत दांत। कहि आप आपन बात। भट भरे हव हुइ वीर। कर कोप छाडत तीर ॥ १८७ ॥ कर कोप कलि अवतार। गहि पान अजान कुठार। तनकेक कीन प्रहार। भट जूझ ग्यो सै चार ॥ १८८ ॥ ॥ भड़थूआ छंद ॥ ढढंकंत ढोलं। बबंकंत बोलं। उछंकंत ताजी। गजंकंत गाजी ॥ १८९ ॥

और गोल-गोल घूमकर नृत्य करने लगे ॥ १८० ॥ नगाड़े बज उठे और सेनाएँ भिड़ गयीं। सेनाएँ चीरकर वीर बढ़ने लगे। शूरवीर छलांगें मारते हुए घूमने लगे और तलवारें झटककर चलने लगीं ॥ १८१ ॥ ॥ समानका छंद ॥ उसको देखकर सभी भाग खड़े हुए। उसकी शोभा को देखने का लोभ सबको लगा हुआ है ॥ १८२ ॥ उसके प्रचण्ड स्वरूप को देखकर सूर्य भी लज्जित हो रहा है और उसका प्रकाश प्रचण्ड ज्योति के लिए हँसी उड़ा रहा है ॥ १८३ ॥ हठी शूरवीर क्रोधित हो भट्ठी की तरह धधक रहे हैं। वीरों की प्रचण्ड मण्डली सूर्य की भी हँसी उड़ा रही है ॥ १८४ ॥ क्रोधित होकर राजा के सैनिक भी चले और उन वीरों ने विशेष प्रकार के अस्त्र-शस्त्र हाथों में पकड़े हुए थे ॥ १८५ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ युद्ध के रंग में रंगे हुए और घोड़ों पर सवार चित्त में क्रोधित वीर अस्त्र-शस्त्र नचा रहे हैं ॥ १८६ ॥ क्रोध से दाँत पीसते हुए अपने-आप बातें कर रहे हैं और अहम् में भरे वीर क्रोधित हो तीर चला रहे हैं ॥ १८७ ॥ कल्कि-अवतार ने क्रोधित हो अपनी लम्बी भुजाओं में एक फरसा पकड़ा और उसके द्वारा तनिक सा प्रहार किए जाने पर चार सौ वीर मरकर गिर पड़े ॥ १८८ ॥ ॥ भड़थुआ छंद ॥ ढोलक ढमकने लगे घोड़े उछलने लगे और वीर गरजने लगे १८९ बमकते हुए

छुटंकंत तीरं। बबंकंत बीरं। ढलंकंत ढालं। उठंकंत तालं॥ १९० ॥ खिमंकंत खग्गं। धधंकंत धग्गं। छुटंकंत नालं। उठंकंत ज्वालं॥ १९१ ॥ बहंतंत घायं। झलंकंत चायं। डिगंतंत बीरं। भिगंतंत भीरं॥१९२॥ टुटंतंत खोलं। ढमंकंत ढोलं। टुटंकंत तालं। नचंतंत बालं॥ १९३ ॥ गिरंतंत अंगं। कटंतंत जंगं। चलंतंत तीरं। भटंकंत भीरं॥ १९४ ॥ जुझंतंत वीरं। भजंतंत भीरं। करंतंत क्रोहं। भरंतंत रोहं॥१९५॥ तजंतंत तीरं। भजंतंत भीरं। बहंतंत घायं। झलंतंत जायं॥१९६॥ ततंकंत अंगं। जुटंकंत जंगं। उलंथंत लुत्थं। पलंथंत जुत्थं॥ १९७ ॥ ढलंकंत ढालं। पुअंतंत भालं। नचंतंत ईसं। कटंतंत (मू०ग्रं०५८५) सीसं॥ १९८ ॥ उछंकंत ताजी। बहंतंत गाजी। लुटंतंत लुत्थं। कटंतंत मुक्खं॥१९९॥ तपंतंत तेगं। चमंकंत बेगं। नचे मुंड माली। हसे तत्त काली॥ २०० ॥ जुटंतंत बीरं। छुटंतंत तीरं। बरंतंत बालं। ढलंतंत ढालं॥ २०१ ॥ सुमंतंत मद्दं। उठे सद्द गद्दं। कटंतंत अंगं। गिरंतंत जंगं॥ २०२ ॥ चलंतंत चायं। जुझंतंत जायं। रणंकंत

वीर तीर छोड़ने लगे, उनकी ढालें उठने लगीं और तालबद्ध ध्वनि सुनाई पड़ने लगी॥ १९० ॥ खड्ग चमकने लगे, धधकती हुई ज्वालाएँ छूटने लगीं और लपटें उठने लगीं॥ १९१ ॥ घाव बहने लगे और बहते हुए घावों से वीरों का उत्साह झलकने लगा। भीड़ में दौड़ते-भागते वीर गिरने लगे॥ १९२ ॥ शिरस्त्राण टूटने लगे, ढोल बजने लगे और लय-ताल पर अप्सराएँ नृत्य करने लगीं॥ १९३ ॥ युद्ध में अंग कटकर गिरने लगे और चल रहे बाणों के कारण वीर भटकने लगे॥ १९४ ॥ वीर जूझने लगे और कायर भागने लगे। योद्धागण क्रोध और द्वेष से भर उठे॥ १९५ ॥ बाणों के छूटते ही कायर भागने लगे और बहते हुए घावों से उत्साह झलकने लगा॥ १९६ ॥ युद्ध में जुटे वीरों के अंग और लाशें ऊपर-नीचे गिरने लगीं॥ १९७ ॥ ढालें चमकने लगीं और कटे हुए सिरों को देख शिव नृत्य करते हुए मुण्डमालाएँ पहनने लगे॥ १९८ ॥ घोड़े उछलने लगे और योद्धा लाशों और कटे हुए सिरों को देखकर आनन्दित होने लगे॥ १९९ ॥ गर्म रक्त से भीगीं तलवारें चमकने लगीं और शिव नृत्य करते हुए हँसने लगे॥ २०० ॥ वीर जुटकर तीर छोड़ने लगे और चमकती हुई ढालों को लेकर अप्सराओं का वरण करने लगे २०१। मदपूर्ण ध्वनि चारों ओर से उठ रही है और युद्ध में कटकर

नादं । बजंतंत बादं ॥ २०३ ॥ पुअंतंत पत्री । लगंतंत अत्री । बजंतंत अत्रं । जुझंतंत छत्रं ॥ २०४ ॥ गिरंतंत भूमी । उठंतंत झूमी । रटंतंत पानं । जुझंतंत ज्वानं ॥२०५॥ चलंतंत बाणं । रुकंतंत दिसाणं । गिरंतंत बीरं । भजंतंत भीरं ॥ २०६ ॥ नचंतंत ईसं । पुअंतंत सीसं । बजंतंत डउरू । भ्रमंतंत भउरू ॥ २०७ ॥ नचंतंत बालं । तुटंतंत तालं । मचंतंत वीरं । भजंतंत भीरं ॥२०८॥ लगंतंत बाणं । ढहंतंत जुआणं । कटंतंत अद्धं । भटंतंत बद्धं ॥२०९॥ खहंतंत खूनी । चड़े चउप दूनी । बहंतंत अत्रं । कटंतंत छत्रं ॥२१०॥ बहंतंत पत्री । जुझंतंत अत्री । हिणंकंत ताजी । कणंछंत गाजी ॥ २११ ॥ तुटंतंत चरमं । कटंतंत बरमं । गिरंतंत भूमी । उठंतंत घूमी ॥ २१२ ॥ रटंतंत पानं । कटंतंत जुआनं । उडंतंत एकं । गडंतंत नेकं ॥ २१३ ॥ ॥ अनूप निराज छंद ॥ अनूप रूप दिक्ख कै सु क्रुद्ध जोधणं बरं । सनद्ध बद्ध उद्दितं सु कोप ओप दे रणं । चहुंत जैत पत्रणं करंत घाव

आगे गिर रहे हैं ॥ २०२ ॥ वीर उत्साहपूर्वक एक-दूसरे से जूझ रहे हैं और युद्धस्थल में रण-वाद्य बज रहे हैं ॥ २०३ ॥ अस्त्रों-शस्त्रों के फल शरीर में घुस रहे हैं और क्षत्रिय अस्त्र-शस्त्र बजाते जूझ रहे हैं ॥ २०४ ॥ भूमि पर गिरते और पुनः झूमकर उठते हुए जूझ रहे वीर पानी-पानी पुकार रहे हैं ॥ २०५ ॥ बाणों के चलने से दिशाएँ लुप्त हो गयीं । वीर गिर रहे हैं और कायर भाग रहे हैं ॥ २०६ ॥ नाचते हुए शिव डमरू बजाते तथा भ्रमण करते हुए मुण्डमालाएँ धारण कर रहे हैं ॥ २०७ ॥ अप्सराएँ नाच रही हैं और वीरों के भीषण युद्ध तथा कायरों के भागने से उनके लय-ताल में अवरोध उत्पन्न हो रहा है ॥ २०८ ॥ बाण के लगते ही वीर गिर पड़ते हैं और वीरों के कबन्ध बीचों-बीच से कट रहे हैं ॥ २०९ ॥ खूनी वीर दुगुने उत्साह के साथ चढ़ रहे हैं और चलते हुए अस्त्रों से वीरों के छत्र कटकर गिर रहे हैं ॥ २१० ॥ चलाये हुए अस्त्रों के फल शरीर में लग रहे हैं, घोड़े हिनहिना रहे हैं और शूरवीर गरज रहे हैं ॥ २११ ॥ ढालें और कवच कट रहे हैं । वीर भूमि पर गिर रहे हैं और घूमकर उठ रहे हैं ॥ २१२ ॥ हाथ से हाथ भिड़े हैं, जवान (परस्पर) कट रहे हैं और एक के बाद अनेक बाण उड़ते हुए शरीर में गड़ रहे हैं ॥ २१३ ॥ ॥ अनूप निराज छंद ॥ अनुपम सौन्दर्य को देख योद्धागण क्रोधित हो रहे हैं और शस्त्र धारण कर युद्ध में पहुँच रहे हैं वीर दोनों ओर से घाव कर रहे हैं और विजय-पत्र

बुद्धरं । तुटंत अस्त्र शस्त्रणो लसंत उज्जलो फलं ॥ २१४ ॥ उठंत भउर भूरणो कढंत भैकरी सुरं । भजंत भीर भैकरं बजंत बीर सु प्रभं । तुटंत ताल तक्खियं नचंत ईस्त्रणो रणं । खहंत खित्रणो खगं निनद्दि गद्दि घुंघरं ॥२१५॥ भजंत आसुरी सुतं उठंत भै करी धुणं । चलंत तीछणो सरं सिलेण उज्जली कितं । नचंत रंग जोगणं चचक्कि चउदणो दिसं । कपंत कुंदनो गिरं त्रिसंत सरबतो दिसं ॥ २१६ ॥ नचंत बीर बावणं खहंत बाहणी धुजं । बरंत अच्छणो भटं प्रबीन चीन सु प्रभं । बकंत डउर डामरी अनंत तंत्रणो रिसं । हसंत जच्छ गंध्रबं पिसाच भूत प्रेतनं ॥२१७॥ भरंत चुंच चावडी भछंत (मू०ग्रं०५८६) फिक्रणो तनं । डकंत डाकणी डुलं भरंत पत्र स्रोणतं । पिपंतया सबं सुभं हसंत भारजनी भ्रिड़ं । अट्टट्ट हासणो हसं खिमंत उज्जलो असं ॥ २१८ ॥ ॥ अकवा छंद ॥ जुट्टे बीरं । छुट्टे तीरं । जुज्झे ताजी । डिग्गे गाजी ॥ २१९ ॥ बज्जे जुआणं । बाहे बाणं । रुज्झे जंगं । जुज्झे अंगं ॥ २२० ॥ तुट्टे तंगं । फुट्टे अंगं । सज्जे सूरं । घुम्मी हूरं ॥२२१॥ जुज्झे हाथी ।

की कामना कर रहे हैं। शस्त्रों के टूटने से उनकी उज्ज्वल नोकें शोभायमान हो रही हैं ॥ २१४ ॥ वीर गोलाई में घूमते हुए भयंकर चीत्कार कर रहे हैं और वीरों की छटा को देखकर कायर भाग रहे हैं। शिवजी ताण्डव नृत्य कर रहे हैं और विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ करते हुए खड्ग एक-दूसरे से टकरा रहे हैं ॥ २१५ ॥ दैत्यों के पुत्र भयभीत हो भाग रहे हैं और उन पर तीक्ष्ण बाणों से वार हो रहे हैं। योगिनियाँ चौदहों दिशाओं में नृत्य कर रही हैं और सभी दिशाएँ तथा सुमेरु पर्वत काँप रहे हैं ॥ २१६ ॥ शिव के सभी वीर नृत्य कर रहे हैं और अप्सराएँ पहचान-पहचानकर वीरों का वरण कर रही हैं। डायनें क्रोधित हो चीत्कार कर रही हैं और यक्ष, गन्धर्व, पिशाच भूत तथा प्रेत आदि अट्टहास कर रहे हैं ॥ २१७ ॥ चीलें गोलाई में उड़ती हुई मांस का भक्षण कर रही हैं और डाकिनियाँ अपने खप्परों में रक्त भर कर पी रही हैं। चुड़ैलें और भूतनियाँ रक्त पीते हुए हँस रही हैं और युद्धस्थल में तलवारों की चमक तथा निरन्तर अट्टहास सुनाई पड़ रहा है ॥ २१८ ॥ ॥ अकवा छंद ॥ वीर भिड़े, तीर चले, घोड़े मरे और शूरवीर गिर पड़े ॥२१९॥ जवान बाण चलाते हुए युद्ध में लीन होकर अंग-अंग से जूझ रहे हैं ॥ २२० ॥ तलवारें टूट रही हैं, अंग फूट रहे हैं, शूरवीर मृत्यु से विवाह करने के लिए सज रहे हैं और अप्सराएँ उनका वरण करने के लिए घूम रही हैं ॥ २२१ ।

हज्झे साथी । उब्भे उसटं । सुब्भे पुसटं ॥ २२२ ॥ फट्टे बीरं । छुट्टे तीरं । डिग्गे भूमं । उट्ठे घूमं ॥ २२३ ॥ बक्कै मारं । चक्कै चारं । सज्जै शस्त्रं । बज्जै अस्त्रं ॥२२४॥ ॥ चाचरी छंद ॥ जुझारे । अपारे । निहारे । बिचारे ॥२२५॥ हकारै । पचारै । बिचारै । प्रहारै ॥ २२६ ॥ सुताजी । सिराजी । सलाजी । बिराजी ॥२२७॥ उठावै । दिखावै । भ्रमावै । चखावै ॥ २२८ ॥ ॥ क्रिपान क्रित छंद ॥ जहा तीर छुटत । रण धीर जुटत । बरबीर उठत । तन त्राण फुटत ॥ २२९ ॥ रणबीर गिरत । भवसिंध तरत । नभ हूर फिरत । बर बीर बरत ॥ २३० ॥ रण नाद बजत । सुण भीर भजत । रण भूम तजत । मन माझ लजत ॥२३१॥ फिर फेर लरत । रण जुज्झ मरत । नहि पाव टरत । भव सिंध तरत ॥ २३२ ॥ रण रंग मचत । चतुरंग फटत । सरबंग लटत । मन मान घटत ॥ २३३ ॥ बर बीर भिरत । नही नैक फिरत । जब चित्त चिरत । उठ सैन घिरत ॥२३४॥

बलवान हाथी और ऊँट युद्ध में भिड़कर अपने साथियों के साथ भिड़ रहे हैं ॥ २२२ ॥ तीरों के चलने से वीर कटकर धरती पर गिर रहे हैं और पुन. उठ रहे हैं ॥ २२३ ॥ मारो-मारो चारों दिशाओं में चिल्ला रहे हैं और सुसज्जित होकर शस्त्र-अस्त्र बजा रहे हैं ॥ २२४ ॥ ॥ चाचरी छंद ॥ वहाँ कई अपार शक्ति से जूझनेवाले वीर असहाय अवस्था में दिखाई दे रहे हैं ॥ २२५ ॥ वीर ललकार रहे हैं और विचार करके प्रहार कर रहे है ॥ २२६ ॥ शिराज़ के वीर लज्जित होकर बैठ गए ॥ २२७ ॥ कल्कि-अवतार उन्हें उठाते हैं, दिखाते हैं और घुमाकर कृपाण की धार चखाते हैं ॥ २२८ ॥ ॥ कृपाणकृत छंद ॥ जहाँ तीर छूट रहे हैं, वीर भिड़ रहे हैं वहाँ वीर उठते हैं और उनके कवच टूट-टूटकर गिर रहे हैं ॥ २२९ ॥ वीर युद्ध में गिरकर भवसागर को पार कर रहे हैं और आकाश में घूम रही अप्सराएँ वीरों का वरण कर रही हैं ॥ २३० ॥ रण-वाद्य सुनकर कायर भाग रहे हैं और युद्धभूमि को त्यागते हुए वे मन में लज्जित हो रहे हैं ॥ २३१ ॥ वीर पुन: घूमकर लड़कर, जूझकर मर रहे हैं। युद्धस्थल से वे एक क़दम पीछे नहीं हटते और मरकर भवसागर को पार कर जाते हैं ॥ २३२ ॥ भीषण युद्ध में चतुरंगिनी सेना खण्ड-खण्ड हो गई और वीरों के अंगों के घावों से उनका मान-सम्मान कम हो गया ॥ २३३ ॥ बिना तनिक भी पीछे हटे वीर भिड़ रहे हैं और रोषपूरित होकर सेना को घेर ले रहे हैं २३४ ॥

गिर भूम परत। सुर नार बरत। नही पाव टरत। मन कोप भरत॥ २३५॥ कर कोप मडत। पग द्वै न भजत। कर रोस लरत। गिर भूम परत॥ २३६॥ रण नाद बजत। सुण मेघ लजत। सभ साज सजत। पग द्वै न भजत॥२३७॥ रण चक्र चलत। दुति मान दलत। गिर मेर हलत। भट स्रोण पलत॥ २३८॥ रण रंग मचत। बर बंब बजत। रण खंभ गडत। असवार मडत॥ २३९॥ किरपान किरत। कर कोप भिरत। नही फिरै फिरत। अति चित्त चिरत॥ २४०॥ ॥ चाचरी छंद॥ हकारै। प्रचारै। प्रहारै। क्रवारै॥ २४१॥ (मू०ग्रं०५८७) उठावै। दिखावै। भ्रमावै। चलावै॥ २४२॥ सुधावै। रिसावै। उठावै। चखावै॥ २४३॥ झुझारे। अपारे। हजारे। अरिआरे॥२४४॥ सुढूके। किकूके। भभूके। किझूके॥२४५॥ सुबाणं। सुधाणं। अचाणं। जुआणं॥ २४६॥ धमक्के। ह्मक्के। झड़क्के। छटक्के॥ २४७॥ सगाजै। ससाजै।

मरकर, भूमि पर गिर पड़ते हैं और देवताओं की स्त्रियाँ उनका वरण कर ले रही हैं। मन में क्रोधित वीर एक भी क़दम पीछे नहीं हटते॥ २३५॥ क्रोधपूर्ण होकर वीर दो क़दम भी नहीं भागते और गुस्से में लड़ते हुए भूमि पर गिर पड़ते हैं॥ २३६॥ रणवाद्यों की ध्वनि से मेघ लज्जित हो रहे हैं और सुसज्जित वीर तनिक भी पीछे नहीं हट रहे हैं॥ २३७॥ चलते हुए चक्र वीरों की कान्ति और गर्व को चूर कर रहे हैं। युद्ध की भीषणता से सुमेरु पर्वत भी हिल गया है तथा शूरवीरों का रक्तधारा प्रवाह बह रहा है॥ २३८॥ भयंकर विस्फोटों से भीषण युद्ध हो रहा है और घुड़सवार अपने विजय-स्तम्भ गाड़ रहे हैं॥ २३९॥ क्रोध से कृपाणें पकड़कर वीर भिड़ रहे हैं और मनोयोग से युद्ध करते हुए वे पीछे नहीं हट रहे हैं॥२४०॥ ॥ चाचरी छंद॥ वीर ललकार रहे हैं, पुकार रहे हैं और कृपाणों से प्रहार कर रहे हैं॥ २४१॥ वीर शस्त्र उठा रहे हैं, दिखा रहे हैं, घुमा रहे हैं और चला रहे हैं॥ २४२॥ क्रोधित होकर निशाना लगा रहे हैं और शस्त्र उठाकर उनकी धार शत्रु को चखा रहे हैं॥ २४३॥ वहाँ हज़ारों जूझनेवाले वीर हैं॥ २४४॥ चीखते-चिल्लाते वीर एकत्र हैं, भभक रहे हैं और कटकर झुक रहे हैं॥ २४५॥ जवान अचकचा कर बाणों से निशाना लगा रहे हैं॥२४६॥ सुनाई पड़ रही हैं और बाण छिटक रहे हैं॥ २४७॥ सुसज्जित

न भाजै । बिराजै ॥२४८॥ निखंगी । खतंगी । सुरंगी । भिड़ंगी ॥ २४९ ॥ तमक्कै । पलक्कै । हसक्कै । प्रधक्कै ॥२५०॥ सुबीरं । सुधीरं । प्रहीरं । ततीरं ॥२५१॥ पलट्टैं । बिलट्टैं । नछुट्टैं । उपट्टैं ॥ २५२ ॥ बबक्कै । नथक्कैं । धसक्कैं । झझक्कैं ॥२५३॥ सखग्गं । अखग्गं । अजग्गं । अभग्गं ॥२५४॥ झमक्कैं । खिमक्कैं । बबक्कैं । उथक्कैं ॥२५५॥

॥ भगउती छंद ॥ कि जुट्टैंत बीरं । कि छुट्टैंत तीरं । कि फुट्टैंत अंगं । कि जुट्टैंत जंगं ॥ २५६ ॥ कि मच्चैत सूरं । कि घुम्मैत हूरं । कि बज्जैत खग्गं । कि उट्ठैत अग्गं ॥२५७॥ कि फुट्टेत अंगं । कि रुज्झेत जंगं । कि नच्चेत ताजी । कि गज्जेत गाजी ॥ २५८ ॥ कि घल्लेत घायं । कि झल्लेत चायं । कि डिग्गेत घुम्मी । कि झम्मेत झुम्मी ॥ २५९ ॥ कि छड्डेत हूहं । कि सुभ्भेत ब्यूहं । कि डिग्गेत चेतं । कि नच्चेत प्रेतं ॥ २६० ॥ कि बुट्ठेत बाणं । कि झुज्झेत जुआणं । कि मसेत नूरं । कि तक्केत हूरं ॥ २६१ ॥ कि जुज्झेत हाथी । कि सिज्झेत साथी । कि भग्गेत बीरं । कि लग्गेत तीरं ॥ २६२ ॥ कि रज्जेत रोसं । कि तज्जेत होसं । कि

वीर गरज रहे हैं और भाग नहीं रहे हैं ॥ २४८ ॥ धनुष-बाण तरकस लेकर सुन्दर वीर भिड़ रहे हैं ॥ २४९ ॥ पलक झपकते ही वीर तमतमा रहे हैं और हँसते हुए एक-दूसरे को धक्के दे रहे हैं ॥ २५० ॥ सुन्दर वीर धैर्यपूर्वक तीर छोड़ रहे हैं ॥ २५१ ॥ वीर पलटकर भिड़ रहे हैं और गुत्थमगुत्था हो रहे हैं ॥ २५२ ॥ थके बिना वीर ललकार रहे हैं और आगे धँसते चले जा रहे हैं ॥ २५३ ॥ काटे न जा सकनेवाले वीर मार डाले जा रहे हैं ॥ २५४ ॥ वार करते हुए वीर झुककर ललकार कर पुनः उठ रहे हैं ॥ २५५ ॥ ॥ भगउती छंद ॥ तीर छूट रहे हैं, वीर भिड़ रहे हैं, अंग फूट रहे हैं और जंग चल रहा है ॥ २५६ ॥ शूरवीर भड़क रहे हैं, अप्सराएँ घूम रही हैं और बजती हुई तलवारों से आग निकल रही है ॥ २५७ ॥ अंग फूट रहे हैं, सभी युद्ध में लीन हैं, घोड़े नाच रहे हैं और वीर गरज रहे हैं ॥ २५८ ॥ प्रहारों को प्रसन्नतापूर्वक सहन किया जा रहा है। वीर झूमकर और धमधमाकर गिर रहे हैं ॥ २५९ ॥ व्यूहों का भेदन कर वीरों ने हाहाकार मचा दी है। अचेत होकर वीर गिर रहे हैं और प्रेत नृत्य कर रहे हैं ॥ २६० ॥ बाण पकड़ कर वीर जूझ रहे हैं। सबके चेहरे पर सौंदर्य झलक रहा है और अप्सराएँ भी वीरों को देख रही हैं। २६१ । अपने साथी शत्रुओं को मारकर वीर हाथियों

खुल्लेत केसं । कि डुल्लेत भेसं ॥ २६३ ॥ कि जुज्झेत हाथी । कि लुज्झेत साथी । कि छुट्टेत ताजी । कि गज्जेत गाजी ॥ २६४ ॥ कि घुम्मीत हूरं । कि भुंमीत पूरं । कि जुज्झेत बीरं । कि लग्गेत तीरं ॥ २६५ ॥ कि चल्लेत बाणं । कि रुक्की दिसाणं । कि झमकंत तेगं । कि नभ्भ जान बेगं ॥ २६६ ॥ कि छुट्टेत गोरं । कि बुट्ठेत ओरं । कि गज्जेत गाजी । कि पल्लेत ताजी ॥ २६७ ॥ कि कट्टेत अंगं । कि डिग्गेत जंगं । कि मत्तेत माणं । कि लुज्झेत जुआणं ॥ २६८ ॥ कि बक्केत मारं । कि चक्केत चारं । कि ढुक्केत ढीठो । कि देवे न पीठो ॥ २६९ ॥ (मू०ग्रं०१८८) कि घल्लंत सांगं । कि बक्कंत बांगं । कि मुच्छंत बंकी । कि हट्ठेत हंकी ॥ २७० ॥ कि बज्जेत ढोलं । कि बक्केत बोलं । कि बज्जे नगारे । कि जुट्टे हठिआरे ॥ २७१ ॥ उछक्केत ताजी । हमक्केत गाजी । छुटक्केत तीरं । भटक्केत भीरं ॥ २७२ ॥ ॥ भवानी छंद ॥ जहां बीर जुट्टें । सभै ठाट ठट्टें । कि नेजे पलट्टें । चमतकार छुट्टें ॥ २७३ ॥

से जूझ रहे हैं। बाण लगते ही वीर भाग (भी) रहे हैं ॥ २६२ ॥ क्रोधित और अचेत होकर वीर पड़े हैं; उनके केश खुल गए हैं और वेश भी बिगड़ गया है ॥ २६३ ॥ हाथियों से जूझते हुए वीर नष्ट हो गए हैं; घोड़े खुले आम घूम रहे हैं और वीर गरज रहे हैं ॥ २६४ ॥ पूरी पृथ्वी पर अप्सराएँ घूम रही हैं। वीर बाण लगते ही जूझ रहे हैं ॥ २६५ ॥ बाणों से दिशाएँ छिप गई हैं और आकाश में उठकर तलवारें चमक रही हैं ॥ २६६ ॥ भूत क़ब्रों से उठकर युद्धस्थल की ओर आ रहे हैं। वीर गरज रहे हैं और घोड़े भाग रहे हैं ॥ २६७ ॥ अंग कटे वीर युद्ध में गिर रहे हैं और मदमस्त वीर मारे जा रहे हैं ॥ २६८ ॥ चारों दिशाओं में मार-मार की चिल्लाहट सुनाई पड़ रही है। वीर पास आ रहे हैं और पीठ नहीं दिखा रहे हैं ॥ २६९ ॥ चिल्लाते हुए वे भाले से वार कर रहे हैं। उन अहंकारियों की मूँछें भी बाँकी हैं ॥ २७० ॥ ढोल बज रहे हैं, वीर चिल्ला रहे हैं, नगाड़े बज रहे हैं और हठी वीर आपस में जूझ रहे हैं ॥ २७१ ॥ वीर गरज रहे हैं, घोड़े उछल रहे हैं, तीर छूट रहे हैं और वीर भीड़ में भटक रहे हैं ॥ २७२ ॥ ॥ भवानी छंद ॥ वीरों के युद्धस्थल पर सभी प्रकार की तामझाम है। भालों के पलटते ही मानो हो जाता है (और वीर मारे जाते हैं)। २७३ जहाँ

जहाँ सार बज्जै । तहाँ बीर गज्जै । मिलै संज सज्जै । न द्वै पैग भज्जै ॥२७४॥ कहूँ भूर भाजै । कहूँ बीर गाजै । कहूँ जोध जुट्टै । कहूँ तोप टुट्टै ॥ २७५ ॥ जहाँ जोध जुट्टे । तहाँ अस्त्र छुट्टै । निभै शस्त्र कट्टै । कहूँ बीर लुट्टे ॥२७६॥ कहूँ मार बक्कै । किते बाज उथक्कै । किते सैण हक्कै । किते दाव तक्कै ॥२७७॥ किते घाइ मेलै । किते सैण पेलै । किते भूम डिग्गे । तनं स्रोण भिग्गे ॥ २७८ ॥ ॥दोहरा॥ इह बिध मचा प्रचंड रण अरध महूरत उदंड । बीस अयुत दस सत सुभट जुज्झत भए अडंड ॥ २७९ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ सुण्यो संभ रेसं । भयो अप्प भेसं । उडी बंब रैणं । छुही सीस गैणं ॥ २८० ॥ छके टोप सीसं । घणं भान ईसं । ससं नाह देही । कथौ उकत केही ॥ २८१ ॥ मनो सिद्ध सुद्धं । सुभी ज्वाल उद्धं । कसे शस्त्र लोणं । गुरू जाण द्रोणं ॥२८२॥ महा ढीठ ढूके । मुखं मार कूके । करै शस्त्र पातं । उठै

लोहा बज रहा है वहीं वीर गरज रहे हैं। कवचों से कवच भिड़ रहे हैं परन्तु वीर दो क़दम भी पीछे नहीं हट रहे हैं ॥ २७४ ॥ कहीं घोड़े दौड़ रहे हैं, कहीं वीर गरज रहे हैं। कहीं योद्धा भिड़े हुए हैं और कहीं वीर शिरस्त्राण टूट कर गिर रहे हैं ॥ २७५ ॥ जहाँ योद्धा एकत्र हैं वहीं वीर अस्त्र चला रहे हैं। वे अभय होकर शस्त्रों से काट रहे हैं और वीरों को मार रहे हैं ॥ २७६ ॥ कहीं मार-मार की चिल्लाहट है और कहीं घोड़े बिदक रहे हैं। कहीं अवसर देखकर सेना को हटाया जा रहा है ॥ २७७ ॥ कहीं घाव किए जा रहे हैं और कहीं सेना को धकेला जा रहा है। कहीं पर रक्त से भीगे शरीर धरती पर गिर रहे हैं ॥ २७८ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार आधे मुहूर्त तक प्रचंड युद्ध हुआ और दो लाख एक हज़ार वीर उस युद्ध में खेत रहे ॥२७९॥ ॥ रसावल छंद ॥ संभल नरेश ने जब यह सुना तो वह क्रोध से बौखला कर वह बादल के समान काले रंग का हो गया। रात्रि में उसने अपनी माया से अपना इतना ऊँचा आकार बना लिया कि उसका सिर आकाश को छूने लगा (लगता है कवि यहाँ भविष्य में होनेवाले प्रलयंकारी वायु-सेना-युद्ध का संकेत दे रहा है) ॥ २८० ॥ सिर पर टोप पहने वीर बादलों में सूर्यों के समान दिखाई दे रहे हैं। चन्द्रपति शिव के समान उनका सुदृढ़ शरीर है और उसका वर्णन नहीं किया जा सकता ॥ २८१ ॥ ऐसा लग रहा था मानो ज्वालाएँ उठ रही हों और राजा ने गुरु द्रोणाचार्य की तरह से शस्त्र धारण कर रखे हों ॥२८२॥ वीर मार-मार की पुकार करते हुए निकट आ रहे थे और उनके अस्त्र-शस्त्रों

अस्त्र घातं ॥ २८३ ॥ खगं खग्ग बज्जं । नदं मच्छ लज्जं । उठै छिच्छ इच्छं । बहै बाण तिच्छं ॥ २८४ ॥ गिरे बीर धीरं । धरे बीर चीरं । मुखं मुच्छ बंकी । मचे बीर हंकी ॥ २८५ ॥ छुटै बाण धारं । धरे खग्ग सारं । गिरे अंग भंगं । चले जाइ जंगं ॥ २८६ ॥ नचे मास हारं । हसै ब्योम चारं । पुऐ ईस सीसं । छली बारणीसं ॥ २८७ ॥ सुटै शस्त्र धारं । करै अस्त्र झारं । गिरे रत्त खेतं । कटे बीर चेतं ॥ २८८ ॥ उठै क्रुद्ध धारं । मचे शस्त्र झारं । खहै खग्ग खूनी । चड़ै चउप दूनी ॥ २८९ ॥ पिपंस्रोण देवी । हसै अंस भेवी । अटा अट्ट हासं । सु जोतं प्रकासं ॥ २९० ॥ ढुके ढीठ ढालं । नचे मुंडमालं । करै शस्त्र पातं । उठै अस्त्र घातं ॥ २९१ ॥ (मू०ग्रं०५८१) रुपे बीर धीरं । तजै ताण तीरं । भ्रमै बिज्जु बेगं । लसै एम तेगं ॥ २९२ ॥ खहे खग्ग खूनी । चड़े चौप दूनी । करै चित्त चारं । बकै मार मारं ॥ २९३ ॥ अपो आप दाबैं । रणं बीर फाबैं । घणं घाइ पेलैं । महा

के प्रहार से घाव हो रहे थे ॥ २८३ ॥ खड्ग पर खड्ग बजने से जल की मछलियाँ भी व्याकुल हो रही थीं और चारों तरफ़ धुआँधार तीव्र बाणों की वर्षा हो रही है ॥ २८४ ॥ सुन्दर वस्त्र पहने वीर गिर रहे हैं और चारो ओर बाँकी मूँछों वाले वीरों ने हाहाकार मचा रखे हैं ॥ २८५ ॥ तेज धार वाले बाण और कृपाणें चल रही हैं और वीर अंग-भंग होकर भी चले जा रहे हैं ॥ २८६ ॥ मांसाहारी जीव नृत्य कर रहे हैं और आकाश में चील्ह-कौवे भी प्रसन्न हो रहे हैं। शिव के गले के लिए मुण्डमालाएँ पिरोई जा रही हैं और ऐसा लग रहा है मानो सभी मद पीकर मस्त हैं ॥ २८७ ॥ शस्त्र की धार और अस्त्रों की मार से वीर कटकर रक्त गिराते हुए अचेत हो गिर रहे हैं ॥ २८८ ॥ क्रोध की- धारा में बहते वीर भीषण रूप से शस्त्र चला रहे हैं और खूनी खड्गों के टकराने से उनमें दुगुने उत्साह का संचार हो रहा है ॥२८९॥ रक्त की प्यासी देवी हँस रही है और ज्योति के समान प्रकाशित उसका अट्टहास चारों ओर व्याप्त हो रहा है ॥ २९० ॥ दृढ़ वीर ढालों को लेकर भिड़ गए हैं और मुण्डमाल शिव नृत्य कर रहे हैं। शस्त्रों और अस्त्रों के वार चल रहे हैं ॥ २९१ ॥ धैर्यवान वीर तान-तानकर तीर चला रहे हैं और तलवारें बिजली के समान झमझमाकर चल रही हैं ॥ २९२ ॥ खूनी खड्ग भिड़ रहे हैं और दुगुने उत्साह से वीर बढ़ रहे हैं। वे सुन्दर वीर मार-मार चिल्ला रहे हैं २९३। एक-दूसरे को दबाते हुए वीर युद्ध में

बीर झेलैं ॥ २९४ ॥ मडे बीर सुद्धं । करै मल्ल जुद्धं । अपो आप बाहैं । उभै जीत चाहैं ॥ २९५ ॥ रणं रंग रत्ते । चड़े तेज तत्ते । खुले खग्ग खूनी । चड़ै चउप दूनी ॥ २९६ ॥ नभं हूर पूरं । भए बीर चूरं । बजे तूर ताली । नचे मुंडमाली ॥ २९७ ॥ रणं हूह उट्ठै । सरं धार बुट्ठै । गजै बीर गाजी । तुरे तुंद ताजी ॥ २९८ ॥ ॥ चौपई ॥ भयो घोर आहव बिकरारा । नाचे भूत प्रेत बैतारा । बैरक बाण गगन ग्यो छाई । जानुक रैन दिनहि हुइ आई ॥ २९९ ॥ कहूँ पिसाच प्रेत नाचै रण । जूझ जूझ कहूँ गिरे सुभट गण । भइरव करत कहूँ भभकारा । उडत काक कंकै बिकरारा ॥ ३०० ॥ बाजत ढोल म्रिदंग नगारा । ताल उपंग बेण बंकारा । मुरली नाद नफीरी बाजे । भीर भयानक हुइ तज भाजे ॥ ३०१ ॥ महाँ सुभट जूझे तिह ठामा । खरभर परी इंद्र के धामा । बैरक बाण गगन ग्यो छाई । उठे घटा सावण जन आई ॥ ३०२ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ बहु भाँत कोपस बीर । धनु तान त्यागत तीर ।

हो रहे हैं और महावीर आपस में घाव झेल रहे हैं ॥ २९४ ॥ वीर आपस में मल्लयुद्ध कर रहे हैं और शस्त्र चलाते हुए अपनी-अपनी जीत की इच्छा कर रहे हैं ॥ २९५ ॥ शूरवीर युद्ध के रंग में मस्त हैं और दुगुने उत्साह से खूनी खड्ग चला रहे हैं ॥ २९६ ॥ आकाश में अप्सराएँ विचरण कर रही हैं और शूरवीर चूर होकर गिर रहे हैं। तालियों की आवाज़ सुनाई दे रही है और शिव नृत्य कर रहे हैं ॥ २९७ ॥ युद्ध में हाहाकार की ध्वनि उठ रही है और साथ ही साथ बाण-वर्षा हो रही है। वीर गरज रहे हैं और घोड़े इधर से उधर दौड़ रहे हैं ॥ २९८ ॥ ॥ चौपाई ॥ इस प्रकार विकराल युद्ध हुआ और भूत, प्रेत तथा बैताल नाचने लगे। भाले और बाण आकाश में छा गए और ऐसा लगने लगा कि मानो दिन में ही रात हो गई हो ॥ २९९ ॥ कहीं पिशाच और प्रेत रण में नाच रहे हैं और कहीं लड़-लड़कर वीर युद्धस्थल में गिरे हुए हैं। कहीं भैरव हुंकार कर रहे हैं और कहीं भयंकर कौवे उड़ रहे हैं ॥ ३०० ॥ ढोल, मृदंग, नगाड़े, बाँसुरी आदि वाद्य बज रहे है। मुरली और नफीरी नामक बाजे बज रहे हैं तथा वीर भययुक्त हो भाग रहे हैं ॥ ३०१ ॥ उस स्थल पर महान योद्धा जूझ गए और इन्द्रलोक में भी खलबली मच गई। भाले और बाण इस प्रकार आसमान में छा गए मानो सावन की घटा उमड़ आई ॥ ३०२ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ वीर अनेकों प्रकार से क्रोधित होकर धनुष बाण चला रहे हैं ये बाण जिसके भी अंग

सर अंग जास लगंत । भट सुरग बास करंत ॥ ३०३ ॥ कहूँ अंग भंग उतंग । कहूँ तीर तेग सुरंग । कहूँ चउर चीर सुबाह । कहूँ सुद्ध सेल सनाह ॥ ३०४ ॥ रण अंग रंगत ऐस । जनु फूल किसक जैस । इक ऐस जूझ मरंत । जनु खेल फाग बसंत ॥ ३०५ ॥ इक धाइ आइ परंत । पग द्वै न भाग चलंत । तज त्रास करत प्रहार । जन खेल फाग धमार ॥३०६॥ ॥ तारक छंद ॥ कलकी अवतार रिसावह गे । भट ओघ प्रओघ गिरावह गे । बहु भाँतन शस्त्र प्रहारह गे । अरि ओघ प्रओघ सँघारह गे ॥ ३०७ ॥ सर सेल सनाहरि छूटह गे । रण रंग सुरासुर जूटह गे । सर सेल सनाहरि झारह गे । मुख मार पचार प्रहारह गे ॥ ३०८ ॥ जम डड्ढ क्रिपाण निकारह गे । करि कोप सुरासुर झारह गे । रण (मू०ग्रं०५६०) लुत्थ पै लुत्थ गिरावह गे । लख प्रेत परी रहसावह गे ॥ ३०६ ॥ गण गूड़ अगूड़णि गज्जह गे । लख भीर भया हव भज्जह गे । सर बिंद प्रबिंद प्रहारह गे । रण रंग अभीत बिहारह गे ॥ ३१० ॥ खग उद्ध अधो अद्ध बज्जह गे । लख जोध महाँ जुध गज्जह गे । अणिणेश

में लगते हैं वह वीर स्वर्गवास कर जाता है ॥३०३॥ कहीं कटे हुए अंगों के ढेर और कहीं तीर-तलवारें पड़ी हैं । कहीं वस्त्र, कहीं भाले और कहीं लौह-कवच पड़े दिखाई पड़ रहे हैं ॥ ३०४ ॥ वीर किंसुक फूल की तरह युद्ध के रंग में रँगे हुए हैं । कई इस प्रकार जूझकर मर रहे हैं मानो वसन्त ऋतु में होली खेल रहे हों ॥ ३०५ ॥ कोई दौड़कर चला आ रहा है और दो क़दम भी पीछे नहीं हटता है । वीर इस प्रकार अभय हो प्रहार कर रहे हैं मानो वे फाग खेल रहे हों ॥ ३०६ ॥ ॥ तारक छंद ॥ अब कल्कि-अवतार क्रोधित होंगे और वीरों के झुण्ड को मारकर गिरा देंगे । विभिन्न प्रकार के शस्त्रों से वे प्रहार करेंगे और शत्रुओं के झुण्डों का संहार करेंगे ॥ ३०७ ॥ कवचों को भेदनेवाले तीर छूटेंगे और इस युद्ध में सुर-असुर सभी जुट जायेंगे । भालों और बाणों की वर्षा होगी और मुख से मार-मार कहते हुए वे प्रहार करेंगे ॥ ३०८ ॥ यमदाढ़ नामक अपनी कृपाण निकालेंगे और क्रोधित हो सुर-असुर सब पर प्रहार करेंगे । युद्ध में वे लाश पर लाश गिरा देंगे और यह देख प्रेत और परियाँ प्रसन्न होंगी ॥ ३०६ ॥ शिव के गण गर्जना करेंगे और मुसीबत में पड़े देख सब लोग भाग खड़े होंगे । बाण पर बाण चलाते हुए वे युद्ध में अभय हो विचरण करेंगे ॥ ३१० ॥ आपस में तलवारें बजेंगी और महान योद्धा यह सब देख गरजेंगे दोनों ओर के सेनापति आगे बढ़ेंगे और

दुहूँ दिस ढूकहू गे। मुख मार महा सुर कूकहू गे ॥ ३११ ॥ गण गंध्रब देव निहारहू गे। जय सद्द निनद्द पुकारहू गे। जम डाँढि क्रिपाणणि बाहहू गे। अध अंग अधो अध लाहहू गे ॥३१२॥ रण रंग तुरंगय बाजहू गे। डफ झाँझ नफीरय गाजहू गे। अणणेस दुहूँ दिस धावहू गे। करि काढ क्रिपाण कपावहू गे ॥ ३१३ ॥ रण कुंजर पुंज गरज्जहू गे। लख मेघ महाँ दुत लज्जहू गे। रिस मंड महा रण जूटहू गे। छट छत्र छटाछट छूटहू गे ॥ ३१४ ॥ रणणंक निशाण दिसाण घुरे। गल गज्ज हठी रण रंग फिरे। करि कोप क्रिपाण प्रहारहू गे। भट घाइ झटाझट झारहू गे ॥ ३१५ ॥ करि काढ क्रिपाण कपावहू गे। कलकी कल क्रित बढावहू गे। रण लुत्थ पलुत्थ बिथारहू गे। तक तीर सु बीरन मारहू गे ॥ ३१६ ॥ घण घुंघर घोर घमक्कहू गे। रण मो रण तीर पलक्कहू गे। गहि तेग झड़ाझड़ झाड़हू गे। तप तीर तड़ातड़ ताड़हू गे ॥ ३१७ ॥ गज बाज रथी रथ कूटहू गे। गहि केसन एकिन झूठहू गे। लख लातन मुशट प्रहारहू गे। रण दाँतन केसनु पारहू गे ॥३१८॥

मुख से मार-मार की आवाज़ें निकालेंगे ॥ ३११ ॥ गण, गंधर्व और देवता यह सब देखेंगे और जय-जयकार की ध्वनि करेंगे। यमदाढ़-कृपाणें चलेंगी और आधे-आधे अंग कटकर गिर पड़ेंगे ॥ ३१२ ॥ युद्ध के रंग में मस्त घोड़े हिनहिनायेंगे और झाँझ तथा मजीरों की ध्वनि सुनाई पड़ेगी। दोनों ओर के सेनापति टूट पड़ेंगे और कृपाणें हाथ में पकड़कर चमकायेंगे ॥ ३१३ ॥ युद्ध में हाथियों के झुण्ड गरजेंगे और उन्हें देख मेघ भी लज्जित होंगे। क्रोधित हो सभी युद्ध में भिड़ेंगे और रथ-छत्र आदि शीघ्र ही वीरों के हाथ से छूट जायेंगे ॥ ३१४ ॥ युद्ध के नगाड़े सभी दिशाओं में बज उठे और प्रलाप करते हुए वीर युद्ध के लिए मुड़ पड़े। अब ये क्रोध से भर कृपाण से मार करेंगे और शीघ्र ही शूरवीरों को घायल कर देंगे ॥ ३१५ ॥ हाथ में कृपाण निकाल कर चमकाते हुए कल्कि-अवतार इस कलियुग में अपनी कीर्ति में वृद्धि करेंगे। युद्ध में लाश पर लाश बिखेर देंगे और निशाना बाँधकर वीरों को मारेंगे ॥ ३१६ ॥ युद्ध में घनघोर बादल उमड़ेंगे और पलक झपकते ही बाण चलेंगे। कृपाण पकड़कर झटके से उसे चलायेंगे और तीरों की तड़तड़ाहट सुनाई पड़ेगी ॥ ३१७ ॥ हाथी, घोड़े, रथ और रथी काट डाले जायेंगे और वीर एक-दूसरे के केशों को पकड़कर झूला झूलेंगे। लात और घूसों के प्रहार होंगे और युद्ध मे दाँतों से सिर फोड़ दिए जायगें ३१८ धरती के राजा

अवणेश अणीणि सुधारह गे। कर बाण क्रिपाण सँभारह गे। करि रोस दुहूँ दिस भावह गे। रणि सीझ दिवालय पावह गे॥ ३१९॥ छणणंक क्रिपाण छणक्कह गी। झणणंकि सँजोअ झणक्कह गी। कणणंछिक धार कणच्छह गे। रण रंगि सु चाचर मच्चह गे॥ ३२०॥ दुहूँ ओर ते साँग अनच्चह गी। जटि धूर धुरा रंग रच्चह गी। कर वार कटारिअ बज्जह गी। घटि सावण जाणु सु गज्जह गी॥ ३२१॥ भट दाँतन पीस रिसावह गे। दुहूँ ओर तुरंग नचावह गे। रण बाण कमाणणि छोरह गे। हय ताण सनाहनि फोरह गे॥३२२॥ घटि जिउँ घणि (मू०ग्रं०५६१) की घुरि ढूकह गे। मुख मार दसो दिस कूकह गे। मुख मार महाँ सुर बोलह गे। गिर कंचन जे मन डोलह गे॥ ३२३॥ हय कोट गजी गज जुज्झह गे। कबि कोट कहाँ लग बुज्झह गे। गण देव अदेव निहारह गे। जै सद्द निनद्द पुकारह गे॥ ३२४॥ लख बैरख बान सुहावह गे। रण रंग समै फहरावह गे। बर ढाल ढला ढल ढूकह गे। मुख मार दसो दिस कूकह गे॥ ३२५॥ तनु

सेना को ठीक करेंगे और हाथ में बाण-कृपाण सँभालेंगे। क्रोधित होकर दोनों दिशाओं में घनघोर युद्ध होगा और वीर युद्ध में भयंकर स्वर्ग को प्राप्त करेंगे॥ ३१९॥ कृपाणें छनछनायेंगी और लौहकवचों की झनकार सुनाई देगी। धारदार हथियार दनदनायेंगे और युद्ध की होली मच जायेगी॥ ३२०॥ दोनों ओर से भाले चलेंगे और वीरों की जटाएँ धूल-धूसरित हो जायेंगी। वार करने से कटारियाँ ऐसे बजेंगी जैसे सावन को घटा गरज रही हो॥ ३२१॥ शूरवीर दाँत पीसते हुए क्रोधित हो दोनों ओर से घोड़ों को नचायेंगे। वे युद्ध में धनुष से बाण छोड़ेंगे और घोड़ों की जीन तथा कवच को भी काट डालेंगे॥ ३२२॥ बादलों की तरह उमड़ेंगे और मार-मार चिल्लाते हुए दसों दिशाओं में घूमेंगे। उनके मार-मार की बोली से सुमेरु पर्वत का मन भी हिल उठेगा॥ ३२३॥ करोड़ों हाथी और घोड़े तथा हाथियों के सवार जूझ मरेंगे और कवि भी उनका वर्णन कहाँ तक कर पाएँगे। गण, देव-दानव सभी देखेंगे और जय-जयकार करेंगे॥ ३२४॥ लाखों भाले-बाण चलेंगे और युद्ध में फहराते हुए दिखाई देंगे। श्रेष्ठ वीर ढाल आदि लेकर टूट पड़ेंगे और दसों दिशाओं से मार-मार की ध्वनि सुनाई पड़ेगी॥ ३२५॥ कवच आदि युद्ध में उड़ते दिखाई देंगे और वीर अपने कीर्ति-स्तम्भ गाड़ेंगे युद्ध में भाले और बाण चमकते हुए दिखाई देंगे तथा वीरों

त्राण पुरज्जण उड्डह गे। गडवार गडा गड गुड्डह गे। रण बैरख बाल झमक्कह गे। भट भूत परेत भभक्कह गे॥ ३२६॥ बर बैरख बान क्रिपाण कहूँ। रण बोलत आज लगे अजहूँ। गहि केतन केस भ्रमावह गे। दसहूँ दिस ताक चलावह गे॥ ३२७॥ अरणं बरणं भर पेखिअहि गे। तरणं किरणं सर लेखिअहि गे। बहु भांत प्रभा भट पावहि गे। रंग किंसुक देख लजावहि गे॥ ३२८॥ गज बाज रथी रथ जुज्झह गे। कवि लोग कहा लग बुज्झह गे। जस जीत के गीत बनावह गे। जुग चार लगे जसु गावह गे॥ ३२९॥ अचलेस दुहू दिस धावह गे। मुख मार सु मारु उघावह गे। हथ्यार दुहूँ दिस छूटह गे। सर ओघ रणं धनु टूटह गे॥ ३३०॥ ॥ हरि बोलमना छंद॥ भट गाजह गे। घन लाजह गे। दल जूटह गे। सर छूटह गे॥ ३३१॥ सर बरखह गे। धन करखह गे। अस बाजह गे। रनि साजह गे॥ ३३२॥ भुअ डिग्गह गे। भय भिग्गह गे। उठ भाजह गे। नही लाजह गे॥३३३॥ गण देखह गे। जय लेखह गे। जसु गावह गे। मुसक्यावह गे॥३३४॥ प्रण पूरह गे। रज रूरह गे। रण राजह गे। गण लाजह गे॥३३५॥ रिस मंडहि गे। सर

के अतिरिक्त भूत-प्रेत भी भभकते हुए दिखाई देंगे॥ ३२६॥ कहीं पर भाले और बाण लगते हुए दिखाई देंगे। कइयों को केशों से पकड़कर दसों दिशाओं में फेंका जायगा॥ ३२७॥ लाल रंग वाले शूरवीर दिखाई देंगे और सूर्य की किरणों के समान तीर चलते हुए लगेंगे। वीरों की प्रभा विभिन्न प्रकार की होगी और उन्हें देखकर किंसुक के फूल भी लजा जायँगे॥ ३२८॥ इतने गज, घोड़े और रथी जूझेंगे कि कवि भी उनका वर्णन नहीं कर पाएँगे। उनके यशोगान बनाए जायँगे और उन्हें, चारों युगों पर्यन्त गाया जायगा॥ ३२९॥ अचल रहनेवाले वीर दोनों दिशाओं से टूट पड़ेंगे और मुँह से मार-मार पुकारेंगे। दोनों दिशाओं से शस्त्र छूटेंगे और बाणों के झुंड चलेंगे॥ ३३०॥ ॥ हरिबोलमना छंद॥ वीर गरजेंगे, बादल लजाएँगे, दल भिड़ेंगे और तीर छूटेंगे॥ ३३१॥ तीर बरसेंगे, धनुषों की टंकार होगी, तलवारें बजेंगी और युद्ध चलेगा॥ ३३२॥ धरती धसकेगी और भयभीत हो जायगी। वीर लज्जित हुए बिना भाग खड़े होंगे॥ ३३३॥ गण देखेंगे, जय-जयकार करेंगे यश गाएँगे और मुस्कुराएँगे॥ ३३४॥ अपने-अपने प्रण पूरे करेंगे और सुन्दर दिखाई देंगे। युद्ध में देव गण भी उनसे लजाएँगे ३३५। क्रोधित

छंडहि गे। रण जूटह गे। अस टूटहि गे ॥३३६॥ गल गाजह गे। नही भाजहि गे। अस झारह गे। अर मारह गे ॥ ३३७ ॥ गज जूझह गे। हय लूझह गे। भट मारीअहि गे। भव तारीअहि गे ॥३३८॥ दिव देखह गे। जय लेखह गे। धन भाखह गे। चित राखह गे ॥ ३३९ ॥ जय कारण हैं। अरि ारण हैं। खल खंडन हैं। महि मंडन हैं। (मू०ग्रं०५९२) ॥३४०॥ अर दूखन हैं। भव भूखन हैं। महि मंडनु हैं। अर डंडनु हैं ॥ ३४१ ॥ दल गाहन हैं। अस बाहन हैं। जग कारन। अग धारन हैं ॥ ३४२ ॥ मन मोहन हैं। सुभ सोहन। अरि तापन हैं। जग जापन हैं ॥ ३४३ ॥ प्रण पूरण। अर चूरण हैं। सर बरखन हैं। धन करखन हैं ॥३४४। तिअ मोहन हैं। छब सोहन हैं। मन भावन हैं। घन सावन ॥ ३४५ ॥ भव भूखन हैं। प्रित पूखन हैं। ससि आनन। सम भानन हैं ॥ ३४६ ॥ अर आवन हैं। सुख दावन। घन घोरन हैं। सम मोरन हैं ॥ ३४७ ॥ जगतेसुर

कर वे बाण छोड़ेंगे। युद्ध में भिड़ते हुए उनकी तलवारें टूट जायँगी ॥३३६॥ र गरजेंगे और भागेंगे नहीं। वे कृपाण चलाएँगे और शत्रुओं को मार राएँगे ॥ ३३७ ॥ घोड़े जूझेंगे, वीर मारे जायँगे और संसार-सागर से पार जायँगे ॥ ३३८ ॥ देवगण देखेंगे और जय-जयकार करेंगे। वे धन्य-धन्य ेंगे और चित्त में प्रसन्न होंगे ॥ ३३९ ॥ (भगवान) सभी विजयों के कारण र शत्रु को हटानेवाले हैं। वे दुष्टों का खंडन करनेवाले शोभा से मंडित ॥ ३४० ॥ वे दुष्टों के लिए कष्टकारक हैं और संसार के आभूषण हैं। हिमा से युक्त प्रभु शत्रुओं को दंड देनेवाले हैं ॥ ३४१ ॥ वे दलों को नष्ट रनेवाले और कृपाण चलानेवाले हैं। वे जगत के कर्त्ता और जगत को रण करनेवाले हैं ॥ ३४२ ॥ मन को मोहित करनेवाले शोभा से युक्त हैं। त्रुओं के लिए वे कष्टस्वरूप हैं और जगत उनका जाप करता है ॥ ३४३ ॥ ओं को चूरकर वे प्रण को पूरा करनेवाले हैं। वे धनुष चलाकर बाण- र्षा करनेवाले हैं ॥ ३४४ ॥ वे स्त्रियों को मोहित करनेवाले शोभायुक्त वे वाले हैं। वे सावन के बादल के समान मन को अच्छे लगनेवाले ॥ ३४५ ॥ वे संसार के आभूषण हैं और परम्परा का पोषण करनेवाले हैं। चन्द्रमा के समान शीतल और सूर्य के समान तेजवान मुख वाले हैं ॥ ३४६ ॥ आकर सुख देनेवाले हैं। घनघोर बादलों को देखकर वे मोर के समान न होनेवाले हैं ॥३४७॥ वे जगतपति दयालु हैं। संसार के आभूषण

हैं। करनाकर हैं। भव भूखन हैं। अर दूखन हैं ।। ३४८ ।। छब सोभत हैं। त्रिय लोभत हैं। द्रिग छाजत हैं। म्रिग लाजत हैं ।।३४९।। हरणी पति से। नलणी धर से। करुनांबुध हैं। सु प्रभा धर हैं ।। ३५० ।। कलि कारण हैं। भव उधारण हैं। छब छाजत हैं। सुर लाजत हैं ।। ३५१ ।। अस्युपासक हैं। अरि नासक हैं। अरि घाइक हैं। सुख-दाइक हैं ।। ३५२ ।। जल जेछण हैं। प्रण पेछण हैं। अर मरदन हैं। म्रित करदन हैं ।।३५३।। धरणीधर हैं। करणी कर हैं। धन करखन हैं। सर बरखन हैं ।। ३५४ ।। छट छैल प्रभा। लखि चंद लभा। छब सोहत हैं। त्रिय मोहत हैं ।।३५५।। अरणं बरणं। धरणं धरणं। हर सी करि भा। सु सुभंत प्रभा ।।३५६।। शरणालय हैं। अर घालय हैं। छट छैल घने। अति रूप सने ।। ३५७ ।। मन मोहत हैं। छब सोहत हैं। कल कारन हैं। करुणा धर हैं ।। ३५८ ।। अति रूप सने। जनु मैनु बने। अति क्रांत धरे। ससि सोभ हरे ।। ३५९ ।। अस्य उपासिक हैं। अरि नासिक हैं। बर-

---

है और दुःखों को दूर करनेवाले हैं ।। ३४८ ।। स्त्रियों को रिझानेवाले वे सौंदर्य से युक्त हैं। उनके सुन्दर नयनों को देखकर मृग लज्जित हो रहे हैं ।। ३४९ ।। उनके नेत्र हिरण और कमल के समान हैं। वे करुणा और प्रभा से युक्त हैं ।। ३५० ।। वे ही कलियुग के कारण और संसार के उद्धारक हैं। वे छवि से ओत-प्रोत हैं और देवता भी उन्हें देखकर लज्जित होते है ।। ३५१ ।। वे कृपाण के उपासक हैं और शत्रु का नाश करनेवाले हैं। वे शत्रु को मारकर सुख देनेवाले हैं ।। ३५२ ।। वे जल के यक्ष और प्रण को पूरा करनेवाले हैं। वे शत्रु का नाश करनेवाले और उनका मान-मर्दन करनेवाले हैं ।। ३५३ ।। वे धरती के कर्ता और आधार हैं और धनुष खींचकर बाण-वर्षा करनेवाले भी वे ही हैं ।। ३५४ ।। वे लाखों चंद्रमाओं के सौंदर्य से युक्त प्रभा वाले हैं। वे अपने शोभायुक्त सौंदर्य से स्त्रियों को मोहित करनेवाले हैं ।। ३५५ ।। वे लाल वर्ण वाले धरती को धारण करनेवाले तथा अनन्त प्रभा वाले हैं ।। ३५६ ।। वे शरणस्थल हैं, शत्रु को मारनेवाले हैं, शोभा वाले और रूप सौंदर्य वाले हैं ।। ३५७ ।। उनकी छवि मन को मोहनेवाली है। वे संसार के कारणों के कारण हैं और करुणा से युक्त हैं ।। ३५८ ।। वे ऐसे रूपवाले हैं मानो कामदेव हों। उनकी कांति चन्द्रमा की शोभा को भी हराने वाली है। ३५९ वे कृपाण के उपासक हैं और शत्रु के नाशक हैं वे

दाइक हैं। प्रभ पाइक हैं ॥ ३६० ॥ ॥ संगीत भुजंग प्रयात छंद ॥ बागड़दंग बीरं जागड़दंग जूटे। तागड़दंग तीरं छागड़दंग छूटे। सागड़दंग सुआरं जागड़दंग जूझे। कागड़दंग कोपे रागड़दंग रूझे ॥ ३६१ ॥ मागड़दंग माचिओ जागड़दंग जुद्धं। जागड़दंग जोधा कागड़दंग क्रुद्धं। सागड़दंग सांगं डागड़दंग डारे। बागड़दंग बीरं आगड़दंग उतारे ॥ ३६२ ॥ (मू०ग्रं०५८१) तागड़दंग तैकै जागड़दंग जुआणं। छागड़दंग छोरै बागड़दंग बाणं। जागड़दंग जूझे बागड़दंग बाजी। डागड़दंग डोलै तागड़दंग ताजी ॥ ३६३ ॥ कागड़दंग खूनी खयागड़दंग खेतं। झागड़दंग झूमै आगड़दंग अचेतं। आगड़दंग उट्ठे कागड़दंग कोपे। डागड़दंग डारे धागड़दंग धोपे ॥३६४॥ नागड़दंग नाचे रागड़दंग रुद्रं। भागड़दंग भाजे छागड़दंग छुद्रं। जागड़-दंग जुज्झे वागड़दंग वीरं। लागड़दंग लागे तागड़दंग तीरं ॥३६५॥ रागड़दंग रुज्झे सागड़दंग सूरं। घागड़दंग घुम्मी हागड़दंग हूरं। तागड़दंग तक्कै जागड़दंग जुआनं। मागड़दंग मोही तागड़दंग तानं ॥३६६॥ दागड़दंग देखै रागड़दंग रूपं। पागड़दंग प्रेमं कागड़दंग कूपं। डागड़दंग डुब्बी पागड़दंग पिआरी। कागड़दंग कामं मागड़दंग मारी ॥ ३६७ ॥ मागड़दंग मोही बागड़दंग

वरदान देनेवाले प्रभु हैं ॥ ३६० ॥ ॥ संगीत भुजंग प्रयात छंद ॥ (इस छंद में मूल शब्दों के माध्यम से युद्धध्वनि प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है।) वीर युद्ध में भिड़ गए हैं और बाण छूट रहे हैं। घुड़सवार युद्ध में जूझ रहे हैं और क्रोधित होकर युद्ध में लीन हो गए हैं ॥ ३६१ ॥ भीषण युद्ध छिड़ गया और योद्धा क्रुद्ध हो गए हैं। वीर भाले मार रहे हैं और वीरों को घोड़ों से उतार ले रहे हैं ॥ ३६२ ॥ जवानों ने बाण छोड़े तो घोड़े खेत रहे और तेज घोड़े बिदककर भाग गए ॥ ३६३ ॥ युद्धस्थल रक्तरंजित हो गया और वीर जूझकर अचेत हो गये। वीर उठते हैं, क्रोधित होते हैं और धमधमाकर वार करते हैं ॥ ३६४ ॥ शिव नृत्य कर रहे हैं और कायर लोग भाग रहे है। वीर जूझ रहे हैं और उनको बाण लग रहे हैं ॥ ३६५ ॥ शूरवीर युद्ध में लीन हैं और अप्सराएँ उनके वरण के लिए विचरण कर रही हैं। शूरवीर उनको देख रहे हैं और वे भी उन पर मोहित हो रही हैं ॥ ३६६ ॥ उनका रूप-सौंदर्य प्रेमियों के लिए कूप में गिरने के समान है अर्थात् वे उसमें से कभी उबर नहीं सकते। ये अप्सराएँ भी वीरों के सौन्दर्य में होकर डूबी हुई हैं। ३६७ ॥ स्त्रियाँ मोहित हो रही

बाला । रागड़दंग रूपं आगड़दंग उजाला । दागड़दंग देखै सागड़दंग सूरं । बागड़दंग बाजे तागड़दंग तूरं ।। ३६८ ।। रागड़दंग रूपं कागड़दंग कामं । नागड़दंग नाचै बागड़दंग बामं। रागड़दंग रीझे सागड़दंग सूरं । बागड़ड़दंग बिआहै हागड़दंग हूरं ।। ३६९ ।। कागड़दंग कोपा भागड़दंग भूपं । कागड़-दंग कालं रागड़दंग रूपं । रागड़दंग रोसं धागड़दंग धायो । चागड़दंग बाधे चल्यो चुंग आयो ।।३७०।। आगड़दंग अरड़े गागड़दंग गाजी । नागड़दंग नाचे तागड़दंग ताजी। जागड़दंग जुज्झे खागड़दंग खेतं । रागड़दंग रहसे पागड़दंग प्रेतं ।। ३७१ ।। मागड़दंग मारे बागड़दंग बीरं । पागड़दंग पराने भागड़दंग भीरं । धागड़दंग धायो रागड़दंग राजा। रागड़दंग रणके बागड़दंग बाजा ।। ३७२ ।। टागड़दंग टूटे तागड़तंग तालं । आगड़दंग उट्ठे जागड़दंग जुआलं। भागड़दंग भाजे बागड़दंग बीरं । लागड़दंग लागे तागड़दंग तीरं ।। ३७३ ।। रागड़दंग रहसी दागड़दंग देवी । गागड़दंग गैणं आगड़दंग भेवी । भागड़दंग भैरो (मू०ग्रं०५१४) पागड़दंग प्रेतं । हागड़दंग हस्से खागड़दंग खेतं ।।३७४।। ।।दोहरा।। अस टुट्टे लुट्टे घने तुट्टे शस्त्र अनेक । जे जुट्टे फुट्टे सभै रहि ग्यो भूपत एक ।। ३७५ ।। ।। पंकज बाटिका छंद ।। सैन

हैं और उनके रूप-सौन्दर्य का उजाला हो रहा है। शूरवीर उनको देखकर विभिन्न प्रकार के वाद्य प्रसन्नतापूर्वक बजा रहे हैं ।। ३६८ ।। काम और रूप से युक्त स्त्रियाँ नृत्य कर रही हैं और शूरवीर प्रसन्न होकर उनका वरण कर रहे हैं ।। ३६९ ।। राजा ने क्रोधित होकर काल का रूप धारण किया और रोषपूर्वक आगे की तरफ़ बढ़ता हुआ शीघ्रतापूर्वक चला ।। ३७० ।। वीर चिल्लाने लगे, घोड़े नाचने लगे वीर मरने लगे और प्रेत आदि प्रसन्न होने लगे ।। ३७१ ।। वीर मारे जाने लगे और कायर भागने लगे । राजा भी टूट पड़ा और रणवाद्य बजने लगे ।। ३७२ ।। तलवारें टूटने लगीं और ज्वालाएँ भड़कने लगीं । तीरों के लगते ही वीर इधर-उधर भागने लगे ।। ३७३ ।। युद्ध को देखकर काली देवी भी आकाश में प्रसन्न हो उठीं। भैरव और प्रेत आदि भी युद्धस्थल में अट्टहास करने लगे ।। ३७४ ।। ।। दोहा ।। कृपाणें टूट गयीं और अनेकों शस्त्र खंड-खंड हो गये । जो वीर भिडे, वे सब कट गये और अंत में अकेला राजा बच रहा ३७५ पंकज बाटिका छन्द सेना के नष्ट हो जाने से राजा अत्यन्त व्याकुल होकर आगे

जुझत त्रिप भयो अति आकल। धावत भ्यो सामुहि अति व्याकल। संनिध ह्वै चितमै अति क्रुद्धत। आवत भ्यो रिसकै करि जुद्धत॥ ३७६॥ शस्त्र प्रहार अनेक करे तब। जंग जुट्यो अपनो दल लै सभ। बाज उठे तह कोट नगारे। डर्प गिरे रण जुज्झ निहारे॥ ३७७॥ ॥ चामर छंद॥ शस्त्र अस्त्र लै सकोप बीर बोलि कै सभै। कोप ओप दै हठी सु धाइ कै परे सभै। कान के प्रमान बान तान तान तोरही। सु झूझ झूझकै परै न नैक मुख मोरही॥ ३७८॥ बान पान ले सभै सक्रुद्ध सूरमा चले। बीन बीन जे लए प्रबीन बीरहा भले। शंक छोरकै भिरै निशंक घाइ डारही। सु अंग भंग हुइ गिरैं न जंग ते पधारही॥३७९॥ ॥ निसपालक छंद॥ तान सर आन अर मान कर छोरहीं। ऐन सर चैन कर तैन कर जोरहीं। घाव कर चाव कर आन कर लागहीं। छाडि रणि खाइ व्रिण बीर बर भागहीं॥ ३८०॥ क्रोध कर बोध हर सोध अर धावहीं। जोध बर क्रोध धर बिरोध सर लावहीं। अंग भट भंग हुइ जंग तिहँ डिग्गहीं। संगि बिन रंग रण स्रोणत

की तरफ़ बढ़ा और सामने आ गया। वह चित्त में अत्यन्त क्रोधित एवं तैयार होकर युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा॥ ३७६॥ उसने अपना सारा दल साथ लेकर अनेक प्रकार से प्रहार किए। वहाँ अनेकों नगाड़े बज उठे और युद्ध को देखनेवाले भी भयभीत होकर गिर पड़े॥ ३७७॥ ॥ चामर छंद॥ सभी वीर क्रोधित होकर अस्त्र-शस्त्र हाथ में लेकर हठपूर्वक आगे की ओर बढ़कर चिल्लाते हुए टूट पड़े। कान तक बाण खींचकर वे चलाने लगे और तनिक भी मुख न मोड़ते हुए जूझकर गिरने लगे॥ ३७८॥ धनुष-बाण हाथ में लेकर क्रोधित शूरवीर चले और चुन-चुनकर वीर मारे जाने लगे। वे सभी अभय होकर घाव कर रहे हैं और उनके अंग-अंग होकर गिर रहे हैं परन्तु फिर भी वे युद्ध से भागते नहीं॥ ३७९॥ ॥ निष्पालक छंद॥ वीर बाणों को तानकर गर्वपूर्वक छोड़ रहे हैं और उन बाणों के पीछे और बाण चलाकर बाणों को बाणों से जोड़ दे रहे हैं। वे उत्साहपूर्वक प्रहार कर रहे हैं और बड़े-बड़े वीर भी घाव खाकर भागे चले जा रहे हैं॥ ३८०॥ श्रीभगवान क्रोधित होकर और सुधिपूर्वक शत्रुओं को मारते हुए चले जा रहे हैं और विरोधियों को बाण लगाते जा रहे हैं। कटे हुए अंगों वाले वीर युद्धस्थल में गिर रहे हैं और उनके शरीर से सारा रक्त बहता चला जा रहा

न भिगहीं ।। ३८१ ।। धाइ भटि आइ रिस खाइ अस झारहीं । शोर कर जोर सर तोर अर डारहीं । प्रान तज पै न भजि भूम रन सोभहीं । पेख छब देख दुत नार सुर लोभहीं ।।३८२।। भाजनहि साज अस गाज भट आवहीं । क्रोध कर बोध हर जोध असलावहीं । जूझ रण झाल छिण देवपुर पावहीं । जीत कै गीत कुल रीत जिम गावहीं ।।३८३।। ।। नराज छंद ।। साज साज कै सभै सलाज बीर धावहीं । जूझ जूझ कै मरैं सुलोक लोक पावहीं । धाइ धाइ कै हठी अघाइ घाइ झेलहीं । पछेल पाव ना चलैं अरेल बीर ठेलहीं ।। ३८४ ।। कोप ओप दै सभै सरोख सूर धाइ हैं । धाइ धाइ जूझ हैं अरूझ जूझ जाइ हैं । सु अस्त्र शस्त्र मेलकै प्रहार आन डारहीं । न भाज गाज है हठी निशंक (मू०ग्रं०५१५) धाइ मारहीं ।।३८५।। म्रिदंग ढोल बासुरी सनाइ झांझ बाज हैं । सपाव रोप कै बली सकोप आन गाज हैं । कि बूझ बूझकै हठी अरूझ आन जूझ हैं । सु अंध धुंध हुइ रही दिसा विसा न सूझ हैं ।। ३८६ ।। सुरोख कालि केसरी

है ।। ३८१ ।। वीर क्रोधित होकर आते हैं, तलवार चलाते हैं और चिल्लाते हुए शत्रुओं को मार डाल रहे हैं। वे प्राण त्याग देते हैं परन्तु युद्धस्थल से भागते नहीं और शोभायमान होते हैं। उनके सौन्दर्य को देखकर देवस्त्रियाँ भी मोहित हो रही हैं ।। ३८२ ।। वीर कृपाणों से सुसज्जित होकर चले आ रहे हैं और इधर भगवान भी क्रोधित होकर योद्धाओं की पहचान कर रहे है। वीर युद्ध में जूझकर और घायल होकर देवपुरी को प्राप्त करते हैं और वहाँ उनका विजय के गीतों के साथ स्वागत होता है ।।३८३।। ।। नराज छंद ।। सभी वीर सुसज्जित होकर टूट पड़ रहे हैं और युद्ध में जूझ जाने के पश्चात् स्वर्ग लोक को प्राप्त कर रहे हैं। हठी वीर दौड़-दौड़कर घाव झेल रहे हैं। उनके पाँव पीछे नहीं पड़ते और वे आगे की ओर ही वीरों को ठेल रहे हैं ।। ३८४ ।। सभी वीर क्रोधित होकर आगे की तरफ़ बढ़ रहे हैं और युद्धस्थल में वीरगति को प्राप्त कर रहे हैं। अस्त्र-शस्त्रों को भिड़ाते हुए वे प्रहार कर रहे हैं और न भागनेवाले वीर हठपूर्वक गरजते हुए अभय होकर प्रहार कर रहे हैं ।। ३८५ ।। ढोल, मृदंग, बाँसुरी और झाँझ इत्यादि बज रहे हैं और वीर धरती पर क़दम जमाते हुए क्रोधपूर्वक गरज रहे हैं। हठी वीर पहचान कर वीरों से उलझ रहे हैं और युद्ध में ऐसी भगदड़ मची है कि दिशाओं का ज्ञान भी नहीं हो पा रहा है ३८६ कालीदेवी का सिंह खेत

संघार सैण धाइहैं । अगस्त सिंध को जिमं पचाइ सैन जाइहैं । संघार बाहणीस को अनीस तीर गाज हैं । बिसेख जुद्ध मंड हैं असेख शस्त्र बाज हैं ॥ ३८७ ॥ ॥ सवैया छंद ॥ आवत ही म्रिप के दल ते हरि बाज करी रथ कोटक कूटे । साज करे म्रिपराज कहूँ बरबाज फिरे हिहनावत छूटे । ताट कहूँ गजराज रणं भट केसन ते गहि केसन जूटे । पउन समान बहै कलिबान सभै अरि बादल से चल फूटे ॥ ३८८ ॥ धाइ परे कर कोप बडे भट बान कमान क्रिपान सँभारे । पट्टिस लोहे हथी परसा करि क्रोध चहूँ दिस चउक प्रहारे । कुंजर पुंज गिरे रण मूरधन सोभत है अति डील डिलारे । रावण राम समै रण को गिरराज मनो हनवंत उखारे ॥ ३८९ ॥ चउप चरी चतुरंग चमूं करुणा-लय के पर सिंधुर पेले । धाइ परे करि कोप हठी कर काटि सभै पग द्वै न पिछेले । बान कमान क्रिपानन के घनस्याम घने तन आयुध झेले । स्रोन रँगे रमणीअ रमापति फागन अंत बसंत से खेले ॥ ३९० ॥ धाइ सभै सहि कै कमलापति कोप भर्यो

का संहार करने के लिए इस प्रकार क्रोधपूर्वक दौड़ रहा है और इस प्रकार सेना को नष्ट कर देना चाह रहा है जैसे अगस्त्य मुनि ने समुद्र को पी कर समाप्त कर दिया था । सेनाओं का संहार कर वीर गरज रहे हैं और घनघोर युद्ध करते हुए उनके शस्त्र बज रहे हैं ॥ ३८७ ॥ ॥ सवैया छंद ॥ राजा की फ़ौज के आते ही भगवान ने घोड़े-हाथी और अनेकों रथ काट डाले । युद्धस्थल में राजा द्वारा सुसज्जित कहीं घोड़े हिनहिनाते हुए घूम रहे थे और कहीं पर युद्धस्थल में हाथी दौड़ते हुए दिखाई दे रहे थे । वीर एक-दूसरे के केश पकड़ कर एक-दूसरे से जुटे थे । वायु के समान बाण चल रहे थे और उनसे बादल रूपी शत्रु खण्ड-खण्ड हो रहे थे ॥ ३८८ ॥ बाण, कृपाण, कमान सँभाल कर बड़े-बड़े वीर टूट पड़े । वीर हाथ में कृपाण, फरसा आदि लेकर चारों दिशाओं से प्रहार कर रहे थे । मुँह के बल गिरे हुए हाथियों के झुण्ड युद्ध में शोभायमान हो रहे हैं और ऐसे लग रहे हैं मानो राम-रावण-युद्ध के समय हनुमान ने पर्वत उखाड़कर फेंक दिए हों ॥ ३८९ ॥ चतुरंगिणी सेना को साथ ले श्रीभगवान पर हाथियों द्वारा चढ़ाई की गई । उन हठी वीरों को काट डाला गया परन्तु फिर भी वे तनिक भी पीछे नहीं हटे । बाणों और कृपाणों तथा अन्य शस्त्रों के वार झेलते हुए तथा रक्त से रँगे हुए श्रीभगवान ऐसे लग रहे थे मानो वसन्त ऋतु में फाग खेल कर हटे हों ॥ ३९० ॥ श्रीभगवान मार खाकर क्रोधित हो उठे और उन्होंने हाथ में शस्त्र लिये शत्रुओं की सेना में घुस

करि आयुध लीने । दुज्जन सैन बिखैं धसिकै छिन मै बिन प्राण सभै अरि कीने । टूट परै रमणी अस भूखण बीर बली अति सुंदर चीने । यौं उपमा उपजी मन मै रणभूम को मानहु भूखन दीने ॥ ३९१ ॥ चउप चड़्यो करि कोप कली क्रित आयुध अंग अनेकन साजे । ताल म्रिदंग उपंग मुचंग सु भांत अनेक भली बिध बाजे । पूरि फटी धुरि धूरजटी जट देव अदेव दोऊ उठ भाजे । कोप कछू करिकै चित मो कलकी अवतार जबै रण गाजे ॥ ३९२ ॥ बाज हने गजराज हने न्रिपराज हने रणभूम गिराए । डोल गिर्‌यो गिरमेर रसातल देव अदेव सभै भहराए । सातोऊ सिंध सुकी सरता सभ लोक अलोक सभै थहराएँ । चउक चके द्रिगपाल सभै किह पै कलकी कर कोप रिसाए ॥ ३९३ ॥ बान कमान सँभार हठी हठ (मू०ग्रं०५९६) ठाठ हठी रण कोटिक मारे । जाँघ कहूँ सिर बाह कहूँ अस रेण प्रमाण सभै करि डारे । बाज कहूँ गजराज धुजा रथ उश्टट परे रण पुश्टट बिदारे । जानुक बाग बन्यो रणिमंडल पेखन कउ जटि धूर पधारे ॥ ३९४ ॥ लाज भरे

गए और क्षण भर में उन्होंने सबको निष्प्राण कर दिया। वे योद्धाओं पर टूट पड़े और इस प्रकार सुन्दर दिखाई पड़ने लगे कि मानो उन्होंने रणभूमि में सभी वीरों को घावों के आभूषण प्रदान किए हों ॥ ३९१ ॥ कल्कि भगवान अपने अंगों पर शस्त्र सुशोभित करके एवं क्रोधित होकर चढ़ पड़े। युद्ध में मृदंग, मुचंग आदि अनेकों वाद्य भली प्रकार बजने लगे। शिव की जटाएँ भी उस भीषण युद्ध को देख खुल गयीं और देव-अदेव दोनों उठकर भाग खड़े हुए। यह सब उस समय हुआ जब युद्धभूमि में क्रोधित होकर कल्कि-अवतार ने गर्जना की ॥ ३९२ ॥ घोड़े, हाथी और राजाओं को मारकर रणभूमि में गिरा दिया गया। सुमेरु पर्वत डोलायमान हो धरती में धँस गया और देव-अदेव सभी भयभीत हो उठे। सातों समुद्र और सभी नदियाँ भयभीत होकर सूख गयीं और सभी लोक थरथराने लगे। सभी दिशाओं के दिक्पाल आश्चर्य-चकित थे कि कल्कि-अवतार ने क्रोधित होकर किस पर आक्रमण किया है ॥ ३९३ ॥ बाण, कमान को सँभालकर कल्कि-अवतार ने करोड़ों को मार डाला। कहीं टाँग, कहीं सिर और कहीं तलवारें बिखरी थीं; श्रीभगवान ने सबको धूल में मिला दिया। हाथी, घोड़े, रथ और ऊँट मरे हुए पड़े थे। ऐसा लग रहा था कि युद्धमण्डल मानो बाग बना हुआ हो और उसे देखने के लिए शिवजी इधर-उधर घूम रहे हों ३९४ लज्जा से भरे शत्रु राजा

अरिराज चहूँ दिस भाज चले नही आन घिरे। गहि बान क्रिपान गदा बरछी भट छैल छके चित चौप चिरे। प्रितमान सुजान अजान भुजा करि पैज परे नही फेरि फिरे। रण मो मरिकै जस को करिकै हरि सो लरिकै भवसिंध तरे॥ ३९५॥ रंग सो जान सुरंगे हैं सिंधुर छूटी है सीस पै स्रोन अलेलै। बाज गिरे भट राज कहूँ बिचले कुपकै कल कै असमेलै। चाचर जान करैं बसुधा पर जूझ गिरे पग द्वै न पछेलै। जानुक पाल कै भंग मलंग सु फागन अंत बसंत सो खेलै॥ ३९६॥ जेतक जीत बचे सु सभै भट चउप चड़े चहूँ ओरन धाए। बान कमान्न गदा बरछी अस काढ लए कर मौ चमकाए। चाबुक मार तुरंग धसे रन सावन की घटि जिउँ घहराए। स्री कलकी करि लै करवार सु एक हने अर अनेक पराए॥ ३९७॥ मार मचो बिसंभार जबै तब आयुध छोर सभै भट भाजे। डारि हथ्यार उतार सनाहि सु एकही बार भजै नही गाजे। स्री कलकी अवतार तहा गहि शस्त्र सभै इह भाँत बिराजे। भूम अकाश पतार चक्यो छब देव अदेव दोउ

चारों दिशाओं को भाग खड़े हुए और उन्होंने फिर घूमकर दुगुने उत्साह से कृपाण, गदा, बरछी आदि लेकर प्रहार करने शुरू कर दिए। जो उस आजानबाहु श्रीभगवान से लड़ने आया वह पुनः वापस नहीं लौटा और युद्ध में मरकर श्रीभगवान से लड़कर यश का अर्जन करते हुए भवसागर को पार कर गया॥ ३९५॥ सिर पर रक्त की पिचकारियाँ पड़ने से हाथी सुन्दर रंग में रँगे दिखाई दे रहे हैं। कल्कि भगवान ने क्रोधित हो इस प्रकार मार-काट की कि कहीं पर घोड़े गिरे हुए हैं और कहीं पर श्रेष्ठ वीर गिरे हुए हैं। वीर युद्ध में धरती पर गिर अवश्य रहे हैं परन्तु दो क़दम भी पीछे नहीं हट रहे हैं। वे सभी इस प्रकार लग रहे हैं मानो वसन्त ऋतु में मल्ल भाँग का सेवन कर फाग खेल रहे हों॥ ३९६॥ जितने शूरवीर बचे वे पुनः और उत्साह से चारों ओर से टूट पड़े। वे बाण, कमान, गदा, बरछी और तलवारों को हाथ में लेकर चमकाने लगे। घोड़ों पर चाबुक मारकर वे सावन की घटा के समान घहराते हुए शत्रु-सेना में धँस गए परन्तु श्री कल्कि भगवान ने हाथ में तलवार लेकर कइयों को मार डाला और कई भाग खड़े हुए॥ ३९७॥ जब इस प्रकार भीषण युद्ध हुआ तो वीर शस्त्र छोड़कर भाग खड़े हुए। वे कवचों को उतारकर और शस्त्र डालकर भाग खड़े हुए और पुनः उन्होंने गर्जन नहीं किया युद्धस्थल में शस्त्र इस प्रकार

लखि लाजे ।। ३९८ ।। देख भजी प्रितना अर की कलकी अवतार हथ्यार सँभारे । बान कमान क्रिपान गदा छिन बीच सभै कर चूरन डारे । भाग चले इह भांत भटा जिम पउन बहे द्रुम पात निहारे । पैन परी कछु मान रह्यो नही बानन डार निदान पधारे ।। ३९९ ।। ।। सुप्रिआ छंद ।। कहूँ भट मिलत मुख मार उचारत । कहूँ भट भाज पुकारत आरत । केतक जोध फिरत दल गाहत । केतक जूझ बरंगन ब्याहत ।।४००।। कहूँ बरबीर फिरत सर मारत । कहूँ रण छोर भजत भट आरत । केई डरु डारि हनत रण जोधा । केई मुख मार रटत करि क्रोधा ।। ४०१ ।। केई खग खंडि गिरत रण छत्री । केतक भाग चलत त्रस अत्री । केतकनि भ्रम जुद्ध मचावत । आहव सौझ दिवालय (मू०ग्रं०५९७) पावत ।। ४०२ ।। केतक जूझ मरत रणमंडल । केइक भेद चले ब्रहमंडल । केइक आन प्रहारत साँगं । केतक भंग गिरत हुइ आँगं ।।४०३।। ।। बिसेख छंद ।। भाज बिना भट लाज सभै तज साज जहाँ । नाचत भूत

हो रहे थे कि उनकी छवि देखकर धरती, आकाश, पाताल सभी लज्जित हो रहे थे ।। ३९८ ।। शत्रु-सेना को भागते देखकर कल्कि-अवतार ने हथियार सँभालते हुए बाण, कमान, कृपाण, गदा आदि पकड़कर सबको क्षण भर में चूर-चूर कर दिया । वीर इस प्रकार भागने लगे जैसे पवन के बहने से पत्ते उड़ते हैं । जो शरण में आये वे बच गए तथा दूसरे बाण चलाकर भाग खड़े हुए ।। ३९९ ।। ।। सुप्रिया छंद ।। कहीं वीर मिलकर मारो-मारो चिल्ला रहे हैं और कहीं वीर व्याकुल हो हाहाकार कर रहे हैं । कितने ही योद्धा सेना में विचरण कर रहे हैं और कितने ही वीरगति प्राप्त कर अप्सराओं का वरण कर रहे हैं ।। ४०० ।। कहीं शूरवीर बाण चलाते घूम रहे हैं और कहीं पर पीड़ित वीर युद्धस्थल छोड़कर भाग रहे हैं । कई अभय हो युद्ध में योद्धाओं का नाश कर रहे हैं और कई क्रोधित हो मार-मार की रट लगा रहे हैं ।।४०१।। कइयों के खड्ग खण्ड-खण्ड हो गिर रहे हैं और कई अस्त्र-शस्त्रधारी भयभीत हो भाग रहे हैं । कई घूम-घूम कर युद्ध कर रहे हैं और युद्ध में वीरगति प्राप्त कर स्वर्ग को जा रहे हैं ।। ४०२ ।। कई युद्धस्थल में जूझकर मर रहे हैं और कई ब्रह्माण्ड को भेदकर इससे टूट जा रहे हैं । कई भाले से प्रहार कर रहे हैं और कइयों के अंग भंग होकर गिर रहे हैं ।। ४०३ ।। ।। विशेष छंद कई वीर लज्जा का त्याग कर और सब कुछ छोड़कर भाग चले हैं और युद्धस्थल में नाचते भूत-प्रेत और निशाचरों का राज हो गया है देव-अदेव

पिसाचनि साचर राज तहाँ। देखत देव अदेव महाँरण को बरनै। जूझ भयो जिह भाँत सु पारथ सौ करनै ॥ ४०४ ॥ दाव करै रिस खाइ महाँ हठ ठान हठी। कोप भरे इह भाँत सु पावक जान भठी। क्रुद्ध भरे रण छत्रज अत्रण झारत है। भाज चलै नही पावस मार पुकारत है ॥ ४०५ ॥ देखत है बिब देव धनै धन जंपत हैं। भूम अकाश पताल चवो चक कंपत हैं। भाजत नाहन बीर महाँरण गाजत हैं। जच्छ भुजंगन नार लखे छब लाजत हैं ॥ ४०६ ॥ धावत है कर कोप महाँ सुर सूर तहाँ। मांडत हैं बिकरार भयंकर जुद्ध जहाँ। पावत हैं सुर नार सु सामुहि जुज्झत हैं। देव अदेव गंध्रब सभै क्रित सुज्झत हैं ॥ ४०७ ॥ ॥ चंचला छंद ॥ मारबे को ताहि ताकि धाए बीर सावधान। होन लागे जुद्ध के जहाँ तहाँ सभै बिधान। भीम भात धाइकै निशंक घाइ करत आइ। जूझ जूझ कै मरै सु देवलोक बसत जाइ ॥ ४०८ ॥ तान तान बान कौ अजान बाह धावही। जूझ जूझ कै मरै अलोक लोक पावही। रंग जंग अंग नंग भंग अंगि होइ परत। टूक टूक होइ गिरै सु देव

सभी देखकर यह कह रहे हैं कि यह युद्ध अर्जुन और कर्ण के युद्ध के समान भयंकर है ॥ ४०४ ॥ हठी वीर क्रोधित हो वार कर रहे हैं और इस प्रकार लग रहे हैं कि मानो वे अग्नि की भट्ठियाँ हों। राजागण क्रोधित होकर शस्त्र-अस्त्र चला रहे हैं और भागने की बजाय मार-मार पुकार रहे हैं ॥ ४०५ ॥ देव-दानव युद्ध को देख धन्य-धन्य कह रहे हैं तथा भूमि, आकाश, पाताल एवं चारों दिशाएँ काँप रही हैं। वीर भाग नहीं रहे हैं और युद्ध में गरज रहे हैं तथा उन वीरों की शोभा को देख यक्ष एवं नाग-स्त्रियाँ लज्जित हो रही हैं ॥ ४०६ ॥ महान शूरवीर क्रोधित होकर टूट पड़ रहे हैं और विकराल भयंकर युद्ध कर रहे हैं। युद्ध में वीरगति प्राप्त कर वे अप्सराओं को पा रहे हैं और यह युद्ध देव-अदेव गंधर्व सबको महान युद्ध दिखाई पड़ रहा है ॥४०७॥ ॥ चंचला छंद ॥ कल्कि-अवतार को मारने के लिए वीर सावधानीपूर्वक आगे बढ़े और यहाँ-वहाँ सब तरफ़ युद्ध का उपक्रम करने लगे। भीम के समान बली वीर अभय हो प्रहार कर रहे हैं और जूझकर, मरकर देवलोक में आवास ग्रहण कर रहे हैं ॥ ४०८ ॥ बाणों को तान-तानकर वे श्रीभगवान की ओर बढ़ रहे हैं और जूझ-मरकर परलोक की प्राप्ति कर रहे हैं। वे युद्ध के रंग में मस्त हैं और उनके आगे खण्ड-खण्ड होकर गिर रहे हैं। वे वीर देव-सुन्दरियों के लिए खण्ड-खण्ड हो गिर रहे हैं और मृत्यु को प्राप्त कर

संद्रीनि बरत ॥ ४०९ ॥ ॥ त्रिड़का छंद ॥ त्रिड़रिड़ तीरं । ब्रिड़रिड़ बीरं । ढ़िड़रिड़ ढोलं । ब्रिड़रिड़ बोलं ॥ ४१० ॥ त्रिड़ड़िड़ ताजी । ब्रिड़ड़िड़ बाजी । ह्रिड़ड़िड़ हाथी । स्त्रिड़ड़िड़ साथी ॥४११॥ ब्रिड़ड़िड़ बाणं । ज्रिड़ड़िड़ जुआणं । छ्रिड़ड़िड़ छोरैं । ज्रिड़ड़िड़ जोरैं ॥ ४१२ ॥ खरड़ड़ खेतं । परड़ड़ प्रेतं । झड़ड़ड़ नाचै । रंगझड़ि राचै ॥ ४१३ ॥ हरड़ हूरं । गणरण पूरं । क्ररड़ काछी । नररड़ नाची ॥४१४॥ तररड़ तेगं । जणघण बेगं । चररड़ चमकै । झड़रड़ झमकै ॥ ४१५ ॥ जररड़ जोधं । किररड़ क्रोधं । जड़रड़ जूझै । ल्रड़रड़ लूझै ॥ ४१६ ॥ खररड़ खेतं । अररड़ अचेतं । ब्रड़रड़ बाजी । गिरबड़ गाजी ॥ ४१७ ॥ ग्रिड़रड़ गजणं । क्रिड़रड़ भजणं । रिड़रिड़ राजा (मू०पं०५१८) लिड़रिड़ लाजा ॥ ४१८ ॥ खिड़रिड़ खांडे । ब्रिड़रिड़ बांडे । अड़रिड़ अंगं । ज्रड़रिड़ जंगं ॥४१९॥ ॥ पाधड़ी छंद ॥ इह भाँत सैन जुज्झी अपार । रण रोह क्रोध धाए लुझार । तज्जंत बाण गज्जंत बीर । उट्ठंत नाद भज्जंत भीर ॥ ४२० ॥ धाए सबाह जोधा सकोप । कट्ढत क्रिपाण बाहंत धोप । लुज्झंत सूर जुज्झंत अपार । जण सेत बंध दिखिअत पहार ॥४२१॥

रहे हैं ॥ ४०९ ॥ ॥ त्रिड़िका छंद ॥ वीरों के तीर तड़तड़ा रहे हैं और ढोल ढमढमा रहे हैं ॥ ४१० ॥ घोड़े हिनहिना रहे हैं और हाथी अपने झुण्डों-समेत चिंघाड़ रहे हैं ॥ ४११ ॥ वीर बलपूर्वक बाण छोड़ रहे हैं ॥ ४१२ ॥ युद्धस्थल में प्रेत युद्ध के रंग में मस्त हो नाच रहे हैं ॥४१३॥ आकाश अप्सराओ से भर गया है और वे सभी नाच रही हैं ॥४१४॥ तलवारें शीघ्रता से चमक रही हैं और झम की ध्वनि से प्रहार कर रही हैं ॥ ४१५ ॥ योद्धा क्रोधित हो जूझ रहे हैं और मर रहे हैं ॥ ४१६ ॥ युद्धस्थल में घोड़े और घुड़सवार अचेत हो पड़े हुए हैं ॥ ४१७ ॥ हाथी भाग रहे है और इस प्रकार राजा हार के अपमान के कारण लज्जित हो रहा है ॥ ४१८ ॥ बड़े-बड़े खड्ग युद्ध में अगों पर प्रहार कर रहे हैं ॥ ४१९ ॥ ॥ पाधड़ी छंद ॥ इस प्रकार अनन्त सेना जूझ गई और वीरगण क्रोधित होकर तथा गरज कर बाण चलाते हुए आगे बढे । घनघोर ध्वनि को सुनकर कायर लोग भाग खड़े हुए ॥ ४२० ॥ योद्धा क्रोधित होकर सेना समेत आगे बढ़े और कृपाण निकालकर वार करने लगे । मृतक वीरों के ढेर इस प्रकार दिखाई दे रहे थे कि मानो समुद्र पर बाँध बाँधने के लिए पहाड़ पड़े हों ॥ ४२१ । अग कट रहे हैं घाव भभक रहे हैं और

कटंत अंग भभकंत घाव । सिज्झंत सूर जुज्झंत चाव । निरखंत सिद्ध चारण अनंत । उचरंत क्रित जोधन बिअंत ॥ ४२२ ॥ नाचंत आप ईशर कराल । बाजंत डउर भै करि बिसाल । पोअंत माल काली कपाल । चल चित्त चक्ख छाडंत ज्वाल ॥ ४२३ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ बजे घोर बाजे । धुणं मेघ लाजे । खहे खेत खत्री । तजे ताण पत्री ॥ ४२४ ॥ गिरैं अंग भंगं । नचे जंग रंगं । खुले खग्ग खूनी । चड़े चउप दूनी ॥ ४२५ ॥ भयो घोर जुद्धं । इतो काहु सुद्धं । जिण्यो काल रूपं । भजे सरब भूपं ॥ ४२६ ॥ सबै सैण भाजा । फिर्‌यो आप राजा । ठट्यो आण जुद्धं । भयो नाद उद्धं ॥ ४२७ ॥ तजे बाण ऐसे । बणं पत्र जैसे । जलं मेघ धारा । नभं जाणु तारा ॥ ४२८ ॥ करं अंसुमाली । सरं सत्र साली । चहूँ ओर छूटे । महाँ जोध जूटे ॥ ४२९ ॥ चले कीट कासे । बढे टिड्ढ कासे । कनं सिंध रेतं । तनं रोम तेतं ॥ ४३० ॥ छुटैं स्वरण पुक्खी । सुधंसार मुक्खी ।

शूरवीर उत्साहपूर्वक जूझ रहे हैं। युद्ध को कई सिद्ध और चारण, भाट इत्यादि देख रहे हैं तथा वे योद्धाओं की कीर्ति का उच्चारण कर रहे हैं ॥ ४२२ ॥ शिव स्वयं कराल रूप धारण कर नाच रहे हैं और उनका भयभीत करनेवाला डमरू बज रहा है। कालीदेवी सिरों की मालायें पिरो रही हैं और रक्त पान करती हुई अग्नि की ज्वालाएँ छोड़ रही हैं ॥ ४२३ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ घोर रणवाद्य बजने लगे जिन्हें सुन मेघ भी लजाने लगे। युद्धस्थल में क्षत्रिय भिड़ने लगे और तान-तानकर बाण चलाने लगे ॥ ४२४ ॥ वीर अंग-भंग होकर और युद्ध के रंग में नृत्य करते हुए गिरने लगे। वीरो ने दुगुने उत्साह से अपने खड्ग निकाल लिये ॥ ४२५ ॥ इतना घनघोर युद्ध हुआ कि किसी को होश न रहा। काल-रूप कल्कि जीत गए और सभी राजा भाग खड़े हुए ॥ ४२६ ॥ जब सभी राजा भाग खड़े हुए तो राजा स्वयं घूमकर सामने आया और घनघोर नाद करते हुए उसने युद्ध प्रारम्भ कर दिया ॥ ४२७ ॥ वह इस प्रकार बाण चला रहा था जैसे वन में पत्ते उड़ रहे थे, या मेघ से जलधारा बह रही हो अथवा आकाश से तारे टूटकर गिर रहे हों ॥ ४२८ ॥ उसने अपने बाणों से शत्रुओं को काफ़ी हानि पहुँचाई। महान योद्धाओं के बाण चारों ओर से छूटने लगे ॥ ४२९ ॥ बाण असंख्य कीड़ों और टिड्डियों के समान उड़ने लगे और वे रेत के कण और तन के बालों के समान संख्या में अगणित थे ॥ ४३० ॥ स्वर्णपंखी लौह मुख वाले बाण छूटने लगे

कलंकं कपती । तजे जाण छती ॥ ४३१ ॥ गिरै रेत खेतं । नचे भूत प्रेतं । करै चित्त चारं । तजै बाण धारं ॥ ४३२ ॥ हलै जोध जोधं । करै धाइ क्रोधं । खहै खग्ग खग्गं । उठै झाल अग्गं ॥ ४३३ ॥ नचे पक्खराले । चले बालआले । हसे प्रेत नाचैं । रणं रंग राचैं ॥ ४३४ ॥ नचे पारबतीसं । मँड्यो जुद्ध ईसं । दसं दिउस क्रुद्धं । भयो घोर जुद्धं ॥४३५॥ पुनर बीर त्याग्यो । पगं द्वैक भाग्यो । फिर्यो फेरि ऐसे । क्रोधी साँप जैसे ॥ ४३६ ॥ पुनर जुद्ध मंड्यो । जरं ओघ छंड्यो । तजे वीर बाणं । त्रितं आइ त्राणं ॥४३७॥ सभै सिद्ध देखै । कलंक्रित लेखै । धनं धंन जंपै । (मू०ग्रं०५६६) लखै भीर कंपै ॥ ४३८ ॥ ॥ नराज छंद ॥ आन आन सूरमा सधान बान धावहीं । रूझ जूझ कै मरें सु देव नार पावहीं । सु रीझ रीझ अच्छराँ अलच्छ सूरणों बरें । प्रबीन बीन बीन कै सुधीन पान कैं धरें ॥ ४३९ ॥ सनद्ध बद्ध अद्ध ह्वैं बिरुद्ध सूर धावही । सु क्रोध साँग तीछणं कि ताक शस्त्र लावही । सु जूझ जूझ कै गिरैं अलूझ लूझ कै हठी । अबूझ ओर धावही बनाइ सैन एकठी ॥४४०॥

और इस प्रकार तीखी नोकों वाले बाण क्षत्रियों पर छोड़े जाने लगे ॥ ४३१ ॥ वीर युद्धस्थल में गिरने लगे और भूत-प्रेत नृत्य करने लगे। वीरगण प्रसन्न हो बाण-वर्षा करने लगे ॥ ४३२ ॥ योद्धा योद्धाओं को ललकार कर क्रोधित होकर घाव करने लगे। खड्ग के खड्ग से टकराने पर आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं ॥ ४३३ ॥ घोड़े नाचने लगे और भूतगण इत्यादि भी विचरण करने लगे। प्रेत अट्टहास करते हुए युद्ध में लीन हो गए ॥ ४३४ ॥ शिव भी नृत्य करते हुए युद्ध करने लगे और इस प्रकार दस दिन तक यह क्रोधपूर्ण युद्ध हुआ ॥ ४३५ ॥ फिर राजा वीरता को त्यागकर दो क़दम भागा परन्तु वह फिर ऐसे घूमा जैसे क्रोधी सर्प घूमता है ॥ ४३६ ॥ उसने पुनः युद्ध प्रारम्भ किया और बाण-वर्षा की। वीरों ने बाण छोड़े और मृत्यु ने उन्हें युद्ध के भय से मुक्त किया ॥ ४३७ ॥ सभी सिद्धपुरुषों ने कल्कि को देखा और धन्य-धन्य का जाप किया। कायर लोग उसको देखकर काँप उठे ॥ ४३८ ॥ ॥ नराज छंद ॥ शूरवीर बाणों का निशाना साधते हुए बढ़ने लगे और युद्ध में वीरगति पाते हुए देवस्त्रियों को प्राप्त करने लगे। अप्सराएँ भी प्रसन्न होकर शूरवीरों का वरण करने लगीं और चुन-चुनकर वीरों का हाथ पकड़ने लगीं ॥ ४३९ ॥ शूरवीर सुसज्जित होकर विरोधी दिशा में टूट पड रहे हैं और क्रोधपूर्वक तीक्ष्ण भाले शत्रुओं को मार रहे हैं हठी शूरवीर जूझ-जूझकर गिर रहे हैं और

।। संगीत भुजंगप्रयात छंद ।। कागड़दंग कंपा रागड़दंग राजा। धागड़दंग घोरे बागड़दंग बाजा। फागड़दंग ढीलं छागड़दंग छूटे। सागड़दंग सूरं जागड़दंग जूटे ।। ४४१ ।। बागड़दंग बाजे नागड़दंग नगारे। जागड़दंग जोधा मागड़दंग मारे। डागड़दंग डिग्गे खागड़दंग खूनी। चागड़दंग चउपे दागड़दंग दूनी ।।४४२।। हागड़दंग हस्से सागड़दंग सिद्धं। भागड़दंग भाजे बागड़दंग ब्रिद्धं। छागड़दंग छुट्टे तागड़दंग तीरं। जागड़दंग जुट्टे बागड़दंग बीरं ।। ४४३ ।। कागड़दंग कुहके बागड़दंग बाणं। फागड़दंग फरके नागड़दंग निशाणं। बागड़दंग बाजी भागड़दंग भेरी। सागड़दंग सैणं फागड़दंग फेरी ।। ४४४ ।। भागड़दंग भीरं कागड़दंग कंपै। मागड़दंग मारे जागड़दंग जंपै। छागड़-दंग छप्रं भागड़दंग भाजे। चागड़दंग चित्तं लागड़दंग लाजे ।। ४४५ ।। छागड़दंग छोर्‍यो रागड़दंग राजा। सागड़दंग सैणं भागड़दंग भाजा। छागड़दंग छूटे बागड़दंग बाणं। रागड़दंग रोकी दागड़दंग दिसाणं ।। ४४६ ।। मागड़दंग मारे बागड़दंग बाणं। टागड़दंग टूटे तागड़दंग ताणं। लागड़दंग लागे दागड़दंग दाहे। डागड़दंग डारे बागड़दंग बाहे ।।४४७।। बागड़दंग बरखे फागड़दंग फूलं। मागड़दंग मिटिओ सागड़दंग सूलं। मागड़दंग मार्‍यो भागड़दंग भूपं।

सेना को इकट्ठा कर, यत्र-तत्र दिशाओं में भाग रहे हैं ।। ४४० ।। ।। संगीत भुजंगप्रयात छंद ।। राजा काँप उठा। घोर रणवाद्य बज उठे। हाथी अनियंत्रित हो गए और शूरवीर एक-दूसरे से भिड़ गए ।।४४१।। नगाड़े बजने लगे और योद्धा मारे जाने लगे। खूनी वीर गिरने लगे और उनका उत्साह दुगुना होने लगा ।। ४४२ ।। सिद्ध पुरुष हँसने लगे और वीरों के झुण्ड भागने लगे। तीर टूटने लगे और वीर आपस में भिड़ गए ।। ४४३ ।। बाणों की ध्वनि होने लगी और नगाड़े बजने लगे। भेरियाँ बजने लगीं और सेनाएँ घूमने लगीं ।। ४४४ ।। कायर काँप उठे और युद्धस्थल में मारे जाने लगे। वे क्षिप्र गति से भागने लगे और चित्त में लजाने लगे ।।४४५।। राजा को छोड़ दिया गया और वह सेना लेकर भाग खड़ा हुआ। बाणों के छूटने से सभी दिशाएँ ढक गयीं ।। ४४६ ।। बाण चलाकर सबका गर्व चूर कर दिया गया। बाणों के लगने से वीर दग्ध हो उठे और उनके हाथों से हथियार छूट गए । ४४७ से फूल बरसने लगे और इस प्रकार कष्ट दूर हो

कागड़दंग कोपे रागड़दंग रूपं ॥४४८॥ जागड़दंग जंपै पागड़दंग पानं। दागड़दंग देवं आगड़दंग आनं। सागड़दंग सिधं कागड़दंग कित्तं। बागड़दगं बनाए कागड़दंग कत्तिं ॥४४६॥ गागड़दंग गावै कागड़दंग कबित्तं। (मू०ग्रं०६००) धागड़दंग धावै बागड़दंग ब्रित्तं। हागड़दंग होही जागड़दंग जाता। नागड़दंग नाचै पागड़दंग पाता ॥४५०॥ ॥ पाधरी छंद ॥ संभर नरेश मार्‍यो निदान। ढोलं म्रिदंग बज्जे प्रमान। भाजे सु बीर तज जुद्ध त्रास। तजि शस्त्र सरब ह्वै चित निरास ॥ ४५१ ॥ बरखंत देव पुहपाल ब्रिष्ट। होवंत जगत जह तह सु इष्ट। पूजंत लाग देवी कराल। होवंत सिद्ध कारज सुढाल ॥ ४५२ ॥ पावंत दान जाचक दुरंत। भाखंत कित्त जह तह बिअंत। जग धूप दीप जग्याद दान। होवंत होम बेदन बिधान ॥ ४५३ ॥ पूजंत लाग देवी दुरंत। तज सरब काम जह तह महंत। बांधी सुजान परमं प्रचंड। प्रचुर्‍यो सु धरम खंडे अखंड ॥४५४॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे कलकी अवतार संभर नरेश बधह बिजय भएत बरननं नाम संभर जुद्ध धिआइ समापतम सुभम सतु ॥

गया। कल्कि-अवतार ने क्रोधित होकर राजा को मार डाला ॥ ४४८ ॥ देवताओं ने आगे से आकर भगवान के चरण पकड़ते हुए उनका गुणानुवाद किया। सिद्ध पुरुषों ने भी श्रीभगवान की कीर्ति में काव्य बनाये ॥ ४४६ ॥ गुणानुवाद के लिए काव्यों का गायन होने लगा और श्रीभगवान का कीर्तिवृत्त चारों ओर फैल गया। भले पुरुषों की यात्राएँ होने लगीं और ईश्वर की भक्ति के पात्र गण नृत्य करने लगे ॥ ४५० ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ अन्त में सँभल नरेश मारा गया। ढोल, मृदंग आदि बजने लगे, वीर युद्ध से भयभीत हो कर भाग खड़े हुए और उन्होंने निराश हो सभी शस्त्रों का त्याग कर दिया ॥ ४५१ ॥ देवगण पुष्पवर्षा करने लगे और सभी जगह इष्टदेव की पूजा होने लगी। विकराल देवी को लोग पूजने लगे और अनेकों कार्य सिद्ध होने लगे ॥ ४५२ ॥ याचकों को दान मिलने लगा और सर्वत्र काव्य-रचनाएँ होने लगीं। यज्ञ, धूप, दीप-दान आदि वेदविहित रीति के अनुसार होने लगे ॥ ४५३ ॥ मठाधीश गण सब प्रकार के कामों को छोड़कर देवी की पूजा करने लगे। पुनः प्रचण्ड देवी की स्थापना होने लगी और इस प्रकार अखण्ड धर्म का प्रचार होने लगा ॥ ४५४ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में कल्कि ने संभल नरेश का वध कर विजय प्राप्त की वर्णन नामक संभल-युद्ध की शुभ सत समाप्ति

अथ देसंतर जुद्ध कथनं ॥

॥ रसावल छंद ॥ हण्यो संभरेसं । चतुर चार देसं । चली धरम चरचा । करै काल अरचा ॥ ४५५ ॥ जित्यो देस ऐसे । चड़्यो कोप कैसे । बुल्यो सरब सैणं । करे रकत नैणं ॥४५६॥ दई जीत बंबं । गड्यो जुद्ध खंभं । चमूँ चउप चाली । थिरा सरब हाली ॥ ४५७ ॥ उठी कंप ऐसे । नदं नाव जैसे । चड़े चउप सूरं । रह्यो धूर पूरं ॥ ४५८ ॥ छभे छत्रधारी । अणी जोड़ भारी । चले कोप ऐसे । ब्रितं इंद्र जैसे ॥ ४५९ ॥ सुभे सरब सैणं । कथै कौण बैणं । चली साज साजा । बजै जीत बाजा ॥ ४६० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जिणे गक्खरी पक्खरी खग्गधारी । हणे पक्खरी भक्खरी औ कँधारी । गजसुतान गाजी रजी रोह रूमी । हणे सूर बंके गिरे झूम भूमी ॥ ४६१ ॥ हणे काबली बाबली बीर बाँके । कंधारी हरेवी इराकी निसाके । बली बालखी रोह रूमी रजीले । भजे

देशान्तर-युद्ध-कथन

॥ रसावल छंद ॥ संभल नरेश को मारा गया और चारों दिशाओं मे धर्मचर्चा चल पड़ी । लोग कल्कि-अवतार की अर्चना करने लगे ॥ ४५५ ॥ जब सारे देश को जीत लिया तब कल्कि-अवतार क्रोधित हो उठे और उन्होंने लाल आँखें करते हुए सारी सेना को बुलाया ॥ ४५६ ॥ उन्होंने विजयनाद किया और युद्ध का स्तम्भ पुनः गाड़ दिया । सारी सेना उत्साहित होकर चल पड़ी और सारी पृथ्वी थरथरा उठी ॥ ४५७ ॥ धरती ऐसे काँप उठी जैसे नदी में नाव काँप उठती है । शूरवीर उत्साहित होकर चल पड़े और सब तरफ़ वातावरण धूलपूरित हो गया ॥ ४५८ ॥ सभी छत्रधारी क्षुभित हो उठे । भारी सेनाओं को लेकर क्रोधित होकर इस प्रकार चल पड़े जैसे इन्द्र और वृत्रासुर हों ॥ ४५९ ॥ उनकी सेनाओं की शोभा का वर्णन नही किया जा सकता । सभी सुसज्जित होकर चल पड़े और विजय के बाजे बजने लगे ॥ ४६० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ बड़े-बड़े खूँख्वार खड्गधारी और कवचधारी वीरों को जीता गया । बड़े-बड़े लौह कवच पहननेवाले कंधारी वीरों को नष्ट किया गया और रूम देश के बाँके वीरों को मार डाला गया और वे शूरवीर झूम-झूमकर भूमि पर गिर पड़े । ४६१॥ काबुल के बेबिलोनिया के कंधार के इराक़ के बल्ख के शूरवीरों को नष्ट किया गया और वे सब भयभीत

त्रास कै कै भए बंद ढीले ॥ ४६२ ॥ तजे अस्त्र शस्त्रं सजे नारि भेसं । लजै बीर धीरंचले छाड देसं । गजी बाज गाजी रथी राज हीणं । तजै बीर धीरं भए अंग छीणं ॥ ४६३ ॥ भजे हाबसी हालबी कउकबंद्री । (मू०ग्रं०६०१) चले बरबरी अरमनी छाड तंद्री । खुल्यो खग्ग खूनी तहाँ एक गाजी । दुहूँ सैण मद्धं नच्यो जाइ ताजी ॥ ४६४ ॥ लख्यो जुद्ध जंगी महाँ जंग करता । छुभ्यो छत्रधारी रणं छत्र हरता । दुरं दुरदगामी दलं जुद्ध जेता । छुभे छत्र हंता जयं जुद्ध हेता ॥ ४६५ ॥ महा क्रोध कै बाण छड्डे अपारं । कटे दट्टरं फउज फुट्टी भिपारं । गिरी लुत्थ जुत्थं मिले हत्थ बत्थं । गिरे अंग भंगं रणं मुख जुत्थं ॥ ४६६ ॥ करैं केलकंकी किलकैत काली । तजै ज्वाल माला महाँ जोत ज्वाली । हसै भूत प्रेतं तुटे तत्थि तालं । फिरैं गउर दउरी पुऐ रुंड मालं ॥ ४६७ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ करे जुद्ध क्रुधं । तजै बाण सुद्धं । बकै मार मारं । तजै बाण धारं ॥ ४६८ ॥ गिरे अंग भंगं । नचे जंग रंगं ।

होकर भाग खड़े हुए ॥ ४६२ ॥ वीरों ने अस्त्र-शस्त्र त्यागकर स्त्रियों का वेश धारण कर लिया और लज्जायुक्त होकर अपने देशों को छोड़कर चले गये। हाथियों के सवार, घुड़सवार और रथी राजविहीन हो गये और वीर धैर्य को छोड़कर निर्बल हो गए ॥४६३॥ हब्शी तथा अन्य देशों के लोग भाग खड़े हुए और इसी प्रकार आर्मिनिया देश के बर्बर लोग भी भाग चले। वहीं पर एक शूरवीर ने खड्ग निकालकर दोनों सेनाओं के बीच अपने घोड़े को नचाना शुरू कर दिया ॥ ४६४ ॥ महायुद्ध कर्त्ता श्रीभगवान ने यह देखा और युद्धस्थल में बड़े-बड़े छत्रधारियों का नाश करनेवाले श्रीभगवान क्रोधित हो उठे। वे भगवान दुर्दमनीय रूप से जाने जानेवाले दलों के विजेता थे और वे अत्यन्त घोर रूप से क्षुब्ध हो उठे ॥ ४६५ ॥ उन्होंने क्रोधपूर्वक बाण छोड़े और उस राजा की फ़ौज कटकर गिर पड़ी। झुंड की झुंड लाशें गिर पड़ीं। हाथ और वक्ष तथा अन्य अंग-भंग होकर ढेरों के रूप में गिर पड़े ॥ ४६६ ॥ कौवे कांव-कांव करने लगे किलकारियाँ मारती हुई अग्नि-ज्वालाओं का निस्सरण करने लगीं। भूत-प्रेत वहाँ पर अट्टहास करने लगे और कालीदेवी मुड-मालाओं को पिरोती हुई दौड़ने लगी ॥४६७॥ ॥ रसावल छंद ॥ वीर क्रोधित होकर युद्ध करने और बाण चलाने लगे। वे बाण-वर्षा करते हुए मार-मार पुकार रहे थे ॥ ४६८ ॥ युद्ध के रंग में नृत्य करते हुए अंग-भंग वीर गिरने लगे और देव-दानव उन्हें देखकर धन्य-धन्य कहने लगे ४६९ असत्

दिवं देव देखै । धनं धंन लेखै ॥ ४६९ ॥ ॥ असता छंद ॥ अस लै कलकी करि कोप भर्यो । रण रंग सुरंग बिखै बिचर्यो । गहि बाण क्रिपाण बिखै न डर्यो । रिस सो रण चित्र बचित्र कर्यो ॥ ४७० ॥ कर हाक हथ्यार अनेक धरै । रण रंग हठी करि कोप परै । गहि पान क्रिपान निदान भिरे । रण जूझ मरे फिरते न फिरे ॥ ४७१ ॥ उमडी जन घोर घमंड घटा । चमकंत क्रिपान सु बिज्जछटा । दल बैरन को पग द्वै न फटा । रुप कै रण मो थिरआन जुटा ॥ ४७२ ॥ कर कोप फिरे रण रंग हठी । तप कै जिम पावक ज्वाल भठी । प्रतना प्रत कै प्रतना इकठी । रिसकै रण मो रुप सैण जुटी ॥ ४७३ ॥ तरवार अपार हजार लसैं । हरि जिउँ अरके प्रत अंग डसैं । रत डूब समैं रण ऐस हसैं । जन बिज्जुल ज्वाल कराल कसैं ॥ ४७४ ॥ ॥ बिधूप नराज छंद ॥ खिमंत तेग ऐस कै । जुलंत ज्वाल जैसकै । हसंत जेम कामणं । खिमंत जाण दामणं ॥ ४७५ ॥ बहंत दाइ घाइणं । चलंत चित चाइणं । गिरंत अंग भंग इउ । बने सु ज्वाल जाल जिउ ॥ ४७६ ॥ हसंत खेत खप्परी । भकंत भूत भै धरी ।

छंद ॥ कल्कि भगवान हाथ में तलवार लेकर क्रोध से भर उठे और युद्धस्थल में भव्य रूप से विचरण करने लगे । बाण-कृपाण धारण कर वे अभय होकर क्रोधपूर्वक युद्धभूमि में विचित्र प्रकार से घूमने लगे ॥ ४७० ॥ अनेकों शस्त्र धारणकर ललकारते हुए वे क्रोध एवं हठपूर्वक युद्ध में टूट पड़े । हाथ में कृपाण पकड़कर वे युद्ध में भिड़ गए और पीछे नहीं हटे ॥ ४७१ ॥ घोर उमड़ती घटाओं की बिजली की तरह कृपाणें चमकने लगीं । शत्रुओं का दल दो कदम भी पीछे न हटा और क्रोधित होकर पुन: युद्ध में आ भिड़ा ॥ ४७२ ॥ हठी योद्धा युद्ध में इस प्रकार क्रोधित हो रहे थे कि मानो आग की भट्ठी जल रही हो । सेना घूमकर एकत्रित हो गई और क्रोधित होकर युद्ध के लिए जुट गयी ॥ ४७३ ॥ हज़ारों तलवारें शोभायमान हो रही थीं और ऐसा लग रहा था कि जैसे प्रत्येक अंग को सर्प डस रहे हों । तलवारें युद्ध में इस प्रकार हँसती हुई प्रतीत हो रही थीं जैसे कराल बिजली चमक रही हो ॥ ४७४ ॥ ॥ विधूपनराज छंद ॥ तलवारें ऐसी चमक रही हैं कि मानो ज्वालाएँ हैं अथवा कामिनियाँ हँस रही हों अथवा बिजली चमक रही हो ॥ ४७५ ॥ घायल करती हुई वे ऐसी चल रही हैं जैसे चित्त की चंचल वृत्तियाँ चल रही हों । अंग भंग होकर उल्काओं की तरह गिर रहे हैं । ४७६ युद्धस्थल में कालिका

खिमंत जेम दामणी। नचंत हेर कामणी ॥ ४७७ ॥ हहंक भैरवी सुरी। कहंक साध सिद्धरी। छलंक छिच्छ इच्छणी। बहंत तेग तिच्छणी ॥ ४७८ ॥ गणंत गूड़ गंभरी। सुभंत सिप्प सौ भरी। चलेत चित्र चापणी। जपंत जाप जापणी ॥ ४७९ ॥ (मू०ग्रं०६०२) पुअंत सीस ईसणी। हसंत हार सीसणी। करंत प्रेत निस्सनं। अगंम गंम भिओ रणं ॥ ४८० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जबै जंग जंगी कर्यो जंग जोरं। हने बीर बंके तमं जाण भोरं। तबै कोप गरज्यो कलक्की अवतारं। सजे सरब शस्त्रं धस्यो लोह धारं ॥४८१॥ जया शबद उठे रहे लोग भूरं। खुरं खेह उठी छुही जाइ सूरं। छुटै स्वरन पंखं भयो अंधकारं। अंधा धुंध मच्ची उठी शस्त्र झारं ॥ ४८२ ॥ हण्यो जोर जंगं भज्यो सरब सैणं। त्रिणं दंत थाँभे बके दीन बैणं। मिले दै अकोरं निहोरंत राजं। भजे गरब गरबं तजे राज साजं ॥ ४८३ ॥ कटे काशमीरी हठे कशटवारी। कुपे काशकारी बडे छत्रधारी। बली बंगसी

देवी हँस रही हैं और भयकारक भूत हुंकार रहे हैं। जिस प्रकार विद्युत् चमक रही हो, इसी प्रकार अप्सराएँ युद्धस्थल को देखकर नाच रही हैं ॥ ४७७ ॥ भैरवी हुंकार रही है और योगिनियाँ अट्टहास कर रही हैं। तीक्ष्ण तलवारें इच्छाओं की पूर्ति करती हुई चल रही हैं ॥ ४७८ ॥ गम्भीर होकर काली देवी मृतकों की गणना कर रही हैं और अपने खप्पर को रक्त से भरती हुई शोभायमान हो रही हैं। वह चित्रवत् निष्पृह भाव से चली जा रही है और जाप करती चली जा रही है ॥ ४७९ ॥ काली सिरों की माला पिरो रही है और सिर पर माला धारणकर हँस रही है। प्रेतगण भी वहाँ दिखाई दे रहे हैं और युद्धस्थल एक अगम सा स्थान बन गया है ॥ ४८० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जब वीरों ने बलपूर्वक युद्ध किया तो बाकी वीरों को मार डाला। तभी कल्कि-अवतार गरजे और सभी शस्त्रों से सुसज्जित होकर लौह-वर्षा में धँस गये ॥ ४८१ ॥ इतना घनघोर नाद हुआ कि लोग भ्रम में पड़ गये और घोड़ों के पैरों की धूल सूर्य को छूने लगी। धूल के कारण सुनहली किरणें लुप्त हो गयीं और अंधकार हो गया और उसी भगदड़ में शस्त्र-वर्षा होने लगी ॥ ४८२ ॥ भीषण युद्ध में सेना नष्ट होकर भाग खड़ी हुई और दाँतों में तिनका दबाकर दीनतापूर्वक पुकारने लगी। राजा भी यह देखकर सभी मद और राज-साज को छोड़कर भाग खड़ा हुआ ४८३ अनेकों कश्मीरी और कष्ट सहनेवाले हठीले वीर कट मरे और बड़े-बड़े छत्रधारी महाबली

गोरबंदी ग्रदेजी। महामूड़ मांजिद्र रानी मजेजी ॥ ४८४ ॥ हणे रूस तूसी क्रिती चित्त जोधी। हठे पारसुय्यद सु खूबां सक्रोधी। बुरो बागदाबी सिपाहा कंधारी। कुली कालमाठा छुभे छत्रधारी ॥४८५॥ छुटे बाण गोलं उठे अग्ग नालं। घुरे जाण स्यामं घटा जिम ज्वालं। नचे ईस सीसं पुऐ रुंडमालं। जुझे बीर धीरं बरैं बीन बालं ॥ ४८६ ॥ गिरैं अंग भंगं भ्रमं रुंड मुंडं। गजी बाज गाजी गिरैं बीर झुंडं। इकं हाक हंकैति धरकैत सूरं। उठे तच्छ मुच्छं भई लोह पूरं ॥ ४८७ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ अरे जे सु मारे। मिले ते सु हारे। लए सरब संगं। रसे रीझ रंगं ॥ ४८८ ॥ दयो दान एतो। कथे कब्बि केतो। रिझे सरब राजा। बजे बंब बाजा ॥४८९॥ खुरासान जीता। सभहूँ संग लीता। दयो आप मंत्रं। चले अउर जंत्रं ॥ ४९० ॥ चल्यो दै नगारा। मिल्यो सैन भारा। क्रिपाणी निखंगं। सक्रोधी भड़ंगं ॥ ४९१ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ भुअ कंपत जंपत शेश फणं। घहरंत सु घुंघर घोर रणं।

गुद्रेजी और अन्य देशों के योद्धा, जो कि महामूर्खतावश उस राजा की ओर थे, पराजित हुए ॥ ४८४ ॥ रूसी, तुर्किस्तानी, सैयद और अनेकों हठी व क्रोधी मार डाले गये। कंधार के भीषण रूप से लड़नेवाले सिपाही तथा अनेकों अन्य छत्रधारी क्रोधित राजाओं को मार डाला गया ॥ ४८५ ॥ बाणों के छूटते ही इस प्रकार आग की हवाइयाँ चलती थीं कि मानो घटाओं में ज्वालाएँ चल रही हों। शिव प्रसन्नता से नृत्य करते हुए मुंडमालाएँ पिरोने लगे, वीर जूझने लगे और चुन-चुनकर अप्सराओं को वरण करने लगे ॥ ४८६ ॥ रुंड-मुंड होकर और अंग-भंग होकर हाथियों के सवार, घोड़े तथा अन्य शूरवीर झुंड रूप में गिरने लगे। एक ही ललकार से शूरवीरों के दिल धड़कने लगे और बाँकी मूँछों वाले जवानों के उठते ही धरती लौह-अस्त्रों से पूरित हो उठी ॥ ४८७ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ जो सामने अड़ा मार डाला गया और जो हार गया वह आ मिला। इस प्रकार प्रसन्नतापूर्वक सबको साथ लिया गया ॥ ४८८ ॥ इतना दान दिया गया कि उसका वर्णन कवि ही कर सकता है। सभी राजा प्रसन्न हुए और विजयनाद बज उठे ॥ ४८९ ॥ खुरासान देश जीत लिया गया और सबको साथ लेकर श्रीभगवान ने अपना मंत्र और यंत्र सबको दिया ॥ ४९० ॥ वहाँ से नगाड़े बजाते हुए और भारी सेना को साथ लेते हुए आगे चल पड़े। योद्धाओं के पास कृपाणें और तरकस थे तथा वे अत्यन्त क्रोधी एवं भिड़नेवाले वीर थे ४९१ । तोटक छन्द । धरती

सर तज्जत गज्जत क्रोध जुधं। मुख मार उचार जुझार क्रुधं ॥४६२॥ ब्रिण झल्लत घल्लत घाइ घणं। कड़ कुंट सुपक्खर ब्रख रणं। गणि गिद्ध सु ब्रिद्ध रड़ंत नभं। किलकारत डाकण उच्च सुरं ॥ ४६३ ॥ गणि हूर सुपूर फिरी गगणं। अवलोक सबाहि लगी शरणं। मुख भावत गावत गीत सुरी। गण पूर सुपक्खर हूर फिरी ॥ ४६४ ॥ भट पेखत (मू०ग्रं०६०३) पोअत हार हरी। हहरावत हास फिरी पखरी। दल गाहत बाहत बीर ब्रिणं। प्रण पूर सु पच्छम जीत रणं ॥ ४६५ ॥ ॥ दोहरा ॥ जीत सरब पच्छम दिशा दच्छन कीन धिआन। जिम जिम जुद्ध तहा परा तिम तिम करों बखान ॥ ४६६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ रण जंपत जुग्गण जूह जयं। कल कंपत भीर अभीर भयं। हड़ हस्सत हस्सत हास ख्रिड़ा। डल डोलस शंकत शेश थिरा ॥ ४६७ ॥ दिव देखत लेखत धंन धनं। किलकंत कपाली क्रूर प्रभं। ब्रिण बरखत परखत बीर रणं।

काँपने लगी और शेषनाग भी जाप करने लगा। युद्ध के घोर घुंघरू बजने लगे। वीर क्रोधित होकर बाण छोड़ने लगे और मुख से मार-मार उच्चारण करने लगे ॥ ४६२ ॥ घावों को झेलते हुए घाव करने लगे और युद्धस्थल मे अच्छे लौह-कवचों को काटने लगे। भूतगण एवं गिद्ध आकाश में विचरण करने लगे और डाकिनियाँ उच्च स्वर में किलकारियाँ मारने लगीं ॥ ४६३ ॥ गगन में अप्सराएँ विचरण करने लगीं और युद्धस्थल में योद्धाओं को देखकर उनकी शरण में आ गयीं। वे अपने मुख से गीत गाने लगीं और इस प्रकार गगनमंडल में गण और अप्सराएँ घूमने लगीं ॥ ४६४ ॥ शूरवीरों को देखकर शिव मुंडमाला पिरोने लगे और योगिनियाँ अट्टहास करती हुई विचरण करने लगीं। वीरगण दलों में घूमते हुए घाव खाने लगे और इस प्रकार पश्चिम दिशा को जीतने का अपना प्रण पूरा करने लगे ॥ ४६५ ॥ ॥ दोहा ॥ संपूर्ण पश्चिम दिशा को जीतकर भगवान कल्कि ने दक्षिण दिशा की ओर ध्यान किया और वहाँ जैसे-तैसे युद्ध हुआ, मैं उसका वर्णन करता हूँ ॥ ४६६ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ युद्ध का स्मरण करती हुई योगिनियाँ जय-जयकार कर रही हैं और कलियुग के काँपते हुए कायर लोग भी अभय हो गये। चुड़ैलें हड़हड़ाकर हँस रही हैं और शेषनाग भी शंकित होकर डोलायमान हो रहे हैं ॥ ४६७ ॥ देवता भी देखकर धन्य धन्य कर रहे हैं और देवी भी शोभा से युक्त होकर किलकारियाँ कर रही हैं। तलवारों द्वारा बरसते हुए घाव वीरों की परख कर रहे हैं और योद्धागण घोड़ों समेत युद्ध की क्रूरता को सहन कर रहे

हय घल्लत झल्लत जोध जुधं ॥ ४९८ ॥ किलकंत कपालन सिंघ चड़ी । चमकंत क्रिपाण प्रमान मड़ी । गण हूर सु पूरत धूर रणं । अवलोकत देव अदेव गणं ॥ ४९९ ॥ रण भरमत क्रूर कबंध प्रभा । अवलोकत रीझत देव सभा । गण हूरन ब्याहत पूर रणं । रथ थंभत भान बिलोक भटं ॥ ५०० ॥ ढढि ढोलक झाँझ म्रिदंग मुखं । डफ ताल पखावज नाइ सुरं । सुर संख नफीरिय भेर भकं । उठि न्रित्तत भूत परेत गणं ॥ ५०१ ॥ दिस पच्छम जीत अभीत न्रिपं । कुप कीन पयान सु दच्छणणं । अर भज्जत तज्जत देस दिसं । गण गज्जत केतक एसु रणं ॥ ५०२ ॥ न्रित न्रित्तत भूत बिताल बली । गज गज्जत बज्जत दीह दली । हय हिंसत चिंसत गूड़ गजी । असि लस्सत हस्सत तेग जगी ॥ ५०३ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ हने पच्छमी दीह दानो दिवाने । दिशा दच्छनी आन बाजे निशाने । हने बीर बीजापुरी गोल कुंडी । गिरे तच्छ मुच्छं नची रुंड मुंडी ॥ ५०४ ॥ सभै सेत बंधी सुधी

हैं ॥ ४९८ ॥ चण्डीदेवी सिंह पर सवार होकर किलकारियाँ कर रही हैं और उसकी प्रभायुक्त कृपाण चमक रही है। गणों और अप्सराओं के कारण युद्धस्थल धूलपूरित हो गया है और इस युद्ध को सभी देव-दानव देख रहे है ॥ ४९९ ॥ युद्ध में घूमते हुए प्रभायुक्त कबन्धों की शोभा को देखकर देवतागण भी प्रसन्न हो रहे हैं। युद्ध में वीरगण अप्सराओं से विवाह कर रहे हैं और शूरवीरों को देखकर सूर्य भी अपने रथ को रोक दे रहा है ॥५००॥ ढोलक, झाँझ, मृदंग, डफली, ताल, पखावज, शंख, नफीरी, भेरी आदि वाद्यों की ध्वनि पर भूत और प्रेतगण नृत्य कर रहे हैं ॥ ५०१ ॥ पश्चिम दिशा के अभय राजाओं को जीतकर क्रोधित होकर श्रीकल्कि-अवतार ने दक्षिण दिशा की ओर कूच किया। शत्रु देश-देशान्तरों को त्यागकर भाग खड़े हुए और युद्धस्थल में वीरगण गर्जना करने लगे ॥ ५०२ ॥ महाबली भूत और वैताल नृत्य करने लगे। हाथी गरजने लगे और हृदय को हिला देनेवाले वाद्य बजने लगे। घोड़े हिनहिनाने लगे और हाथी चिंघाड़ने लगे। शूरवीरों के हाथों में कृपाणें शोभायमान होने लगीं ॥ ५०३ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ पश्चिम दिशा के गर्वीले दैत्यों को मारकर अब नगाड़े दक्षिण दिशा में आकर बजने लगे। वहाँ बीजापुरी और गोलकुंडा के वीरों को मारा गया। वीर गिरने लगे और मुंडमाला को धारण करनेवाली कालीदेवी नृत्य करने लगी ॥५०४॥ सेतुबंध के तथा अन्य बंदरगाहों के निवासियों एवं मत्स्य प्रदेश के हठी योद्धाओं

बंद्र बासी । मंडे मच्छ बंद्री हठी जुद्ध रासी । द्रही द्रावणे तेज ता ते तिलंगी । हते सूरती जंग भंगी फिरंगी ॥ ५०५ ॥ चपे चाँद राजा चले चाँद बासी । बडे बीर बैद्रभि संरोस रासी । जिते दच्छनी संग लिन्ने सुधारं । दिशा प्राँचिअं कोप कीनो सवारं ॥ ५०६ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे कलकी अवतार दच्छन जय बिजय समापतम धिआइ दूजा ॥ २ ॥

अथ पूरब दिशा जुद्ध कथनं ॥

॥ पाधरी छंद ॥ पच्छमहि जीत दच्छन उजार । कुपिओ कछूक कलकी वतार । कीनो पयान पूरब दिसाण । बजी अजीत पत्तं निसाण ॥ ५०७ ॥ (मू०ग्रं०६०४) मागध महीप मंडे महान । दस चार चार बिद्‌यानिधान । बंगी कुलिंग अंगी अजीत । मोरंग अग्र नैपाल अभीत ॥ ५०८ ॥ छज्जाद करण इक्काद पाव । मारे महीप कर कै उपाव । खंडे अखंड जोधा दुरंत । लिन्नो छिनाइ पूरब धरंत ॥ ५०९ ॥ दिन्नो

के साथ युद्ध किया गया । तेलंगाना निवासी, द्रविणों और सूरत के शूरवीरों को नष्ट कर दिया गया ॥ ५०५ ॥ चंद्राकार नगरियों के राजाओं का मान मर्दन किया गया और विदर्भ देश के राजाओं को क्रोधित होकर दबा दिया गया । दक्षिण दिशा को जीतकर और सुधारकर क्रोधित होकर श्रीकल्कि भगवान ने पूर्व दिशा की ओर सवारी की ॥ ५०६ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में कल्कि-अवतार दक्षिण-जय-विजय समाप्त, अध्याय दूसरा ॥ २ ॥

पूर्व दिशा युद्ध-कथन

॥ पाधरी छंद ॥ पश्चिम दिशा को जीतकर दक्षिण को उजाड़कर कल्कि-अवतार ने कुपित होकर पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान किया और उसकी विजय के नगाड़े बजने लगे ॥ ५०७ ॥ वहाँ वे अठारहों विद्याओं में निपुण मगध के राजाओं से भी मिले । उस ओर बंग, कलिंग, नैपाल आदि देशों के अभय राजा भी थे ॥ ५०८ ॥ यक्ष रूपी कई राजाओं को उपाय करके मार डाला गया और इस प्रकार दुर्दमनीय योद्धाओं को मार पूर्व दिशा की धरती भी छीन ली गई ५०९ । दुर्बुद्धि राक्षसों को मारकर कल्कि

निकार राछस द्रबुद्ध । किन्नो पयान उत्तर सक्रुद्ध । मंडे महीप मावास थान । खंडे अखंड खूनी खुरान ॥ ५१० ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके कलकीवतारे पूरब जीत बिजय नाम समापत ध्याइ तीजा ॥ ३ ॥

अथ चौबीसवाँ अवतार कथनं ॥

॥ पाधरी छंद ॥ इह भाँत पूरब पट्टन उपट्ट । खंडे अखंड कट्टे अकट्ट । फट्टे अफट्ट खंडे अखंड । बज्जे निशान मच्चिओ घमंड ॥ ५११ ॥ जोरे सुजंग जोधा जुझार । जो तजे बाण गज्जत लुझार । भाजंत भीर भहरंत भाइ । भभकंत घाइ डिग्गे अघाइ ॥ ५१२ ॥ साजंत साज बाजत तुफंग । नाचंत भूत भै धर सुरंग । बबकंत बिताल कहकंत काल । डमकंत डउर मुकतंत ज्वाल ॥ ५१३ ॥ भाजंत भीर तज बीर खेत । नाचंत भूत बैताल प्रेत । क्रीड़ंत ईस पोअंत कपाल । निरखत्त बीर छकि बरत बाल ॥ ५१४ ॥ धावंत बीर बाहंत घाव । नाचंत भूत गावंत चाव । डमकंत डउर

ने क्रोध पूर्व-उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया और कई खतरनाक राजाओं को मारकर उनके स्थान पर दूसरों को राजा बना दिया ॥ ५१० ॥

॥ श्री बचित्र नाटक के कल्कि-अवतार में पूर्व विजय नामक तीसरा अध्याय समाप्त ॥ ३ ॥

चौबीसवाँ अवतार-कथन

॥ पाधरी छंद ॥ इस प्रकार पूर्व के नगरों में अकाट्य वीरों को नष्ट कर और अखण्डित तेज वालों को खण्डित कर गर्वपूर्वक कल्कि-अवतार के नगाड़े बजने लगे ॥ ५११ ॥ योद्धागण पुन: युद्ध के लिए जुट गए और गरजते हुए बाण-वर्षा करने लगे । कायर भरभरा कर भागने लगे और उनके घाव फूटने लगे ॥ ५१२ ॥ वीर सुसज्जित थे, वाद्य बजने लगे, भूत सुन्दर तरीके से नाचने लगे, बैताल बमकने लगे, कालीदेवी अट्टहास करने लगी और ज्वालाएँ छोड़ता हुआ डमरू डमडमाने लगा ॥ ५१३ ॥ डरपोक युद्धस्थल छोड़ भागने लगे, भूत, प्रेत, बैताल नाचने लगे, क्रीड़ा करते हुए शिव मुण्डमालाएँ पिरोने लगे और ल लसापूर्वक देखते हुए वीर अप्सराओं का वरण करने लगे ॥ ५१४ ॥ वीर घाव लगाते हुए टूट पड रहे हैं और भूत उत्साहपूर्वक रहे हैं।

नाचंत ईस । रीझत ह्रिमिंद्र पोअंत सीस ॥ ५१५ ॥ गंध्रब्ब सिद्ध चारण प्रसिद्ध । कथंत काब सोभंत सिद्ध । गावंत बीन बीना बजंत । रीझंत देव मुन मन डुलंत ॥ ५१६ ॥ गुंजत गंजिद्र हैवर असंख । बुल्लत सुबाह मारू बजंत । उठंत नाद पूरत दिसाण । डल्लत महेंद्र महि धरम हाण ॥ ५१७ ॥ खुल्लंत खेत खूनी खतंग । छुट्टंत बाण जुट्टे निशंग । भिद्दंत मरम जुज्झत सुबाह । घुंमंत गैण अच्छ्री उछाह ॥ ५१८ ॥ सरखंत सेल बरखंत बाण । हरखंत हूर परखंत जुआण । बाजंत ढोर डउरू कराल । नाचंत भूत भैरो कपाल ॥ ५१९ ॥ हरड़ंत हत्थ खरड़ंत खोल । टिरड़ंत टीक झिरड़ंत झोल । दरड़ंत दीह दानो दुरंत । हरड़ंत हास हस्सत महंत ॥ ५२० ॥ ॥ उतभुज छंद ॥ रहा संकपालं । सुबासं छतालं । प्रभासं जुवालं । अनासं करालं ॥ ५२१ ॥ महारूप धारे । दुरं (मू०ग्रं०६०५) दुख तारे । शरणी उधारे । अघी पाप टारे ॥ ५२२ ॥ दिपै जोत ज्वाला । किधौ ज्वाल माला ।

शिव डमरू बजाते हुए नाच रहे हैं और सिरों की मालाएँ पिरो रहे हैं ॥५१५॥ प्रसिद्ध गंधर्व, चारण और सिद्धगण युद्ध की प्रशंसा में काव्य-रचना कर रहे हैं। देवगण वीणा बजाते हुए मुनियों के मन को प्रसन्न कर रहे हैं ॥ ५१६ ॥ असंख्य हाथी-घोड़ों की ध्वनि हो रही है और मारू वाद्य बज रहे हैं। ध्वनि सभी दिशाओं में फैल रही है और धर्म की हानि को अनुभव कर शेषनाग डोलायमान हो रहा है ॥ ५१७ ॥ युद्धस्थल में खूनी तलवारें खुल गई हैं और अभय होकर बाण चलाये जा रहे हैं। वीर जूझ रहे हैं और उनके मर्मस्थलों का भेदन हो रहा है। आकाश में अप्सराएँ उत्साहपूर्वक घूम रही हैं ॥५१८॥ भाले और बाणों की वर्षा हो रही है और जवानों को देख अप्सराएँ हर्षित हो रही हैं। ढोल और विकराल डमरू बज रहे हैं और भूत तथा भैरव आदि नाच रहे हैं ॥ ५१९ ॥ खोलों की खड़खड़ाहट और कृपाणों की झड़झड़ाहट सुनाई पड़ रही है। भयानक दानव कुचले जा रहे हैं और गण इत्यादि हड़हड़ाकर हँस रहे हैं ॥ ५२० ॥ ॥ उतभुज छंद ॥ युद्धस्थल में सर्वकल्याण-कारी बैल पर सवारी करनेवाले शिव रूपी कल्कि-अवतार विकराल ज्वालाओं की तरह स्थित रहे ॥ ५२१ ॥ वे महान रूप धारण कर दुर्जेय दुःखों का नाश कर रहे थे, शरणागतों का उद्धार कर रहे थे और पापियों के पाप को समाप्त कर रहे थे ॥ ५२२ ॥ वे ज्वाला की तरह तथा ज्वालमाला की तरह देदीप्यमान हो रहे थे उनका रूप अग्नि के समान तेजयुक्त

मनो ज्वाल आला। सरूपं कराला ॥ ५२३ ॥ धरे खग्ग पाणं। तिहूँ लोक माणं। दयं दोह दानं। भरे मउज मानं ॥ ५२४ ॥ ॥ अंजन छंद ॥ अजीते जीत जीत कै। अभीरी भाजे भीर ह्वै। सिधारे चीन राज पै। सथोई सरब साथ कै ॥ ५२५ ॥ तमंके राजधारी कै। रजीले रोहवारी कै। करीले काम रूपा के। कबोज काम कारी के ॥५२६॥ ढमंके ढोल ढालो के। डमंके डंक वारो के। धमंके नेके बाजा दे। तमंके तीर ताजा दे ॥ ५२७ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ जीते अजीत मंडे अमंड। तोरे अतोर खंडे अखंड। भंने अभंन भज्जे अभज्जि। खाने खवास मावास तज्जि ॥ ५२८ ॥ संकड़े सूर भंभरे भीर। निरखंत जोध रीझंत हूर। डारंत सीस केसर कटोर। म्रिगमद गुलाब करपूर घोर ॥ ५२९ ॥ इह भाँत जीत तीनं दिसाण। बज्ज्यो सु कोप उत्तर निशाण। चल्ले सु चीन माचीन देस। सामंत सुद्ध रावली भेख ॥ ५३० ॥ बज्जे बजंत्र गज्जे सुबाह। सावंत देख अछ्री उछाह। रीझंत देव अद्देव सरब। गावंत गीत तज दीन गरब ॥ ५३१ ॥

था ॥ ५२३ ॥ तीनों लोकों के स्वामी ने हाथ में खड्ग लिया और मौज में आकर दानवों को नष्ट कर डाला ॥ ५२४ ॥ ॥ अंजन छंद ॥ अजेय लोगों को जीतकर, वीरों को भी कायरों की तरह भगाकर, सभी साथियों को साथ लेकर चीन राज्य में जा निकले ॥ ५२५ ॥ राज्य धारण करनेवाले उस कल्कि-अवतार का रोष और तमतमाहट भी विचित्र है। उसके सामने कामरूप के कटीले नयनों वाली स्त्रियाँ और कम्बोज प्रदेश का सौन्दर्य भी फीका है ॥ ५२६ ॥ उसकी डमडमाहट, धमधमाहट और तमतमाहट विचित्र है ॥५२७॥ ॥ पाधरी छंद ॥ उसने अजेयों को जीता, अनस्थापितों को पुनः स्थापित किया। अटूट बने रहनेवालों को तोड़ दिया और अखण्ड कहे जानेवालों को खण्ड-खण्ड कर दिया। अभंजनशीलों को तोड़ दिया और जो सामने अड़नेवाले थे उनको बरबाद कर दिया ॥ ५२८ ॥ शूरवीरों और कायर योद्धाओं को देखकर अप्सराएँ रीझ रही थीं। वे सभी कल्कि-अवतार के सिर पर गुलाब, कपूर, केशर आदि छिड़क रही थीं ॥ ५२९ ॥ इस प्रकार तीनों दिशाओं को जीतकर उत्तर दिशा की ओर नगाड़ा बज उठा। वे चीन और मंचूरिया देशों की ओर चले जहाँ पर रावलपन्थी वेश वाले लोग थे ॥ ५३० ॥ रणवाद्य बजने लगे और वीर गरजने लगे। सामन्तों को देखकर अप्सराएँ उत्साहित होने लगीं। देव अदेव सभी प्रसन्न होने लगे और सभी अपने गर्व को गीत गाने

सजिओ सु सैण सुण चीन राज । बज्जे बजंत सरबं समाज । चल्ले अचल्ल जव्वाल जुद्ध । बरखंत बाण भर लोह क्रुद्ध ॥ ५३२ ॥ खुल्ले खतंग खूनी खलिहाण । उज्झरे जुद्ध जोधा महाण । धुकंत धुंध घुमंत घाइ । चिकंत चार चावडी सु चाइ ॥ ५३३ ॥ हस्संत हास काली कराल । भभकंत भूत भैरो बिसाल । लागंत बाण भाखंत मास । भाजंत भीर हुइ हुइ उदास ॥ ५३४ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ चड़्यो चीन राजं । सजे सरब साजं । खुले खेत खूनी । चड़े चोप दूनी ॥ ५३५ ॥ जुटे जोध जोधं । तजे बाण क्रोधं । तुटै अंग भंगं । भ्रमे अंग जंगं ॥ ५३६ ॥ नचे ईस सीसं । मिलै सैण ईसं । करै चित्र चारं । तजे बाण धारं ॥ ५३७ ॥ मडे जोध जोधं । तजे बाण क्रोधं । नदी स्रोण पूरं । फिरी गैण हूरं ॥ ५३८ ॥ हसै मुंड माला । तजै जोग ज्वाला । तजै बाण ज्वाणं । ग्रसे दुष्ट प्राणं ॥ ५३९ ॥ गिरे घूँम भूमी । उठी धूर धूँमी । सु भे रेत खेतं । नचे भूत प्रेतं ॥ ५४० ॥ (मू०ग्रं०६०६) मिल्यो चीन राजा । भए सरब काजा । लयो संग कैकै । चल्यो

लगे ॥ ५३१ ॥ चीन के राजा ने भी सेना की खबर सुनकर सारे समाज में रणवाद्य बजवा दिए । सभी योद्धा युद्ध के लिए चल पड़े और क्रोधित होकर बाण-वर्षा करने लगे ॥ ५३२ ॥ खूनी खड्ग खुल गए और युद्ध में महान योद्धा मरने लगे । घाव लगने लगे और सैनिकों के पैरों की धूल से धुंध छाने लगी । चारों ओर चील्हों की चीत्कार सुनाई पड़ने लगी ॥५३३॥ विकराल काली हँसने लगी और विशाल भैरव तथा भूत भभकने लगे । बाण लगने लगे । भूत-प्रेत मांस खाने लगे और कायर उदास हो भागने लगे ॥ ५३४ ॥ ॥ रसावल छंद ॥ चीन का राजा चढ़ आया । वह सब प्रकार से सुसज्जित था । दुगुने उत्साह से खूनी खड्ग म्यानों से निकल आये ॥ ५३५ ॥ योद्धा क्रोधित होकर बाण चलाने लगे और अंग-भंग करते हुए युद्ध में भ्रमण करने लगे ॥ ५३६ ॥ सेना में मिलकर शिव भी नृत्य करने लगे और विचित्र प्रकार से बाण-वर्षा करने लगे ॥ ५३७ ॥ युद्ध में योद्धा क्रोधित हो बाण चलाने लगे । रक्त की नदियाँ भर उठीं और अप्सराएँ आकाश में विचरण करने लगीं ॥ ५३८ ॥ कालीदेवी हँसती हुई योगज्वाला निकालने लगी । जवानों के बाणों से दुष्टों के प्राण नष्ट होने लगे ॥ ५३९ ॥ वीर चक्कर खाकर भूमि पर गिर रहे हैं और भूमि से धूल उड़ रही है । वीर युद्धस्थल में शोभायमान हो रहे हैं और भूत-प्रेत नाच रहे हैं ५४० चीन का राजा मिला और

अग्र ह्वैकै ॥ ५४१ ॥ ॥ छपै छंद ॥ लए संग त्रिप सरब बजे बिजई दुंदभ रण । सुभे सूर संग्राम निरख रीझई अपछर गण । छके देव अदेव जके गंध्रब जच्छ बर । चके भूत अरु प्रेत सरब बिदिआ धर नर बर । खंकड़ीय काल क्रूरा प्रभा बहु प्रकार उसतत करिय । खंडन अखंड चंडी महा जय जय जय सबदोच्चरीय ॥५४२॥ भिड़िय भेड़ लड़खड़िय मेरु झड़पड़ी पत्र बण । डुलिय इंद्र तड़फड़ फनिंद सुकुड़िय द्रुवण गण । चकिओ गइंद धधकय चंद भंभजिग दिवाकर । डुलग सुमेर डग्गग कुमेर सभ सुक्कग साइर । तंत जग ध्यान तब धूर जटी सहि न भार सक्कग थिरा । उच्छलग नीर पच्छुलग पवन सु डग डग डग कंपगु धरा ॥ ५४३ ॥ चल्लग बाणु रुकग्ग दिसाण । पब्बय पिसान हुअ । डिगग्घ बिंद उच्छलघ सिंध कंपक सुन मुनि ध्रुअ । ब्रहम बेद तज भज गइंद्र इंद्रासणि तज्जग । जदिन क्रूर कलकी वतार क्रुद्धत रण गज्जग । उछरंत धूर बाजन खुरीय सभ

सभी काम हो गये । वह कइयों को साथ लेकर आगे की तरफ चला ॥५४१॥ ॥ छप्पय छंद ॥ राजा ने सबको साथ लिया और विजय की दुंदुभियाँ बजने लगीं । शूरवीर युद्धस्थल में शोभायमान होने लगे और उन्हें देखकर अप्सराएँ मोहित होने लगीं । देव, दानव, गंधर्व सभी आश्चर्य से भरकर प्रसन्न होने लगे । सभी भूत-प्रेत एवं विद्याधारी श्रेष्ठ नर चकित होने लगे । क्रूर काल रूप में श्रीभगवान गरजने लगे और उनकी विभिन्न प्रकार से स्तुति की जाने लगी । उस चंडिकास्वरूप अखंडित वीरों का भी खंडन करनेवाले श्रीभगवान की जय-जयकार का शब्द उच्चरित होने लगा ॥ ५४२ ॥ सेनाएँ भिड़ उठीं, सुमेरु पर्वत लड़खड़ा उठा और बन के पत्ते कँपकँपा कर झड़ पड़े । इन्द्र और शेषनाग व्याकुल हो तड़पने लगे तथा अन्य गण आदि भय से सिकुड़ गये । दिशाओं के हाथी चकित हो गये, चंद्रमा धधकने लगा और सूर्य इधर-उधर दौड़ने लगा । सुमेरु पर्वत डोलने लगा । कच्छप डगमगाने लगा तथा सभी समुद्र भयाक्रान्त होकर सूख गये । शिवजी का ध्यान छूट गया और धरती का भार स्थिर न रह सका । जल उछलने लगा, पवन बहने लगे और धरती डगमगाते हुए काँपने लगी ॥ ५४३ ॥ बाणों के चलने से दिशाएँ ढँक गयीं और पर्वत पिसने लगे । समुद्र उछलने लगा और ध्रुव मुनि भी युद्ध की भीषणता देख-सुनकर काँप उठे । ब्रह्मा वेद छोड़कर भाग गये, हाथी भाग गये और इन्द्र भी आसन त्याग गये । जिस दिन क्रूर कल्कि क्रोधित होकर युद्ध में गरजने लगे उस दिन घोड़ों के खुरों की धूल ने सारा आकाश-

अकाश मग छाइ लीअ । जण रचिय लोक कर कोप हरि अष्ट कास खटु धरण कीअ ॥ ५४४ ॥ चकत चार चक्रवै चक्रत सिर सहंस शेश फण । धकत मच्छ मावास छोड रण भजग द्रवण गण । भ्रमत काक कुंडलीअ गिद्ध उघहू ले उडीय । बमत ज्वाल खंकाल लुत्थ हत्थो नही छुटीय । टुट्टंत टोप फुटंत जिरह दसत राग पखर तुरीय । भज्जंत भीर रिज्झंत मन निरख सूर हूरैं फिरीय ॥ ५४५ ॥ ॥ माधो छंद ॥ जब कोपा कलकी अवतारा । बाजत तूर होत झनकारा । हाहा माधो बान कमान क्रिपान सँभारे । पैठे सुभट हथ्यार उघारे ॥ ५४६ ॥ लीन मचीन देस का राजा । ता दिन बजे जुझाऊ बाजा । हाहा माधो देस देस के छत्र छिनाए । देस बदेस तुरंग फिराए ॥ ५४७ ॥ चीन मचीन छीन जब लीना । उतर देस पयाना कीना । हाहा माधो कह लौ गनो उत्तरी राजा । सभ सिर डंक जीत का बाजा ॥ ५४८ ॥ इह बिध जीत जीत कै राजा । सभ सिर नाद बिजै का बाजा । हाहा माधो जह

मार्ग ढंक लिया । ऐसा लग रहा था, मानो भगवान ने क्रोधित होकर आठ आकाश और छः धरतियों का अतिरिक्त सृजन किया हो ॥ ५४४ ॥ चारों ओर सभी आश्चर्यचकित और शेषनाग भी हैरानी में हैं । मत्स्यों का हृदय भी धकधकाने लगा और गण इत्यादि युद्ध छोड़कर भाग खड़े हुए । कौवे और गिद्ध कुंडलाकार रूप से लाशों के ऊपर मँडराने लगे और काल-रूप शिव हाथों से मृतकों को न छोड़ते हुए युद्धस्थल में बमक रहे हैं । शिरस्त्राण टूट रहे हैं, कवच फूट रहे हैं और कवचधारी घोड़े भी बिदक रहे हैं । कायर भाग रहे हैं और शूरवीर अप्सराओं को देखकर उन पर मोहित हो रहे हैं ॥ ५४५ ॥ ॥ माधो छंद ॥ जब कल्कि-अवतार क्रोधित हुए तब रणवाद्य बजने लगे और झंकार होने लगे । श्रीभगवान ने बाण, कृपाण, कमान को सँभाला और शस्त्रों को निकालते हुए शूरवीरों में जा घुसे ॥ ५४६ ॥ मंचूरिया के राजा को जिस दिन जीता उस दिन मारू बाजे बजने लगे । श्रीभगवान ने हाहाकार मचाते हुए देश-देशान्तरों के छत्र छीन लिये और देश-विदेश में अपने घोड़े को घुमा दिया ॥ ५४७ ॥ जब चीन और मंचूरिया को जीत लिया तब श्री भगवान ने उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया । हे भगवान ! मैं कहाँ तक उत्तर के राजाओं की गिनती करूँ, सबके सिर पर विजय का डंका बज गया ॥ ५४८ ॥ इस प्रकार राजाओं को जीत-जीतकर विजय का बाजा बजा दिया गया । हे भगवान ! वे सब देश छोड़कर जहाँ-तहाँ भाग चले और आपने

तह छाड देस भज चले । जित तित दीह दनुज दल मले (मू०ग्रं०६०७) ।। ५४६ ।। कीने जग्ग अनेक प्रकारा । देस देस के जीत त्रिपारा । हाहा माधो देस बिदेस भेट ले आए । संत उबार असंत खपाए ।। ५५० ।। जह तह चली धरम की बाता । पापहि जात भई सुध साता । हाहा माधो कलि अवतार जीत घर आए । जह तह होवन लाग बधाए ।।५५१।। तब लौ कलजुगांत नियरायो । जह तह भेद सभन सुन पायो । हाहा माधो कलकी बात तबै पहचानी । सतिजुग की आगमता जानी ।। ५५२ ।। ।। अनहद छंद ।। सतिजुग आयो । सभ सुन पायो । मुन मन भायो । गुन गन गायो ।। ५५३ ।। सभ जग जानी । अकथ कहानी । मुनि गनि मानी । किनहु न जानी ।। ५५४ ।। सभ जग देखा । अन अन भेखा । सु छबि बिसेखा । सहित भिखेका ।। ५५५ ।। मुन मन मोहै । फुल गुल सोहे । सम छब को है । ऐस बन्यो है ।। ५५६ ।। ।। तिलोकी छंद ।। सतिजुग आदि कलजुग अंतह । जह जह आनंद संत महंतह । जह तह गावत बजावत ताली । नाचत शिवजी हसत जवाली ।। ५५७ ।। बाजत डउरू राजत तंबी ।

यहाँ-वहाँ दुर्जनों को नष्ट कर दिया ।। ५४९ ।। अनेक प्रकार से यज्ञ किये । देश-देशान्तरों के राजाओं को जीता । हे भगवान् ! देश-विदेशों से राजा भेंट लेकर आए और आपने संतों का उद्धार कर असंतों का नाश किया ।।५५०।। जहाँ-तहाँ धर्म-चर्चा चलने लगी और पाप समूल नष्ट हो गया । हे भगवान ! कल्कि-अवतार जीतकर वापस घर आए और जहाँ-तहाँ बधाई-गीत गाये जाने लगे ।। ५५१ ।। तब तक कलियुग का अन्त समीप आ गया और इस रहस्य को सभी ने सुना । कल्कि भगवान ने भी इस भेद को समझा और अनुभव किया कि सतयुग आनेवाला है ।। ५५२ ।। ।। अनहद छंद ।। सबों ने सुना कि सतयुग आ गया । मुनि प्रसन्न हुए और गण आदि गुण गाने लगे ।। ५५३ ।। इस रहस्यमय तथ्य को सबने जाना । मुनिगणों ने माना पर इसको किसी ने अनुभव नहीं किया ।। ५५४ ।। सारे संसार ने उस रहस्यमय श्रीभगवान को देखा जिसकी छवि विशिष्ट प्रकार की थी ।। ५५५ ।। मुनियों के मन को मोहित करनेवाले वे फूल के समान शोभायमान हैं और उनके सौन्दर्य के समान अन्य कौन बना है ? ।। ५५६ ।। ।। तिलोकी छंद ।। कलियुग के अन्त होने से सतयुग आया और संतगण जहाँ-तहाँ आनन्द मनाने लगे । वे गाने और बजाने लगे तथा शिव-पार्वती भी हँसने-नाचने लगे ५५७ डमरू

रीझत राजं सीझस अबो । बाजत तूरं गावत गीता । जह तह कलकी जुद्धन जीता ॥ ५५८ ॥ ॥ मोहन छंद ॥ अरि मारि कै रिप टारिकै त्रिप मंडली संग कै लिओ । जत तत्र जिते तितो अति दान मान सभै दिओ । सुरराज ज्यों त्रिपराज हुइ गिर राज से भट मारकै । सुख पाइ हरख बढाइकै ग्रहि आइयो जसु संग लै ॥ ५५९ ॥ अर जीत जीत अभीत ह्वै जग होम जग्ग घने करे । देस देस असेस भिच्छक रोग सोग सभै हरे । कुरराज जिउँ दिजराज के बहु भाँत दारद मार कै । जगु जीत संभर को चल्यो जग जित्त कित्त बिथार कै ॥ ५६० ॥ जग जीत बेद बिथारके जग सुअरथ अरथ बितारिअं । देस देस बिदेस मै नभ भेज भेज हकारिअं । धर दाड़ जिउँ रण गाड़ हुइ तिरलोक जीत सभै लिए । बहु दान दै सनमान सेवक भेज भेज तहाँ दिए ॥ ५६१ ॥ खल खंड खंड बिहंड कै अरि दंड दंड बडो दियो । अरब खरब अदरब दिरब सु जीतकै अपनो कियो । रणजीत जीत अजीत जोध नछत्र अत्र छिनाइअं । सरदार (मू०ग्रं०६०८) बिसति चार कलि अवतार छत्र फिराइअं ॥ ५६२ ॥ ॥ मथान छंद ॥ छाजै महा जोत ।

एवं अन्य वाद्य बजने लगे और राजा तथा शस्त्रधारी वीर प्रसन्न होने लगे। गीत गाये जाने लगे और जहाँ-तहाँ कल्कि-अवतार के युद्धों की चर्चा होने लगी ॥ ५५८ ॥ ॥ मोहन छंद ॥ शत्रुओं को मारकर और राजाओं की मंडली को साथ लेकर श्री कल्कि-अवतार ने यत्र-तत्र अत्यन्त दान इत्यादि किया। इन्द्र के समान शक्तिशाली राजाओं को मारकर श्रीभगवान प्रसन्न होकर और यश लेकर अपने घर वापस आए ॥ ५५९ ॥ शत्रुओं को जीतकर और अभय होकर अनेकों होम यज्ञ किये और देश-विदेश के भिखारियों के रोग-शोक का निवारण किया। कुरुवंश के राजाओं के समान ब्राह्मणों की दरिद्रता को समाप्त कर श्रीभगवान संसार को जीतकर अपनी विजय-कीर्ति फैलाते हुए संभल नगर की तरफ़ चल पड़े ॥ ५६० ॥ जगत को जीतकर वेद की महिमा का विस्तार कर और अच्छे कामों को सोचकर सभी देश-विदेश के राजाओं को श्रीभगवान ने लड़कर जीत लिया। यमदाढ़ बनकर श्रीभगवान ने त्रिलोकी को जीत लिया और जहाँ-तहाँ सेवकों को बहुत सा दान आदि देकर सम्मानपूर्वक भेज दिया ॥ ५६१ ॥ दुर्जनों को खण्डित और दण्डित कर अरबों-खरबों के मूल्य का द्रव्य श्रीभगवान ने जीत लिया। योद्धाओं को जीतकर उनके शस्त्र और मुकुट जीत लिये और चारों तरफ कल्कि

भानं मनो दोत। जगि शंक तज दीन। मिल बंदना कीन॥ ५६३॥ राजे महाँ रूप। लाजै सभै भूप। जग आन जानीस। मिल भेट लै ईस॥ ५६४॥ सोभं महाराज। अछी रहै लाज। अति रीझ मधु बैन। रस रंग भरे नैन॥ ५६५॥ सोहत अनूप पाछ। काछे मनो काछ। रीझैं सुरी देख। रावल्लड़े भेख॥ ५६६॥ देखे जिनं नैक। लागै तिसै ऐख। रीझै सुरी नार। देखै धरे प्यार॥ ५६७॥ रँगे महा रंग। लाजै लखि अनंग। चित्तं चिरं शत्र। लग्गैं जनो अत्र॥ ५६८॥ सोभै महा सोभ। अच्छी रहै लोभ। आँजें इसे नैन। जागे मनो रैन॥ ५६९॥ रूपं भरे राग। सोभं सो सुहाग। काछे नटं राज। नाचै मनो बाज॥ ५७०॥ आँजे मनो बान। कैधौ धरे सान। जाने लगे जाहि। याकै कहै काहि॥ ५७१॥ ॥ सुखदा ब्रिद छंद॥ कि काछं काछ धारी हैं। कि राजा अधकारी हैं। कि भाग के सुहाग हैं। कि रंगो अनराग हैं॥ ५७२॥ कि छोभै छत्रधारी छै। कि छत्री अत्रधारी छै। कि आँजे बान बानी

का छत्र घूमने लगा॥ ५६२॥ ॥ मथान छंद॥ सूर्य के समान उनकी ज्योति जगमगाने लगी। सारे संसार ने शंकारहित होकर उनकी वन्दना की॥५६३॥ उनके महान रूप के सामने सभी राजागण लज्जित हो उठे। सभी ने हार मान ली और उनको भेंट प्रस्तुत की॥ ५६४॥ महाराज की शोभा के समान वीर लजाने लगे, उनके वचन बहुत मधुर और नयन रस-रंग से भरे हुए हैं॥ ५६५॥ उनका शरीर इतना सुन्दर है कि मानो उसे काट-छाँट कर बनाया गया हो। देवस्त्रियाँ तथा अन्य साधूगण प्रसन्न हो रहे हैं॥ ५६६॥ जिसने तनिक भी देखा उसकी आँखें उन्हीं पर लगी रहीं। देवस्त्रियाँ उन पर मोहित होकर उन्हें प्रेमपूर्वक देख रही हैं॥ ५६७॥ सौन्दर्य के रंग में रँगे हुए श्रीभगवान को देखकर कामदेव भी लज्जित हो रहे हैं। शत्रु मन में ऐसे भयभीत हैं कि मानो उन्हें शस्त्रों से चीर डाला गया हो॥ ५६८॥ उनकी महान शोभा को वीर ललचाकर देख रहे हैं। उनके नेत्र इस प्रकार से अंजन युक्त एवं काले हैं कि मानो कई रातों के जगे हुए हों॥ ५६९॥ रूप से एवं प्रेम से भरे वे इस प्रकार शोभायमान हो रहे हैं मानो नटराज हो॥ ५७०॥ काले बाण धनुष पर चढ़े हुए हैं और वे शत्रुओं को जा लगते हैं॥ ५७१॥

सुखदावृद छंद वे सारे संसार के रचयिता राजा अधिकारी भाग्य-विधाता और प्रेम का भी जीवन हैं ५७२ वे छत्रधारी अस्त्र कसानेवाले

से। कि काछी काछकारी हैं ॥ ५७३ ॥ कि कामी काम बान से। कि फूले फूल माल से। कि रंगे रंग राग से। कि सुंदर सुहाग से ॥ ५७४ ॥ कि नागनी के एस हैं। कि म्रिगीन के नरेस छै। कि राजा छत्रधारी हैं। कि काली के भिखारी छै ॥ ५७५ ॥ ॥ सोरठा ॥ इम कलकी अवतार जीते जुद्ध सभै न्रिपति। कीनो राज सुधार बीस सहंस दस लख बरख ॥ ५७६ ॥ ॥ रावण बाद छंद ॥ गही शमशेर। कियो जंग जेर। दए मत्ति फेर। न लागी बेर ॥ ५७७ ॥ दयो निज मंत्र। तजे सभ तंत्र। लिखे निज जंत्र। सु बैठ इकंत्र ॥ ५७८ ॥ ॥ बान तुरंगम छंद ॥ बिबध रूप सोभै। अनक लोग लोभै। अमित तेज ताहि। निगम गनत जाहि ॥ ५७९ ॥ अनिक भेख ताँ के। बिबध रूप बाँके। अनूप रूप राजे। बिलोक पाप भाजे ॥ ५८० ॥ बिसेख प्रबल जे हुते। अनूप रूप संजुते। अमित अरि घावहीं। जगत जसु पावहीं ॥ ५८१ ॥ अखंड बाहु है बली। सुभंत जोत निरमली। (पू०पं०६०६) सु होम जग्ग को करैं। परम पाप को हरैं ॥ ५८२ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ जग जीत्यो जब

वीर, सौन्दर्य से परिपूर्ण और सारे संसार के रचयिता हैं ॥५७३॥ वे कामदेव के समान कामी, फूल के समान फूले हुए और सुन्दर गीत के समान प्रेम-रंग में रँगे हुए हैं ॥ ५७४ ॥ वे नागिन के लिए सर्प, मृगियों के लिए मृग, राजाओं के लिए छत्रधारी और कालीदेवी के सामने उसके भक्त हैं ॥ ५७५ ॥ ॥ सोरठा ॥ इस प्रकार कल्कि-अवतार ने युद्ध में सभी राजाओं को जीत लिया और दस लाख, बीस हज़ार वर्षों तक राज्य किया ॥ ५७६ ॥ ॥ रावण वाद छंद ॥ उन्होंने हाथ में तलवार पकड़ी, युद्ध में सबको मार गिराया और भाग्य पलटते उन्हें देर न लगी ॥ ५७७ ॥ सबको अपना मंत्र दिया। सभी तंत्रों का त्याग किया और एकान्त में बैठकर अपने यंत्रों को निर्माण किया ॥ ५७८ ॥ ॥ वाणतुरंगम छंद ॥ उनके विभिन्न रूपों पर अनेकों लोग मोहित होने लगे। वेदभाषा में उनका तेज अपरिमित था ॥ ५७९ ॥ उनके अनेक वेश, रूप और शोभा को देखकर पाप भाग खड़े हुए ॥ ५८० ॥ जो अनेक रूपों से संयुक्त विशेष बलशाली लोग थे उन अगणित शत्रुओं को मारकर श्रीभगवान ने जगत में यश प्राप्त किया ॥ ५८१ ॥ श्रीभगवान अखण्ड भुजाओं वाले महाबली हैं और उनकी निर्मल ज्योति शोभायमान हो रही है वे होम यज्ञ को करते हुए पापो का हरण कर रहे हैं ५८२ तोमर छन्द जब

सरब । तब बाढ्यो अति गरब । दिय काल पुरख बिसार । इह भांत कीन बिचार ॥ ५८३ ॥ बिन मोहि दूत्र न और । अस मानियो सभ ठउर । जगु जीत कीन गुलाम । आपन जपायो नाम ॥ ५८४ ॥ जग ऐस रीत चलाइ । सिर अत्र पत्र फिराइ । सभ लोग आपन मान । तर आंख अउर न आन ॥ ५८५ ॥ नहि कालपुरख जपंत । नहि देव जाप भणंत । तब काल देव रिसाइ । इक अउर पुरख बनाइ ॥ ५८६ ॥ रच्चि अस महिदी मीर । रिसवंत हाठ हमीर । तिह तउन को बधु कीन । पुन आप मो किय लीन ॥ ५८७ ॥ जग जीत आपन कीन । सभ अंत काल अधीन । इह भाँत पूर सुधार । भए चौबिसे अवतार ॥ ५८८ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे चतरबीसवाँ अवतार बरननं समापतम ॥ २४ ॥

उन्होंने सारा संसार जीत लिया तो उनका गर्व भी अत्यन्त बढ़ गया। उन्होंने भी अकालपुरुष परमात्मा को भुला दिया और यह कहने लगे ॥५८३॥ मेरे बिना अन्य दूसरा कोई नहीं है और ऐसा ही सब स्थानों पर माना जाता है। मैंने जगत को जीतकर गुलाम बना लिया है और सबसे अपना नाम जपाया है ॥ ५८४ ॥ जगत में मैंने परंपराओं को पुनः जीवन दिया है और सिर पर छत्र झुलाया है। सब लोग मुझे अपना मानते हैं और कोई अन्य उनकी आँख के नीचे नहीं ठहरता ॥ ५८५ ॥ कोई अकालपुरुष का जाप तथा देवी-देवता का जाप नहीं करता है, यह देखकर अकालपुरुष ने क्रोधित होकर एक अन्य पुरुष की रचना की ॥ ५८६ ॥ मेंहदी मीर की रचना की जो कि महान क्रोधित होनेवाला तथा हठी था। उसने कल्कि-अवतार का वध कर दिया और इस प्रकार भगवान ने कल्कि-अवतार को पुनः अपने में लीन कर लिया ॥ ५८७ ॥ जिन्होंने जगत को जीतकर अपना बनाया, वे सब भी अंत में काल के वश में ही हैं। इस प्रकार पूर्ण सुधार के साथ चौबीस अवतार संपूर्ण हुए ॥ ५८८ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ में चौबीसवाँ अवतार-वर्णन समाप्त ॥ २४ ॥

अथ महिदी मीर बध कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ इह भाँत कै तिह नास । किअ सत्तजुग परगास । कलजुग सरब बिहान । निज जोत जोत समान ॥ १ ॥ महिदी भर्यो तब गरब । जग जीतयो जब सरब । सिर अत्र पत्र फिराइ । जग जेर कीन बनाइ ॥ २ ॥ बिन आप जान न और । सभ रूप अउ सभ ठउर । जिन एक दिशट न आन । तिस लीन काल निदान ॥ ३ ॥ बिन एक दूसर नाहि । सभ रंग रूपन माहि । जिन एक को न पछान । तिह ब्रिथा जनम बितान ॥ ४ ॥ बिन एक दूसर न और । जल बा थले सभ ठउर । जिन एक सत्ति न जान । सो जून जून भ्रमान ॥ ५ ॥ तज एक जाना दूज । मम जान तास न सूझ । तिह दूख भूख पिआस । दिन रैंन सरब उदास ॥ ६ ॥ नहि चैन ऐन सु वाहि । नित रोग होवत ताहि । नित दूख भूख मरंत । नहि चैन दिउस बितंत ॥७॥ तन पाद कुष्ट चलंत । बपु गलत नित्त गलंत । नहि नित्त देह

मेंहदी मीर वध-कथन

॥ तोमर छंद ॥ इस प्रकार उसका नाश कर सतयुग का प्रकाश किया गया। सारा कलियुग बीत गया और समान रूप से ज्योति सब ओर प्रकाशित हो उठी ॥ १ ॥ तब मीर मेंहदी भी सारे संसार को जीतकर गर्व से भर उठा। उसने भी सिर पर छत्र झुलाया और सारे संसार को अपने क़दमों में झुकाया ॥ २ ॥ वह अपने सिवा अन्य किसी को नहीं मानने लगा। जिसने एक परमात्मा को नहीं जाना वह अंत में काल से नहीं बच सका ॥ ३ ॥ एक परमात्मा के बिना सभी रंगों-रूपों में दूसरा कोई नहीं। जिसने उस एक प्रभु को नहीं पहचाना उसने अपना जन्म व्यर्थ ही व्यतीत किया ॥ ४ ॥ उस एक के बिना जल, स्थल व सभी स्थानों में अन्य दूसरा कोई नहीं है। जिसने एक सत्य को नहीं पहचाना, वह योनियो में भ्रमण ही करता रहा ॥५॥ जिसने एक को छोड़कर दूसरे को जाना-माना, मेरे विचार से वह बुद्धिहीन है। उसे दुःख, भूख, प्यास और दिन-रात की उदासी घेरे रहेगी ॥ ६ ॥ उसे कभी शांति नहीं मिलेगी। और सदैव उसे रोग घेरे रहेगी। दुःख और भूख के कारण वह नित्य मरता रहेगा और उसे कभी चैन नहीं मिलेगा ॥ ७ ॥ उसके तन में कोढ़ चल जायेगा और सारा शरीर गल जायगा। उसका

अरोग । नित पुत्र पौत्रन सोग ॥८॥ नित नास तिह परवार । नहि अंत देह उधार । नित रोग सोग ग्रसंत । म्रित स्वान अंत मरंत ॥ ९ ॥ तब जान काल प्रबीन । तिह मारिओ करि दीन । इक कीट दीन उपाइ । तिस (मू०ग्रं०११०) कान पैठो जाइ ॥ १० ॥ धसि कीट कानन बीच । तिस जीतयो जिम नीच । बहु भांत दे दुख ताहि । इह भांति मार्‌यो वाहि ॥ ११ ॥

॥ इति महिदी मीर बधह ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

अथ ब्रहमा अवतार कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ सतिजुग फिर उपराज । सभ नवतने कर साज । सभ देस अउर बिदेश । उठ धरम लाग नरेश ॥ १ ॥ कलिकाल कोप कराल । जगु जारिआ तिह ज्वाल । बिन तास और न कोइ । सभ जाप जापो सोइ ॥२॥

शरीर अरोग्य नहीं होगा और उसे पुत्र-पौत्रों का शोक सदैव सालता रहेगा ॥ ८ ॥ उसके परिवार का नाश होगा और अंत में देह का उद्धार भी नही होगा। वह हमेशा रोग और शोक से ग्रसित रहेगा। तथा अंत में कुत्ते की मौत मरेगा ॥ ९ ॥ मीर मेंहदी की गर्वपूर्ण अवस्था को अकालपुरुष ने समझकर उसको भी मारने का विचार किया। उन्होंने एक कीड़ा उत्पन्न किया जो मीर मेंहदी के कान में जा बैठा ॥१०॥ कीड़े ने कान में घुसकर उस नीच को विजित करते हुए विभिन्न प्रकार से दुःख देकर इस प्रकार मार डाला ॥ ११ ॥

॥ मेंहदी मीर-वध समाप्त ॥

ब्रह्मा-अवतार-कथन

॥ तोमर छंद ॥ सतयुग पुनः स्थापित हुआ और सभी नवीन साजसज्जाएँ प्रस्तुत हुईं। देश-विदेश के राजा धर्म के प्रति निष्ठावान हुए ॥ १ ॥ हे विकराल क्रोध वाले ! कलियुग का काल और अपनी ज्वालाओं से जगत को दग्ध करनेवाले तुम्हारे बिना अन्य कोई नहीं है। सब उसी का जाप करो ॥२॥

जे जाप है कलि नाम । तिस पूरन हुइहै काम । तिस दूख भूख न प्यास । नित हरख कहूँ न उदास ॥ ३ ॥ बिन एक दूसर नाहि । सभ रंग रूपन माहि । जिह जापिआ तिह जाप । तिन के सहाई आप ॥ ४ ॥ जे तास नाम जपंत । कबहूँ न भाज चलंत । नहि तास ताको शत्र । दिस जीत है गहि अत्र ॥ ५ ॥ तिह भरे धन सो धाम । सभ होह पूरन काम । जे एक नाम रटंत । ते न काल फास फसंत ॥ ६ ॥ जे जीव जंत अनेक । तिह मो रहे रम एक । बिन एक दूसर नाहि । जग जान लै जिय माहि ॥ ७ ॥ भव गड़न भंजनहार । है एक ही करतार । बिन एक अउर न कोइ । सभ रूप रंगो सोइ ॥ ८ ॥ कई इंद्र पान पहार । कई ब्रहम बेद उचार । कई बैठ द्वार महेश । कई शेशनाग असेस ॥९॥ कई सूर चंद सरूप । कई इंद्र की सम भूप । कई इंद्र उपिंद्र मुनिंद्र । कई मच्छ कच्छ फनिंद्र ॥ १० ॥ कई कोट क्रिशन अवतार । कई राम बार बुहार । कई मच्छ कच्छ अनेक ।

जो कलयुग में प्रभु-नाम का स्मरण करेंगे उनके कार्य पूर्ण हो जाएँगे । उनको दु:ख-भूख और उदासी कभी नहीं होगी और वे सदैव प्रसन्न रहेंगे ॥ ३ ॥ एक परमात्मा के बिना सभी रंग-रूपों में समाया हुआ अन्य दूसरा कोई नहीं। उस परमात्मा का जाप करनेवालों की सहायता वह स्वयं करता है ॥ ४ ॥ उसका नाम-स्मरण करनेवाले कभी भागते नहीं । उनको शत्रुओं का भय नहीं और वे अस्त्र-शस्त्र धारण कर दिशाओं को जीतते हैं ॥ ५ ॥ उनके घर धन से भरे रहते हैं और उनके सभी काम पूर्ण होते हैं। प्रभु का नाम-स्मरण करनेवाले कालफाँस में नहीं फँसते ॥ ६ ॥ अनेकों जीवों-जन्तुओं में वह एक परमात्मा रमण कर रहा है और सारे विश्व को मन में यह समझ लेना चाहिए कि उस एक के बिना दूसरा कोई नहीं है ॥ ७ ॥ संसार को बनाकर उसका संहार करनेवाला कर्ता एक ही प्रभु है और सभी रूप-रंगों में उस एक के बिना अन्य कोई नहीं ॥ ८ ॥ कई इन्द्र उसका पानी भरते हैं, कई ब्रह्मा वेदों का उच्चारण करते हैं, कई शिव उसके द्वार पर बैठे रहते हैं और कई शेषनाग उसकी शय्या के लिए प्रस्तुत रहते हैं ॥ ९ ॥ उसके समक्ष कई सूर्य, चन्द्र, इन्द्र के समान राजा, इन्द्र, उपेन्द्र, मुनीश्वर, मत्स्य, कच्छप और शेषनाग उपस्थित रहते हैं ॥ १० ॥ कृष्ण के अनेकों अवतार और राम के अनेकों अवतार उसके द्वार पर झाड़ू देते हैं अनेको मत्स्य और कच्छप उसके विशेष

अवलोक द्वार बिसेख ॥ ११ ॥ कई शुक्र ब्रसपत देख । कई दत्त गोरख भेख । कई राम क्रिशन रसूल । बिनु नाम को न कबूल ॥ १२ ॥ बिनु एक आस्रै नाम । नही और कौनै काम । जे मानहै गुरदेव । ते जानहै अनभेव ॥ १३ ॥ बिन तास अवर न जान । चित आन भाव न आन । इक मानियै करतार । चित होइ अंत उधार ॥ १४ ॥ बिन तास यौ न उधार । जिअ (मू०ग्रं०६११) देख यार बिचार । जो आप है कोई और । तब छूट है वह ठौर ॥ १५ ॥ जिह राग रंग न रूप । सो मानिऐ सम रूप । बिन एक ताकह नाम । नहि जान दूसर धाम ॥ १६ ॥ जो लोक अलोक बनाइ । फिर लेत आपि मिलाइ । जो चहै देह उधारु । सो भजत एकंकार ॥ १७ ॥ जिह राचियो ब्रहमंड । सभ लोक औ नव खंड । तिह किउ न जाप जपंत । किम जान कूप परंत ॥ १८ ॥ जड़ जाप ता कर जाप । जिन लोक चउदह थाप । तिस जापिऐ नित नामु । सभ होहि पूरन काम ॥१९॥ गनि चउबिसे अवतार । बहु कै कहै बिसथार । अब गनो

द्वार पर दिखाई देते हैं ॥ ११ ॥ अनेकों शुक्र, बृहस्पति, दत्त, गोरख, राम, कृष्ण और रसूल आदि हैं, परन्तु परमात्मा के द्वार पर नाम-स्मरण के बिना कोई स्वीकार नहीं होता ॥ १२ ॥ एक नाम के आश्रय के बिना अन्य कोई काम भी ठीक नहीं। जो गुरुदेव परमात्मा को मानेंगे वे ही उसके रहस्य को जान पाएँगे ॥ १३ ॥ उसके बिना किसी अन्य को नहीं जानना चाहिए और अन्य भाव को मन में नहीं बसाना चाहिए। एक परमात्मा को ही मानना चाहिए, ताकि अन्त समय में उद्धार हो सके ॥ १४ ॥ उसके बिना हे जीव! तू विचार कर देख ले, उद्धार नहीं हो सकेगा। जब तुम किसी अन्य का जाप करोगे तब वह प्रभु तुमसे छूट जायेगा ॥ १५ ॥ उस राग, रंग और रूप से परे प्रभु को ही समान रूप से मानना चाहिए। उस एक के नाम के बिना कोई अन्य घर नहीं देखना चाहिए ॥ १६ ॥ जो लोक, परलोक को बनाकर पुनः अपने में मिला लेता है; यदि तुम अपने शरीर का उद्धार चाहते हो तो उस ओंकार परमात्मा का भजन करो ॥ १७ ॥ जिसने नौ खण्डों, सर्व लोकों एवं ब्रह्मांड की रचना की है, तुम उसका जाप क्यों नहीं करते हो और क्यों जान-बूझकर कुएँ में गिरते हो ॥ १८ ॥ हे जड़ जीव! तुम उसका जाप करो जिसने चौदह लोकों की स्थापना की है। उसके नाम का जाप करने से सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं ॥ १९ ॥ चौबीस अवतारों की गणना विस्तारपूर्वक ही

उप अवतार । जिम धरे रूप मुरार ॥ २० ॥ जे धरे ब्रहमा रूप । ते कहे काब अनूप । जे धरे रुद्र वतार । अब कहों ताहि बिचार ॥ २१ ॥ कलि तास आग्या दीन । तब बेद ब्रहमा कीन । तब तास बाढ्यो गरब । सरि आप जान न सरब ॥ २२ ॥ सरि मोह कबि नहि कोइ । इक आप होइ त होइ । कछु काल की भुअ बक्र । छित डारिआ जिम सक्र ॥ २३ ॥ जब गिर्यो भू तर आन । मुख चार बेद निधान । उठ लागिआ फिर सेव । जिअ जान देव अभेव ॥ २४ ॥ दस लक्ख बरख प्रमान । किअ देव सेव महान । किम होइ मोहि उधार । अस देह देव बिचार ॥ २५ ॥ ॥ देवो बाच ॥ मन चित्त कै कर सेव । तब रीझ है गुरदेव । तब होइ नाथ सनाथ । जगनाथ दीनानाथ ॥२६॥ सुन बैन यौ मुख-चार । किअ चउक चित्त बिचार । उठि लागिआ हरि सेव । जिह भाँत भाख्यो देव ॥ २७ ॥ परि पाइ चंड प्रचंड । जिह मंड दुष्ट अखंड । ज्वालाछ लोचन धूम । हनि जास डारे भूम ॥ २८ ॥ तिस

चुकी है और अब मैं उपअवतारों की गणना करता हूँ कि श्रीभगवान ने किस प्रकार और रूप धारण किए ॥ २० ॥ ब्रह्मा ने जितने रूप धारण किए उनका अनुपम वर्णन भी मैंने काव्य में किया है और अब विचार कर मैं रुद्र के अवतार भी कहता हूँ ॥ २१ ॥ जब अकालपुरुष ने आज्ञा दी तो ब्रह्मा ने वेदों की रचना की । तब उसका गर्व बढ़ गया और वह अपने समान किसी अन्य को नहीं मानने लगा ॥ २२ ॥ उसने समझा कि मेरे समान मैं स्वयं ही हूँ तथा अन्य कोई कवि नहीं है । इस पर अकालपुरुष ने अप्रसन्न हो इन्द्र के बज्र गिराने के समान उसे धरती पर फेंक दिया ॥ २३ ॥ चारों वेदों के समुद्र ब्रह्मा जब धरती पर आ गिरे तो पुन: जी-जान से वह देवताओं की बुद्धि से भी परे रहनेवाले रहस्य रूपी परमात्मा की सेवा करने लगे ॥ २४ ॥ दस लाख वर्ष तक उसने परमात्मा की सेवा की और देवाधिदेव से कहा कि किसी प्रकार मेरा उद्धार कीजिए ॥ २५ ॥ ॥ देव उवाच ॥ (तब विष्णु ने कहा) तुम मनोयोग से जब परमात्मा की सेवा करोगे तब प्रसन्न होकर वह अनाथों के नाथ जगन्नाथ तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे ॥२६॥ ब्रह्मा यह सुन मन में विचार करता हुआ ठीक उसी प्रकार से पूजा-अर्चना करने लगा जिस प्रकार श्रीविष्णु ने उसे बताया था ॥ २७ ॥ विष्णु ने यह भी कहा कि दुष्टों का खण्डन करने वाली प्रचण्ड चण्डिका का भी ध्यान करो जिसने ज्वालाक्ष और धूम्रलोचन

जापहो जब जाप । तब होइ पूरन स्राप । उठ लाग काल जपंन । हठि त्याग आव सरंनि ॥ २९ ॥ जे जात तास सरंनि । ते है धरा मै धंन । तिन कउन कउनै त्रास । सभ होत कारज रास ॥३०॥ दस लच्छ बरख प्रमान । रह्यो ठाढ एक पगान । चित लाइ कीनी सेव । तब रीझ गे गुरदेव ॥३१॥ (मू०ग्रं०६१२) जब भेद देवी दीन । तब सेव ब्रहमा कीन । जब सेव की चित लाइ । तब रीझ गे हरिराइ ॥३२॥ तब भ्यो सु ऐस उचार । हउ आहि गरब प्रहार । मम गरब कहूं न छोर । सभ कीन जेर मरोर ॥ ३३ ॥ तैं गरब कीन सु काहि । नहि मोहि भावत ताहि । अब कहौ एक बिचार । जिम होइ तोहि उधार ॥३४॥ धरि सपत भूम वतार । तब होइ तोहि उधार । सोई मान ब्रहमा लीन । धरि जनम जगत नवीन ॥ ३५ ॥ सुर निंद उसतति तूल । इम जान जिय जिन भूल । इक कहो और बिचार । सुनि लेहु ब्रहम कुमार ॥ ३६ ॥ इक बिशन मोहि धिआन । बहु सेव मोहि रिझान । तिन माँगिआ बर ऐस । मम दीन ताकहु तैस ॥३७॥ मम तास भेद न कोइ ।

जैसे दैत्यों को मार डाला था ॥ २८ ॥ जब इन सबका जाप करोगे तभी तुम्हारा श्राप पूर्ण होगा। अकालपुरुष का जाप करो और हठ त्यागकर उसकी शरण में चलो ॥ २९ ॥ जो उसकी शरण में जाते हैं वे धरती पर धन्य हैं। उनको किसी का भय नहीं और उनके सभी कार्य हो जाते हैं ॥३०॥ दस लाख वर्षों तक ब्रह्मा एक पैर पर खड़ा रहा और जब उसने चित्त लगाकर सेवा की तब गुरुदेव प्रसन्न हुए ॥ ३१ ॥ जब देवी ने रहस्य समझाया तो ब्रह्मा ने मनोयोग से सेवा की और श्रीअकालपुरुष उस पर प्रसन्न हो उठे ॥३२॥ तब इस प्रकार की आकाशवाणी हुई कि मैं गर्व को चूर करनेवाला हूँ और मैंने सबको अपने अधीन किया है ॥ ३३ ॥ तुमने गर्व किया इसलिए तुम मुझे नहीं भाते रहे हो। अब मैं एक विचार कहता हूँ और तुम्हें बताता हूँ कि तुम्हारा उद्धार कैसे होगा ॥ ३४ ॥ तुम धरती पर सात अवतार धारण करो, तब तुम्हारा उद्धार होगा। ब्रह्मा ने यह सब स्वीकार किया और संसार में नये-नये जन्म धारण किए ॥ ३५ ॥ मेरी निन्दा और स्तुति को कभी मन से नहीं भुलाना। हे ब्रह्मकुमार ! तुम मेरी एक और बात सुनो ॥ ३६ ॥ विष्णु नामक एक देवता ने भी मेरा ध्यान करके मुझे बहुत प्रसन्न किया है। उसने भी मुझसे एक वरदान माँगा है जो कि मैंने उसे दे दिया है ॥ ३७ ॥ मुझमें

सभ लोक जानत सोइ । तिन जानहै करतार । सभ लोक अलोक पहार ॥ ३८ ॥ जब जब धरै बप सोइ । जो जो पराक्रम होइ । सो सो कथौ अबचार । सुन लेहु ब्रहम कुमार ॥ ३९ ॥ ॥ नराज छंद ॥ सु धारि मानुखी बपं सँभार राम जागिहै । बिसार शस्त्र अस्त्रणं जुझार शत्र भागिहै । बिचार जौन जौन भ्यो सुधार सरब भाखियो । हजार को न कियो करों बिचार शबद राखियो ॥ ४० ॥ चितार बैण वाकिसं बिचार बालमीकि भ्यो । जुझार रामचंद्र को बिचार चार उच्चर्‌यो । सु सपत कांडणो कथ्यो अशक्त लोक हुइ रह्यो । उतार चत्त आननो सुधार ऐस कै कह्यो ॥ ४१ ॥

॥ इति ब्रहमा प्रति आगिआ समापतं ॥

अथ बालमीक अवतार कथनं ॥

॥ नराज छंद ॥ सु धारि अवतार को बिचार दूज भाखिहै । बिशेख चत्त आनके असेख स्वाद चाखिहै । अकरथ

और उसमें कोई भेद नहीं है यह सभी लोग जानते हैं । उसे ही लोग लोक-परलोक का कर्ता और संहारक मानते हैं ॥ ३८ ॥ वह जब-जब अवतार धारण करेगा और जो-जो पराक्रम करेगा, हे ब्रह्मकुमार ! तुम उसका वर्णन करो ॥ ३९ ॥ ॥ नराज छंद ॥ तुम मनुष्य का शरीर धारण कर राम की कथा को सँभालो । राम के प्रताप के सामने अस्त्र-शस्त्रों का त्याग कर शत्रु भाग खड़े होंगे । जो-जो कृत्य होंगे उनका सुधार कर वर्णन करो और हजारों कठिनाइयों के बावजूद विचारपूर्वक शब्दों का चयन कर उन्हें काव्य में प्रयुक्त करो ॥ ४० ॥ इस बात को मानकर ब्रह्मा वाल्मीकि के रूप में प्रकट हुए और उन्होंने महाबली रामचन्द्र के कार्यों का उच्चारण किया । उसने निर्बल लोगों के लिए सात काण्डों वाली रामायण की सुधारपूर्वक संरचना की ॥४१॥

॥ इति ब्रह्मा प्रति आज्ञा समाप्त ॥

प्रथम वाल्मीकि-अवतार-कथन

॥ नराज छंद ॥ ब्रह्मा ने अवतार धारण करके मनोयोग से और विशेष रूप से अपने विचारों को व्यक्त किया उसने का स्मरण कर

देव कालिका अनिरख शबद उचरो। सु बीन बीन कै बडे प्रबीन अछ्र को धरो ॥ १ ॥ बिचार आदि ईशुरी अपार शबदु राखिऐ। चितार क्रिपा काल की जु चाहिऐ सु भाखिऐ। न शंक चित आनिऐ बनाइ आप लेहगे। सुक्रित काब कित्तको कबीस और देहगे ॥ २ ॥ समान गुंग के कवं सु कंस काबि भाख है। अकाल काल की क्रिपा बनाइ ग्रंथ राखिहै। सुभाख्य कउमदी पड़ै गुनी असेख रीझहै। बिचार आपनी क्रितं बिसेख चित्त (मू०पं०६११) खीझहै ॥ ३ ॥ बचित काब्य की कथा पवित्र आज भाखिऐ। सु सिद्ध ब्रिद्ध दाइनी सब्रिध बैण राखिऐ। पवित्र निरमली महां बचित काव्य कत्थिऐ। पवित्र शबद उपजे चरित्र को न किज्जिऐ ॥ ४ ॥ सु सेव कालदेव की अभेव जान कीजिऐ। प्रभात उट्ठ तास को महात नामु लीजिऐ। असंख दान देहगे दुरंत शत्र घाइहै। सु पान राख आपनो अजान को बचाइहै ॥ ५ ॥ न संत बार बाक है असंत जूझहै बली। बिसेख सैन भाज है सितं सरेण निरदली। कि

गीतों का उच्चारण किया और प्रवीणतापूर्वक शब्दों का चुनाव कर काव्य-सृजन किया ॥ १ ॥ ईश्वरीय विचारों के लिए उसने शब्द ब्रह्म का सृजन किया और अकालपुरुष की कृपा कर स्मरण कर जो चाहा उसका वर्णन किया उन्होंने शंकारहित होकर इस प्रकार का सुन्दर काव्य (रामायण) की रचना की कि अन्य कोई क्या करेगा ॥ २ ॥ उसके सामने सभी कवि गूँगे हैं अर्थात् अक्षम हैं और कैसे काव्य-रचना करेंगे। उसने अकालपुरुष की कृपा से ग्रन्थ रचा। भाष्य एवं कौमुदीकार विद्वान भी उसके ग्रन्थ को पढ़कर प्रसन्न होते हैं और उसकी तुलना में अपनी कृतियों को देखकर खीझ उठते हैं ॥ ३ ॥ उसके पवित्र काव्य की कथा, जो कि सिद्धि और समृद्धिदायक है, वह आज भी कही जाती है। उसके काव्य को अत्यन्त पवित्र और निर्मल कहा जाता है और उसका प्रत्येक चरित्र पवित्र है ॥ ४ ॥ (रामायण के उपदेशानुसार) सदैव अकालदेव की सेवा की जानी चाहिए और प्रातः उठकर उस परमात्मा के नाम का स्मरण करना चाहिए। उसके नाम की महिमा से अनेकों शत्रुओं को मारा जाता है और असंख्य प्रकार के दान दिए जाते हैं। वह प्रभु भी अपना हाथ हम लोगों के सिर पर रखकर हम अज्ञानियों की रक्षा करता है ॥ ५ ॥ अनेकों बलियों के जूझ जाने पर भी सन्तों का बाल बाँका नहीं होता और उसकी कृपा एवं शान्ति के श्वेत बाणों के सामने दुख कष्ट की सेनाएं

आन आप हाथ दै बचाइ मोह लेहगे । दुरंत घाट अउघटे कि देखनै न देहगे ॥ ६ ॥

॥ इति अवतार बालमीक प्रथम समापतं ॥

दुतीय अवतार ब्रहमा कशशप कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ पुन धरा ब्रहम कशशप बतार । स्रुति करे पाठ तिअ बरी चार । मैथनी स्रिशटि कीनी प्रगास । उपजाइ देव दानव सु बास ॥ ७ ॥ जो भए रिख ह्वै गे बतार । तिन को बिचार किन्नो बिचार । स्रुत करे बेद अरु धरे अरथ । कर दए दूर भुअ ते अनरथ ॥ ८ ॥ इह भाँति कीन दूसर बतार । अब कहो तोहि तीसर बिचार । जिह भाँति धर्‍यो बपु ब्रहम राइ । सभ कह्यो ताहि नीके सुभाइ ॥ ९ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे दुतीय अवतारे ब्रहमा कशशप समापतं ॥

भाग खड़ी होती हैं । वे परमात्मा ही अपनी कृपा से मुझे बचा लेंगे और मुझे कभी कष्टकारक स्थिति नहीं देखनी पड़ेगी ॥ ६ ॥

॥ इति अवतार वाल्मीकि प्रथम समाप्त ॥

द्वितीय अवतार ब्रह्मा-कश्यप-कथन

॥ पाधड़ी छंद ॥ पुनः ब्रह्मा ने कश्यप-अवतार धारण कर श्रुतियों का पाठ किया और चार स्त्रियों का वरण किया । तत्पश्चात् उसने सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न किया और उसी से देव और दानव पैदा हुए ॥ ७ ॥ जो ऋषि हुए उनका विस्तारपूर्वक उन्होंने विचार किया । वेदों का अर्थ किया और धरती से अनर्थ दूर कर दिया ॥ ८ ॥ इस प्रकार दूसरा अवतार हुआ और अब मैं विचारपूर्वक तीसरे का वर्णन करता हूँ । जिस प्रकार ब्रह्मा ने शरीर धारण किया वह मैं भली प्रकार से कहता हूँ ॥ ९ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में ब्रह्मा का द्वितीय अवतार कश्यप समाप्त ॥

अथ त्रितीआ अवतार शुक्र कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ पुनि धरा तीसर इह भांति रूप । जगि भयो आन करि दैत भूप । तब देव बंस प्रचुर्यो अपार । कीने सु राज प्रिथमी सुधारि ॥ १ ॥ बड पुत्र जानि किनी सहाइ । तीसर अवतार भयो शुक्र राइ । निंदा बिपाज उसतती कीन । लखि तास देवता भए छीन ॥ २ ॥

॥ इति त्रितीआ अवतार ब्रह्मा शुक्र समापतं ॥

अथ चतुरथ ब्रह्मा बचेस कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ मिल दीन देवता लगे सेव । बीते सौ बरख रीझे गुरदेव । तब धरा रूप बाचेस आन । जीता सुरेश भई असुर हान ॥ ३ ॥ इह भांत धरा चतुरथ वतार । जीता सुरेश हारे दिवार । उठ देव सेव (मू०ग्रं०६१४) लागे सु सरब । धर नीच नैन करि दूर गरब ॥ ४ ॥

॥ इति चतुरथ अवतार ब्रह्मा बचेस समापतं ॥

तृतीय अवतार शुक्र-कथन

॥ पाधड़ी छंद ॥ तीसरा रूप इस प्रकार का धारण किया कि वह दैत्यों का राजा (गुरु) हुआ । उस समय दैत्यों का वंश प्रचुर मात्रा में बढ़ा और उन्होंने पृथ्वी पर राज्य किया ॥ १ ॥ उनको बड़ा पुत्र जानकर शुक्राचार्य ने (गुरु के रूप में) उनकी सहायता की तथा इस प्रकार ब्रह्मा का तीसरा अवतार शुक्राचार्य हुआ । देवताओं की निंदा के बहाने उनकी और प्रसिद्धि फैली जिसे देख देवतागण क्षीण हो गए ॥ २ ॥

॥ इति तृतीय अवतार ब्रह्मा शुक्र समाप्त ॥

चतुर्थ ब्रह्मा, बृहस्पति का वर्णन

॥ पाधड़ी छंद ॥ देवगण सौ वर्ष तक सेवा करते रहे तो परमात्मा उनसे प्रसन्न हुए । तब ब्रह्मा ने बृहस्पति का रूप धारण किया जिससे इन्द्र की जीत हुई और असुरों की हानि हुई ॥ ३ ॥ इस प्रकार चौथा अवतार हुआ जिसमें इन्द्र जीते और दैत्य हारने लगे । तब सभी देवतागणों ने अपना गर्व दूर कर आँखें झुकाकर इनकी सेवा की ॥ ४ ॥

। इति चतुर्थ ब्रह्मा-बृहस्पति समाप्त ॥

अथ पंचमो अवतार ब्रहमा बिआस मनु राजा को राज कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ त्रेता बितीत जुग दुआपुरान । बहु भाँति देख खेले खिलान । जब भयो आन क्रिशनावतार । तब भए स्याम मुख आन चार ॥ ५ ॥ जे जे चरित्र किए क्रिशन देव । ते ते भने सु सारदा तेव । अब कहो तउन संछेप ठान । जिह भाँत कीन स्री अभिराम ॥ ६ ॥ जिह भाँति कत्थि कीनो पसार । तिह भाँति काबि कथिहै बिचार । कहो जैस काव्य कहियो बियास । तउनै कथान कत्थो प्रभास ॥ ७ ॥ जे भए भूप भुअ मो महान । तिनको सुजान कत्थत कहान । कह लगे तासि किज्जै बिचार । सुणि लेहु बैन संछेप यार ॥ ८ ॥ जे भए भूप ते कहे ब्यास । होवत पुराण ते नाम भास । मनु भयो राज महि को भुआर । खड़गन सर्पंन महिमा अपार ॥ ९ ॥ मानवी स्रिशट किन्नी प्रगाश । दस चार लोक आभा अभास । महिमा अपार बरने सु कउन । सुणि स्रवण कित हुइ रहै मउन ॥ १० ॥ दस

पंचम अवतार ब्रह्मा, व्यास मनु राजा का राज-कथन

॥ पाधड़ी छंद ॥ त्रेता युग बीता और द्वापर आया तो विभिन्न प्रकार की लीलाएँ करते हुए जब कृष्णावतार हुआ तब सुन्दर स्वरूप वाले व्यास जी उत्पन्न हुए ॥ ५ ॥ जो-जो चरित्र कृष्ण जी ने किए उसका उन्होंने सरस्वती जी की सहायता से वर्णन किया । अब मैं उनको संक्षेप में कहता हूँ कि किस प्रकार श्री व्यास ने कार्य किया ॥ ६ ॥ जिस प्रकार उन्होंने अपने कथन का प्रचार किया मैं भी विचारपूर्वक उसी प्रकार वर्णन करता हूँ । जैसा काव्य श्री व्यास ने कहा, उसी प्रकार के शोभायुक्त कथनों का मैं वर्णन करता हूँ ॥७॥ धरती पर जितने महान राजा हुए हैं, गुणीजन उनकी कथाएँ कहते हैं । कहाँ तक उनका वर्णन किया जाय, इसलिए हे मेरे मित्र ! उन्हें संक्षेप में सुन लो ॥ ८ ॥ हो चुके राजाओं का वर्णन व्यास जी ने किया, ऐसा पता पुराणों से भी लगता है । धरती पर अपार महिमा वाला शक्तिशाली एक राजा मनु भी हुआ है ॥ ९ ॥ उसने मानवीय सृष्टि का प्रकाश किया और चौदह लोकों में अपनी शोभा को बढ़ाया । उसकी महिमा का कौन वर्णन कर सकता है और उसकी कीर्ति को सुन चुप ही रह जाना पड़ता है १० ॥ वह अठारह विद्याओं का समुद्र था और उसने शत्रुओं को जीतकर अपने

चार चार बिद्यानिधान । अरि जीत जीत दिन्नो निशान ।
मंडे महीप मावास खेत । गज्जे मसाण नच्चे परेत ॥ ११ ॥
जिते सुदेस एसुर मवास । किन्ने खराब खाने खवास । मंडे
अभंड मंडे महीप । दिन्ने निकार छिन्ने सु दीप ॥ १२ ॥
खंडे सु खेत खूनी खत्रीयाण । मोरे अमोर जोधा दुराण । चल्ले
अचल्ल मंडे अमंड । किन्ने घमंड मंडे प्रचंड ॥ १३ ॥ किन्ने
सु जोर खूनी खलेस । मंडे महीप मावास देस । इह भाँत दीह
दोही फिराइ । मानी सु मानि मनु राज राइ ॥ १४ ॥ इह
भाँत दीह करि देस राज । बहु करे जग्गि अरु होम साज ।
बहु भाँति स्वरण करिकै सु दान । गोदान आदि बिधवत
शिनान ॥ १५ ॥ जो हुतो जग्ग अरु बेद रीत । सो करी
सरब न्रिप लाइ प्रीत । भुअदान दान रतनादि आदि । तिन
भाँत भाँत लिन्ने सुवाद ॥ १६ ॥ करि देस देस इम नीत राज ।
बहु भाँत दान दे सरब साज । हसतादि दत्त बाजादि मेध ।
बे भाँत भाँत किन्ने न्रिखेध ॥ १७ ॥ बहु साज बाज दिन्ने

नगाड़े बजवाये । उसने कइयों को राजा बनाया और कई अड़नेवालों को मार डाला । उसके युद्धस्थल में भी भूत-प्रेत नृत्य किया करते थे ॥ ११ ॥ उसने कई विरोधी देशों को जीता और कइयों को नेस्त-नाबूद कर दिया । उसने कई अभंजनशीलों को खण्ड-खण्ड कर दिया और कइयों को राजा बना दिया । कइयों को उसने देश छीनकर देश से निकाल दिया ॥ १२ ॥ कई भयंकर क्षत्रियों को उसने मार डाला और कई दुर्दमनीय योद्धाओं को दबा डाला । अचल रूप से स्थिर बने रहनेवाले भी उसके सामने भाग खड़े हुए और उसने प्रचण्ड वीरों का खण्डन कर दिया ॥ १३ ॥ कई महाबली क्षत्रियों को उसने सेवक बना लिया और कई विरोधी राजाओं के देशों में नये राजाओं का मण्डन कर दिया । इस प्रकार सारे संसार में राजा मनु का मान-सम्मान था और उसी के शौर्य की घोषणाएँ होती थीं ॥ १४ ॥ इस प्रकार बहुत से देशों और राजाओं को जीतकर मनु राजा ने अनेकों होम और यज्ञ किए । विभिन्न प्रकार से उसने स्वर्ण, गोदान एवं स्नान इत्यादि किए ॥ १५ ॥ जो भी वैदिक परम्पराएँ थीं राजा ने उनका प्रेमपूर्वक निर्वाह किया । राजा ने प्रेमपूर्वक विभिन्न प्रकार से भूदान एवं रत्नदान इत्यादि किया ॥ १६ ॥ देश-विदेशों में अपनी नीति का सिक्का जमा कर राजा ने विभिन्न प्रकार से दान इत्यादि किया । उसने हाथी इत्यादि दान किए और विभिन्न प्रकार के अश्वमेध यज्ञ आदि भी किए १७ उसने अनेकों सुसज्जित अश्व ब्राह्मणों को दान में

दिजान। (मू०ग्रं०९१५) दस चार चार बिद्या सुजान। खट चार शास्त्र सिंम्रित रटंत। कोकादि भेद बीना बजंत ॥ १८ ॥ घनसार घोर घसिअत गुलाब। म्रिग मदत डार चूवत शराब। कशमीर घास घोरत सुबास। उघतट सुगंध महकंत अवास ॥१९॥ ॥ संगीत पाधरी छंद ॥ तागड़दंग ताल बाजत मुचंग। बीना सुबेण बंसी म्रिदंग। डफ ताल तुरी सहनाइ राग। बाजंत जान उपनत सुहाग ॥ २० ॥ कहूँ ताल तूर बीना म्रिदंग। डफ झाँझ ढोल जलतर उपंग। जह जह बिलोक तह तह सुबास। उद्ठत सुगंध महकंत अबास ॥ २१ ॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ मनु राज कर्यो। दुख देस हर्यो। बहु साज सज्जे। सुन देव लज्जे ॥ २२ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक मनु राजा को राज समापतम ॥

अथ प्रिथ राजा को राज कथनं ॥

॥ तोटक छंद ॥ कह लाग गनो न्रिप जौन भए। प्रथ

दिए जो कि अठारहों विद्याओं के जानकार, छहों शास्त्रों, चारों वेदों और स्मृतियों का पाठ करनेवाले, कोकादि रहस्यों को समझनेवाले तथा वाद्य आदि बजाने में सिद्धहस्त थे ॥ १८ ॥ चन्दन और गुलाब को घिसा जाता था और कस्तूरी की मदिरा बनाई जाती थी। कश्मीरी घास की सुगन्ध से उस राजा के राज्य में सबके आवास महकते थे ॥१९॥ ॥ संगीत पाधरी छंद ॥ वीणा बाँसुरी, मृदंग और मुचंग आदि के ताल बजते सुनाई पड़ते थे। डफली, तुरही और शहनाई आदि से भी मंगलमय शब्द निकलते सुनाई पड़ते थे ॥ २० ॥ कहीं मृदंग, वीणा आदि का ताल और कहीं डफली, झाँझ, ढोल, जलतरंग आदि की ध्वनि सुनाई पड़ती थी। जहाँ-जहाँ देखो सुगन्ध का अनुभव होता था और इस उठती हुई सुगंध से सभी आवास महकते हुए दिखाई पड़ते थे ॥ २१ ॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ मनु ने राज्य किया, लोगों का दुःख दूर किया और वह इतना अच्छा था कि उसकी कीर्ति को सुन देवता भी लज्जित हो उठते थे ॥ २२ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक में मनु राजा का राज समाप्त ॥

पृथु राजा का राज्य-वर्णन

॥ तोटक छंद कितने राजा हुए और ने उन्हें अपनी ज्योति

जोतहि जोत मिलाइ लए। पुन स्री प्रियराज प्रिथीस भयो। जिन बिप्पन दान दुरंत दयो ॥२३॥ दलु लै दिन एक शिकार चड़े। बनि निरजन मो लखि बाघ बड़े। तह नार सकुंतल तेज धरे। ससि सूरज की लखि क्रांत हरे ॥२४॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ तह जात भए। म्रिग घात कए। इक देख कुटी। जनु जोग जुटी ॥ २५ ॥ तह जात भयो। संग को न लयो। लखि नार खरी। रस रीत भरी ॥ २६ ॥ अति सोभत है। लखि लोभत है। न्रिप पेखी जबै। चित चउक तबै ॥२७॥ इह कउन जई। जन रूप मई। छबि देख छक्यो। चित चाइ चक्यो ॥ २८ ॥ न्रिप बाह गही। तिअ मोन रही। रस रीत रच्यो। दुहूँ मैन मच्यो ॥ २६ ॥ बहु भाँत भजी। निस लौ न तजी। दोऊ रीझ रहे। नहि जात कहे ॥ ३० ॥ रस रीत रच्यो। कल केल मच्यो। अमितासन दे। सुख शासन से ॥ ३१ ॥ ललतासन लै। बिबधासन कै। ललनारु लला। करि काम कला ॥ ३२ ॥ करि केल उठी। नध

में मिला लिया इसका मैं वर्णन कहाँ तक करूँ। पुनः पृथ्वीपति पृथु राजा हुआ जिसने ब्राह्मणों को घनघोर रूप से दान दिया ॥ २३ ॥ एक दिन निर्जन वन में बड़े-बड़े बाघों को देखकर दल लेकर उसने शिकार के लिए चढ़ाई की। वहाँ शकुन्तला नाम की एक नारी थी जिसकी कान्ति सूर्य की चमक को भी फीका करती थी ॥ २४ ॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ मृग को मारकर और एक एकान्त कुटी को देख राजा वहाँ पहुँचा ॥ २५ ॥ वह वहाँ गया और उसके साथ कोई भी नहीं था। वहाँ उसने सौन्दर्यशालिनी एक नारी को देखा ॥ २६ ॥ उसकी शोभा मन को ललचा रही थी। जब राजा ने उसे देखा तो राजा का चित्त चौंक उठा ॥ २७ ॥ राजा ने सोचा यह रूपवती किसकी पुत्री है। राजा उसके सौन्दर्य को देख विभोर हो उठा और उसका मन उससे प्रेम करने के लिए उत्साहित हो उठा ॥ २८ ॥ राजा ने स्त्री की बाँह पकड़ ली और वह भी मौन ही रही। प्रेम के रस-रंग में दोनों के मन मे काम का संचार हो उठा ॥ २६ ॥ राजा ने अनेकों प्रकार से रात्रि तक उसके साथ रमण किया। दोनों एक-दूसरे पर इतना रीझ गए कि इसका वर्णन नही किया जा सकता है ॥ ३० ॥ प्रेम-रस में मस्त अनेक प्रकार के आसनों से सुखपूर्वक वहाँ केलि-क्रीड़ा होने लगी ॥ ३१ ॥ विविध प्रकार के आसनो के लालित्य को उन्होंने भोगा और इस प्रकार उन दोनों ने काम क्रीड़ा का किया। ३२। वह स्त्री केलि-क्रीड़ा करके उस पर्णकुटी

परनकुटी । ब्रिप जात भयो । तिह गरभ रह्यो ॥३३॥ दिन केक गए । तिन भूर जए । तन कउच धरे । ससि सोभ हरे ॥ ३४ ॥ (मू०ग्रं०६१६) जनु ज्वाल दवा । असतेज भवा । रिख जौन पिखं । चित चउक चकं ॥ ३५ ॥ सिस स्यान भयो । करि संग लयो । चलि आव तहाँ । तिह तात जहाँ ॥ ३६ ॥ ब्रिप देख जबै । करि लाज तबै । यह मोन सुअं । त्रिअ कौन तुअं ॥३७॥ ॥ त्रीयो बाच राजा प्रति ॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ ब्रिप नार सुई । तुम जौन भजी । मध परनकुटी । तह केल ठटी ॥ ३८ ॥ तब बाच दियो । अब भूल गयो । तिस चित्त करो । मुहि राज बरो ॥ ३९ ॥ तब काहि भजो । अब मोहि तजो । इह पुत्र तुअं । सुन साच ब्रिपं ॥ ४० ॥ नही स्राप तुझं । भज कैब मुझं । अब तो न तजो । नही लाज लजो ॥ ४१ ॥ ॥ब्रिप बाच त्रीया सो॥ कोई चिन बताउ । कि बात दिखाउ । कहि यौं त भजो । नहि नार लजो ॥ ४२ ॥ इक मुद्रक लै । ब्रिप कै करि दै । इह देख भले । कस हेर तले ॥ ४३ ॥

से बाहर निकली । राजा चला गया और शकुन्तला को गर्भ रह गया ॥३३॥ कितने दिन बीत गए तब उसने एक बालक को जन्म दिया जो कि तन पर कवच धारण किए हुए था तथा चन्द्रमा की शोभा का भी हरण करनेवाला था ॥ ३४ ॥ उसका तेज दावानल के समान था । उसे जो भी ऋषि देखता था, चकित हो जाता था ॥ ३५ ॥ जब शिशु कुछ बड़ा हुआ तो वह उसे साथ लेकर वहाँ गई जहाँ उसका पिता था ॥ ३६ ॥ राजा ने जब उसे देखा तो उसने थोड़ा संकोच किया और पूछा कि हे स्त्री ! तुम कौन हो और यह बालक कौन है ? ॥३७॥ ॥ स्त्री उवाच राजा के प्रति ॥ ॥ हरिबोलमना छंद ॥ हे राजा ! मैं वही स्त्री हूँ जिसके साथ पर्णकुटी में तुमने केलि-क्रीड़ा करते हुए रमण किया था ॥ ३८ ॥ तब तुमने वचन दिया था और अब तुम भूल गए हो । हे राजन् ! उस वचन का स्मरण करो और मुझे अपनाओ ॥ ३९ ॥ अब यदि तुम मुझे त्याग रहे हो तो उस समय मुझे क्यों अपनाया था । हे राजा ! मैं सत्य कह रही हूँ यह तुम्हारा पुत्र है ॥ ४० ॥ यदि तुम मुझे नहीं वरण करोगे तो मैं तुम्हें श्राप दे दूंगी, इसलिए अब तुम मुझे मत त्यागो और लज्जित मत होवो ॥ ४१ ॥ ॥ नृप उवाच स्त्री के प्रति ॥ तुम कोई चिह्न या बात मुझे बताओ नहीं तो मैं तुम्हारा वरण नही करूँगा हे स्त्री तुम अपनी लज्जा का त्याग मत करो ४२ शकुन्तला ने एक मुद्रिका राजा के हाथ पर

त्रिप जान गए। पहिचान भए। तब तउन बरी। बहु भाँत भरी ॥४४॥ सिस सात भए। रस रूप रए। अमितोज बली। दल दीह दली ॥४५॥ हनि भूप बली। जिणि भूम थली। रिख बोल रजी। बिध जग्ग सजी ॥ ४६ ॥ सुभ करम करे। अरि पुंज हरे। अति सूर महाँ। नहि और लहाँ ॥ ४७ ॥ अति जोत लसैं। ससि क्रांत कसैं। दिस चार चकी। सुर नार छकी ॥ ४८ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ गारि गारि अखरब गरबिन मार मार नरेश। जीत जीत अजीत राजन छीन देस बिदेश। टार टार करोर पब्बय दीन उतर दिसान। सपतु सिंधु भए धरा पर लीक चक्र रथान ॥ ४६ ॥ गाहि गाहि अगाहि देसन बाहि बाहि हथियार। तोर तोर अतोर भूद्रक दीन उतह टार। देश और बिदेश जीत बिसेख राज कमाइ। अंत जोत सु जोत सो मिलि जाति भी प्रिथराइ ॥ ५० ॥ जानि अंत समो भयो प्रिथराज राज वतार। बोलि सरब सम्रिधि संपति मित्र मंत कुमार। सपत दीप सु सपत पुत्रनि बाँट दीन तुरंत। सपत

रखो और कहा कि इसे देखो और स्मरण करो ॥ ४३ ॥ राजा जान गया और शकुन्तला को पहचान गया। तब राजा ने उससे विवाह कर लिया और विभिन्न प्रकार से उससे भोग-विलास किया ॥४४॥ रूप-सौन्दर्य से युक्त उसके सात पुत्र हुए, जो अपरिमित ओज वाले तथा दुश्मनों का नाश करनेवाले थे ॥ ४५ ॥ उन्होंने महाबली राजाओं को मारकर धरती को जीता और ऋषियों को बुलाकर यज्ञ किया ॥ ४६ ॥ उन्होंने शुभ कर्म करके शत्रुओं का नाश किया और उनके समान शूरवीर कोई अन्य दिखाई नहीं पड़ता ॥ ४७ ॥ वे चन्द्रमा की कान्ति के समान ज्योतिर्मान थे और चारों दिशाओं की देव-स्त्रियाँ उन्हें देखकर प्रसन्न होती थीं ॥ ४८ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ उन्होंने अनन्त गर्वीले राजाओं को मारा और अजेय राजाओं को उनका राज्य छीन कर मार डाला। अनेकों पर्वतों को लाँघकर उत्तर दिशा में वे गए और उनके रथ के पहियों की लकीरों से धरती पर सातों समुद्र बन गए ॥ ४६ ॥ शस्त्र चलाकर और सारी धरती पर घूम-घूमकर उन्होंने पर्वतों को तोड़-तोड़कर उत्तर दिशा में फेंक दिया। देश-विदेशों को जीतकर और उन पर राज्य करके अन्त में राजा पृथु भी परमज्योति में लीन हो गए ॥ ५० ॥ अपना अन्तिम समय निकट जानकर राजा पृथु ने अपनी सारी सम्पत्ति और मित्र मन्त्री तथा राजकुमारों को अपने पास ले आने को कहा। सातों द्वीप उन्होंने सात पुत्रों में तुरन्त बाँट दिए और वे सातों अत्यन्त शोभापूर्वक राज्य

राज करै लगै सुत सरब सोभावंत ॥ ५१ ॥ सपत छत्र फिरै लगै सिरसपत राजकुमार । सपत इंद्र परे धरा परि सपत जान बतार । सरब शास्त्र धरी सभै मिल बेदरीत बिचार । दान अंस निकार लीनी अरथ स्वरथ (मू०ग्रं०६१७) सुधार ॥ ५२ ॥ खंड खंड अखंड उरबी बाट लीन कुमार । सपत दीप भए पुनिर नवखंड नाम बिचार । जेस्ट पुत्र धरी धरा तिह भरथ नाम बखान । भरथ खंड बखान ही दस चार चार निदान ॥ ५३ ॥ कउन कउन कहै कबै कवि नाम ठाम अनंत । बाटि बाटि सभो लए नवखंड दीप दुरंत । ठाम ठाम भए नराधिप ठाम नाम अनेक । कउन कउन उचारिऐ करि सूर सरब बिबेक ॥ ५४ ॥ सपत दीपन सपत भूप भुगै लगै नवखंड । भाँत भाँतन सो फिरे असि बाँध जोध प्रचंड । दीह दीह अजीह देसनि नाम आपि भनाइ । आन जान दुती भए छित दूसरे हरिराइ ॥ ५५ ॥ आप आपस मै सभै सिर अत्र पत्र फिराइ । जीत जीत अजीत जोधन रोह क्रोह कमाइ । झूठ साच अनंत बोल कलोल केल अनेक । अंतकाल सभै भछै जग छाडिआ नहि एक ॥५६॥ आप अरथ अनरथ अपरथ समरथ करत अनंत । अंत होत ठटी

करने लगे ॥ ५१ ॥ सातों राजकुमारों के सिर पर छत्र झूलने लगे और वे सातों धरती पर इन्द्र के अवतार के समान माने जाने लगे। उन्होंने वेद, रीति और विचारों-सहित सर्वशास्त्रों की स्थापना की और दान के महत्त्व को पुनः प्रतिष्ठित किया ॥ ५२ ॥ पृथ्वी को खण्ड-खण्ड करके उन कुमारों ने बाँट लिया और सातों द्वीपों का नाम नवखण्ड रख दिया। ज्येष्ठ पुत्र ने, जिसका नाम भरत था, उस अठारह विद्याओं में प्रवीण भरत के नाम पर एक खण्ड का नाम भरतखण्ड रखा गया ॥ ५३ ॥ किन-किन नामों का कवि वर्णन करे। उन सबने नवखण्ड द्वीपों को आपस में बाँट लिया। अनेकों नामों वाले अनेकों राजा स्थान-स्थान पर हुए और बुद्धि के बल पर किस-किसके नाम का वर्णन लिया जाय ॥ ५४ ॥ सातों द्वीपों और नवखण्डों को राजा भोगने लगे और तलवार लेकर विभिन्न प्रकार एवं प्रचण्ड रूप से वे सब जगह घूमे। वे देश-देशान्तरों में अपने नाम का डंका बजवाने लगे और ऐसा लग रहा था कि मानो वे सब धरती पर भगवान के दूसरे अवतार हों ॥ ५५ ॥ वे परस्पर एक-दूसरे के सिर पर छत्र झुलाते हुए क्रोधपूर्वक अजेय योद्धाओं को जीतते रहे सच और झूठ का व्यवहार करते हुए वे अनेकों प्रकार से विचरण करते रहे और अन्त में काल का ग्रास बन गए ५६ आप स्वयं अपने

कछू प्रभ कोट क्यों न करंत । जान बूझ परंत कूप लहंत मूड़ न भेव । अंतकाल तबै बचै जब जानहै गुरदेव ॥ ५७ ॥ अंत होत ठटी भली प्रभ मूड़ लोगन जान । आप अरथ पछान ही तज दीह देव निधान । धरम जान करंत पापन यो न जानत मूड़ । सरब काल दयाल को कह प्रयोग गूड़ अगूड़ ॥ ५८ ॥ पाप पुंन पछान ही करि पुंन को सम पाप । परम जान पवित्र जापन जपै लाग कुजाप । सिद्ध ठउर न मानही बिन सिद्ध ठउर पूजंत । हाथ दीपकु लै महा पसु मधि कूप परंत ॥ ५९ ॥ सिद्ध ठउर न मानही अनसिद्ध पूजत ठउर । कैक दिवस चलाहु जे जड़ भीत की सी दउर । पंख हीन कहाँ उडै अर नैन हीन निहार । शस्त्र हीन जु धान पैठब अरथ हीन बिचार ॥ ६० ॥ दरब हीन बपार जैसक अरथ बिन इस लोक । आँख हीन बिलोकबो जगि काम केल अकोक । ग्यान हीन सु पाठ गीता बुद्ध हीन बिचार । हिम्मत हीन जु धान जूझब केल हीन कुमार ॥ ६१ ॥ कउन

लिए समर्थगण अनेकों पाप और अनर्थ करते हैं परन्तु अन्त में उन्हें परमात्मा के समक्ष उपस्थित होना पड़ता है। जीव जान-बूझकर कुएँ में गिरता है और परमात्मा के रहस्य को नहीं समझता है। मृत्यु से वह तभी बच पायेगा जब वह उस गुरुदेव परमात्मा को जान जायेगा ॥ ५७ ॥ मूर्ख लोग नहीं जानते हैं कि अन्त में परमात्मा के समक्ष लज्जित होना पड़ता है। ये मूर्ख परमपिता परमात्मा को त्यागकर केवल अपने स्वार्थ को ही पहचान करते हैं। यह धर्म के नाम पर पाप करते हैं और इतना नहीं जानते कि यह सर्व कृपालु परमात्मा का गूढ़ रहस्य है ॥ ५८ ॥ पाप को पुण्य और पुण्य को पाप, पवित्र को अपवित्र और जाप को न समझते हुए बुरे कामों मे लगे रहते हैं। जीव अच्छे स्थान को तो मानता नहीं और असिद्ध स्थानों की पूजा करता है। ऐसी स्थिति में यह हाथ में दीपक लेकर कुएँ में जा गिरता है ॥ ५९ ॥ पवित्र स्थानों को न मानकर यह अपवित्र स्थानों की पूजा करता है परन्तु इस प्रकार की डरपोक दौड़ यह कितने दिनों तक दौड़ सकेगा। पंखों के बिना कैसे उड़ा जा सकता है और आँखों के बिना कैसे देखा जा सकता है। शस्त्र-हीन होकर युद्ध में कैसे जाया जा सकता है और अर्थ को समझे बिना किसी बात पर कैसे विचार किया जा सकता है ॥ ६० ॥ द्रव्यहीन होकर इस लोक में व्यापार कैसे किया जा सकता है और नेत्रहीन होकर जगत की काम-क्रीड़ाओं को कैसे देखा जा सकता है। ज्ञानहीन होकर गीता का पाठ और बुद्धिविहीन होकर उस पर विचार और साहसहीन होकर युद्ध में कैसे जाया

कउन गनाइऐ जे भए भूप महीप। कउन कउन सु कत्थिऐ जगि के सुद्वीप अद्वीप। जास की न गनै वहै इम और की नही शकत। यो न ऐस पहचानिऐ बिन तास (मू०ग्रं०६१८) किए भगत ॥६२॥ स्रेष्ट स्रेष्ट भए जिते इह भूम आन नरेस। तउन तउन उचार हो तुमरे प्रसादि असेस। भरथ राज बितीत भे भए राज सागर राज। रुद्र की उपमा करी लिअ लच्छ सुत उपराजि ॥६३॥ चक्र बक्र धुजा गदा भ्रत सरब राजकुमार। लच्छ रूप धरे मनो जगिआनमैन सु धार। बेख बेख बने नरेश सु जीत देस असेस। दास भाव सभै धरे मन जत्र तत्र नरेस ॥ ६४ ॥ बाजमेध करै लगे हय सालि ते हय चीन। बोल बोल अमोल रित्तुज मंत्र मित्र प्रबीन। संग दीन सभूह सैना ब्यूह ब्यूह बनाइ। जत्र तत्र फिरै लगे सिर अत्र तत्र फिराइ ॥ ६५ ॥ जीत पत्र लह्यो जहाँ तह शस्त्र भे सभ चूर। छोडि छोडि भजे नरेशन छाड शस्त्र करूर। डार डार सनाहि सूर लियान भेस सुधार। भाजि भाजि चले जहा तह पुत्र मित्र बिसार ॥ ६६ ॥ गाजि गाजि गजे गदा धरि भाजि भाजि सु

जा सकता है ॥ ६१ ॥ कितने राजा हुए इसकी कहाँ तक गणना की जाय और जगत के द्वीप और खण्डों का कहाँ तक कथन किया जाय। जितने दिखाई देते हैं मैंने उतनों की गणना की है तथा मुझमें और अधिक गणना करने की शक्ति नहीं है और यह भी उसकी भक्ति के बिना नहीं हो सकता है ॥ ६२ ॥ इस धरती पर अन्य जितने श्रेष्ठ राजा हुए, मैं, हे प्रभु ! तुम्हारी कृपा से उन सबका उच्चारण करता हूँ। भरत के बाद राजा सगर हुए जिन्होंने रुद्र की तपस्या करके एक लाख पुत्रों की प्राप्ति की ॥ ६३ ॥ वे चक्र, ध्वजा, गदा वाले राजकुमार थे और ऐसा लग रहा था मानो कामदेव ने लाखों रूप धारण किए हों। वे देश-देशान्तरों को जीतकर विभिन्न स्थानो के राजा बने और सभी राजा उन्हें नरेश मानते हुए उनके दास हो गए ॥६४॥ घुड़साल में से एक अच्छे घोड़े को पहचान कर उन्होंने अश्वमेध यज्ञ करने का उपक्रम किया और मंत्री, मित्र तथा ब्राह्मण को आमंत्रित किया। बाद में उन्होंने मंत्रियों को सेना के झुण्ड दिए जो सिर पर छत्र झुलाते हुए यत्र-तत्र घूमने लगे ॥ ६५ ॥ सब स्थानों से उन्होंने विजयपत्र लिया और उनके सभी शत्रु चूर हो गए। सभी राजा शस्त्र छोड़ भाग खड़े हुए। वीरगण कवच उतारकर स्त्रियों का वेश धारण कर पुत्रों और मित्रों को भुलाकर यहाँ-वहाँ भाग खड़े हुए। ६६ गदाधारी गरजने लगे और कायर भागने लगे

भीर। साज बाज तजे भजे बिसंभार बीर सु धीर। सूरबीर गजे जहाँ तह अस्त्र शस्त्र नचाइ। जीत जीत लए सु देसन जैत पत्र फिराइ ॥ ६७ ॥ जीत पूरब पसचमं अरु लीन दच्छन जाइ। ताक बाज चल्यो तहाँ जह बैठबे मुनराइ। ध्यान मधि हुते महा मुन साज बाज न देख। पिसट पाछ खरो भयो रिख जान गोरख भेख ॥ ६८ ॥ चउक चित रहे सभै जब देख नैनन बाज। खोज खोज थके सभै जिस चार चार सलाज। जान प्याल गयो तुरंगम कीन चित बिचार। सगर खात खुदै लगे रणधीर बीर अपार ॥ ६९ ॥ खोदि खोदि अखोदि प्रिथवी क्रोध जोध अनंत। भच्छि भच्छि गए सभै मुख म्रितका दुतिवंत। सगर खात खुदै लगे दिस खोद दच्छन सरब। जीत पूरब को चले अति ठानकै जिअ गरब ॥ ७० ॥ खोद दच्छन की दिशा पुन खोद पूरब दिशान। ताक पच्छम कौ चले दस चार चार निधान। पैठ उतर दिशा जबै खोदै लगे सभ ठउर। अउर अउर ठटै पसू कलिकाल ठाटी अउर ॥ ७१ ॥ खोदिकै बहु भाँत प्रिथवी पूज अरध दिशान। अंति भेद बिलोकिआ मुनि

अनेकों वीर अपना साज-बाज छोड़ भाग खड़े हुए। ये शूरवीर जहाँ भी अस्त्र-शस्त्र नचाते हुए गरजे वहाँ इन्होंने जीत प्राप्त की और विजयपत्र प्राप्त किया ॥ ६७ ॥ उन्होंने पूर्व-पश्चिम और दक्षिण दिशा को जीत लिया और अब घोड़ा वहाँ पहुँचा जहाँ मुनिराज (कपिल) बैठे थे। मुनि ध्यान में थे। उन्होंने घोड़े को नहीं देखा। घोड़ा उन्हें गोरक्ष वेश में देखकर उनके पीछे जा खड़ा हुआ ॥ ६८ ॥ सब वीरों ने जब घोड़ा नहीं देखा तो वे चकित हो गए और लज्जित होकर चारों दिशाओं में खोजने लगे। उन्होंने यह सोचकर कि घोड़ा पाताललोक चला गया है एक व्यापक गड्ढा खोदकर पाताललोक जाने का प्रयत्न किया ॥ ६९ ॥ क्रोधपूर्वक योद्धा पृथ्वी खोदने लगे और उनके मुख की आभा मिट्टी के समान होने लगी। इस प्रकार जब उन्होंने पूरी दक्षिण दिशा को खड्ड बना दिया तो वे उसे जीतकर गर्वपूर्वक पूर्व दिशा की ओर बढ़े ॥ ७० ॥ दक्षिण और पूर्व दिशा को खोदकर वे शूरवीर, जो कि सभी विद्याओं में प्रवीण थे, पश्चिम दिशा की ओर टूट पड़े। जब वे उत्तर की ओर बढ़कर पृथ्वी खोदने लगे तो वे अपने मन में कुछ और ही सोच रहे थे परन्तु भगवान को कुछ और ही मंजूर था ॥ ७१ ॥ बहुत प्रकार से जब पृथ्वी को खोदकर वे सब दिशाओं में देख चुके तो अन्त में उन्होंने मुनि (कपिल) को देखा उन्होंने उसके पीछे घोड़े को देखा और उन राजकुमारों

बैठि संजुत ध्यान । ध्रिशट पाछ बिलोक बाज समाज रूप अनूप । लात भे मुनि मारिओ अति गरब कै सुत (मू०ग्रं०६११) भूप ॥७२॥ ध्यान छूट तबै मुनी द्रिग ज्वाल माल कराल । भाँत भाँतन सो उठी जनु सिंध आगि बिसाल । भसमभूत भए सभै न्रिप लच्छ पुत्र सु नैन । बाज राज सु संपदा जुत अस्त्र शस्त्र ससैन ॥ ७३ ॥ ॥ मधुभार छंद ॥ भए भसम भूत । न्रिप सरब पूत । जुत सुभट सैन । सुंदर सु बैन ॥ ७४ ॥ सोभा अपार । सुंदर कुमार । जब जरे सरब । तब तजा गरब ॥ ७५ ॥ बाहू अजान । सोभा महान । दस चारवंत । सूरा दुरंत ॥ ७६ ॥ जरि भाज बीर । हुए चित अधीर । दिओ संदेस । जह सगर देस ॥ ७७ ॥ लहि सगर बीर । ह्वै चित अधीर । पूछे सँदेस । पूतन सु बेस ॥ ७८ ॥ करि जोर सरब । भट छोर गरब । उच्चरे बैण । जल चुअत नैण ॥ ७९ ॥ भुअ फेर बाज । जिणि सरब राज । सभ संग लीन । न्रिप बर प्रबीन ॥८०॥ हय ग्यो पयार । तुअ सुत उदार । भुअ खोद सरब । अति बढा गरब ॥ ८१ ॥ तह मुनि अपार । गुन गन उदार । लखि मद्ध ध्यान । मुन

ने गर्वपूर्वक मुनि पर लात से प्रहार किया ॥ ७२ ॥ तभी मुनि का ध्यान छूटा और उसमें से विभिन्न प्रकार की विशाल ज्वालाएँ उठने लगीं। उस ज्वाला में राजा के एक लाख पुत्र, घोड़े-अस्त्र-शस्त्र-सेना समेत भस्म हो गए ॥ ७३ ॥ ॥ मधुभार छंद ॥ राजा के सभी पुत्र भस्मीभूत हो गए और सभी सेना हाहाकार करती हुई नष्ट हो गई ॥ ७४ ॥ जब वे अपार शोभा वाले सुन्दर राजकुमार जल गए तब सबका अभिमान दूर हो गया ॥ ७५ ॥ उस आजानबाहु परमात्मा की महान शोभा है और उससे चारों दिशाओ में शूरवीर डरते हैं ॥ ७६ ॥ कुछ वीर जलकर चित्त में अधीर हो भागे और उन्होंने राजा सगर को सारा समाचार कहा ॥ ७७ ॥ राजा सगर ने जब यह देखा तो उसने अधीर हो अपने पुत्रों के बारे में समाचार पूछा ॥ ७८ ॥ तब सबने उनकी शक्ति की बातें बताई और यह भी बताया कि किस प्रकार उन वीरों के गर्व का नाश हुआ। यह कहते हुए उनकी आँखों से पानी बह रहा था ॥ ७९ ॥ सन्देश देनेवालों ने यह बताया कि आपके पुत्रों ने घोड़े को सारी पृथ्वी पर घुमाकर सब राजाओं को जीत लिया था और उनको अपने साथ ले लिया था ॥८०॥ आपके पुत्रों ने घोडे को पाताल गया समझकर सारी धरती को खोद डाला और इस प्रकार उनका गर्व बहुत बढ़ गया ८१

मन महान ।। ८२ ।। तब पुत्र क्रोध । ले संगि जोध । लत्तौं प्रहार । किअ रिख अपार ।। ८३ ।। तब छुटा ध्यान । मुन मन महान । निकसी सु ज्वाल । दावा बिसाल ।। ८४ ।। जह जरे पूत । कहि ऐस दूत । सैना समेत । बाचा न एक ।। ८५ ।। सुन पुत्र नास । भ्यो पुर उदास । जह तह सु लोग । बैठे सु सोग ।। ८६ ।। शिव सिमर बैन । जल थाम नैंन । करि धीरज चित्त । मुन मत पवित्त ।। ८७ ।। तिन म्रितक करम । न्रिप करम धरम । बहु बेद रीत । किन्नी सु प्रीत ।। ८८ ।। न्रिप पुत्र सोग । ग्यो सुरग लोग । न्रिप भे सु जौन । कथि सकै कौन ।। ८९ ।।

।। इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे ब्रहमा अवतार बिआस राजा प्रिथ को राज समापतं ।।

अथ जुजात राजा को राज कथनं ।।

।। मधुभार छंद ।। पुन भ्यो जुजात । सोभा अभात । दस चार वंत । सोभा सुभंत ।। ९० ।। सुंदर सु नैण ।

वहीं पर अपार शोभावाले मुनि को घोर ध्यान में मग्न सबने देखा ।। ८२ ।। तुम्हारे पुत्रों ने योद्धाओं को साथ लेकर उस ऋषि पर लातों से प्रहार किया ।। ८३ ।। तब उस महान मुनि का ध्यान टूटा और उसकी आँखों से एक विशाल ज्वाला निकली ।। ८४ ।। दूत ने बताया कि हे राजा सगर! इस प्रकार तुम्हारे पुत्र सेना समेत जलकर भस्म हो गए और एक भी नहीं बच सका ।। ८५ ।। पुत्रों का नाश सुनकर सारा नगर उदास हो गया और सभी लोग यहाँ-वहाँ शोकमग्न हो गए ।। ८६ ।। सभी शिव का स्मरण कर अपने आँसुओं को रोककर मुनियों के पवित्र वाक्यों से मन में धैर्य धारण करने लगे ।। ८७ ।। तब राजा ने वेद-रीति के अनुसार प्रीतिपूर्वक उन सबका मृतक-कर्म किया ।। ८८ ।। राजा पुत्रों के शोक में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ और उसके बाद कितने अन्य राजा हुए, उनका कथन कौन कर सकता है ।। ८९ ।।

।। श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में ब्रह्मा अवतार, व्यास, राजा पृथु का राज्य समाप्त ।।

ययाति राजा का राज्य-वर्णन

। मधुभार छंद ।। पुनः अपार शोभा वाला राजा ययाति हुआ जिसकी शोभा चौदह लोकों में थी ।। ९० ।। उसके नयन सुन्दर थे और

जन रूप मैंण। सोभा अपार। सोभत सुधार ॥ ९१ ॥ सुंदर सरूप। सोभंत भूप। दस चार बंत। आभा अभंत ॥ ९२ ॥ गुन गन अपार। सुंदर उदार। दस चार बंत। सोभा सुभंत ॥ ९३ ॥ धन गुन (मू०ग्रं०६२०) प्रबीन। प्रभ को अधीन। सोभा अपार। सुंदर कुमार ॥ ९४ ॥ शास्त्रग्ग सुद्ध। क्रोधी सु जुद्ध। न्रिप भयो बेन। जनु कामधेन ॥ ९५ ॥ खूनी सु खग्ग। जोधा अभग्ग। खत्री अखंड। क्रोधी प्रचंड ॥ ९६ ॥ सतूंणि काल। काढी क्रवाल। सम तेज भान। ज्वाला समान ॥ ९७ ॥ जब जुरत जंग। नहि मुरत अंग। अरि भजत नेक। नहि टिकत एक ॥ ९८ ॥ थरहरत भान। कंपत दिसान। मंडत मवास। भज्जत उदास ॥९९॥ थरहरत बीर। भंभरत भीर। तंतजत देस। न्रिप मन नरेश ॥ १०० ॥ चंचकित चंद। धंधकित इंद। फल गन फटंत। भुअ धर भजंत ॥१०१॥ ॥ संजता छंद ॥ जसु

अपार शोभा वाला स्वरूप कामदेव के समान था ॥ ९१ ॥ उसके सुन्दर रूप की शोभा से चौदह लोक आभायुक्त हो रहे थे ॥ ९२ ॥ वह उदार राजा अपार गुणों से युक्त था और चौदह विद्याओं को धारण करनेवाला था ॥ ९३ ॥ समृद्धि और गुणों में प्रवीण, परमात्मा को माननेवाला वह सुन्दर कुमार राजा अपरम्पार शोभा वाला था ॥ ९४ ॥ शास्त्रों का ज्ञाता राजा युद्ध में अत्यन्त क्रोधी था और कामधेनु के समान सब इच्छाओं की पूर्ति करनेवाला था ॥९५॥ राजा अपने खूनी खड्ग के साथ अजेय, अखण्ड एवं प्रचण्ड क्रोध वाला योद्धा था ॥ ९६ ॥ कृपाण निकालकर वह शत्रुओं के लिए काल के समान था और उसका तेज सूर्य की ज्वालाओं के समान था ॥ ९७ ॥ जब वह युद्ध करता था तो उसका कोई अंग भी पीछे नहीं मुड़ता था। उसके सामने अनेकों शत्रु भाग खड़े होते थे और कोई भी नहीं टिकता था ॥ ९८ ॥ उसके सामने सूर्य थरथराता था, दिशाएँ काँपती थीं, विरोधी सिर झुका खड़े हो जाते थे और उदास हो भाग खड़े होते थे ॥ ९९ ॥ वीर थरथराते थे, कायर भाग खड़े होते थे और अनेकों देशों के राजा उसके सामने धागे के समान टूट जाते थे ॥ १०० ॥ चन्द्रमा उसके सामने चकित होता था। इन्द्र का हृदय धक-धक करता था और गण इत्यादि नष्ट हो जाते थे तथा पर्वत भी भाग खड़े होते थे ॥ १०१ ॥ ॥ संयुक्ता छंद ॥ सबों ने उसका यश स्थान-स्थान पर सुना और शत्रुगण उसके यश को सुनकर भयभीत हो सिर धुनते थे उसने

ठौर ठौर सभो सुन्यो। अर बिंद सीस सभो धुन्यो। जग जग्ग साज भले करे। दुख पुंज दीनन के हरे॥ १०२॥

॥ इति जुजात राजा कालबस होत भए॥

अथ बेन राजे को राज कथनं॥

॥ सुंजता छंद॥ पुनि बेन राज महेस भयो। निज दंड काहू ते न लयो। जिअ भांत भांत सुखी नरा। अति गरब सभ छुट उरधरा॥ १०३॥ जिअ भांति भांति बसे सुखी। तर द्रिशट आवत ना दुखी। सभ ठौर ठौर प्रिथी बसी। जनु भूम राज सिरी लसी॥ १०४॥ इह भांत राज कमाइ कै। सुख देस सरब बनाइ कै। बहु दोख दीनन के दहे। सुन शकत देव समस्त भए॥ १०५॥ बहु राज साज कमाइ कै। सिर अत्र पत्र फिराइ कै। पुन जोत जोत बिखै मिली। अर छेन बेन महाबली॥ १०६॥ अबिकार भूप जिते भए। कर राज अंत समै गए। कबि कौन नाम तिनै गनै। संकेत काहि इते भनै॥ १०७॥

॥ इति बेन राजा क्रित बस होत भए॥

संसार में भली प्रकार से अनेकों यज्ञ कर ग़रीबों के कष्टों को दूर किया॥ १०२॥

॥ इति ययाति राजा का मृत्यु को प्राप्त होना॥

बेन राजा का राज-कथन

॥ संयुक्ता छंद॥ पुन: बेन पृथ्वी का राजा हुआ और उसने किसी से भी कभी कर नहीं लिया। जीव विभिन्न प्रकार से सुखी थे और कभी भी कोई गर्व नहीं करता था॥ १०३॥ विभिन्न प्रकार से जीव सुखी थे और वृक्ष तक दु:खी नज़र नहीं आते थे। सब स्थानों पर राजा की शोभा से पृथ्वी शोभायमान होती थी॥ १०४॥ इस प्रकार सारे देश को सुखी करके राज्य करते हुए राजा ने दीनों के बहुत से दु:ख दूर किए और उसके वैभव को देख सभी देवगण भी उसके अधीन हो गए॥ १०५॥ बहुत समय तक राज करके अपने सिर पर छत्र झुलवा के उस महाबली राजा बेन की ज्योति परमज्योति में लीन हो गई॥ १०६॥ जितने भी अविकारी राजा हुए वे राज्य करके अन्त में उस परमात्मा में जा मिले। कौन कवि उनके नामों की गणना कर सकता है। इसलिए यहाँ केवल संकेत मात्र किया गया है॥ १०७॥

इति बेन राजा का मृत्युगत होना॥

अथ मानधाता को राजु कथनं ॥

॥ दोधक छंद ॥ जेतक भूप भए अवनी पर । नाम सकै तिन के कवि को धरि । नाम जथामति भाख सुनाऊं । चित्त तऊ अपने डर पाऊं ॥ १०८ ॥ बेद गए जग ते त्रिपता करि । मानधधात भए बसुधा धरि । बासव लोग गए जब ही वह । (मू०ग्रं०६२१) उठ द्यो अरधासन बासव तिह ॥ १०६ ॥ रोस भर्‍यो तब मान महीधर । हाँक गह्यो करि खग्ग भयंकर । मारन लाग जबै रिस इंद्रहि । बाह गही ततकाल दिजिंद्रहि ॥ ११० ॥ नास करो जिन बासव को छिप । आसन अरध दयो तुह या ब्रत । है लवनासु महासुर भू परि । ताहि न मार सकै तुम किउ कर ॥ १११ ॥ जौ तुम ताहि सँधारकै आवहु । तौ तुम इंद्र सिंघासन पावहु । ऐस कै अरध सिंघासन बैठहु । साचु कहो पर नाक न ऐठहु ॥ ११२ ॥ ॥ असतर छंद ॥ धायो अस्त्र लै कै तहा । मथरा मंडल दानो था जहा । महा गरबु कै कै महामंद बुद्धी । महा जोर कैकै

मान्धाता का राज-कथन

॥ दोधक छंद ॥ जितने धरती पर राजा हुए हैं, उनके नामों का वर्णन कौन कवि कर सकता है। उनके नामों का वर्णन करते हुए मुझे (ग्रन्थ के बढ जाने का) भय लगता है ॥ १०८ ॥ जब राजा बेन संसार से राज्य कर के गए तो धरती पर मान्धाता राजा हुए। जब वे इन्द्रलोक गए तो इन्द्र ने उन्हें आधा आसन दिया ॥ १०६ ॥ राजा मान्धाता क्रोध से भर उठे और ललकारते हुए उन्होंने भयंकर खड्ग हाथ में पकड़ लिया। जब क्रोधित होकर वे इन्द्र को मारने लगे तो विप्रवर (बृहस्पति) ने उनका हाथ तुरन्त पकड़ लिया ॥ ११० ॥ उन्होंने कहा कि हे राजा ! इन्द्र को मत मारो, क्योंकि इसने जो तुम्हें आधा आसन दिया है उसका एक कारण है। लवणासुर नामक भयंकर एक दैत्य धरती पर है। आप उसको अभी तक क्यों नहीं मार सके ॥ १११ ॥ जब आप उसका संहार करके आएँगे तो आपको इन्द्र का पूर्ण सिंहासन प्राप्त होगा, इसलिए अभी आधे सिंहासन पर ही बैठो और सत्य को स्वीकार करते हुए नाक-भौं मत चढ़ाओ ॥ ११२ ॥ ॥ असतर छंद ॥ राजा शस्त्र लेकर वहाँ पहुँचा जहाँ मथुरा-मण्डल में दैत्य रहता था। वह महा मन्दबुद्धि और घमंडी था वह महा था और भयकर

दलं परम क्रुद्धी ॥ ११३ ॥ महा घोर कै कै घनं की घटा ज्यो। सु धाइआ रणं बिज्जुली की छटा ज्यो। सुने सरब दानो सु सामुहि सिधाए। महा क्रोध कै कै सु बाजी नचाए ॥ ११४ ॥
॥ मेदक छंद ॥ अब एक किए बिनु यौ न टरै। दोऊ दाँतन पीस हंकार परै। जब लौ न सुनो लव खेत मरा। तब लउ न लखे रन बान टरा ॥११५॥ जब ही रणि एक को एक करै। बिन एक किए रणि ते न टरै। बहु साल सिला तल ब्रिछ छुटे। दुहू ओर जबै रण बीर जुटे ॥ ११६ ॥ कुप कै लव पान त्रिसूल लयो। सिर धातयमान दुखंड कयो। बहु जूथ पजूथन सैन भजी। न उचाइ सकै सिर ऐस लजी ॥ ११७ ॥ घनि जैस भजे घन घाइल हुऐ। बरखा जिम स्रोणत धार चुऐ। सुभ मान महीपत छोरह कै। सभ ही दल भाग चला जिअ लै ॥११८॥ इक घूमत घाइल सीस फुटे। इक स्रोण चुचावत केस छुटे। रण मार कै मानि त्रिसूल लिए। भट भाँतहि भाँत भजाइ दिए ॥ ११९ ॥

॥ इति मानधाता बधहि ॥

रूप से क्रोधी था ॥ ११३ ॥ बादल की घटाओं की तरह गर्जन करता हुआ मान्धाता बिजली की तरह युद्धस्थल में टूट पड़ा। जब दानवों ने यह सुना तो वे भी सामने आ डटे और क्रोधपूर्वक घोड़ों को नचाने लगे ॥ ११४ ॥
॥ मेदक छंद ॥ राजा उसको मारे बिना टलनेवाला नहीं था और दोनों शत्रु दाँत पीसते हुए ललकारते हुए एक-दूसरे पर टूट पड़े। लवणासुर के मारे जाने के समाचार की प्रतीक्षा में राजा ने भी युद्ध में बाण-वर्षा नहीं बन्द की ॥ ११५ ॥ दोनों ही युद्ध में एक ही काम करना चाहते थे और एक-दूसरे को मारे बिना युद्ध से हटना नहीं चाहते थे। युद्ध में वृक्ष-पत्थर इत्यादि की दोनों ओर के वीरों द्वारा वर्षा की गई ॥ ११६ ॥ क्रोधित होकर लवणासुर ने हाथ में त्रिशूल लिया और मान्धाता के सिर का दो खण्ड कर दिया। मान्धाता की सेना झुण्ड बनाकर भाग चली और इतनी लज्जित हुई कि राजा के सिर को भी नहीं उठा सकी ॥११७॥ सेना घायल होकर बादलों के समान उड़ गई और रक्त ऐसे बहने लगा मानो वर्षा हो रही हो। मृतक राजा को युद्धस्थल में त्याग, राजा का सारा दल प्राण बचा, भाग निकला ॥ ११८ ॥ वापस लौटनेवालों के सिर फूट गए, केश खुल गए और घायलावस्था में उनके सिरों से रक्त बहने लगा। इस प्रकार युद्धस्थल त्रिशूल के बल पर लवणासुर ने जीत लिया और अनेक प्रकार के शूरवीरों को भगा दिया ॥ ११९ ॥

। इति -वध ॥

अथ दलीप को राज कथनं ॥

॥ तोटक छंद ॥ रण मो जन मान महीप हुए । तब आन दिलीप दिलीस भए । बहु भांतन दानव दीह दले । सभ ठौर सभो उठ धरम परे ॥ १२० ॥ ॥ चौपई ॥ जब न्रिप हना मानधाता बर । शिव त्रिसूल कर धरि लवनासुर । भयो दलीप जगत को राजा । भांत भांत जिह राज बिराजा ॥१२१॥ महारथी अरु महा न्रिपारा । कनक (मू०ग्रं०१२२) अवटि साचे जनु ढारा । अति सुंदर जनु मदन सरूपा । जानुक बने रूप को भूपा ॥ १२२ ॥ बहु बिधि करे जग्ग बिसथारा । बिधवत होम दान मख सारा । धरम धुजा जह तहा बिराजी । इंद्रावती निरख दुति लाजी ॥ १२३ ॥ पग पग जग्ग खंभ कहु गाडा । घरि घरि अंनसाल करि छाडा । भूखा नांग जु आवत कोई । तत छिन इच्छ पुरावत सोई ॥ १२४ ॥ जो जिह मुख मांगा सो पावा । बिमुख आस फिर भिछक न आवा । धाम धाम धुज धरम बधाई । धरमावती निरख मुरछाई ॥ १२५ ॥

दिलीप का राज-कथन

॥ तोटक छंद ॥ जब युद्ध में मान्धाता मारे गए तो दिलीप दिल्लीश्वर हुए । इन्होंने बहुत प्रकार से दानवों का नाश किया और सब स्थानों पर धर्म चलाया ॥१२०॥ ॥ चौपाई ॥ जब शिव के त्रिशूल को लेकर लवणासुर ने श्रेष्ठ राजा मान्धाता को मार डाला तो दिलीप राजा हुए जिनके पास भाँति-भाँति का राज्य-ऐश्वर्य था ॥ १२१ ॥ यह राजा महारथी और महाशक्तिशाली था और ऐसा लगता था मानो सोने के साँचे में उसे ढाला गया हो । कामदेव के स्वरूप वाला यह राजा इतना सुन्दर था और ऐसा लगता था कि मानो वह रूप-सौन्दर्य का सम्राट् हो ॥ १२२ ॥ इसने विभिन्न प्रकार से यज्ञ किए और विधिवत होम, दान इत्यादि भी किए । उसके धर्म-प्रसार की ध्वजा यत्र-तत्र विराजमान होने लगी और उसकी शोभा को देख इन्द्रपुरी भी लज्जित होने लगी ॥ १२३ ॥ क़दम-क़दम पर उसने यज्ञस्तम्भ गड़वा दिए और घर-घर में अन्न के भण्डार बनवा दिए । भूखा, नंगा जो कोई आता था तत्काल उसकी इच्छा पूरी होती थी ॥ १२४ ॥ जिसने जो माँगा उसे वह प्राप्त हुआ और कोई भी भिक्षुक अपनी आशा पूरी किए बिना नहीं गया । घर-घर धर्मध्वजा फहरने लगी और भी यह सब देख मूर्च्छित होने लगी १२५

मूरख कोई रहै नही पावा । बार बूढ सभ सोध पड़ावा । घरि घरि होत भई हरि सेवा । जह तह मान सभै गुरदेवा ॥१२६॥ इह बिध राज दिलीप बडो करि । महारथी अरु महां धनुरु धर । कोकशास्त्र सिम्रित सुर ग्याना । जोतवंत दस चार निधाना ॥ १२७ ॥ महाँ करमनी महाँ सुजानू । महां जोत दस चार निधानू । अति सरूप अरु अमित प्रभासा । महाँ मान अरु महाँ उदासा ॥ १२८ ॥ बेद अंग खट शास्त्र प्रबीना । धनुरभेद प्रभ के रस लीना । खड़गुन ईश्वर पुंन अतुल बल । अरु अनेक जीते दिन दल मल ॥ १२९ ॥ खंड अखंड जीत बड राजा । आन समान न आन बिराजा । अति बलिसट असतेज प्रचंडा । अर अनेक जिन साध उदंडा ॥ १३० ॥ देस बिदेस अधिक जिह जीता । जह तह चली राज की नीता । भाँत भाँत सिर छत्र बिराजा । तज हठ चरन लगे बड राजा ॥ १३१ ॥ जह तह होत धरम की रीता । कहूँ न पावत होन अनीता । दान निशान चहूँ चक वाजा । करुण कुबेर बेण बलि राजा ॥ १३२ ॥ भाँत भाँत तन राज कमाई ।

कोई भी मूर्ख नहीं रहा और सभी बालक-बूढ़े सुविधपूर्वक अध्ययन करने लगे । घर-घर में हरि-सेवा होने लगी और सर्वत्र परमात्मा का मान-सम्मान होने लगा ॥ १२६ ॥ इस प्रकार राजा दिलीप का राज्य था जो कि स्वयं महारथी और महाधनुर्धर था । उसे कोकशास्त्र और स्मृतियों का पूर्णज्ञान था और वह चौदह विद्याओं में प्रवीण था ॥ १२७ ॥ वह महाकर्मठ और महान बुद्धिमान तथा चौदह विद्याओं का भण्डार था । वह अत्यन्त स्वरूपवान और अपरिमित शोभावान था । वह महामानी भी था और साथ ही संसार के प्रति महान उदासीन भी था ॥ १२८ ॥ सब बेदांग और छः शास्त्रों में प्रवीण राजा धनुर्वेद के रहस्य को जाननेवाला तथा प्रभु के प्रेम में लीन रहनेवाला था । वह अनेकों गुणों से युक्त ईश्वर के पुण्य और बल के समान अपरिमित था और उसने अनेकों शत्रुओं को जीता था ॥ १२९ ॥ अनेकों अखण्ड राज्य वाले राजाओं को उसने जीता था और उसके समान अन्य कोई नहीं था । वह अत्यन्त बलिष्ठ और प्रचण्ड तेज वाला था और साधुओं के सामने बिनम्र बना रहनेवाला था ॥ १३० ॥ उसने अनेक देश-विदेश को जीता और सब जगह उसी के राज्य की चर्चा होने लगी । उसने अनेकों प्रकार के छत्र धारण किए और कई बडे-बड़े राजा हठ छोड़कर उसके चरणों में आ पड़े ॥ १३१ ॥ सब ओर धर्म की [illegible] का निर्वाह होने लगा और कहीं भी [illegible] नहीं

आ समुंद्र लौ फिरी दुहाई। जह तह करम पाप भय दूरा। धरम करम सभ करत हजूरा ॥ १३३ ॥ जह तह पाप छपा सभ देसा। धरम करम उठ लाग नरेसा। आ समुद्र लौ फिरी दुहाई। इह बिध करी दिलीप रजाई ॥ १३४ ॥

॥ इति दलीप राजा स्वरग लोग गवनं ॥

अथ रघु राजा को राजु कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बहुर जोत सो जोत मिलानी। सभ जग ऐस क्रिआ पहिचानी। स्री रघुराज राजु जग कीना। (मू०ग्रं०६२३) अत्र पत्र सिर ढार नबीना ॥ १३५ ॥ बहु भांत करि जगि प्रकारा। देस देस महि धरम बिथारा। पापी कोई निकटि न राखा। झूठ बैन कहू भूल न भाखा ॥ १३६ ॥ निसा तास निसनाथ पछाना। दिनकर ताहि दिवस अनमाना। बेदन ताहि ब्रहम करि लेखा। देवन इंद्र रूप अवरेखा ॥१३७॥ बिप्पन सभन ब्रहसपत देख्यो। दैतन गुरू शुक्र करि पेख्यो।

हो पाता था। वरुण, कुबेर, बेण और बलि जैसे राजाओं में राजा दिलीप के भी दान की दुन्दुभि बजने लगी ॥ १३२ ॥ भाँति-भाँति से उसने राज्य किया और समुद्र तक उसकी दुन्दुभि बजने लगी। जहाँ-तहाँ पाप-कर्म और भय दूर हो गए और सभी उसके समक्ष धर्म-कर्म करने लगे ॥ १३३ ॥ सभी देशों में पाप छिप गया और सभी राजा धर्म-कर्म करने लगे। दिलीप के राज्य की चर्चा समुद्र तट तक आ मिली ॥ १३४ ॥

॥ इति राजा दिलीप का स्वर्गलोक-गमन ॥

राजा रघु का राज-कथन

॥ चौपाई ॥ सबकी ज्योति परमज्योति में मिल गई और सारे संसार मे यही क्रिया चलती रही। श्री रघुराज ने संसार में राज्य किया और नये अस्त्र-शस्त्र एवं छत्र धारण किए ॥ १३५ ॥ कई प्रकार के यज्ञ उसने किए और देश-प्रदेश सबमें धर्म का विस्तार किया। किसी पापी को पास न रहने दिया और भूलकर भी कभी झूठ नहीं बोला ॥ १३६ ॥ रात्रि उसे चंद्रमा और दिन उसे सूर्य के समान समझने लगा। वेद उसे ही ब्रह्म मानने लगे और देवगण उसे इंद्र के रूप में देखने लगे ॥ १३७ ॥ सभी विप्र उसे बृहस्पति और दैत्य उसे शुक्राचार्य के रूप मे देखने लगे रोग उसे औषधि और योगीगण

रोगन ताहि अउखधी माना। जोगन परम तत्तु पहिचाना ॥१३८॥ बालन बाल रूप अवरेख्यो। जोगन महाँ जोग करि देख्यो। दातन महाँ दान करि मान्यो। भोगन भोग रूप पहचान्यो ॥१३९॥ संनिआसन दत्त रूप करि जान्यो। जोगन गुर गोरख करि मान्यो। रामानंद बैरागन जाना। महा दीन तुरकन पहचाना ॥ १४० ॥ देवन इंद्र रूप करि लेखा। दैतन सुंभ राज करि पेखा। जच्छन जच्छ राज करि माना। किंम्रन किंम्र देव पहचाना ॥ १४१ ॥ कामन काम रूप करि देख्यो। रोगन रूप धनंतर पेख्यो। राजन लख्यो राज अधकारी। जोगन लख्यो जोगीशर भारी ॥ १४२ ॥ छत्रन बडो छत्रपति जाना। अत्रन महा शस्त्र धर माना। रजनी तास चंद्र करि लेखा। दिनीअर करि तिह दिन अवसेखा ॥ १४३ ॥ संतन शांत रूप करि जान्यो। पावक तेज रूप अनुमान्यो। धरती तास धराधर जाना। हरणीएण राज पहचाना ॥ १४४ ॥ छत्रन तास छत्रपति सूझा। जोगन महा जोग करि बूझा। हिमधर ताहि हिमालय जाना। दिनकर अंधकार

उसे परमतत्त्व के रूप में पहचानने लगे ॥ १३८ ॥ बालक उसे बाल-रूप में देखने लगे और योगी उसे महायोगी के रूप में देखने लगे। दाता उसे महादानी और भोगी उसे महायोगी के रूप में जानने लगे ॥ १३९ ॥ संन्यासी उसे दत्तात्रेय के रूप में जानने लगे और योगी उसे गुरु गोरख के रूप में मानने लगे। बैरागी उसे रामानन्द और तुर्कगण उसे मुहम्मद के रूप में जानने लगे (यहाँ कालदोष है।) ॥ १४० ॥ देव उसे इंद्र-रूप और दैत्य उसे शुंभ के रूप मे मानने लगे। यक्ष उसे यक्षराज और किन्नरगण किन्नरराज के रूप में जानने लगे ॥ १४१ ॥ कामिनियाँ उसे काम-रूप में देखने लगीं और रोग उसे धन्वन्तरि का अवतार मानने लगे। राजा उसे राजाधिराज के रूप में देखने लगे और योगी उसे योगेश्वर के रूप में जानने लगे ॥ १४२ ॥ क्षत्रिय उसे महान् छत्रपति जानने लगे और अस्त्र-शस्त्रधारी उसे महान शक्तिशाली समझने लगे। रात्रि उसे चन्द्र और दिन उसे सूर्य के समान समझने लगा ॥ १४३ ॥ संतगण उसे शान्ति-रूप और अग्नि उसे तेज-रूप में पहचानने लगी। धरती उसे पर्वत मानने लगी और मृगियाँ उसे मृगराज के रूप में मानने लगीं ॥ १४४ ॥ क्षत्रिय उसे छत्रपति और योगियों को वह महायोगी दिखाई देने लगा पर्वत उसे हिमालय मानने लगे और उसे सूर्य के

अन माना ॥ १४५ ॥ जल सरूप जल तास पछाना। मेघन इंद्र देव कर माना। बेदन ब्रहम रूप करि देखा। बिप्पन ब्यास जानि अवरेखा ॥ १४६ ॥ लखिमी ताहि बिशन करि मान्यौ। बासवदेव बासवी जान्यो। संतन शांत रूप करि देखा। शत्रन कलह सरूप बिसेखा ॥ १४७ ॥ रोगन ताहि अउखधी सूझा। भामिन भोग रूप करि बूझा। मित्रन महा मित्र कर जाना। जोगन परम तत्तु पहचाना ॥१४८॥ मोहन महा मेघ करि मानिआ। दिनकर चित्त चक्कवी जानिआ। चंद सरूप चकोरन सूझा। स्वात बूंद सीपन करि (पृ०पं०१२४) बूझा ॥ १४९ ॥ मास बसंत कोकला जाना। स्वांति बूंद चात्रक अनुमाना। साधन सिद्ध रूप करि देखा। राजन महाराज अवरेखा ॥ १५० ॥ दान सरूप भिच्छकन जाना। काल सरूप शत्रु अनुमाना। शास्त्र सरूप सिंम्रितन देखा। सत्त सरूप साध अवरेखा ॥ १५१ ॥ सील सरूप साधवन चीना। दिआल सरूप दया चित कीना। मोहन मेघ रूप पहिचाना। चोरन ताहि भोर करि जाना ॥ १५२ ॥ कामनि

समान तेजवान समझने लगा ॥ १४५ ॥ जल उसे समुद्र समझने लगा और मेघ उसे इन्द्र मानने लगे। वेद उसे ब्रह्म-रूप में मानने लगे और विप्र उसे महर्षि व्यास के रूप में पहचानने लगे ॥ १४६ ॥ लक्ष्मी उसे विष्णु मानने लगी और इन्द्राणी उसे इन्द्र समझने लगी। संत उसे शान्ति-रूप में देखने लगे और शत्रु उसे कलह-स्वरूप में देखने लगे ॥ १४७ ॥ रोग उसे ओषधि और स्त्रियाँ भोग-रूप में देखने लगीं। मित्र उसे महा मित्र समझने लगे तथा योगीगण उसे परमतत्त्व के रूप में पहचानने लगे ॥ १४८ ॥ मोर उसे मेघ समझने लगे और चकवी उसे सूर्य समझने लगी। चकोरी को वह चन्द्रमा लगा और सीपी को वह स्वाति-बूँद प्रतीत हुआ ॥ १४९ ॥ कोयल को वसंत ऋतु दिखाई दिया और पपीहे को स्वाति नक्षत्र की बूंद के समान दिखाई दिया। साधुओं को वह सिद्ध और राजाओं को महाराजा के रूप में वह दिखाई पड़ने लगा ॥ १५० ॥ भिक्षुकों ने उसे दानस्वरूप और शत्रुओं ने उसे कालस्वरूप देखा। स्मृतियाँ उसे शास्त्रज्ञान के रूप में और साधु उसे सत्यस्वरूप के रूप में मानने लगे ॥ १५१ ॥ साधुओं ने उसे शील के रूप में देखा और उसके दयालुस्वरूप को मन में बसाया। मोर उसे बादल के रूप में और चोर उसे भोर के रूप में जाना ॥ १५२ ॥ स्त्रियाँ उसे केलिक्रीड़ा का अवतार मानने लगीं और साधुगण उसे सिद्धस्वरूप में देखने लगे। सर्प

केल रूप करि सूझा । साधन सिद्ध रूप तिह बूझा । फणपतेश फनीअर करि जान्यो । अंम्रित रूप देवतन मान्यो ।। १५३ ।। मणि समान फनिअर करि सूझा । प्राणन प्राण रूप करि बूझा । रघुबंसिअन रघुराज प्रमान्यो । केवल क्रिशन जादवन जान्यो ।। १५४ ।। बिपत हरन बिपतहि करि जाना । बल महीप बावन पहचाना । शिव सरूप शिव संतन पेखा । ब्यास परासुर तुल्ल बसेखा ।। १५५ ।। बिप्रन बेद सरूप बखाना । छत्तन जुद्ध रूप करि जाना । जउन जउन जिह भाँत बिचारा । तउनै काछ काछ अनुरागा ।। १५६ ।। भाँत भाँत तिन कीनो राजा । देस देस के जीत समाजा । भाँत भाँत के देस छिनाए । पैग पैग पर जग्ग कराए ।। १५७ ।। पग पग जग्ग खंभ कहु गाडा । डग डग होम मंत्र करि छाडा । ऐसो धरा न दिखिअत कोई । जग्ग खंभ जिह ठउर न होई ।। १५८ ।। गवालंभ बहु जग्ग करे बर । ब्रहमण बोलि बिसेख धरम धर । बाजमेध बहु बारन कीने । भाँत भाँत भुय के रस लीने ।।१५९।। गजामेध बहु करे जग्ग तह । अजामेध ते सकै न गन कह । गवालंभ

उसे शेषनाग के रूप में जानने लगे और देवता उसे अमृत के रूप में मानने लगे ।। १५३ ।। वह सर्प में मणि के समान दिखाई देता था और प्राणी उसे प्राण-रूप में देखते थे । सम्पूर्ण रघुवंश में वह प्रमाणित रघुराज था और यादवगण भी उसे कृष्ण के रूप में मानते थे ।। १५४ ।। विपदा उसे दुःख-नाशक के रूप में और बली ने उसे वामन के रूप में देखा । शिव के भक्तों ने उसे शिवस्वरूप में देखा तथा व्यास और पराशर के समान जाना ।। १५५ ।। विप्रों ने उसे वेदस्वरूप और क्षत्रियों ने उसे युद्धस्वरूप माना । जिस-जिसने उसे जिस तरह से भी विचार किया उसने उसकी भावना के अनुरूप अपना रूप प्रस्तुत किया ।। १५६ ।। देश-विदेशों को जीतकर उसने विभिन्न प्रकार से राज किया । भिन्न-भिन्न देशों को छीनकर उसने क़दम-क़दम पर यज्ञ करवाये ।। १५७ ।। क़दम-क़दम पर उसने यज्ञस्तम्भ गाड़े और स्थान-स्थान पर मंत्रादि से हवन करवाये । पृथ्वी का कोई भाग ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता था जहाँ पर यज्ञस्तम्भ दिखाई नहीं पड़ते थे ।। १५८ ।। विशिष्ट ब्राह्मणों को बुलाकर उसने अनेकों गोमेध यज्ञ किए । भिन्न-भिन्न प्रकार से भूमि का आनन्द भोगते हुए उसने बहुत बार अश्वमेध यज्ञ भी किए ।। १५९ ।। उसने गजमेध यज्ञ भी किए और अजामेध यज्ञ तो उसने इतने किए कि उनकी गणना नहीं की जा सकती । विविध प्रकार से गोमेध करते हुए

कर बिबध प्रकारा। पसु अनेक मारे तिह बारा ॥ १६० ॥ राजसूअ करि बिबध प्रकारं। दुतीअ इंद्र रघुराज अपारं। भाँत भाँत के बिधवत दाना। भाँत भाँत कर तीरथ न्हाना ॥१६१॥ सरब तीर्थ परि पावर बाँधा। अंनछेत्र घर घर मै साँधा। आसावंत कहूँ कोई आवै। ततछिन मुख मंगै सो पावै ॥१६२॥ भूख नाँग कोई रहन न पावै। भूपत हुइ करि रंक सिधावै। बहुर दान कह करन पसारा। एक बार रघुराज निहारा ॥१६३॥ स्वरण (मू०ग्रं०६२५) दान दे बिबध प्रकारा। रुकम दान नही पायत पारा। साज साज बहु दीने बाजा। जन सभ करे रंक रघु राजा ॥ १६४ ॥ हसत दान अरु उशटनि दाना। गऊ दान बिधवत इशनाना। हीर चीर दे दान अपारा। मोहि सभै महिमंडल डारा ॥ १६५ ॥ बाजी देत गजन के दाना। भाँत भाँत दीनन सनमाना। दूख भूख काहू न संतावै। जो मुख माँगै वह बरु पावै ॥ १६६ ॥ दान सील को जान पहारा। दया सिंध रघुराज भुआरा। सुंदर महाँ धनुखधर आछा। जन अलिपत चकाछ तन काछा ॥ १६७ ॥ नित उठि करत

उसने अनेकों पशुओं की बलि दी ॥ १६० ॥ अनेकों राजसूय यज्ञ करके रघुराज द्वितीय इन्द्र के समान दिखाई पड़ते थे। भिन्न-भिन्न तीर्थों पर स्नान कर उसने अनेकों प्रकार के दान विधिवत दिए ॥ १६१ ॥ सर्व तीर्थों पर उसने प्याउ (पौशला) बनाये और घर-घर में अन्न के भण्डार स्थापित करवाये, ताकि यदि कोई किसी प्रकार की इच्छा को लेकर आये तो तत्क्षण मुँह माँगी वस्तु पा सके ॥ १६२ ॥ कोई भूखा-नंगा न रहने पाये और जो भी भिखारी आये वह राजा होकर वापस जाये। राजा रघु का इस प्रकार का प्रबन्ध था कि जो उसे एक बार देख लेता था वह पुन: स्वयं दान करने योग्य हो जाता था ॥ १६३ ॥ भिन्न प्रकार से सोने और चाँदी के दान उसने दिए। उसने सबको इतना दिया कि मानो सब रंकों को राजा बना दिया ॥ १६४ ॥ विधिवत् स्नान करके वह हाथी, ऊँट और गोदान करता था। विभिन्न प्रकार के वस्त्रों का दान करके उसने सारे भूमण्डल को मोहित कर लिया था ॥१६५॥ विभिन्न प्रकार के दीनों का सम्मान करते हुए वह घोड़े और हाथी दान में देता था। दुःख और भूख किसी को कष्ट नहीं देते थे और मुँह से जो कोई भी जो कुछ माँगता था वही प्राप्त करता था ॥ १६६ ॥ दान और शील का घर और दया का समुद्र इस पृथ्वी पर राजा रघु था। वह महान सुन्दर धनुर्धर और सदा अलिप्त बना रहनेवाला प्रतापी राजा था ॥ १६७ ॥ गुलाब, केवड़ा

देवि की पूजा। फूल गुलाब केवड़ा कूजा। चरन कमल नित सीस लगावै। पूजन नित्त चंडका आवै ॥ १६८ ॥ धरम रीत सभ ठौर चलाई। जल तल सुख बसी लुगाई। भूख नांग कोई कहू न देखा। ऊच नीच सभ धनी बसेखा ॥ १६९ ॥ जह तह धरम धुजा फहराई। चोर चार नह देख दिखाई। जह तह यार चोर चुन मारा। एक देस कहू रहै न पारा ॥१७०॥ साध चोर कोई दिशट न पेखा। ऐस राज रघुराज बिसेखा। चारे दिशा चक्र फहरावै। पापन काटि मूँड फिर आवै ॥१७१॥ गाइ सिंघ कह दूध पिलावै। सिंघ गऊ कह घासु चुगावै। चोर करत धन की रखवारा। त्रास मार कोई हाथु न डारा ॥ १७२ ॥ नार पुरख सोवत इक सेजा। हाथ पसार न साकत रेजा। पावक घ्रित इक ठउर रखाए। राज त्रास ते ढरै न पाए ॥ १७३ ॥ चोर साध मग एक सिधारै। त्रास त्रसत कर कोइ न डारै। गाइ सिंघ इक खेत फिराही। हाथ चलाइ सकत कोई नाही ॥ १७४ ॥ इह बिधि राजु कर्यो

और मिश्री आदि के साथ वह नित्यप्रति देवी की पूजा करता था और नित्य चण्डिका की पूजा करता हुआ उसके चरण-कमलों को अपने सिर पर लगाता था ॥ १६८ ॥ उसने सब स्थानों पर धर्म की परम्पराएँ चलायीं और सब लोग सर्वत्र सुखपूर्वक बसने लगे। भूखा-नंगा, ऊँच-नीच कोई दिखाई नहीं पड़ता था और सभी समृद्धिशाली दिखाई पड़ते थे ॥ १६९ ॥ सर्वत्र धर्मध्वजा फहरती थी और कहीं पर कोई चोर-ठग दिखाई नहीं देता था। उसने चुन-चुनकर चोरों और ठगों को मार डाला था और एकछत्र राज्य स्थापित किया ॥१७०॥ राजा रघु का राज्य ऐसा था कि उसमें कोई साधु और चोर का भेद नहीं था अर्थात् सभी सन्त थे। चारों दिशाओं में उसका ध्वज और चक्र फहरता था तथा पक्षियों के सिर काटकर वापस आता था ॥ १७१ ॥ गाय सिंह को दूध पिलाती थी और सिंह गाय को चराता था। चोर समझे जानेवाले लोग अब धन की रखवाली करते थे और मार के भय से कोई ग़लत काम में हाथ नहीं डालता था ॥ १७२ ॥ स्त्री-पुरुष सुखपूर्वक शय्याओं पर शयन करते थे और कोई किसी के सामने हाथ नहीं फैलाता था। घी और अग्नि एक ही स्थान में रहते थे, परन्तु राजा के भय से वे एक-दूसरे को हानि नहीं पहुँचाते थे तथा पिघलते नहीं थे ॥ १७३ ॥ चोर और साधु साथ-साथ चलते थे परन्तु राज-भय से कोई किसी को त्रस्त नहीं करता था। गाय और सिंह एक ही खेत में विचरण करते थे और कोई शक्ति उन पर हाथ नहीं उठा

रघुराजा । दान निशान चहूँ दिस बाजा । चारो दिशा बैठ रखवारे । महाबीर अरु रूप उजिआरे ॥ १७५ ॥ बीस सहंस्र बरख बरमाना । राजु करा दस चार निधाना । भाँत अनेक करे नित धरमा । और न सकै ऐस कर करमा ॥ १७६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ इह भाँत राजु रघुराज कीन । गज बाज साज दीनान दीन । न्रिप जीत जीत लिन्ने अपार । करि खंड खंड खंडे गड़्वार ॥ १७७ ॥ (मू०ग्रं०६२६)

॥ इति रघुराज समापतहि ॥

अथ अज राजा को राज कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ फुनि भए राज अजराज बीर । जिन भाँति भाँति जित्ते प्रबीर । किन्ने खराब खाने खवास । जित्ते महीप तोरे मवास ॥ १ ॥ जित्ते अजीत मुंडे अमुंड । खंडे अखंड किने घमंड । दस चारि चारि बिदिआ निधान । अज राज राज राजा महान ॥ २ ॥ सूरा सुबाहु जोधा प्रचंड । स्रुत सरब शास्त्र बिद्या उदंड । मानी महान संुदर सरूप ।

सकती थी ॥ १७४ ॥ राजा रघु ने इस प्रकार राज्य किया और उसके दान का डंका चारो दिशाओं में बज उठा । महान शक्तिशाली और सौन्दर्यशाली वीर चारों दिशाओं में उसकी रक्षा करनेवाले थे ॥ १७५ ॥ चौदह कलाओं में प्रवीण उस राजा ने बीस हज़ार वर्ष तक राज्य किया । अनेक प्रकार से उसने नित्य इस प्रकार के धर्म-कार्य किए कि उस प्रकार के कर्म और कोई नहीं कर सकता था ॥ १७६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ इस प्रकार राजा रघु ने राज्य किया और दीनों को हाथी, घोड़े दान किए । उसने अनेकों राजाओं को जीता, अनेकों क़िलों को खण्ड-खण्ड कर डाला ॥ १७७ ॥

॥ इति रघुराज समाप्त ॥

अज राजा का राज्य-कथन

॥ पाधड़ी छंद ॥ पुन: महाशक्तिशाली राजा अज हुए जिसने अनेकों वीरों को जीतकर कई वंशों का नाश किया और विरोधी राजाओं को जीता ॥ १ ॥ उसने कई अजेय राजाओं को जीता और कई घमंडी राजाओं का गर्व खण्डित किया । महान राजा अज चौदह कलाओं और विद्याओं का समुद्र था २ वह राजा प्रचण्ड योद्धा और सर्व श्रुतियों एव शास्त्रों की

अविलोक जास लाजंत भूप ॥ ३ ॥ राजान राज राजाधिराज । ग्रहि भरे सरब संपति समाज । अविलोकि रूप रीझंत नार । स्रुत दान सील बिद्या उदार ॥ ४ ॥ जौ कहो कथा बाढंत ग्रंथ । सुणि लेहु मित्र संछेप कंथ । बैदरभ देस राजा सुबाहु । चंपावती सु ग्रहि नारि ताहि ॥ ५ ॥ तिहँ जई एक कन्या अपार । तिह मती इंद्र नामा उदार । जब भई जोग बर के कुमार । तब कीन बैठ राजा बिचार ॥ ६ ॥ लिने बुलाइ न्रिप सरब देस । धाए सुबाहु लै दल असेस । मुख भई आन सारस्वती आप । जिह जपत लोग मिलि सरब जाप ॥ ७ ॥ तब देस देस के भूप आन । किनौ प्रणाम राजा महान । तह बैठ राज सोभंत ऐस । जन देवमंडली सम न तैस ॥ ८ ॥ बाजंत ढोल दुंदभ अपार । बाजंत तूर झनकंत तार । सोभा अपार बरनी न जाइ । जनु बैठ इंद्र आभा बनाइ ॥ ९ ॥ इह भांत राज मंडली बैठ । अविलोकि इंद्र जह नाक ऐठ । आभा

विद्या में प्रवीण था। वह महान राजा स्वाभिमानी सुन्दर स्वरूप वाला था जिसे देख सभी राजा लज्जित होते थे ॥ ३ ॥ वह महाराजा राजाओं का भी राजा था और उसके समाज में सबके घर सम्पत्ति से भरे हुए थे। उसके रूप को देख स्त्रियाँ मोहित होती थीं और श्रुतियों का मर्मज्ञ वह राजा दानी, शीलवान और विद्याओं का जानकार उदार राजा था ॥ ४ ॥ यदि पूरी कथा कहता हूँ तो ग्रन्थ बढ़ जाता है, इसलिए हे मित्र ! आप संक्षेप में ही इस कथा को सुन लें। विदर्भ देश का सुबाहु नामक राजा था जिसकी रानी का नाम चम्पावती था ॥ ५ ॥ उसने एक कन्या को जन्म दिया जिसका नाम इन्दुमती था। जब वह विवाह योग्य हुई तब राजा ने मंत्रियों के साथ बैठकर विचार किया ॥ ६ ॥ राजा ने सब देशों के राजा को बुलाया जो दल-बल सहित सुबाहु के राज्य की ओर चल पड़े। सर्वपूज्य सरस्वती का वास सबके मुख पर हो गया अर्थात् सभी उस कन्या के वरण की इच्छा के लिए विभिन्न प्रकार से आकांक्षाएँ करने लगे ॥ ७ ॥ देश-विदेश के राजाओं ने आकर उस राजा को प्रणाम किया तथा वे वहाँ बैठे इस प्रकार शोभायमान हो रहे थे कि देवमण्डली भी उनकी शोभा के समान नहीं थी ॥ ८ ॥ ढोल और दुन्दुभियाँ तथा अनेक अन्य वाद्य बज रहे थे। वहाँ की अपार शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता और सभी ऐसे लग रहे थे मानो इन्द्र शोभापूर्वक बैठे हों ॥ ९ ॥ वह राजमण्डली ऐसे बैठी थी कि उन्हें देख इन्द्र भी आश्चर्य से नाक-भौं सिकोड़ने लगा। उनकी शोभा का कौन वर्णन करे। गंधर्व और यक्ष

अपार बरनै सु कउन । ह्वै रहे जच्छ गंध्रब मउन ॥ १० ॥ ॥ अरध पाधरी छंद ॥ सोभंत सूर । लोभंत हूर । अछ्री अपार । रिज्झी सुधार ॥ ११ ॥ गावंत गीत । मोहंत चीत । मिल दे असीस । जुग चारि जीस ॥ १२ ॥ बाजंत तार । डारै धमार । देवान नार । देखत अपार ॥ १३ ॥ कै बेद रीत । गावंत गीत । सोभा अनूप । सोभंत भूप ॥१४॥ बाजंत तार । रीझंत नार । गावंत गीत । आनंद चीत ॥१५॥ ॥ उछाल छंद ॥ गावत नारी । बाजत तारी । देखत राजा । देवत साजा ॥ १६ ॥ गावत गीतं । आनंद चीतं । सोभत सोभा । लोभत लोभा ॥ १७ ॥ देखत नैणं । भाखत बैणं । सोहत छत्री (मू०ग्रं०६२७) । लोभत अत्री ॥१८॥ गज्जत हाथी । सज्जत साथी । कूदत बाजी । नाचत ताजी ॥ १९ ॥ बाजत तालं । नाचत बालं । गावत गाथं । आनंद साथं ॥ २० ॥ कोकिल बैणी । सुंदर नैणी । गावत गीतं । चोरत चीतं ॥ २१ ॥ अछ्रुण भेसी । सुंदर केसी । सुंदर नैणी ।

भी उन्हें देख मौन थे ॥ १० ॥ ॥ अर्ध पाधरी छंद ॥ शूरवीर शोभायमान थे, जिनको देखकर अप्सराएँ भी मोहित हो रही थीं। अनन्त अप्सराएँ शूरवीरों पर मोहित हो रही हैं ॥ ११ ॥ वे मन को मोहनेवाले गीत गाती हुई मिलकर चार युगों तक जीवित रहने का आशीर्वाद दे रही थीं ॥ १२ ॥ वाद्यों की घमघमाहट सुनाई पड़ रही थी और अनेकों देवस्त्रियाँ दिखाई पड़ रही थीं ॥ १३ ॥ वेद-रीति के अनुरूप गायन हो रहा था और अनुपम शोभा वाले राजा शोभायमान हो रहे थे ॥ १४ ॥ तारों वाले वाद्य बज रहे थे और स्त्रियाँ आनन्दित होते हुए प्रसन्नतापूर्वक गीत गा रही थीं ॥ १५ ॥ ॥ उछाल छंद ॥ ताली बजा-बजाकर स्त्रियाँ गा रही थीं और देवताओं की साज-सज्जा वाले राजागण उन्हें देख रहे थे ॥ १६ ॥ आनन्दित चित्त के साथ गीत-गायन चल रहा था और वहाँ की शोभा देखकर लोभ का मन भी लोभित हो रहा था ॥ १७ ॥ वे आँखों के इशारों से बातें कर रहे थे और सभी शस्त्रधारी शोभायमान हो रहे थे ॥ १८ ॥ हाथी गरज रहे थे। वीरों के साथी शोभायमान हो रहे थे तथा घोड़े नाच-कूद रहे थे ॥ १९ ॥ बालिकाएँ नृत्य कर रही थीं और तालियाँ बजाती आनन्दपूर्वक गा रही थीं ॥ २० ॥ वे कोकिल के समान स्वर वाली और सुन्दर नयनों वाली स्त्रियाँ गीत गाकर चित्त को चुरा रही थीं ॥ २१ ॥ सुन्दर केशों वाली, अप्सराओं के वेश वाली, सुन्दर नयनों वाली वे स्त्रियाँ कोकिलकण्ठी थीं ॥ २२ ॥ वे कामनाओं का भण्डार

कोकिल बैणी ॥ २२ ॥ अतभुत रूपा । कामण कूपा । चारु प्रहासं । ऊन्नित नासं ॥ २३ ॥ लखि दुति राणी । लजित इंद्राणी । सोहत बाला । रागण माला ॥ २४ ॥
॥ मोहणी छंद ॥ गउर सरूप महा छबि सोहत । देखत सुर नर को मन मोहत । रीझत ताकि बडे न्रिप ऐसे । सोभहि कउन सकै कहि तैसे ॥ २५ ॥ सुंदर रूप महा दुति बालिय । पेखत रीझत बीर रिसालिय । नाचत भाव अनेक त्रिआ करि । देखत सोभा रीझत सुर नर ॥ २६ ॥ हिंसत हैवर चिंसत हाथिय । नाचत नागर गावत गाथिय । रीझत सुर नर मोहत राजा । देवत दान तुरंत समाजा ॥ २७ ॥ गावत गीतन नचत अपच्छरा । रीझत राजा खीझत अच्छरा । बाजत नारद बीन रसालिय । देखत देव प्रभासत ज्वालिय ॥२८॥ आँजत अंजन साजत अंगा । सोभत बस्त्र सु अंग सुरंगा । नाचत अछ्री रीझत राऊ । चाहत बरबो करत उपाऊ ॥ २९ ॥ तत थई नाचै सुरपुर बाला । रुणझुण बाजै रंग अंग माला । बनि बनि बैठे जह तह राजा । दै दै डारै तन मन साजा ॥३०॥

स्त्रियाँ अद्भुत रूप-सौन्दर्य वाली थीं । उनकी हँसी अत्यन्त सुन्दर थी और उनकी नासिका लम्बी थी ॥ २३ ॥ रानियों के सौंदर्य को देख इन्द्राणी भी लज्जित हो रही थीं । राग की माला के समान वे अप्सराएँ शोभायमान हो रही थीं ॥ २४ ॥ ॥ मोहिनी छंद ॥ गोरे रंग वाली के सुन्दर स्त्रियाँ देवताओं और मनुष्यों का मन मोह रही थी । उनको देखकर बड़े-बड़े राजा भी रीझ रहे थे अतः उनकी शोभा का क्या वर्णन किया जा सकता है ॥ २५ ॥ उन स्त्रियों की रूप-सज्जा को देखकर अनेकों रसिक वीर रीझ रहे थे । स्त्रियाँ अनेक भावपूर्ण मुद्राओं में नृत्य कर रही थीं, जिसे देख सभी सुर-नर रीझ रहे थे ॥ २६ ॥ घोड़े हिनहिना रहे थे, हाथी चिंघाड़ रहे थे, नागरिक नृत्य करते जा रहे थे । देवता, नर-नारी सभी प्रसन्न हो रहे थे और राजागण दान इत्यादि कर रहे थे ॥ २७ ॥ गीत गाती हुई अप्सराएँ नाच रही थीं, जिन्हें देखकर राजागण प्रसन्न हो रहे थे और उनकी रानियाँ खीझ रही थीं । नारद की सुन्दर वीणा बज रही थी जिसे देख देवगण ज्वाला के समान तेजवान दिखाई दे रहे थे ॥ २८ ॥ सबों ने आँखों में अंजन लगाकर अंगों को सजाया हुआ था और सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे थे । अप्सराएँ नाच रही थीं, राजा प्रसन्न हो रहे थे और उन्हें वरण करने का उपाय कर रहे थे ॥ २९ ॥ देव-स्त्रियाँ नृत्य कर रही थीं और उनके अंगों की मालाओं की झनकार सुनाई पड़

जिह जिह देखा सो सो रीझा। जिन नही देखा तिन मन खीझा। करि करि भायं तिअ बर नाचैं। अतभुत भायं अंग अंग राचैं ॥ ३१ ॥ तिन अतभुत गत जह तह ठानी। जह तह सोहै मुन मन मानी। तजि तजि जोगं भजि भजि आवैं। लखि अति आभा जिअ सुख पावैं ॥ ३२ ॥ बनि बनि बैठे जह तह राजा। तह तह सोभे सभ सुभ साजा। जह तह देखैं रुन गन फूले। मुनि मन छबि लखि तन मन भूले ॥ ३३ ॥ तत बित घन सुख रस सभ बाजैं। सुनि मन रागं गुनि गन लाजैं। जह तह गिर गे रिझ रिझ ऐसे। जनु भट जूझैं रण छिण कैसे ॥ ३४ ॥ बन बन फूले जन बर फूलं। तन बर सोभे जनु धर मूलं। जह तह झूलैं मद मत राजा। जनु (मू०ग्रं०१२८) मुरि बोलैं सुन घन गाजा ॥ ३५ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ जह जह बिलोकि सोभा अपार। बनि बैठि सरब राजाधिकार। इह भाँत कहै नही परत बैन। लखि नैन रूप रीझंत नैन ॥ ३६ ॥

रही थी। स्थान-स्थान पर सज-धजकर राजागण बैठे हुए थे ॥ ३० ॥ जिस-जिसने देखा वह प्रसन्न हो उठा और जिसने उस शोभा को नहीं देखा वह मन ही मन खीझ उठा। विभिन्न प्रकार के भावों का प्रदर्शन कर स्त्रियाँ नाच रही थीं और उनके अंग-अंग से अद्‌भुत भाव-व्यंजना हो रही थी ॥ ३१ ॥ उन स्त्रियों ने भी उस स्थान पर कुछ अद्‌भुत करने का निश्चय कर लिया था, क्योंकि वहाँ पर यत्र-तत्र कई हठवादी मुनि भी बैठे थे। योगी अपने योग को त्याग दौड़े चले आने लगे और इस उत्सव की शोभा को देख सुख प्राप्त करने लगे ॥३२॥ जहाँ-जहाँ राजा सज-सँवर कर बैठे थे, वहाँ का वातावरण अत्यन्त शोभायमान प्रतीत हो रहा था। गुणों और सेवकों से सम्पन्न राजागण जहाँ-तहाँ प्रसन्न हो रहे थे और मुनिगण भी उनकी छवि को देख तन-मन की सुधि भूल बैठे थे ॥ ३३ ॥ तार वाले वाद्य वहाँ बज रहे थे और उनके आनन्ददायक रागों को सुनकर वाद्यकला के मर्मज्ञ भी लज्जित हो रहे थे। वाद्यों की ध्वनि को सुनकर राजागण यहाँ-वहाँ इस प्रकार गिर पड़े कि मानो युद्ध में योद्धा घायल होकर पड़े हों ॥ ३४ ॥ वे वनों के फूलों के समान फूले हुए दिखाई पड़ रहे थे और उनके तन धरती के सुख के मूल-भाव को प्रदर्शित कर रहे थे। मदमत्त राजागण यत्र-तत्र इस प्रकार झूम रहे थे मानो गरजते हुए बादल को सुनकर मोर मस्त हो रहे हों ॥ ३५ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ यत्र-तत्र शोभा को देखते हुए सभी राजा बैठ गए। उनकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता और उनके स्वरूप को देखकर आँखें प्रसन्न हो रही थीं ॥३६॥

अविलोकि नाचि ऐसो सुरंग । सर तानि त्रिपत मारत अनंग ।
सोभा अपार बरणी न जाइ । रिझे अवलोकि रानारु राइ ।।३७।।
आगम बसंत जनु भयो आज । इह भाँत सरब देखै समाज ।
राजाधिराज बनि बैठ ऐस । तिनके समान नही इंद्र
हैस ।। ३८ ।। इक मास लाग तह भयो नाच । बिन पिऐ
कैफ कोऊ न बाच । जहँ जहँ बिलोकि आभा अपार । तहँ
तहँ सु राज राजन कुमार ।। ३९ ।। लै संग तास सारस्वति
आप । जिह को जपंत सभ जगत जाप । निरखो कुमार इहँ
सिंधराज । जाकी समान नही इंद्र साज ।। ४० ।। अविलोक
सिंधराजा कुमार । नहो तास चित्त किओ सुमार । तिह
छाडि पाछ आगै चलीस । जनु सरब सोभ कहु लील लीस ।।४१।।
पुन कहै तास सारस्वती बैन । इह पशचमेस अब देख नैन ।
अविलोकि रूप ताको अपार । नही मद्धि चित्ति आन्यो
कुमार ।। ४२ ।। ।। मधुभार छंद ।। देखो कुमार । राजा
जुझार । सुभ वार देस । सुंदर सु बेस ।। ४३ ।। देख्यो
बिचार । राजा अपार । आना न चित्त । परमं पवित्त ।।४४।।

इस प्रकार के सुरम्य नृत्य में कामदेव बाण खींच-खींचकर राजाओं को मार रहा था। वातावरण की अपार शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता और उसे देख सभी लोग प्रसन्न हो रहे थे ।। ३७ ।। ऐसा लग रहा था मानो आज वसन्त का दिन हो। इस प्रकार सारे समाज को देखते हुए सभी राजा इस प्रकार शोभापूर्ण हो बैठ गए मानो इन्द्र भी उनके समान न हो ।। ३८ ।। इस प्रकार एक माह तक वहाँ नृत्य होता रहा और नृत्य की उस मदिरा को पीने से कोई भी न बच सका। यत्र-तत्र-सर्वत्र राजा और राजकुमारों का सौन्दर्य वहाँ दिखाई दे रहा था ।। ३९ ।। जगत के द्वारा वन्दनीय सरस्वती ने राजकुमारी से कहा कि हे राजकुमारी ! इन राजकुमारों को देखो जिनके समान इन्द्र भी नहीं हैं।। ४० ।। राजकुमारी ने राजकुमारों के झुण्ड को देखा और सिन्धुराज के राजकुमार को भी पसन्द नहीं किया। उसे छोड़कर वह सारी शोभा को अपने में समाहित करती हुई आगे चली ।। ४१ ।। सरस्वती ने पुनः उससे कहा कि यह पश्चिम दिशा का राजा है तुम इसे देखो। उसके स्वरूप को राजकुमारी ने देखा परन्तु वह भी उसे अच्छा न लगा ।।४२।। ।। मधुभार छंद ।। हे कुमारी ! इन सुन्दर वेशस्वरूप और देश वाले राजाओं को देखो ।। ४३ ।। राजकुमारी ने अनेक राजाओं को विचारपूर्वक देखा और पश्चिम दिशा का राजा भी उस परमपवित्र कन्या के मन में नहीं जमा ।।४४।।

तबि आगि चाल । सुंदर सु बाल । मुसकिआत ऐस । घन बीज जैस ॥ ४५ ॥ न्रिप पेखि रीझ । सुर नार खीझ । बढि तास जान । घट आपमान ॥ ४६ ॥ सुंदर सरूप । सौंदरजु भूप । सोभा अपार । सभ केस धार ॥ ४७ ॥ देखे नरेंद्र । ठाढे महेंद्र । मुलतान राज । राजान राज ॥४८॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ चली छोडि ता कौ लिआ राज ऐसे । मनो पांड पुतं सिरी राज जैसे । खरी मद्धि राजिसथली ऐस सोहै । मनो ज्वालमाला महा मोनि मोहे ॥ ४९ ॥ सु भै राजिसथली ठाढि ऐसे । मनो चित्रकारी लिखी चित्र जैसे । बधे स्वरण की किंकणी लाल मालं । सिखा जान सोभे न्रिपं जग्गि ज्वालं ॥ ५० ॥ कहै बैन सारस्वती पेखि बाला । लखो नैन ठाढे सभै भूप आला । रुचै चित्त जउनै सोई नाथ कीजै । (मू०ग्रं०६२९) सुनो प्रान प्यारी इहै मानि लीजै ॥ ५१ ॥ बडी बाहनी संगि जा के बिराजै । घुरैं संख भेरी महा नाद बाजै । लखो पूर बेसं नरेसं महानं । दिनं रैण जापै सहंस्र

तब वह बालिका आगे चली और इस प्रकार मुस्कुराने लगी जैसे घटा में बिजली चमकती है ॥ ४५ ॥ राजा उसे खकर मोहित हो रहे थे और अप्सराएँ खीझ रही थीं। वे इसलिए खीझ रही थीं कि वे राजकुमारी को. अपने से अधिक सुन्दर पा रही थीं ॥ ४६ ॥ सुन्दर स्वरूप वाले सौन्दर्य की साक्षात् प्रतिमा और अपार शोभा वाले राजा वहाँ थे ॥ ४७ ॥ उन खड़े हुए राजाओ को राजकुमारी ने देखा और उनमें से राजाधिराज मुल्तान के राजा को भी देखा ॥ ४८ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ उन सबको छोड़ राजकुमारी इस प्रकार आगे बढ़ गई जैसे पाण्डुपुत्र पाण्डव राज-पाट छोड़ चल दिए थे। वह राजदरबार में खड़ी इस प्रकार शोभायमान हो रही थी मानो मन को मोहनेवाली ज्वालमाल हो ॥ ४९ ॥ राजदरबार में खड़ी वह किसी चित्रकार के चित्र के समान शोभायमान हो रही थी। सोने की करधनी उसने पहन रखी थी जो कि लालों की माला से युक्त थी। उसकी केशों की वेणी राजाओं के लिए साक्षात् ज्वाला के समान थी ॥ ५० ॥ सरस्वती ने पुनः कन्या को देखकर कहा कि हे राजकुमारी! इन सर्वश्रेष्ठ राजाओं को देखो। हे प्राण-प्यारी! मेरी बात मानो और जो चित्त में आये उसी का वरण कर लो ॥५१॥ यह जिसके साथ बहुत बड़ी सेना है और शंख, भेरियाँ तथा रणवाद्य बज रहे है इस महान राजा को देखो, इसकी संगिनी हज़ारों भुजाओं के कारण दिन

भुजानं ॥ ५२ ॥ धुजा मद्धि जा के बडो सिंघ राजै । सुनै नाद ताको महाँ पाप भाजै । लखो पूरबीसं छितीसं महानं । सुनो बैन बाला सरूपं सु भानं ॥ ५३ ॥ घुरै दुंदभी संख भेरी अपारं । बजै दच्छनी सरब बाजंत्र सारं । तुरी कानरे तूर तानं तरंगं । मुचं झाजरं नाइ नादं म्रिदंगं ॥ ५४ ॥ बधे हीर चीरं सु बीरंसु बाहं । बडो छत्रधारी सु सोभ्यो सिपाहं । हने पिग बाजी रथं जेणि जानो । तिसै दच्छनेसं हिऐ बाल मानो ॥ ५५ ॥ महा बाहनीसं नगीसं नरेसं । कई कोटि पातं सुभै पत्र भेसं । धुजं बंध उद्धं गजं गूड़ बाँके । लखो उतरी राजकै नाम ताको ॥ ५६ ॥ फरी धोप पाइक सु आगै उमंगै । जिणै कोटि बंको मुरै नाहि अंगं । हरे बाज राजं कपोतं प्रमानं । नहे स्यंदनं इंद्र बाजी समानं ॥ ५७ ॥ बडे स्रिंग जाके धरे सूर सोभै । लखे दैत कंन्या जिनै चित लोभै । कढे दंत पत्तं सिरं केस उच्चं । लखे गरभणीआनि के गरभ मुच्चं ॥ ५८ ॥ लखो लंक एसं नरेसं सुबालं । सभै संग जा

भी रात के समान प्रतीत होता है ॥ ५२ ॥ जिसके ध्वज के बीचों बीच बड़ा सिंह शोभायमान है और जिसकी ध्वनि सुनकर महापाप भी भाग जाते हैं, हे राजकुमारी, उस सूर्य के समान स्वरूप वाले महान् पूर्व देश के राजा को देखो ॥ ५३ ॥ ये जहाँ दुन्दुभियाँ, शंख और भेरियाँ बज रही हैं तथा दक्षिणी वाद्य बज रहे हैं, अनेकों अन्य वाद्यों की तरंगें और तानें सुनाई पड़ रही हैं तथा मुचंग, मृदंग, झाँझर इत्यादि बज रहे हैं ॥ ५४ ॥ वीरों ने सुन्दर वस्त्र धारण कर रखे हैं और सेना-सहित वह छत्रधारी शोभायमान हो रहा है। जिसका रथ और उसके घोड़े बड़े-बड़े पर्वताकार वीरों को नष्ट कर देते हैं, हे राजकुमारी, वही दक्षिण नरेश है ॥ ५५ ॥ जिस राजा की सेना महान है और जिसमें करोड़ों पैदल हरे वस्त्र धारण कर सैनिक शोभायमान हो रहे हैं तथा जिसके सुन्दर हाथी ध्वजाएँ बाँधकर घूम रहे हैं, हे राजकुमारी, वह उत्तर दिशा का राजा है ॥ ५६ ॥ जिसके आगे पैदल सेना उत्साहपूर्वक चल रही है और जिसने करोड़ों को जीतकर भी युद्ध से मुख नहीं मोड़ा है, जिसके घोड़े कबूतरों के समान हैं और जिसके समान रथ इन्द्र के पास भी नहीं है ॥ ५७ ॥ जिसके पास पर्वत की चोटियों के समान शूरवीर शोभायमान हो रहे हैं और जिसे देखकर दैत्य-कन्याएँ मोहित होती हुई, मुस्कुराती हुई सिर के केशों को लहराती हैं, जिसके भय से गर्भवतियों के गर्भपात हो जाते हैं ॥ ५८ ॥ वह महाबली लंका का राजा है, जिसके साथ सभी लोकपाल भी हैं। इसने

कै सभै लोकपालं । लुट्यो एक बेरं कुबेरं भँडारी । जिण्यो इंद्र राजा बडो छत्रधारी ॥ ५६ ॥ कहे जउन बालीन ते चित्त आने । जिते भूप भारी सु पाछे बखाने । चहूँ ओर राजा कहो नाम सोभी । तजो भाँत जैसी सभै राज ओभी ॥ ६० ॥ लखो दइत सैना बडी संगि ताके । सुभै छत्रधारी बडे संग जाके । धुजा गिद्ध उद्धं लसै काक पूरं । तिसै प्यार राजा बलो ब्रिध नूरं ॥ ६१ ॥ रथं बेसटं हीर चीरं अपारं । सुभै संग जा कै सभै लोक धारं । इहै इंद्र राजा दुरं दान वारं । लिआ तास चीनो अदितिआ कुमारं ॥ ६२ ॥ नहे सपत बाजी रथं एक चक्रं । महानाग बद्धं तपै तेज बक्रं । महा उग्र धंन्वा सु आजान बाहं । सही चित्त चीनो तिसै दिउस नाहं ॥ ६३ ॥ चड्यो एण राजं धरे बाण पाणं । निसा राज ताको लखो तेज माणं । करै रसम माला उजाला परानं । जपै रात दिउसं सहंस्री भुजानं ॥ ६४ ॥ चड़े माहिखीसं समेरं जु दीसं (मू०ग्रं०६३०) । महा क्रूर करमं जिण्यो बाह बीसं । धुजादंड जाकी प्रचंडं बिराजै । लखे जास गरबीन को गरब भाजै ॥ ६५ ॥ कहा लौ बखानो

एक बार कुबेर का भंडार भी लूट लिया था और महाबली इन्द्र को भी परास्त कर दिया था ॥ ५६ ॥ हे राजकुमारी ! तुम बताओ कि तुम्हारा मन क्या कहता है । जितने भी भारी राजा थे उनका वर्णन पहले हो चुका है । चारों ओर शोभायुक्त राजा ही राजा हैं, परन्तु तुमने उन सबको एक समान त्याग दिया है ॥ ६० ॥ वह देखो जिसके साथ बड़ी दैत्य-सेना है और जिसके साथ बड़े छत्रधारी शोभा प्राप्त कर रहे हैं, जिसकी ध्वजा पर गिद्ध और कौवे शोभायमान हो रहे हैं, उस महावली राजा को तुम प्रेम करो ॥ ६१ ॥ जिसके सुन्दर वस्त्र और रथ हैं और जिसके साथ सभी लोकपाल शोभायमान हो रहे हैं; राजा इन्द्र भी इसके दान-प्रताप से भयभीत होकर छुप जाता है, हे सखी, यह वही आदित्य-कुमार है ॥ ६२ ॥ जिसके रथ में सात घोड़े हैं और जो अपने तेज से शेषनाग को भी नष्ट कर देनेवाला है तथा जिसकी लम्बी भुजाएँ और विकराल धनुष है उसे दिनकर, सूर्य के नाम से पहचानो ॥ ६३ ॥ ये जो धनुष-बाण लेकर आता हुआ दिखाई पड़ रहा है, यह रात्रि का राजा तेजस्वी चन्द्र है, जो सब प्राणियों के लिए उजाला करता है और सहस्रों लोग जिसका रात-दिन जाप करते हैं ॥ ६४ ॥ यह जो युद्ध में जाते समय पर्वत के समान दिखाई देता है और जिसने महान क्रूरकर्मी, बीसों भुजाओं वाले राजाओं को भी जीत लिया है उसकी ध्वज प्रचंड रूप से

बडे गरबधारी। सभै घेरि ठाढे जुरी भीर भारी। नचैं पातरा चातरा निरतकारी। उठै झाँझ शबदं सुनै लोग धारी॥ ६६॥ बडो दिरबधारी बडी सैन लीने। बडो दिरब को चित्त मै गरब कीने। चितं तास चीनो सही दिरब पालं। उठै जउन के रूप की ज्वालमालं॥ ६७॥ सभै भूप ठाढे जहा राजकन्या। बिखै भू तलं रूप जाके न अन्या। बडे छत्रधारी बडे गरब कीने। तहा आनि ठाढे बडी सैन लीने॥ ६८॥ नदी संग जाके सभै रूप धारे। सभै सिंध संगं चड़े तेज बारे। बडी काइ जाकी महा रूप सोहै। लखे देवकंनिआन के मान मोहे॥ ६९॥ कहो नार तोकौ इहै बंन राजं। जिसै पेख राजान को मान भाजा। कहा लौ बखानो जितो भूप आए। सभै बाल को लै भवानी बताए॥ ७०॥ ॥ सवैया॥ आनि जुरे न्रिपमंडल जेतिक तेत सभै तिन तास दिखाए। देखि फिरी चहूँ चक्रन को न्रिप राजकुमारि हिडे नही ल्याए। हारि पर्यो सभ ही भट मंडल भूपति हेरि दशा मुरझाए। फूक भए

शोभा पा रही है, अनेकों गर्वशालियों के गर्व नष्ट हो जाते हैं॥ ६५॥ इन बड़े ग धारियों का कहाँ तक वर्णन करूँ, सभी भारी भीड़ बनाकर घेरकर खड़े हुए हैं। सुन्दर और चतुर वेश्याएँ नृत्य कर रही हैं और वाद्यों का शब्द सुनाई पड़ रहा है॥ ६६॥ बड़े-बड़े द्रव्यधारी बड़ी सेनाओं को साथ लेकर तथा अपने मन में अपने द्रव्य का अभिमान करते हुए यहाँ स्थित हैं। हे राजकुमारी! उस द्रव्यपालक राजा को देखो, जिसके शरीर से रूप-सौंदर्य की ज्वालाएँ उठ रही हैं॥ ६७॥ जहाँ राजकन्या थी, वहीं सभी राजा खड़े हुए थे और उस राजकुमारी के समान धरती पर अन्य कोई रूपवान नहीं था। वहाँ बड़े-बड़े छत्रधारी गर्वपूर्वक अपनी सेना लेकर आ खड़े हुए॥ ६८॥ नदियाँ भी जिससे रूप-शोभा धारण करती हैं और सागर भी जिसके तेज को सहन न कर उछल पड़ते हैं; जिसकी वृहद् काया है और रूप शोभायमान है तथा देवकन्याएँ भी जिसको देखकर मोहित हो जाती हैं॥ ६९॥ हे राजकुमारी! वे सब भिन्न-भिन्न राजा यहाँ आए हैं जिनको देखकर राजाओं का गर्व चूर हो जाता है। जितने राजा आये उनका कहाँ तक वर्णन करूँ, उस परिचारिका ने उन सभी राजाओं को राजकन्या को दिखा दिया॥ ७०॥ ॥ सवैया॥ वहाँ जितने भो राजा आये थे, वे सब राजकुमारी को दिखा दिये गए। उसने चारों दिशाओं में राजाओं को देखा, परन्तु किसी को भी पसन्द नहीं किया। सारा वीरमंडल हार गया और राजागण भी यह स्थिति देखकर

मुख सूक गए सभ राजकुमारि फिरे घरि आए ॥ ७१ ॥
॥ सवैया ॥ तउ लगि आन गए अजि राज सु राजन राज बडो दल लीने । अंबर अनूप धरे पशमंबर संबर के अरि की छबि छीने । बेखन बेख चड़े संग ह्वै न्रिप हान सभै सुखधाम नवीने । आन गए जर कंबरसे अजि अंबर से न्रिप कंबर कीने ॥ ७२ ॥
॥ सवैया ॥ पाँति ही पांत बणाइ बडो दल ढोल म्रिदंग सुरंग बजाए । भूखन चारु दिपै सभ अंग बिलोकि अनंग प्रभा मुरछाए । बाजत चंग म्रिदंग उपंग सुरंग सु नाद सभै सुनि पाए । रीझ रहे रिझवार सभै लखि रूप अनूप सराहत आए ॥ ७३ ॥ जैस सरूप लख्यो अजि को हम तैस सरूप न अउर बिचारे । चंद चप्यो लखिकै मुख की छबि छेद परे उर मै रिस मारे । तेज सरूप बिलोकि कै पावक चित्त चिरी ग्रहि अउर न जारे । जैस प्रभा लखिओ अजि को हम तैस सरूप न भूप निहारे ॥ ७४ ॥ सुंदर जुआन सरूप महान प्रधान चहूँचक मै हम जान्यो । भान समान प्रभानप्रमान (मू०ग्रं०६३१) कि राव किरान महान बखान्यो । देव अदेव चके अपणे चित चंद

उदास हो गये। उन सबके मुख सूख गये और वे सब राजकुमार अपने घरों को वापस आ गए ॥ ७१ ॥ ॥ सवैया ॥ तब तक राजा अज अपना बड़ा दल लेकर आ पहुँचे। उनके अनुपम वस्त्र और रेशमी परिधान कामदेव की छवि को भी लजा रहे थे। उनके साथ सुन्दर वेश धारण किये हुए सुख देनेवाले अनेकों अन्य राजा भी थे। राजा अज सुन्दर वस्त्र धारण किये हुए आ पहुँचे ॥ ७२ ॥ ॥ सवैया ॥ उनकी सेना ने पंक्तियाँ बना लीं और उनका दल ढोल-मृदंग आदि बजाने लगा। सबके शरीर पर सुन्दर आभूषण जगमगा रहे थे और कामदेव भी उनकी सुन्दरता को देखकर मूर्च्छित हो रहा था। सभी बजते हुए मृदंग, चंग, उपंग आदि की ध्वनि सुन रहे थे और सभी उनके अनुपम रूप को देखकर रीझ रहे थे ॥ ७३ ॥ जैसा रूप हमने राजा अज का देखा, वैसा रूप अन्य किसी का अभी तक नहीं देखा। चन्द्रमा उनकी छवि को देखकर छिप गया और उसका हृदय ईर्ष्या में जल उठा। अग्नि उसके स्वरूप को देखकर चिढ़ उठा और उसने अपनी दाहकता का त्याग कर दिया। जिस प्रकार कि सुन्दर प्रभा राजा अज की है, वैसा सुन्दर स्वरूप हमने अन्य कोई नहीं देखा है ॥ ७४ ॥ वह सुन्दर जवान और स्वरूप में महान् था जिसे चारों दिशाओं में प्रमुख माना जाता था। सूर्य के समान वह प्रभाशाली था और राजाओं में वह महान राजा था। देव-अदेव सभी उसे देखकर आश्चर्य-

सरूप निसा पहिचान्यो । दिउस कै भान सुन्यो भगवान पछान अनै घन मोरन मान्यो ॥७५॥ बोलि उठे पिक जान बसंत चकोरन चंद सरूप बखान्यो । शांति सुभाव लख्यो सभ साधन जोधन क्रोध प्रतच्छ प्रमान्यो । बालन बाल सुभाव लख्यो तिह शत्रुन काल सरूप पछान्यो । देवन देव अदेवन कै शिव राजन राजि बडो जिअ जान्यो ॥७६॥ साधन सिद्ध सरूप लख्यो तिह शत्रुन शत्रु समान बसेख्यो । चोरन भोर करोरन मोरन तास सही घन कै अवरेख्यो । काम सरूप सभै पुर नारन शंभु समान सभू गन देख्यो । सीप स्वाँत की बूँद तिसै करि राजन राज बडो तिह पेख्यो ॥ ७७ ॥ कंबर जिउँ जर कंबर की ढिग तिउ अबिनंबर तीर सुहाए । नाक लखे रिस मान सुआ मन नैन दोऊ लख ऐन लजाए । पेखि गुलाब शराब पिऐ जनु पेखत अंग अनंग रिसाए । कंठ कपोत कदू पर केहर रोस रसे ग्रहि भूल न आए ॥७८॥ पेखि सरूप सरातन लोचन घूटत है जनु घूट

चकित हो उठे और रात्रि उसे चन्द्रमा के रूप में मानने लगी । दिन उसे सूर्य भगवान समझने लगा और मोर उसे बादल समझने लगे ॥ ७५ ॥ पपीहागण उसे बसंत समझकर बोल उठे और चकोरों ने उसे चन्द्रमा समझ लिया । साधू उसे साक्षात् शान्ति और योद्धागण उसे साक्षात् क्रोध समझने लगे । बालकगण उसे सरल स्वभाव वाला बालक और शत्रुगण उसे कालस्वरूप समझने लगे । देवतागण उसे देव और भूत-पिशाच आदि उसे शिव और राजागण उसे महाराजा मानने लगे ॥ ७६ ॥ साधुओं ने उसे सिद्धि के स्वरूप में तथा शत्रु उसे शत्रु के रूप में देखने लगे । चोरगण उसे प्रातःकाल के रूप में और मोर उसे बादल के रूप में देखने लगे । सभी स्त्रियाँ उसे कामदेव और सभी गण उसे शिव के रूप में मानने लगे । सीपी उसे स्वातिनक्षत्र के बूंद के रूप में और राजागण उसे महाराजा के रूप में देखने लगे ॥ ७७ ॥ जिस प्रकार बादल आकाश में शोभायमान होता है, उसी प्रकार राजा अज धरती पर शोभायमान हो रहे थे । उनकी सुन्दर नाक को देखकर तोता ईर्ष्यालु होता था और उनके दोनों नयनों को देखकर खंजन पक्षी लज्जित होते थे । गुलाब उसके अंगों को देखकर मदहोश हुआ जाता था और कामदेव उसके अंगों को देखकर खीझ रहा था । कबूतर उसके सुन्दर गर्दन को देखकर और सिंह उसकी कमर को देखकर अपना-आप भूल रहे थे और अपने घर तक नहीं पहुँच पा रहे थे ॥ ७८ ॥ उनके झील के समान नेत्रों को देखकर ऐसा लगता था मानो वे अमृत का घूँट पीकर मदमस्त हों । गीत

अगी के। गावत गीत बजावत ताल बजावत हैं जनों आछर ही के। भावतनार सुहावतगार दिवावत है भर आनंद जी के। तूँ सुकुमार रची करतार कहैं अबिचार लिआ बर नीके ॥७९॥ देखत रूप सिरातन लोचन पेखि छकी पिअ की छबि नारी। गावत गीत बजावत ढोल म्रिदंग मुचंगन की धुनि भारी। आवत जात जिती पुर नागर गागर डार लखे दुति भारी। राज करो तब लौ जब लौ महि जउ लग गंग बहै जमुना री ॥ ८० ॥ जउन प्रभा अजि राजि की राजत सो कहिकै इह भांत गनाऊँ। जउन प्रभा कबि देत सभै जो पै तास कहो जिअ बीच लजाऊँ। हउ चहूँ ओर फिर्यो बसुधाछबि अंगन बीच कहूँ कोई पाऊँ। लेखन ऊख ह्वै जात लिखो छबि आनन ते किमि भाखि सुनाऊँ ॥ ८१ ॥ नैनन बान चहूँ दिस मारत घाइल कै पुर बासन डारी। सारस्वती न सकै कहि रूप शिंगार कहै मति कउन बिचारी। कोकल कंठि हर्यो ग्रिप नाइक छीन कपोत की ग्रीव अनिआरी। रीझ गिरे नर नार धरा पर घूमति है जनु घाइल भारी (मू०ग्रं०६३२) ॥८२॥ ॥ दोहरा ॥ निरख

गाये जा रहे हैं और वाद्य बजाये जा रहे हैं। स्त्रियाँ आनन्द से भरकर गालियाँ गा रही हैं और कह रही हैं कि हे राजकुमार! ईश्वर ने यह राजकुमारी तुम्हारे लिए ही रची है। तुम इसका वरण करो।। ७९ ।। उसके नयनों की शोभा को देखकर स्त्रियाँ प्रेम से विभोर हो रही हैं और ढोल, मृदंग और मुचंग बजाती हुई गीत गा रही हैं। जितनी भी नगर के बाहर की तरफ़ स्त्रियाँ आ रही हैं, वे राजा के सौन्दर्य को देखकर गगरियाँ फेंककर उसके रूप को देखे चली जा रही हैं। राजा को देखकर वे सभी कामना कर रही हैं कि हे राजा! ईश्वर करे जब तक गंगा-यमुना में पानी बहता रहे तुम राज्य करो ।। ८० ।। राजा अज की जो शोभा है, उसका वर्णन करते हुए मैं यह स्वीकार करता हूँ कि जो उपमाएँ कविगण आम तौर पर देते हैं वे सब फीकी हैं अतः मैं उन्हें कहता हुआ लज्जित होता हूँ। मैंने सारी धरती पर खोजा है कि कोई तुम्हारे जैसा सौन्दर्यशाली पा जाऊँ, परन्तु ऐसा नहीं हो सका। आपकी छवि लिखते हुए मेरी लेखनी उखड़ जा रही है, अतः मैं अपने मुख से उसका कैसे वर्णन करूँ ? ।। ८१ ।। राजा ने अपने नयन-बाणों से सारे नगर के लोगों को घायल कर दिया। सरस्वती भी उसके रूप-शृंगार का वर्णन करने में असमर्थ हैं। राजा का कंठ कोयल के समान मधुर और ग्रीवा कबूतर के समान है। उसके सौन्दर्य को देखकर धराशायी हो रहे हैं और

रूप अजिराज को रीझ रहे नर नार। इंद्र कि चंद्र कि सूर इहि इह बिधि करत बिचार ॥ ८३ ॥ ॥ कबितु ॥ नागन के छउना हैं कि कीने काहू टउना हैं कि काम के खिलउना हैं बनाए हैं सुधार कै। इसत्रिन के प्रान हैं कि सुंद्रता की खान हैं कि काम के कलान बिधि कीने हैं बिचार कै। चातुरता के भेस हैं कि रूप के नरेस हैं कि सुंदर सुदेस एस कीने चंद्र सारकै। तेग हैं कि तीर हैं कि बाना बाधे बीर हैं सु ऐसे नेत अजि को बिलोकिऐ सँभार कै ॥ ८४ ॥ ॥ सवैया ॥ तीरन से तरवारन से म्रिग बारन से अविलोकहु जाई। रीझ रही रिझवार लखे दुति भाख प्रभा नही जात बताई। संगि चली उनि बाल बिलोकन मोर चकोर रहे उरझाई। डीठि परे अजिराज जबै चित देखत ही तिअ लीन चुराई ॥ ८५ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ अबिलोकिआ अजि राज। अति रूप सरब समाज। अति रीझकै हस बाल। गुहि फूल माल उताल ॥ ८६ ॥ गहि फूल की करि माल। अति रूपवंत सु माल। तिस

घायल हो रहे हैं ॥ ८२ ॥ ॥ दोहा ॥ राजा अज के रूप-सौन्दर्य को देखकर नर-नारियाँ रीझ रही हैं और विचार नहीं कर पा रही हैं कि यह इन्द्र है, चन्द्र है, अथवा सूर्य है ॥ ८३ ॥ ॥ कवित्त ॥ नागिन के बच्चों के समान चंचल हैं या किसी ने जादू-टोना करनेवाले के रूप में इन्हें देखा है या फिर राजा अज कामदेव के खिलौने के समान विशेष रूप से बनाये गये हैं। राजा अज स्त्रियों के प्राण सुन्दरता की खान और काम-कलाओं में प्रवीण हैं। चतुरता के साक्षात् रूप अथवा राजाओं में वे सुन्दर चन्द्रमा के समान शोभायमान हो रहे हैं। वे तलवार हैं कि तीर हैं या कोई सुसज्जित महाबली हैं, यह समझ में नहीं आ रहा है। ऐसे वीर राजा अज को बहुत सावधानी से देखा जा रहा है ॥ ८४ ॥ ॥ सवैया ॥ तीर और तलवार जैसा प्रभावकारी तथा मृग के बच्चे के समान भोला-भाला सौन्दर्य देखने लायक है। उसको देखकर सभी रीझ रहे हैं। और उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। राजकुमारी देखने के लिए चली है और उसको देखकर मोर और चकोर भी उलझन में पड़ गये हैं। राजा अज पर दृष्टि पड़ते ही इस राजकुमारी का चित्त चुरा लिया गया ॥ ८५ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ जब रूप के पुंज राजा अज को राजकन्या ने देखा तो उसने मुस्कुराते हुए अपनी फूल की माला को सँभाला ॥ ८६ ॥ उस रूपवती कन्या ने फूल-माला को हाथ में पकड़ा और

डारिआ उर आन । दस चारि चारि निधान ॥ ८७ ॥ तिह देबि आगिआ कीन । दस चारि चारि प्रबीन । सुनि सुंदरी इम बैन । ससि क्रांत सुंदर नैन ॥ ८८ ॥ तब जोग है अजि राज । सुनि रूपवंत सलाज । बरु आज ताकहु जाइ । सुनि बैनि सुंदर काइ ॥ ८९ ॥ गहि फूल माल प्रबीन । उर डारि ता के दीन । तब बाज तूर अनेक । डफ बीण बेण बसेख ॥ ९० ॥ डफ बाज ढोल म्रिदंग । अति तूर तान तरंग । नय बासुरी अरु बैन । बहु सुंदरी सुभ नैन ॥ ९१ ॥ तिह ब्याहि कै अजि राजि । बहु भाँति लैकरि दाज । ग्रिह आइआ सुख पाइ । डफ बैण बीण बजाइ ॥ ९२ ॥ अहिराज राज महान । दस चारि चारि निधान । सुख सिंध सील समुद्र । जिनि जीतिआ रण रुद्र ॥ ९३ ॥ इह भाँति राज कमाइ । सिर अत्र पत्र फिराइ । रण धीर राज बिसेख । जग कीन जास भिसेख ॥ ९४ ॥ जग जीत चारि दिसान । अजि राज राज महान । न्रिप दानशील पहार । दस चारि चारि उदार ॥ ९५ ॥ दुतिवंति सुंदर नैन । जिह पेखि

अठारहवों विद्याओं में निपुण उस राजा के गले में डाल दिया ॥ ८७ ॥ देवी ने उस सर्वविद्याओं में निपुण राजकन्या को कहा कि हे चन्द्रमा की कान्ति वाली तथा सुन्दर नयनों वाली सुन्दरी ! तुम मेरी बात सुनो ॥ ८८ ॥ हे लज्जा और रूप से युक्त राजकुमारी ! राजा अज तुम्हारे योग्य वर है। तुम उसे देखो और मेरी इन बातों को सुनो ॥ ८९ ॥ राजकुमारी ने फूल-माला पकड़कर राजा के गले में डाल दी और उस समय वीणा, वेणु आदि अनेकों वाद्य बजने लगे ॥ ९० ॥ डफली, ढोल, मृदंग तथा अन्य कई तानों व तरंगों वाले वाद्य बजने लगे। बाँसुरियाँ बजने लगी और वहाँ सुन्दर नेत्रों वाली अनेकों सुन्दरियाँ विराजमान थीं ॥ ९१ ॥ राजा अज उस कन्या के साथ विवाह करके और अनेकों प्रकार का दहेज लेकर डफली और वीणा बजवाता हुआ सुखपूर्वक अपने घर पर आ गया ॥ ९२ ॥ अठारहवों विद्याओं का समुद्र यह महान राजा सुख का सागर और शील का भंडार था। इसी ने ही युद्ध में शिव को भी परास्त किया था ॥ ९३ ॥ इस प्रकार राज्य करते हुए इन्होंने अपने सिर पर छत्र झुलवाया और सारे जगत में इस रणधीर राजा का अभिषेक किया ॥ ९४ ॥ राजा अज ने चारों दिशाओं को जीतकर पर्वत की ऊँचाइयों के समान द्रव्य और शील का दान दिया। सर्वविद्याओं में निपुण यह राजा अत्यन्त उदार था ॥ ९५ ॥ उसके नयन और शरीर इस प्रकार से कान्तिमान

खिज्झत मैन। मुखि देखि चंद्र सरूप। चित सौ चुरावत (मू०ग्रं०६३२) भूप ॥९६॥ इह भांत कै बड राज। बहु जग्ग धरम समाज। जउ कहो सरब बिचार। इक होत कथा पसार ॥९७॥ तिह ते सु थोरिऐ बात। सुनि लेहु भाखो भ्रात। बहु जग्ग धरम समाज। इह भाँति कै अजिराज ॥९८॥ जग आपनो अजि मान। तर आँख आन न आन। तब काल कोप क्रवाल। अजि जारिआ मधि ज्वाल ॥९९॥ अजि जोति जोति मिलान। तब सरब देखि डरान। जिम नाव खेवट हीन। जिम देह अर बल छीन ॥ १०० ॥ जिम गाँव राव बिहीन। जिम उर बरा क्रिम छीन। जिम दिरब हीन भंडार। जिम शाहि हीन बिपार ॥ १०१ ॥ जिम अरथ हीन कबित्त। बिन प्रेम के जिम मित्त। जिम राज हीन सुदेश। जिम सैन हीन नरेश ॥ १०२ ॥ जिम ग्यान हीन जुगेंद्र। जिम भूम हीन महेंद्र। जिम अरथहीन बिचार। जिम दरबहीन उदार ॥१०३॥

थे कि उन्हें देखकर कामदेव को भी ईर्ष्या होती थी। उसके चन्द्र के समान मुख को देखकर सैंकड़ों राजा उससे नज़रें चुराते थे ॥ ९६ ॥ इस प्रकार जगत में धर्म और समाज के साथ यज्ञ इत्यादि करते हुए राजा ने महान राज्य किया। यदि उससे सम्बन्धित सभी बातों को कहूँ तो इस कथा में वृद्धि हो जायगी ॥ ९७ ॥ इससे थोड़े में ही कहता हूँ और हे भाइयो ! आप उसे सुन ले। धर्म और समाज में इस प्रकार राजा अज ने भिन्न प्रकार से राज किया ॥९८॥ उसने सारे संसार को अपना मानना और किसी की भी परवाह करना छोड़ दिया। तब महाकाल ने क्रोधित होकर राजा अज को अपनी ज्वाला से भस्म कर दिया ॥ ९९ ॥ परमज्योति में विलीन होते राजा अज को देखकर सभी लोग उस प्रकार भयभीत हो गये जैसे नाव के सवार केवट-विहीन होने पर भयभीत हो जाते हैं। लोग इस प्रकार क्षीण हो गये कि जैसे देह का बल क्षीण होने पर व्यक्ति असहाय हो जाता है ॥ १०० ॥ जैसे मुखिया के बिना गाँव असहाय हो जाता है, उर्वरा शक्ति के बिना धरती निरर्थक हो जाती है धन के बिना धन का भण्डार आकर्षण-विहीन हो जाता है और जैसे व्यापार के बिना व्यापारी हीन हो जाता है ॥ १०१ ॥ राजा के बिना लोग ऐसे हो गये, जैसे अर्थ के बिना काव्य, प्रेम के बिना मित्र, राजा के बिना देश और सेनापति के बिना सेना असहाय हो जाती है ॥ १०२ ॥ जैसे ज्ञान के बिना योगी, राज्य के बिना राजा, अर्थ के बिना विचार और जैसे द्रव्य के बिना दानी की दशा हो जाती है ॥ १०३ ॥ लोग ऐसे हो गये जैसे अंकुश

जिम अंकुस हीण गजेश । जिम सैण हीण नरेश । जिम शस्त्र हीन लुझार । जिम बुधि बाझ बिचार ॥ १०४ ॥ जिम नार हीण भतार । जिम कंत हीण सु नार । जिम बुद्धि हीण कबित्त । जिम प्रेम हीण सु मित्त ॥ १०५ ॥ जिम देश भूत बिहीन । बिन कंत नार अधीन । जिम भाँति बिप्र अबिद्दि । जिम अरथ हीण सबिद्दि ॥ १०६ ॥ के कहे सरब नरेश । जो आ गए इह देश । करि अशट दस्य पुराणि । बिज ब्यास बेद निधान ॥ १०७ ॥ कीने अठारह परब । जग रीझिआ सुन सरब । इह ब्यास ब्रहम बतार । भय पंचमो मुख चार ॥ १०८ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे पंचमो बतार ब्रहमा बिआस राजा अज को राज समापतं ॥ ५ ॥

अथ ब्रहमा खशट रिख अवतार कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ जुग आगलं इह ब्यास । जग कीअ पुराण प्रकाश । तब बाढिआ तिह गरब । सर आप जान न सरब ॥ १ ॥ तब कोप काल क्रवाल । जिहँ जाल ज्वाल

के बिना हाथी, सेना के बिना राजा, शस्त्रों के बिना योद्धा और बुद्धिविहीन विचार होते हैं ॥ १०४ ॥ जिस प्रकार पति के बिना स्त्री, प्रियतम के बिना नारी, बुद्धिविहीन काव्य और प्रेम-विहीन मित्र होता है ॥ १०५ ॥ जैसे देश सूना हो गया हो, स्त्रियाँ पतिविहीन हो गई हों अथवा विद्याविहीन विप्र हो या फिर धनविहीन पुरुष हो ॥ १०६ ॥ इस प्रकार जिन-जिन राजाओं ने इस देश में राज्य किया, उन सबका कैसे वर्णन किया जाय। बेदों के भण्डार व्यास ने अठारह पुराणों की रचना की ॥ १०७ ॥ उसने अठारह पर्वों की रचना की जिसको सुनकर सारा जगत प्रसन्न हो उठा। इस प्रकार ब्रह्मा का व्यास-रूप में यह पाँचवा अवतार हुआ ॥ १०८ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में ब्रह्मा, व्यास का पाँचवाँ अवतार राजा अज का राज समाप्त ॥ ५ ॥

ब्रह्मा छठा ऋषि-अवतार-कथन

॥ तोमर छंद ॥ इस अगले युग में व्यास ने जगत में पुराणों की रचना की और ऐसा करने पर उसका गर्व भी बढ़ गया, वह भी अपने समान किसी अन्य को नहीं मानने लगा ॥ १ ॥ तब विकराल काल ने क्रोधित होकर अपने

बिसाल । खट टूक ताकहु कीन । पुन जान कै तिन दीन ॥२॥ नही लीन प्रान निकार । भए खष्ट रिखै अपार । तिन शास्त्रग बिचार । खट शास्त्र नाम सु डार ॥ ३ ॥ खट शास्त्र कीन प्रकाश । मुख चार ब्यास सुभास । धरि (मू०ग्रं०१३४) खशटमो अवतार । खट शास्त्र कीन सुधार ॥ ४ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे खशटमो अवतार ब्रहमा खशट रिख समापतं ॥ ६ ॥

अथ कालीदास अवतार कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ इह ब्रहम बेद निधान । दस अस्ट शास्त्र प्रमान । कलजुगिय लाग निहार । भए कालदास अबिचार ॥ १ ॥ लखि रीझ बिक्रमजीत । अति गरबवंत अजीत । अति ग्यान मान गुनैन । सुत क्रांत सुंदर नैन ॥ २ ॥ रघु काबि कीन सुधार । कलि कालदास बतार । कहु लै बखानों तउन । जो काबि कीनो जउन ॥३॥ धर सपत ब्रहम

विशाल ज्वालाओं के जाल से उसके छः टुकड़े कर दिये और उसको पुनः असहाय समझा ॥ २ ॥ उसके प्राण नहीं निकाले और उसके छः खण्डों से छः ऋषि हुए जो शास्त्रों के परम ज्ञाता थे और उन्होंने अपने नामों पर छः शास्त्रों की रचना की ॥ ३ ॥ ब्रह्मा, व्यास की कान्ति वाले इन छः ऋषियों ने छः शास्त्रों का प्रकाश किया और इस प्रकार छठवाँ अवतार धारण कर ब्रह्मा ने छः शास्त्रों के माध्यम से धरती पर सुधार किया ॥ ४ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में ब्रह्मा का छठवाँ अवतार छः ऋषि समाप्त ॥ ६ ॥

कालिदास-अवतार-कथन

॥ तोमर छंद ॥ वेदों का समुद्र यह ब्रह्मा जो अठारह पुराण एवं शास्त्रों का प्रामाणिक ज्ञाता था, कलियुग में कालिदास के नाम से अवतरित हो सारे संसार को देखने लगा ॥ १ ॥ राजा विक्रमादित्य, जो कि स्वयं गौरव-शाली, अजेय, ज्ञानी, गुणज्ञ एवं शुभ कान्ति और सुन्दर नयनों वाला था, कालिदास को देखकर प्रसन्न हुआ करता था ॥ २ ॥ कालिदास ने अवतार लेकर पुनः सुधार कर रघुवंश नामक काव्य की रचना की। उसने कितने काव्यों की रचना की, उसका मैं कहाँ तक वर्णन करूँ ? ॥ ३ ॥ वह ब्रह्मा का सातवाँ अवतार था और जब उसका उद्धार हुआ तो उसने पुनः चार मुखों वाले

बतार । तब भयो तास उधार । तबि धरा ब्रहम सरूप ।
मुख चार रूप अनूप ॥ ४ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ब्रहमा अवतार सपतमो कालीआस समापतं ॥ ७ ॥

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

अथ रुद्र अवतार कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ अब कहो तउन सुधार । जे धरे रुद्र अवतार । अति जोग साधन कोन । तब गरब के रसि भीन ॥ १ ॥ सरि आप जान न अउर । सभ देश मों सभ ठौर । तब कोप कै इम काल । इम भाखि बैणि उताल ॥ २ ॥ जे गरब लोक करंत । ते जान कूप परंत । मुर नाम गरब प्रहार । सुन लेहु रुद्र बिचार ॥ ३ ॥ किअ गरब को मुख चार । कछु चित्त मों अबिचार । जब धरे तिन तन सात । तब बनी ताकी बात ॥ ४ ॥ तिम जनमु धरु तै जाइ । चित दे सुनो मुनराइ । नही ऐस होइ उधार ।

सुन्दर ब्रह्मा का रूप धरण कर लिया अर्थात् वह पुनः ब्रह्मा में ही लीन हो गया ॥ ४ ॥

॥ श्री बचित्र नाटक में सातवां ब्रहमा अवतार कालिदास समाप्त ॥ ७ ॥

रुद्र-अवतार-कथन

॥ तोमर छंद ॥ अब मैं उन अवतारों का सुधार कर वर्णन करता हूँ जो रुद्र ने धारण किये । रुद्र अत्यन्त योग-साधना करने पर गर्व के वश में हो गये ॥ १ ॥ वे सब देशों और स्थानों में अपने समान किसी को भी नहीं मानने लगे । तब महाकाल ने क्रोधित होकर रुद्र से इस प्रकार कहा ॥ २ ॥ जो लोग गर्व करते हैं, वे जान-बूझकर कुएँ में गिरने के समान कार्य करते हैं । हे रुद्र ! तुम ध्यान से सुन लो कि मेरा नाम भी गर्वप्रहारक है ॥ ३ ॥ ब्रह्मा के मन में भी गर्व पैदा हुआ और उसके चित्त में भी कुविचार उत्पन्न हो गये परन्तु जब उसने सात बार जन्म लिया तब उसका उद्धार हो सका ॥ ४ ॥ हे मुनिराज ! तुम मेरी बात सुनो और उसी प्रकार तुम भी धरती पर जाकर जन्म धारण करो । अन्यथा हे रुद्र ! अन्य किसी तरीक़े से तुम्हारा उद्धार नहीं

सुन लेहु रुद्र बिचार ॥ ५ ॥ सुन स्रवन ए शिव बैन । हठ छाडि सुंदर नैन । तिह जान गरब प्रहार । छित लीन आन बतार ॥ ६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ जिम कथे सरब राजान राज । तिम कहे रिखन सभ ही समाज । जिह जिह प्रकार तिह करम कीन । जिह भाँति जेम द्विज बरन लीन ॥ ७ ॥ जे जे चरित्र किस्से प्रकाश । ते ते चरित्र भाखो सुबास । रिख पुत्र एस भए रुद्र देव । मोनी महान मानी अभेव ॥ ८ ॥ पुन भए अत्र रिख मुनि महान । दस चार चार बिद्यानिधान । लिन्नो सु जोग तजि राजि आन । सेविआ रुद्र संपत निधान (मू०ग्रं०६३५) ॥ ९ ॥ किन्नो सु जोग बहु दिन प्रमान । रीझिओ रुद्र ता पर निदान । बरु माँग पुत्र जो रुचै तोहि । बरु दान तउन मै देउ तोहि ॥ १० ॥ करि जोरि अत्र तब भयो ठाढ । उठ भाग आन अनुराग बाढ । गद गद सु बैण भभकंत नैण । रोमान हरख उचरे सु बैण ॥ ११ ॥ जो देत रुद्र बरु रीझ मोहि । ग्रहि होइ पुत्र सम तुलि तोहि । कहि कै तथासु भए अंतध्यान । ग्रहि गयो अत्र मुन मन महान ॥ १२ ॥ ग्रहि बरी आन अनसूआ नार । जन पठ्यो

होगा ॥ ५ ॥ शिव ने यह सुनकर परमात्मा को गर्वप्रहारक मानते हुए तथा हठ छोड़ते हुए इस धरती पर अवतार लिया ॥ ६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ जिस प्रकार सभी राजाओं का कथन किया गया है, उसी प्रकार सभी ऋषियों द्वारा किये हुए कर्मों का भी कथन किया गया है कि किस प्रकार रुद्र ने द्विजवर्ण को धारण किया ॥ ७ ॥ जिन-जिन चरित्रों का उन्होंने प्रकाश किया, उनका मैं वर्णन करता हूँ । इस प्रकार रुद्रदेव महान मौन धारण करनेवाले एवं मान करनेवाले ऋषिपुत्र पुत्र बन गये ॥ ८ ॥ पुनः वे आत्रेय ऋषि, जो कि अठारहों विद्याओं के भण्डार थे, के रूप में अवतरित हुए । इन्होंने अन्य सभी कार्य छोड़कर योगमत ग्रहण किया और सब वैभवों के भण्डार रुद्र की सेवा की ॥ ९ ॥ बहुत दिनों तक इन्होंने घोर तपस्या की जिससे रुद्र ने प्रसन्न होकर इनसे कहा कि तुम्हें जो अच्छा लगे वही वरदान मांगो, मैं तुम्हें दूंगा ॥ १० ॥ हाथ जोड़कर तब आत्रेय मुनि खड़े हो गये और उनके मन में रुद्र के लिए प्रेम और बढ़ गया । वे गद्‌गद हो उठे, उनके नयनों से जल बहने लगा और रोमावली हर्ष से पुलकित हो उठी ॥ ११ ॥ ऋषि ने कहा कि हे रुद्र ! यदि आप मुझे वरदान देना ही चाहते हैं तो मुझे आप अपने जैसा पुत्र दीजिए । रुद्र 'तथास्तु' कहकर अन्तर्ध्यान हो गये और मुनि भी वापस अपने

तसु निज शिव निकारि । ब्रहमाहु बिशन निज तेज काढ ।
आए सु मद्धि अनिसूआ छाडि ।। १३ ।। भई करत जोग बहु
दिन प्रमान । अनसूआ नाम गुन गन महान । अति तेजवंत
सोभा सुरंग । जन धरा रूप दूसर अनंग ।। १४ ।। सोभा
अपार सुंदर जनंत ।। सउहाग भाग बहु बिध लसंत । जिह
निरख रूप सो रहि लुभाइ । आभा अपार बरनी न
जाइ ।। १५ ।। निसनाथ देख आनन रिसान । जलि जाइ
नैन लहि रोस मान । तम निरख केस किअ नीच डीठ । छपि
रहा जान गिर हेम पीठ ।। १६ ।। कंठहि कपोति लखि कोप
कीन । नासा निहार बनि कीर लीन । रोमावल हेर जमना
रिसान । लज्जा मरंत सागर डुबान ।। १७ ।। बाहु बिलोक
लाजै म्रिनाल । खिसियान हंस अविलोक चाल । जंघा
बिलोक कदली लजान । निसराट आप घटि रूप मान ।।१८।।
इह भाँति तास बरणो शिगार । को सकै कब्बि महिमा उचार ।
ऐसी सरूप अविलोक अत्र । जनु लीन रूप को छीन छत्र ।।१९।।

घर आ गया ।। १२ ।। उसने वापस आकर अनसूया से विवाह किया, जिसे शिव ने, ब्रह्मा ने और विष्णु ने अपने तेज से निर्मित किया था ।। १३ ।। अनसूया ने भी बहुत दिनों तक अपने नाम के अनुरूप सुन्दरी होने के बावजूद तपस्या की । वह अत्यन्त तेजवान, शोभायुक्त थी और ऐसा लगता था कि वह कामदेव (रति) का दूसरा रूप हो ।। १४ ।। विभिन्न प्रकार से शोभा पानेवाली वह सुहागवती सुन्दरी थी जिसको सौन्दर्य भी देखकर मोहित होता था । उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता ।। १५ ।। चन्द्रमा उसके मुख को देखकर ईर्ष्या करता था और दुःखी होकर आँसू बहाता था । उसके केशों को देखकर वह दृष्टि झुका लेता था और सुमेरु पर्वत भी उसके रूप-सौन्दर्य को देखकर छिप जाता था ।। १६ ।। कबूतरी उसके कंठ को देखकर कुपित होती थी और तोता उसकी नासिका को देखकर बन में छुप जाता था । उसकी रोमावली को देखकर यमुना भी खीझ उठती थी और उसकी गम्भीरता को देखकर लजायमान हो उठता था ।।१७।। उसकी बाँहों को देखकर कमल-नाल लज्जित होती थी और हंस उसकी चाल को देखकर खिसिया उठते थे । उसकी जंघाओं को देखकर कदलीवृक्ष शरमा जाते थे और चन्द्रमा भी अपना रूप उसके सामने क्षीण मानता था ।। १८ ।। इस प्रकार उसके रूप का वर्णन किया जाता है और कोई भी कवि उसकी महिमा का उच्चारण नहीं कर सकता ऐसी रूपवती स्त्री को देखकर आत्रेय मुनि यह मानते थे कि मानो उन्होंने रूप-

कीनी प्रतग्यि तिह समै नार । ब्याहै न भोग भोगै भतार । मै बरौ तास रुच मान चित्त । जो सहै कष्ट ऐसो पवित्त ॥ २० ॥ रिख मान बैंन तब बर्यो जाहि । जनु लीन लूट सीगार ताहि । लै गयो धाम करि नार तउन । पित दत्त देव मुन अत्र जउन ॥ २१ ॥ बहु बरख बीत किन्नो बिवाहि । इक भयो आन अउरै उछाहि । तिह गए धाम ब्रहमादि आदि । किन्नी सु देव तियअन प्रसादि ॥ २२ ॥ बहु धूप दीप अरु अरघ दान । पादरघि आदि किन्ने सुजान । अवलोक भगति तिह चतुर बाक । इंद्रादि बिशन बैठे (मू०ग्रं०६३६) पिनाक ॥२३॥ अवलोक भगत भए रिख प्रसंन । जो तिहू मद्धि लोकानि धंन । किन्नो सु ऐस ब्रहमा उचार । तैं पुत्रवंत हूजो कुमार ॥ २४ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ किअ ऐस ब्रहम उचार । तै पुत्र पावस बार । तब नार ए सुन बैंन । बहु आसु डारत नैन ॥ २५ ॥ तब बाल बिकल सरीर । जल स्रवत नैन अधीर । रोमांचि गदगद बैंन । दिन ते भई जनु रैन ॥ २६ ॥ रोमांचि बिकल सरीर । तन कोप मान अधीर । फरकंत उसटरु नैन । बिन बुद्धि

सौन्दर्य का एकछत्र राज्य प्राप्त कर लिया ॥ १९ ॥ उस स्त्री ने यह प्रतिज्ञा की कि मै भोग भोगने के लिए अपने पति से विवाह नहीं करूँगी, मैं रुचिपूर्वक उसका वरण करूँगी जो तपस्या के पवित्र कष्टों को सहन करने की शक्ति रखता हो ॥ २० ॥ ऋषि ने यह बात मानकर उससे विवाह कर लिया और उसके रूप-सौन्दर्य पर न्योछावर हो गया। वे, जो कि दत्तात्रेय के पिता आत्रेय मुनि थे, उसे पत्नी बनाकर अपने घर ले गये ॥ २१ ॥ विवाह को अनेकों वर्ष बीत गये और एक बार ऐसा अवसर आया कि ब्रह्मा आदि देवता उस ऋषि के घर पर गये। ऋषि-आश्रम की स्त्रियों ने उनकी बहुत सेवा की ॥ २२ ॥ धूप, दीप, अर्घ्यदान, चरण-वंदन आदि किया गया। इन्द्र, विष्णु एवं शिव आदि को देखकर सभी भक्तगण उनका गुणानुवाद करने लगे ॥ २३ ॥ ऋषि की भक्ति देखकर सभी प्रसन्न हो गये और सभी वहाँ धन्य-धन्य कहने लगे। तब ब्रह्मा ने कहा कि हे कुमार! तुम पुत्रवान होगे ॥ २४ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ जब ब्रह्मा ने यह कहा कि तुम पुत्र प्राप्त करोगे, तब अनसूया ने यह सुनकर आँखों में उदासी धारण कर ली ॥ २५ ॥ उस बालिका का शरीर व्याकुल हो उठा और उसके नयनों से जल बहने लगा। वह इन वचनों से रोमांचित हो उठी और उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे दिन रात्रि में बदल गया हो ॥ २६ ॥ रोमांच से उसका शरीर व्याकुल हो उठा और वह क्रोधित होकर

बोलत बैन ॥ २७ ॥ ॥ मोहण छंद ॥ सुनि ऐस बैन । म्रिगीएस नैन । अति रूप धाम । सुंदर सु बाम ॥ २८ ॥ चल चाल चित्त । परमं पवित्त । अति कोपवंत । मुन त्रिअ बिअंत ॥ २९ ॥ उपटंत केस । मुन त्रिअ सु देस । अति कोप अंगि । सुंदर सु रंग ॥ ३० ॥ तोरंत हार । उपटंत बार । डारंत धूर । रोखंत पूर ॥ ३१ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ लखि कोप भी मुनि नार । उठ भाज ब्रहम उदार । शिव संगि लै रिख सरब । भय मान ह्वै तज गरब ॥ ३२ ॥ तब कोप कै मुनि नार । सिर केस जटा उपार । करि सौ जबै कर मार । तब लीन दत्त अवतार ॥ ३३ ॥ कर बाम मात समान । कर दच्छनंत प्रमान । किआ पान भोग बिचार । तब भए दत्त कुमार ॥ ३४ ॥ अनभूत उत्तम गात । उचरंत सिम्रित सात । मुख बेद चार रड़ंत । उपजो सु दत्त महंत ॥ ३५ ॥ शिव सिमर पूरबल स्राप । बपु दत्त के धरि आप । उपजिओनि सूआ धाम । अवतार प्रिथम सु ताम ॥ ३६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ उपज्यो सु दत्त

अधीर हो उठी । उसके होंठ और नयन फड़कने लगे और वह प्रलाप करने लगी ॥ २७ ॥ ॥ मोहन छंद ॥ यह वचन सुनकर मृग के समान सुन्दर नयनों वाली तथा अत्यन्त रूपवती उस सुन्दर स्त्री ॥ २८ ॥ का चित्त, जो कि परम पवित्र था, अनेकों मुनिस्त्रियों के साथ अत्यन्त क्रोधित हो उठा ॥ २९ ॥ मुनिपत्नी उस स्थान पर अपने केश नोचने लगीं और उसके सुन्दर अंग अत्यन्त कुपित हो उठे ॥ ३० ॥ हारों को तोड़ते हुए वह बाल नोचने लगीं और सिर में मिट्टी डालने लगीं ॥ ३१ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ मुनिस्त्री को क्रोधित देखकर भयभीत होकर और अपने गर्व को त्यागकर शिव तथा अन्य ऋषियों को साथ लेकर ब्रह्मा जी भाग खड़े हुए ॥ ३२ ॥ तब मुनिस्त्री ने अपने सिर की एक जटा को उखाड़ कर क्रोधित होकर अपने हाथ पर मारा और तब दत्तात्रेय का अवतार हुआ ॥ ३३ ॥ उसने अनसूया को माता मानते हुए, अपने दाहिने हाथ रखते हुए उसकी परिक्रमा की और उसको प्रणाम किया । इस प्रकार भोग आदि का विचार करने से दत्तकुमार की उत्पत्ति हुई ॥ ३४ ॥ उनका शरीर सुन्दर था और वे सात स्मृतियों का उच्चारण कर रहे थे । महान दत्त चारों वेदों का उच्चारण कर रहे थे ॥ ३५ ॥ शिव ने पूर्व श्राप का स्मरण कर दत्त के रूप में शरीर धारण किया और अनसूया के घर जन्म लिया । यह उनका प्रथम अवतार था ॥ ३६ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ अठारह विद्याओं का भण्डार

मोहनी महान। दस चार चार बिद्यानिधान। शास्त्रनि सुध सुंदर सरूप। अवधूत रूप गण सरब भूप ॥३७॥ संन्यास जोग किन्नो प्रकास। पावन पवित्र सरबत्र दास। जनु धर्यो आन बपु सरब जोग। तजि राज साज अरु त्याग भोग॥ ३८॥ आछिज्ज रूप महिमा महान। दस चारवंत सोभा निधान। रवि अनल तेज जलसे सुभाव। उपजिआ जगत संन्यास राव॥ ३९॥ संन्यास राज भए दत्त देव। रुद्रावतार सुंदर अजेव। पावक समान भयो तेजु जास। बसुधा समान धीरज सु तास (मू०ग्रं०६३७) ॥ ४०॥ परमं पवित्र भए देव दत्त। आछिज्ज तेज अरु बिमल मत्ति। सो वरण देख लाजंत अंग। सोभंत सीसगंगा तरंग॥ ४१॥ आजानबाहु अलिपत रूप। आदग्ग जोग सुंदर सरूप। बिभूत अंग ऊजल सुबास। संन्यास जोग किन्नो प्रकास॥ ४२॥ अवलोक अंग महिमा अपार। संन्यास राज उपजा उदार। अनभूत गात आभा अनंत। मोनी महान सोभा लसंत॥ ४३॥ आभा अपार महिमा अनंत। संन्यास राज किन्नो बिअंत। काँपिआ कपट्टु तिह उदे होत।

एवं हित करनेवाला दत्त प्रकट हुआ। वह शास्त्रों का ज्ञाता, सुन्दर स्वरूप वाला, सभी गणों का राजा अवधूत था॥ ३७॥ उन्होंने संन्यास और योग का प्रसार किया और वे परमपवित्र सबकी सेवा करनेवाले थे। राज और भोग को त्यागनेवाले वे योग के साक्षात् स्वरूप थे॥ ३८॥ उनकी महिमा और स्वरूप महान था और वे शोभा के भण्डार थे। उनका स्वभाव सूर्य एवं अग्नि के समान तेजस्वी था और वे जल के समान शीतल स्वभाव वाले थे। वे संसार में योगिराज के रूप में प्रकट हुए॥ ३९॥ दत्त देव संन्यास-आश्रम में सर्वतोत्कृष्ट थे और रुद्र के सुन्दर अवतार थे। उनका तेज अग्नि के समान और धैर्य पृथ्वी के समान था॥ ४०॥ दत्त परम पवित्र अक्षय तेज वाले और निर्मल मति वाले थे। वे स्वर्ण को भी लजायमान करनेवाले थे और उनके शीश पर गंगा की लहरें शोभायमान हो रही थीं॥४१॥ लम्बी भुजाओं वाले वे अलिप्त रहनेवाले परमयोगी और सुन्दर शरीर वाले थे। अंगों पर भभूत लगाये हुए वे सबको सुवासित करते थे और उन्होंने संन्यास तथा योग का संसार में प्रकाश किया॥ ४२॥ उनके अंगों की महिमा अपरंपार दिखाई देती थी और वे उदार योगिराज के रूप में प्रकट हुए। उनके शरीर की आभा अनंत थी और वे महान रूप से मौन रहनेवाले एवं शोभा से युक्त प्रतीत होते थे॥४३॥ उस योगिराज ने अपनी अनंत महिमा और शोभा का प्रसार किया और उनके

तत छिन अकपट किन्नो उदोत ॥४४॥ महिमा अछिज्ज अनभूत गात । अबिलोक पुत्र चकि रही मात । देसन बिदेस चकि रही सरब । सुनि सरब निरख तजि दीन गरब ॥ ४५ ॥ सरबत्र प्याल सरबत्र अकाश । चल चाल चित्तु सुंदर सुबास । कंपाइमान हरखंत रोम । आनंद मान सभ भई भोम ॥ ४६ ॥ थरहरत धूम आकाश सरब । जह तह रिखीन तजि दीन गरब । बाजे बजंत आनेक गैण । दस दिउस पाइ दिखी नरैण ॥४७॥ जह तह बजंत बाजे अनेक । प्रगटिआ जाणु बपु धरि बिबेक । सोभा अपार बरनी न जाइ । उपजिआ आन संन्यास राइ ॥ ४८ ॥ जनमंत लागि उठ जोग करम । हति किओ पाप परचुर्यो धरम । राजाधिराज बड लग्ग चरन । संन्यास जोग उठि लाग करन ॥ ४९ ॥ अतिभुति अनूप लखि दत्त राइ । उठ लगे पाइ व्रिप सरब आइ । अबिलोक दत्त महिमा महान । दस चार चार बिद्यानिधान ॥ ५० ॥ सोभंत सीस जत की जटान । लख नेम के सु बढए महान । बिभ्रम बिभूत

प्रकट होते ही छल-कपट काँपने लगा और उन्होंने उसे क्षण भर में निष्कपट बना दिया ॥ ४४ ॥ उनकी अक्षय महिमा और अनुपम शरीर को देखकर माता आश्चर्यचकित रह जाती थी। देश-विदेशों में सभी उन्हें देखकर चकित थे और सभी उनकी महिमा को सुनकर गर्व का त्याग कर रहे थे ॥ ४५ ॥ सारा पाताल, आकाश उनके सौन्दर्य को अनुभव करने लगा और सभी प्राणियों का हर्ष से मन पुलकित हो उठा। उनके कारण से सारी धरती आनन्दयुक्त हो गई ॥ ४६ ॥ आकाश और धरती सभी थरथराने लगे और जहाँ-तहाँ ऋषियों ने भी अपने गर्व का त्याग कर दिया। उनके प्रकट होते आकाश में अनेकों वाद्य बजने लगे और दस दिवस तक रात्रि का दर्शन नहीं हुआ ॥ ४७ ॥ यहाँ-वहाँ अनेकों वाद्य बजने लगे और ऐसा लगने लगा कि मानो विवेक ने स्वयं शरीर धारण किया। उनकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता और वे संन्यास राज के रूप में प्रकट हुए ॥ ४८ ॥ जन्मते ही वे योगकर्म में प्रवृत्त हो गए और उन्होंने पाप का नाश करके धर्म का प्रचार किया। बड़े-बड़े राजाधिराज उनके चरणों में आ गिरे और पुन: उठकर संन्यास और योग का अभ्यास करने लगे ॥ ४९ ॥ अनुपम दत्तराज को देखकर सभी राजा उनके चरणों में आ लगे। दत्त की महान महिमा को देखकर यह प्रतीत होता था कि वे अठारहों विद्याओं के भण्डार थे ॥ ५० ॥ उनके शीश पर यतीत्व की जटाएँ और हाथो मे नियम के नाखून बढ़े हुए थे

उज्जल सु मोह। दिज चरज तुलि म्रिग चरम अरोह ॥ ५१ ॥ मुख सित बिभूत लंगोट बंद। संन्यास चरज तजि छंद बंद। आसुनक सुंनि अनु बिकत अंग। आछिज्ज तेज महिमा सुरंग ॥ ५२ ॥ इक आस चित्त तजि सरब आस। अनभूत गात निसदिन उदास। मुन चरज लीन तजि सरब काम। आ रकत नेत्र जनु धरम धाम ॥ ५३ ॥ अबिकार चित्त अणडोल अंग। जुत ध्यान नेत्र महिमा अभंग। धरि एक आस अउदास चित्त। संन्यास देव परमं पवित्त (मू०ग्रं०६३८) ॥ ५४ ॥ अवधूत गात महिमा अपार। स्रुत ग्यान सिध बिद्या उदार। मुन मन प्रबीन गुन गन महान। जनु भयो परम ग्यानी महान ॥ ५५ ॥ कबहूँ न पाप जिह छुहा अंग। गुन गन सपंन सुंदर सुरंग। लंगोट बंद अवधूत गात। चकि रही चित्त अविलोक मात ॥ ५६ ॥ संन्यास देव अनभूत अंग। लाजंत देख जिहि दुति अनंग। मुन दत्त देव संन्यास राज।

उनके शरीर पर उज्ज्वल भभूत उनकी भ्रम-रहित अवस्था की द्योतक थी। ब्रह्म के समान उनका आचरण ही उनकी मृगछाला थी ॥ ५१ ॥ मुख पर सफेद भभूत और लँगोटी धारण किये हुए वे संन्यास, आचरण को अपनानेवाले और छल-बल को त्यागनेवाले थे। वे शून्य समाधि में लीन रहनेवाले थे और उनके अंगों की महिमा सुन्दर थी। उनका तेज अक्षय था ॥ ५२ ॥ चित्त में केवल संन्यास योग की केवल एक ही आशा को लिये उन्होंने बाक़ी सभी आशाओं का त्याग कर दिया था। उनका शरीर अनुपम था और रात-दिन वे ससार के प्रपंचों के प्रति उदासीन रहते थे। सर्व प्रकार की कामनाओं को छोड़कर उन्होंने मुनियों का आचरण धारण किया था। उनके नेत्र लाल थे और वे धर्म का भण्डार थे ॥ ५३ ॥ वे अविकारी चित्त वाले और चंचल न होनेवाले नेत्रों से ध्यान करते थे और उनकी महिमा अपरंपार थी। केवल एक ही आशा मन में रखकर वे बाक़ी सब ओर से संन्यास धारण किये हुए थे तथा तटस्थ थे। वे परमपवित्र, संन्यासियों में महान थे ॥ ५४ ॥ योगियों वाले उनके शरीर की महिमा अपरंपार थी और श्रुतियों के ज्ञान के भण्डार वे परम उदार थे। मुनिगणों में वे प्रवीण एवं महान थे और परम ज्ञानी प्रतीत होते थे ॥ ५५ ॥ पाप कभी उनको छू भी नहीं सका था और वे गुणों से युक्त सुन्दर थे। अवधूत दत्त लँगोटधारी थे और उनको देखकर उनकी माता चकित हो रही थी ॥५६॥ संन्यासियों में महान और सुन्दर अंगों वाले दत्त को देखकर कामदेव भी लज्जित होता था। दत्त मुनि संन्यासियों के राजा

जिह सधे सरब संन्यास साज ॥ ५७ ॥ परमं पवित्र जाको सरीर । कबहू न काम किन्नो अधीर । जट जोग जास सोभंत सीस । अस धरा रूप संन्यास ईस ॥ ५८ ॥ आभा अपार कथि सकै कउन । सुन रहै जच्छ गंध्रब मउन । चकि रह्यो ब्रहम आभा बिचार । लाज्यो अनंग आभा निहार ॥ ५९ ॥ अति ग्यानवंत करमन प्रबीन । अन आस गात हरि के अधीन । छबि दिपत कोट सूरज प्रमान । चक रहा चंद लखि आसमान ॥ ६० ॥ उपजिया आप इक जोग रूप । पुन लगे जोग साधन अनूप । ग्रहि प्रिथम छाडि उठि चला दत्त । परमं पवित्र निरमलो मत्ति ॥ ६१ ॥ जब कीन जोग बहु दिन प्रमान । तब कालदेव रीझे निधान । इम भई ब्योमबाणी बनाइ । तुम सुणहु बैन संन्यास राइ ॥ ६२ ॥ ॥ आकाशबाणी बाचि दत्त प्रति ॥ ॥ पाधड़ी छंद ॥ गुर हीण मुकत नही होत दत्त । तुहि कहो बात सुनि बिमल मत्त । गुरि करहि प्रिथम तब होहि मुकति । कहि दीन काल तिह जोग जुगति ॥ ६३ ॥ बहु भांत दत्त डंडवत कीन । आसा बिरहित हरि को अधीन ।

थे और उन्होंने सर्व प्रकार की संन्यास की क्रियाओं की साधना की थी ॥५७॥ उनका शरीर परमपवित्र था जिसे काम ने कभी भी नहीं सताया था। जिसके सिर पर जटाओं का झुंड शोभायमान होता है, रुद्रावतार दत्त ने ऐसा रूप धारण किया ॥ ५८ ॥ उनकी सुंदर शोभा का कथन कौन कर सकता है और उनकी प्रशंसा को सुनकर यक्ष और गन्धर्व भी चुप हो जाते हैं। ब्रह्मा भी उनकी शोभा को देखकर आश्चर्यचकित था और कामदेव भी उनकी सुन्दरता को देखकर लज्जित था ॥ ५९ ॥ वे अत्यन्त ज्ञानवान, कर्मों में प्रवीण, आशाओं से परे और परमात्मा के अधीन थे। उनकी छवि करोड़ों सूर्यों के समान थी और आकाश में चन्द्रमा भी उनको देखकर चकित था ॥ ६० ॥ वे योग के साक्षात् स्वरूप में प्रकट हुए थे और पुन: योगसाधना में ही लीन हो गये थे। वह परमपवित्र निर्मल बुद्धि वाले दत्त सबसे पहले घर छोड़कर चल पड़े ॥ ६१ ॥ जब उन्होंने बहुत दिनों तक योगसाधना की तो कालदेव उन पर प्रसन्न हुए। उस समय आकाशवाणी हुई कि हे योगिराज, तुम मेरी बात सुनो ॥६२॥ ॥ आकाशवाणी उवाच दत्त के प्रति ॥ ॥ पाधड़ी छंद ॥ हे दत्त ! तुम निर्मल मति से मेरी बात सुनो और मैं तुमसे कहता हूँ कि गुरु के बिना मुक्ति नहीं होती। पहले गुरु धारण करो, तब तुम्हारी मुक्ति होगी। इस प्रकार काल ने योग की युक्ति दत्त को बताई ॥ ६३ ॥ परमात्मा

बहु भांत जोग साधना साध। आदग्ग जोग महिमा अगाध ॥ ६४ ॥ तब नमशकार करि दत्त देव। उचरंत परम उसतति अभेव। जोगी जोग राजान राज। अनभूत अंग जह तह बिराज ॥ ६५ ॥ जल थल बियाप जिह तेज एक। गावंत जासु मुनि गन अनेक। जिह नेत नेत भाखंत निगम। ते आदि अंत मद्धह अगम ॥ ६६ ॥ जिह एक रूप किने अनेक। पुहमी अकाश किने बिबेक। जलबा थलेस सभ ठौर जान। अनभय अजोन अन आसमान ॥ ६७ ॥ पावन प्रसिद्ध परमं पुनीत। आजान बाहु अन (मू०ग्रं०६२६) भउ अजीत। परमं प्रसिद्ध पूरण पुराण। राजान राज भोगी महाण ॥ ६८ ॥ अनछिज्ज तेज अनभय प्रकास। खड़गन सपंन परमं प्रभास। आभा अनंत बरनी न जाइ। फिर फिरो सरब मति को चलाइ ॥ ६९ ॥ सभहू बखान जिह नेत नेत। अकलंक रूप आभा अमेत। सरबं सम्रिध जिह पान लाग। जिह नाम लेत सभ पाप भाग ॥ ७० ॥ गुन शील साध ताको सुभाइ। बिन

के अधीन और तृष्णाओं से परे रहनेवाले दत्त ने अनेक प्रकार से दण्डवत किया। उन्होंने विभिन्न प्रकार से योगसाधना की और योग की महिमा का प्रसार किया ॥ ६४ ॥ तब दत्त नमस्कार करके परमअकालपुरुष की स्तुति करने लगे जो कि स्वयं राजाओं का राजा, योगियों में योगेश्वर और अनुपम अगों वाला सर्वत्र विराजमान है ॥६५॥ जल, स्थल में उस परमात्मा का तेज व्याप्त है और अनेकों मुनिगण उसी का गुणानुवाद करते हैं। वेद इत्यादि भी जिसे नेति-नेति कहते हैं वह परमात्मा आदि-अन्त और मध्य अर्थात् सर्वकालों मे शोभायमान है ॥ ६६ ॥ जिसने एक से अनेक जीव पैदा किये और अपने बुद्धि-बल से पृथ्वी-आकाश का सृजन किया। जल-स्थल आदि सभी स्थानों पर वह अभय, अयोनि रूप मे कामनाओं से रहित विराजमान है ॥ ६७ ॥ वह परम प्रसिद्ध, पुनीत, पावन, लम्बी भुजाओं वाला, अभय और अजेय है। वह पुराणों का परम प्रसिद्ध पुरुष, राजाओं का राजा और महान भोक्ता है ॥६८॥ वह प्रभु अक्षय तेज वाला, प्रकाशस्वरूप, खड़गधारी और परम प्रभाशाली है। उसकी अनन्त शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। वह ही सारे मतों में रमण कर रहा है ॥ ६९ ॥ सब जिसको नेति-नेति कहते हैं, उस कलंकहीन रूप-सौन्दर्य वाले परमात्मा के चरणों में सर्वप्रकार की समृद्धियाँ निवास करती हैं और उसका नाम लेने से सभी पाप भाग जाते हैं ॥ ७० ॥ उसका स्वभाव, गुण और शील साधुओं के समान है और बिना उसकी शरण में गये मुक्ति का

ता:त शरनि नहि को उपाइ। दीनन उधारणि जासु बान। कोऊ कहो कैसे ई लेत मान ॥ ७१ ॥ अकलंक रूप अनछिज्ज तेज। आसन अडोल सुभ सुभ्र सेज। अनगनत जास गुन मद्धि सोभ। लखि शत्र मित्र जिह रहत लोभ ॥ ७२ ॥ जिह शत्र मित्र सम एक जान। उसतती निंद जिह एक मान। आसन अडोल अनछिज्ज रूप। परमं पवित्र भूपाण भूप ॥७३॥ जिहबा सुधान खगउद्ध सोहि। अबिलोक दइत अरु देव मोहि। बिन बैर रूप अनभव प्रकास। अनछिज्ज गात निस दिन निरास ॥ ७४ ॥ दुति आदि अंति एकै समान। खड़गन सर्पंनि सभ बिध निधान। सोभा सु बहुत तन जास सोभ। दुति देखि जच्छ गंध्रब लोभ ॥ ७५ ॥ अनभंग अंग अनभव प्रकास। पसरी जगत्त जिह जीव रास। किन्ने सु जीव जलि थलि अनेक। अंतहि समेय फुन रूप एक ॥ ७६ ॥ जिह छुआ नैक नही कालु जाल। छ्वै सका पाप नही कउन काल। आछिज्ज तेज अनभूत गात। एकै सरूप निसदिन

अन्य कोई उपाय नहीं हैं। दीनों का उद्धार करना ही उसका कर्म है और कोई कैसे भी पुकारे वह उसकी बात मान लेता है ॥ ७१ ॥ निष्कलंक स्वरूप वाला, अक्षय तेज वाला, अडोल आसन पर विराजमान होनेवाला वह प्रभु जिसके अगणित गुण हैं, शत्रु और मित्र सभी उसे देखकर मोहित हो जाते है ॥ ७२ ॥ शत्रु और मित्रों को वह एक समान समझनेवाला, स्तुति और निंदा को वह एक ही प्रकार से जाननेवाला, स्थिर आसन पर विराजमान होनेवाला परमसौन्दर्यशाली, परमपवित्र और राजाओं का भी राजा है ॥ ७३ ॥ उसकी जिह्वा अमृत बरसानेवाली है और देव-दैत्य सभी उस पर मोहित होते हैं। वह शत्रुता से विहीन, प्रकाशस्वरूप है और उसका शरीर अक्षय है तथा वह दिन-रात तटस्थ बना रहता है ॥ ७४ ॥ आदि और अन्त मे भी उसकी शोभा एक समान बनी रहती है और वह सब प्रकार की शक्तियों से सम्पन्न है। उसके शरीर में सब प्रकार के सौन्दर्य शोभायमान हैं और उसकी सुन्दरता को देखकर यक्ष और गन्धर्व भी मोहित होते हैं ॥ ७५ ॥ उसका शरीर अनश्वर और वह प्रभु अनुभूति का प्रकाश है। उसी की कृपा से जीवराशि इस सारे संसार में बिखरी हुई है। जल-स्थल में अनेकों जीव उसने पैदा किये हैं और अन्त में वह सबको अपने एक रूप में ही समाहित कर लेता है ॥ ७६ ॥ कालचक्र और पाप किसी भी समय उसे छू नहीं सका। उस अक्षय तेज और शरीर वाले ८ का स्वरूप दिन-रात समान रहता

प्रभात ॥ ७७ ॥ इह भाँत दत्त असतोत्र पाठ । मुख पड़त अठ ग्यो पाप नाठ । को सकै बरन महिमा अपार । संछेप कीन ता ते उचार ॥ ७८ ॥ जे करै पत्र कासिपी सरब । लिक्खे गणेश कर कै सु गरब । मसु सरब सिंध लेखन बनेस । नही तदिप अंति कहि सकै सेसु ॥ ७६ ॥ कउ करै बैठ ब्रहमा उचार । नही तदिप तेज पायंत पार । मुख सहंस नाम फणपति रड़ंत । नही तदिप तास पायंत अंत ॥ ८० ॥ निस दिन जपंत सनकं सनात । नही तदिप तास सोभा निरात । मुखं चार बेद किन्ने बिचार । तजि गरब नेत नेतै उचार ॥ ८१ ॥ शिव सहंस बरख लौ जोग कीन । तजि नेह्र गेह बनबास लीन । बहु (मू०ग्रं०६४०) कीन जोगि तह बहु प्रकार । नही तदिप तास लहि सका पार ॥ ८२ ॥ जिहँ एक रूप अनकं प्रकाश । अबियकत तेज निसदिन उदास । आसन अडोल महिमा अभंग । अनभव प्रकाश सोभा सुरंग ॥ ८३ ॥ जिह शत्रु मित्र एकै समान । अबियकत तेज महिमा महान । जिह आदि अंति

है ॥ ७७ ॥ इस प्रकार दत्त ने स्तोत्र का पाठ किया और पाठ करने से सभी पाप भाग खड़े हुए । उसकी अपार महिमा का वर्णन कौन कर सकता है, इसलिए मैंने संक्षेप में ही कहा है ॥ ७८ ॥ यदि सारी धरती पत्र बन जाय, गणेश गर्वपूर्वक लिखनेवाले हों, सारे समुद्र स्याही बन जायँ और सारे वन लेखनियाँ बन जायँ और शेषनाग अपने सहस्र मुखों से उस परमात्मा का वर्णन करें, तब भी उसके रहस्य को नहीं जाना जा सकता ॥ ७६ ॥ यदि ब्रह्मा भी उसके प्रताप का उच्चारण करें तो भी उसके तेज का पार नहीं पाया जा सकता । सहस्रों मुखों से शेषनाग भी उसके नामों का उच्चारण करें, तब भी उसका अन्त नहीं जाना जा सकता ॥ ८० ॥ सनक-सनन्दन आदि रात-दिन उसका जाप करें, तब भी उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता । ब्रह्मा ने चारों वेदों का निर्माण किया, परन्तु उस परमात्मा का विचार करते हुए वे भी उसे नेति-नेति कहते हैं ॥ ८१ ॥ शिव ने हज़ारों वर्षों तक योग किया, घर-स्नेह छोड़कर वनों में निवास किया तथा विभिन्न प्रकार से योग-साधना की, परन्तु फिर भी वे उसका अन्त नहीं जान सके ॥ ८२ ॥ उसके एक रूप से अनेकों जगत प्रकाशित होते हैं और रात-दिन तटस्थ बने रहनेवाले उस परमात्मा के तेज का वर्णन नहीं किया जा सकता । वह स्थिर-आसन और महिमा वाला प्रकाशस्वरूप और शोभायुक्त है ॥ ८३ ॥ उसे शत्रु और मित्र एक समान हैं और उसका अदृष्ट तेज और महिमा महान है । आदि और

एकै सरूप। सुंदर सुरंग जग करि अरूप ॥ ८४ ॥ जिह राग रंग नही रूप रेख। नही नाम ठाम अनभव अभेख। आजान बाहि अनभव प्रकाश। आभा अनंत महिमा सुबास ॥ ८५ ॥ कई कलप जोग जिन करत बीत। नही तदिप तऊ धरि गए चीत। मुन मन अनेक गुन गन महान। बहु कष्ट करत नही धरत ध्यान ॥ ८६ ॥ जिह एक रूप किन्ने अनेक। अंतहि समेय फुन भए एक। कई कोट जंत जीवन उपाइ। फिर अंत लेत आपहि मिलाइ ॥ ८७ ॥ जिह जगत जीव सभ परे शरन। मुन मन अनेक जिह जपत चरन। कई कलप बीत तिहँ करत ध्यान। काहू न देखि तिह बिद्दिमान ॥८८॥ आभा अनंत महिमा अपार। मुन मन महान अति ही उदार। आछिज्ज तेज सूरत्व अपार। नही सकत बुद्ध करि कै बिचार ॥ ८९ ॥ जिह आदि अंति एकहि सरूप। सोभा अभंग महिमा अनूप। जिह कीन जोत उद्दोत सरब। जिह हत्यो सरब गरबीन गरब ॥ ९० ॥ जिह गरबवंत एकै न राख।

अन्त में उसका एक ही रूप है और उसने इस सुन्दर जगत की रचना की है॥ ८४ ॥ उसकी रूप-रेखा तथा उसे कोई राग-विराग नहीं है। उस अवेश प्रभु का कोई नाम और कोई स्थान नहीं है। लम्बी भुजाओं वाला अर्थात् सर्वशक्तिसम्पन्न वह परमात्मा अनुभूति का प्रकाश है और उसकी सुन्दरता तथा महिमा अनन्त है ॥ ८५ ॥ कई कल्पों तक योग करनेवाले भी उसके चित्त को प्रसन्न नहीं कर सके। अनेकों मुनि और गुणज्ञ बहुत कष्टपूर्वक उसका स्मरण करते हैं, परन्तु उस प्रभु को उनका कोई ध्यान अथवा परवाह नहीं ॥ ८६ ॥ एक से अनेक रूप बनानेवाला और अन्त में सबको एक रूप कर लेनेवाला प्रभु करोड़ों जीवों की जीवन-विधि है और अन्त में सबको अपने में मिला लेता है ॥ ८७ ॥ सारे संसार के जीव उसकी शरण में हैं और अनेकों मुनि उसके चरणों का जाप करते हैं। कई कल्पों तक उसका ध्यान करनेवालों को भी वह सर्वत्र विद्यमान प्रभु नहीं देखता है ॥ ८८ ॥ उसकी अपार महिमा और शोभा है। वह मुनियों में महान मुनि और अत्यन्त उदार है। वह अक्षय तेज वाला और सुन्दर स्वरूप वाला है और बुद्धि उसके बारे में विचार नहीं कर सकती ॥ ८९ ॥ आदि-अन्त में उस अनुपम महिमा और शोभा वाले प्रभु का स्वरूप एक-सा ही बना रहता है। जिसने सभी जीवों में ज्योति का प्रकाश किया है, उसी ने सभी गर्व करनेवालों का गर्व चूर किया है ९० जिसने एक भी

फिर कहो बैण नही बैण भाख। इक बार मार मार्यो न शत्र। इक बार डार डार्यो न अस्त्र ॥ ९१ ॥ सेवक थापि नही दूर कीन। लखि भई भूल मुखि बिहस दीन। जिह गही बाहि किनो निबाह। त्रिया एक व्याह नही कीन ब्याह ॥ ९२ ॥ रीझंत कोट नही कष्ट कीन। सीझंत एक ही नाम लीन। अन कपट रूप अनभौ प्रकाश। खड़गन सपंनि निसदिन निरास ॥ ९३ ॥ परमं पवित्र पूरण पुरान। महिमा अभंग सोभा निधान। पावन प्रसिद्ध परमं पुनीत। आजानबाहि अनभै अजीत ॥ ९४ ॥ कई कोट इंद्र जिह पानहार। कई चंद सूर क्रिशनावतार। कई बिशन रुद्र रामा रसूल। बिन भगति यौ न कोई कबूल ॥ ९५ ॥ कई दत्त सत्त गोरख देव। (मू०ग्रं०१४१) मुन मन मछिंद्र नही लखत भेव। बहु भांत मंत्र मत कै प्रकाश। बिन एक आस सभ ही निरास ॥९६॥ जिह नेत नेत भाखत निगंम। करतार सरब कारण अगंम। जिह लखत कोइ नही कउन जात। जिह नाहि पिता भ्रित

गर्व करनेवाले को नहीं छोड़ा है, उसका वर्णन वचनों में नहीं किया जा सकता। एक ही बार में शस्त्र चलाने पर वह शत्रु को मार गिराता है ॥ ९१ ॥ अपने सेवक को वह कभी दूर नहीं करता और उसकी भूलों पर भी वह केवल मुस्कुरा देता है। जिसकी बात उसने पकड़ ली उसका अन्त तक उसने निर्वाह किया। उसने विवाह नहीं किया है, परन्तु फिर भी माया रूपी स्त्री उसकी पत्नी है ॥ ९२ ॥ करोड़ों उस पर रीझ रहे हैं और एक उसका नाम लेकर ही प्रसन्न हो रहे हैं। वह निष्कपट है और अनुभूति का प्रकाश है, सर्वशक्तियों से सम्पन्न है और रात-दिन कामनाओं से परे रहनेवाला है ॥ ९३ ॥ वह परमपवित्र, पूर्ण, प्राचीन शोभा का भण्डार, अक्षय महिमा वाला, पावन, प्रसिद्ध, परमपुनीत, सर्वशक्तियों से सम्पन्न, अभय एवं अजेय है ॥ ९४ ॥ करोड़ों इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, कृष्ण उसका पानी भरते हैं। अनेकों विष्णु, रुद्र, राम और मुहम्मद आदि हैं जो उस प्रभु का ध्यान करते हैं, परन्तु बिना सच्ची भक्ति के वह किसी को स्वीकार नहीं करता ॥ ९५ ॥ अनेकों दत्त, सत्यवादी, गोरख, मुनि, महेन्द्र आदि योगी हैं, परन्तु कोई उसके रहस्य को नहीं जान सका है। विभिन्न प्रकार के मंत्रों से विभिन्न प्रकार के मतों का प्रकाश हुआ है, परन्तु उस एक की आशा से विहीन सभी को निराश होना पड़ता है ॥ ९६ ॥ वेद उसे नेति-नेति कहते हैं और वह कर्ता सर्व कारणों का कारण तथा अगम्य है। उसकी कोई जाति नहीं है

तात मात ।। ९७ ।। जानी न जात जिह रंग रूप । शाहान शाहि भूपान भूप । जिह बरन जात नही कित अनंत । आदऊ अपार निरबिख बिअंत ।। ९८ ।। बरणी न जाहि जिह रंग रेख । अतिभुत अनंत अति बल अभेख । अनखंड चित्त अबिकार रूप । देवान देव महिमा अनूप ।। ९९ ।। उसतती निंद जिह इक समान । आभा अखंड महिमा महान । अबिकार चित अनभव प्रकाश । घटि घटि बियाप निसदिन उदास ।। १०० ।। इह भांत दत्त उसतति उचार । डंडवत कीन अत्रज उदार । अरु भाँति भाँति उठ परत चरन । जानी न जाइ जिह जात बरन ।। १०१ ।। जउ करै क्रित कई जुग उचार । नही तदिप तास लहि जात पार । मम अलप बुद्ध तव गुन अनंत । बरनी न जात तुमरी बिअंत ।। १०२ ।। तव गुण अति उच्च अंबर समान । मम अलप बुद्धि बालक अजान । किम सकौ बरन तुमरे प्रभाव । तव परा शरण तजि सभ उपाव ।। १०३ ।। जिह लखत चत्र नहि भेद बेद । आभा अनंत महिमा अछेद । गुन गनत चत्र मुख परा हार ।

और उसका पिता-माता अथवा दास कोई नहीं है ।। ९७ ।। उसके रूप-रंग को नहीं जाना जा सकता, वह राजाओं का राजा और शाहों का भी शाह है । वह सृष्टि का आदिकारण और अनन्त है ।। ९८ ।। उसके आकार-प्रकार का वर्णन नहीं किया जा सकता और उस अवेश परमात्मा का बल अनन्त है । वह अविकारी, अखंड, देवों का भी देव, अनुपम महिमा से युक्त है ।। ९९ ।। स्तुति और निंदा उसके लिए समान है और उस महान महिमा वाले प्रभु का सौंदर्य अखंड है । वह अनुभूतिजन्य प्रकाशस्वरूप अविकारी प्रभु घट-घट में अवस्थित और दिन-रात तटस्थ भाव में विराजमान रहता है ।। १०० ।। इस प्रकार आत्रेय-पुत्र दत्त ने प्रभु की स्तुति की और दंडवत की । पुनः उस जाति-पाँति से विहीन प्रभु भिन्न-भिन्न प्रकार से चरण-स्पर्श किए ।। १०१ ।। यदि कोई कई युगों तक उसकी महिमा का उच्चारण करता रहे तब भी उसके रहस्य को नहीं समझ सकता । हे प्रभु ! मेरी बुद्धि अल्प है और मैं तुम्हारी विशालता का वर्णन नहीं कर सकता ।। १०२ ।। तुम्हारे गुण आकाश के समान महान् है और मेरी बुद्धि बालक की तरह लघु है । मैं तुम्हारी शोभा का कैसे वर्णन कर सकता हूँ, इसलिए मैं सभी उपायों को छोड़कर अब आपकी शरण में आ पड़ा हूँ ।। १०३ ।। उसका रहस्य चारों वेद भी नहीं जान सकते उसकी आभा अनन्त और महान है ब्रह्मा भी उसकी

तब नेत नेत किन्नो उचार ॥ १०४ ॥ थकि गिर्‌यो बिध सिर लिखत कित्त । चकि रहे बालिखिल्लादि चित्त । गुन गनत चत्र मुख हार मान । हठि तजि बिअंति किन्नो बखान ॥ १०५ ॥ तह जपत रुद्र जुग कोट बीत । बहि गई गंग सिर मुरिन चीत । कई कलप बीत जहि धरति ध्यान । नही तदिप ध्यान आए सुजान ॥ १०६ ॥ जब कीन नाल ब्रहमा प्रवेश । मुन मन महान दिज बर दिजेश । नही कमल नाल को लखा पार । कहो तास कैस पावैं बिचार ॥१०७॥ बरनी न जाति जिह छब सुरंग । आभा अपार महिमा अभंग । जिह एक रूप किने अनेक । पग छोर आन तिह धरो टेक ॥ १०८ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ भांत भांत बिअंति देस भवंत निरत (मू०ग्रं०६४२) उचार । भाँत भाँत पगो लगा तजि गरब अत्रकुमार । कोट बरख करी जबै हरि सेवि वा चितु लाइ । अकसमात भई तबै तिह ब्योमबान बनाइ ॥ १०९ ॥

स्तुति करता हार गया और 'नेति-नेति' कहकर ही उसकी महिमा का उच्चारण कर रहा है ॥ १०४ ॥ गणेश भी उसकी स्तुति लिखते थक जाते हैं और सभी मन में उसकी व्यापकता को अनुभव कर चकित रह जाते हैं। ब्रह्मा ने भी उसके गुण गाते हुए हार मान ली है और अपना हठ छोड़कर उसको अनन्त कह कर उसका वर्णन करते हैं ॥ १०५ ॥ करोड़ों युगों से रुद्र उसका जाप कर रहे हैं जिनके सिर से गंगा बह रही है। कई कल्पों तक उसका ध्यान करने पर भी वह चतुर व्यक्तियों के ध्यान में नहीं बँध पाता ॥ १०६ ॥ जब ब्रह्मा, जो की महान मुनिजनों में श्रेष्ठ हैं, ने कमलनाल में प्रवेश किया तो वह कमलनाल का अन्त भी नहीं जान सका, तब भला हमारी विचार-बुद्धि उसको कैसे प्राप्त कर सकती है ॥ १०७ ॥ जिसकी सुन्दर छवि का वर्णन नहीं किया जा सकता, उसकी महिमा एवं शोभा अपरम्पार है, जो एक से अधिक रूपों में प्रकट हुआ है, उसी के चरणों का ध्यान करो ॥ १०८ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ भिन्न-भिन्न प्रकार के देशों में भाँति-भाँति के ऋषि-मुनियों के चरण-स्पर्श करता हुआ गर्व को त्यागकर आत्रेय-कुमार दत्त भ्रमण करने लगा । जब मन लगाकर लाखों वर्षों तक उसने परमात्मा की सेवा की, तब एक दिन अकस्मात आकाशवाणी हुई ॥ १०९ ॥

अथ अकाल को प्रथम गुरु करिबो कथन ।

।। ब्योमबानी बाच दत्त प्रति ।। दत्त सत्ति कहौ तुझै गुर हीण मुकत न होइ । राव रंक प्रजावजा इम भाखई सभ कोइ । कोट कशटन किउँ करो नही ऐस देह उधार । जाइकै गुर कीजिऐ सुनि सत्ति अत्रिकुमार ।। ११० ।। ।। दत्त बाच ।। ऐस बाक भए जबै तब दत्त सत्त सरूप । सिंध सील सुब्रित को नद ग्यान को जनु कूप । पान लाग डंडौत कै इह भाँति कीन उचार । कउन सो गुर कीजिऐ कहि मोहि तत्त बिचार ।। १११ ।। ।। ब्योमबानी बाच ।। जउन चित्त बिखै रुचै सोई कीजिऐ गुरदेव । त्याग कै करि कपट कउ चित लाइ कीजै सेव । रीझहै गुरदेव कउ तुम पाइहो बरदान । यो न होइ उधार पै सुनि लेहु दत्त सुजान ।। ११२ ।। प्रिथम मंत्र दयो जिनै सोइ जान कै गुरदेव । जोग कारण को चला जिअ जानकै अनभेव । तात मात रहे मनै करि मान बैन न एक । घोर काननि को चला धरि जोगि न्यास अनेक ।। ११३ ।। घोर

अकाल को प्रथम गुरु करना

।। आकाशवाणी उवाच दत्त के प्रति ।। हे दत्त ! मैं तुमसे सत्य कह रहा हूँ कि राजा, रंक तथा सभी प्रकार के लोगों की गुरु-विहीन होने पर मुक्ति नही होती है। चाहे तुम करोड़ों कष्ट भोगो, परन्तु इस शरीर का उद्धार नहीं होगा, इसलिए, हे आत्रेयकुमार ! तुम गुरु धारण करो ।।११०।। ।। दत्त उवाच ।। जब इस प्रकार की वाणी हुई तो सुवृत्तियों एवं ज्ञान के भंडार तथा सागर के समान शीलवान दत्त ने प्रभु के चरणों पर दण्डवत करते हुए यह कहा कि हे प्रभु ! मुझे यह तत्त्व-विचार दीजिए कि मैं किसको गुरु के रूप में धारण करूँ ? ।। १११ ।। ।। आकाशवाणी उवाच ।। जो भी मन में अच्छा लगे उसको गुरु मानो और कपट त्यागकर, मन लगाकर उसकी सेवा करो। गुरु को प्रसन्न करके तुमको वरदान की प्राप्ति होगी, अन्यथा, हे चतुर एवं सुजान दत्त ! तुम्हारा उद्धार नहीं हो सकेगा ।।११२।। जिसने सर्वप्रथम यह मंत्र दिया, उसी परमात्मा को मन में अनुभव करते हुए, और गुरु मानते हुए दत्त योग-विद्या के लिए चल पड़ा। माता-पिता के मना करते पर भी किसी की एक भी बात न मानते हुए वह योग के वेश को धारण कर घोर जंगल की ओर चल पड़ा ।। ११३ ।। वन में अनेक प्रकार से तपस्या की और चित्त को एकाग्र

कारन मै करी उपमा अनेक प्रकार । भांत भांतन के करे इक चित्त मंत्र उचार कष्ट कै जबही किआ तप घोर ब्रख प्रमान । बुद्धि को बरु देत भे तब आन बुद्धि निधान ॥११४॥ बुद्धि को बरु जउ भयो तिन आन बुद्धि अनंत । परमपुरख पवित्र कै गए दत्त देव महंत । अकसमात बढी तबै बुधि जल तल दिसान । धरम प्रचुर किआ जहीं तह परम पाप खिसान ॥ ११५ ॥ प्रिथम अकाल गुरू किआ जिह्को कबै नहीं नास । जल तल दिसा बिसा जिह ठउर सरब निवास । अंड जेरज सेत उतभुज कीन जास पसार । ताहि जान गुरू कियो मुनि सति दत्त सुधार ॥ ११६ ॥

॥ इति अकाल गुरु प्रथम समापतम ॥

अथ दुतीअ गुरू कथनं ॥

॥ रूआल छंद ॥ परम रूप पवित्र मुन जन जोग करम निधान । दूसरे गुर कउ करा मन ई मनै मुनि मान । नाथ तउ ही पछान जो मन मानई जिह काल । सिद्ध तउ मन कामना सुध होत है सुनि लाल ॥ ११७ ॥ (मू०ग्रं०६४३)

॥ इति दुतीआ गुरू बरननं धिआइ समापतं ॥

कर भाँति-भाँति के मंत्रों का उच्चारण किया । कई वर्षों तक कष्ट उठाते हुए जब उसने घोर तपस्या की तब बुद्धिनिधान प्रभु ने उसे बुद्धि का वरदान दिया ॥ ११४ ॥ बुद्धि का वर प्राप्त करने पर उसमें अनन्त बुद्धि का संचार हुआ और वह महान दत्त उस परमपुरुष के पवित्र स्थान पर पहुँचा । उनकी बुद्धि सर्वदिशाओं में अकस्मात बढ़ चली और उन्होंने धर्म का प्रचार किया जिससे पापों का क्षय हो गया ॥ ११५ ॥ इस प्रकार उसने कभी भी नाश न होनेवाला पहला गुरु अकालपुरुष धारण किया जिसका सभी दिशाओं में निवास है । अण्डज, जेरज, स्वेदज, उद्‌भिद आदि का जिसने प्रसार किया है, उसी परमात्मा को मुनि दत्त ने प्रथम गुरु माना ॥ ११६ ॥

॥ इति अकाल गुरु प्रथम समाप्त ॥

द्वितीय गुरु-कथन

॥ रूआल छंद ॥ परमपवित्र एवं योग के समुद्र मुनि दत्त ने तब मन ही मन दूसरे गुरु का ध्यान किया और मन को गुरु बनाया । जब मन स्थिर हो

जाता है, तभी उस परमनाथ की पहचान होती है तथा मनोकामनाओं की सिद्धि होती है ॥ ११७ ॥

॥ इति द्वितीय गुरु-वर्णन अध्याय समाप्त ॥

अथ दसनाम कथनं ॥

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जब द्वै सु कीने गुरू दत्त देवं । सदा एक चित्तं करै नित्त सेवं । जटा जूट सीसं सु गंगा तरंगं । कबै छ्वै सका अंग को ना अनंगं ॥ ११८ ॥ महा उज्जली अंग बिभूत सोहै । लखै मोन मानी महा मान मोहै । जटाजूट गंगा तरंगं महानं । महा बुद्ध उद्दार बिद्यानिधानं ॥ ११९ ॥ भगउ है लसै बस्त्र लंगोट बंदं । तजे सरब आसा रटै एक छंदं । महा मोन मानी महा मोन बाँधे । महा जोग करमं सभै न्यास साधे ॥ १२० ॥ दया सिंध सरबं सुभं करम करता । हरे सरब गरबं महाँ तेज धरता । महाँ जोग की साधना सरब साधी । महाँ मोन मानी महाँ सिद्ध लाधी ॥ १२१ ॥ उठै प्रात संधिआ करै न्हान जावै । करै साधना जोग की जोग भावै । त्रिकालग्गि दरसी महा परम तत्तं । सु संन्यास देवं महा सुद्ध मत्तं ॥१२२॥

दसनाम-कथन

॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जब दत्त ने दो गुरु धारण किए तो सदा एक मन से उनकी सेवा की। उनके सिर पर गंगा की तरंगें और जटाएँ शोभायमान हो रही थीं और कामदेव कभी उनके शरीर को छू तक नहीं सका था ॥ ११८ ॥ उनके शरीर पर उज्ज्वल भभूत शोभायमान हो रही थी और वे महामानियों का भी मन मोह रहे थे। गंग-तरंग एवं जटा-जूट वाले महान एवं उदार बुद्धि एव विद्या के वे भंडार थे ॥ ११९ ॥ उनके वस्त्र भगवे थे और उन्होंने लँगोटी धारण कर रखी थी। वे सब आशाओं को त्यागकर केवल एक ही मंत्र का जाप कर रहे थे। वे महान मौनी और महान योगकर्मों को सभी साधनों से साधनेवाले थे ॥ १२० ॥ वे दया के समुद्र और शुभ कर्मों के कर्ता तथा सबके गर्व को नाश करनेवाले महान तेजस्वी थे। वे महान योग की सर्वसाधनाओं को साधनेवाले थे और महान सिद्धियों को उपलब्ध करनेवाले मौन पुरुष थे ॥ १२१ ॥ प्रातः एवं संध्या को वे स्नान करने जाते थे और योग की साधना करते थे वे त्रिकालदर्शी एवं सर्वसंन्यासियों में शुद्ध मति वाले

पियासा छुधा आनकै जो सतावैं। रहै एक चित्तं न चित्तं चलावैं। करै जोग न्यासं निरासं उदासी। धरे मेखला परम तत्तं प्रकाशी ॥१२३॥ महाँ आतम दरसी महाँ तत्त बेता। थिरं आसणेकं महाँ ऊर्धरेता। करै सत्ति करमं कुकरमं प्रनासं। रहै एक चित्तं मुनीसं उदासं ॥१२४॥ सुभं शास्त्र गंता कुकरमं प्रणासी। बसै काननेसं सुपालं उदासी। तज्यो काम क्रोधं सभं लोभ मोहं। महाँ जोग ज्वाला महा मोनि सोहं ॥१२५॥ करै न्यास एकं अनेकं प्रहारी। महाँ ब्रहमचरजं सु धरमाधिकारी। महाँ तत्त बेता सु संन्यास जोगं। अनासं उदासी सु बासं अरोगं ॥ १२६ ॥ अनासा महाँ उरधहेता संन्यासी। महाँ ततबेता अनासं उदासी। सभै जोग साधै रहै एक चित्तं। तजै अउर सरबं गह्यो एक हित्तं ॥ १२७ ॥ तरे ताप धूमं करैं पान उच्चं। झुलै मद्धि अगनं तऊ ध्यान मुच्चं। महाँ ब्रहमचरजं महाँ धरमधारी। भए दत्त के रुद्र पूरण वतारी ॥ १२८ ॥ हठी तापसी मोन मंतं

महान देवतास्वरूप थे ॥ १२२ ॥ भूख-प्यास के सताने पर भी वे चित्त को चचल नहीं होने देते थे तथा परम उदासी रूप में विचरण करते हुए मेखला इत्यादि धारण करते हुए परमतत्त्व के प्रकाश की प्राप्ति के लिए योगसाधना करते थे ॥ १२३ ॥ वे महान आत्मदर्शी तत्त्ववेत्ता एवं स्थिर बैठनेवाले तथा सदैव उर्ध्वगामी बने रहनेवाले थे। सत्कर्मों से वे कुकर्मों का नाश करनेवाले और सदैव स्थिरचित्त वाले उदासीन तपस्वी थे ॥ १२४ ॥ सर्वशास्त्रों में गति रखनेवाले और कुकर्मों का नाश करनेवाले वे उदासीन मार्ग के सुपात्र के रूप में जंगल में बसते थे। उन्होंने काम, क्रोध, लोभ, मोह का त्याग कर दिया था और परम मौनी वे योगज्वाला के धारक थे ॥ १२५ ॥ वे अनेकों प्रकार की साधना करनेवाले महा ब्रह्मचारी एवं धर्माधिकारी थे। वे महान तत्त्ववेत्ता, योग-संन्यास के मर्मज्ञ और उदासीन थे। वे सदा आरोग्य बने रहने वाले थे ॥ १२६ ॥ वे आशाओं से विहीन, उर्ध्वगामी, महान तत्त्ववेत्ता, उदासीन संन्यासी थे। उन्होंने एकाग्रचित्त होकर सभी प्रकार की योग-साधना की तथा अन्य सभी प्रकार की कामनाओं का त्याग कर केवल एक प्रभु में ही अपना ध्यान लगाया ॥ १२७ ॥ अग्नि और धुएँ के पास बैठे हुए उन्होंने अपने हाथ को उठाया हुआ था और वे ध्यान को लगाते हुए अग्नियों को चारों ओर जलाकर उसके बीचोबीच झुलस रहे थे। वे महान धर्म को धारण करनेवाले ब्रह्मचारी तथा रुद्र के पूर्ण अवतार दत्त थे ॥ १२८ ॥ वे

महानं । परं पूरणं दत्त प्रग्या निधानं । करै जोग न्यासं तजे राज भोगं । चके सरब देवं जके सरब लोगं ॥१२९॥ जके जक्क गंध्रब विद्यानिधानं । चके देवता चंद सूरं सुरानं । छके जीव जंतं लखे परम रूपं । तज्यो गरब सरबं लगे पान भूपं ॥ १३० ॥ (मू०ग्रं०६४४) जटी दंड मुंडी तपी ब्रहमचारी । जटी जंगमी जामनी जंत्रधारी । परी पारबती परम देसी पछेले । बली बालखी बंग रूमी रुहेले ॥ १३१ ॥ जटी जामनी जंत्रधारी छलारे । अजी आमरी निवलका करमवारे । अले वागनहोत्री जुआ जग्यधारी । अधं ऊरधरे ते बरं ब्रहमचारी ॥ १३२ ॥ जिते देस देसं हुते छत्रधारी । सभै पान लागं तज्यो गरब भारी । करैं लाग सरबं सु संन्यास जोगं । इही पंथ लागे सुभं सरब लोगं ॥ १३३ ॥ सभे देस देसान ते लोग आए । करं दत्त के आन मूँडं मुँडाए । धरे सीस पै परम जूटं जटानं । करै लागि संन्यास जोग अप्रमानं ॥ १३४ ॥ ॥ रूआल

हठी तपस्वी मौनी, मंत्रों के महान ज्ञाता, प्रज्ञा के भंडार दत्तात्रेय थे। वे राजभोगों को त्यागकर योगसाधना कर रहे थे और उन्हें देखकर सभी मनुष्य और देवता चकित हो रहे थे ॥ १२९ ॥ उनको देखकर गन्धर्व, जो कि विद्याओं के भण्डार थे, तथा चन्द्र, सूर्य, देवराज तथा अन्य देवता चकित हो रहे थे। जीव-जन्तु उनके सुन्दर स्वरूप को देखकर प्रसन्न हो रहे थे और सभी राजा गर्व को त्यागकर उनके चरणों में आ गिरे थे ॥ १३० ॥ तपस्वी, ब्रह्मचारी, दण्डी एवं जटाओं वाले महात्मा रात्रि में विचरण करनेवाले तथा अनेकों यंत्रधारी वहाँ थे। पर्वतों तथा अन्य अनेक देशों में रहनेवाले महाबली भी वहाँ थे। बलख, बंगाल, रूसी और रुहेलखण्ड के महाबली उनकी शरण में थे ॥ १३१ ॥ जटाओं वाले संत तथा यंत्र-मंत्र धारण कर लोगों को छलनेवाले निशाचर, अज प्रदेश, आभीर देश के निवासी तथा न्यौली कर्म करनेवाले लोग भी वहाँ थे। संसार को अपने वश में करनेवाले अग्निहोत्री तथा नीचे से लेकर ऊपर तक सम्पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले भी उनकी शरण में थे ॥ १३२ ॥ जितने देश-देशान्तरों के छत्रधारी राजा थे, वे सभी गर्व को त्यागकर चरणों में आ गिरे। वे सभी संन्यास-योग का अभ्यास करने लगे और सभी इसी मार्ग का अनुसरण करने लगे ॥ १३३ ॥ देश-देशान्तरों से लोग आकर दत्त के हाथों अपना मुंडन करवाने लगे और कई लोग सिर पर जटाजूट धारण कर योग एवं संन्यास का अभ्यास करने लगे ॥१३४॥ ॥ रूआल छंद ॥ देश-देशान्तरों के राजा उस स्थान पर आकर गुरुशिरोमणि श्री

छंद ॥ देस देसन के सभै न्रिप आनकै तिह ठउर । जान पान परे सभै गुरदत्त की सरमउर । त्याग अउर नए नए मति एकही मति ठान । आन मूँड मुँडात भे सभ राज पाट निधान ॥ १३५ ॥ आन आन लगे सभै पग जान कै गुरदेव । शस्त्र शास्त्र सभै न्रितांबर अनंत रूप अभेव । अछिद्द गात अछिज्ज रूप अभिद्द जोग दुरंत । अमित्त उज्जल अजित परम उपज्यो सु दत्त महंत ॥ १३६ ॥ पेख रूप चके चराचर सरब ब्योम बिमान । जत्र तत्र रहे निराधप चित्र रूप समान । अत्र छत्र न्रिपत्र को तजि जोग लै संन्यास । आन आन करैं लगी ह्वै जत्र तत्र उदास ॥ १३७ ॥ इंद्र उपिंद्र चके सभै चित चउकियो ससि भान । लैन दत्त छनाइ आज न्रिपत मोर महान । रीझ रीझ रहे जहाँ तहाँ सरब ब्योम बिमान । जान जान सकै परे गुरदेव दत्त महान ॥ १३८ ॥ जत्र तत्र दिसा बिसा न्रिप राज साज बिसार । आन आन सभो गहे पग दत्त देव उदार । जान जान सु धरम को घर मान कै गुरदेव । प्रीत मान सभै लगैं मन छाडिकै अहंमेव ॥ १३९ ॥ राज साज सभै तजे न्रिप

दत्त के चरणों पर भी पड़े । वे सब नये-नये मतों को त्यागकर एक ही मत (योग-मत) में प्रविष्ट होने लगे और राजपाट त्यागकर आ-आकर अपना मुंडन कराने लगे ॥ १३५ ॥ सभी इनको परम गुरुदेव मानकर इनके चरणों में आ लगे और श्री दत्त भी शस्त्र-शास्त्र आदि के रहस्य को समझनेवाले महान पुरुष थे । उनका शरीर अछेद्य, स्वरूप अक्षय और वे योग में अभेद्य थे । परम महन्त श्री दत्त अपरिमित, उज्ज्वल एवं अजेय-शक्ति के रूप में प्रगट हुए थे ॥१३६॥ चर-अचर तथा आकाश के देवगण उनके रूप को देखकर चकित थे और यत्र-तत्र राजागण सुन्दर चित्रों के समान शोभायमान थे । वे सभी अस्त्र, छत्र आदि का त्याग कर संन्यास-योग की दीक्षा लिये हुए थे और उदासीन-रूप में यत्र-तत्र दिशाओं से आकर उनके चरणों में विराजमान थे ॥ १३७ ॥ इन्द्र, उपेन्द्र, सूर्य, चन्द्र इत्यादि सभी मन में चकित थे और यह सोच रहे थे कि कहीं महान दत्त हमारा राज्य न छीन ले । सभी अपने विमानों में बैठे हुए आकाश में प्रसन्न हो रहे थे और दत्त को महान गुरुदेव के रूप में जान रहे थे ॥ १३८ ॥ यत्र-तत्र सभी दिशाओं से राजकाज का विस्मरण कर राजा गणों ने परम उदार श्री दत्त के चरण आ पकड़े थे । दत्त को धर्म का भण्डार और गुरुदेव के रूप में जानकर सभी अपना अहम् त्यागकर प्रीतिपूर्वक उसकी सेवा में समर्पित थे ॥ १३९ ॥ राजाओं ने राज-सज्जा छोड़कर संन्यास-वेश

भेस कै संन्यास । आन जोग करै लगै ह्वै जत्र तत्र उदास । मंड अंग बिभूत उज्जल सीस जूट जटान । भाँत भाँतन सो सुभे सभ राज पाट निधान ।। १४० ।। जत्र तत्र बिसार संपत पुत्र मित्र कलत्र । भेस लै संन्यास को भ्रिप छाडिकै जय पत्र । बाज राज समाज सुंदर छाड कै गजराज । आन आन बसे महा बन जत्र तत्र उदास ।। १४१ ।। ।। पाधरी छंद ।। ।। त्वप्रसादि ।। इह भाँत सरब छित के भ्रिपाल । संन्यास जोग लागे उताल । इक करै लागि निवलि आदि करम । इक धरत ध्यान लै बस्त्र चरम ।। १४२ ।। इक धरत बस्त्र बलकलन अंग । इक रहत कलप इसथित उतंग । इक करत अलप दुगधा अहार । इक रहत बरख बहु निराहार ।। १४३ ।। इक रहत मोन मोनी महान । इक करत न्यास तजि खान पान । इक रहत एक पग निराधार । इक बसत ग्राम कानन पहार ।। १४४ ।। इक करत कष्ट कर धूम्रपान । इक करत भाँत भाँतन शनान । इक रहत इक्क पग जुग प्रमान । केई ऊरधबाह मुनि मन महान ।। १४५ ।। इक रहत बैठि

(मू०ग्रं०६४५)

धारण किया था और उदासीन होकर योगाभ्यास प्रारम्भ कर दिया था। अगों पर भभूत मलकर और सिर पर जटाजूट धारण कर भाँति-भाँति के राजा वहाँ शोभायमान हो रहे थे ।। १४० ।। सभी राजा सम्पत्ति, पुत्र, मित्र एव रानियों का मोह त्यागकर संन्यास-वेश धारण कर और अपनी जय-विजय को छोड़कर वहाँ आ बैठे। हाथी-घोड़े और सुन्दर समाज को छोड़कर वे यत्र-तत्र सभी दिशाओं से इकट्ठा होकर वहाँ उदासीन रूप में आ बैठे ।।१४१।। ।। पाधरी छंद ।। ।। तेरी कृपा से ।। इस प्रकार सभी धरती के राजा शीघ्र ही सन्यास-योग में प्रविष्ट हो गये तथा कोई न्यौली आदि कर्म करने लगा एवं कोई चर्म के वस्त्र धारण कर ध्यान लगाने लगा ।। १४२ ।। कोई वल्कल वस्त्र धारण किये हुए है कोई और संकल्प लेकर सीधा खड़ा हुआ है। कोई दूध का अल्पाहार करने लगा तथा कोई वर्षों तक बिना कुछ खाये-पिये रहने लगा ।।१४३।। वे महान साधु मौन रहने लगे और कई खान-पान को त्यागकर योगाभ्यास करने लगे। कई एक पग पर बिना किसी सहारे के खड़े रहने लगे और कई गाँवों, जंगलों एवं पहाड़ों पर बसने लगे ।। १४४ ।। कई धुआँ खाकर कष्ट झेलने लगे और कई भिन्न-भिन्न प्रकार के स्नान करने लगे। कई एक पैर पर युगों तक खडे रहने लगे और कई महान मुनियों ने अपनी भुजाएँ ऊपर उठा लीं। १४५ कोई जल में बैठा रहने लगा और कई अग्नि

जलि मद्धि जाइ । इक तपत आगि ऊरध जराइ । इक करत न्यास बहु बिधि प्रकार । इक रहत एक आसा अधार ॥१४६॥ केई कबहूँ नीच नही करत डीठ । केई तपत आग परजार पीठ । केई बैठ करत ब्रतचरज दान । केई धरत चित्त एकं निधान ॥ १४७ ॥ केई करत जग्गि अरु होम दान । केई भाँत भाँत बिधवति शनान । केई धरत जाइ लै पिष्ट पान । केई देत करम्म को छाडि बान ॥ १४८ ॥ केई करत बैठ परमं प्रकाश । केई भ्रमत पब्ब बन बन उदास । केई रहत एक आसन अडोल । केई जपत बैठ मुख मंत्र अमोल ॥ १४९ ॥ केई करत बैठ हरि हरि उचार । केई करत पाठ मुन मन उदार । केई भगत भाव भगवंत भजंत । केई रिचा बेद सिम्रित रटंत ॥ १५० ॥ केई एक पान असथित अडोल । केई जपत जाप मनि चित्त खोल । केई रहत एक मन निराहार । इक भछत पउन मुन मन उदार ॥ १५१ ॥ इक करत न्यास आसा बिहीन । इक रहत एक भगवत अधीन । इक करत नैक बन फल अहार । इक रटत नाम स्यामा अपार ॥ १५२ ॥ इक

जलाकर उसे तापने लगे। कोई विभिन्न प्रकार के आसन करने लगा और कोई केवल एक ही कामना के बल पर जीवित रहने लगा ॥ १४६ ॥ कई ऐसे हैं, जो कभी नीचे नहीं देखते और कई पीठ पर अग्नि जलाकर उसे तापते हैं। कई बैठकर व्रत आदि एवं दान आदि करते हैं और कई एक ही परमात्मा में ध्यान लगाये हुए है ॥ १४७ ॥ कई विधिवत भाँति-भाँति के स्नान करते हैं और कई यज्ञ-दान-होम आदि कर रहे हैं। कई पीछे की ओर से धरती पर हाथ टिकाए खड़े हुए हैं और कई करोड़ों को त्यागकर जो कुछ अपने पास है उसे दिए चले जा रहे हैं ॥ १४८ ॥ कई परम प्रकाश में बैठे हुए हैं और कई पर्वत, वन आदि में उदासीन हो भ्रमण कर रहे हैं। कई एक ही आसन पर बैठे हैं और कई मंत्रों का जाप कर रहे हैं ॥ १४९ ॥ कई बैठकर हरि का उच्चारण कर रहे हैं और कई मुनि उदार हृदय से पाठ कर रहे हैं। कई भक्तिभाव से भगवान का भजन कर रहे हैं और कई वेदों की ऋचाएँ और स्मृतियाँ रट रहे हैं ॥ १५० ॥ कई एक हाथ पर स्थित हैं और कई मन चित्त से जाप कर रहे हैं। कई निराहारी हैं और कई मुनि केवल पवन का आहार कर रहे हैं ॥ १५१ ॥ कई आशाओं से मुक्त होकर आसन लगाये हुए हैं और कई अपने-आप को परमात्मा के सहारे ही छोड़ दिए हैं। कई थोड़ा सा वन के फलों का आहार कर के

एक आस आसा बिरहत। इक बहुत भाँति दुख देह सहत। इक कहत एक हरि को कथान। इक मुकत पद पावत निदान ॥ १५३ ॥ इक परे शरनि हरि के दुआर। (पृ०ग्रं०६४६) इक रहत तास नामै अधार। इक जपत नाम ताको दुरंत। इक अंति मुकत पावत बिअंत ॥ १५४ ॥ इक करत नाम निस दिन उचार। इक अगनहोत्र ब्रहमा बिचार। इक शास्त्र सरब सिम्रित रटंत। इक साध रीत निसदिन चलंत ॥ १५५ ॥ इक होम दान अरु बेद रीत। इक रटत बैठ खट शास्त्र मीत। इक करत बेद चारो उचार। इक ग्यान गाथ महिमा अपार ॥ १५६ ॥ इक भाँत भाँत मिसटान्न भोज। बहु दीन बोल भछ देत रोज। कई करत बैठ बहु भाँत पाठ। केई अंनि त्यागि चाबंत काठ ॥ १५७ ॥ केई भाँत भाँत सो धरत ध्यान। केई करत बैठ हरि क्रित कान्न। केई सुनत पाठ परमं पुनीत। नही मुकत कलप बहु जात बीत ॥ १५८ ॥ केई बैठ करत जलि को अहार। केई भ्रमत

रहे हैं और कई केवल परमात्मा का नाम रट रहे हैं ॥ १५२ ॥ कई केवल परमात्मा से मिलने की एक ही आशा के साथ विचरण कर रहे हैं और कई बहुत प्रकार से दुःख सह रहे हैं। कई हरि की कथा कह रहे हैं और कई अन्त में मुक्ति को प्राप्त कर रहे हैं ॥ १५३ ॥ कई परमात्मा की ही शरण में आ गये हैं और उनका आधार केवल परमात्मा का ही नाम है। कई उसके नाम का जाप कर रहे हैं और अन्त में मुक्ति प्राप्त कर रहे हैं ॥ १५४ ॥ कई दिन-रात परमात्मा के नाम का उच्चारण कर रहे हैं और कई ब्रह्मविचार कोमन में धारण करते हुए अग्निहोत्र कर रहे हैं। कई शास्त्रों और स्मृतियों को रट रहे हैं और कई दिन-रात साधुओं के आचरण को अपनाये हुए हैं ॥ १५५ ॥ कई होम, दान, वेद-रीति के अनुसार कर रहे हैं और कई मित्र बैठकर छः शास्त्रों को रट रहे हैं। कई चारों वेदों का उच्चारण कर रहे हैं और ज्ञान-चर्चा की अपार महिमा का वर्णन कर रहे हैं ॥ १५६ ॥ कई विभिन्न प्रकार के मिष्टान्न और भोजन को दीन-दुखियों को नित्य बुलाकर दे रहे हैं। कई भिन्न प्रकार से पाठादि कर रहे हैं और कई अन्न को त्याग, मात्र लकड़ी चबा रहे हैं ॥ १५७ ॥ कई भिन्न-भिन्न प्रकार से ध्यान कर रहे हैं और कई बैठकर हरि के विभिन्न कृत्यों का बखान कर रहे हैं। कई बैठकर परमपवित्र पाठ को सुन रहे हैं और कई कल्पों तक पीछे मुड़ के नहीं देखते हैं ॥ १५८ ॥ कई बैठकर जल का आहार कर रहे हैं और कई देश-विदेशों और पर्वतों पर भ्रमण

देस देसन पहार । केई जपत मद्ध कंदरी दीह । केई ब्रहमचरज सरता मझीह ।। १५६ ।। केई रहत बैठ मध नीर जाइ । केई अगन जार तापत बनाइ । केई रहत सिद्ध मुख मोनि ठान । अनिआस चित्त इक आसमान ।। १६० ।। अनडोल गात अबिकार अंग । महिमा महान आभा अभंग । अनभै सरूप अनभव प्रकाश । अब्यकत तेज निस दिन उदास ।। १६१ ।। इह भाँति जोगि कीने अपार । गुर बाझ यौ न होवै उधार । तब परे दत्त के चरन आन । कहि देहि जोग के गुन बिधान ।। १६२ ।। जल मधि जौन मुंडे अपार । बन नाम तउन ह्वैगे कुमार । गिर मधि सिक्ख किन्ने अनेक । गिर भेस सहित समझो बिबेक ।। १६३ ।। भारथ भणंत जे भे दुरंत । पारथी नाम ताके भणंत । पुर जास सिक्ख कीने अपार । पुरी नाम तउन जानो बिचार ।। १६४ ।। परबत बिखै सजे सिक्ख कीन । परबति सु नाम लै ताहि दीन । इह भाँति उचरि करि पंच नाम । तब दत्त देव किने बिस्राम ।। १६५ ।। सागर मँझार जे सिक्ख कीन । सागर सु नाम तिन के प्रबीन । सारसुत तीन जे कीन चेल । सरसुती नाम तिन नाम

कर रहे हैं। कई कन्दराओं में बैठकर जाप कर रहे हैं और कई ब्रह्मचारी नदियों में विचरण कर रहे हैं।। १५६ ।। कई जल में बैठे हुए हैं और कई अग्नि जलाकर उसे ताप रहे हैं। कई सिद्ध पुरुष मौन धारण कर उसका स्मरण कर रहे हैं और कई आकाश में ही अनायास ध्यान लगाये हुए हैं।।१६०।। कई स्थिर एवं विकार-रहित उस परमात्मा, जिसकी महिमा महान है, आभा अद्वितीय है, जो अनुमानस्वरूप एवं प्रकाशस्वरूप है तथा अवर्णनीय रूप से तेजस्वी परन्तु फिर भी दिन-रात उदासीन बना रहनेवाला है, में ध्यान लगाये हैं ।। १६१ ।। इस प्रकार विभिन्न तरीकों से योगसाधना की, परन्तु गुरु के बिना उद्धार नहीं होता है। तब वे सभी दत्त के चरणों पर आ पड़े और उससे प्रार्थना करने लगे कि हमें योग के विधि-विधान की दीक्षा दीजिए ।। १६२ ।। जल में जिनका मुण्डन किया था वे सभी कुमार अब आपकी शरण में हैं। पर्वतों पर जिनको शिष्य बनाया वे गिरि नाम से जाने जाने लगे ।। १६३ ।। भरत, पार्थ, पुरी इत्यादि संन्यासी भी उन्होंने पुरों में घूम-घूमकर बनाये ।। १६४ ।। पर्वतों पर बननेवाले शिष्यों को पर्वत नाम दिया गया और इस प्रकार पंच नामों का उच्चारण कर श्री दत्त ने विश्राम किया ।। १६५ ।। सागर-मध्य जिनको शिष्य बनाया उनका नाम सागर और सरस्वती नदी के

मेल ॥ १६६ ॥ तीरथन बीच जे सिक्ख कीन। तीरथ सु नाम तिनको प्रबीन। जिन चरन दत्त के गहे आन। भे भए सरब (मू०ग्रं०६४७) बिद्यानिधान ॥ १६७ ॥ इम करत सिक्ख जह तह बिहार। आश्रमन बीच जो जो निहार। तह तही सिक्ख जो कीन जाइ। आश्रम सु नाम तिनको सुहाइ ॥१६८॥ आरंन बीच जे अभयदत्त। संन्यास राज पति बिमल मत्ति। तह तह सु कीन जे सिक्ख जाइ। आरिन्न नाम तिनको रखाइ ॥ १६९ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे दत्त महातमो अनभउ प्रकाशे दसनाम ध्याय संपूरण ॥ १ ॥

अथ मनु को दूसर गुरु ठहराइबो कथनं ॥

॥ पाधड़ी छंद ॥ आजानबाहु अतिसै प्रभाव। अबियकत तेज संन्यास राव। जहँ जहँ बिहार मुनि करत दत्त। अनभउ प्रकाश अरु बिमल मत्त ॥ १७० ॥ जे हुते देस देसन अिपाल। तजि गरब पान लागे सुढाल। तजि दीन अउर

किनारे जिनको शिष्य बनाया उनका नाम सरस्वती हो गया ॥ १६६ ॥ तीर्थों पर जिनको शिष्य बनाया उन प्रवीणों का नाम तीरथ हो गया। जिन्होंने आकर दत्त के चरण पकड़ लिये, वे सभी विद्या के भण्डार हो गए ॥ १६७ ॥ इस प्रकार शिष्य जहाँ-तहाँ आश्रमों के बीच विचरण करने लगे और जहाँ जिस शिष्य ने जैसा कर्म किया वहीं उसके नाम से आश्रम शोभायमान हो गया ॥ १६८ ॥ उस अभय पुरुष दत्त ने अरण्यकों (जंगलों) में जिन-जिनको शिष्य बनाया उनका नाम आरण्यक रख दिया गया ॥ १६९ ॥

॥ इति श्री बचित्र नाटक ग्रन्थ में दत्त महात्मा के अनुभव प्रकाश के दश नाम अध्याय सम्पूर्ण ॥ १ ॥

मनु को दूसरा गुरु ठहराना

॥ पाधरी छंद ॥ उस संन्यासी राज का तेज अवर्णनीय था और उसकी लम्बी भुजाओं का प्रभाव अतिशय था। मुनि दत्त जहाँ-जहाँ जाते थे वहाँ-वहाँ प्रकाश की ज्योति और विमल बुद्धि का प्रसार होता था ॥ १७० ॥ देश-देशान्तरों के राजा सर्व त्यागकर उनके चरणों में आ पड़े। उन्होंने सभी झूठे उपायों को त्याग दिया और दृढतापूर्वक योगिराज दत्त को आधार बना

झूठे उपाइ । द्रिड़ गह्यो एक संन्यास राइ ॥ १७१ ॥ तजि सरब आस इक आस चित्त । अबिकार चित्त परमं पवित्त । जह करत देस देसन बिहार । उठ चलत सरब राजा अपार ॥ १७२ ॥ ॥ दोहरा ॥ गवन करत जिहँ जिहँ दिशा मुन मनु दत्त अपार । संगि चलत उठि सभ प्रजा तज घर बार पहार ॥ १७३ ॥ ॥ चौपई ॥ जिह जिह देस मुनीशर गए । ऊच नीच सभही संगि भए । एक जोग अर रूप अपारा । कउन न मोहे कहो बिचारा ॥ १७४ ॥ जह तह चला जोगु संन्यासा । राज पाट तज भए उदासा । ऐसी भूम न देखिअत कोई । जहा संन्यास जोग नहो होई ॥ १७५ ॥

॥ इति मन नूं गुरू दूसर ठहराइआ समापतं ॥ २ ॥

अथ त्रिती गुरू मकरका कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चउबीस गुरू कीन जिह भाता । अब सुन लेहु कहौ इह बाता । एक मकरका दत्त निहारी । ऐस हिदे अनुमान बिचारी ॥ १७६ ॥ आपन हिऐ ऐस अनुमाना ।

लिया ॥१७१॥ सब आशाओं को छोड़कर अब सबके हृदय में एक परमात्मा को ही मिलने की आशा बची थी और सबका चित्त परमपवित्र और विकारहीन था। दत्त जिस-जिस देश में गए वहाँ के राजा उठकर उनके चरण में आ पड़े ॥ १७२ ॥ ॥ दोहा ॥ दत्त मुनि जिस दिशा में गमन करते उस दिशा की सभी प्रजा घर-बार छोड़कर उनके साथ हो लेती ॥ १७३ ॥ ॥ चौपाई ॥ जिस देश में भी मुनीश्वर दत्त गए, छोटे-बड़े सभी उनके साथ हो लिये। एक तो वे योगी थे और दूसरे वे अत्यन्त रूपवान थे, भला उनको देखकर कौन मोहित हुए बिना रहता ॥ १७४ ॥ जहाँ-जहाँ उनका योग और संन्यास पहुँचा लोग राजपाट छोड़ उदासीन हो गए। ऐसा कोई स्थान दिखाई नहीं देता था, जहाँ संन्यास और योग नहीं होता था ॥ १७५ ॥

॥ मनु को दूसरा गुरु बनाया समाप्त ॥ २ ॥

तृतीय गुरु मकरका-कथन

॥ चौपाई ॥ दत्त ने जिस प्रकार चौबीस गुरु धारण किये अब उस कथन को सुन लीजिए। दत्त ने एक मकड़ी को देखा और अपने हृदय में विचार किया १७६ उसने अपने हृदय मे ध्यान करते हुए यह कहा कि इसे हम

तीसर गुरू याह हम माना। प्रेम सूत की डोर बढावै। तब ही नाथ निरंजन पावै ॥ १७७ ॥ आपन आपु आप मो दरसै। अंतरि गुरू आतमा परसै। एक छाडिकै अनत न धावै। तब ही परमततु को पावै ॥ १७८ ॥ एक सरूप एक करि देखै। आन भाव को भाव न पेखै। एक आस तजि अनत न धावै। तब ही नाथ निरंजन पावै ॥ १७९ ॥ केवल अंग रंग तिह राचै। एक छाडि रसनेक न माचै। परम तत्त (मू०ग्रं०६४८) को ध्यान लगावै। तब ही नाथ निरंजन पावै ॥ १८० ॥ तीसर गुरू मकरिका ठानी। आगे चला दत्त अभिमानी। ता कर भाव ह्रिदे महि लीना। हरखवंत तब चला प्रबीना ॥ १८१ ॥

॥ इति त्रिती गुरू मकरका समापतं ॥ ३ ॥

अथ बक चतरथ गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जबै दत्त गुरु अगै सिधारा। मच्छ रास कर बैठि निहारा। उज्जल अंग अति ध्यान लगावै। मोनी सरब

तीसरा गुरु मानते हैं। जब प्रेम के सूत्र की डोरी बढ़ेगी तब ही नाथ-निरंजन की प्राप्ति होगी ॥ १७७ ॥ जब अपने-आप का स्वयं दर्शन होगा और अपने अन्तर् में आत्मा रूपी गुरु का स्पर्श होगा तथा मन एक को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं जायगा, तब ही परम तत्त्व की प्राप्ति होगी ॥ १७८ ॥ उस एक के स्वरूप को एक ही मानते हुए जब देखा जायगा और अन्य भाव को मन में नहीं रखा जायगा तथा एक ही लक्ष्य को सामने रखते हुए मन अन्यत्र कहीं नहीं दौडेगा तब ही नाथ-निरंजन की प्राप्ति होगी ॥ १७९ ॥ जब केवल एक ही अंग रंग में समा जायगा और एक को छोड़कर मन तनिक भी किसी ओर में नहीं लगेगा तथा परमतत्त्व का ध्यान लगाएगा तब ही इसे नाथ-निरंजन की प्राप्ति होगी ॥ १८० ॥ मकड़ी को तीसरा गुरु मानकर गौरवशाली दत्त आगे चला। वह प्रवीण प्रसन्न होकर हृदय में उनके भाव को धारण करता हुआ आगे बढ़ा ॥ १८१ ॥

॥ तृतीय गुरु मकरका समाप्त ॥ ३ ॥

बक चतुर्थ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ जब दत्त आगे बढ़े तो उन्होंने मछलियों के झुंड को देखते हुए बगुले को देखा उसके अंग अत्यन्त थे और उसे देखकर सभी

बिलोक लजावै ॥ १८२ ॥ जैसक ध्यान मच्छ कै राजा । लावत बक नावै निरलाजा । भली भाँत इह ध्यान लगावै । भाव तास को मुनि मन भावै ॥ १८३ ॥ ऐसो ध्यान नाथ हित लइऐ । तबही परमपुरख कहु पइऐ । मच्छांतक लखि दत्त लुभाना । चत्रथ गुरू तास अनमाना ॥ १८४ ॥

॥ इति मच्छांतक चतरथ गुरू समापतं ॥ ४ ॥

अथ बिड़ाल पंचम गुरू नाम ॥

॥ चौपई ॥ आगे चला दत्त मुन राई । सीस जटा कह जूट छकाई । देखा एक बिड़ाल जु आगे । ध्यान लाइ मुनि निरखन लागे ॥ १८५ ॥ मूस काज जस लावत ध्यानू । लाजत देख महंत महानू । ऐस ध्यान हरि हेत लगइऐ । तब ही नाथ निरंजन पइऐ ॥ १८६ ॥ पंचम गुरू याह हम जाना । या कहु भाव हिऐ अनुमाना । ऐसी भाँति ध्यान जो लावै । सो निहचै साहिब को पावै ॥ १८७ ॥

॥ इति बिड़ाल पंचमो गुरू समापतं ॥ ५ ॥

मौन धारण करनेवाले प्राणी लज्जित होते थे ॥ १८२ ॥ मछलियों के कारण जैसा ध्यान बगुले ने लगाया हुआ था, वह उसके कर्मों के हिसाब से उसके नाम को लज्जित करनेवाला था । वह भली प्रकार ध्यान लगाये हुए था और अपने मौन से मुनियों के मन को प्रसन्न कर रहा था ॥ १८३ ॥ ऐसा ही ध्यान उस परमात्मा के लिए लगाया जाय तब उस परमपुरुष की प्राप्ति होती है । बगुले को देखकर दत्त लोभ से भर उठे और उसे अपना चौथा गुरु मान लिया ॥१८४॥

॥ बगुला चौथा गुरु समाप्त ॥ ४ ॥

बिड़ाल पाँचवा गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ तब मुनिराज दत्त सिर पर जटाजूट धारण किये हुए आगे चला । आगे उसने एक बिड़ाल देखा जिसे वे ध्यानपूर्वक देखते ही रहे ॥१८५॥ चूहों के लिए उसके लगे हुए ध्यान को देखकर बड़े-बड़े महन्त भी लज्जित हो उठे । ऐसा ही ध्यान यदि परमात्मा के लिए लगाया जाय तब ही उस नाथ निरंजन को प्राप्त किया जा सकता है ॥१८६॥ इसे हम पाँचवा गुरु मानेंगे, ऐसी मुनिराज दत्त ने अपने हृदय में धारणा बनाई । जो इस प्रकार ध्यान लगायेगा, वह निश्चित रूप से उस परमात्मा को प्राप्त कर लेगा ॥१८७॥

॥ बिड़ाल पाँचवा गुरु समाप्त ॥ ५ ॥
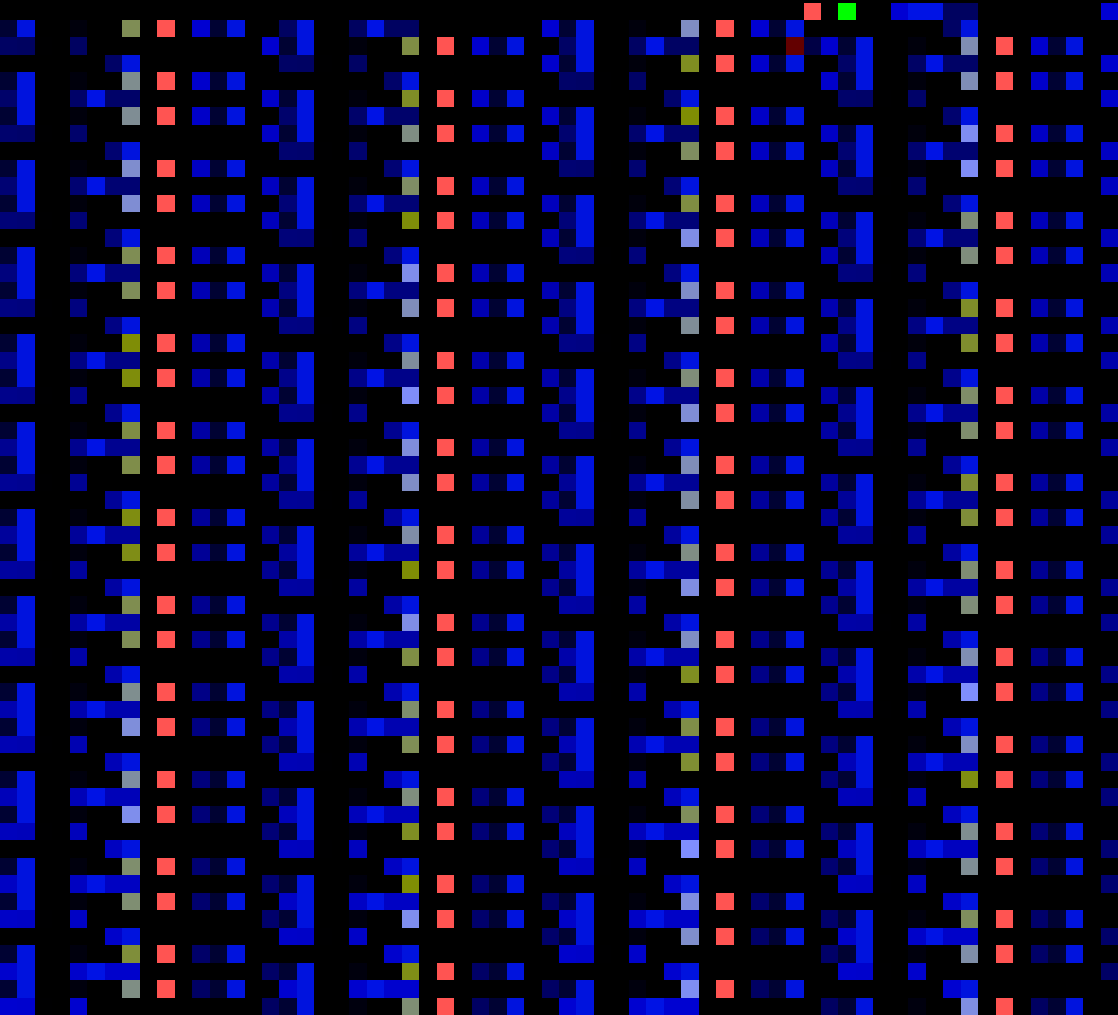
अथ धुनीआ गुरू कथन ।।

।। चौपई ।। आगे चला राज संन्यासा । एक आस गहि ऐस अनासा । तह इक रूम धुनखतो लहा । ऐस भाँति मन सौ मुन कहा ।। १८८ ।। भूप सैन इह जात न लही । ग्रीवा नीच नीच हो रही । सगल सैन वाही मग गई । ताकौ नैक खबर नही भई ।। १८९ ।। रूई धुनखतो फिर न निहारा । नीच ही ग्रीवा रहा बिचारा । दत्त बिलोक हिए मुसकाना । खशटम गुरू तिसी कहु जाना ।। १९० ।। रूम हेत इह जिम चितु लग्यो । सैन गई पर सिर न उचायो । (मू०ग्रं०६४९) तैसीए प्रभ सो प्रीत लगइऐ । तब ही पुरख पुरातन पइऐ ।। १९१ ।।

।। इति रूई धुनखता पेंजा खशटमो गुरू समापतं ।। ६ ।।

अथ माछी सपतमो गुरू कथनं ।।

।। चौपई ।। आगे चला राज संन्यासा । महा बिमल

धुनियाँ गुरु-कथन

।। चौपाई ।। बाक़ी सभी आशाओं को छोड़ते हुए तथा केवल एक ही विचार को मन में रखते हुए योगिराज दत्त आगे चले। आगे उन्होंने एक धुनियाँ को रुई धुनते देखा और अपने मन से इस प्रकार कहा ।। १८८ ।। इस व्यक्ति ने राजा की सारी जाती हुई सेना को नहीं देखा और इसकी गरदन झुकी ही रही। सारी सेना इस रास्ते पर चली गई परन्तु इसको जरा सी भी खबर नहीं हुई ।। १८९ ।। रुई धुनते हुए इसने फिरकर नहीं देखा और यह बेचारा गरदन नीची ही किये रहा। उसे देखकर दत्त हृदय में मुस्कुराकर कहने लगे कि इसे मैं छठवाँ गुरु मानता हूँ ।। १९० ।। रुई के लिए जिस प्रकार इसने मन लगाया तथा सेना निकल गई परन्तु सिर नहीं उठाया, इसी प्रकार जब परमात्मा में प्रीति लगाई जायगी तब ही उस पुरातन पुरुष को प्राप्त किया जा सकेगा ।। १९१ ।।

।। धुनियाँ छठवाँ गुरु समाप्त ।। ६ ।।

मछेरा सातवाँ गुरु-कथन

।। चौपाई ।। महान बिमल मन वाले उदासीन श्री दत्त आगे चले।

मन भयो उदासा । निरखा तहाँ एक मच्छहा । लाए जार कर जातन कहा ॥ १९२ ॥ बरछी एक हाथ मो धारे । जरिआ अंध कंध पर डारे । इसथित एक मच्छि की आसा । जानुक वाके मद्ध न सासा ॥ १९३ ॥ एक सु ठाँढ मच्छ की आसू । राज पाट ते जान उदासू । इह बिध नेह नाथ सौ लइऐ । तब ही पूरन पुरख कह पइऐ ॥ १९४ ॥

॥ इति माछी गुरू सपतमो समापतं ॥ ७ ॥

अथ चेरी अशटमो गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ हरखत अंग संग सैना सुन । आयो दच्छ प्रजापति के मुन । तहाँ एक चेरका निहारी । चंदन घसत मनो मतवारी ॥ १९५ ॥ चंदन घसत नार शुभ धरमा । एक चित्त ह्वै आपन घरमा । एक चित्त नही चित्त चलावै । प्रितमा चित्र बिलोक लजावै ॥ १९६ ॥ दत्त लए संन्यासन संगा । जात भयो तह भेटत अंगा । सीस उचाइ न तास निहारा । राव रंक को जात बिचारा ॥ १९७ ॥ ताको

वहाँ उन्होंने अपना जाल ले जाते हुए एक मछेरे को देखा ॥१९२॥ उसने एक हाथ में बरछी पकड़ रखी थी और एक कंधे पर जाल डाल रखा था। वह मछली की आशा में इस प्रकार खड़ा था कि मानो उसके शरीर में श्वास ही न हो ॥ १९३ ॥ वह एक मछली की आशा में ऐसे खड़ा था जैसे कोई राजपाट से उदासीन होकर शान्त-रूप में स्थित हो। दत्त ने सोचा, इस प्रकार का प्रेम यदि उस परमात्मा से किया जाय, तभी उस पूर्णपुरुष की प्राप्ति हो सकती है ॥ १९४ ॥

॥ मछेरा गुरु सातवाँ समाप्त ॥

दासी आठवाँ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ जब मुनि दत्त दक्ष प्रजापति के यहाँ पहुँचे तो वे सेना-समेत हर्षित हो उठे। वहाँ दत्त ने एक दासी को देखा जो मतवाली होकर चन्दन घिस रही थी ॥ १९५ ॥ वह शुभ धर्म वाली नारी अपने घर में एकचित्त होकर चन्दन पीस रही थी। वह एकाग्रचित्त थी और उसे देखकर प्रतिमा भी लजायमान हो रही थी ॥ १९६ ॥ दत्त संन्यासियों को साथ लेकर उसको मिलने के लिए उधर से निकले परन्तु उसने सिर उठाकर भी नहीं देखा कि कोई राजा जा रहा है अथवा फकीर जा रहा है ॥ १९७ ॥ उसके प्रभाव को

दत्त बिलोक प्रभावा। अशटम गुरू ताहि ठहरावा। धंनि धंनि इह चेरका सभागी। जाकी प्रीत नाथ संगि लागी ॥१९८॥ ऐस प्रीत हरि होत लगइयै। तब ही नाथ निरंजन पइयै। बिन चिति दीन हाथ नही आवै। चार बेद इम भेद बतावै ॥ १९९ ॥

॥ इति चेरका अशटमो गुरू समापतं ॥ ८ ॥

अथ बनजारा नवमो गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ आगे चला जोग जटधारी। लए संगि चेलका अपारी। देखत बनखंड नगर पहारा। आवत लखा एक बनजारा ॥ २०० ॥ धन कर भरे सभै भंडारा। चला संग लै टाड अपारा। अमित गाम लवगन के भरे। बिधना ते नही जात बिचरे ॥२०१॥ रात दिवस तिन द्रब की आसा। बेचन चला छाड घरबासा। और आस दूसर नही कोई। एकै आस बनज की होई ॥ २०२ ॥ छाह धूप को त्रास न

देखकर दत्त ने उसे आठवाँ गुरु मान लिया और कहा कि यह दासी धन्य है, जिसकी प्रीति उस परमात्मा के साथ लगी हुई है ॥ १९८ ॥ ऐसा ही प्रेम परमात्मा के साथ करने पर उस परमात्मा की प्राप्ति होती है। बिना मन में विनम्रता लाये यह हाथ में नहीं आता है और चारों वेद भी यही बताते हैं ॥ १९९ ॥

॥ दासी आठवाँ गुरु समाप्त ॥ ८ ॥

वणिक् नौवाँ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ तब चेलों को साथ लेकर जटाधारी योगी दत्त आगे चला। वनों, नगरों और पहाड़ों को देखते हुए जब ये लोग आगे बढ़े तो उन्होंने एक वणिक् को आते हुए देखा ॥ २०० ॥ उसने धन के भण्डार भरे हुए थे और वह बहुत सी वस्तुओं को साथ लिये हुए चल रहा था। उसने लवंग के अनेकों बोरे भर रखे थे और उनकी गिनती कोई भी नहीं कर सकता था ॥ २०१ ॥ दिन-रात उसे द्रव्य की आशा लगी हुई थी और वह अपने घर-बार को छोड़कर उन्हें बेचने के लिए निकला हुआ था। उसे एक अपने व्यापार के अतिरिक्त और कोई भी इच्छा नहीं थी ॥ २०२ ॥ उसे धूप और छाँव का भी भय नहीं था और रात दिन उसे आगे ही बढ़ते जाने की धुन थी पाप-पुण्य

मानै। रात अउ दिवस गवन ई ठानै। पाप पुंन (मू०ग्रं०६५०) की अउर न बाता। एकै रस माता कै राता ॥ २०३ ॥ ता कहँ देख दत्त हरि भगतू। जाकर रूप जगत जगमगतू। ऐस भाँति जो साहिब ध्याइऐ। तब ही पुरख पुरातन पाइऐ ॥ २०४ ॥

॥ इति बनजारा नउमो गुरू समापत ॥ ९ ॥

अथ काछन दसमो गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ चला मुनी तजि परहरि आसा। महा मोन अर महा उदासा। परम तत्त बेता बडभागी। महा मोन हरि को अनुरागी ॥ २०५ ॥ परमपुरख पूरो बडभागी। महाँ मुनी हरि को रस पागी। ब्रहम भगति खटगुन रस लीना। एक नाम के रस सउ भीना ॥ २०६ ॥ उज्जल गात महा मन सोहे। सुर नर मुन सभ को मन मोहैं। जहँ जहँ जाइ दत्त शुभ करमा। तहँ तहँ होत सभै निहकरमा ॥ २०७ ॥ भरम मोह तिह देखत भागैं। राम भगत सभ ही उठि लागैं।

की कोई बात उसके लिए नहीं थी और उसे केवल एक ही व्यापार का रस मग्न किये हुए था ॥ २०३ ॥ उसे देखकर हरिभक्त दत्त, जिसका कि स्वरूप सारे ससार में जगमगा रहा था, मन में सोचने लगे कि इस प्रकार यदि परमात्मा का स्मरण किया जाय, तब ही उस परमपुरुष की प्राप्ति की जा सकती है ॥ २०४ ॥

॥ वणिक् नौवाँ गुरु समाप्त ॥ ९ ॥

मालिन दसवाँ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ मुनि सब आशाओं को त्यागकर महा मौन धारण किये हुए उदासीन होकर चले। वे परम तत्त्ववेत्ता, मौनी एवं प्रभु के प्रेमी थे ॥२०५॥ वे परमपुरुष के प्रेम में लीन महामुनि थे। वे ब्रह्मभक्ति, षट्शास्त्र के रसों के ज्ञाता और एक प्रभु-नाम में लीन रहनेवाले थे ॥ २०६ ॥ महामुनि का उज्ज्वल शरीर, सुर-नर-मुनियों के मन को मोह रहा था। जहाँ-जहाँ शुभ कर्मों वाले दत्त मुनि जाते, वहाँ-वहाँ सभी निष्कर्म को प्राप्त होते ॥ २०७ ॥ उनका दर्शन करते ही भ्रम-मोह आदि सब भाग खड़े होते और और सभी राम की भक्ति में लग जाते सबके पाप, ताप नष्ट हो जाते और रात-दिन

पाप ताप सभ दूर पराई । निस दिन रहै एक लिव लाई ।।२०८।। काछन एक तहा मिल गई । सो आचूक पुकारत भई । भाव याहि मन माहि निहारा । दसवो गुरू ताहि बीचारा ।। २०९ ।। जो सोवै सो मूलु गवावै । जो जागै हरि ह्रिदै बसावै । सत्ति बोलि याको हम मानी । जोग ग्यान जागै ते जानी ।। २१० ।।

।। इति काछन गुरू दसवो समापतं ।। १० ।।

अथ सुरत्थ यारमो गुरू कथनं ।।

।। चौपई ।। आगै दत्त देव तब चला । साधे सरब जोग की कला । अमित तेज अरु उजल प्रभाऊ । जानुक बना दूसर हरि राऊ ।। २११ ।। सभ ही कला जोग की साधी । महाँ सिद्ध मोनी मनि लाधी । अधिक तेज अरु अधिक प्रभावा । जा लखि इंद्रासन थहरावा ।। २१२ ।। ।। मधुमार छंद ।। ।। त्वप्रसादि ।। मुन मन उदार । गुन गन अपार । हरि भगति लीन । हरि को अधीन ।। २१३ ।। तजि राज

सबका ध्यान एक ही प्रभु में लगा रहता ।। २०८ ।। मुनि को वहाँ एक मालिन मिली जो लगातार पुकारे चली जा रही थी । मुनि ने उसकी पुकार के भाव को मन में अनुभव करते हुए उसे दसवाँ गुरु धारण किया ।। २०९ ।। जो परमात्मा की सेवा करेगा वह संसार के मूल अहंकार का नाश कर देगा । जो वास्तव में माया की निद्रा से जग जायगा, वह हृदय में परमात्मा को बसा लेगा । मुनि ने मालिन की बोली को सत्यस्वरूप माना और योग-ज्ञान जगाने वाली शक्ति स्वीकार किया ।। २१० ।।

।। मालिन दसवाँ गुरु समाप्त ।। १० ।।

सुरथ ग्यारहवाँ गुरु-कथन

।। चौपाई ।। तब दत्त मुनि सर्वयोगकलाओं की साधना करते हुए आगे चले । उनका तेज अपरिमित था तथा वे ऐसे लग रहे थे जैसे वे दूसरे परमात्मा हों ।। २११ ।। योग की सब कलाओं की उस महान सिद्ध मौनी पुरुष ने साधना की । उनके अत्यधिक तेज और प्रभाव को देखकर इन्द्रासन भी थरथराने लगा ।। २१२ ।। ।। मधुमार छंद ।। ।। तेरी कृपा से ।। उदार मुनि अपार गुणों से युक्त, हरि की भक्ति में लीन और परमात्मा के अधीन थे ।। २१३ ।। राज्य के भोगों को उस योगिराज ने संन्यास और

भोग। संन्यास जोग। संन्यास राइ। हरि भगत भाइ ॥ २१४ ॥ मुख छबि अपार। पूरण वतार। खड़गं असेख। बिद्या बिसेख ॥ २१५ ॥ सुंदर सरूप। महिमा अनूप। (मू०ग्रं०६५१) आभा अपार। मुन मन उदार ॥२१६॥ संन्यास देव। गुन गन अभेव। अबियकत रूप। महिमा अनूप ॥ २१७ ॥ सभ सुभ सुभाव। अतिभुत प्रभाव। महिमा अपार। गुन गन उदार ॥ २१८ ॥ तह सुरथ राज। संपत समाज। पूजंत चंड। निसदिन अखंड ॥ २१९ ॥ न्रिप अति प्रचंड। सभ बिध अखंड। सिल सित प्रबीन। देवी अधीन ॥ २२० ॥ निसदिन भवान। सेवत निधान। करि एक आस। निस दिन उदास ॥ २२१ ॥ दुरगा प्रजंत। नितप्रति महंत। बहु बिध प्रकार। सेवत सवार ॥ २२२ ॥ अति गुनि निधान। महिमा महान। अति बिमल अंग। लखि लजत गंग ॥ २२३ ॥ तिह निरख दत्त। अति बिमल मत्ति। अनखंड जोत। जन भ्यो उदोत ॥ २२४ ॥ क्षमकंत अंग। लखि लजत गंग। अति गुन निधान। महिमा

योग को हरि-भक्ति और भावना के लिए अपनाया था ॥२१४॥ उस पूर्णावतार के मुख की छवि अपार थी। वह खड़ग के समान तीक्ष्ण, अनेक विशिष्ट विद्याओं में प्रवीण थे ॥ २१५ ॥ सुन्दर स्वरूप वाले उस मुनि की अनुपम महिमा, अपार शोभा एवं उदार मन था ॥ २१६ ॥ वे संन्यासियों के देवता और गुणियों के लिए भी रहस्यमय, अव्यक्त एवं अनुपम महिमा वाले थे ॥ २१७ ॥ उनका स्वभाव शुभ, प्रभाव अद्भुत और महिमा अपरम्पार थी ॥ २१८ ॥ वहाँ सुरथ नाम के राजा थे जो सम्पत्ति और समाज से युक्त थे। वे अखण्ड रूप से चण्डी की पूजा करते थे ॥ २१९ ॥ राजा, जो कि अत्यन्त प्रचण्ड और अखण्ड राज्य वाले थे, वे सब विद्याओं में प्रवीण थे और देवी के अधीन थे ॥ २२० ॥ वह रात-दिन भवानी की सेवा करते थे और केवल एक ही आशा को मन में रखे हुए रात-दिन उदासीन बने रहते थे ॥ २२१ ॥ वे नित्यप्रति दुर्गा की विभिन्न प्रकार से पूजा, अर्चना किया करते थे ॥ २२२ ॥ वह राजा महान महिमा से युक्त, गुणों का भण्डार और इतने विमल शरीर वाला था कि उसे देखकर गंगा भी लज्जित होती थी ॥ २२३ ॥ उसको देखकर दत्त अत्यन्त विमल मति, अखण्ड ज्योतिस्वरूप हो गए ॥ २२४ ॥ उनके अंगों को देखकर गंगा भी लजायमान होती थी, क्योंकि वे महान महिमा से युक्त एवं गुणों के भण्डार थे ॥ २२५ ॥ मुनि ने

महान ॥ २२५ ॥ अनभव प्रकाश । निसदिन उदास । अतिभुत सुदास । संन्यास राव ॥ २२६ ॥ लखि तास सेव । संन्यास देव । अति चित्त रीझ । हित फास बीझ ॥ २२७ ॥ ॥ श्री भगवती छंद ॥ कि दिक्खिओत दत्तं । कि परमंति मत्तं । सु सरबत्र साजा । कि दिक्खिओत राजा ॥२२८॥ कि आलोक करमं । कि सरबत्र धरमं । कि आजित्त भूपं । कि रत्ते सरूपं ॥२२९॥ कि आजान बाहं । कि सरबत्र साहं । कि धरमं सरूपं । कि सरबत्र भूपं ॥२३०॥ कि शाहान शाहं । कि आजान बाहं । कि जोगेंद्र गामी । कि धरमेंद्र धामी ॥२३१॥ कि रुद्रारि रूपं । कि भूपान भूपं । कि आदग्ग जोगं । कि त्यागंत सोगं ॥ २३२ ॥ बिमोहियोत देखी । कि रावल्ल भेखी । कि संन्यास राजा । कि सरबत्र साजा ॥ २३३ ॥ कि संभाल देखा । कि सुध चंद्र पेखा । कि पावित्र करमं । कि संनिआस धरमं ॥ २३४ ॥ कि संनिआस भेखी । कि आधरम द्वैखी । कि सरबत्र गामी । कि धरमेस धामी ॥२३५॥ कि आछिज्ज जोगं । कि आगंम लोगं । कि लंगोट बंधं । कि सरब्रत्र मंधं ॥२३६॥ कि आछिज्ज करमा । कि आलोक धरमा । कि आदेस करता । कि संन्यास सरता ॥ २३७ ॥

देखा कि वे प्रकाश के समान उज्ज्वल, रात-दिन उदासीन बने रहनेवाले, अद्भुत स्वभाव के संन्यासीराज थे ॥ २२६ ॥ दत्त ने उनकी सेवा को देखा और चित्त मे अत्यन्त प्रसन्न हो उठे ॥ २२७ ॥ ॥ श्री भगवती छंद ॥ दत्त को परम मति एवं सर्व साधनों से सुसज्जित राजा दिखाई दिया ॥ २२८ ॥ वह अजेय राजा प्रकाशस्वरूप करनेवाला, सर्व धर्मों का पालन करनेवाला स्वरूपवान व्यक्ति था ॥ २२९ ॥ सर्वत्र रमण करनेवाला, धर्म का साक्षात्कारस्वरूप वह राजा लम्बी भुजाओं वाला था ॥ २३० ॥ वह राजाओं का राजा, अजानबाहु योगेश्वर एवं धर्म का सम्राट् था ॥ २३१ ॥ राजाओं का राजा वह रुद्र के रूप वाला था और शोक का त्याग कर योग में लीन रहनेवाला था ॥ २३२ ॥ उसे देखकर योगिराज दत्त, जो कि रावलवेषी थे, विमोहित हो उठे ॥ २३३ ॥ उन्होंने उसे शुद्ध चन्द्रमा के समान देखा और पाया कि उसके कर्म पवित्र एवं योगानुकूल हैं ॥ २३४ ॥ वह संन्यासी राजा अधर्म का नाश करनेवाला, सर्वत्र गमन करनेवाला धर्म का धाम था ॥ २३५ ॥ उसका योग अक्षय था और वह लंगोट बाँधे सर्वत्र विचरण कर रहा था २३६ उसके कर्म एवं धर्म

कि अगिआन हंता। कि पारंग (मू०ग्रं०६५२) गंता। कि आधरम हंता। कि संन्यास भकता ॥ २३८ ॥ कि खंकाल दासं। कि सरबत्र भासं। कि संन्यास राजं। कि सरबत्र साजं ॥ २३९ ॥ कि पारंग गंता। कि आधरम हंता। कि संन्यास भकता। कि साजोज मुकता ॥ २४० ॥ कि आसकत करमं। कि अबियकत धरमं। कि अत्तेव जोगी। कि अंगं अरोगी ॥ २४१ ॥ कि सुद्धं सुरोसं। न नैक अंगरोसं। न कुकरम करता। कि धरमं सु सरता ॥ २४२ ॥ कि जोगाधिकारी। कि संन्यास धारी। कि ब्रहमंस भगता। कि आरंभ जगता ॥ २४३ ॥ कि जाटान जूटं। कि निधिआन छूटं। कि अबियकत अंगं। कि कैपान भंगं ॥ २४४ ॥ कि संन्यास करमी। कि रावल्ल धरमी। कि त्रिकाल कुसली। कि कामदि्द दुसली ॥ २४५ ॥ कि डामार बाजै। कि सभ पाप भाजै। कि बिभूत सोहै। कि सरबत्र मोहै ॥ २४६ ॥ कि लंगोट बंदी। कि एकादि छंदी। कि धरमान धरता। कि पापान हरता ॥ २४७ ॥ कि निनादि बाजै। कि पंपाप

आलोकित करनेवाले तथा अक्षय थे। वह सबको आज्ञा देनेवाला संन्यास-धर्म की नदी के समान भी था ॥ २३७ ॥ वह अज्ञान का नाश करनेवाला, विद्याओं में पारंगत, अधर्म को नष्ट करनेवाला और संन्यासियों का भक्त था ॥ २३८ ॥ परमात्मा का दास, सर्वत्र आभासित होनेवाला, संन्यासराज और सर्वविद्याओं से सुसज्जित था ॥ २३९ ॥ अधर्म को नष्ट करनेवाला संन्यास-मार्ग का भक्त एवं जीवनमुक्त वह सर्व विद्याओं में पारंगत था ॥२४०॥ वह कर्मों में लीन, अतीत योगी, योगरहित एवं अव्यक्त धर्म के समान था ॥ २४१ ॥ क्रोध उसे रंच मात्र भी नहीं था और वह धर्म की नदी के स्वरूप राजा कुकर्म करनेवाला भी नहीं था ॥ २४२ ॥ संन्यास धारण करनेवाला वह परम योगाधिकारी था और जगत को प्रारम्भ करनेवाले ब्रह्म का भक्त था ॥ २४३ ॥ उस जटाजूट वाले ने सभी द्रव्य के भण्डारों को छोड़ रखा था और कौपीन धारण कर रखा था ॥ २४४ ॥ वह भी रावलधर्मी सन्यास-कर्म को करनेवाला और सदैव प्रसन्न रहनेवाला तथा कामादि को नष्ट करनेवाला था ॥ २४५ ॥ डमरू बज रहे थे जिसे सुनकर सभी पाप भाग खड़े हो रहे थे। शरीर पर भभूत शोभायमान थी और सभी मोहित हो रहे थे ॥ २४६ ॥ कभी-कभी बोलनेवाला वह लंगोटबन्द था। वह धर्म को धारण करनेवाला और पाप का हरण करनेवाला था ॥ २४७ ॥ नाद बज

भाजै । कि आदेश बुल्लैं । कि लैं ग्रंथ खुल्लैं ।। २४८ ।। कि पावित्र देसी । कि धरमेंद्र भेसी । कि लंगोट बंदं । कि आजोत वंदं ।। २४९ ।। कि आनरथ रहिता । कि संन्यास सहिता । कि परमं पुनीतं । कि सरबत्र मीतं ।। २५० ।। कि अचाचल्ल अंगं । कि जोगं अभंगं । कि अव्यक्त रूपं । कि संन्यास भूपं ।। २५१ ।। कि बीरान राधी । कि सरबत्र साधी । कि पावित्र करमा । कि संन्यास धरमा ।। २५२ ।। अधाखंड रंगं । कि आछिज्ज अंगं । कि अन्याइ हरता । कि सु न्याइ करता ।। २५३ ।। कि करमं प्रनासी । कि सरबत्र दासी । कि अलिपत अंगी । कि आभा अभंगी ।।२५४।। कि सरबत्र गंता । कि पापान हंता । कि सासद्ध जोगं । कितं त्याग रोगं ।। २५५ ।।

।। इति सुरत्थ राजा यारमो गुरू बरननं ।। ११ ।।

अथ बाली दुआदसमो गुरू कथनं ।।

।। रसावल छंद ।। चला दत्त आगे । लखे पाप भागे । बजै घंट घोरं । बणं जाण मोरं ।। २५६ ।। नभं नाद बाजै ।

रहा था, पाप भाग रहे थे और वहाँ आदेश दिये जा रहे थे कि ग्रन्थों का पाठ किया जाय ।। २४८ ।। उस पवित्र देश में धर्म का वेश धारण किये हुए उस लँगोटबन्द की ज्योतिस्वरूप में वन्दना हो रही थी ।। २४९ ।। वह अनर्थ से रहित संन्यास से युक्त, परमपुनीत एवं सबका मित्र था ।। २५० ।। वह योग में लीन, अवर्णनीय स्वरूप वाला संन्यासी राजा था ।। २५१ ।। वह वीरों का वीर सर्व साधनाओं को साधनेवाला और पवित्र कर्म करनेवाला संन्यासधर्मी था ।। २५२ ।। वह उस परमात्मा के समान था जो अक्षय, अन्यायहर्ता एवं न्याय करनेवाला था ।। २५३ ।। वह कर्मों का नाश करनेवाला, सर्वत्र सबका दास, अलिप्त एवं आभायुक्त था ।। २५४ ।। वह सर्वत्र गमन करनेवाला, पापों का हरण करनेवाला, रोगों से परे, शुद्ध योगी बना रहनेवाला था ।। २५५ ।।

।। सुरथ राजा ग्यारहवाँ गुरु-वर्णन समाप्त ।। ११ ।।

बालिका बारहवाँ गुरु-कथन

।। रसावल छंद ।। तब दत्त आगे बढे । उनको देखकर पाप भागने लगे घंटों की घनघोर ध्वनि वन में मोरों के गीत के समान होने लगी २५६ ।

धरा पाप भाजै । करै (मू०ग्रं०६५३) देव्य अरचा । चतुर बेद चरचा ।। २५७ ।। स्रुतं सरब पाठं । सु संन्यास राठं । महाँ जोग न्यासं । सदाई उदासं ।। २५८ ।। खटं शास्त्र चरचा । रटैं बेद अरचा । महा मोन मानी । कि संन्यास धानी ।। २५९ ।। चला दत्त आगं । लखे पाप भागं । लखी एक कन्या । तिहूँ लोग धन्या ।। २६० ।। महा ब्रह्मचारी । सु धरमाधिकारी । लखी पान ताके । गुडी बाल ताँके ।।२६१।। खिलै खेल तासो । इसो हेत वासो । पिऐ पान आवै । इसो खेल भावै ।। २६२ ।। गए मोन मानी । तरै दिष्ट आनी । न बाला निहार्यो । न खेलं बिसार्यो ।। २६३ ।। लखी दंत बाला । मनो राग माला । रंगी रंग खेलं । मनो लाग्र बेलं ।। २६४ ।। तबै दत्त रायं । लखे तास गायं । गुरू तास कीना । महा मंत्र भीना ।। २६५ ।। गुरू तास जान्यो । इमं मंत्र ठान्यो । दसं द्वै निधानं । गुरू दत्त जानं ।। २६६ ।। ।। रुणझुण छंद ।। लखि छबि बाली । अति दुति वाली । अतिभुत रूपं । जणु बुध कूपं ।। २६७ ।। फिर फिर पेखा ।

आकाश में नाद बजने लगे और धरती के पाप भागने लगे । वे देवी की अर्चना करने लगे और चारों वेदों की चर्चा होने लगी ।। २५७ ।। सभी श्रुतियों का पाठ उस संन्यास के लिए उपयुक्त स्थान पर होने लगा । महान योग-साधनाएँ होने लगीं और उदासीनता का वातावरण बन गया ।। २५८ ।। छः शास्त्रों की चर्चा, वेद-पाठ होने लगा और संन्यासी महा मौन धारण करने लगा ।। २५९ ।। तब दत्त और आगे चले और उनको देखकर पाप भागने लगा । आगे उन्होंने तीनों लोकों को धन्य करनेवाली एक कन्या देखी ।।२६०।। इस धर्माधिकारी, महाब्रह्मचारी ने उसके हाथ में एक गुड़िया देखी ।। २६१ ।। वह उससे खेल रही थी और उसका उससे इतना प्रेम था कि वह पानी पीती और फिर उसी के साथ खेलने में जुट जाती ।। २६२ ।। वे सभी मौनी-योगी उस तरफ़ गये और उन्होंने उसे देखा परन्तु उस बालिका ने इन लोगों को देखा भी नहीं और न ही अपना खेल छोड़ा ।। २६३ ।। बालिका के दन्त फूलों की माला के समान थे । वह पेड़ पर लिपटी हुई बेल के समान अपने राग-रंग में मस्त थी ।। २६४ ।। तभी दत्त ने उसे देखकर उसका गुणानुवाद किया और उसे गुरु मानकर महामंत्र में लीन हो गये ।। २६५ ।। उसे गुरु माना और इस प्रकार मंत्र को धारण किया । दत्त ने इस तरह बारहवाँ गुरु बनाया ।।२६६।।

रुनझुन छंद उस बालिका की छवि जो कि अद्वितीय एवं अद्भुत स्वरूप

बहु बिध लेखा। तन मन जाना। गुन गन माना ॥ २६८ ॥ तिह गुर कीना। अति जसु लीना। अग तब चाला। जनु मुनि ज्वाला ॥ २६९ ॥

॥ इति दुआदस गुरू समापतं लड़की गुडी खेलती ॥ १२ ॥

अथ भ्रित त्रौदसमो गुरू कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ तब दत्त देव महान। दस चार चार निधान। अतिभुत उत्तम गात। हरि नाम लेत प्रभात ॥२७०॥ अकलंक उज्जल अंग। लखि लाज गंग तरंग। अनभै अभूत सरूप। लखि जोत लाजत भूप ॥ २७१ ॥ अविलोक सुभ्रित एक। गुन मद्धि जास अनेक। अध रात ठाढ दुआर। बहु बरख मेघ फुहार ॥ २७२ ॥ अध रात दत्त निहार। गुणवंत बिक्रम अपार। जल मुसलधार परंत। निज नैन देख महंत ॥ २७३ ॥ इक चित्त ठाढहु ऐस। सोवरन मूरत जैस। द्रिड़ देख ता की भत्ति। अति मनहि रीझे दत्त ॥ २७४ ॥

वाली थी और मानो बुद्धि का भंडार थी, को मुनि ने देखा ॥ २६७ ॥ उन्होंने पुन:पुन: विभिन्न प्रकार से उसे देखा और तन-मन से उसके गुण को स्वीकार किया ॥ २६८ ॥ उसे गुरु धारण कर यश का अर्जन किया और मुनि अग्नि-ज्वाला के समान आगे चल पड़े ॥ २६९ ॥

॥ लड़की गुड़िया के साथ खेलती हुई बारहवाँ गुरु समाप्त ॥ १२ ॥

भृत्य तेरहवाँ गुरु-कथन

॥ तोमर छंद ॥ तब महान दत्त, जो कि अठारह विद्याओं के भण्डार और उत्तम शरीर वाले थे, वे प्रातः प्रभु-नाम स्मरण करते थे ॥ २७० ॥ उनके उज्ज्वल, निष्कलंक अंगों को देखकर गंगा की लहरें भी लजायमान होती थीं। उनके अद्भुत स्वरूप को देखकर राजागण भी लजाते थे ॥ २७१ ॥ उन्होंने एक सेवक को देखा जिसमें अनेकों गुण थे, वह आधी रात के समय द्वार पर खड़ा था और इसी प्रकार वर्षों से वर्षा आदि की परवाह किये बिना वह स्थिर था ॥ २७२ ॥ दत्त ने उस गुणवान विक्रमस्वरूप व्यक्ति को आधी रात में देखा और यह भी देखा की मूसलाधार वर्षा हो रही है ॥ २७३ ॥ वह एक चित्त होकर स्वर्णमूर्ति के समान खड़ा दिखाई दिया। उसको एकाग्र देखकर दत्त मन ही मन उस पर रीझ उठे । २७४ वे सोचने लगे कि ये न तो सर्दी-

नही सीत मानत घाम । नही चित ल्यावत छाम । नही नैक मोरत अंग । इक पाइ ठाढ अभंग (मू०ग्रं०६५४) ॥ २७५ ॥ ढिक दत्त ताँके जाइ । अविलोकता सभ नाइ । अधराम निरजन बास । अस लीन ठाँढ उदास ॥ २७६ ॥ बरखंत मेघ महान । भीजंत भूम निधान । जगि जीव सरब सुबास । उठ भाज बास उदास ॥ २७७ ॥ इह ठाढ भूपत पउर । मन जाप जापत गउर । नही नैक मोहत अंग । इक पान ठाढ अभंग ॥ २७८ ॥ अस लीन पान कराल । चमकंत उज्जल ज्वाल । जन काहू को नही मित्र । इह भाँति परम पवित्र ॥ २७९ ॥ नही नैक उचावत पाउ । बहु भात साधत दाउ । अन्यास भूपत भगत । प्रभ एक ही रस पगत ॥२८०॥ जल परत मूसल धार । ग्रहि लेन ओट दुआर । पसु पच्छ सरब दिसान । सभ देस देस सिधान ॥ २८१ ॥ इह ठाढ है इक आस । इक पान जान उदास । अस लीन पान प्रचंड । अति तेजवंत अखंड ॥ २८२ ॥ मन आन को नही भाव । इक देव को चित चाव । इक पाव ऐसे ठाढ । रन खंभ जानुक

गर्मी को मान रहा है और न ही उसके मन में छाया की इच्छा है । यह तनिक भी अंग मोड़े बिना एक पाँव पर निरन्तर खड़ा है ॥ २७५ ॥ दत्त उनके पास जाकर झुककर देखने लगे । आधी रात के उस निर्जन वातावरण में वह उदासीन भाव से खड़ा था ॥ २७६ ॥ बादल बरस रहे थे । भूमि पानी-पानी हो रही थी और जगत के सभी जीव डर के मारे भाग खड़े हुए ॥ २७७ ॥ यह सेवक राजा के दरवाजे पर इस प्रकार खड़ा था और मन ही मन गौरी-पार्वती का जाप कर रहा था । अंग को तनिक भी मोड़े बिना वह एक पाँव पर खड़ा था ॥ २७८ ॥ उसके हाथ में विकराल कृपाण जलती हुई ज्वाला के समान चमक रही थी और वह किसी का भी मित्र न दिखाई देते हुए परम पवित्र भाव से खड़ा था ॥ २७९ ॥ वह पाँव को ज़रा-सा भी नहीं उठा रहा था और अनेकों प्रकार से दाँव लगाने की मुद्रा में खड़ा था । अनन्य भाव से प्रभु के रस में रँगा हुआ राजा का भक्त था ॥ २८० ॥ मूसलाधार वर्षा को देखते हुए अपने-अपने घरों की शरण लेने के लिए पशु-पक्षी सभी दिशाओं से अपने-अपने घरों को भागे चले जा रहे थे ॥ २८१ ॥ यह एक पाँव पर उदासीन भाव से खड़ा था और एक हाथ में प्रचण्ड कृपाण लिये हुए अत्यन्त तेजस्वी लग रहा था ॥ २८२ ॥ उसके मन में एक स्वामी के बिना अन्य कोई भाव नहीं था और वह एक पाँव पर इस प्रकार खड़ा था मानो युद्धस्थल में

गा। ॥ २८३ ॥ जिह भूम धारस पाव। नही नैक फेर उचाव। नही ठाम भीजस तउन। अविलोक क्यो मुनि मउन ॥ २८४ ॥ अविलोक तास मुनेस। अकलंक भाग विभेस। गुर जान धरिआ पाइ। तजि लाज साज सजाइ ॥ २८५ ॥ तिह जान कै गुरदेव। अकलंक दत्त अभेव। चित तास के रस भीन। गुर तउदसमो तिह कीन ॥ २८६ ॥

॥ इति त्रउदसमो गुरू समापतं ॥ १३ ॥

अथ चतरदसमो गुर नाम ॥

॥ रसावल छंद ॥ चल्यो दत्त राजं। लखे पाप भाजं। जिनै नैक पेखा। गुरू तुलि लेखा ॥ २८७ ॥ महा जोत राजै। लखै पाप भाजै। महा तेज सोहै। सिवउ तुल्लि को है ॥ २८८ ॥ जिनै नैक पेखा। मनो मैन देखा। सही ब्रहम जाना। न द्वै भाव आना ॥ २८९ ॥ रिझी सरब नारी। महा तेज धारी। न हारं सँभारं। न चीरउ

स्तम्भ गड़ा हुआ हो ॥ २८३ ॥ वह जहाँ पाँव रखता था उसे दृढ़तापूर्वक जमाये रहता था। वह अपने स्थान पर भीग नहीं रहा था और उसे देखकर मुनि दत्त मौन हो गये ॥ २८४ ॥ उसको मुनि ने देखा, वह निष्कलंक चन्द्रमा के एक टुकड़े के समान दिखाई दिया। मुनि लज्जा को छोड़ते हुए उसे गुरु जानकर उसके पाँव पर जा पड़े ॥ २८५ ॥ निष्कलंक दत्त ने उसे गुरु मानते हुए उसके प्रेम में अपना चित्त लीन कर दिया और इस प्रकार उसे तेहरवाँ गुरु धारण किया ॥ २८६ ॥

॥ तेरहवाँ गुरु समाप्त ॥ १३ ॥

चौदहवाँ गुरु प्रारम्भ

॥ रसावल छंद ॥ दत्त चल पड़े जिन्हें देखकर पाप भाग खड़े होते थे। जिसने भी उन्हें देखा, गुरु के तुल्य देखा ॥ २८७ ॥ महान ज्योति वाले शोभा-युक्त उस मुनि को देखकर पाप भाग खड़े होते थे और महान तेजवान शिव के समान यदि कोई था तो वे दत्त ही थे ॥ २८८ ॥ जिसने भी उन्हें देखा माने कामदेव को देख लिया, उन्हें ब्रह्मरूप जाना और द्वैतभाव का नाश क दिया २८९ उस महान तेजस्वी पर सभी स्त्रियाँ मोहित हो गईं और उन्हें

चितारैं ॥ २९० ॥ चली धाइ ऐसे । नदी नाव जैसे । जुवा ब्रिध बालै । रही कौन आलै ॥ २९१ ॥ लही एक नारी । सु धरमांधिकारी । किधो पारबती छै । मनो बासवी है ॥ २९२ ॥ ॥ स्री भगवती छंद ॥ कि राजा स्रीछैं । कि बिदेल ताछै । कि हुई माद्रजा (मू०ग्रं०६५५) है । कि परमं प्रभा है ॥ २९३ ॥ कि रामं लिआ है । कि राजं प्रभा है । कि राजे सिरीछै । कि रामानु जाछै ॥ २९४ ॥ कि कालिंद्र काछै । कि कामं प्रभाछैं । कि देवान जाहै । कि दईतेसरा है ॥ २९५ ॥ कि सावित्र काछैं । कि गाइत्री आछैं । कि देवेस्वरी है । कि राजेस्वरी है ॥ २९६ ॥ कि मंत्राबला है । कि तंत्राकला छै । कि हुईमद्र जाछैं । कि हुंसेसरी है ॥२९७॥ कि जाजुल्लि काछै । सुवरन आदि जाछैं । कि सुद्धं सची है । कि ब्रहमा रची है ॥ २९८ ॥ कि परमेत्र जाहैं । कि परमं प्रभा हैं । कि पावित्र ताछै । कि सावित्र काछैं ॥ २९९ ॥ कि चंचाल काछैं । कि कामहि कलाछैं । कि क्रितयं धुजाछैं । कि राजेस्वरी है ॥ ३०० ॥ कि राजहि सिरी है । कि रामं

अपने वस्त्रों की और अपने आभूषणों की चिन्ता भी नहीं रही थी ॥ २९० ॥ वे इस प्रकार दौड़ी चली आ रही थीं जैसे नदी में नाव बढ़ती चली जा रही थी। युवतियाँ, वृद्धाएँ एवं बालिकाएँ कोई भी पीछे नहीं रहीं ॥ २९१ ॥ धर्माधिकारी मुनि ने एक स्त्री को देखा जो पार्वती अथवा इन्द्राणी के समान लग रही थी ॥ २९२ ॥ ॥ श्री भगवती छंद ॥ वह राजाओं की लक्ष्मी के समान शोभायमान हो रही थी। वह मद्र देश की सुन्दरियों के समान परम प्रभायुक्त थी ॥ २९३ ॥ मानो वह सीता हो, राजाओं की शक्ति हो, किसी राजा की पटरानी हो अथवा राम के पीछे चलनेवाली उसकी अनुगामिनी हो ॥ २९४ ॥ मानो वह यमुना हो और कामदेव की प्रभा से युक्त हो। वह देवियों की देवी और दैत्यों की अप्सरा के समान थी ॥ २९५ ॥ वह सावित्री, गायत्री, देवियों में परमदेवी और रानियों में पटरानी दिखाई दे रही थी ॥ २९६ ॥ वह मंत्र-तंत्र-कला में निपुण प्रतीत होती हुई राजकुमारी थी और हंसिनी के समान प्रतीत हो रही थी ॥ २९७ ॥ वह ज्वाला में तप्त स्वर्ण की भाँति दिखती हुई इंद्र की पत्नी शची के समान लग रही थी और ऐसा प्रतीत हो रहा था कि ब्रह्मा ने स्वयं उसकी रचना की हो ॥ २९८ ॥ वह लक्ष्मी के समान थी अथवा परमप्रभास्वरूप थी। वह सूर्य की किरणों के समान पवित्र थी २९९ वह की तरह चंचल थी। वह अप्सरा के

कली है। कि गउरी महाँ हैं। कि टोडी प्रभा हैं ॥ ३०१ ॥ कि भूपाल काछै। कि टोडीज आछै। कि बासंत बाला। कि रागान माला ॥ ३०२ ॥ कि मेघं मलारी। कि गउरी धमारी। कि हिंडोल पुत्री। कि आकाश उतरी ॥ ३०३ ॥ सु सउहागवंती। कि पारंग गंती। कि खट शास्त्र बकता। कि निज नाह भगता ॥ ३०४ ॥ कि रंभा सची है। कि ब्रहमा रची है। कि गंध्रबणी है। कि बिद्या धरीछै ॥३०५॥ कि रंभा उरबसीछै। कि सुधं सची है। कि हंसेस्वरी है। कि हिंडोल काछै ॥ ३०६ ॥ कि गंध्रबणी है। कि बिद्याधरी है। कि राजहि सिरीछै। कि राजहि प्रभाछै ॥ ३०७ ॥ कि राजान जाहैं। कि रुद्रं पिआ हैं। कि संभाल काछै। कि सुद्धं प्रभाछै ॥ ३०८ ॥ कि अंबालि काछै। कि आकरखणीछै। कि चंचाल काछै। कि चित्रं प्रभा हैं ॥ ३०९ ॥ कि कालिंद्र काछै। कि सारस्वती हैं। किधौ जानवी है। किधौ द्वारका छै ॥ ३१० ॥ कि कालिंद्र जाछै। कि कामं प्रभाछै। कि कामेश्वरी है। कि इंद्रानुजा है ॥ ३११ ॥

समान शोभायमान राजेश्वरी लग रही थी ॥३००॥ वह राम की प्रियतमा के समान राजरानी थी और गौरी-पार्वती के समान प्रभायुक्त थी ॥ ३०१ ॥ वह राजकलाओं में सर्वश्रेष्ठ थी और वसंतकुमारी के समान दिखनेवाली वह सुन्दरी रागिनियों की माला के समान लग रही थी ॥३०२॥ वह मेघ-मल्हार, गौरी धमार और हिंडोल राग की पुत्री के समान आकाश से उतरती हुई प्रतीत हो रही थी ॥ ३०३ ॥ वह सौभाग्यवती कलाओं में पारंगत थी और शास्त्रों में पारंगत वह अपने स्वामी की भक्त थी ॥ ३०४ ॥ वह रंभा, शची ब्रह्मा की विशिष्ट रचना, गंधर्व-स्त्री अथवा विद्याधरों की कन्या के समान प्रतीत हो रही थी ॥ ३०५ ॥ वह रंभा, उर्वशी, शची के समान झूला झूलती प्रतीत हो रही थी ॥ ३०६ ॥ वह गंधर्वस्त्री के समान, विद्याधरों की कन्या के समान राजसी प्रभा से युक्त राजरानी के समान प्रतीत हो रही थी ॥ ३०७ ॥ वह राजपुत्री रुद्रप्रिया पार्वती के समान लग रही थी और शुद्ध प्रकाश-रूप लग रही थी ॥ ३०८ ॥ वह सुन्दर स्त्री आकर्षित करनेवाली थी। वह चंचल स्त्री चित्रवत् प्रभायुक्त प्रतीत हो रही थी ॥ ३०९ ॥ वह यमुना, गंगा, सरस्वती नदियों के समान और द्वारिका नगरी के समान सुन्दर प्रतीत हो रही थी ॥३१०॥ वह यमुना व कामेश्वरी और इंद्राणी के समान लग रही थी ३११॥

कि भैखंडणी छै। कि खंभावती है। कि बासंत नारी। कि धरमाधिकारी ॥ ३१२ ॥ कि परमह प्रभाछै। कि पाविलता छै। कि आलोकणी है। कि आभा परी है ॥३१३॥ कि चंद्रामुखी छै। कि सूरं प्रभाछै। कि पाविलता है। कि कि परमं प्रभा है ॥ ३१४ ॥ कि सरपं लटी है। कि दुक्खं कटी है। कि चंचाल (मू०पं०६९६) काछै। कि चंद्रं प्रभाछै ॥ ३१५ ॥ कि बुद्धं धरी है। कि क्रुद्धं हरी है। कि छवाल काछै। कि बिज्जं छटा है ॥३१६॥ कि छत्राणवी है। कि छत्रं धरी है। कि छत्रं प्रभा है। कि छत्रं छटा है ॥ ३१७ ॥ कि बानं द्रिगी है। कि नेत्रं म्रिगी है। कि कउला प्रभा है। कि ससान नीछै ॥ ३१८ ॥ कि गंध्रबणी है। कि बिदिआधरी छै। कि बासंत नारी। कि भूतेस प्यारी ॥ ३१९ ॥ कि जादेस नारी। कि पंचाल बारी। कि हिंडोल काछै। कि राजह सिरी है ॥ ३२० ॥ कि सोवरण पुत्री। कि आकाश उत्री। कि स्वरणी प्रिता है। कि स्वरणं प्रभा है ॥ ३२१ ॥ कि पदमं द्रिगी है। कि धरमं

वह भयनाश करनेवाली, वसन्त, कन्या और धर्म की अधिकारिणी स्त्री थी ॥ ३१२ ॥ वह परमप्रभायुक्त, पवित्र और प्रकाश के समान आलोकित करनेवाली आभायुक्त परी थी ॥ ३१३ ॥ वह चन्द्रमा के समान और सूर्य के समान प्रभायुक्त थी। वह परम पवित्र और शोभा से युक्त थी ॥ ३१४ ॥ वह नागकन्या थी अथवा सर्व दुःखों का नाश करनेवाली थी। वह चंचल थी और सर्व प्रभाओं से युक्त थी ॥ ३१५ ॥ वह सरस्वतीस्वरूपा, क्रोध का शमन कर देनेवाली, लंबे बालों वाली तथा विद्युच्छटा के समान शोभायमान थी ॥ ३१६ ॥ वह छत्राणी, छत्र को धारण करनेवाली एवं छत्र के समान सुन्दर प्रभा वाली थी ॥ ३१७ ॥ उसके मृग-नयन बाणों का कार्य करनेवाले थे और वह कमलप्रभा और चन्द्रछटा के समान सुन्दर थी ॥ ३१८ ॥ वह गन्धर्व-स्त्री थी अथवा विद्याधर-कन्या थी अथवा वसंत रूपी स्त्री थी अथवा सर्व लोगों को प्रिय थी ॥ ३१९ ॥ वह यादवेश्वर (कृष्ण) की प्रिय अथवा द्रौपदी के समान सुन्दर स्त्री थी और ऐसी लग रही थी मानो झूले में पटरानी झूल रही हो ॥ ३२० ॥ वह स्वर्ण-जड़ित-सी आकाश से उतरती प्रतीत हो रही थी। वह स्वर्ण-प्रतिमा के समान स्वर्णछटा से युक्त थी ॥ ३२१ ॥ वह कमलनयनों वाली परमप्रभा से युक्त थी। वह वीरांगना चन्द्र के स्वभाव

प्रभी है। कि बीराबरा। कि सस की सुभा है॥ ३२२॥ कि नागेशजा है। कि जागन प्रभा है। कि नलनं द्रिगी है। कि मलिनी म्रिगी है॥ ३२३॥ कि अमितं प्रभा है। कि अमितो तमा है। कि अकलंक रूपं। कि सभ जगत भूपं॥ ३२४॥ ॥ मोहणी छंद॥ जुब्बणमय मंत्र सु बाली। मुख नूरं पूरं उज्जाली। म्रिगनैणी बैणी कोकला। ससि आभा सोभा चंचला॥ ३२५॥ घणि मंसै जैहै चंचाली। म्रिदहासा नासा खंकाली। चख चारं हारं कंठायं। म्रिगनैणी बैणी मंडायं॥ ३२६॥ गज गामं बामं सु गैणी। म्रिग हासं बासं बिधु बैणी। चख चारं हारं निरमल्ला। लखि आभा लज्जी चंचल्ला॥ ३२७॥ द्रिड़ धरमाँ करमाँ सु करमं। दुख हरता सरता जणु धरमं। मुख नूरं पूरं सुबासा। लख चारी बारी अंनासा॥ ३२८॥ लख चारं बारं चंचाली। सत धरमा करमा संचाली। दुख हरणी दरणी दुख दंदं। प्रिया भगता बकता हर छंदं॥३२९॥ रंभा उरबसिआ घ्रिताची। अच्छै मोहणी आजे राची।

वाली अर्थात् ठण्डक प्रदान करनेवाली थी॥३२२॥ वह नागरानी के समान प्रभा से युक्त थी। वह कमल और मृग के समान नेत्रों वाली थी॥ ३२३॥ वह अपरिमित प्रभा से युक्त अत्युत्तम थी। उसका निष्कलंक रूप सारे संसार के राजाओं का राजा था॥ ३२४॥ ॥ मोहनी छंद॥ यौवनयुक्त उस स्त्री के मुख पर उज्ज्वल तेज था। उसकी आँखें मृगनयनों के समान और वाणी कोकिला के समान हैं। वह चंचल नवयौवना चन्द्रमुखी थी॥ ३२५॥ उसकी हँसी बादलों में बिजली के समान थी और उसकी नासिका भी अत्यन्त शोभा-युक्त थी। गले में सुन्दर हार उसने पहन रखे थे और उस मृगनयनी ने अपनी वेणी को सुन्दर रूप से मंडित कर रखी थी॥ ३२६॥ वह गजगामिनी स्त्री सुन्दर अप्सरा के समान थी और मृदुरूप से हँसनेवाली वह सुन्दर वचन बोलनेवाली थी। उसके शुद्ध हीरक हारों को देखकर बिजली भी लजायमान हो रही थी॥ ३२७॥ वह अपने धर्म में दृढ़ और सुकर्म करनेवाली तथा उसी प्रकार से दुःखहर्ता लग रही थी जैसे की मानो धर्म रूपी नदी हो। उसके चेहरे पर तेज था और उसका शरीर पूर्णरूप से सुवासित था॥ ३२८॥ उस सुन्दर चंचल स्त्री को, जो कि सतीधर्म एवं कर्मों से संचालित होती प्रतीत होती थी, दत्त ने देखा। वह दुःख को दूर करनेवाली और अपने प्रियतम की प्यारी तथा छंद आदि का उच्चारण करनेवाली थी॥ ३२९॥ वह रम्भा उर्वशी

लखि सरबं गरबं परहारी । मुखि नीचे धामं सिधारी ।।३३०।।
गंधरबं सरबं देवाणी । गिरजा गाइत्री लंकाणी । सावित्री
चंद्री इंद्राणी । लखि लज्जी सोभा सुरजाणी ।। ३३१ ।।
नागणिआँ ज्रितिआ जच्छाणी । पापा पावित्री पब्बाणी ।
पई साच प्रेती भूतेसी । भिभरी आभामा भूतेसी ।। ३३२ ।।
बर बरणी हरणी सभ दुक्खं । सुख करनी तरनी ससि मुक्खं ।
उरगी गंध्रबी जच्छाणी । लंकेशी (मू०ग्रं०६५७) भेसी
इंद्राणी ।। ३३३ ।। द्रिग बानं तानं मदमत्ती । जुब्बन
जगमगणी सुभवंती । उरधारं हारं बनि मालं । मुखि सोभा
सिखरंजन ज्वालं ।। ३३४ ।। छितपत्री छत्री छत्राली । बिध
बैणी नैणी त्रिमाली । असुपासी दासी निरलेपं । बुध खानं
मानं संछेपं ।। ३३५ ।। सुभ सीलं डीलं सुख खानं । मुख
हासं रासं निरबामं । प्रिय भकता बकता हरिनामं । चित
लैणी दैणी आरामं ।। ३३६ ।। प्रिय भगता ठाढी एरंगी ।
रंग एकै रंगै सो रंगी । निरबासा आसा एकांतं । पति जासी

मोहिनी आदि अप्सराओं के समान सुन्दर थी और ये अप्सराएँ उसे देखकर लजाकर मुख नीचा किए हुए अपने-अपने धामों को चली गईं ।। ३३० ।। गन्धर्वस्त्रियाँ, देवियाँ, गिरजा, गायत्री, मंदोदरी, सावित्री एवं शची आदि सुन्दरियाँ उसकी शोभा को देखकर लज्जित हो उठती थीं ।। ३३१ ।। नागकन्याएँ, यक्षणियाँ, देवी पार्वती से उद्‌भूत भूत-प्रेतनियाँ एवं अन्य गणिकाएँ सब उसके सामने फीकी थीं ।। ३३२ ।। वह सुन्दरी सब दुःखों का हरण करने वाली, सुख देनेवाली और चन्द्रमुखी थी। नागकन्याएँ, गंधर्वस्त्रियाँ, यक्ष-स्त्रियाँ एवं इंद्राणी के वेश वाली वह स्त्री अत्यन्त सुन्दर लग रही थी ।।३३३।। उस मदमत्त यौवना के नयनबाण तने हुए थे और वह यौवन की आभा से जगमगा रही थी। गले में उसने माला धारण कर रखी थी और उसके मुख की शोभा देदीप्यमान ज्वाला की तरह दिखाई दे रही थी ।। ३३४ ।। वह धरती की रानी छत्र धारण करनेवाली देवी थी और उसके नयन तथा वचन निर्मल थे। वह असुरों को भी मोहित कर लेनेवाली परन्तु विद्या और सम्मान की खान तथा निर्लिप्त भाव से रहनेवाली थी ।। ३३५ ।। वह शुभ, शील एवं आकार-प्रकार से युक्त सुख देनेवाली, मंद-मंद मुस्कानेवाली, अपने प्रिय की भक्त, प्रभु-नाम स्मरण करनेवाली, मन को मोहनेवाली और सुख देनेवाली थी ।। ३३६ ।। वह अपने प्रिय की भक्त थी और अकेले ही खड़ी थी तथा प्रेम के एक ही रंग में रँगी हुई थी उसे कोई भी वासना नहीं थी और वह एकान्त

भासी परभातं ॥ ३३७ ॥ अनिनिद्रं अनिंद्रा निरहारी । प्रिय भगता बकता ब्रतचारी । बासंती टोडी गउँडी है । भूपाली सारंग गउरी है ॥ ३३८ ॥ हिंडोली मेघ मल्हारी है । जैजावंती गौड मल्हारी छै । बंगलिआ राग बसंती छै । बैरागी सोभावंती है ॥ ३३९ ॥ सोरठ सारंग बैरारी छै । परजक्कै सुद्ध मल्हारी छै । हिंडोली काफी तैलंगी । भैरवी दीपकी सुभंगी ॥ ३४० ॥ सरबेवं रागं निरबाणी । लखि लोभी आभा गरबाणी । जउ कत्थउ सोभा सरबाणं । तउ बाढै एकं ग्रंथाणं ॥ ३४१ ॥ लखि तामं दत्तं ब्रतचारी । सभ लग्गे पानं जटधारी । तन मन भरता कर रस भीना । चवदसवों ताँको गुर कीना ॥ ३४२ ॥

॥ इति प्रिय भगत इसत्री चतुरदसवाँ गुरू समापतम ॥ १४ ॥

अथ बानगर पंदरवौ गुरू कथनं ॥

॥ तोटक छंद ॥ करि चउदसवौ गुर दत्त मुनं । मग लगिआ पूरत नाद धुनं । भ्रम पूरब पच्छम उत्त दिसं । तकि

में अपने पति का स्मरण कर रही थी ॥ ३३७ ॥ वह कभी भी न सोनेवाली, निराहारी, प्रिय भक्त, व्रतचारी स्त्री थी । वह बसन्ती, टोड़ी, गौड़ी, भूपाली, सारंग आदि राग-रागिनियों के समान सुन्दर थी ॥ ३३८ ॥ हिण्डोल, मेघ, मल्हार, जयजावन्ती, गौड़, बसन्त एवं बैरागी आदि राग-रागिनियों के समान शोभायुक्त थी ॥ ३३९ ॥ सोरठ सारंग, बैराड़ी, मल्हार, हिण्डोल, तैलगी, भैरवी और दीपक राग के समान वह सुन्दर भाव-भंगिमाओं वाली थी ॥३४०॥ वह सर्वरागों में निपुण थी और सुन्दरता स्वयं उसको देखकर मोहित हो रही थी । यदि मैं उसकी सर्व प्रकार की शोभा का वर्णन करूँ तो एक ग्रन्थ और बढ़ जायगा ॥३४१॥ उस व्रतचारिणी स्त्री को महाव्रती दत्त ने देखा और सब जटाधारियों समेत उसके चरण स्पर्श किये । अपने तन और मन से अपने पति के रस में तल्लीन उस स्त्री को चौदहवाँ गुरु धारण किया ॥ ३४२ ॥

॥ इति प्रिय-भक्त स्त्री चौदहवाँ गुरु समाप्त ॥ १४ ॥

बाण-निर्माता पंद्रहवाँ गुरु-कथन

॥ तोटक छंद ॥ चौदहवाँ गुरु धारण करके दत्त मुनि शंखनाद करते हुए आगे बढ़ गये । वे पूर्व पश्चिम उत्तर दिशाओं का भ्रमण कर मौन

चलिआ दच्छन मोन इसं ॥ ३४३ ॥ अविलोक तहाँ इक चित्र पुरं । जनु क्रांत दिवालय सरब हरं । नगरेश तहाँ बहु मार म्रिगं । सभ सिंघ म्रिगी पल घाइ खगं ॥ ३४४ ॥ चतुरंग लए न्रिप संगि घनी । थहरंत धुजा चमकंत अनी । बहु भूखन चीर जराव जरी । त्रिदसालय की जनु क्रांत हरी ॥ ३४५ ॥ तह बैठ हुतो इक बानगरं । बिन प्राण किधौ नहो बैन चरं । तह बाजत बाज म्रिदंग गणं । डफ ढोलत झाँझ मुचंग बणं ॥ ३४६ ॥ दल नाथ लए बहु संगि दलं । जल बारद जान प्रलै उछलं । हय हिंसत चिंसत गूड़ (मू०ग्रं०६५८) गजं । गज गज्जत लज्जत सुंड लजं ॥ ३४७ ॥ द्रुम ढाहत गाहत गूड़ दलं । कर खींचत सींचत धार जलं । सुख पावत धावत पेखि प्रभं । अविलोकि बिमोहत राज सुभं ॥ ३४८ ॥ चप डारत चाचर भान सुअं । सुख पावत देख नरेश भुअं । गल गज्जत ढोल म्रिदंग सुरं । बहु बाजत नाद मयं मुरजं ॥३४९॥ कलि किंकणि भूखत अंग बरं । तन लेपत चंदन चार प्रभं । म्रिदु डोलत बोलत बात मुखं । ग्रहि आवत खेल अखेट

धारण करते हुए दक्षिण दिशा की तरफ़ चल दिये ॥ ३४३ ॥ वहाँ उन्होंने एक चित्रपुरी देखी जहाँ सब ओर देवालय स्थित थे । वहाँ के राजा ने बहुत से मृगों और शेरों को अपने खड्ग से मार डाला था ॥ ३४४ ॥ राजा ने चतुरंगिणी सेना साथ ली । सेना की ध्वजाएँ फहरा रही थीं और सबके शरीर पर जड़ाऊ वस्त्र शोभा दे रहे थे । उन सबका सौन्दर्य सर्वपुरियों की सुन्दरता को लजा रहा था ॥ ३४५ ॥ वहाँ एक बाण बनानेवाला बैठा हुआ था और ऐसा लग रहा था कि मानो वह निष्प्राण हो । वहाँ मृदंग, ढोलक, डफली आदि बजने लगे ॥ ३४६ ॥ राजा अपने साथ दल को लिये हुए था और वह दल प्रलय के बादलों के समान उमड़ रहा था । घोड़े हिनहिना रहे थे और हाथी चिंघाड़ रहे थे । हाथियों की गर्जना से बादल भी लज्जित हो रहे थे ॥ ३४७ ॥ पेड़ों को गिराते हुए और जलधाराओं से जल पीते हुए वह दल सुखपूर्वक चल रहा था जिसे देखकर सभी विमोहित हो रहे थे ॥३४८॥ सूर्य और चन्द्र भी उस वाहिनी से डर रहे थे और उस राजा को देखकर धरती के सभी राजा सुख प्राप्त कर रहे थे । ढोल, मृदंग इत्यादि विभिन्न प्रकार के नाद बज रहे थे ॥ ३४९ ॥ अनेक प्रकार के नूपुर, किंकिणियाँ सुन्दर रंगों पर शोभायमान थीं और सभी के मुख पर चन्दन के लेप की शोभा विराजमान थी सभी सुखपूर्वक बातचीत करते हुए विचरण कर रहे थे और शिकार

सुखं ॥ ३५० ॥ मुख पोछ गुलाब फुलेल सुभं । कलि कज्जल सोहत चारु चखं । मुख उज्जल दंद समान सुभं । अविलोक छके गण गंध्रबिसं ॥ ३५१ ॥ सुभ सोभत हार अपार उरं । तिलकं दुति केसर चार प्रभं । अन संग अछूहन संग दलं । तिह जात भए सन सैन मगं ॥ ३५२ ॥ फिर आइ गए तिह पेंड मुनं । कलि बाजत संखन नाद धुनं । अविलोक तहाँ इक बानगरं । सिर नीच मनो लिख चित्र धरं ॥ ३५३ ॥ अविलोक रिखीशर तीर गरं । हसि बैन सभाँति इमं उचरं । कह भूप गए लिए संगि दलं । कह्यो सो न गुरू अविलोक द्रिगं ॥ ३५४ ॥ चकि चित्त रहे चल अचित मुनं । अनखंड तपी नही जोग डुलं । अन आस अभंग उदास मनं । अबिकार अपार प्रभास सभं ॥ ३५५ ॥ अनभंग प्रभा अन खंड तपं । अबिकार जती अनिआस जपं । अनखंड ब्रतं अनडंड तनं । हठवंत ब्रती रिख अत्र सुअं ॥ ३५६ ॥ अविलोक सरं करि ध्यान जतं । रहि रीझ जटी हठवंत ब्रतं । गुर मानस पंचदस्वो प्रबलं । हठ छाडि सभै तिन पार परं ॥ ३५७ ॥

खेलकर सुखपूर्वक वापस घर आ रहे थे ॥ ३५० ॥ मुख से गुलाब और इत्र पोछ रहे थे और उनके नयनों में सुन्दर काजल शोभायमान हो रहा था। सबके सुन्दर मुख हाथी-दाँत के समान शुभ्र थे और गण-गन्धर्व आदि भी उनको देखकर प्रसन्न हो रहे थे ॥ ३५१ ॥ सबके गले में सुन्दर हार और माथे पर केसर के तिलक शोभा दे रहे थे। उस मार्ग से यह अक्षौहिणी दल चला जा रहा था ॥३५२॥ उसी मार्ग पर मुनि दत्त शंखनाद करते हुए आ पहुँचे, जहाँ उन्होंने सिर नीचा किये हुए चित्रवत् एक बाण बनानेवाले को देखा ॥ ३५३ ॥ मुनीश्वर ने उसे देखकर इस प्रकार कहा— राजा दल लेकर कहाँ गया है ? उस बाण बनानेवाले ने उत्तर दिया कि उसने अपने आँखों से किसी को नहीं देखा है ॥ ३५४ ॥ मुनि उसके अचल मन को देखकर चकित हो गये। वह अखण्ड तपीश्वर और कभी भी डोलायमान न होनेवाला था। वह उदासीन मन वाला अविकारी और अपार प्रभा से संयुक्त था ॥ ३५५ ॥ उसके अखण्ड तप के फलस्वरूप अनन्य प्रभा उसके चेहरे पर विराजमान थी और वह अविकारी यती के समान था। उसका व्रत अखण्ड एवं तन विलक्षण था। वह हठी, व्रती एवं अत्रि ऋषि के पुत्र के समान था ॥ ३५६ ॥ मुनि दत्त उसके बाणों और ध्यान को देखकर उस पर रीझ उठे। उसे पन्द्रहवाँ गुरु धारण कर और सभी हठ को छोड़कर उसे अपना पारकर्ता मान लिया ३५७ इस

इम नाह सौ जो कर नेह करै। भव धार अपारहि पार परै। तन के मन के भ्रम पास धरे। करि पंद्रसवो गुर पान परे ॥ ३५८ ॥

॥ इति पंद्रसवो गुरू बानगर समापतं ॥ १५ ॥

अथ चाँवड सोरवों गुर कथनं ॥

॥ तोटक छंद ॥ मुख बिभूत भगवे भेस बरं। सुभ सोभत चेलक संग नरं। गुन गावत गोबिंद एक मुखं। मन डोलत आस उदास सुखं ॥ ३५९ ॥ मुख पूरत सूरत नाद नवं। अति उज्जल अंग बिभूत रिखं। नही बोलत डोलत देस दिसं। (मू०ग्रं०६५९) गुन चारत धारत ध्यान हरं ॥३६०॥ अविलोकय चावड चार प्रभं। ग्रहि जात उडी गहि मासु मुखं। लखि कै पल चावंड चार चली। तिह ते अति पुष्ट प्रमाथ बली ॥ ३६१ ॥ अवलोक समास अकाश उडी। अति जुद्ध तही तिह संग मंडी। तज मास चड़ा उडि आप चली। लहिकै चित चावड चार बली ॥ ३६२ ॥ अवलोक सु चावड

प्रकार स्वामी से जो प्रेम करता है, वह इस अपार भवसागर से पार हो जाता है। तन और मन के भ्रमों को दूर कर इस प्रकार दत्त पंद्रहवें गुरु के चरण में आ पड़े ॥ ३५८ ॥

॥ इति पंद्रहवाँ गुरु बाणगर समाप्त ॥ १५ ॥

सोलहवें गुरु चील का कथन

॥ तोटक छंद ॥ मुँह पर भभूत और भगवे वस्त्र धारण किये अपने चेलों के साथ मुनि शोभायमान हो रहे हैं। मुंह से प्रभु के गुण गा रहे हैं और सभी प्रकार की आशाओं से उदासीन होकर विचरण कर रहे हैं ॥ ३५९ ॥ मुँह से विभिन्न प्रकार की नाद निकाले जा रहे हैं और ऋषि दत्त का शरीर अनेक प्रकार की विभूतियों से युक्त उज्ज्वल है। वे बिना बोले हुए देश-देशान्तरों में भ्रमण कर रहे थे और प्रभु का ध्यान मन में किए हुए थे ॥३६०॥ वहाँ उन्होंने सुन्दर चील को देखा जो मुख में मांस पकड़े हुए उड़ी जा रही थी। उसे देखकर उससे भी अधिक बलवान चार चीलें आगे बढ़ीं ॥ ३६१ ॥ वे आकाश में उड़ चलीं और उन्होंने उस चील से युद्ध शुरू कर दिया। वह मांस को छोड़कर और इन चार बलवान चीलों को देखकर उड़ चली ॥ ३६२ ॥

चार पलं । तजि त्रास भई थिर भूम थलं । लखि तास सठं मुनि चउक रह्यो । चित सोरसवो गुर तास कह्यो ।। ३६३ ।। कोऊ ऐस तजै जब सरब धनं । करिकै बिन आस उदास मनं । तब पाचउ इंद्री त्यागि रहै । इन चीलन जिउँ स्रुत ऐस कहै ।। ३६४ ।।

।। इति सोरवों गुरू चावड समापतम ।। १६ ।।

अथ दुधीरा सतारवों गुरू कथनं ।।

।। तोटक छंद ।। करि सोरसवों रिख तास गुरं । उठ चलिआ बाट उदास चितं । मुखि पूरत नादि निनाद धुनं । सुन रीझत गंध्रब देव नरं ।। ३६५ ।। चलि जात भए सरिता निकटं । हठवंत रिखं तपसा बिकटं । अविलोक दुधीरय एक तहाँ । उछरंत हुते नद मच्छ जहाँ ।। ३६६ ।। थरकंत हुतो इक चित्त नभं । अति उज्जल अंग सुरंग सुभं । नही आन बिलोकत आप द्रिगं । इह भाँति रह्यो गड मच्छ मनं ।।३६७।। तहाँ जाइ महाँ मुन मज्जन कै । उठिकै हरि ध्यान लगा

उन चारों चीलों को देखकर नीचे धरती भी भय के मारे स्थिर हो गई। उनको देखकर मुनि भी चौंक पड़े और उसे सोलहवाँ गुरु धारण किये ।।३६३।। यदि कोई सभी आशाओं से उदासीन होकर इसी प्रकार सम्पूर्ण सम्पत्ति का त्याग कर दे तब ही उसे त्यागी माना जा सकता है। तब ही वह पाँचों इन्द्रियों के रसों को त्यागकर इन चीलों के समान अपनी सुरति बना सकता है ।।३६४।।

।। इति सोलहवाँ गुरु चील समाप्त ।। १६ ।।

माहीगीर (दुधीर) पक्षी सत्रहवाँ गुरु-कथन

।। तोटक छंद ।। ऋषि चील को सोलहवाँ गुरु धारण कर उदासीन मन से पुनः अपने मार्ग पर चल पड़े। अपने मुख से विभिन्न प्रकार से नाद वे निकाल रहे थे और उसे सुनकर देवता, गंधर्व, नर-नारी सभी प्रसन्न हो रहे थे ।। ३६५ ।। हठी और तपस्वी मुनि एक नदी के निकट पहुँचे, जहाँ उन्होंने उछलती हुई मछलियों के आसपास माहीगीर नामक एक पक्षी उड़ता हुआ देखा ।। ३६६ ।। वह एकाग्रचित्त से एक ही स्थान पर आकाश में स्थिर था और उसके अंग अत्यन्त उज्ज्वल एवं सुन्दर थे। उसका मन मछलियों में ही गडा हुआ था और वह अन्य किसी को नहीं देख रहा था ।। ३६७ ।। वहाँ

सुचकं । न टरो तब लौ वह मच्छ अरो । रथ सूर अथिओ नह डीठ टरी ।। ३६८ ।। थरकंत रहा नभ मच्छ कटं । रथ भान हट्यो नही ध्यान छुटं । अविलोक महाँ मुन मोहि रह्यो । गुर सतसवों कर तास कह्यो ।। ३६९ ।।

।। इति सतारवों गुरू दुधीरा समापतम ।। १७ ।।

अथ म्रिगहा अठारसवों गुरू बरननं ।।

।। तोटक छंद ।। करि मज्जन गोबिद गाइ गुनं । उठि जाति भए बन मद्धि मुनं । जह साल तमालम ढाल लसं । रथ सूरज के पग बाज फसं ।। ३७० ।। अविलोक तहाँ इक ताल महाँ । रिख जात भए तिह जोग जहाँ । तह पत्रण मद्ध लह्यो म्रिगहा । तन सोभत कंचन सुद्ध प्रभा ।। ३७१ ।। करि संधित (मू०ग्रं०६६०) बाण कमाण सितं । म्रिग मारत कोट करोर कितं । सभ सैन मुनीशर संगि लए । जह कानन थो तह जात भए ।। ३७२ ।। कनकं दुति उजल अंग सने । मुनिराज मनं रितराज बने । रिख संग सखा निस बहुत लए ।

जाकर गुरु ने स्नान किया और उठकर प्रभु का ध्यान किया, परन्तु वह मछलियों का शत्रु सूर्य के अस्त होने तक भी वहीं पर स्थिर होकर मछलियों पर ध्यान गड़ाये रहा ।। ३६८ ।। वह आकाश में ही थिरकता रहा और उसे सूर्य के अस्त होने का भी ध्यान नहीं रहा । महामुनि उसे देखकर मौन हो गये और उसे सत्रहवाँ गुरु धारण किया ।। ३६९ ।।

।। इति सत्रहवाँ गुरु माहीगीर पक्षी समाप्त ।। १७ ।।

शिकारी अठारहवाँ गुरु-वर्णन

।। तोटक छंद ।। स्नान करके प्रभु के गुण गाते हुए मुनि वन के अन्दर चले गये जहाँ पर साल और तमाल के वृक्ष शोभायमान हो रहे थे और उन वृक्षों की घनी छाया में सूर्य का प्रकाश भी नहीं पहुँच पा रहा था ।। ३७० ।। वहाँ ऋषि एक सरोवर को देखकर, पत्तों के बीच में कंचन-सी शोभा से युक्त उन्होंने एक शिकारी देखा ।। ३७१ ।। उसके हाथ में श्वेत रंग का बाण और धनुष था जिससे उसने अनेकों मृग मारे थे । मुनि अपने साथ सब दल को लेकर उस वन की ओर से निकले ।। ३७२ ।। अनेकों स्वर्ण [illegible]-सी शोभा वाले मुनिराज ऋषि दत्त के साथ थे और उन सबने उस शिकारी को

तिह बारध द्रूज बिलोकि गए ।। ३७३ ।। रिख बोलत घोरत नाद नवं । तिह ठउर कुलाहल उच हुअं । जल पीवत ठउर ही ठउर मुनी । बन मद्धि मनो रिख माल बनी ।। ३७४ ।। अति उज्जल अंग बिभूत धरे । बहु भाँति नियास अनास करे । निवल्यादिक सरबं करम किए । रिख सरब चहूँ चक दास थिए ।। ३७५ ।। अनभंग अखंड अनंग तनं । बहु साधत न्यास संन्यास बनं । जट सोहत जानुक धूर जटी । शिवजी जनु जोग जटा प्रगटी ।। ३७६ ।। शिव ते जनु गंग तरंग छुटे । इह हुइ जन जोग जटा प्रगटे । तप सरब तपीशर के सभ ही । मुन जे सभ छीन लए तब ही ।। ३७७ ।। स्रुत जेतिक न्यास उदास कहे । सभ ही रिख अंगन जान लए । घन मै जिम बिद्दुलता झमकै । रिख मो गुन तास सभै दमकै ।। ३७८ ।। जस छाडत भान अनंत छटा । रिख के तिम सोभत जोग जटा । जिनकी दुख फांस कहूँ न कटी । रिख भेटत तास छटाक छुटी ।। ३७९ ।। नर जो नही नरकन ते निबरै । रिख भेटत तउन तराक तरै । जिन के समता कहूँ माहि ठटी । रिख पूज घटी सभ पाप घटी ।। ३८० ।। इत बंधप तउन

देखा ।। ३७३ ।। मुनिगण घनघोर नाद और भीषण कोलाहल उस स्थान पर करने लगे और स्थान-स्थान पर मुनिजन माला के समान बिखर कर जलपान करने लगे ।। ३७४ ।। उज्ज्वल अंगों पर मुनिगण भभूत धारण कर भिन्न प्रकार के आसन न्योली आदि कर्म चारों दिशाओं में घूम-घूमकर करने लगे ।। ३७५ ।। वे कामवासना से विहीन अखंड रूप में विभिन्न प्रकार की साधनाएँ करने लगे । उनकी जटाएँ इस प्रकार शोभायमान हो रही थीं कि मानो शिव की योग रूपी जटाएँ प्रकट हुई हों ।। ३७६ ।। शिव से जैसे गंगा की तरंगें निकल रही हों, इस प्रकार उन सबकी योग-जटाएँ लहरा रही हैं । सर्व तपस्वियों की तप-साधनाएँ इन मुनियों ने अपनाकर विभिन्न प्रकार से तपश्चर्याएँ कीं ।। ३७७ ।। श्रुतियों में जितनी भी प्रकार की साधनाएँ कही गई हैं, उन सबका इन ऋषियों ने अभ्यास कर लिया । बादलों में बिजली चमकने की तरह ऋषियों में सभी गुण दमकने लगे ।। ३७८ ।। जिस प्रकार सूर्य अनेकों किरणें छोड़ता है, उसी प्रकार योगियों के सिर पर जटाएँ लहरा रही हैं । जिनका दु:ख कहीं पर भी नहीं मिट सका उनका कष्ट इन मुनियों के दर्शन करते ही दूर हो गया ।। ३७९ ।। जो भी नर-नारी नरकगामी थे, वे मुनि के दर्शन करते ही पार हो गये जिनके अन्दर कोई भी पाप था उनका

बिठो म्रिगहा। जस हेरत छेरिनि भी भिडहा। तिह जान रिखी नही सास सस्यो। म्रिग जान मुनी कहु बान कस्यो॥ ३८१॥ सर पेख सभै तिह साधक है। म्रिग होइ नरे मुनिराज इहै। नर बान सरासन पान तजे। अस देख द्रिड़ं मुनराज लजे॥ ३८२॥ बहुते चिर जिऊं तिह ध्यान छुटा। अविलोकि धरे रिखपाल जटा। कस आवत हो डर डार अबै। मुहि लागत हो म्रिग रूप सबै॥ ३८३॥ रिखपाल बिलोक तिसै द्रिड़ता। गुर मान करी बहुतै उपमा। म्रिग सो जिह को चित ऐस लग्यो। परमेशर के रस जान पग्यो॥ ३८४॥ मुन को तब प्रेम प्रसीज हिआ। गुर ठारसमो म्रिगहा सु किआ। मन मो तब दत्त बीचार किआ। गुन म्रिगहा को (मू०ग्रं०६६१) चित बीच लिआ॥ ३८५॥ हरि सोहित जो इह भाँति करै। भव भार अपारह पार परै। मल अंतरि याहि शनान करै। जग ते फिर आवन जान मिटै॥ ३८६॥ गुर जान तबै तिह पाइ परा। भव पार अपार सु पार तरा। दस अशटसमो गुर तास कियो। कबि

पापपूर्ण जीवन इन मुनियों की पूजा करने से समाप्त हो गया॥ ३८०॥ इधर यह शिकारी बन्धु बैठा हुआ था जिसे देखते ही पशु शावक भाग खड़े होते थे। उसने मुनि को नहीं पहचाना और उसे मृग मानते हुए उसकी ओर बाण कसा॥ ३८१॥ सभी साधकों ने बाण को देखा और यह भी देखा कि मुनि-राज मृग होकर विराजमान हैं। उस व्यक्ति ने धनुष-बाण हाथ से छोड़ दिया और मुनिराज को दृढ़ देखकर वह लज्जित हो उठा॥ ३८२॥ बहुत समय के बाद जब उसका ध्यान छूटा तो उसने जटाओं वाले ऋषिवर को देखा। वह बोला कि आप सब भय को त्यागकर कैसे यहाँ चले आए हैं। मुझे तो सब मृग दिखाई दे रहे हो॥ ३८३॥ मुनि ने उसकी दृढ़ता देखकर उसे गुरु मानकर उसकी स्तुति की और कहा कि जिसका मृग में इतना ध्यान लगा है वह समझो प्रभु के प्रेम-रस में मग्न है॥ ३८४॥ मुनि ने द्रवित हृदय से उसे अठारहवाँ गुरु धारण किया। मुनि दत्त ने मन में विचारपूर्वक उस शिकारी के गुणों को धारण किया॥ ३८५॥ जो भगवान से इस प्रकार प्रेम करेगा वह भवसागर से पार हो जायगा। अन्तर्मन के स्नान से उसका मल कट जायेगा और संसार से उसका आवागमन समाप्त हो जायेगा॥३८६॥ उसे गुरु मानकर वे उसके पाँव पड़े और भवसागर को पार कर गए। उसे अठारहवाँ गुरु धारण किया और इस प्रकार कवि ने कविता में उसका वर्णन

बांधि कबित्तन सद्धि लियो ॥ ३८७ ॥ सभ ही सिख संजुति पान गहे । अविलोक चराचरि चउध रहे । पसु पच्छ चराचर जीव सभै । गण गंध्रब भूत पिसाच तबै ॥ ३८८ ॥

॥ इति अठदसवों गुरु ख्रिगहा समापतं ॥ १८ ॥

अथ नलनी सुक उनीसवो गुर कथनं ॥

॥ क्रिपाण क्रित छंद ॥ मुनि अति अपार । गुण गण उदार । बिद्या बिचार । नित करत चार ॥ ३८९ ॥ लखि छबि सुरंग । लाजत अनंग । पिख बिमल अंग । चकि रहत गंग ॥ ३९० ॥ लखि दुति अपार । रीझत कुमार । ग्यानी अपार । गुन गन उदार ॥ ३९१ ॥ अब्यकत अंग । आभा अभंग । सोभा सुरंग । तन जन अनंग ॥ ३९२ ॥ बहु करत न्यास । निसदिन उदास । तजि सरब आस । अति बुद्धि प्रकाश ॥ ३९३ ॥ तन सहत धूप । संन्यास भूप । तनि छबि अनूप । जनु शिव सरूप ॥ ३९४ ॥ मुखि छबि

किया ॥ ३८७ ॥ सभी शिष्यों ने एकत्र होकर चरण पकड़ा जिसे देखकर सभी चराचर चौंक उठे । सभी पशु, पक्षी, गंधर्वगण, भूत, पिशाच आश्चर्य-चकित हो गए ॥ ३८८ ॥

॥ इति अठारहवाँ गुरु आखेटक समाप्त ॥ १८ ॥

नलिनी-शुक उन्नीसवाँ गुरु-कथन

॥ कृपाण कृत छंद ॥ गुणों में उदार मुनि विद्या को विचारनेवाले और नित्य अभ्यास करनेवाले थे ॥ ३८९ ॥ उनकी छवि को देखकर, कामदेव भी लजाता था और अंगों की निर्मलता को देखकर गंगा भी चकित होती थी ॥ ३९० ॥ उनकी छवि को देखकर सभी कुमार उन पर रीझते थे, क्योंकि वे अपरम्पार ज्ञानी और उदार गुणवेत्ता थे ॥ ३९१ ॥ उनके अंगों की शोभा अवर्णनीय थी । वे कामदेव के समान सुन्दर थे ॥ ३९२ ॥ वे रात-दिन उदासीन भाव से अनेकों साधनाएँ करते थे और अपने ज्ञान-प्रकाश के कारण उन्होंने सभी इच्छाएँ त्याग दी थीं ॥ ३९३ ॥ संन्यासराज दत्त मुनि तन पर धूप सहन करते हुए अनुपम छवि से युक्त, शिव के समान स्वरूप वाले दृष्टिगोचर होते थे ३९४ उनके अंगों और मुख की छवि अखंड

प्रचंड । आभा अभंग । जुटि जोग जंग । नही मुरत अंग ॥ ३९५ ॥ अति छबि प्रकाश । निस दिन निरास । मुन मन सुबास । गुन गन उदास ॥ ३९६ ॥ अब्यकत जोग । नही कउन सोग । न्तिप्रति अरोग । तजि राज भोग ॥३९७॥ मुन मन क्रिपाल । गुन गन दिआल । सुभि मति सुढाल । द्रिड़ ब्रित कराल ॥ ३९८ ॥ तन सहत सीत । नही मुकत चीत । बहु बरख बीत । जनु जोग जीत ॥ ३९९ ॥ चासंत बात । थरकंत पात । पिअ आत गात । नही बदत बात ॥ ४०० ॥ भंगं भछंत । काछी कछंत । किंग्री बजंत । भगवत अनंत ॥ ४०१ ॥ नही डुलत अंग । मुनि मन अभंग । जुटि जोग जंग । जिम उडत चंग ॥ ४०२ ॥ नही करत हाइ । तप करत चाइ । नितप्रति बनाइ । बहु भगत भाइ ॥ ४०३ ॥ मुख भछत पउन । तजि धाम गउन । मुन रहत मउन (मू०ग्रं०६६२) । सुभ राज भउन ॥ ४०४ ॥ संन्यास देव । मुन मन अभेव । अन जुरि अजेव । अंतरि अतेव ॥ ४०५ ॥ अन भू प्रकाश । नितप्रति उदास । गुन

एवं प्रचंड थी । योगसाधना में लगे हुए उनके अंग मुड़ते नहीं थे ॥ ३९५ ॥ अत्यन्त छवियुक्त वे रात-दिन इच्छातीत बने हुए थे और गुणों और गणों को धारण करते हुए वे मुनि उदासीन भाव से रहते थे ॥ ३९६ ॥ अनिर्वचनीय योग में लीन वे सभी शोकों से परे थे । सभी राजभोगों को त्यागते हुए भी वे सदा निरोग रहते थे ॥३९७॥ वे कृपालु मुनि गुणों से युक्त शुभ मति वाले दृढ़ व्रत वाले एवं दयालु थे ॥ ३९८ ॥ तन पर शीत सहन करते हुए भी उनका मन कभी विचलित नहीं होता था और इसी प्रकार अनेकों वर्ष बिताकर उन्होंने योग को जीता था ॥ ३९९ ॥ वे योगी बात करते तो पत्ते थिरकते थे और प्रभु के गुण जाते हुए एक-दूसरे से विरूप बने रहते थे ॥ ४०० ॥ वे भंग पीते थे, विचरण करते थे, कींग्नी नाद बजाते थे और भगवत्-भजन में लीन रहते थे ॥ ४०१ ॥ उनके अंग और मन दोनों ही अचल रहते थे । वे ध्यान-मग्न होकर योगसाधना में जुटे रहते थे ॥ ४०२ ॥ तपसाधना करते हुए वे कभी भी कष्ट का अनुभव नहीं करते थे और विभिन्न प्रकार के भक्ति-भावों को अपनाते हुए नित्य भक्ति में लीन रहते थे ॥ ४०३ ॥ घरों का परित्याग करनेवाले ये मुनि पवन का आहार करते थे और मौन रहते हुए ये मुनिगण शोभायमान होते थे ॥ ४०४ ॥ संन्यासियों में परमदेव ये मुनिगण अन्तरात्मा की बातों को रहस्यमन मुनिगण थे । ४०५ ॥ वे प्रकाश को

अधिक जास । लख लजत अनास ॥ ४०६ ॥ ब्रहमंन देव । गुन गन अभेव । देवान देव । अनभिख अजेव ॥ ४०७ ॥ संनिआस नाथ । अन धर प्रमाथ । इक रटत गाथ । इक टेक साथ ॥ ४०८ ॥ गुन गनि अपार । मुनि मनि उदार । सुभ मति सुढार । बुधि को पहार ॥ ४०९ ॥ संनिआस भेख । अनि बिख अद्वेख । जापत अभेख । ब्रिध बुधि अलेख ॥४१०॥ ॥ कुलक छंद ॥ धं धकित इंद । चं चकित चंद । थं थकत पउन । भं भजत मउन ॥ ४११ ॥ जं जकित जच्छ । पं पचत पच्छ । धं धकत सिंध । बं बकत बिंध ॥ ४१२ ॥ सं सकत सिंध । गं गकत गिंध । तं तकत देव । अं अकित भेव ॥ ४१३ ॥ लं लखत जोग । भं भ्रमत भोग । बं बकत बैन । चं चकत नैन ॥ ४१४ ॥ तं तजत अत्र । छं छकत छत्र । पं परत पान । भं भरत भान ॥ ४१५ ॥ बं बजत बाद । नं नजत नाद । अं उठत राग । उफटत सुहाग ॥ ४१६ ॥ छं छकत सूर । भं भ्रमत हूर । रं रिझत चित्त । तं तज बित्त ॥ ४१७ ॥ छं छकत जच्छ । भं

अनुभव करनेवाले, नित्य उदासीन बने रहनेवाले गुणों से युक्त और कभी भी नष्ट न होनेवाले थे ॥ ४०६ ॥ ये ब्राह्मणों के भी देव रहस्यमय गुणों के स्वामी देवताओं के देव और भिक्षा आदि न माँगनेवाले थे ॥ ४०७ ॥ संन्यासियों के नाथ ये परम बलशाली लोग थे । कोई इनकी कहानी कहता था तो कोई इनके साथ ही चलता रहता था ॥ ४०८ ॥ ये उदार मुनि अपार गुणों के स्वामी, शुभ मति वाले एवं बुद्धि के भण्डार थे ॥४०९॥ संन्यासी-वेष वाले ये मुनि द्वेष-रहित थे और उस परमात्मा का जाप करते हुए उस वृहद् बुद्धि-शाली, अलक्ष्य परमात्मा में लीन थे ॥ ४१० ॥ ॥ कुलक छंद ॥ इन्द्र और चन्द्र तथा पवन मौन होकर परमात्मा का स्मरण कर रहे थे ॥ ४११ ॥ यक्ष, पक्षी एवं सिंधु चकित होकर कोलाहल कर रहे थे ॥ ४१२ ॥ समुद्र अपनी शक्तियों-समेत उस देवाधिदेव रहस्यमय परमात्मा को देख रहा था ॥ ४१३ ॥ इन योगियों को देखकर भोग-विलासादि चकित होकर भ्रमित हो रहे थे ॥ ४१४ ॥ अस्त्र-शस्त्रों तथा छत्रों को त्यागकर लोग इन मुनियों के चरणों में आ गिर रहे थे ॥ ४१५ ॥ वाद्य बज रहे थे । घनघोर राग नाद की ध्वनि उठ रही थी और गीत गाए जा रहे थे ॥ ४१६ ॥ सूर्य एवं अप्सराएँ अपने आत्म-संयम को त्यागकर इन पर रीझ रही थीं ॥ ४१७ ॥ यक्ष एवं पक्षी इनको देखकर प्रसन्न हो रहे थे और इनके दमन के लिए राजाओं में

भ्रमत पच्छ। भं भिरत भूत। नव निरख रूप ॥ ४१८ ॥
॥ चरपट छंद ॥ गलितं जोगं। दलितं भोगं। भगिवे भेसं। सुफिले देसं ॥ ४१९ ॥ अचल धरमं। अखल करमं। अभ्रिमत जोगो। तज्जित भोगं ॥ ४२० ॥ सुफल करमं। सुब्रित धरमं। कुक्रित हंता। सुगतं गंता ॥ ४२१ ॥ दलितं द्रोहं। मलितं मोहं। सलितं सारं। सुक्रित चारं ॥ ४२२ ॥ भगवे भेसं। सुफलं देसं। सुह्रिदं सरता। कुक्रितं हरता ॥ ४२३ ॥ चक्रित सूरं। बमतं नूरं। एकं जपितं। एकं थपितं ॥४२४॥ राजंत सित्वं। ईसं भजित्वं। जपं जपित्वं। एकं थपित्वं ॥ ४२५ ॥ बजतं नादं। बिदितं रागं। जपतं जापं। त्रसितं तापं ॥ ४२६ ॥ चकित चंदं। धकतं इंदं। तकतं देवं। भकतं भेवं ॥ ४२७ ॥ भ्रमतं भूतं। लखितं रूपं। चक्रतं चारं। सुह्रिदं सारं ॥ ४२८ ॥ नलनी सूअं। लखि अउधूअं। (मू०ग्रं०६६२) चट दे छुटा। भ्रम दे जटा ॥ ४२९ ॥ तकितं देवं। बकितं

भगदड़ मची हुई थी ॥ ४१८ ॥ ॥ चरपट छंद ॥ योग में डूबे हुए और सभी भोगों को नष्ट कर देनेवाले इन योगियों ने विभिन्न देशों के गेरुए वस्त्र धारण कर रखे थे ॥ ४१९ ॥ स्थिर धर्म एवं निष्पाप कर्म करनेवाले इन योगेश्वरों ने सर्व भोगों का त्याग कर रखा था ॥ ४२० ॥ सुव्रती, सुकर्मी ये योगी अच्छी गति वाले और कुकृत्यों का नाश करनेवाले थे ॥ ४२१ ॥ मोह और द्रोह का नाश करनेवाले और सभी पवित्र नदियों के जल के समान सुकृत करनेवाले ये लोग थे ॥ ४२२ ॥ गेरुए वस्त्र वाले देश-देशान्तरों को पवित्र करनेवाले, बुरे कर्मों का नाश करनेवाले ये सब सुहृदय थे ॥ ४२३ ॥ इनके तेज को देखकर सूर्य भी चकित होता था और कोई इनमें जाप कर रहा था तथा कोई उस प्रभु का गुणगान कर रहा था ॥ ४२४ ॥ ईश्वर का भजन करते हुए ये शोभायमान हो रहे थे और जाप करते हुए ये एक ही उस प्रभु की स्थापना मन ही मन कर रहे थे ॥ ४२५ ॥ नाद बज रहे थे, रागों का गायन हो रहा था, प्रभु-जाप किया जा रहा था जिससे सभी पाप डर रहे थे ॥४२६॥ चन्द्रमा चकित था, इन्द्र इन सबकी भक्ति को देखकर भयभीत था। इन्हें सब देवगण निहार रहे थे ॥ ४२७ ॥ भूत-प्रेतादि गण इनके रूप-सौन्दर्य को देखकर चकित थे और सब हृदय से इनकी ओर ध्यान लगाये हुए थे ॥ ४२८ ॥ वहाँ एक नलिनी शुक को अवधूत दत्त ने देखा जो कि देखते-देखते ही बंधन मुक्त होकर उड़ गया ४२९ दत्त देव के देखते ही वह उड़ चला और दत्त

भेवं । दस नव सीसं । करम कदीसं ।। ४३० ।। बुधितं धामं । ग्रिहितं बामं । भ्रमतं मोहं । ममतं मोहं ।। ४३१ ।। ममता बुद्धं । सिरहतं लोगं । अहिता धरमं । लहितह भोगं ।। ४३२ ।। ग्रसतं बुद्धं । ममता मातं । इस्त्री नेहं । पुत्रं भ्रातं ।। ४३३ ।। ग्रसतं मोहं । धरितं कामं । जलतं क्रोधं । पलितं दामं ।। ४३४ ।। दलतं ब्योधं । तकितं दावं । अंतह नरकं । गंतह पावं ।। ४३५ ।। तजितं सरबं । ग्रहितं एकं । प्रभतं भावं । तजितं द्वैखं ।। ४३६ ।। नलिनी सुकि ज्यं । तजितं दिरबं । सफलो करमं । लहितं सरबं ।। ४३७ ।।

।। इति नलिनी सुक उनीसवों गुरू बरननं ।। १९ ।।

अथ शाह बीसवो गुरू कथनं ।।

।। चौपई ।। आगे चला दत्त जटधारी । बाजत बेण बिखाण अपारी । असथावर लखि चेतन भए । चेतन देख

को यह रहस्य समझा चला कि कर्म करनेवाला मनुष्य दस इन्द्रियों और नौ द्वारों वाला जीव-शिरोमणि है ।। ४३० ।। वह बुद्धि का धाम है परन्तु स्त्री आदि की मोह-ममता में पड़कर भ्रम में पड़ा रहता है ।। ४३१ ।। व्यक्ति बुद्धि और ममता के जाल में पड़ा हुआ धर्म से विहीन और भोगों में लीन रहता है ।। ४३२ ।। माता, स्त्री, पुत्र और भाई के स्नेह में उसकी बुद्धि ग्रस्त रहती है ।। ४३३ ।। काम को धारण करते हुए वह मोह में लीन रहता है और क्रोध की अग्नि में जलते हुए सदैव धन आदि इकत्र करने में जुटा रहता है ।।४३४।। मौक़ा पाते ही वह अपने स्वार्थ के लिए बड़े-बड़े शूरवीरों का नाश कर देता है और इस प्रकार अन्त में नरकगामी होता है ।। ४३५ ।। यदि सबका त्याग कर केवल एक परमात्मा को भावपूर्वक स्वीकार किया जाय तो सभी दु:ख और द्वेष का त्याग हो जाता है ।। ४३६ ।। नलिनी शुक के पिंजरा त्यागने की तरह यदि जीव भी सब कुछ त्याग दे तो उसके सारे कर्म सफल हो जायँ और वह सर्वश्रेष्ठ को प्राप्त कर सकता है ।। ४३७ ।।

।। इति नलिनी शुक उन्नीसवाँ गुरु-वर्णन ।। १९ ।।

व्यापारी बीसवाँ गुरु-कथन

चौपाई तब जटाधारी दत्त आगे चले वेणु आदि वाद्य बज रहे

चक्रित ह्वै गए ॥ ४३८ ॥ महा रूप कछु कहा न जाई । निरख चक्रित रही सकल लुकाई । जित जित जात पथहि रिख गयो । जानुक प्रेम मेघ बरखयो ॥ ४३९ ॥ ॥ चौपई ॥ तह इक लख शाह धनवाना । महा रूप धरे दिरब निधाना । महा जोति अरु तेज अपारू । आप घड़ा जानुक मुखि चारू ॥ ४४० ॥ बिक्रिअ बीच अधिक सवधाना । बिन बिपार जिन अउर न जाना । आस अनुरक्त तास ब्रित लागा । मानहु महा जोग अनुरागा ॥ ४४१ ॥ तहा रिख गए संगि संन्यासनि । कई छोहनी जात नही गनि । ताके जाइ द्वार पर बैठे । सकल मुनी मुनराज इकैठे ॥ ४४२ ॥ शाह सु दिरब ब्रित लग रहा । रिखन ओर तिन चित्यो न कहा । नेत्र मीच कैए धनि आसा । ऐस जानिअत महा उदासा ॥ ४४३ ॥ तह जे हुते राव अरु रंका । पुन पग परे छोर कै शंका । तिह बैपार करम कर भारी । रिखिअन और न द्रिष्टि पसारी ॥ ४४४ ॥ तास देख करि दत्त प्रभाऊ । प्रगट कहा

थे । दत्त को देखकर जड़ पदार्थ चेतन होने लगे और चेतन चकित होने लगे ॥ ४३८ ॥ उनके महान रूप-सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता जिसे देखकर सारी सृष्टि आश्चर्यमय हो रही थी । जिस-जिस मार्ग पर भी ऋषि गये, ऐसा लगने लगा मानो प्रेम का बादल बरस रहा हो ॥ ४३९ ॥ ॥ चौपाई ॥ वहाँ उन्होंने एक धनवान व्यापारी को देखा जो अत्यन्त सौन्दर्य-युक्त एवं द्रव्य का भण्डार था । वह महान तेजस्वी था और ऐसा लग रहा था कि मानो ब्रह्मा ने उसे स्वयं बनाया हो ॥ ४४० ॥ वह अपनी बिक्री के प्रति अत्यन्त सावधान था और ऐसा लग रहा था कि मानो व्यापार के अतिरिक्त वह और कुछ जानता ही नहीं । आशाओं में अनुरक्त उसकी वृत्ति व्यापार में लगी हुई थी और वह महान योगी की तरह दिखाई दे रहा था ॥ ४४१ ॥ मुनि वहाँ संन्यासियों और असंख्य सेवकों के साथ पहुँचे । उस व्यापारी के दरवाज़े पर कई मुनिगणों के साथ मुनिराज दत्त बैठे ॥ ४४२ ॥ व्यापारी का मन धन कमाने में इतना लीन था कि उसने मुनियों की तरफ तनिक भी ध्यान नहीं दिया । आँखें बन्द किये हुए वह धन की आशा में ही इस प्रकार लीन था कि मानो कोई उदासीन साधू बैठा हो ॥ ४४३ ॥ वहाँ जो भी राजा और निर्धन थे वे सब शंकाओं को छोड़कर मुनियों के चरणों पर आ पड़े, परन्तु यह व्यापारी अपने कर्म में इतना तल्लीन था कि इसने मुनियों की तरफ आँख भी नहीं देखा ४४४ दत्त ने उसकी एव

तजकै हठ भाऊ । ऐस प्रेम प्रभ संग लगइऐ । तब ही पुरख पुरातन पइऐ ॥ ४४५ ॥ (मू०ग्रं०६६४)

॥ इति शाह बीसवो गुरू समापतं ॥

अथ सुक पड़ावत नर इकीसवों गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ बीस गुरू करि आगे चला । सीखे सरब जोग की कला । अति प्रभाव अमितोजु प्रतापू । जानुक साध फिरा सभ जापू ॥ ४४६ ॥ लिए बैठ देखा इक सूआ । जिह समान जगि भयो न दूआ । ताकहुँ नाथ सिखावत बानी । इक टक परा अउर ना जानी ॥ ४४७ ॥ संग लए रिख सैन अपारी । बडे बडे मोनी ब्रतिधारी । ताके तीर तीर चलि गए । तिन नर ए नही देखत भए ॥ ४४८ ॥ सो नर सुकहि पड़ावत रहा । इनै कछू मुख ते नही कहा । निरखि निठुरता तिन मुनराऊ । पुलक प्रेम तन उपजा चाऊ ॥ ४४९ ॥ ऐसो नेहु नाथ सौ लावै । तब ही परमपुरख कह पावै ।

प्रभाव को देखकर अपना हठ त्यागते हुए प्रकट रूप से कहा कि यदि इस प्रकार का प्रेम प्रभु के साथ लगाया जाय तभी उस परमपुरुष परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है ॥ ४४५ ॥

॥ इति व्यापारी बीसवाँ गुरु समाप्त ॥

तोते को पढ़ाता हुआ व्यक्ति इक्कीसवाँ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ बीस गुरु धारण कर योग की सर्वकलाओं को सीखकर मुनि दत्त आगे चले । उनका प्रताप, प्रभाव एवं तेज अपरिमित था और ऐसा लग रहा था कि मानो सभी साधनाओं को साधकर वे जप करते हुए भ्रमण कर रहे हैं ॥ ४४६ ॥ वहाँ उन्होंने एक व्यक्ति तोते को लिये हुए बैठा देखा जिसके समान अन्य कोई संसार में नहीं था । उस तोते को वह व्यक्ति बोलना सिखा रहा था और इतना एकाग्रचित्त था कि उसे अन्य कुछ भी मालूम नहीं पड़ रहा था ॥ ४४७ ॥ दत्त ऋषियों की और बड़े-बड़े मौनी व्रतधारियों की अपार सेना लेकर उसके पास से चल कर गये, परन्तु उस व्यक्ति ने इनमें से किसी को नहीं देखा ॥ ४४८ ॥ वह व्यक्ति तोते को ही पढ़ाता रहा और इन लोगों से कुछ नहीं बोला । उस व्यक्ति की निष्ठुरता देखकर मुनिराज के मन में प्रेम जाग उठा ४४९ ऐसा प्रेम यदि कोई परमात्मा से करे तब ही उस

इकीसवाँ गुरु ताकह कीआ। मन बच करम मोल जनु लीआ ॥ ४५० ॥

॥ इति इक्कीसवो गुरू सुक पड़ावत समापतं ॥ २१ ॥

अथ हरबाहत बाईसवो गुरू कथनं ॥

॥ चौपई ॥ जब इकीस कर गुरू सिधारा। हर बाहत इक पुरख निहारा। ताकी नार महा सुख कारी। पति की आस हिए जिह भारी ॥ ४५१ ॥ भत्ता लए पान चलि आई। जनुक नाथ ग्रहि बोल पठाई। हरबाहत तिन कछू न लहा। त्रिय को ध्यान नाथ प्रति रहा ॥ ४५२ ॥ मुनि पति संगि लए रिख सैना। मुख छब देख लजत जिह मैना। तीर तीर ताके चल गए। मुन पति बैठ रहत पछ भए ॥ ४५३ ॥ ॥ अनूप नराज छंद ॥ अनूप गात अतिभुतं बिभूत सोभतं तनं। अछिज्ज तेज जाजुलं अनंत मोहतं मनं। ससोभ बस्त्र रंगतं सुरंग गेरू अंबरं। बिलोक देव दानवं ममोह गंध्रबं नरं ॥४५४॥ जटा बिलोक जान्हवी जटी समान जानई। बिलोकि लोक लोकिणं

परमपुरुष को प्राप्त कर सकता है। मन वचन और कर्म से उसके सामने समर्पित होकर मुनि ने उसे इक्कीसवाँ गुरु धारण किया ॥ ४५० ॥

॥ इति इक्कीसवाँ गुरु शुक पढ़ावत समाप्त ॥ ॥ २१ ॥

हलवाहा बाईसवाँ गुरु-कथन

॥ चौपाई ॥ जब इक्कीस गुरु धारण कर दत्त आगे बढ़े तो उन्होंने हल चलाते हुए एक व्यक्ति को देखा। उसकी स्त्री महान सुखदायिनी और पतिव्रता थी ॥ ४५१ ॥ उसके पति ने उसे बुलवा भेजा था और वह भोजन लेकर चली आई थी। हल चलाते हुए उस व्यक्ति ने भी कुछ नहीं देखा और स्त्री का ध्यान भी पति में ही लगा रहा ॥ ४५२ ॥ मुनिराज मुनियों की सेना साथ लेकर चल रहे थे और उनके मुख की छवि को देखकर कामदेव भी लजा रहा था। मुनिगण उनके पास से होकर चले और मुनिराज वहाँ बैठ भी गये ॥ ४५३ ॥ ॥ अनूप नराज छंद ॥ मुनियों का शरीर अद्भुत एवं उनकी विभूतियाँ अद्वितीय थीं। उनका तेज अक्षय था और वे अनन्त मनों को मोहने वाले थे। उनके वस्त्र गेरुए रंग में सुन्दर रूप से रँगे हुए शोभायमान हो रहे थे, जिन्हें देखकर देव-दानव, नर-गन्धर्व सभी विमोहित हो रहे थे ॥ ४५४ ॥ मुनि की जटा को देखकर गंगा उन्हें शिव-रूप में जान रही थी और समस्त

अलोकि रूप मानई । बजंत चार किंगुरी भजंत भूत भै धरं । पपात जच्छ किंन्रणी ममोह मान नी मनं ॥ ४५५ ॥ बचित्र नारि चित्नणी पवित्र चित्नणं प्रभं । रीझ जच्छ गंध्रबं सुरारि नारि सु प्रभं । कड़ंत क्रूर किंन्रणी हसंत हास कामणी । लसंत दंतणो दुतं खिमंत जाणु दामणी ॥ ४५६ ॥ दलंत पाप (मू०ग्रं०६६५) दुभरं चलंत मोन सिमरं । सुभंत भार गर्बं पटं बिअंत तेज उफणं । परंत पान भूचरं भ्रमंत सरब तो दिसं । तजंत पाप नरबरं चलंत धरमणो मगं ॥ ४५७ ॥ बिलोक बीरणो दयं अरुज्झ छत्र करमणं । तजंति साइकं सितं कटंत टूक बरमणं । थथंम भानणो रथं बिलोक कउतकं रणं । गिरंत जुद्धणो छितं बमंत स्रोणतं मुखं ॥ ४५८ ॥ फिरंत चक्रणो चकं गिरंत जोधणो रणं । उठंत क्रोध कै हठी ठठुकिक क्रुद्धितं भुजं । भ्रमंत अद्ध बद्धतं कमद्ध बद्धतं कटं । परंत भूतलं भटं बकंत मारुड़ै रटं ॥ ४६४ ॥ पिपंत असवं भटं भिरंत दारणो रणं । बहंत तीछणो सरं झलंत झाल खड़गिणं ।

लोकों के जीव उन्हें अलौकिक रूप-सौन्दर्य वाला मान रहे थे । सुन्दर किंगरी बजाते हुए भयभीत होकर सभी जीव उनका जाप कर रहे थे और यक्ष और किन्नरियाँ सभी विमोहित हो रही थीं ॥ ४५५ ॥ सुन्दर चित्नणी स्त्रियाँ उस निर्मल प्रभु पर रीझकर यक्ष-गन्धर्व और देवस्त्रियों के साथ उस प्रभु का जाप कर रही थीं । क्रूर किन्नर-स्त्रियाँ कुढ़ रही थीं और अन्य कामिनियाँ हँसते हुए अपनी दन्त-पंक्ति को इस प्रकार शोभायमान कर रही थीं कि मानो बिजली को शर्मिन्दा कर रही हों ॥ ४५६ ॥ उनको देखकर विकट पापों का नाश होता था और स्वतः ही परमात्मा का मौन स्मरण चल निकलता था । उनके शरीर पर उफनते हुए तेज को सँभालनेवाले वस्त्र शोभा दे रहे थे और सभी दिशाओं के जीव भ्रमण करते हुए वहाँ आकर उनके चरणों में गिर रहे थे । सभी व्यक्ति पापों को त्यागकर वहाँ पहुँचकर धर्म के मार्ग पर चल पड़ते थे ॥ ४५७ ॥ वहाँ उन्होंने दो वीर क्षत्रिय-कर्म में अर्थात् युद्ध में लीन देखे और योद्धा धनुषों को त्याग रहे थे तथा कवचों को काट रहे थे । उस युद्ध को देखकर सूर्य का रथ भी वहाँ रुक गया और वहाँ पर धरती पर वीर गिरते हुए मुख से रक्त फेंक रहे थे ॥ ४५८ ॥ युद्ध में चक्र चल रहे थे और योद्धा गिर रहे थे । हठी योद्धा पुनः क्रोधित होकर उठ रहे थे । आधे कटे हुए वे कबन्ध रूप में भ्रमण कर रहे थे और धरती पर गिरते हुए मार-मार की रट लगा रहे थे ॥ ४५९ ॥ शूरवीरों के घोड़े उस दारुण युद्ध में भिड़ रहे थे और

उठंत मारड़ो रणं बकंत मारणो मुखं। चलंत भाजि ना हठी जुझंत दुद्धरं रणं ॥ ४६० ॥ कटंत कारमं सुभं बचित्र चित्रतं क्रितं। सिलेणि उज्जलो क्रितं बहंत साइकं सुभं। बिलोक मोनिसं जुधं चचउध चक्रतं भवं। स्रमोह आश्रमं गतं पपात भूतलं रिसं ॥ ४६१ ॥ सभार भार बसनिनं जजप्पि जापणो रिखं। निहारि पान पै परा बिचार बाइसवो गुरं। बिअंत जोगणो सधं असंख पापणो दलं। अनेक चेलका लए रिखेश आसनं चलं ॥ ४६२ ॥

॥ इति हरबाहता बाईसवो गुरू इसत्री भात लै आई समापतं ॥ २२ ॥

अथ त्रिआ जच्छणी तेईसमो गुरू कथनं ॥

॥ अनूप नराज छंद ॥ बजंत नाद दुद्धरं उठंत निशनं सुरं। भजंत अरि दितं अघं बिलोक भारगवं भिसं। बिलोक कंचनं गिरंत तज्ज मानुखी भुअं। ससुहक तापसी तनं अलोक लोकणो बपं ॥ ४६३ ॥ अनेक जच्छ गंध्रबं बसेख बिधि का

उस युद्ध में तीखे तीर चल रहे थे तथा खड्गों की चमचमाहट दिखाई पड़ रही थी। योद्धा मुख से मार-मार पुकारते हुए उठ रहे थे और उस युद्धस्थल से हठपूर्वक नहीं भाग रहे थे ॥ ४६० ॥ विचित्र प्रकार से सभी एक-दूसरे को काट रहे थे और शिला के समान उज्ज्वल तीरों का बहाव बह रहा था। उस युद्ध को देखकर सारा संसार चौंधिया और चकित हो रहा था और मोह-वश उस आश्रम की ओर चलते हुए धरती पर गिर पड़ रहा था ॥ ४६१ ॥ वह स्त्री बर्तन सिर पर उठाते हुए ऋषि के समान अपने पति का जाप करती हुई चली आ रही थी और मुनि ने उसे देखकर उसके पाँव पर गिरते हुए उसे बाईसवाँ गुरु धारण किया। अनन्त योग-साधनाओं को करनेवाले और अनेक पापों का नाश करनेवाले अनेक शिष्यों को लेकर मुनिवर अपने धाम को चल पड़े ॥ ४६२ ॥

॥ इति हल चलानेवाली बाईसवीं गुरु स्त्री भात ले आनेवाली समाप्त ॥ २२ ॥

यक्षणी स्त्री तेईसवाँ गुरु-कथन

॥ अनूप नराज छंद ॥ नगाड़े बज रहे थे और घनघोर नाद हो रहा था। भगवे वेश को देखकर पापों के झुंड नष्ट हो रहे थे। मानवीय धरती पर सोना बरसता प्रतीत हो रहा था और तपस्वियों के शरीर अलौकिक प्रभा से युक्त थे ॥ ४६३ ॥ अनेकों यक्ष, गंधर्व, नागकन्याएँ एवं देवस्त्रियाँ नृत्य कर

धरी । निरक्त नागणी महा बसेख बासवी सुरी । पबित्र परम पारबती अनूप आलका पती । असक्त आपितं महा बिसेख आसुरी सुरी ।। ४६४ ।। अनूप एक जच्छणी ममोह रागणो मनं । घुमंत घूरणं छितं लगंत सारंगो सरं । बिसार नेह गेहणं सनेह रागणो मनं । म्रिगी सजाणु घूमतं क्रितेण क्रिस क्रितीसरं ।। ४६५ ।। रझीझ रागणो चितं बढंत राग सु प्रभं । बजंत किंगुरी करं ममोह आश्रमं गतं । ससज्जि साइकं सितं कपंत कामणो कलं । भ्रमंत भूतलं भलं भुगंत भामणी (मू०पं०६६६) दलं ।। ४६६ ।। ।। तोमर छंद ।। गुनवंत सील अपार । दस चार चार उदार । रस राग सरब सपंनि । धरणी तला महि धंनि ।। ४६७ ।। ।। तोमर छंद ।। इक राग गावत नार । गुणवंत सील अपार । सुख धाम लोचन चार । संगीत करत बिचार ।। ४६८ ।। दुति मान रूप अपार । गुणवंत सील उदार । सुख सिंध राग निधान । हरि लेत हेरत प्रान ।।४६९।। ।। तोमर छंद ।। अकलंक जुब्बन मान । सुख सिंध सुंदर थान । इक चित्त गावत राग । उफटंत जान सुहाग ।। ४७० ।।

रही थीं। वहाँ पार्वती एवं अनुपम कुबेर की पत्नी भी थी। सुर-असुर-स्त्रियाँ सभी वहाँ शोभायमान हो रही थीं ।। ४६४ ।। वहाँ एक अनुपम यक्षणी थी, जो बाण लगी होने की तरह चक्रवात की तरह घूम रही थी। सभी प्रकार की आसक्तियों को त्यागकर उनका मन केवल संगीत में लीन था। वह मृगी के समान भाव-विह्वल विचरण कर रही थी ।। ४६५ ।। वह राग-रागिनियों में लीन गायन कर रही थी और प्रेमपूर्वक किंगरी बजाती हुई आश्रम की ओर गई। वह कामिनी अपनी कलाओं के बाणों से सज्जित थी और उन सभी सुन्दर स्त्रियों का दल पृथ्वी का भोग कर रहा था ।। ४६६ ।। ।। तोमर छंद ।। वह गुणवान, सुशील, चौदह विद्याओं में निपुण, सर्व रागों में प्रवीण धरती पर धन्य-धन्य कहलाने की पात्र थी ।। ४६७ ।। ।। तोमर छंद ।। शील-युक्त गुणवान एक स्त्री राग का गायन कर रही थी। वह सुख देनेवाली और उसके नयन सुन्दर थे। वह विचारपूवक संगीत का गायन कर रही थी ।। ४६८ ।। वह सौन्दर्यशालिनी परम उदार और शीलवान थी। वह संगीत की भंडार स्त्री जिस ओर भी देख लेती थी प्राण हर लेती थी ।।४६९।। ।। तोमर छंद ।। वह निष्कलंक मानिनी, युवती सुख का समुद्र थी। वह एकाग्रचित्त होकर गायन कर रही थी और शुभ गीत उसके अंदर से उछलते हुए प्रतीत हो रहे थे ४७० उसे देखकर योगीराज ने अपने योगियों को

तिह पेख कै जटि राज। संग लीन जोग समाज। रहि रीझ आपन चित्त। जुन राज जोग पवित्त ॥ ४७१ ॥ इह भाँति जो हरि संग। हित कीजिऐ अनरंग। तब पाइऐ हरिलोक। इह बात मै नही शोक ॥ ४७२ ॥ चित चउप सो भर चाइ। गुर जान कै पर पाइ। चित तउन के रस भीन। गुर तेईसवो तिह कीन ॥ ४७३ ॥

॥ इति जछणी नार राग गावती गुरू तेईसवो समापतं ॥ २३ ॥

अथ चौबीसवो अवतार कथनं ॥

॥ तोमर छंद ॥ तब बहुत बरख प्रमान। चड़ि मेर स्रिग महान। किअ घोर तपसा उग्र। तब रीझए कछु सुग्र ॥४७४॥ जग देख कै बिवहार। मुनराज कीन बिचार। इन कउन सो उपजाइ। फिर लेत आप मिलाइ ॥ ४७५ ॥ तिह चीनिऐ करि ग्यान। तब होइ पूरण ध्यान। तिह जाणिऐ जत जोग। तब होइ देह अरोग ॥ ४७६ ॥ तब एक पुरख पछान। जग नास जाहिन जान। सत जगत को पति देख। अनभउ अनंत

एकत्र किया और वे सभी उस पवित्र योगिनी को देखकर प्रसन्न होने लगे ॥ ४७१ ॥ योगीराज सोचने लगे कि इस प्रकार सभी ओर से उदासीन होकर यदि परमात्मा के साथ मन लगाया जाय, तभी शोकरहित होकर उस हरि प्रभु को प्राप्त किया जा सकता है ॥ ४७२ ॥ मुनि चित्त में उत्साहित होकर उसे गुरु मानकर उसके चरणों पर गिर पड़े। उसके प्रेम-रस में मग्न होकर मुनिराज ने उसे तेईसवाँ गुरु धारण किया ॥ ४७३ ॥

॥ इति यक्षणी स्त्री गानेवाली तेईसवाँ गुरु समाप्त ॥ २३ ॥

चौबीसवाँ अवतार-कथन

॥ तोमर छंद ॥ तब बहुत वर्षों तक सुमेरु पर्वत पर चढ़कर मुनि ने घोर तप किया और सारग्राही के रूप में प्रसन्नता अनुभव की ॥ ४७४ ॥ जगत का व्यवहार देखकर मुनि ने विचार किया कि कौन है जो इस जगत को उत्पन्न करता है और पुन: अपने में मिला लेता है ॥ ४७५ ॥ जब ज्ञान के माध्यम से उसे पहचाना जाय तभी तपस्या पूर्ण होगी। योग के माध्यम से उसे जाना जाय तभी देह (और मन) पूर्ण आरोग्य होंगे ॥ ४७६ ॥ तभी एक परम तत्त्व की पहचान होगी कि वह ही जगत का नाश करनेवाला है। वही जगतपति

अभेख ।। ४७७ ।। बिन एक नाहिन शांति । सभ तीरथ कियुं न अन्हात । जब सेवि होइ कि नाम । तब होइ पूरण काम ।। ४७८ ।। बिन एक चौबिस फोक । सभ ही धरा सभ लोक । जिन एक कउ पहिचान । तिन चउबिसो रस मान ।। ४७९ ।। जो एक के रस भीन । तिन चउबिसो रस लीन । जिन एक को नही बूझ । तिह चउबिसै नही सूझ ।। ४८० ।। जिन एक कौ नही चीन । तिन चउबिसै फल हीन । जिन एक को पहिचान । तिन चउबिसै रस मान ।। ४८१ ।। ।। बचित्र पद छंद ।। एकहि जउ मन आना । दूसर भाव न जाना । दुंदभ (सू०सं०६६७) बउर बजाए । फूल सुरन बरखाए ।। ४८२ ।। हरखै सभ जटधारी । गावत देदे तारी । जित तित डोलत फूले । ग्रहि के सभ दुख भूले ।। ४८३ ।। ।। तारक छंद ।। बहु बरख जबै तपसा तिह कीनी । गुरदेव क्रिआ सु कही धर लीनी । तब नाथ सनाथ हुइ ब्योत बताई । तब ही दसो दिस सूझ बनाई ।।४८४।। दिज देव तबै गुर चउबिस कै कै । गिर मेर

सत्य है और वही परम अनुरति एवं सर्व वेशों से परे है ।।४७७।। उस एक के बिना शांति नहीं मिलेगी और सभी तीर्थों पर स्नान व्यर्थ हो जायगा। जब उसकी सेवा कर उसका नाम-स्मरण किया जायगा तभी सर्वकामनाएँ पूर्ण होंगी ।। ४७८ ।। उस एक बिना चौबीसों अवतार सभी लोक निरर्थक हैं। जिसने एक को पहचान लिया, वह चौबीसों में भी आनन्द लेता हुआ रसमग्न रहेगा ।। ४७९ ।। जो एक के रस में रँग गया, वह चौबीसों अवतारों की लीलाओं में आनन्द ले लेगा। जिसको एक परमात्मा की पहचान नहीं है, वह चौबीसों के भेद को भी नहीं जान सकता ।। ४८० ।। जिसने एक को नही पहचाना उसके लिए चौबीसों निष्फल हैं। एक को अनुभव कर पहचान लेने वाला चौबीसों के आनन्द को अनुभव कर लेता है ।। ४८१ ।। ।। विचित्र पद छंद ।। मुनि ने एक में मन लगा लिया और दूसरा भाव मन में नहीं आने दिया, तब दुंदुभियाँ बजाते हुए देवगण फूलों की वर्षा करने लगे ।। ४८२ ।। मुनि प्रसन्न होकर तालियाँ बजाते हुए गाने लगे। वे घर के अपने दुःखों को भूल कर प्रसन्न मन से इधर-उधर विचरण करने लगे ।। ४८३ ।। ।। तारक छंद ।। इस प्रकार जब बहुत वर्षों तक तपस्या की और जिस प्रकार गुरु ने आज्ञा दी, मुनियों ने वही सब क्रियाएँ कीं। मुनिनाथ ने बहुत सी विधियाँ बताईं और इस प्रकार दसों दिशाओं के ज्ञान की बुद्धि प्राप्त की। ४८४

गए सभ ही मुन लैकै । तपसा जब घोर तहा तिन कीनी । गुरदेव तबै तिह या सिख दीनी ॥ ४८५ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ गिर मेर गए रिख बालक लै । धर सीस जटा भगवे पटकै । तप घोर करा बहु बरख दिना । हरि जाप न छोरस एक छिना ॥ ४८६ ॥ दस लच्छ सु बीस सहंस्र बरखं । तप कीन तहाँ बहु भाँत रिखं । सभ देसन देस चलाइ मतं । मुनि देव महाँ मत गूड़ गतं ॥ ४८७ ॥ रिख राज दशा जब अंत भई । बल जोगहु ते मुनि जान लई । धूअरो जग धउलुर जान जटी । कछु अउर क्रिआ इह भाँत ठटी ॥४८८॥ सधिकै पवनं रिख जोग बलं । तज चाल कलेवर भूमि तलं । कल फोर उताल कपाल कली । तिह जोति सु जो तिह मद्धि मिली ॥४८९॥ कलकाल क्रवाल कराल लसै । जग जंगम थावर सरब कसै । जग कालहि जाल बिसाल रचा । जिह बीच्र फसे बिन को न बचा ॥४९०॥ ॥ सवैया ॥ देश बिदेश नरेशन जीत अनेश बडे अवनेश सँघारे । आठोई सिद्ध सभै नवनिधि सम्रिद्धन सरब भरे ग्रहि सारे । चंद्रमुखी बनिता बहुतै घरि माल भरे नही जात सँभारे । नाम

इस प्रकार चौबीस गुरु धारण कर सभी मुनियों को लेकर सुमेरु पर्वत पर गये । वहाँ उन्होंने घोर तपस्या की और तब गुरुदेव दत्त ने उन सबको यह शिक्षा दी ॥ ४८५ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ सिर पर जटाएँ और तन पर गेरुए वस्त्र धारण कर ऋषि-बालकों को साथ लेकर वे सुमेरु पर्वत पर गये वहाँ उन्होंने कई वर्षों तक घोर तपस्या की और हरि का जाप एक क्षण के लिए भी नहीं छोड़ा ॥४८६॥ दस लाख बीस हजार वर्षों तक वहाँ ऋषियों ने विभिन्न प्रकार से तपस्या की । सब देश-देशान्तरों में उस महान मुनिदेव के रहस्यमय मतों का प्रचलन किया ॥४८७॥ जब ऋषिराज का अन्तिम समय आया तो योगबल से मुनिराज ने जान लिया । तब उस जटाधारी मुनि ने इस संसार को धुएँ के बादल के समान समझकर एक अन्य क्रिया करने की योजना बनाई ॥ ४८८ ॥ योग-बल से वायु की साधना करके शरीर त्यागकर मुनिराज इस धरती से चल पडे । कपाल फोड़कर उनकी ज्योति उस परम ज्योति में जा मिली ॥४८९॥ काल अपनी विकराल कृपाण लिये हुए सभी प्रकार के जीवों पर उसे सदैव ताने रहता है । काल ने इस जगत रूपी विशाल जाल की रचना की है, जिसमें फँसे बिना कोई भी नहीं बचा है ॥ ४९० ॥ ॥ सवैया ॥ इस काल ने देश-विदेश एवं इस धरती के बड़े-बड़े सम्राटों का संहार किया है, जिसके पास आठों सिद्धियाँ नवनिधियाँ सर्व प्रकार की समृद्धि चन्द्रमुखी स्त्रियाँ अपरिमित

बिहीन अधीन भए जम अंति को नागे ही पाइ सिधारे ॥ ४६१ ॥ रावन के महिरावन के मन के नल के चलते न चली गउ। भोज दिलीपत कौ रवि कै नही साथ दयो रघुनाथ बली कउ। संगि चली अब लौ नही काहू के साच कहौ अघ अउघ दली सउ। चेत रे चेत अचेत महा पसु काहू के संगि चली न हली हउ ॥ ४६२ ॥ साच औ झूठ कहे बहुतै बिध काम करोध अनेक कमाए। भाज न लाज बचा धन के डर लोक गयो परलोक गवाए। दुआदस बरख पड़ा न गुड़्यो जड़ राजिबलोचन नाहिन पाए। लाज बिहीन (मू०ग्रं०६६८) अधीन गहे जम अंत कौ नागे ही पाइ सिधाए ॥ ४६३ ॥ काहे कउ बस्त्र धरो भगवे मुन ते सभ पावक बीच जलैगी। क्यों इम रीत चलावत हो दिन द्वैक चलै सभदा न चलैगी। काल कराल की रीत महाँ इह काहू जुगेस छली न छलैगी। सुंदरि देहि तुमारी महामुनि अंति नसान ह्वै धूर रलैगी ॥ ४६४ ॥ काहे कौ पउन भछो सुनि हो मुनि पउन भछे कछु हाथ न ऐहै। काहे को बस्त्र करो

द्रव्य था। ये सब प्रभुनाम-स्मरण से विहीन अन्त में यम के वश होकर नंगे ही पाँव इस संसार से चले गए हैं ॥ ४६१ ॥ रावण, महिरावण आदि की भी इसके सामने नहीं चली। राजा भोज, सूर्यवंशी दिल्लीपति राजाओं एवं महाबली रघुनाथ आदि का भी इसने साथ नहीं दिया। पापों के पुंजों का नाश करनेवालों का भी इसने साथ नहीं दिया। इसलिए, हे महान पशु रूपी अचेत मन ! तू होश में आ, पर समझ कि काल ने किसी को भी अपना नहीं माना ॥ ४६२ ॥ सच, झूठ बोलकर अनेक प्रकार से जीव ने काम-क्रोध का अर्जन किया, धन की कमाई और संचय के लिए निर्लज्ज होकर जीव ने लोक और परलोक गँवा दिया। बारह वर्षों तक विद्या तो प्राप्त की परन्तु उसका मनन नहीं किया और राजीव-लोचन उस प्रभु को प्राप्त नहीं कर सका। निर्लज्ज जीव को अन्त में यमराज पकड़ लेंगे और इसे नंगे पाँव ही यहाँ से जाना होगा ॥ ४६३ ॥ हे मुनियो ! क्यों गेरुए वस्त्र धारण करते हो। इन सबको तो अन्त में अग्नि में ही जलना होगा। क्यों इस प्रकार की रीतियाँ चलाते हो जो सदैव नहीं चलती रहेंगी। विकराल काल की महान रीति को कोई भी नहीं छल सकेगा। हे मुनि ! तुम्हारी सुन्दर देह अन्त में श्मशान की धूल में जा मिलेगी ॥ ४६४ ॥ हे मुनि ! तुम क्यों पवन का ही आहार कर रहे हो। ऐसा करने से भी कुछ हाथ नहीं लगेगा। गेरुए वस्त्र धारण करने से भी तुम उस परम पद परमात्मा को नहीं प्राप्त कर सकते। वेद पुराण

भगवा इन बातन सो भगवान न ह्वैहै । बेद पुरान प्रमान कै देखहु ते सभ ही बस काल सभै है । जार अनंगन नंग कहावत सीस की संगि जटाऊ न जैहै ॥ ४९५ ॥ कंचन कोट गिर्‌यो कहु काहे न सातवो सागर क्यों न सुकानो । पशचम भान उद्‌यो कहु काहे न गंग बही उलटी अनमानो । अंति बसंत तप्यो रवि काहे न चंद समान दिनीस प्रमानो । क्यों डुमडोल डुबीन धरा मुनिराज निपातनि त्यों जग जानो ॥४९६॥ अत्र परासर नारद सारद ब्यास ते आदि जिते मुन भाए । गालब आदि अनंत मुनीश्वर ब्रहमहूँ ते नही जात गनाए । अगस्त पुलस्त बशिष्ट ते आदि न जान परे किह देस पठाए । मंत्र चलाइ बनाइ महा अति फेरि मिले पर फेर न आए ॥ ४९७ ॥ ब्रहम निरंध्र को ढोर मुनीश की जोति सु जोतिके मद्धि मिलानी । प्रीत रली परमेशर सौ इम बेदन संगि मिलै जिम बानी । पुंन कथा मुनि नंदन की कहिकै मुख सो कबि स्याम बखानी । पूरन ध्याइ भयो तब ही जय स्री जगनाथ भवेस भवानी ॥ ४९८ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे दत्त महातम रुद्रावतार प्रबंध समापतं सुभं भवेत गुरू चउबीस ॥ २४ ॥

इत्यादि सबके प्रमाणों को देखो तो तुम पावोगे कि सभी काल के वश हैं। काम को जलाकर तुम अनंग कहला सकते हो, परन्तु तुम्हारे सिर के साथ तो तुम्हारी जटाएँ भी नहीं जा सकेंगी अर्थात् ये सब यहीं नष्ट हो जायगा ॥ ४९५ ॥ बेशक सोने के क़िले धूल में मिल जायँ, सातों समुद्र सूख जायँ, सूर्य पश्चिम में उदित हो जाय, गंगा उलटी बहने लगे, वसन्त ऋतु में सूर्य तपाने लगे, सूर्य चन्द्र के समान ठंडा हो जाय, कच्छप पर स्थित धरती हिलने लगे परन्तु फिर भी हे मुनिराज, काल के प्रभाव से जगत का नाश होना निश्चित है ॥ ४९६ ॥ आत्रेय, पाराशर, नारद, शारद, व्यास आदि इतने मुनीश्वर हुए हैं, जिन्हें ब्रह्मा भी नहीं गिन सकता । अगस्त्य, पुलस्त्य, वशिष्ठ आदि न जाने कितने मुनि हुए, परन्तु पता भी नहीं लग सका कि वे किस ओर चले गये । उन्होंने मंत्र बनाये और अनेक मतों की स्थापना की, परन्तु भव-चक्र में वे ऐसे विलीन हुए कि पुनः उनका पता न चल सका ॥ ४९७ ॥ ब्रह्मरन्ध्र को फोड़कर मुनिराज की ज्योति उस परमज्योति में जा मिली । उनका प्रेम परमेश्वर के साथ इस प्रकार मिल गया जैसे वेद में सर्व प्रकार की वाणियाँ अन्तर्भुक्त हो जाती हैं, इस प्रकार नन्दन मुनि दत्त की कथा का वर्णन कवि श्याम ने किया है । जगन्नाथ, जगत्‌माता (शक्ति) की जय के साथ यह अध्याय सम्पूर्ण होता है ॥ ४९८ ॥

॥ इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथ के दत्त माहात्म्य रुद्रावतार प्रबन्ध की समाप्ति ॥ २४ ॥

१ ओं अथ पारसनाथ रुद्र अवतार कथनं ॥ पातिशाही १० ॥

॥ चौपई ॥ इह बिध दत्त रुद्र अवतारा । पूरण मत को कीन पसारा । अंत जोत सो जोति मिलानी । जिह बिधि सो पारब्रहम भवानी ॥ १ ॥ एक लच्छ दस बरख प्रमाना । पाछे चला जोग को बाना । ग्यारव बरख बितीतत भयो । पारसनाथ पुरख भुअ बयो ॥ २ ॥ रोह (मू०ग्रं०६६१) देस सुभ दिन भल थानू । पारसनाथ भयो सुर ग्यानू । अमित तेज असि अवर न होऊ । चक्रत रहे मात पित दोऊ ॥३॥ दसऊ दिसनि तेज अति बढा । द्वादस भान एक ह्वै चढा । दहदिस लोक उठे अकुलाई । भूपत तीर पुकारे जाई ॥ ४ ॥ सुनो भूप इक कहौ कहानी । एक पुरख उपज्यो अभिमानी । जिह सम रूप जगत नही कोई । एकै घड़ा बिधाता सोई ॥ ५ ॥ कै गंध्रब जच्छ कोई अहा । जानुक दूसर भान चड़ रहा । अति जोबन झमकत तिहँ अंगा । निरखत जम के लजत अनंगा ॥ ६ ॥ भूपत देखन काज बुलावा । पहिले द्योस

पारसनाथ रुद्र-अवतार-कथन

॥ चौपाई ॥ इस प्रकार रुद्र का दत्त अवतार हुआ और उसने अपने मत का प्रसार किया। अन्त में परमब्रह्म की इच्छा के अनुरूप उनकी ज्योति परमज्योति में मिल गई ॥ १ ॥ उनके बाद एक लाख दस वर्ष तक योग-मार्ग चला। ग्यारहवाँ वर्ष व्यतीत होते ही पारसनाथ का जन्म धरती पर हुआ ॥ २ ॥ शुभ दिन, शुभ स्थान और देश में उनका जन्म हुआ और पारसनाथ परमज्ञानी तथा तेजस्वी थे। उनके समान तेज वाला अन्य कोई नहीं था और उन्हें देखकर माता-पिता चकित थे ॥ ३ ॥ दसों दिशाओं में उनका तेज फैलने लगा और ऐसा लग रहा था मानो बारह सूर्य एक बनकर चमक रहे हों। दसों दिशाओं के लोग व्याकुल हो उठे और राजा के पास जाकर दुहाई देने लगे ॥ ४ ॥ हे राजा! सुनिए, हम आप से एक कहानी कहते हैं। एक अभिमानी पुरुष पैदा हुआ है और उसके समान रूपवान अन्य कोई नहीं है। ऐसा लग रहा है, मानो विधाता ने स्वयं उसे बनाया हो ॥ ५ ॥ वह या तो कोई यक्ष-गंधर्व है अथवा ऐसा लग रहा है मानो दूसरा सूर्य उदित हुआ हो उसका शरीर यौवन से ऐसा रहा है कि कामदेव भी उसे

साथ चल आवा । हरख ह्रिदे धर के जटधारी । जानुक दुती दत्त अवतारी ॥ ७ ॥ निरख रूप काँपे जटधारी । यह कोऊ भयो पुरख अवतारी । यह मत दूर हमारा कैहै । जटाधार कोई रहै न पैहै ॥ ८ ॥ तेज प्रभाव निरख तब राजा । अति प्रसंनि पुलकत चित गाजा । जिह तिह लखा रहै बिसमाई । जानुक रंक नवोनिधि पाई ॥ ९ ॥ मोहन जाल सभन सिरि डारा । चेटक बान चकित ह्वै मारा । जह तह मोहि सकल नरि गिरे । जान सुभट सामुहि रण भिरे ॥ १० ॥ नर नारी जिह जिह तह पेखा । तिह तिह मदन रूप अविरेखा । साधन सरब सिद्धि कर जाना । जोगन जोग रूप अनमाना ॥ ११ ॥ निरख रूप रनवास लुभाना । देतह सुता न्रिपत मन माना । न्रिप को भयो जबै जामाता । महा धनुखधर बीस बिख्याता ॥ १२ ॥ महा रूप अरु अमित प्रतापू । जानु जपै है आपन जापू । शस्त्र शास्त्र बेता सुरि ग्याना । जा सम पंडित जगत न आना ॥ १३ ॥ फोरि बहिक्रम बुद्धि बिसेखा ।

देखकर लज्जित हो रहा है ॥ ६ ॥ राजा ने देखने के लिए उन्हें बुलाया और वे पहले ही दिन बुलानेवालों के साथ चले आए । राजा उस जटाधारी को देखकर हृदय में प्रसन्न हुआ और उसे लगा कि मानो यह दत्त का दूसरा अवतार है ॥ ७ ॥ उसका स्वरूप देखकर जटाधारी मुनि काँप उठे और यह सोचने लगे कि यह कोई अवतारी पुरुष है, यह हमारे मत को समाप्त कर देगा । कोई भी जटाधारी नहीं बच सकेगा ॥ ८ ॥ राजा भी उसका तेज प्रभाव देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ । जिसने भी उसे देखा, ऐसे प्रसन्न हुआ मानो किसी निर्धन को नौ निधियाँ (अक्षय सम्पत्ति) प्राप्त हो गई हों ॥ ९ ॥ सने सब पर मोहिनी जाल डाल दिया था और सभी चकित होकर मारे जा रहे थे । मोहित होकर सभी लोग जहाँ-तहाँ ऐसे गिर पड़े मानो युद्ध में भिड़ रहे वीर गिर पड़े हों ॥ १० ॥ जिस नर-नारी ने भी उसे देखा उसे कामदेव का स्वरूप माना । साधु उसे सिद्धि के रूप में और योगी-योग के रूप में मानने लगे ॥ ११ ॥ रानियों का झुंड भी उसे देखकर मोहित हो उठा और राजा ने भी उससे अपनी पुत्री का विवाह करने का निश्चय कर लिया । वह जब राजा का दामाद बन गया तो वह महाँ धनुषधारी वीर के रूप में विख्यात हो गया ॥ १२ ॥ वह अत्यन्त रूपवान अमित प्रतापशाली अपने में ही मस्त था । वह शास्त्र एवं शस्त्रवेत्ता था और उसके समान पंडित संसार में कोई नहीं था १३ वह बाहरी विपत्तियों से न मानो मनुष्य शरीर

जानुक धरा बितन यहि भेखा । जिह जिह रूप तवन का लहा । सो सो चमक चक्रित हुइ रहा ॥ १४ ॥ ॥ सवैया ॥ मान भरे सर सान धरे मठ सान चड़े असि स्रोणति साए । लेत हरे जिह डीठ परे नहो फोरि फेरि ग्रहि जान न पाए । झीन झरे जन से लहरे इह भाँत गिरे जनु देखन आए । जास हिरे सोऊ मैन घिरे गिर भूम परे न उठंत उठाए ॥ १ ॥ १५ ॥ सोभत जान सुधासर सुंदर काम के मानहु कूप सुधारे । लाजि के जान जहाज (मू०ग्रं०६७०) बिराजत हेरत ही गिर लेत हकारे । हुउ चहुकुंट भ्रम्यो खग ज्यों इन के सम रूप न नैक निहारे । पारथ बान कि जुब्बन खान कि काल क्रिपान कि काम कटारे ॥ २ ॥ १६ ॥ तंत भरे किधौ जंत्र जरे अर मंत्र हरे चख चीनत याते । जोबन जोत जगे अति सुंदर रंग रँगे मद से मदुआते । रंग सहाब कि फूल गुलाब से सीखे हैं जोरि करोरक घाते । माधुरी मूरति सुंदर सूरत हेरति ही हर लेत हिया ते ॥ ३ ॥ १७ ॥ पान चबाइ सींगार बनाइ सुगंध लगाइ सभा जब आवै । किन्नर जच्छ भुजंग चराचर देव अदेव दोऊ

धारी कोई यक्ष हो । जिसने भी उसका रूप देखा वह आश्चर्यचकित ठगा-सा रह गया ॥ १४ ॥ ॥ सवैया ॥ रुधिर से सनी तलवार की तरह वह गौरवशाली था । जिसको भी उसने देखा वह वापस घर तक पलट कर नहीं जा सका । जो भी उसे देखने आया वह झूमकर वहीं धरती पर गिर पड़ा । जिसे भी उसने देखा वह कामदेव के बाणों से फिर गया और वहीं भूमि पर गिरकर तड़फने लगा और उठकर नहीं जा सका ॥ १ ॥ १५ ॥ ऐसा लग रहा था कि मानो काम के भंडार खुल गए हों और पारसनाथ चन्द्रमा के समान सुन्दर शोभायमान हो रहे थे । लज्जा के मानो जहाज़ लदे खड़े हों और वे देखते ही सबको मोहित कर लेते थे । चारों दिशाओं में पक्षियों के समान घूमनेवाले व्यक्ति यह कह रहे थे कि इनके समान रूपवान हमने नहीं देखा है । यह अर्जुन के बाण के समान घातक है, यौवन की खान है, काल की कृपाण के समान सबको वश में करनेवाले है अथवा काम की कटारी हैं ॥ २ ॥ १६ ॥ उनको देखते ही तंत्र-मंत्र और यंत्र का प्रभाव समाप्त हो जाता है और उनकी आँखें यौवन की ज्योति से जगमगाती हुई अत्यंत सुन्दर एवं मदमस्त लगती हैं । उनकी आँखें गुलाब के फूलों के समान करोड़ों को मार डालनेवाली हैं तथा उनका सुन्दर स्वरूप दीखते ही मन मोहित हो जाता है ३ १७ पान शरीर को सुगंध आदि से मंडित कर जब वे

बिसमावै। मोहित जे महि लोगन मानहि मोहत तउन महा सुख पावै। वारहि हीर अमोलक चीर तिया बिन धीर सभै बल जावैं ॥ ४ ॥ १८ ॥ ॥ स्वैया ॥ रूप अपार पड़े दस चार मनो असुरार चतुर चक जान्यो। आहव जुकत जितीक हुती जग सरबन मै सभ ही अनमान्यो। देसि बिदेसन जीत जुधांबर क्रित चंदोव दसो दिस तान्यो। देवन इंद्र गोपीन गोबिंद निसा कर चंद समान पछान्यो ॥ ५ ॥ १९ ॥ चउधित चार दिसा भई चक्रत भूँम अकाश दुहूँ पहिचाना। जुद्ध समान लख्यो जग जोधन बोधन बोध महा अनुमाना। सूर समान लखा दिन कै तिह चंद सरूप निसा पहिचाना। रानिनि राव सवानिनि साव भवानिनि भाव भलो मन माना ॥ ६ ॥ २० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ बिते बरख द्वै अष्ट मासं प्रमानं। भयो सु प्रभं सरब बिद्यानिधानं। जपै हिंगला ठिंगला पाण देवी। अनासा धुधा अन्नधारी अभेखी ॥ २१ ॥ जपै तोतला सीतला खग्ग पाणी। भ्रमा भैंहरी भीम रूपा भवाणी। चला चल

सभा में आते थे तो किन्नर, यक्ष, नाग, चराचर, देव-दानव सभी आश्चर्यचकित हो जाते थे। मानवीय नारियाँ और पुरुष उन पर मुग्ध होकर परमसुख को प्राप्त करते थे और उन पर धैर्य की सीमा लाँघते हुए बहुमूल्य वस्त्र एवं हीरे-मोती न्योछावर करते थे ॥ ४ ॥ १८ ॥ ॥ सवैया ॥ अपार स्वरूप वाले इस चौदह विद्याओं में निपुण पारसनाथ पर इन्द्र भी चकित था। पारसनाथ ने युद्ध की सभी कलाओं को जान लिया और देश-विदेशों को जीतकर दसों दिशाओं में अपनी विजय का झंडा फहरा दिया। देवताओं ने इन्द्र के रूप में और गोपियों ने कृष्ण के रूप में तथा रात्रि ने उसे चन्द्रमा के रूप मे जाना ॥ ५ ॥ १९ ॥ चौदहवीं के चाँद के समान प्रकाशित पारसनाथ ने चारो दिशाओं को चकित कर दिया तथा भूमि और आकाश में सब जगह वे प्रसिद्ध हो गए। योद्धाओं ने उसे योद्धा के रूप में तथा ज्ञानियों ने उसे ज्ञानी के रूप में पहचाना। दिन ने उसे सूर्य के समान और रात्रि ने उसे चन्द्रमा के समान समझा। रानियों ने उसे राजा के समान, अन्य स्त्रियों ने उसे पति के समान और देवियों ने उसे प्रेम-भाव के समान समझा ॥ ६ ॥ २० ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ दो वर्ष और आठ माह बीते और सब विद्याओं का भंडार पारसनाथ संप्रभुता सम्पन्न राजा के रूप में जाना जाने लगा। वह हिंगलाज देवी एवं शस्त्रधारी दुर्गा का जाप स्मरण करने लगा २१ शीतला भवानी आदि देवियों की पूजा-अर्चा होने लगी और चमचमाते अस्त्र शस्त्र ढाल छत्र हास

सिघं झमाझंम अबं । हहा हूहि हासं झला झल्ल छबं ॥ २२ ॥ अटा अट्टि हासं छटा छुटकेसं । असं ओप पानं नभो क्रूर भेसं । सिरं माल स्वच्छं लसै दंत पंतं । भजै शत्र गूड़ं प्रफुलंत संतं ॥२३॥ अलिपात अरधी महा रूप राजै । महा जोत ज्वालं करालं बिराजै । भ्रमै दुष्ट पुष्टं हसै सुध साधं । भजो पान दुरगा अरूपी अराधं ॥ २४ ॥ सुने उसतती भी भवानी क्रिपालं । अधं उरधवी आप रूपी रसालं । दए इस्त्र धी द्वै अभंगं खतंगं । परैस्यंधरं जान लोहं सुरंगं ॥ २५ ॥ जबै (मू०ग्रं०६७१) शस्त्र साधी सभै शस्त्र पाए । उधारे चुमे कंठ सीसं छुहाए । लख्यो सरब रावं प्रभावं अपारं । अजोनी अजै बेद बिद्या बिचारं ॥ २६ ॥ ग्रिहीत्वा जबै शस्त्र अस्त्रं अपारं । पड़े अनभवं बेद बिद्या बिचारं । पड़े सरब बिद्या हुती सरब देसं । जिते सरब देसी सु अस्त्रं नरेसं ॥ २७ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ पठे कागदं देस देसं अपारी । करी आन कै बेद बिद्या बिचारी । जटी दंड मुंडी तपी ब्रहमचारी । सधी स्रावगी बेद

विलास उसकी शोभा बढ़ाने लगे ॥ २२ ॥ उसके अट्टहासों और केशों की छवि सुन्दरतम दीखने लगी और बिजली के समान तलवार उसके हाथों में चमकने लगी । उसने शिर पर स्वच्छ माला धारण कर रखी थी और उसकी दंत-पंक्ति शोभायमान हो रही थी । उसे देखकर शत्रु भाग खड़े होते थे और सत प्रसन्न होते थे ॥२३॥ वह महान स्वरूपवान राजा के वेश में शोभायमान होने लगे और विकराल ज्योतिज्वाला उन पर विराजमान होने लगी । दुष्ट उसको देखकर भ्रमित होने लगे तथा साधुगण प्रसन्न मन से मुस्कराने लगे । वह अरूप एवं रहस्यमयी दुर्गा की आराधना करने लगा ॥ २४ ॥ अपनी स्तुति सुनकर भवानी उस पर प्रसन्न हो गई और उसे सब ओर से अनुपम स्वरूप प्रदान किया । उसे दो अचूक अस्त्र दिए, जिससे लौह-कवच वाले शत्रु भी धराशायी हो सकते थे ॥ २५ ॥ शस्त्रों की साधना करनेवाले इस राजा ने जब शस्त्र प्राप्त किए तो उसने इन शस्त्रों को चूमा और उन्हें गले और शिर से लगाया । सभी राजाओं ने उस अजेय, वेद-विद्या के पारंगत पारसनाथ के प्रभाव को देखा ॥२६॥ अपार अस्त्र, शस्त्रों को प्राप्त कर उसने वेद-विद्या के विचार का अनुभव भी प्राप्त किया । सर्व देशों की विद्याओं का उसने अध्ययन किया और अपने अस्त्र, शस्त्रों के बल पर सभी देश के राजाओं को जीत लिया ॥ २७ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ उसने देश-देशान्तरों में वेद-विद्या के विचार विमर्श हेतु विद्वानों एव ऋषि-मुनियों को आमन्त्रित किया

बिद्या बिचारी ॥ २८ ॥ हकारैं सभै देस देसा नरेसं । बुलाए सभै मोन मानी सुबेसं । जटाधार जेते कहूँ देख पइयै । बुलावै तिसै नाथ भाखै बुलइयै ॥ २९ ॥ फिरे सरब देसं नरेसं बुलावैं । मिलै ना तिसै छत्र छोणी छिनावैं । पठै पत्र एकै दिशा एक धावै । जटी दंड मुंडी कहूँ हाथ आवै ॥ ३० ॥ रच्यो जग्ग राजा चले सरब जोगी । जहाँ लउ कोई बूढ बारो सभोगी । कहा रंक राजा कहा नार होई । रच्यो जग्ग राजा चल्यो सरब कोई ॥ ३१ ॥ फिरे पत्र सरबत्र देसं अपारं । जुरे सरब राजा न्रिपं आन द्वारं । जहाँ लौ हुते जगत मै जटाधारी । मिलै रोहबेसं भए भेख भारी ॥ ३२ ॥ जहाँ लउ हुते जोग जोगिष्ट साधे । मिले सुख बिभूतं सु लंगोट बाधे । जटा सीस धारे निहारे अपारं । महा जोग धारं सु बिद्या बिचारं ॥ ३३ ॥ जिते सरब भूपं बुले सरब राजा । चहूँ चक्क मो दान नीशान बाजा । मिले देस देसान आनेक मंत्री । करै साधना जोग बाजंत तंत्री ॥ ३४ ॥ जिते सरब भूमिसथली

बुलाये जानेवालों में जटाधारी, दंडी, मुंडी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, साधक एवं वेद-विद्या को पढ़नेवाले अन्य लोग भी थे ॥ २८ ॥ सभी देश-देशान्तरों के राजा मौनी साधुओं आदि सबको बुलाया । जहाँ भी कोई जटाधारी दिखाई पड़ता उसे पारसनाथ की आज्ञा के अनुसार बुला लिया जाता ॥ २९ ॥ सर्व देशों के राजाओं को बुलाया गया और जो दूतों को मिलने से इन्कार करता था उसका छत्र और सेना छीन ली जाती थी । सभी दिशाओं में पत्र और व्यक्ति भेजे गए, ताकि जहाँ जिसको जो जटाधारी, दंडी, मुंडी कोई हाथ लगे ले आये ॥ ३० ॥ फिर राजा ने एक यज्ञ किया जिसमें सभी योगी, बालक, बूढे, राजा, रंक, पुरुष, स्त्री शामिल होने के लिए चल पड़े ॥ ३१ ॥ सर्व देशों में निमंत्रण भेजे गए और सभी राजा पारसनाथ के दरवाजे पर आ पहुँचे । जगत में जितने भी जटाधारी थे वे सभी एकत्र होकर राजा के पास आ पहुँचे ॥ ३२ ॥ योग-साधन करनेवाले योगी तथा भभूत-लँगोटधारी सभी मुनि वहाँ सुखपूर्वक रहने लगे । वहाँ अनेकों महायोगी, विद्या-विचारक तथा योगी, जटाधारी दिखाई देने लगे ॥ ३३ ॥ जितने भी राजा थे उन सबको पारसनाथ ने बुलाया और चारों दिशाओं में उसके दान-पुण्य का डंका बजने लगा । देश-देशान्तरों के अनेकों मंत्री वहाँ एकत्र हो गए और योग-साधना करनेवाले योगियो के वाद्य-तंत्र बजने लगे ३४ उस स्थान पर जितने

संत आए । तिते सरब पारसनाथं बुलाए । दए भाँत आनेक भोज अरघ बानं । लजी पेखि देविसथली मोन मानं ॥ ३५ ॥ करै बैठ कै बेद बिद्या बिचारं । प्रकाशो सभै आपु आपं प्रकारं । टकं टक्क लागी मुखं मुखि पेख्यो । सुन्यो कान होतो सु तो आँखि देख्यो ॥ ३६ ॥ प्रकाशो सभै आप आपं पुराणं । रड़ो देसि देसाण बिद्या मुहाणं । करो भाँत भाँतं सु बिद्या बिचारं । त्रिभै चित्त दै कै महा त्रास टारं ॥ ३७ ॥ जुरे बंगसी राफजी रोह रूमी । चले बालखी छाड कै राज भूँमी । त्रिभै भिंभरी काशमीरी कंधारी । किकै काल माखी कसे कास (मू०ग्रं०६७२) कारी ॥३८॥ जुरे दच्छणी शस्त्र बेता अर्‌यारे । द्रुजं द्रावड़ी तपत तइलंग वारे । परं पूरबी उत्तदेसी अपारं । मिले देस देसेण जोधा जुझारं ॥ ३९ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ इह भाँत बीर बहु बीर जोर । मत देस देस राजा करोर । दै हीर चीर बहु दरब साज । सनमान दान बहु भाँत राज ॥ ४० ॥ अनभै अभंग अवधूत छत्र । अनजीत जुध बेता अस्त्र । अनगंज सूर अबिकल जुझार । रण रंग अभंग जित्ते हजार ॥ ४१ ॥ सभ देस देस के जीत राव । कर क्रुद्ध जुद्ध नाना उपाव । कै साम

भी संत आये थे उन सबको पारसनाथ ने अपने पास बुलाया । उन्हें अनेक प्रकार का भोजन एवं दान आदि दिए, जिसे देखकर देवस्थली भी लज्जित होने लगी ॥३५॥ सभी वहाँ बैठकर अपने-अपने ढंग से वेद-विद्या पर विचार-विमर्श करने लगे । सबने एकटक होकर विस्मयपूर्वक एक-दूसरे को देखा और जो कुछ कभी कान से सुना था उसे आज आँख से देख भी लिया ॥ ३६ ॥ सबने अपने-अपने पुराण स्थापित किए और स्वदेश की विद्याओं को पढ़ने लगे । वे सभी अभय चित्त होकर विभिन्न प्रकार से विद्याओं पर विचार करने लगे ॥ ३७ ॥ वहाँ सब बंग देश के निवासी, राफजी, रुहेले, रुमी, बलक्षी, कश्मीरी, कंधारी तथा कई कालमुखी संन्यासी एवं हठी एकत्र हुए ॥ ३८ ॥ दक्षिणी शस्त्रवेत्ता तथा द्रविड़ एवं तैलंग विद्वान् भी वहाँ एकत्र हुए । इन सबके साथ पूर्व एवं उत्तर देश-देशान्तरों के अनेकों योद्धा भी वहाँ आ एकत्र हुए ॥ ३९ ॥ ॥ पाधरी छंद ॥ इस प्रकार बहुत से वीरों और देश-देशान्तरो के राजाओं को (पारसनाथ ने) इकट्‌ठा किया और उन सबको बहुत धन-द्रव्य और वस्त्र देकर सबका सम्मान किया ॥ ४० ॥ वहाँ अनेकों छत्रधारी, अभय, अवधूत थे । अजेय योद्धा और अस्त्र-शस्त्रवेत्ता, अभंजनशील, शूरमा अनेकों महाबली, जिन्होंने हजारों युद्ध जीते थे, उपस्थित थे ॥ ४१ ॥ पारसनाथ ने

दाम अरु दंड भेद। अवनीप सरब जोरे अछेद ॥ ४२ ॥ जब सरब भूप जोरे महान। जै जीत पत्र दिनो निशान। दै हीर चीर अनभंग दिरब। महिपाल मोहि डारे सु सरब ॥४३॥ इक दि्योस बीत पारस्व राइ। उत्तिस्ट देव पूजंत जाइ। उसतति किन बहु बिध प्रकार। सो कहों छंद मोहण मझार ॥ ४४ ॥ ॥ मोहणी छंद ॥ जै देवी भेवी भावाणी। भउ खंडी दुरगा सरबाणी। केसरी आबाही कउमारी। भैखंडी भैरवि उद्धारी ॥ ४५ ॥ अकलंका अत्री छत्राणी। मोहणीअं सरबं लोकाणी। रकतांगी सांगी साविती। परमेस्त्री परमा पाविती ॥ ४६ ॥ तोतलीआ जिह्बा कउमारी। भव भरणी हरणी उद्धारी। त्रिग रूपा भूपा बुद्धाणी। जै जंपै सुद्धं सिद्धाणी ॥ ४७ ॥ जग धारी भारी भगतायं। कर धारी भारी मुकतायं। सुंदर गोफणिआ गुरबाणी। ते बरणी हरणी भामाणी ॥ ४८ ॥ झिमरिआ जच्छं सरबाणी। गंधरबी

नाना प्रकार के उपाय और युद्ध करके देश-देशान्तरों के राजाओं को जीत लिया था। साम-दाम-दण्ड और भेद के बल से इसने सबको मिलाया और अपने अधीन कर लिया ॥ ४२ ॥ जब सभी राजाओं को महान पारसनाथ ने एकत्र कर लिया और उन सबने इन्हें विजयपत्र दे दिया तो पारसनाथ ने उन सबको अनन्त द्रव्य और वस्त्र आदि देकर मोहित कर लिया ॥ ४३ ॥ एक दिन पारसनाथ उठकर देवी की पूजा करने के लिए गए। उन्होंने देवी की विभिन्न प्रकार से पूजा की जिसका वर्णन मैं मोहनी छंद के माध्यम से करता हूँ ॥४४॥ ॥ मोहनी छंद ॥ हे भय को नाश करनेवाली, भवसागर से पार उतारनेवाली, सिंह की सवारी करनेवाली, भयभंजन, उद्धारकर्ता, भैरवी, दुर्गा! तेरी जय हो ॥४५॥ तुम निष्कलंक, अस्त्रों को धारण करनेवाली क्षत्राणी, सर्व लोकों को मोहित करनेवाली, रक्तांगों वाली सती साविती और परम पवित्र परमेश्वरी हो ॥४६॥ तुम मृदु वचन करनेवाली कुमारी हो और सांसारिक दुःख-क्लेशों का हरण कर सबका उद्धार करनेवाली हो। तुम सौन्दर्ययुक्त बुद्धियुक्त राजेश्वरी हो और हे सर्वसिद्धियों को प्राप्त करनेवाली तुम्हारी जय हो ॥ ४७ ॥ हे जगत को धारण करनेवाली! भक्तों के लिए श्रेष्ठ तुम हाथों में भारी अस्त्र-शस्त्र लिये हुए हो। तुम्हारे हाथ में घूमनेवाली गदाएँ सुन्दर रूप से शोभायमान हैं और उनके बल पर तुम सर्वश्रेष्ठ दिखाई पड़ रही हो ॥ ४८ ॥ यक्ष-किन्नरों में तुम श्रेष्ठ और गन्धर्व तथा सिद्ध भी तुम्हारे चरणों में विद्यमान रहते हैं। तुम्हारा स्वरूप इस प्रकार निर्मल है मानो

सिद्धं चाराणी । अकलंक सरूपं निरमलिअं । घग मद्धे मानो चंचलिअं ।। ४९ ।। असपाणं माणं लोकायं । सुख करणी हरणी शोकायं । दुष्टहंती संतं उद्धारी । अनछेदा भेदा कउमारी ।। ५० ।। आनंदी गिरजा कउमारी । अनछेदा भेदा उद्धारी । अनगंज अभंजा खंकाली । म्रिगणी रूपं उज्जाली ।। ५१ ।। रकतांगी रुद्रा पिंगाछी । कटि कछी स्वछी हुलासी । रकताली रामा धउलाली । मोहणीआ माई खंकाली ।। ५२ ।। जगदानी मानी भावाणी । सवखंडी दुरगा देवाणी । रुद्रागी रुद्रा रकतागो । परमेसरी माई (मू०ग्रं०६७२) धरमागो ।। ५३ ।। महिखासुर दरणी महिपाली । चिछुरासुर हंती खंकाली । असि पाणी माणी देवाणी । जै दाती दुरगा भावाणी ।। ५४ ।। पिंगाछी परमा पावित्री । सावित्री संध्या गाइत्री । भै हरणी भीमा भामाणी । जै देवी दुरगा देवाणी ।। ५५ ।। दुरगा दल गाही देवाणी । भै खंभी सरबं भूताणी । जै चंडी मुंडी शत्र हंती । जै दाती माता जै

बादल में बिजली हो ।। ४९ ।। हाथ में कृपाण धारण किए हुए तुम संतजनों को सम्मान देनेवाली और सुख देते हुए शोक का नाश करनेवाली हो। दुष्टों का नाश करनेवाली, संतों का उद्धार करनेवाली तुम अक्षय कौमार्य का भण्डार हो ।। ५० ।। तुम आनन्द देनेवाली गिरिजाकुमारी हो और कभी न नाश होनेवाली, सबका नाश करनेवाली तथा सबका उद्धार करनेवाली हो। तुम अभंजनशील कालीदेवी हो, परन्तु साथ ही साथ तुम उज्ज्वल स्वरूप वाली मृगनयनी भी हो ।। ५१ ।। हे रक्ताभ अंगों वाली रुद्र-पत्नी तुम सबको काटने वाली परन्तु फिर भी स्वच्छ और आनन्ददायिनी हो। तुम क्रियात्मकता और सत्त्वगुण की स्वामिनी, मोहिनी और खड्ग धारण करनेवाली काली हो ।।५२।। जगत को दान करनेवाली संसार का नाश करनेवाली तुम दुर्गादेवी हो। तुम रुद्र के वामांग पर विराजमान होनेवाली रक्ताभवरणी तुम परमेश्वरी और धर्मधारणी माता हो ।। ५३ ।। तुम महिषासुर को मारनेवाली चछरासुर का हनन करनेवाली काली धरती की पालन करनेवाली हो। तुम देवियों का गौरव हाथ में कृपाण धारण करनेवाली तथा विजयदात्री दुर्गा माता हो ।। ५४ ।। तुम भूरी आँखों वाली परमपवित्र पार्वती, सावित्री और गायत्री हो। तुम भय का हरण करनेवाली भीमाकार देवी दुर्गा हो, तुम्हारी जय हो ।। ५५ ।। युद्ध में दलों का मंथन करनेवाली, सबके भय का खण्डन करनेवाली हे चण्ड और मुण्ड नामक शत्रुओं को मारनेवाली दुर्गामाता ! तुम

अंती ॥ ५६ ॥ संसरणी तरणी लोकाणी । भिभरणी दरणी दइताणी । केकरणी कारण लोकाणी । दुखहरणी देवं इंद्राणी ॥ ५७ ॥ सुंभ हंती ज्यंती खंकाली । कंकड़िआ रूपा रकताली । तोतलीआ जिहवा सिधुनिआ । हिंगुलिआ माता पिंगुलिआ ॥ ५८ ॥ चंचाली चित्ता चित्तांगी । भिभरिआ भीमा सरबांगी । बुध भूपा कूपा जुज्वाली । अकलंका माई भ्रिमाणी ॥ ५९ ॥ उछलै लंकड़िआ छलाला । भिभरिआ भैरो भउहाला । जै दाता माता जै दाणी । लोकेसी दुरगा भावाणी ॥ ६० ॥ संमोही सरबं जगतायं । निद्रा छुध्या पिपासायं । जै कालं रात्री सक्राणी । उधारी भारी भगताणी ॥ ६१ ॥ जै माई गाई बेदाणी । अनछिज्जा अभिद्दा अखि दाणी । भै हरणी सरबं संताणी । जै दाता माता क्रिपाणी ॥ ६२ ॥ ॥ अचकड़ा छंद ॥ अंबका तोतला सीतला साकणी । सिधुरी सु प्रभा सुभ्रमा डाकणी । सावजा संभिरी सिधला दुख हरी । सुंभिला संभिला सुप्रभा

विजयदात्री हो, तुम्हारी जय हो ॥ ५६ ॥ संसार से पार करनेवाली और घूम-घूमकर सबका दलन करनेवाली, सब लोकों की कारणस्वरूपा हे दुर्गा ! तुम इन्द्राणी के दुःखों को दूर करनेवाली हो ॥ ५७ ॥ तुम शुंभ को मारकर जीतनेवाली रक्त के रंग वाली कालीदेवी हो और तुम ही मधुर जिह्वा से शब्द उच्चारण करनेवाली हो और तुम्हें ही हिंगलाज, पिंगलाज माता के नाम से जाना जाता है ॥५८॥ तुम चित्र के समान सुन्दर अंगों वाली हो और तुम्हारे सर्वांग विशाल हैं। तुम बुद्धि का भंडार हो और तेज का मानो कूप हो। हे माता ! तुम विनम्र और निष्कलंक हो ॥ ५९ ॥ हनुमान भी तुम्हारे बल पर और भैरव भी तुम्हारे बल पर उछलते और भ्रमण करते हैं। हे माता ! तुम विजयदात्री हो, सर्वलोकों की स्वामिनी और भव-चक्र से पार करनेवाली दुर्गा हो ॥ ६० ॥ हे देवी ! तुमने सर्व जगत को निद्रा, क्षुधा और पिपासा में विमोहित कर रखा है। हे काल ! रात्रि और इन्द्राणी के समान देवी तुम भक्तों का उद्धार करनेवाली हो ॥ ६१ ॥ वेदों ने भी माँ तुम्हारा जय-गान किया है। तुम अभेद्य, अभंजनशील हो; तुम सर्व संतों को भय का हरण करनेवाली, विजय देनेवाली तथा कृपाण धारण करनेवाली हो ॥ ६२ ॥ ॥ अचकड़ा छंद ॥ हे देवी ! तुम अंबिका, शीतला और मदमस्त होकर ठीक से न बोल सकनेवाली हो। तुम सिंधु के समान प्रभावशाली तथा डाकिनी हो तुम शभरी मुद्रा करनेवाली तथा दु:खहर्ता हो तुम सबमे रमी हुई

दुधरी ।। ६३ ।। भावना भै हरी भूतिली भैहरा । टाकणी झाकणी साकणी सिंधुला । दुधरा द्रुमखा द्रुकटा दुधरी । कंपिला जंपिला हिंगुला भैहरी ।। ६४ ।। चितणी चापणी चारणी चच्छणी । हिंगुला पिंगुला गंध्रबा जच्छणी । बरमणी चरमणी परधणी प्रासणी । खड़गणी गड़गणी सैंथणी सापणी ।। ६५ ।। भीमड़ा समदड़ा हिंगला कारतकी । सु प्रभा अछिदा अछरा मारतकी । गिंगली हिंगली ठिंगली पिंगला । चिक्कणी चरकटा चरपटा चाँवडा ।। ६६ ।। ।। अचकड़ा ।। ।। त्व प्रसादि ।। अछिद्दा अभिद्दा असित्ता अद्धरी । अकिट्टा अखड्डा अछट्टा दुद्धरी । अंजनी अंबका अस्त्रणी धारणी । अच्छरं अधरा जगति उधारणी ।। ६७ ।। अंजनी गंजनी (मू०ग्रं०६७४) साकड़ी सीतला । सिधरी सु प्रभा सामला तोतला । संभरी गंभरी अंभरी अकटा । दुसला

सबका भला करनेवाली, सुप्रभा तथा सबका नाश करनेवाली हो ।। ६३ ।। सबकी भावना-स्वरूप और समस्त भूतल का भय दूर करनेवाली तुम हो। तुम सबके टुकड़े करनेवाली, सबसे संबंधित तथा समुद्र के समान गहन गम्भीर हो। तुम दोधारी तलवार हो, दो मुखों वाली दुर्गा तथा कभी न काटी जा सकनेवाली हो। तुम ही सबका भय दूर करनेवाली हिंगलाज हो जिसका सब जाप करते हैं ।। ६४ ।। तुम ही शेर की सवारी करनेवाली सुन्दर नेत्रों वाली हो। तुम ही हिंगलाज, पिंगलाज, गन्धर्व-स्त्री तथा यक्षणी हो। तुम ही कवचों को नाश करनेवाली हो और तुम ही खड़ग लेकर गर्जना करनेवाली नागिन के समान बरछी हो ।। ६५ ।। तुम ही विशालकाय वाली मानिनी हो, तुम ही हिंगलाज और कार्तिकेयी देवी हो। तुम ही सुप्रभा से युक्त, कभी न नष्ट होनेवाली तथा सभी मृत्युओं का आधार हो। गिंगलाज, हिंगलाज, ठिंगलाज, पिंगलाज तुम्हारे विभिन्न नाम हैं। तुम्हीं चपल गति वाली चामुंडा हो ।। ६६ ।। ।। अचकड़ा ।। ।। तेरी कृपा से ।। हे देवी ! अछेद्य, अभेद्य, अश्वेत और सबका आधार हो। तुम अकाट्य तथा सर्व छटाओं से परे हो। तुम ही हनुमान की माता अंजनी हो, तुम ही अंबिका हो जो शस्त्रों को धारण करती है। तुम अक्षर हो, सबका आधार हो तथा जगत का उद्धार करनेवाली हो ।। ६७ ।। तुम अंजनी हो, सबका नाश करनेवाली शीतला हो। तुम समुद्र के समान गम्भीर और मदमस्त रहनेवाली हो। तुम शंभरी, गम्भीर, आकाश के समान विशाल तथा अकाट्य हो। तुमने सारे संसार को अपने में लपेट रखा है तथा स्वयं न मिटनेवाली परन्तु सबका नाश करनेवाली

द्रुभिखा द्रुकटा अमिटा ॥ ६८ ॥ भैरवी भैंहरी भूचार भावनी । त्रिकुटा चरपटा चाँपडा मानवी । जोबना जैकरी जंभहर जालपा । तोतला तुंदला दंतली कालका ॥ ६९ ॥ भरमणा निभ्रणा भावना भै हरी । बर बुधां दालणी शत्रणी छैकरी । द्रुकटा द्रुभिदा दुधर द्रुमदी । अछता अछटा अजटा अभिदी ॥ ७० ॥ तंतला अंतला संतला सावजा । भीमड़ा भैंहरी भूतला भावजा । डाकणी साकणी झाकणी काकड़ा । किंकड़ी कालका जालपा जै क्रिड़ा ॥ ७१ ॥ ठिंगुला हिंगुला पिंगुला प्रासणी । शस्त्रणी अस्त्रणी सूलणी सासणी । कंनिका अंन्निका धंनिका धउलरी । रकतिका सकतिका भकतका जैकरी ॥ ७२ ॥ झिंगड़ा पिंगड़ा जिंगड़ा जालपा । जोगणी भोगणी रोग हरी कालका । चंचला चाँवडा चाचरा चित्रता । तंतरी भिंभरी छत्रणी छिछला ॥ ७३ ॥

हो ॥ ६८ ॥ हे देवी ! तुम भैरवी, भयहर्ता और सारे संसार में विचरण करनेवाली हो । तुम ही साधना की त्रिकुटी, योगिनी, चामुंडा और मानवी हो । तुम यौवन वाली, जंभ नामक दैत्य को मारनेवाली, मदमस्त हो अनाप-शनाप प्रलाप करनेवाली कालिकादेवी हो ॥ ६९ ॥ तुम भ्रमण करनेवाली, भ्रमों से परे भावनाओं को पूरा करनेवाली और भय का हरण करनेवाली हो । तुम वरदान देनेवाली और शत्रुओं का नाश करनेवाली हो । तुम दुर्भेद्य, अकाट्य और वृक्ष के समान उच्च हो । तुम अस्त्रों को धारण करनेवाली, सर्व छटाओं से परे खुली जटाओं वाली अभेद्य हो ॥ ७० ॥ तुम तंत्र-मंत्र की अधिष्ठात्री और बादल के समान (वर्ण वाली) हो । तुम विशालकाय हो, भय का हरण करनेवाली और समस्त भूतल की भावना रूपी हो । तुम ही डाकिनी, शाकिनी और मृदु वाणी वाली हो । हे वाग्देवी ! तुम ही किंकिनी की ध्वनि वाली कालका हो; तुम्हारी जय हो ॥ ७१ ॥ तुम सूक्ष्म आकार वाली हो, तुम ही पूज्य हिंगलाज, पिंगलाज हो । तुम शस्त्र-अस्त्रों को धारण करनेवाली और शूल के समान कष्ट देनेवाली हो । कण-कण में रमण वाली, अन्न की देवी ! तुम ही मेघ से उद्‌भूत विद्युत् हो; तुम्हारी जय हो । तुम रजोगुणी शक्ति-स्वरूपा, भक्तों का पोषण करनेवाली हो; तुम्हारी जय हो ॥ ७२ ॥ तुम वाग्देवी एवं पिंगल के नियम हो । तुम ही योगिनी, भोगिनी और रोगों को नष्ट करनेवाली कालिका हो । तुम ही चामुंडा के रूप में सदैव क्रियाशील हो और तुम ही चित्र के समान सुन्दर हो । तुम ही तंत्र-विद्या की स्वामिनी, सर्वत्र रमण करनेवाली तथा हो ७३ तुम विशाल दाँतों वाली

दंतुला दामणी द्रक्कटा द्रुभ्रमा। छुद्धिता निद्रका त्रिभिखा त्रिगमा। कद्रका चूड़का चाचका चापणी। चिचड़ी चावड़ा चिंपिला जापणी ॥७४॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ त्वप्रसादि कथता ॥ ॥ परज ॥ कैसे कै पाइन प्रभा उचारों। जानुक निपट अघट अंम्रित सम संपट सुभट बिकारों। मन मधुकरहि चरण कमलन पर हुइ मनमत्त गुंजारौ। मात्रिक सपत सपत पितरन कुल चौदहूं कुलो उधारौ ॥ १ ॥ ७५ ॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ काफी ॥ ता दिन देह सफल कर जानो। जा दिन जगत मात प्रफुलित ह्वै देहि बिजै बर दानो। ता दिन शस्त्र अस्त्र कट बांधो चंदन चित्त लगाऊँ। जाकहु नेत निगम कहि बोलत तास सु बर जब पाऊँ ॥ २ ॥ ७६ ॥ ॥सोरठा॥ ॥ त्वप्रसादि कथता ॥ अंतरजामी अभय भवानी। अति ही निरख प्रेम पारस को चित की त्रिथा पछानी। आपन भगत जान भवखंडन अभयस रूप दिखायो। चक्कत रहे पेख मुन जन सुर अजर अमर पद पायो ॥ ३ ॥ ७७ ॥ सोभत बामहि पान क्रिपाणी। जा तर जच्छ किंनर असुरन की सभ की क्रिया हिरानी। जा

बिजली हो। तुम अकाट्य हो और सर्व भ्रमों से दूर हो। तुम ही भूख, निद्रा, देश और सबकी गति हो। तुम ही धनुष धारण करनेवाली और स्त्रियोचित आभूषण धारण करनेवाली हो। तुम ही विभिन्न उपास्य रूपों में सर्वत्र विराजमान हो ॥ ७४ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ त्वप्रसादि कथन ॥ ॥ पराजिका (एक रागिनी) ॥ आपके चरणों की शोभा का वर्णन कैसे करूँ। आपके चरण कमल के समान शुभ्र एवं विकारहीन हैं। मेरा मन भौंरा बनकर चरण-कमलों पर गुंजार कर रहा है। यह जीव अपने माता-पिता के चौदह कुलों और पितरों समेत उद्धार हो जायगा (यदि यह आपके चरण-कमलों का ध्यान करे) ॥१॥७५॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ काफी ॥ मैं उस दिन को धन्य और सफल मानूँगा जिस दिन जगत्माता प्रसन्न होकर मुझे विजय का वरदान देगी। उसी दिन मैं अस्त्र-शस्त्र कमर में बाँधूंगा और अपने वक्षस्थल पर चंदन का लेप करूँगा। उसी से मैं वरदान प्राप्त करूँगा जिसे वेदादि नेति-नेति' कह कर पुकारते हैं ॥ २ ॥ ७६ ॥ ॥ सोरठा ॥ ॥ त्वप्रसादि कथन ॥ मन की बात समझ लेनेवाली भवानी ने राजा पारसनाथ का अतिशय प्रेम देखकर उसके मन की बात समझ ली। उसे अपना भक्त जानकर देवी ने उसे अपना अभय स्वरूप दिखाया। उसे देखकर मुनि जन आदि सभी चकित रह गए और सबने अमरपद की प्राप्ति की। ३ ॥ ७७ ॥ देवी के बायें हाथ में वह

तन मधु कीटभ कहु खंड्यो सुंभ निसुंभ (मू०पं०६७५) संघारे। सोई क्रिपान निदान लगे जग दाहन रहो हमारे ॥ ४ ॥ ७८ ॥ जात न बिड़ालाछ चिछरादिक खंडन खंड उठाए। धूलीकरन धूम्रलोचन के मासन गिद्ध रजाए। राम रसूल किशन बिशनादिक काल क्रवालहि कूटे। कोट उपाइ धाइ सभ थाके बिन तिह भजन न छूटे ॥ ५ ॥ ७९ ॥ ॥ सूही ॥ ॥ त्वप्रसादि कथता ॥ सोभत पान क्रिपान उजारी। जा तन इंद्र कोटि कई खंडे बिशन क्रोर त्रिपुरारी। जाकहु राम उचर मुन जन सभ सेवत ध्यान लगाए। तस तुम राम क्रिशन कई कोटिक बार उपाइ मिटाए ॥ ६ ॥ ८० ॥ अनभव रूप सरूप अगंजन कहो कवन बिध गइयै। जिहबा सहंस्र रटत गुन थाकी कबि जिहदे कबलइयै। भूम अकाश पतार जवन कर चउदह खंड बिहंडे। जगमग जोत होत भूतलि मै खंडन अउ ब्रहमंडे ॥७॥८१॥ ॥ सोरठ ॥ ॥ बिशनपद ॥ जै जै रूप अरेख अपार। जासि पाइ भ्रमाइ जह तह भीख को शिव द्वार। जासि पाइ लग्यो निशेशहि कारमातन एक। देवतेश सहंस्र

कृपाण शोभायमान थी, जिससे यक्ष, असुर एवं किन्नरादि सबका उसने नाश किया था। इसी कृपाण ने मधु-कैटभ, शुंभ-निशुंभ का संहार किया था। हे प्रभु! वही कृपाण मेरे भी दायीं ओर सदैव रहे अर्थात् मैं भी उसे धारण करूँ ॥ ४ ॥ ७८ ॥ बिड़ालाक्ष, चक्षुरासुर आदि को खंड-खंड किया और इसी कृपाण ने धूम्रलोचन का मांस गिद्धों को भर पेट खिलाया। राम, मुहम्मद, कृष्ण, विष्णु आदि सभी काल की कृपाण द्वारा नष्ट कर दिए गए। करोड़ों लोगों ने करोड़ों उपाय किए परन्तु एक परमात्मा की भक्ति के बिना कोई भी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सका ॥ ५ ॥ ७९ ॥ ॥ सूही ॥ ॥ त्वप्रसादि कथन ॥ हाथ में वह कृपाण शोभायमान है, जिसने करोड़ों विष्णु, इन्द्र एवं शिवों को काट डाला। उसी कृपाण रूपी शक्ति का मुनिजन ध्यान लगाते हैं। हे शक्ति! तुमने राम-कृष्ण के समान वीरों को कई बार पैदा किया और कई बार नष्ट किया ॥ ६ ॥ ८० ॥ तुम्हारा रूप स्वरूप अनुभव की वस्तु है, उसका गायन कैसे करूँ। कवि की जिह्वा तुम्हारे सहस्रों गुणों का गान करती हुई थक गई है। जिसने भूमि, आकाश, पाताल और चौदह लोकों का नाश कर दिया है, उसी शक्ति की ज्योति सर्वत्र जगमगा रही है ॥ ७ ॥ ८१ ॥ ॥ सोरठा ॥ ॥ विष्णुपद ॥ उसका रूप अपरंपार और आकार से परे है। उसकी प्राप्ति के लिए शिव भी भिक्षा माँगते हुए घूम रहे हैं चन्द्र भी उसके

भे भग जासि पासि अनेक ॥ ८ ॥ ८२ ॥ क्रिशन राम भए किते पुन काल पाइ बिहान । काल को अन काल कै अकलंक मूरत मान । जासि पाइ भयो सभै जग जास पाइ बिलान । ताहि तै अबिचार जड़ करतार काहि न जान ॥ ९ ॥ ८३ ॥ नरहरि जान काहि न लेत । तै भरोस पर्यो पशू जिह मोहि बद्धि अचेत । राम क्रिशन रसूल को उठि लेत नितप्रत नाउ । कहा वै अब जिअत जग मै कहा तिन को गाउ ॥ १० ॥ ८४ ॥ ॥ सोरठ ॥ तास किउ न पछानही जो होहि है अब है । निहफल काहे भजत पाहन तोहि कछु फलि दै । तास सेवहु जास सेवति होहि पूरण काम । होहि मनसा सकल पूरण लैत जाको नाम ॥ ११ ॥ ८५ ॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ रामकली ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ इह बिधि कीनी जबै बडाई । रीझे देव दिआल तिह ऊपर पूरण पुरख सदाई । आपनि मिले देव दरशनि भयो सिंघ करी असवारी । लीने छत्र लंकरा कूदत नाचण गण दैतारी ॥ १२ ॥ ८६ ॥ ॥ रामकली ॥ झमकत अस्त्र छटा शस्त्रनि की बाजत डउर अपार । निरतत (मू०ग्रं०१७७) भूत

चरणों में पड़ा हुआ है और उसी की प्राप्ति के लिए इन्द्र सहस्र भगों से युक्त हुआ था ॥ ८ ॥ ८२ ॥ काल के प्रभाव से अनेकों कृष्ण और राम हुए हैं, परन्तु काल कभी भी नष्ट और कलंकित होनेवाला नहीं है। जिसके चरणों के प्रभाव से संसार पैदा होता और नष्ट होता है, हे मूर्ख ! उसी को कर्ता समझकर उसकी वन्दना क्यों नहीं करता ॥ ९ ॥ ८३ ॥ हे जीव ! तुम नरहरि परमात्मा को क्यों नहीं जान लेते और माया के प्रभाव में मोहबद्ध होकर अचेत पड़े हो। तुम, हे जीव ! नित्य राम-कृष्ण और रसूल का नाम लेते हो, बताओ क्या वे जीवित हैं और क्या आज उनका कोई संसार में गाँव-निवास है ? ॥ १० ॥ ८४ ॥ ॥ सोरठा ॥ तुम उसकी वन्दना क्यों नहीं करते जो भविष्य में भी होगा और वर्तमान समय में भी है। तुम बेकार में ही पत्थरों की पूजा कर रहे हो। यह पूजा भला तुम्हें क्या फल देगी। तुम उसकी पूजा करो जिससे तुम्हारी कामनाएँ पूरी होंगी। उसी नाम का ध्यान करो जिससे संपूर्ण कामनाएँ पूरी होंगी ॥११॥८५॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ रामकली ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ इस प्रकार जब उसकी स्तुति की गई तो पूर्णपुरुष परमात्मा राजा पारसनाथ पर प्रसन्न हो उठे। उन्होंने दर्शन देने के लिए सिंह की सवारी करी। उनके ऊपर छत्र था और उनके सम्मुख गण-दैत्यादि नृत्य करने लगे १२ ८६ । रामकली अस्त्र शस्त्र चमकने लगे और

प्रेत नाना बिध डहकत फिरत बैतार । कुहकति फिरति काकणी कुहरत डहरत कठन मसान । घहरति गगनि सघन रिख दहलत बिडरत ब्योम बिवान ॥ १३ ॥ ८७ ॥ ॥ देवी बाच ॥ ॥ सारंग बिशन पद ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ कछु बर मागहु पूत सयाने । भूत भविक्ख नही तुमरी सर साध चरत हम जाने । जो बरदान चहो सो माँगो सभ हम तुमै दिवार । कंचन रतन बज्र मुकताफल लीजहि सकल सुधार ॥ १४ ॥ ८८ ॥ ॥ पारस नाथ बाच ॥ ॥ सारंग ॥ ॥ बिशन पद ॥ सभ ही पड़ो बेद बिद्या बिधि सभ ही शस्त्र चलाऊ । सभ ही देस जेर करि आपन आपे मता मताऊ । कहि तथास्तु भई लोप चंडका तास महाँ बर दैकै । अंतरध्यान हुइ गई आपन पर सिंघ अरूड़त हुइ कै ॥ १५ ॥ ८९ ॥ ॥ बिशन पद ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ ॥ गउरी ॥ पारस करि डंडौत फिरि आए । आवत बीर देस देसन ते मानुख भेज बुलाए । न्रिप को रूप बिलोक सुभट सभ चक्रत चित्त बिसमाए । ऐसे कबही लखे नही राजा जैसे आजु लखाए । चक्रत भई रागनि की बाला गन उडगन बिरमाए । छिम छिम

घनघोर डमरू बजने लगे । भूत-प्रेत नृत्य करने और वैताल भ्रमण करने लगे । कौवे काँव-काँव करने लगे और प्रेतादि अट्टहास करने लगे । आसमान थहराने लगा और ऋषि-मुनि मारे डर के विमानों में बैठकर आकाश में भ्रमण करने लगे ॥ १३ ॥ ८७ ॥ ॥ देवी उवाच ॥ ॥ सारंग विष्णुपद ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ हे पुत्र ! कुछ वरदान माँगो, तुम्हारे समान साधना करने वाला भूत में कभी नहीं हुआ और भविष्य में भी कभी नहीं होगा । तुम जो चाहो माँगो मैं तुम्हें सब वरदान दूँगी । तुम चाहे सोना, वज्र, मुक्ताफल जो चाहे माँगो मैं तुम्हें दूँगी ॥ १४ ॥ ८८ ॥ ॥ पारसनाथ उवाच ॥ ॥ सारंग ॥ ॥ विष्णुपद ॥ मैं सब प्रकार की वेद-विद्या का ज्ञाता हो जाऊँ और सब शस्त्र चला सकूँ । मैं सभी देशों को जीतकर अपना मत चलाऊँ । चंडी देवी, 'तथास्तु' कहकर और यह वरदान देकर अपने सिंह पर सवार होकर लोप हो गई ॥१५॥८९॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ ॥ गौरी ॥ पारसनाथ देवी को दंडवत कर वापस आये और आते ही उन्होंने देश-देशान्तरों के वीरों को संदेश देकर बुलवाया । राजा का स्वरूप देखकर सभी वीर चकित हो गये और कहने लगे कि जैसा स्वरूप राजा का अब दिखाई पड़ रहा है वैसा पहले कभी नहीं लगा । अप्सराएँ भी चकित हो गईं और गण आदि भी हैरान हो गये देवताओं ने बादलों से बरसती बूँदों के समान पुष्प-वर्षा

मेघ बूँद ज्यों देवन अमर पुहप बरखाए । जानुक जुबन खान हुइ निकसे रूप सिंध अनवाए । जानुक धरन डार बसुधा पर काम कलेवर आए ॥ १६ ॥ ९० ॥ ॥ बिशन पद ॥ ॥ सारंग ॥ त्वप्रसादि ॥ भूपत परम ग्यान जब धायो । मन बच करम कठन करता को जो करि ध्यान लगायो । कर बहु न्यास कठन जपु साध्यो दरशनि दियो भवानी । तत छिन परम ग्यान उपदेस्यो लोक चतुरदस रानी । तिह छिन सरब शास्त्र मुख उचरे तत्त अतत्त पछाना । अवर अतत्त सभै कर जाने एक तत्त ठहराना । अनभव जोत अनूप प्रकाशी अनहद नाद बजायो । देस बिदेस जीत राजन कह सुभट अभै पद पायो ॥ १७ ॥ ९१ ॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ परज ॥ ऐसे अमर पद कहु पाइ । देस अउर बिदेस भूपत जीत लीन बुलाइ । भाँति भाँति भरे गुमान निशान सरब बजाइ । चउप चउप चले चमूँ पत चित्त चउप बढाइ । आन आन सभै लगे पग भूप के जुहराइ । (मू०ग्रं०६७७) आव आव सुभाव सो कहि लीन कंठ लगाइ । हीर चीर सुबाज दे गजराज दै पहिराइ । साध दै सनमान कै कर लीन चित्त

की । राजा ऐसे लग रहे थे, मानो वे यौवन की खान हों अथवा रूप के समुद्र में नहा के निकले हों । वे ऐसे लग रहे थे मानो धरती पर कामदेव का अवतार हुआ हो ॥१६॥९०॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ सारंग ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ राजा को जब परम ज्ञान प्राप्त हुआ तो उसके पहले उसे मन, वचन, कर्म से परमात्मा की कठिन साधना की थी । विभिन्न प्रकार के कठिन आसन और जप जब उसने किये तभी भवानी ने उसे दर्शन दिया और उस चौदह लोकों की स्वामिनी ने उसे परमज्ञान का उपदेश दिया । राजा ने उसी क्षण तत्त्व और अतत्त्व की पहचान प्राप्त की और सर्व शास्त्रों का मुख से उच्चारण किया । उसने सभी तत्त्वों को क्षणभंगुर मानते हुए केवल एक तत्त्व को ही अनश्वर माना । उसने उस परमज्योति के अनुपम प्रकाश को अनुभव करते हुए अनहद नाद बजाया । देश-देशान्तरों के राजाओं को जीतकर उसने अभय पद प्राप्त किया ॥ १७ ॥ ९१ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ परज ॥ इस प्रकार अमरत्व को प्राप्त कर देश-विदेश के राजाओं को देखकर राजा ने उन्हें अपने पास बुलाया । राजागण भी प्रसन्न होकर गर्वपूर्वक नगाड़े बजाते हुए पारसनाथ की ओर चल पड़े । वे सब आकर राजा के चरणों में आ लगे और राजा ने सबका स्वागत करते हुए सबको गले से लगाया । उन सबको आभूषण, वस्त्र, हाथी, घोडे आदि दिये और इस प्रकार उन सबका सम्मान कर

चुराइ ॥१८॥६२॥ ॥काफी॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ इम कर दान दै सनमान । भाँति भाँति बिमोहि भूपत भूप बुद्ध निशान । भाँति भाँतिन साज दै बरबाज अउ गजराज । आपने कीनो न्रिपं सभ पारसैं महाराज । लाल जाल प्रवाल बिद्रम हीर चीर अनंत । लच्छ लच्छ स्वरण सिङी बिज एक एक मिलंत । मोहि भूपति भूमिकै इक कीन जग्ग बजाइ । भाँति भाँति सभा बनाइस बैठ भूपति आइ ॥१९॥९३॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ काफी ॥ इक दिन बैठे सभा बनाई । बडे बडे छत्री बसुधा के लीने निकटि बुलाई । अरु जे हुते देस देसन मै ते भी सरब बुलाए । सुनि इह भाँति सरब जटधारी देस देस ते आए । नाना भाँति जटन कह धारे अरु मुख बिभूत लगाए । बलकल अंग दीरघ नख सोभत म्रिगपत देख लजाए । मुंद्रत नेत्र ऊरध कर ओपत परम काछनी काछे । निस दिन जप्यो करत दत्ता त्वै महा मुनीशर आछे ॥२०॥ ९४॥ ॥ पारसनाथ बाच ॥ ॥ धनासरी ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ कै तुम हमको परचौ दिखाओ । नातर जिते तुम हो जटधारी सभही जटा मुंडाओ । जोगी जोगु

सबका मन मोह लिया ॥ १८ ॥ ९२ ॥ ॥ काफी ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ इस प्रकार दान-सम्मान देकर बुद्धि के भण्डार पारसनाथ ने सबका मन मोह लिया । भाँति-भाँति के हाथी-घोड़े देकर पारसनाथ ने सभी राजाओं को अपना बना लिया । लाल, जवाहरात, हीरे, मोती, वस्त्र, स्वर्ण आदि एक-एक ब्राह्मण को दान में दिये । पुनः राजा ने एक यज्ञ का आयोजन किया जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के राजागण विराजमान हुए ॥ १९ ॥ ९३ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ काफी ॥ एक दिन राजा सभा लगाकर बैठे थे, तब उन्होंने पृथ्वी के बड़े-बड़े छत्रधारी राजाओं को अपने पास बुलाया । देश-देशान्तर के अन्य लोगों को भी बुलाया तथा सर्व जटाधारी साधू योगी उनके पास आ पहुँचे । उन सबों ने विभिन्न प्रकार से जटाएँ धारण कर रखी थीं, मुंह पर भभूत लगा रखी थी और उनके अंगों पर वल्कल वस्त्र शोभायमान हो रहे थे । उनके लम्बे नाखूनों को देखकर सिंह भी लज्जित हो रहे थे । वे आँख मूँदकर और हाथ उठाकर परम साधना करनेवाले थे तथा रात-दिन दत्तात्रेय मुनीश्वर का जाप करनेवाले थे ॥२०॥९४॥ ॥ पारसनाथ उवाच ॥ ॥ धनासरी ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ या तो तुम सब मुझे अपने योग का परिचय दो अथवा तुम सब जटाधारी अपनी समस्त जटाओं का मुंडन करवा दो । हे योगियो ! यदि जटाओं के भीतर ही योग का कोई रहस्य होता तो परमात्मा का ध्यान छोड़

जटन के भीतर जेकर कछुअक होई । तउ हरि ध्यान छोरि दर दर ते भीख न मांगे कोई । जेकर महां तत कह चीनै परम तत्त कह पावै । तब यह मोन साध मन बैठे अनत न खोजन धावैं । जाकी रूप रेख नहि जानिऐ सदा अद्वैख कहायो । अउन अभेख रेख नही सो कहु भेख मिलैं किउ आयो ।।२१।।६५।।
।। सारंग ।। ।। त्वप्रसादि ।। जे जे तिनमै हुते सियाने । पारस परम तत्त के बेता महां परम कर माने । सभहिनि सीस न्याइ करि जोरे इह बिधि संगि बखाने । जो जो गुरू कहा सो कीना अउ हम कछू न जाने । सुनहो महाराज राजन के जो तुम बचन बखाने । सो हम दत्त बक्त्र ते सुन कर साच हिऐ अनमाने । जानुक परम अंम्रित ते निकसे महां रसन रस माने । जो जो बचन भए इह मुखि ते सो सो सभ हम माने ।।२२।।६६।।
(मू०ग्रं०६७८) ।। सोरठ ।। जोगी जोगु जटन मो नाही । भ्रम भ्रम मरत कहा पचि पचि कर देखि समझ मन माही । जो मन महातत्त कहु जानै परमग्यान कहु पावै । तब यह एक ठउर मन राखै दरदर भ्रमत न धावै । कहा भयो ग्रहि तजि उठ भागे बन मै कीन निवासा । मन तो रहा सदा घर

कर कोई भी योगी दर-दर भीख न माँगता फिरता । यदि कोई महातत्त्व को पहचानता है तो वही परमतत्त्व की प्राप्ति करता है तथा चुप होकर एक ही स्थान पर बैठता है एवं उसे खोजने के लिए अन्यत्र कहीं नहीं जाता । जिसका कोई रूप एवं आकार नहीं है तथा जो सदैव अद्वैत, अवेश है वह भला किसी भी वेश के माध्यम से कैसे जाना जा सकता है ।। २१ ।। ६५ ।। ।। सारंग ।। ।। तेरी कृपा से ।। उन जटाधारियों में जितने बुद्धिमान थे उन्होंने पारसनाथ को परमतत्त्ववेत्ता माना । सबने सिर झुकाकर हाथ जोड़े और यह कहा कि जो-जो गुरु के रूप में आपने हमसे कहा, हम वही करेंगे । हे महाराज ! जो-जो आपने कहा है, वही बातें हमने दत्त मुनि से भी सुनी हैं और सच्चाई का अनुभव किया है । आपकी जिह्वा से परम अमृत के समान ये वचन निकले हैं और जो-जो बातें आपने अपने मुख से उच्चारण की हैं, हम उन सबको मानते हैं ।। २२ ।। ६६ ।। ।। सोरठा ।। हे योगियो ! योग जटाओं में नहीं है । तुम मन में समझकर देखो और भ्रमों में पकड़कर परेशान मत होओ । जब मन परम तत्त्व को समझकर परमज्ञान की प्राप्ति कर लेता है तब यह एक स्थान पर टिक जाता है और इधर-उधर भ्रमण करते हुए भागता नहीं । कर को वन में निवास करने से क्या होगा क्योंकि मन तो सदैव घर

ही मो सो नही भयो उदासा। अधक प्रपंच दिखाइ ठगा जग जान जोग को जोरा। तुम जीअ लखा तजी हम माया माया तुमै न छोरा ॥२३॥६७॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ सोरठ ॥ भेखी जोगन भेख दिखाए। नाहन जटा बिभूत नखन मै नाहिन बस्त्र रँगाए। जौ बन बसै जोग कहु पइऐ पंछो सदा बसत बन। कुंचर सदा धूर सिर मेलत देखहु समझ तुमही मन। दादर मीन सदा तीरथ मो कर्‍यो करत इशनाना। ध्यान बिड़ाल बको बक लावत तिन किआ जोगु पछाना। जैसे कष्ट ठगन कह ठाटत ऐसे हरि हित कीजै। तबही महाँ ग्यान को जानै परम पयूखहि पीजै ॥ २४ ॥ ६८ ॥ ॥ सारंग ॥ सुनि सुनि ऐसे बचन सियाने। उठ उठ महाँ बीर पारस के पाइन सौ लपटाने। जे जे हुते मूड़ अगिआनी तिन तिन बैन न माने। उठ उठ लगे करन बकबादह मूरख मुगध इआने। उठ उठ भजे किते कानन को केतकि जलहि समाने। केतक भए जुद्ध कह प्रापत सुनत शबदु घहराने। केतक आन आन सनमुखि भए केतक

की ओर लगा रहेगा और संसार से उदासीन नहीं हो पाएगा। आप लोगो ने विशेष प्रपंच दिखाकर योग के माध्यम से संसार को ठगा है और यह माना है कि हमने माया का त्याग कर दिया है, परन्तु वास्तव में माया ने तुम लोगो को नहीं छोड़ा है ॥ २३ ॥ ६७ ॥ ॥ विष्णु पद ॥ ॥ सोरठा ॥ हे वेश में विश्वास रखनेवाले योगियो ! तुम केवल बाहरी वेश का ही प्रदर्शन कर रहे हो, परन्तु वह परमात्मा न तो जटाओं में न भभूत में, न नाखूनों में और न ही रँगे हुए वस्त्रों में पाया जा सकता है। यदि वन में निवास करने से योग की प्राप्ति होती हो तो पक्षी सदा वन में ही रहते हैं, इसी प्रकार हाथी सदैव सिर पर धूल मलता रहता है इसे तुम मन में क्यों नहीं समझते हो। मेंढक, मछली सदा तीर्थों पर स्नान करते रहते हैं तथा बिल्ली, बगुला आदि हमेशा ध्यान लगाये रहते हैं, परन्तु फिर भी उन्होंने कभी योग की पहचान नहीं की। जिस प्रकार लोगों को ठगने के लिए तुम सब कष्ट उठाते हो, वैसे ही परमात्मा में चित्त लगाने का प्रयत्न करो। तब ही परमतत्त्व को प्राप्त कर तुम परम अमृत पी सकोगे ॥ २४ ॥ ६८ ॥ ॥ सारंग ॥ इस प्रकार के बुद्धिमत्तापूर्ण वचन सुनकर सभी महावीर जटाधारी पारसनाथ के चरणों से लिपट गये। जितने मूढ़ अज्ञानी थे, उन्होंने पारसनाथ के वचनों को नहीं माना और वे मूर्ख उठकर से वाद विवाद करने लगे कई लोग उठकर वनों को भाग गये और कइयों ने जल-समाधि ले ली कई लोग युद्ध करने के लिए

छोरि पराने । केतक जूझ सोभे रण मंडल बासव लोक सिधाने ॥ २५ ॥ ९९ ॥ ॥ तिलंग ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ ॥ कथता ॥ जब ही संख शबद घहराए । जे जे हुते सूर जटधारी तिन तिन तुरंग नचाए । चक्रत भई गगन की तरनी देव अदेव लसाए । निरखत भयो सूर रथ थंभत नैन निमेखन लाए । शस्त्र अस्त्र नाना बिधि छड्डे बाण प्रयोग चलाए । मानहु महाँ मेघ बूँदन जियों बाण ब्यूह बरसाए । चटपट चरम बरम पर चटके दाझत तिणा लजाए । स्रोणत भरे बस्त्र सोभित जनु चाचर खेल सिधाए ॥ २६ ॥ १०० ॥ ॥ किदारा ॥ इह बिध भयो आहव घोर । भाँति भाँति गिरे धरा पर सूर सुंद्र किशोर । कोप कोप हठी घटी रन शस्त्र अस्त्र चलाइ । जूझि (मू०ग्रं०६७९) जूझि गिरे दिवालय ढोल बोल बजाइ । हाइ हाइ भई जहाँ तह भाज भाज सुबीर । पैठ पैठ गए त्रिआ लै हार हार अधीर । अप्रमान छुटे सरान दिसान भ्यो अंधिआर । टूक टूक परे जहाँ तह मार मार जुझार ॥ २७ ॥ १०१ ॥ ॥ देवगंधारी ॥ मारू शबदु सुहावन बाजे । जे जे हुते सुभट

तैयार हो गए और राजा के सम्मुख आ खड़े हुए। कई वह स्थान छोड़कर भाग गये। अनेकों ही रणक्षेत्र में जूझकर स्वर्गलोक सिधार गये ॥ २५ ॥ ९९ ॥ ॥ तिलंग ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ ॥ कथन ॥ जब युद्ध का शंख बजा तो जो जटाधारी शूरवीर थे उन्होंने भी अपने-अपने अश्व नचाये। अप्सराएँ चकित हो गईं तथा देव-दानव सभी व्याकुल हो गए। उस युद्ध को देखने के लिए सूर्य ने रथ थाम लिया और देखा कि उस युद्ध में नाना प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चल रहे हैं। बाण ऐसे बरस रहे हैं मानो बादलों से बूँदें बरस रही हों। बाण कवचों पर लगकर चटक रहे हैं और ऐसा लग रहा है, मानो तिनकों के जलने से चिंगारियाँ छूट रही हों। रक्त से सने वस्त्र ऐसे शोभायमान हो रहे थे, मानो होली खेली जा रही हो ॥ २६ ॥ १०० ॥ ॥ केदारा ॥ इस प्रकार भयंकर युद्ध हुआ और सुन्दर वीर धरती पर गिर पड़े। उन हठियों ने क्रोधित होकर अस्त्र, शस्त्र चलाये और वे जूझ-जूझकर ढोल-नगाड़े बजाते हुए धरती पर गिर पड़े। हाय-हाय की ध्वनि सब ओर सुनाई देने लगी और शूरवीर इधर-उधर भागने लगे। इधर वे युद्ध में धराशायी होने लगे और उधर अप्सराएँ व्याकुल होकर उन्हें हार पहनाने लगीं और उनका वरण करने लगीं। असंख्य बाणों के छूटने से दिशाओं में अंधकार छा गया और मृत वीर खण्ड-खण्ड होकर इधर-उधर बिखरे दिखाई देने लगे २७ १०१

रण सुंदर गहि गहि आयुध गाजे। कवच पहर पाखर सो डारी अउरै आयुध साजे। भरे गुमान सुभट सिंघन ज्यों आहव भूम बिराजे। गहि गहि चले गदा गाजी सभ सुभट अयोधन काजे। आहव भूमि सूर अस सोभे निरख इंद्र दुति लाजे। टूक टूक हुइ गिरे धरन पर आहव छोर न भाजे। प्रापत भए देव मंदर कह शस्त्रन सुभट निवाजे ॥२८॥१०२॥ ॥ कलिआन ॥ दहदिस धावत भए जुझारे। मुदगर गुफन गुरज गोला ले पट्टसि परघ प्रहारे। गिर गिर परे सुभट रन मंडल जानु बसंत खिलारे। उठ उठ भए जुद्ध कउ प्रापत रोह भरे रजवारे। भख भख बीर पीस दाँतन कह रणमंडली हकारे। बरछी बान क्रिपान गजाइधु अस्त्र शस्त्र सँभारे। भस्मीभूत भए गंध्रब गण दाझत देव पुकारे। हम मति मंद चरण शरणागति काहि न लेत उबारे ॥ २९ ॥ १०३ ॥ ॥ मारू ॥ दोऊ दिस सुभट जबै जुर आए। दुंदभ ढोल म्रिदंग बजत सुन सावन मेघ लजाए। देखन देव अदेव महांहव चड़े बिबान सुहाए। कंचन जटत खचे रतनन नख गंध्रब नगर रिसाए। कछि कछि काछ कछे कछनी

॥ देवगंधारी ॥ युद्ध में मारू बाजे बजने लगे और सभी सुन्दर शूरवीर हाथों में शस्त्र धारण कर गरजने लगे। कवच पहनकर वे वार करते हुए शोभायमान हो रहे थे और सभी शूरवीर सिंहों के समान गर्व से भरकर युद्ध-भूमि में विराजमान हो रहे थे। वीर गदाएँ पकड़कर युद्ध के लिए चल पड़े। युद्धभूमि में शूरवीर ऐसे शोभायमान हो रहे थे कि उन्हें देखकर इन्द्र की छवि भी लज्जित हो रही थी। वे खण्ड-खण्ड होकर पृथ्वी पर गिर रहे थे, पर वे युद्धक्षेत्र छोड़कर भाग नहीं रहे थे। वे सब देवताओं के लोकों में मृत्यु को प्राप्त करते हुए शस्त्रों-सहित विराज रहे थे ॥ २८ ॥ १०२ ॥ ॥ कल्याण ॥ दसों दिशाओं में शूरवीर दौड़ने लगे और मुद्गर, गोला, गदा, कुल्हाड़ा से वार करने लगे। रणभूमि में गिरे हुए वीर वसंतऋतु के पुष्प-बिखराव के समान दिखाई पड़ रहे थे। गर्वयुक्त राजा पुनःपुनः उठकर युद्ध कर रहे थे और चिल्लाते तथा दाँत पीसते हुए अपनी रणमंडली को ललकार रहे थे। बरछी, बाण, कृपाण एवं अस्त्र-शस्त्र लेकर लड़ते हुए गंधर्वगण भी भस्मीभूत होकर देवताओं को पुकारने लगे तथा कहने लगे कि हे प्रभु! हम शरणागत हैं हमें बचाते क्यों नहीं ॥ २९ ॥ १०३ ॥ ॥ मारू ॥ दोनों दिशाओं से जब योद्धा लड़ने के लिए एक-दूसरे के सामने आए तो दुन्दुभियाँ ढोल-मृदंग आदि की सुनकर सावन के बादल भी लज्जित होने लगे देव-दैत्य

चड़ कोप भरे निजकाए। कोऊ कोऊ रहे सुभट रण मंडल कोइकु छाड पराए। झिम झिम महाँ मेघ परलै ज्यों बिद बिसिख बरसाए। ऐसो निरख बडे कवतक तह पारस आप सिधाए ॥ ३० ॥ १०४ ॥ ॥ भैरो ॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ दैरे दैरे दीह दमामा। करहौं रुंड मुंड बसुधा पर लखत स्वरग की बामा। धुकि धुकि परहि धरन भारी भट बीर बैताल रजाऊ। भूत पिसाच डाकणी जोगण काकण रुधर पिवाऊ। भकि भकि उठे भीम भैरो रण अरध उरध संघारो। इंद्र चंद्र सूरज बरणादिक आज सभै चुण मारो। मोहि बरदान देवता दीना (मू०ग्रं०६८०) जिह सरि अउर न कोई। मै ही भयो जगत को करता जो मै करों सु होई ॥ ३१ ॥ १०५ ॥ ॥ त्वप्रसादि ॥ ॥ कथता गउरी ॥ मो ते अउर बली को है। जउन मो ते जंग जीते जुद्ध मै कर जै। इंद्र चंद्र उपिंद को पल मद्धि जीतौ जाइ। अउर ऐसो को भयो रण मोहि जीतै आइ। सात सिंध सुकाइ डारो नैक रोसु

सभी युद्ध देखने के लिए विमानों पर चढ़कर शोभायमान होने लगे। कंचन-जटित और रत्न-खचित पदार्थों को देखकर गंधर्व भी क्रोधित हो उठे और क्रोध में भरकर वीरों को घमासान युद्ध में काटने लगे। युद्धमंडल में कोई-कोई वीर बचा और कई युद्ध छोड़कर भाग गए। बाण इस प्रकार बरस रहे थे, मानो प्रलयकाल के मेघों से झमाझम पानी बरस रहा हो। इस प्रकार का आश्चर्यमय युद्ध देखने के लिए पारसनाथ स्वयं वहाँ पहुँचे ॥ ३० ॥ १०४ ॥ ॥ भैरव ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ उन्होंने कहा कि नगाड़े पर चोट दो और इन स्वर्ग की अप्सराओं के देखते-देखते मैं सारी पृथ्वी को रुण्ड-मुण्ड कर दूंगा। यह धरती धक-धक करती हुई काँप उठेगी और मैं बैतालों आदि की क्षुधा शान्त कर दूंगा। भूतों, पिसाचों, डाकिनियों, योगिनियों, काकिनियों को जी भर रक्त पिलाऊँगा। मैं नीचे और ऊपर सब ओर संहार कर दूंगा और इसी युद्ध में अनेकों भैरव प्रगट हो जाएँगे। मैं आज ही इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वरुण आदि को चुन-चुनकर मार दूंगा। मुझे उस देवता ने वरदान दिया है, जिसके समान अन्य कोई नहीं है। मैं ही जगत का कर्ता हूँ और जो मैं करूँगा वही होगा ॥ ३१ ॥ १०५ ॥ ॥ तेरी कृपा से ॥ ॥ कथन गौरी ॥ मुझसे अधिक बली कौन है जो मुझसे युद्ध में विजय प्राप्त करेगा। इन्द्र, चन्द्र, उपेन्द्र को मैं एक क्षण में जीत लूँगा तथा अन्य कौन है जो आकर युद्ध में मुझसे जीतेगा। मैं तनिक सा रुष्ट होकर सातों समुद्रों को सुखा सकता

करों । जच्छ गंध्रब किंन्न कोर करोर मोर धरो । देव और अदेव जीते करे सभै गुलाम । दिब्ब दान दयो मुझै छुऐ सकै को मुहि छाम ॥ ३२ ॥ १०६ ॥ ॥ मारू ॥ यों कहि पारस रोह बढायो । दुंदभ ढोल बजाइ महाँ धुनि समुहि संन्यासनि आयो । अस्त्र शस्त्र नाना बिधि छड्डे बाण प्रयोग चलाए । सुभटि सनाहि पत्र चल दल ज्यों बानन बेध उडाए । दुह दिस बान पान ते छूटे दिनपति देह दुराना । भूमि अकाश एक जन हुइ गए चाल चहूँ चक माना । इंद्र चंद मुनवर सभ काँपे बसु दिगिपाल डरानिथ । बरन कुबेर छाड पुर भाजे दुतिय प्रलै कर मानिथ ॥ ३३ ॥ १०७ ॥ ॥ मारू ॥ सुरपुर नारि बधावा माना । बरि है आज महा सुभटन को समर सुयंबर जान । लखि है एक पाइ ठाढी हम जिम जिम सुभट जुझैहै । तिम तिम घाल पालकी आपन अमरपुरी लै जैहै । चंदन चारि चित्र चंदन के चंचल अंग चड़ाऊ । जा दिन समर सुयंबर कर कै परम पिअरवहि पाऊ । ताँ दिन देह सफल करि मानो अंग सींगार धरों । जा दिन समर सुयंबर सखी री पारसनाथ बरों ॥ ३४ ॥ १०८ ॥ ॥ काफी ॥ चहु दिस मारू शबद

हूँ और करोड़ों यक्ष, गंधर्व तथा किन्नरों को मरोड़ कर फेंक सकता हूँ। मैंने देव-दैत्यों सभी को जीतकर गुलाम बना लिया है। मुझे दिव्य दान प्राप्त है अतः कौन मेरी छाया को भी छू सकता है ॥ ३२ ॥ १०६ ॥ ॥ मारू ॥ यह कहकर पारसनाथ ने अत्यन्त क्रोध किया और वह दुंदुभि तथा ढोल आदि बजाता हुआ संन्यासियों के सामने आया। विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र उसने अनेकों प्रयोग करते हुए चलाए और शूरवीरों के कवचों को पत्तों के समान अपने बाणों से वेध दिया। दोनों दिशाओं से बाण छूटने लगे, जिससे सूर्य छिप गया। ऐसा लग रहा था मानो भूमि और आकाश एक हो गए हो। इन्द्र, चन्द्र, मुनिवर, दिक्पाल आदि सभी भय से काँप उठे। वरुण और कुबेर आदि भी द्वितीय प्रलय का आभास पाकर अपनी-अपनी पुरियों को छोड़कर भाग निकले ॥ ३३ ॥ १०७ ॥ ॥ मारू ॥ अप्सराएँ यह सोचकर बधाई-गीत गाने लगीं कि आज युद्ध रूपी स्वयंवर में हम महान वीरों का वरण करेंगी। हम एक पाँव पर खड़ी होकर वीरों को जूझते हुए देखेंगी और तत्क्षण उन्हें अपनी पालकी में बिठाकर स्वर्गपुरी में ले आयेंगी। जिस दिन हम अपने परमप्रिय को प्राप्त करेंगी उस दिन अपने अंगों को सुन्दर चंदन से सुशोभित करेंगी हे सखि! जिस दिन हम पारसनाथ का वरण करेंगी उसी दिन इस

बजे । गहि गहि गदा गुरज गाजी सभ हठ रण आन गजे । बान कमान क्रिपान सैहथी बाण प्रयोघ चलाए । जानुक महा मेघ बूँदन ज्यों बिसिख ब्यूहि बरसाए । चटपट चरम बरम सभ बेधे सटपट पार पराने । खटपट सरब भूमि के बेधे नागन लोग सिधाने । झमकत खड़ग काढ नाना बिधि सैथी सुभट चलावत । जानुक प्रगट बाट सुरपुर को नीके ह्रिदे दिखावत ॥ ३५ ॥ १०९ ॥ ॥ सोरठ ॥ बानन बेधे अमित संनिआसी । ले तज देह नेह संपति को भए स्वरग के बासी । चरम बरम रथ धुजा पताका बहु बिधि काट गिराए । सोभत (मू०ग्रं०६८१) भए इंद्रपुर जमपुर सुरपुर निरख लजाए । भूखन बस्त्र रंग रंगन के छुट छुट भूम गिरे । जनुक अशोक बाग दिवपत के पुहप बसंति झरे । कटि कटि गिरे गजन कुंभसथल मुकता बिथुरि परे । जानुक अंम्रित कुंड मुख छूटे जलकन सुभग झरे ॥ ३६ ॥ ११० ॥ ॥ देवगंधारी ॥ दूजी तर्हा ॥ दुह दिस परे बीर हक्कार । काढि काढि क्रिपाण धावत मार मार उचार । पान रोकस रोख रावत क्रुद्ध जुद्ध

देह को सफल मानेंगी और इसका श्रृंगार करेंगी ॥३४॥१०८॥ ॥काफी॥ चारों दिशाओं में घनघोर नाद बजने लगे और शूरवीर गदा गुर्ज धारण कर युद्धस्थल में हठपूर्वक आ डटे। बाण, कमान, कृपाण, बरछी आदि चलने लगे और बाणों के झुण्ड इस प्रकार बरसने लगे, मानो बादलों से जल की बूंदे बरस रही हों। बाण शीघ्रता से कवच और चमड़े को काटते हुए सीधे पार निकलने लगे तथा धरती को वेधकर पाताल लोक तक जाने लगे। वीर चमकते हुए खड्ग और बर्छियाँ निकालकर चलाने लगे और ये शस्त्र ऐसे लग रहे थे कि हृदयों का वेधन कर, मानो वे उन्हें स्वर्ग का रास्ता दिखा रहे हों ॥३५॥१०९॥ ॥ सोरठा ॥ असंख्य संन्यासियों को बाणों से वेध दिया और वे सब धन-संपत्ति का स्नेह छोड़कर स्वर्ग के वासी हो गए। कवच, ध्वजा, रथ, पताकादि सब काट गिरा दिए गए। वे सब स्वर्ग, यमलोक और इन्द्रलोक की शोभा बढ़ाने लगे। उनके अनेकों रंगों वाले वस्त्र गिरकर भूमि पर गिर पड़े। वे ऐसे लग रहे थे मानो अशोकवाटिका में से वसंत ऋतु में पुष्प झड़ रहे हों। हाथियों की सूँड़ें और मोतियों के हार छिटककर धरती पर बिखरे पड़े थे और ऐसे लग रहे थे मानो अमृतकुंड के जलकण छिटक रहे हों ॥ ३६ ॥ ११० ॥ ॥ देवगंधारी ॥ ॥ दूसरी तरह ॥ दोनों दिशाओं से वीर टूट पड़े और कृपाण निकालकर मार-मार उच्चारण करते हुए आगे बढे। हाथ में शस्त्र पकड़कर

फिरे। गाहि गाहि गजी रथी रण अंत भूम गिरे। तान तान संधान बान प्रमान कान सुबाह। बाहि बाहि फिरे सबाहन छत्र धरम निबाहि। बेध बेध सु बान अंग जुआन जूझे ऐस। भूरि भारथ के समे सर सेज भीखम जैस॥ ३७॥ १११॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ सारंग ॥ इह बिधि बहुतु संन्यासी मारे। केतिक बाँध बार मो बोरे किते अगन मां जारे। केतन एक हाथ कट डारे केतिक के द्वै हाथ। तिल तिल थाइ रथी कटि डारे कटे कितन के माथ। छत्र चत्र रथ बाज कितन के काटि काटि रण डारे। केतन मुकट लकुट लै तोरे केतन जूट उपारे। भकि भकि गिरे भिभर बसुधा पर घाइ अंग भिभडारे। जानुक अंत बसंत सभै मिलि चाचर खेल सिधारे॥ ३८॥ ११२॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ अडान ॥ चुप रे चार चिकने केस। आन आन फिरी चहूँ दिस नार नागर बेस। चिबक चार सुधार बेसर डार काजर नैन। जीव जंतन का चली चित लेत चोर समैन। देख री सुकुमार सुंदर आजु बर है बीर। बीन बीन धरो सबंगन सुद्ध केसर चीर। चीन चीन बरिहै सुबाह

क्रुद्ध वीर घूमने लगे और गजवानों, रथियों को मारकर अन्त में भूमि पर गिरने लगे। कान तक बाणों को तान-तानकर मारने लगे और इस प्रकार अस्त्र चलाते हुए क्षत्रिय धर्म का निर्वाह करने लगे। बाणों से बिंधकर वीर ऐसे गिरने लगे, जैसे अर्जुन के समय में भीष्म शर-शय्या पर गिरे थे॥ ३७॥ १११॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ सारंग ॥ इस प्रकार बहुत से सन्यासी मार डाले गए। अनेकों को बाँधकर जल में डुबो दिया गया और अनेकों को अग्नि में जला डाला गया। अनेकों का एक हाथ और अनेकों के दोनों हाथ काट डाले गए। कई रथियों को टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया और कइयों के सिर काट डाले गए। कइयों के छत्र, चँवर, रथ, घोड़े आदि युद्धस्थल में काट डाले गए। कइयों के डंडे की मार से मुकुट तोड़ दिए गए और कइयों के जटाओं के जूडे उखाड़ दिए गए। कई घायल होकर धरती पर गिर पड़े और उनके अंगों से भभककर रक्त ऐसे बहने लगा, मानो सभी बसन्त ऋतु में होली खेल रहे हों॥३८॥११२॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ अडान ॥ अपने बालों को सँवार कर युद्धस्थल में चारों दिशाओं से अप्सराएँ इकट्ठी हुईं। उनके सुन्दर गाल थे, नैनों में काजल था और नाक में नथनियाँ थीं। वे चोरों के समान सबका जी चुरा रही थीं और आपस में वार्तालाप कर रही थीं कि अपने अंगों पर केसर धारण करो क्योंकि आज सुन्दर राजकुमारों का वरण करना

सु मड्ढ जुद्ध उछाह । तेग तीरन बान बरछन जीत करि है ब्याह ॥ ३९ ॥ ११३ ॥ ॥ बिशनपद ॥ ॥ सोरठ ॥ कह लौ उपमा इती करौं । ग्रंथ बढन के काज सुनहु जू चित मै अधिक डरौं । तऊ सुधार बिचार कथा कहि कहि संछेप बखानो । जैसे तव प्रताप के बल ते जथा शकति अनमानो । जब पारस इह बिध रन मंड्यो नाना शस्त्र चलाए । हते सु हते जीअ लै भाजे चहु दिस गए पराए । जे हठ त्याग आन पग लागे ते सभ लए बचाई । भूखन बसन बहुतु बिधि दीने दै दै बहुत बडाई ॥४०॥ (मू०ग्रं०६८२) ॥ ११४ ॥ ॥ काफी ॥ पारसनाथ बडो रण पार्यो । आपन प्रचुर जगत मतु कीना देव दत्त को टार्यो । लै लै शस्त्र अस्त्र नाना बिधि भाँत अनिक अरि मारे । जीते परमपुरख पारस के सगल जटाधर हारे । बेख बेख भट परे धरन गिर बान प्रयोधन घाए । जानुक परम लोक पावन कहुँ प्रानन पंख लगाए । टूक टूक ह्वै गिरे कवच कट परम प्रभा कहु पाई । जणु दै चलै निशाण सुरग कह कुलहि कलंक मिटाई ॥ ४१ ॥ ११५ ॥ ॥ सूही ॥ पारसनाथ बडो रण

है। युद्ध में उत्साहित अप्सराएँ पहचान-पहचान कर तलवार, तीर, बाण, बरछी आदि के माध्यम से जीते जानेवाले सुन्दर वीरों का वरण कर रही थी ॥ ३९ ॥ ११३ ॥ ॥ विष्णुपद ॥ ॥ सोरठा ॥ कहाँ तक मैं वर्णन करूँ क्योंकि ग्रन्थ के बढ़ जाने का मुझे अधिक भय है, इसलिए मैं कथा को सुधारकर, विचार कर संक्षेप में उसका वर्णन कर रहा हूँ और आशा कर रहा हूँ कि अपने बुद्धि-बल से आप यथाशक्ति अनुमान कर लेंगे। जब पारसनाथ ने नाना प्रकार के शस्त्र चलाकर इस प्रकार युद्ध किया तो जो मारे गए, वे मारे गए, परन्तु कुछ अपने प्राण लेकर चारों दिशाओं में भाग खड़े हुए। जो हठ त्यागकर राजा के चरणों में आ लगे, उनको बचा लिया गया तथा आभूषण, वस्त्र आदि देकर उनकी बहुत प्रकार से प्रशंसा की गई ॥ ४० ॥ ११४ ॥ ॥ काफी ॥ पारसनाथ ने भयंकर युद्ध किया और दत्त देव के मत को हटाकर जगत में अपने मत का प्रचुर प्रचार किया। शस्त्र-अस्त्र लेकर विभिन्न प्रकार से अनेकों शत्रुओं को मारा और इन सबमें पारसनाथ के वीर जीत गए तथा सभी जटाधारी हार गए। बाणों को खाकर अनेकों वेशोंवाले वीर धरती पर इस प्रकार गिरने लगे कि मानो वे पंख लगाकर परमलोक को उड़ने की तैयारी कर रहे हों। परम प्रभाशाली कवच खण्ड-खण्ड होकर गिर पड़े और ऐसा लग रहा था कि मानो वीर कुल के कलंक का चिह्न धरती पर ही

जीतो। जानुक भई दूसर करणारजुन भारथ सो हुइ बीतो। बहु बिधि चले प्रवाहि स्रोण के रथ गज असव बहाए। भै कर जान भयो बड आहव सात समुंद्र लजाए। जह तह चले भाज संन्यासी बाणन अंग प्रहारे। जानुक बज्र इंद्र के भै ते पब्ब सपच्छ सिधारे। जिह तिह गिरत स्रोण की धारा अर घूमत भिभरात। निंदा करत छत्रिय धरम को भजत दसो दिस जात॥ ४२॥ ११६॥ ॥ सोरठ॥ ॥ बिशनपद॥ जेतक जीअत बचे संन्यासी। त्रास मरत फिर बहुर न आए होत भए बनबासी। देस बिदेस ढूँढ बन बेहड़ जह तह पकर संघारे। खोज पताल अकाश सुरग कहुँ जहाँ तहाँ चुन मारे। इह बिधि नास करे संन्यासी आपन मतह मतायो। आपन न्यास सिखाइ सभन कहुँ आपन मंत्र चलायो। जे जे गहे तिनो ते घाइल तिन की जटा मुँडाई। दोही दूर दत्त की कीनी आपन फेर दुहाई॥ ११७॥ ॥ बसंत॥ ॥ बिशनपद॥ इह बिधि फाग क्रिपानन खेले। सोभत ढाल माल डफ मालैं मूठ गुलालन सेले। जान तुफंग भरत पिचकारी सूरन अंग लगावत।

छोड़कर स्वर्ग की ओर चल पड़े हों॥ ४१॥ ११५॥ ॥ सूही॥ पारसनाथ ने युद्ध जीता और वह कर्ण व अर्जुन के समान दिखाई देता था। रक्त के विभिन्न प्रवाह बह निकले और उसमें रथ-अश्व-हाथी सभी बह निकले। युद्ध के रक्त के सामने सातों समुद्र भी लज्जित हो उठे। अंगों पर बाणों के प्रहार खाते हुए संन्यासी यहाँ-वहाँ ऐसे भाग निकले मानो इन्द्र के वज्र के भय से पर्वत यहाँ-वहाँ पंख लगाकर उड़ भागे हों। सब ओर रक्त की धारा बह रही थी और लोग घायल होकर घूम रहे थे। वे दसों दिशाओं में भागे जा रहे थे और क्षत्रिय-धर्म की निन्दा कर रहे थे॥ ४२॥ ११६॥ ॥ सोरठा॥ ॥ विष्णुपद॥ जितने संन्यासी जीवित बचे वे डर के मारे वापस नहीं आए और वन में चले गए। उन्हें देश-विदेश, वन-बीहड़ों में से ढूँढ़-ढूँढ़कर मार डाला गया और आकाश-पाताल सभी स्थानों से खोज-खोजकर उन्हें नष्ट कर दिया गया। इस प्रकार संन्यासियों को मारकर पारसनाथ ने अपना मत चलाया और अपनी पूजा-पद्धति का प्रसार किया। जो-जो घायल पकड़ लिये गए उनकी जटाएँ मुँड़वा दी गईं और दत्त के प्रभाव को समाप्त कर पारसनाथ ने अपना डंका बजवाया॥ ११७॥ ॥ बसंत॥ ॥ विष्णुपद॥ इस प्रकार कृपाण से फाग खेला गया। ढालें डफलियाँ बन गईं और रक्त गुलाल बन गया तीर के समान शूरवीरों के अंगों पर लगने लगे रक्त

निकसत स्रोण अधिक छबि उपजत केसर जान सुहावत । स्रोणत भरी जटा अति सोभत छबहि न जात कह्यो । मानहु परम प्रेम सौ डार्यो ईंगर लागि रह्यो । जह तह गिरत भए नाना बिधि साँगन शस्त्र परोए । जानुक खेल धमार पसार कै अधिक स्रमित ह्वै सोए ।। ११८ ।। ।। बिशनपद ।। ।। परज ।। दस सै बरख राज तिन कीना । कै कै दूर दत्त के मत कहु राज जोग दोऊ लीना । जे जे छपे लुके कहू बाचे (मू०ग्रं०६८३) रहि रहि वहै गए । ऐसे एक नाम लैबे को जग मो रहत भए । भाँत भाँत सो राज करत यौ भाँत भाँत धन जोर्यो । जहाँ तहाँ मानस स्रउनन सुन तहाँ तहाँ ते तोर्यो । इह बिधि जीत देस पुर देसन जीत निशान बजायो । आपन करण कारण करि मान्यो कालपुरख बिसरायो ।। ११९ ।। ।। रूआमल छंद ।। दस सहंस्र प्रमाण बरख सु कीन राज सुधार । भाँत भाँत धरान लै अरु शत्र सरब सँघार । जीत जीत अनूप भूप अनूप रूप अपार । भूप मेध ठट्यो त्रिपोतम एक जग सुधार ।। १२० ।। देस देसन के नरेशन बाँधि कै इक बार । रोह देस बिखै गयो लै पुत्र मित्र कुमार । नार संजुत बैठ

निकलने से वीरों का सौन्दर्य बढ़ने लगा, मानो उन्होंने अंगों पर केसर छिडक रखा हो ! रक्त से भरी जटाओं की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता । ऐसा लग रहा था मानो परमप्रेम से उनमें गुलाल छिड़का गया हो । बछियों से पिरोए हुए शत्रु ऐसे यहाँ-वहाँ गिरे पड़े थे मानो होली खेलने के बाद थककर सो गए हों ।। ११८ ।। ।। विष्णुपद ।। ।। परज ।। इस प्रकार एक हजार वर्ष तक पारसनाथ ने राज किया और दत्त के मत को समाप्त कर उन्होंने अपने राजयोग का प्रसार किया । जो कोई छिप गया वही दत्त का अनुयायी बन रहा और नाम मात्र को जीवित बना रहा । भाँति-भाँति से राज्य करते हुए राजा ने भिन्न-भिन्न प्रकार से धन जोड़ा और जहाँ-जहाँ भी उसे पता लगा उसने धन लूटा । इस प्रकार देश-देशान्तरों को जीतकर राजा अपना डंका बजवाया और स्वयं परमेश्वर का विस्मरण कर अपने आपको कर्ता मानना प्रारम्भ कर दिया ।। ११९ ।। ।। रूआमल छंद ।। इस प्रकार आगे चलकर सर्व शत्रुओं का संहार कर, विभिन्न प्रकार से पृथ्वी को जीतकर राजा ने दस हजार वर्ष तक राज्य किया । अनेक राजाओं को जीतकर राजा ने राजमेध यज्ञ करने का विचार किया ।। १२० ।। राजा अपने पुत्रों, मित्रों-सहित देश-देशान्तर के राजाओं को बाँधकर अपने देश में ले आया और उसने पत्नी के

बिधवत कीन जग्ग अरंभ । बोल बोल करोर रित्तज और बिप्प असंभ ।। १२१ ।। राजमेध कर्‌यो लगै आरंभ भूप अपार । भाँत भाँत सम्रिध जोर सुमित्र शत्र कुमार । भाँत अनेकन के जुरे जन आनकै तिह देस । छीन छीन लए न्रिपाबर देश दिरब अबिनेश ।। १२२ ।। देख कै इह भाँत सरब सु भूप संपत नैण । गरब सो भुजदंड कै इह भाँत बोला बैण । भूपमेध करो सभै तुम आज जग्ग अरंभ । सतजुग्ग माह भयो जिही बिध कीन राजै जंभ ।। १२३ ।। ।। मंत्रीय बाच ।। लच्छ जउ न्रिप मारियै तब होत है न्रिपमेध । एक एक अनेक संपत दीजिऐ भविखेध । लच्छ लच्छ तुरंग एकहि दीजिए अबिचार । जग्ग पूरण होतु है सुन राज राजवतार ।। १२४ ।। भाँत भाँत सुम्रिध संपत दीजिऐ इक बार । लच्छ हसत तुरंग द्वै लच्छ सुवरन भार अपार । कोट कोट दिजेक एकहि दीजियै अबिलंब । जग्ग पूरण होइ तउ सुन राज राज असंभ ।।१२५।। ।। पारसनाथ बाच ।। ।। रूआल छंद ।। सुबरन को न इती कमी जउ टूट है बहु बरख । हसत की न कमी मुझै हय सार लीजै परख । अउर जउ धन चाहियै सो लीजियै अबिचार । चित्त मै न कछू करो सुन मंत्र मित्र अवतार ।। १२६ ।। यिउ जबै न्रिप उचरयो

साथ बैठकर यज्ञ आरम्भ कर दिया। उसने करोड़ों ब्राह्मण भी बुलवा लिये ।। १२१ ।। राजा भिन्न-भिन्न मित्रों को एकत्र कर राजमेध यज्ञ आरम्भ करने लगा। अनेकों प्रकार के लोग वहाँ आ एकत्र हुए और राजा ने भी श्रेष्ठ राजाओं की धन-सम्पत्ति आदि छीन ली ।। १२२ ।। राजा अपार संपत्ति को देखकर अपनी भुजाओं पर गर्व करता हुआ बोला, हे ब्राह्मणो ! अब आप वैसा ही भूपमेध यज्ञ करो जैसा सतियुग में जंभासुर ने किया था ।।१२३।। ।। मंत्री उवाच ।। यदि एक लाख राजाओं को मारा जाय तो राजमेध यज्ञ होता है और एक-एक ब्राह्मण को अनंत संपत्ति तथा लाख-लाख घोड़े तुरंत देने पड़ते हैं। इस प्रकार, हे राजन् ! यह यज्ञ संपूर्ण होता है ।। १२४ ।। अनेक प्रकार की सम्पत्ति और समृद्धियाँ तथा एक लाख हाथी तथा दो लाख घोड़े और लाख स्वर्णमुद्राएँ एक-एक करके करोड़ों द्विजों को देने से, हे राजन् ! यह असंभव यज्ञ संपूर्ण होता है ।।१२५।। ।। पारसनाथ उवाच ।। ।। रूआल छंद ।। स्वर्ण की कमी नहीं है और यह बहुत वर्षों तक दान देते रहने के बावजूद भी समाप्त नहीं होगा। गजशाला और घुड़शाला को देख लो. इनकी भी कमी नहीं है हे मित्र मंत्री चित्त मे कोई शंका मत करो और जितना धन चाहिए

तब मंत्र बर सुन बैन । हाथ जोर सलाम कै न्रिप मीच कै जुग नैन । अउर एक सुनो न्रिपोतम उच्चरौ इक गाथ । जौन मद्धि सुनी पुरानन अउर सिंम्रित (मू०ग्रं०६८४) साथ ।। १२७ ।। ।। मंत्री बाच ।। ।। रूआल छंद ।। अउर जो सभ देस के न्रिप जीतियै सुनि भूप । परम रूप पवित्र गात अपवित्र हरन सरूप । ऐस जउ सुन भूप भूपति पूछिआ तिह गाथ । पूछ आउ सभै न्रिपालन हउ कहो तुह साथ ।। १२८ ।। ।। रूआल ।। यों कहै जब बैन भूपत मंत्र बर सुन धाइ । पंच लच्छ बुलाइ भूपत पूछ सरब बुलाइ । अउर सातहूँ लोक भीतर देह अउर बताइ । जउन जउन न जीतिआ न्रिप रोस कै न्रिपराइ ।। १२९ ।। ।। रूआल ।। देख देख रहे सभै तर को न देत बिचार । ऐस कउन रहा धरा पर देह ताहि उचार । एक एक बुलाइ भूपति पूछ सरब बुलाइ । को अजीत रहा नही जिह ठउर देहु बताइ ।।१३०।। ।। एक न्रिप बाच ।। ।। रूआल छंद ।। एक भूपत उच्चरो सुनि लेह राजा बैन । जान माफ करो कहो तब राज राज सु नैन । एक है मुन सिंध मे अर मच्छ के उर माहि । मोहि राव बबेक भाखो ताहि भूपति नाहि ।। १३१ ।।

तुरन्त लीजिए ।।१२६।। इस प्रकार जब राजा ने कहा तो मंत्री ने दोनों हाथ जोड़कर आँख बंद करके राजा को प्रणाम किया । हे राजा ! एक अन्य बात सुनो जिसे मैंने पुराणों और स्मृतियों में कथा के रूप में सुना है ।। १२७ ।। ।। मंत्री उवाच ।। ।। रूआल छंद ।। हे राजा ! सुनो तुम परम पवित्र और निष्कलंक रूप वाले हो; तुम अब सभी देशों के राजाओं को जीतो । जिस रहस्य की तुम बात कर रहे हो, हे मंत्री ! आप स्वयं सब राजाओं से पूछें ।। १२८ ।। ।। रूआल ।। जब राजा ने यह कहा तो मंत्रीवर चल पड़े और उन्होंने पाँच लाख राजाओं को बुलाया । उनसे पूछा गया कि आप लोग बताएँ कि सातों लोकों में कौन ऐसा राजा है जिसे राजा ने क्रुद्ध होकर अभी तक नहीं जीता ।। १२९ ।। ।। रूआल ।। सभी मुँह नीचा कर देखने लगे और सोचने लगे कि ऐसा कौन धरती पर है जिसका नाम लिया जाय । राजा ने एक-एक राजा को बुलाकर पूछा कि बताओ धरती पर अभी कौन अजेय है ? ।। १३० ।। ।। एक नृप उवाच ।। ।। रूआल छंद ।। एक राजा ने कहा कि यदि प्राणदान दें तो मैं कहूँ । समुद्र में एक मत्स्य है और उसके उदर में एक मुनि है । मैं सत्य कह रहा हूँ उससे पूछो तथा अन्य राजाओं से कुछ मत पूछो १३१ रूआल हे राजन ! एक दिन जटाधारी शिव ने

।। रूआल ।। एक द्योस जटधरी न्रिप कीनु छीर प्रवेस । चित्र रूप हुती तहाँ इक नार नागर भेस । तास देखसि बेस को गिर बिंध सिंध मझार । मच्छ पेट मछिंद्र जोगी बैठ है न्रिप बार ।। १३२ ।। ।। रूआल छंद ।। तास ते चल पूछिऐ न्रिप सरब बात बिबेक । ए न तोहि बताइ है न्रिप भाखि हो जु अनेक । ऐस बात सुनी जबै तब राज राज अवतार । सिंध खोजन को चला लै जगत के सभ जार ।। १३३ ।। ।। रूआल छंद ।। भाँत भाँत मँगाइ जालन संग लै दल सरब । जीत दुंदभ दै चला न्रिप जान कै जिअ गरब । मंत्र मित्र कुमारि संपत सरब मद्धि बुलाइ । सिंध जार डरे जहा तहा मच्छ शत्र डराइ ।। १३४ ।। भाँत भाँतन मच्छ कच्छप अउर जीव अपार । बद्धि जारन ह्वै कढे कब त्याग प्रान सुधार । सिंध तीर गए जबै जल जीव एकै बार । ऐस भाँत भए बखानत सिंध पै मत सार ।। १३५ ।। बिप्प को धर सिंध मूरत आइयो तिह पासि । रतन हीर प्रवाल मानक दीन है अनिआस । जीव काहि सँघारिऐ सुनि लीजिऐ न्रिप बैन । जउन कारज को चले तुम सो नही इह ठैन ।। १३६ ।। (मू०ग्रं०६८५) ।। सिंध बाच ।। ।। रूआल

हठपूर्वक समुद्र में प्रवेश किया और वहाँ उन्होंने एक अनुपम सौन्दर्ययुक्त स्त्री को देखा। उसे देखकर उनका समुद्र में ही वीर्यपात हो गया और उसी के फलस्वरूप मत्स्य के उदर में मछेन्द्र योगी विराजमान है ।। १३२ ।। ।। रूआल छंद ।। हे राजन् ! उसी से जाकर पूछो, ये सभी राजागण जो आपने बुलाए हैं आपको कुछ नहीं बता पाएँगे। यह बात जब राजाधिराज ने सुनी तो वह सारे संसार के जालों को लेकर समुद्र में उस मछली को खोजने के लिए चल पड़ा ।। १३३ ।। ।। रूआल छंद ।। भिन्न-भिन्न प्रकार के जालों को मँगाकर और सारे दल को साथ लेकर राजा दुंदुभियाँ बजवाता हुआ गर्वपूर्वक चल पड़ा। मंत्री, मित्र, राजकुमार आदि सबको बुलवाया और समुद्र में यत्र-तत्र जाल डलवा दिए। सभी मछलियाँ भयभीत हो उठीं ।। १३४ ।। भाँति-भाँति की मछलियाँ, कच्छप और अनेकों जीव जालों में बद्ध होकर निकलने लगे और मरने लगे। तब सभी जल के जीव समुद्र देवता के पास गए और अपनी व्याकुलता का वर्णन करने लगे ।। १३५ ।। समुद्र ब्राह्मण का वेश धारण कर राजा के पास आया और राजा को रत्न, हीरे, मोती आदि भेंट कर बोला कि आप जीवों का संहार क्यों कर रहे हैं क्योंकि जिस काम से आप यहाँ आए हैं वह काय यहाँ नही होगा १३६ सिंधु उवाच रूआल छंद है

छंद ।। छीरसागर है जहाँ सुन राज राजवतार । मच्छ उदर मछिंद्र जोगी बैठ है ब्रित धार । डार जार निकार ताकहु पूछ लेहु बनाइ । जो कहा सो कीजिए छिप इही सत्त उपाइ ।। १३७ ।। जोरि बीरन लाख सिंधहु आग चाल सुबाहु । हूर पूर रही जहा तह जत तत उछाह । भाँत भाँत बजंत्र बाजत अउर घुरत निशान । छीरसिंध हुतो जहा तिह ठाम पहुँचे आन ।। १३८ ।। सूत जार बनाइकै तिह मद्धि डार अपार । अउर जीव घने गहे न बिलोकयो शिव बार । हारि हारि फिरैं सभै भट आन भूपत तीर । अउर जीव घने गहे पर सो न पाव फकीर ।। १३९ ।। मच्छ पेट मछिंद्र जोगी बैठ है बिन आस । जार भेट सकै न वाको मोन अंग सुबास । एक जार सु नानयो तिह डारिऐ अबिचार । सत्त बात कहै तुमै सुनि राज राजवतार ।। १४० ।। ।। रूआल ।। ग्यान नाम सुना हमो तिह जारि को छिपराइ । तउन ता मै डारकै मुन राज लेहु गहाइ । यों न हाथि परे मुनीशर बीतहै बहु बरख । सत्त बात कहो तुमै सुनि लीजिऐ भरतरख ।। १४१ ।। ।। रूआल ।। यों न पान परे मुनाबर होहि कोटि उपाइ । डार

राजन् ! क्षीरसागर में मछेन्द्र योगी मत्स्य के पेट में समाधिस्थ बैठा है। उसे जाल डालकर निकालो और उससे पूछो। हे राजन् ! जो मैंने कहा है आप वही करें यही सत्य उपाय है ।। १३७ ।। राजा लाखों वीरों को एकत्र कर समुद्र से आगे चल पड़ा जहाँ यत्र-तत्र अप्सराएँ उत्साहित हो विचरण कर रही थीं। भिन्न प्रकार के बाजे और नगाड़े बजाते वहाँ आ पहुँचे जहाँ क्षीर-सागर था ।। १३८ ।। सूत से जाल बनाकर समुद्र में फेंके गए जिसमें अन्य कई जीव तो पकड़े गए परन्तु शिवपुत्र कहीं दिखाई नहीं पड़ा। सभी वीर थककर राजा के पास आए और कहने लगे कि अन्य जीव तो बहुत पकड़े गए हैं परन्तु वह मुनि हाथ नहीं आ रहा है ।। १३९ ।। मत्स्य के पेट में योगी कामना-विहीन होकर बैठा है और यह जाल उसको नहीं पकड़ सकता। अब हे राजन् ! उस पर अविलम्ब एक अन्य जाल डालिए और यही उसे पकड़ने की सत्य-विधि है ।। १४० ।। ।। रूआल ।। हे राजन् ! हमने ज्ञान रूपी जाल का नाम सुना है उसे समुद्र में डालकर मुनिराज को पकड़ लीजिए। कई वर्ष बीतने पर भी मुनि अन्य उपाय से हाथ नहीं लगेंगे। हे भृत्य रक्षक ! हम सत्य कह रहे हैं कृपया इसे सुनें ।। १४१ ।। ।। रूआल ।। इसके अतिरिक्त आप करोड़ों उपाय कर लीजिए वह मुनि हाथ नहीं लगेगा केवल ज्ञान का

कै तुम ग्यान जार सु तासु लेहु गहाइ । ग्यान जार जबै न्रिपं बर डारयो तिह बीच । तउन जार गहो मुनाबर जान दुज्ज दधीच ।। १४२ ।। मच्छ सहित मछिंद्र जोगी बद्धि जार मझार । मच्छलोक बिलोक कै सभ ह्वै गए बिसंभार । द्वै महूरत बितो जबै सुध पाइकै कछु अंग । भूप द्वार गए सभै भट बाँधि अस्त्र उतंग ।। १४३ ।। मच्छ उदर लगे से चीरन किउहूँ न चीरा जाइ । हारि हारि परै जबै तब पूछ मित्र बुलाइ । अउर कउन बिचारिऐ उपकार ताकर आज । दिशट जात परे मुनीश्वर सरे हमरो काजु ।। १४४ ।। ।। दोहरा ।। मच्छ पेट किहुँ ना फुटे सभ कर हटे उपाइ । ग्यान गुरू तिनको हुतो पूछा ताहि बनाइ ।। १४५ ।। ।। तोमर छंद ।। भट त्याग कै सभ गरब । न्रिप तीर बोले सरब । न्रिप पूछिऐ गुर ग्यान । कह देइ तोहि बिधान ।। १४६ ।। ।। तोटक ।। बिध पूरकै सुभ चार । अर ग्यान रीत बिचार । गुर भाखिऐ मुहि (मू०ग्रं०६८६) भेद । किम देखिऐ मुनि देव ।। १४७ ।। गुर ग्यान बोल्यो बैन । सुभ बाच सो सुख दैन । छुरका बिबेक लै हाथ । इह फारिऐ तिह साथ ।। १४८ ।। ।। तोटक ।। तब काम तैसोई

जाल डालकर उसे पकड़ लीजिए। राजा ने जब ज्ञान का जाल समुद्र में फेंका तो दूसरे दधीचि के समान मुनि को उस जाल ने पकड़ लिया।। १४२ ।। मत्स्य-सहित योगी मछेन्द्र जाल में बँध गए और उस मत्स्य को देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गए। दो मुहूर्त बाद जब सब लोग कुछ स्वस्थ हुए तो सभी वीर अस्त्र-शस्त्र बाँधकर राजा के दरवाजे पर पहुँचे ।। १४३ ।। वे मछली का पेट चीरने लगे परन्तु किसी से भी वह चीरा नहीं गया। जब सभी हार गए तो राजा ने अपने मित्रों को बुलाया और पूछा कि अब और क्या उपाय है जिससे हमारा काम हो और मुनीश्वर दिखाई पड़ें ।। १४४ ।। ।। दोहा ।। सभी शक्ति लगा चुके परन्तु मत्स्य का पेट नहीं फटा तब राजा ने ज्ञान रूपी गुरु को पूछने का प्रयत्न किया ।। १४५ ।। ।। तोमर छंद ।। सभी वीर गर्व त्यागकर राजा के समीप आकर बोले कि हे राजन् ! ज्ञान रूपी गुरु से पूछिए वह ही इस कार्य के सब विधान बतलाएगा ।। १४६ ।। ।। तोटक ।। राजा ने विधिपूर्वक विचार कर ज्ञान का आवाहन किया और कहा कि हे गुरुदेव ! मुझे रहस्य बतलाइए कि किस प्रकार मुनि के दर्शन हो सकते हैं ।। १४७ ।। ज्ञान रूपी गुरु ने तब अमृत-सम वचन कहे कि हे राजन ! विवेक की छुरी लेकर आप इस मत्स्य को फाड़ो १४८ तोटक तब

कीन । गुर ग्यान ज्यों सिख दीन । गहिकै बिबेकहि हाथ । तिह चीरिआ तिह साथ ।। १४६ ।। जब चीर पेट बनाइ । तब देखए जगराइ । जुत ध्यान मुद्रत नैन । बिन आस चित न डुलैन ।। १५० ।। ।। तोटक ।। सत धात पुता कीन । मुन द्रिष्ट तर धर दीन । जब छूटि रिख को ध्यान । तब भए भसम प्रमान ।। १५१ ।। जो अउर द्रिग तर आउ । सोऊ जिअत जान न पाउ । सो भसम होवत जान । बिनु प्रीति भगति न मान ।। १५२ ।। जब भए पुता भसम । जन अंधता रव रसम । पुन पूछिआ तिह जाइ । मुनराज भेद बताइ ।। १५३ ।। ।। नराज छंद ।। कउन भूप भूम मै बताइ मोहि दीजिऐ । जु मोहि त्रासि न त्रस्यो क्रिपा रिखीस कीजियै । सु अउर कउन हैहठी सु जउन मो न जीतियो । अत्रास कउन ठउर है जहा न मोह बीतियो ।। १५४ ।। ।। नराज ।। न शंक चित्त आनियै निशंक भाख दीजियै । सु को अजीत है रहा उचार तास कीजियै । नरेश देस देस के असेस जीत मै लिए । छितेस भेस भेस के गुलाम आन हुइ रहे ।। १५५ ।। ।। नराज ।। असेख राज राज काज मो लगाइकै दिए । अनंत

जैसी गुरु ने शिक्षा दी थी वैसा ही कार्य किया गया । विवेक को धारण कर उस मत्स्य को चीरा गया ।। १४६ ।। जब मत्स्य के पेट को चीरा गया तब दे जगत्‌राज मुनि दिखाई दिए । वे सभी आशाओं से उदासीन होकर एकाग्र मन से आँखें बंद किये हुए बैठे थे ।। १५० ।। ।। तोटक ।। तब सात धातुओं का बना हुआ पत्र उस मुनि की दृष्टि के नीचे रख दिया गया । जब ऋषि का ध्यान टूटा तो दृष्टि पड़ते ही वह पत्र (दृष्टि के तेज से) भस्म हो गया ।।१५१।। यदि कोई और दृष्टि के नीचे आता तो वह भी भस्म हुए बिना न बचता । बिना सच्ची प्रीति के भक्ति नहीं होती ।। १५२ ।। जब सूर्य द्वारा अंधकार को नष्ट किये जाने के समान पत्र भस्म हो गया तब राजा उस मुनि के पास गए और अपने आने का रहस्य कहा ।। १५३ ।। ।। नराज छंद ।। हे ऋषि ! कृपा करके मुझे उस राजा का नाम पता बता दीजिए जो मुझसे भयभीत नहीं है । वह कौन हठी है जिसे मैंने नहीं जीता है ? वह कौन स्थान है जो मुझसे आतंकित नहीं है ? ।। १५४ ।। ।। नराज ।। आप बिल्कुल बिना किसी शंका के ऐसे वीर का नाम बताइए जो अभी तक अजेय है । मैंने देश-देशान्तरों के राजाओं को जीत लिया है और तमाम धरती के राजाओं को गुलाम बना लिया है ।।१५५।। ।। नराज मैंने अनेकों राजाओं को अपने सेवक के रूप मे काम मे लगाया

तीरथ न्हातकै अछिन्न पुंन मै किए। अनंत छत्री आन छै दुरंत राज मै करो। सु को तिहू जहान मै समाज जउन ते टरो ॥ १५६ ॥ ॥ नराज ॥ अनंग रंग रंग के सुरंग बाज मै हरे। बसेख राजसूइ जग बाजमेध मै करे। न भूम ऐस को रही न जग्ग खंभ जानियै। जगत्र करण कारण करु दुतीय मोहि मानियै ॥ १५७ ॥ सु अत्र छत्र जे धरे सु छत्र सूर सेवही। अदंड खंड खंडके सुदंड मोहि देवही। सु ऐस अउर कौन है प्रतापवान जानिऐ। त्रिलोक आज के बिखै जोगिंद्र मोहि मानिऐ ॥ १५८ ॥ ॥ मछिंद्र बाच ॥ ॥ पारसनाथ सो ॥ ॥ सवैया ॥ कहा भयो जो सभही जग जीत सु लोगन को बहु त्रास दिखायो। अउर कहा जु पै देस बिदेसन माहि भले गज गाहि बधायो। जो मन जीतत है सभ देस वहै तुमरै न्रिप हाथि न आयो। लाज गई कछु काज सर्यो (मू०ग्रं०६८७) नही लोक गयो परलोक न पायो ॥ १५९ ॥ ॥ स्वैया ॥ भूम को कउन गुमान है भूपत सो नही काहू के संग चलैहै। है छलवंत बडी बसुधा यहि काहू की है नह काहू हुऐहै। भउन भंडार

हुआ है और मैंने अनेकों तीर्थों पर स्नान करके विभिन्न प्रकार से दान-पुण्य किया है। अनंत क्षत्रियों का क्षय करके मैं राज कर रहा हूँ। मैं वह हूँ जिससे त्रिलोकी के जीव दूर भागते हैं ॥ १५६ ॥ ॥ नराज ॥ मैंने अनेकों रंगों वाले घोड़ों का हरण किया है और विशिष्ट प्रकार के राजसूय एवं अश्वमेध यज्ञ मैंने किये हैं। आप यह मानें कि कोई भी स्थान और यज्ञस्तम्भ मुझसे अपरिचित नहीं है। आप मुझे संसार का द्वितीय परमेश्वर ही मानें ॥१५७॥ अस्त्र-शस्त्रों को धारण करनेवाले शूरवीर मेरे सेवक हैं। अदंडनीय व्यक्तियों को मैंने खंड-खंड कर दिया है और वे मुझे कर दे रहे हैं। मेरे समान प्रतापी अन्य कोई नहीं माना जाता है और हे योगीराज! त्रिलोकी में आप मुझे ही (शासक के रूप में) मानिए ॥ १५८ ॥ ॥ मछेन्द्र उवाच ॥ ॥ पारसनाथ के प्रति ॥ ॥ सवैया ॥ क्या हुआ जो सारे संसार को जीतकर तुमने आतंकित कर दिया; क्या हुआ यदि तुमने देश-देशान्तरों को अपने हाथियों के पैरों तले रौंद दिया; जो मन सारे देशों को जीतता है वही तुम्हारे हाथ नहीं आ सका है। तुम इसके सामने कई बार लज्जित भी हुए हो और इस तरह तुम्हारा लोक तो गया ही है तुमने परलोक भी गँवा लिया है ॥ १५९ ॥ ॥ सवैया ॥ हे राजन! भूमि का क्या अभिमान है यह किसी के साथ नहीं जाती यह धरती बडी छलना है यह आज तक किसी की नहीं हुई है और न ही

सभै बर नारु सु अंति तुझै कोऊ साथ न दैहै। आनकी बात चलात हो काहे कउ संगि की देह न संगि सिधैहै ॥ १६० ॥ राज के साज को कउन गुमान निदान जु आपन संग न जैहै। भउन भंडार भरे घरबार सु एक ही बार बिगान कहैहै। पुत्र कलत्र सु मित्र सखा कोई अंति समै तुहि साथ न दैहै। चेत रे चेत अचेत महाँ पसु संग थियो सो भी संग न जैहै॥ १६१ ॥ कउन भरोस भटान को भूपत भार परे जिन भाग सहैगे। भाजहै भीर भयानक हुइ कर भारथ मे नही भेर चहैगे। एक उपचार न चाल है राजन मित्र सभै त्रित नीर बहैगे। पुत्र कलत्र सभै तुमरे बिप छूटत प्रान मसान कहैगे॥ १६२ ॥ ॥ पारसनाथ बाच मछिंद्र सो ॥ ॥ तोमर छंद ॥ मुन कउन है वहि राउ। तिह आज मोहि बताउ। तिह जीतहो जब जाइ। तब भाखिअउ मुहि राइ॥ १६३ ॥ ॥ मछिंद्र बाच ॥ ॥ पारसनाथ सो ॥ ॥ तोमर छंद ॥ सुन राज राजन हंस। भव भूम के अवितंस। तुहि जीत ए सभ राइ। पर सो न जीत्यो जाइ ॥ १६४ ॥ अबिबेक है तिह नाउ। तब होय मै

किसी की होगी। तुम्हारे भंडार, तुम्हारी सुंदर स्त्रियाँ अंत में कोई तुम्हारा साथ नहीं देगा। तुम दूसरों की तो बात ही छोड़ो, तुम्हारा शरीर भी अंत में तुम्हारा साथ नहीं देगा ॥ १६० ॥ इस सब शाही ठाट-बाट का भी क्या कहना, यह भी अंत में साथ नहीं जायगा। सारे भवन, भंडार एक ही क्षण में पराए हो जायँगे। पुत्र-स्त्री-मित्रादि कोई तुम्हारा अंत समय में साथ नहीं देगा। हे अचेतावस्था में रहनेवाले महान् पशु! तू अभी भी अपनी नींद का त्याग कर, क्यों तुम्हारी देह जो तुम्हारे साथ पैदा हुई है वह भी तुम्हारे साथ नहीं जायगी ॥ १६१ ॥ इन शूरवीरों का भी भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि तुम्हारे कर्मों के बोझ को ये सब वहन नहीं करेंगे। भयानक कष्ट के सामने ये सब निर्बल होकर भाग जायँगे। एक भी उपाय राजन काम नहीं करेगा और तुम्हारे ये सब मित्र बहते पानी के समान (समय की धारा में) बह जायँगे। तुम्हारे पुत्र, तुम्हारी स्त्रियाँ सभी तुम्हारे प्राण छूटते ही तुम्हें प्रेत-प्रेत कहेंगे ॥१६२॥ ॥ पारसनाथ उवाच मछेन्द्र के प्रति ॥ तोमर छंद ॥ हे मुनि! बताओ वह कौन राजा है जिसे मैं जीतूँ तो तुम मुझे सर्वाधिराज कहोगे ॥ १६३ ॥ ॥ मछेन्द्र उवाच ॥ ॥ पारसनाथ के प्रति ॥ ॥ तोमर छंद ॥ हे राजाधिराज! तुम भूमि पर शिरोमणि हो। तुमने सब राजाओं को जीत लिया है लेकिन जो मैं बता रहा हूँ उसे तुम नहीं जीत

तिह ठाँउ। तिह जीत कही न भूप। वह है सरूप अनूप ॥ १६५ ॥ ॥ छपै छंद ॥ बलि महीप जिन छल्यो ब्रहम बावन बस किनो। क्रिशन बिशन जिन हरे दंड रघुपत ते लिनो। दसग्रीवहि जिन हरा सुभट सुंभासुर खंड्यो। महखासुर मरदीआ मान मधकीट बिहंड्यो। मऊ मदन राज राजा त्रिपति त्रिप अबिबेक मंत्री कियो। जिह देव दइत गंध्रब मुन जीत अडंड डंडहि लियो ॥ १६६ ॥ ॥ छपै छंद ॥ जवन क्रुद्ध कै जुद्ध करण कैरव रण घाए। जास कोप के कीन सीस दस सीस गवाए। जउन क्रुद्ध के किए देव दानव रण लुज्झे। जास क्रोध के कीन खशट कुल जादव जुज्झे। सोऊ तास मान सैनाधिपति जदिन रोस वहु आइहै। बिन इक बिबेक सुनहो त्रिपत अवर समुहि को जाइहै ॥१६७॥ ॥ पारसनाथ बाच मछिंद्र सो ॥ ॥ छपै छंद ॥ सुनहु मछिंद्र (मू०ग्रं०६८८) बैन कहो तुहि बात बिचच्छन। इक बिबेक अबिबेक जगत द्वै त्रिपत सु लच्छन। बड जोधा दुहूँ संग बडे दोऊ आप धनुरधर।

सके ॥ १६४ ॥ उसका नाम अविवेक है और वह तुम्हारे हृदय में निवास करता है। उसकी जीत के बारे में हे राजन ! तुमने कुछ नहीं कहा है, वह भी अनुपम स्वरूप वाला है ॥ १६५ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ इस अविवेक ने बलशाली बलि को जीता था और उसे वामन के अधीन होना पड़ा था। इसी कृष्ण, विष्णु को नष्ट कर दिया और रघुपति राम से दंड वसूल किया। इसी ने रावण, शंभासुर का नाश किया और इसी ने महिषासुर, मधु-कैटभ का मर्दन कर दिया था। हे कामदेव के समान सुन्दर राजन् ! तुमने उस अविवेक को अपना मंत्री बनाया हुआ है, जिसने देव, दैत्यों, गंधर्वों, मुनियों सबको जीतकर उनसे कर वसूल किया ॥ १६६ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ इसी अविवेक के क्रोधित होने पर कर्ण और कौरव युद्धस्थल में नष्ट हो गए। इसी के क्रुद्ध होने पर रावण को दसों सिर गँवाने पड़े। इसी के कारण देव-दानवों का युद्ध हुआ और इसी के कारण यादवों के छहों कुल आपस में जूझ गए। इसलिए हे सेनाधिपति ! राजन् जिस दिन तुम्हारा अविवेक क्रुद्ध होकर तुम्हारे नियंत्रण से बाहर हो जायगा उस दिन बिना एक विवेक को प्रभावित किये वह सब पर छा जायगा ॥ १६७ ॥ ॥ पारसनाथ उवाच मछेन्द्र के प्रति ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ हे मछेन्द्र ! सुनो, मैं तुम्हें एक विलक्षण बात कहता हूँ। विवेक-अविवेक दोनों स्पष्ट लक्षणों वाले जगत के राजा हैं। दोनों बड़े योद्धा और धनुर्धर हैं दोनों की एक ही जाति और एक ही जननी है

एक जात इक पात एक ही मात जोधाबर। इक तात एक ही बंस पुन बैरभाव दुह किम गहो। तिह नाम ठाम आभरण रथ शस्त्र अस्त्र सभ मुनि कहो॥ १६८॥ ॥ मछिंद्र बाच॥ ॥ पारसनाथ सो॥ ॥ छपय॥ असित बरण अबिबेक असित बाजी रथ सोभत। असित बस्त्र तिह अंग निरख नारी नर लोभत। असित सारथी अग्र असित आभरण रथोतम। असित धनख कर असित धुजा जानक पुरखोतम। इह छब नरेश अबिबेक छिप जगत जयं कर मानियै। अन जित्त जास कह ना तजो किशन रूप तिह जानियै॥ १६६॥ ॥ छपै छंद॥ पुहप धनख अलपन चमतस जिह धुजा बिराजै। बाजत झाझर तूर मधुर बीना धुन बाजै। सभ बजत जिह संग बजत सुंदर छब सोहत। संग सैन अबला सँबूह सुर नर मुन मोहत। अस मदन राज राजा त्रिपत जदिन क्रुद्धि करि धाइहै। बिन एक बिबेक ताके समुहि अउर दूसर को जाइहै॥ १७०॥ ॥ छपै छंद॥ करत न्रित सुंदरी बजत बीना धुन मंगल। उपजत राग सँबूह बजत बैरागी बंगल। भैरव राग बसंत दीप हिंडोल

दोनों का एक ही पिता और एक ही वंश है अतः इन दोनों में वेर-भावना कैसे हो सकती है। हे मुनि ! अब तुम मुझे इनके स्थान, नाम, आभूषण, रथ, अस्त्र, शस्त्र आदि के बारे में बताओ॥ १६८॥ ॥ मछेन्द्र उवाच॥ ॥ पारसनाथ के प्रति॥ ॥ छप्पय॥ अविवेक का काला रंग, काला रथ और उसके काले घोड़े हैं। उसके वस्त्र भी काले हैं और उसे देखकर नर-नारी सभी मोहित होते हैं। उसका आगे सारथी भी काला और उसके वस्त्र भी काले हैं तथा उसका रथ भी अंधकार है। उसका धनुष, ध्वजा सब काला है और वह अपने को सर्वश्रेष्ठ पुरुष मानता है। हे राजन्! यह अविवेक की छवि है, जिसने जगत को जीत रखा है। यह अजेय है और इसे महाबली कृष्ण का रूप मानिए॥ १६६॥ ॥ छप्पय छंद॥ यह (कामदेव के रूप में) पुरुष धन्वा है और इसकी ध्वजा शोभा से युक्त है। इसके चारों ओर सुन्दर मधुर वीणा और नाद बजता रहता है। इसके अंग-संग सभी प्रकार के वाद्य बजते रहते हैं। इसके साथ स्त्रियों का झुंड रहता है और ये स्त्रियाँ सुर-नर एवं मुनियों के मन को मोहित करनेवाली हैं। कामदेव के रूप में यह अविवेक जिस दिन क्रुद्ध होकर चढ़ बैठेगा उस दिन मात्र एक विवेक के अलावा अन्य दूसरा कोई इसके सामने टिक नहीं पायगा॥ १७०॥ ॥ छप्पय छंद॥ सुंदरियाँ वीणा बजाती मंगलगीत गाती नृत्य करती हैं। रागों की सामूहिक ध्वनि उठती है

महासुर । उघटत तान तरंग सुनत रीझत धुन सुर नर । इह छब प्रभाव रितराज न्रिप जदिन रोस करि धाइहै । बिन इक बिबेक ताके न्रिपत अउर समुहि को जाइहै ॥ १७१ ॥
॥ सोरठ ॥ सारंग सुद्ध मलार बिभास सरब गन । रामकली हिंडोल गौड गूजरी महाँ धुन । ललत परज गवरी मल्हार कान्नड़ा महाँ छबि । जाहि बिलोकत बीर सरब तुमरे जैहै दबि । इह बिध नरेश रितराज न्रिप मदन सुअन जब गरजहै । बिनु इक्क ग्यान सुनहो त्रिपति सु अउर दूसर को बरजिहै ॥१७२॥
॥ छपै छंद ॥ कउधत दामन सघन सघन घोरत चहुदिस घन । मोहित भामन सघन डरत बिरहनि त्रिय लख मन । बोलत दादर मोर सुघन झिल्ली झिंकारत । देखत द्रिगन प्रभाव अमित मुन मन ब्रित हारत । इह बिधि हुलास मद (मू०ग्रं०६८६) नज दूसर जदिन चटक दै सटक है । बिनु इक बिबेक सुनहो न्रिपत अउर दूसर को हटक है ॥ १७३ ॥ ॥ छपै छंद ॥ त्रितीआ पुत्र अनंद जदिन शस्त्रन कह धरिहै । करिहै चित्र बचित्र सु रण सुर नर मुनि डरिहै । कोभट धरिहै धीरज

और बैराड़ी, बंगली रागिनियाँ बजने लगती हैं। भैरव, बसंत, दीपक, हिंडोल आदि की इतनी सुन्दर ध्वनि उठती है कि नर-नारी मोहित हो जाते हैं। इस सारी छवि के प्रभाव के साथ हे राजन् ! जिस दिन यह आक्रमण करेगा तो बिना विवेक को धारण किए कौन उसके सामने जा सकता है ॥ १७१ ॥ ॥ सोरठा ॥ सारंग, शुद्धमल्हार, विभास, रामकली, हिंडोल, गौड़, गूजरी, ललित, परज, गौड़ी, मल्हार, कान्हड़ा आदि की छवि को देख-सुनकर तुम्हारे जैसे वीर उसकी चकाचौंध में दब जाते हैं। इस प्रकार ऋतुराज वसंत में मदन के रूप में अविवेक गर्जना करेगा तो बिना ज्ञान के, हे राजन् ! कौन इसको प्रताड़ित कर सकेगा ॥ १७२ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ जब चारों दिशाओं से बादल घेर लेंगे, बिजलियाँ चमकेंगी, ऐसे वातावरण में विरहिणी स्त्रियाँ मन को मोह लेंगी। मेंढक, मोर की आवाज़ और झिल्ली की झंकार सुनाई पड़ेगी। कामिनियों के मदमस्त नेत्रों का प्रभाव देखकर मुनिगण भी अपने व्रतों से च्युत होकर मन को हार जाते हैं। इस प्रकार का उल्लासयुक्त वातावरण जिस दिन पूरी चटक के साथ प्रस्तुत होगा तो हे राजन् ! बताओ उस दिन विवेक के अतिरिक्त दूसरा कौन इसके प्रभाव को अस्वीकार करेगा ॥ १७३ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ जब यह आनन्द के रूप में शस्त्र धारण करके विचित्र प्रकार से युद्ध करेगा तो ऋषि-मुनि भी डर जायँगे। कौन ऐसा

दिन सामुहि वह ऐहै। सभ को तेज प्रताप छिनक भीतर हर लैहै। इह बिधि अनंद दुधरख भट जदिन शस्त्र गहमिक्क है। बिन इक धीरज सुनि रे न्रिपत सु अउर न दूसरि टिक्क है॥ १७४॥ ॥ छपै छंद॥ रतन जटत रथ सुभत खचित बरजन मुकता फल। हीर चीर आभ्रण धरे सारथी महाबल। कनक देख कुररात कठन कामन ब्रित हारत। तन पटंबर जरकसी परम भूखन तन धारत। इह छब अनंद मदनज न्रिपत जदिन गरज दल गाहि है। बिन इक धीरज सुनि रे न्रिपत सु अउर समुह को जाहि है॥ १७५॥ ॥ छपै छंद॥ धूम्र बरण सारथी धूम्र बाजीरथ छाजत। धूम्र बरण आभरण निरख सुर नर मुन लाजत। धूम्रनैंन धूमरो गात धूमर तिह भूखन। धूम्र बदन ते बमत सरब शत्रू कुल दूखन। अस भरम मदन चतुरथ सुवन जदिन रोस करि धाइ है। दल लूट कूट तुमरो न्रिपत सु सरब छिनक महि जाइ है॥ १७६॥ ॥ छपै छंद॥ अउर अउर जे सुभटि गनो तिह नाम बिचच्छन। बड जोधा बड सूर बडे जितवार सुलच्छन। कलहि नाम इक नारि महा कल रूप कलह कर। लोग चतुरदस माझि जास छोरा

शूरवीर है जो धैर्य रखेगा और इसके सामने आयेगा। यह सबका तेज-प्रताप क्षण भर में हर लेगा। इस प्रकार यह दुर्धर्ष वीर जिस दिन शस्त्र लेकर गमकेगा उस दिन, हे राजन्! एक धैर्य के सिवा दूसरा अन्य कोई सामने टिक नहीं सकेगा॥ १७४॥ ॥ छप्पय छंद॥ रत्नजटित रथ मोतियों से खचित वस्त्राभूषण धारण किये हुए इसका सारथी महावली होगा। स्वर्ण को देख कर कठोर से कठोर कामिनियाँ भी अपना व्रत त्यागकर मोहित हो उठेगी और यह तन पर परम आभूषण एवं सुन्दर वस्त्र धारण करेगा। हे राजन्! आनन्द देनेवाला कामदेव जब इस छवि के साथ गर्जन करते हुए सामने आएगा तो धैर्य के अतिरिक्त कौन इसके सामने होगा॥१७५॥ ॥ छप्पय छंद॥ काले रंग वाला सारथी, काला रथ और घोड़े और शोभायुक्त काले वस्त्रों को देख कर सुर, नर, मुनि सब लज्जित होंगे। काली आँखें, काला शरीर, काले आभूषण इसके काले बदन पर दमकेंगे और इसके शत्रुओं को कष्ट होगा। कामदेव का यह चौथा पुत्र जिस दिन क्रोधित होकर तुम्हारी ओर चल पड़ेगा, तो हे राजन्! यह क्षण भर में तुम्हारे दलों को लूटकर काट डालेगा॥ १७६॥ ॥ छप्पय छंद॥ अन्य वीरों के नाम भी विचित्र हैं। ये सभी बड़े योद्धा और युद्धों को हैं कलह नाम स्त्री की एक

नही सुर नर । सभ शस्त्र अस्त्र भीतर निपण अति प्रभाव तिह जानिऐ । सभ देस भेस अरु राज सभ त्रास जवन को मानिऐ ॥ १७७ ॥ ॥ छपै छंद ॥ बैर नाम इक बीर महा दुरधरख अजै रण । कबहु दीन नही पीठि अनिक जीते जिह न्रिप गण । लोचन स्रोणत्त बरण अरन सभ शस्त्र अंगि तिह । रवि प्रकाश सर धुजा अरण लाजत लख छबि जिह । इह भाँत बैर बीरा बडो जदिन क्रुद्ध करि गरजिहै । बिनु एक शांत सुन रे न्रिपति सु अउर न दूसर बरजिहै ॥ १७८ ॥ ॥ छपै छंद ॥ धूम्र धुजा रथ धूम्र धूम्र सारथी बिराजत । धूम्र बस्त्र तन धरो निरख धुअरो मन लाजत । धूम्र धनुख (मू०ग्रं०६६०) कर छस्यो बान धूमरे सुहाए । सुर नर नाग भुजंग जच्छ अर असुर लजाए । इह छब प्रभाव आलस न्रिपत जदिन जुद्ध कह जुट्टहै । उद्दम बिहीन सुन रे न्रिपत अउर सकल दल फुट्टहै ॥ १७९ ॥ ॥ छपै छंद ॥ हरित धुजा अरु धनख हरित बाजी रथ सोभत । हरित बस्त्र तन धरे निरख सुर नर मन मोहत । पवन बेग रथ चलत भ्रमन बधूला लखि

है जिसका भीषण रूप है। उसने चौदह लोकों में किसी सुर, नर को नही छोड़ा है। अस्त्र, शस्त्रों में निपुण अति प्रभावशाली वीर और देश-विदेशों के राजा सब उसका भय मानते हैं ॥ १७७ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ शत्रुता नामक एक अजेय वीर है जिसने कभी पीठ नहीं दिखाई और अनेकों राजाओं को जीत लिया। इसके नेत्र और रंग रक्त के समान लाल थे और सभी अंगों पर शस्त्र शोभायमान है। सूर्य के प्रकाश के समान इसकी ध्वजा और इसके सौन्दर्य को देखकर सूर्य भी लज्जित होता है। इस प्रकार शत्रुता नामक यह महावीर जिस दिन क्रोधित होकर गरजेगा उस दिन इसका सामना शान्ति के अतिरिक्त और कोई दूसरा नहीं कर सकेगा ॥ १७८ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ काली ध्वजा, काले रथ और काला सारथी शोभायमान है। काले वस्त्र को देखकर धुआँ भी मन में लज्जित होता है। काले धनुष पर इसके काले बाण शोभायमान होते हैं। इसे देखकर सुर, नर, सर्प, यक्ष, असुर लज्जित होते हैं। हे राजन ! यह प्रभावित करनेवाली छवि आलस्य की है और हे राजन् ! जिस दिन यह तुम्हारे सामने युद्ध के लिए आ डटेगा तुम्हारा उद्यम-विहीन दल खण्ड-खण्ड हो जाएगा ॥ १७९ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ हरी ध्वजा, हरे धनुष, हरे घोड़े, हरे रथ हरे वस्त्र तन पर धारण किये हुए को देखकर सुर नर मोहित हो जाते हैं पवन वेग से इसका रथ बवण्डर को भी लज्जित करता है

लाजत । सुनत स्रवन चक शबद मेघ मन महि सुख साजत । इह छबि प्रताप मद नाम त्रिप सदिन तुरंग नचाइहै । बिनु इक बिबेक सुन लै त्रिपत सु समर न दूसर जाइहै ॥ १८० ॥ ॥ छपै छंद ॥ असित धुजा सारथी असित बसत्र अरु बाजी । असित कवच तन कसे तजत बाणन की राजी । असित सकल तिह बरण असित लोचन दुख मरदन । असित मणन के सकल अंग भूखण रुच बरधन । कस कुविति बीर धुर धरख अति जदिन समर कह सज्जिहै । बिनु इक धीरज बीर तजि अउर सकल दल भज्जिहै ॥ १८१ ॥ ॥ छपै छंद ॥ चरम बरम कह धरे धरम छत्री को धारत । अजै जान आपनहि सरब रण सुभट पचारत । धरन न आगै धीर बीर जिह सामुहि धावत । सुर असुर नर नार जच्छ गंध्रब गुन गावत । इह बिधि गुमान जा दिन गरज परम क्रोध कर ढूक है । बिन इक्क सील सुन रे त्रिपति सु अउर सकल पर हूक है ॥ १८२ ॥ ॥ छपै छंद ॥ कड़क क्रोध कर चड़ग भड़कि भादवि ज्यों गज्जत । सड़क तेग दामन तड़क्क तड़ भड़ रण सज्जत । लड़क लुत्थ बित्थुरग सेल सामुहि है घल्लत । जदिन रोस रावत

इसका शब्द सुनकर मेघ भी मन में सुख अनुभव करता है। यह गर्व नामक प्रतापी व्यक्तित्व जिस दिन तुम्हारे सामने घोड़े को नचाएगा उस दिन विवेक के अतिरिक्त दूसरा कोई युद्ध में इसके सामने ठहर नहीं पाएगा ॥ १८० ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ काले ध्वज, सारथी, वस्त्र, घोड़े, कवच आदि से सुसज्जित जो बाणों की पंक्ति छोड़ता है उसका सम्पूर्ण काला रंग है, काली आँखें हैं और वह दुःखों का नाश करनेवाला है। काली मणियों के आभूषण उसके अंगों के सौन्दर्य का वर्धन करते हैं। यह कुवृत्ति नामक वीर जिस दिन धनुष लेकर मैदान में सामने आ जायगा उस दिन धैर्य के अतिरिक्त सम्पूर्ण दल भाग खड़ा होगा ॥ १८१ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ चमड़े का कवच धारण किये हुए क्षत्रिय के व्रत को निभानेवाला और अपने आपको अजेय समझकर यह सबको ललकारनेवाला है। धरती पर कोई भी वीर इसके सामने नहीं टिकता और सुर, असुर, यक्ष, गंधर्व, नर, नारी सभी इसके गुण गाते हैं। यह अभिमान जिस दिन परम क्रोधी होकर और गरजकर सामने आ खड़ा होगा उस दिन एक शील के बिना हे राजन्! अन्य सभी नष्ट हो जाएँगे ॥ १८२ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ क्रोध से भादों के बादलों की तरह कड़कनेवाला और दामिनी के समान को और अपने सामने के वीरों की लाशों को छप्प-

रणहि दूसर को झल्लत। इह बिधि अपमान तिह भ्रातभन जदिन रुद्र रस मच्चिहै। बिन इक्क सील दुसील भट्ट सु अउर कवण रणि रच्चिहै ॥ १८३ ॥ ॥ छपै छंद ॥ धनख मंडलाकार लगत जाको सदीव रण। निरखत तेज प्रभाव भटक्क भाजत है भट गण। कउन बाँध ते धीर बीर निरखत दुति लाजत। नहन जुद्ध ठहराति त्रसत दसहूँ दिस भाजत। इह बिधि अनरथ सम्मरत्थ रण जदिन तुरंग मटक्क है। बिन इक धीर सुन बीरबर सु दूसर कउन हटक्कि है। (मू०ग्रं०६६१) ॥ १८४ ॥ ॥ छपै छंद ॥ पीत बस्त्र तन धरे धुजा पिअरी रथ धारे। पीत धनख कर सोभ मान रति पति को टारे। पीत बरण सारथी पीत बरणै रथ बाजी। पीत बरन को बाण खेत चड़ गरजत गाजी। इह भाँत बैर सूरा त्रिपति जदिन गरजि दल गाहिहै। बिन इक ग्यान सवधान ह्वै अउर समर को चाहिहै ॥ १८५ ॥ ॥ छपै छंद ॥ मलित बस्त्र तन धरे मलित भूखन रथ बाँधे। मलित मुकट सिर धरे परम बाणण कह साँधे। मलित बरण सारथी मलित ताहूँ आभूखन। मल्यागर की गंध सकल शत्रू कुल दूखन। इह भाँति निंद

खण्ड कर बिखेरनेवाला यह है। इसका क्रोध युद्ध में कोई भी सहन नहीं कर सकता। यह अपमान जिस दिन तुम्हारा साथी बनकर रौद्र रस मचाएगा, उस दिन शील नामक शूरवीर के अतिरिक्त भला इससे कौन युद्ध करेगा ॥ १८३ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ जिसका मण्डलाकार धनुष है और जो सदा युद्ध मचाये रहता है तथा जिसके तेज प्रभाव को देखकर वीरगण भटककर भाग जाते हैं, इसको देखते ही वीरों की छवि धैर्य छोड़कर लज्जित हो जाती है और वे युद्ध में न ठहरकर दसों दिशाओं में भाग खड़े होते हैं। यह अनर्थ नामक समर्थ वीर जिस दिन तुम्हारे सामने घोड़ा नचा देगा तो हे वीरों में श्रेष्ठ! इससे धैर्य के अतिरिक्त कौन दूसरा लड़ेगा ॥ १८४ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ पीले वस्त्र तन पर धारण किये हुए और पीली ध्वजा रथ पर लगाए यह कामदेव के अभिमान को तोड़नेवाला पीला धनुष हाथ में लिये हुए है। इसका सारथी, रथ, घोड़े सब पीले रंग के हैं। पीले ही रंग के इसके बाण हैं और यह युद्ध में गरजता है। इस प्रकार का शूरवीर 'वैरभाव' जिस दिन हे राजन्! गरजकर दल का मंथन करेगा उस दिन एक 'ज्ञान' के बिना अन्य कौन उससे लड़ सकेगा १८५ छप्पय छंद मैले वस्त्र मैले तन पर धारण किये और रथ बाँधे हुए मैला मुकुट सिर पर धारण किये हुए बाण साधे हुए मैले वर्ण

अनधर सुभट जदिन अयोधन मच्चि है । बिन इक धीरज सुन बीर बर सु अउर कवण रणि रच्चि है ॥ १८६ ॥ ॥ छपै छंद ॥ घोर बस्त्र तन धरे घोर पगीआ सिर बाधे । घोर बरण सिर मुकट घोर शत्रन कह साधे । घोर मंत्र मुख जपत परम आघोर रूप तिह । लखत स्वरग भहरात घोर आभा लखिकै जिह । इह भांत नरक दुरधरख भट जदिन रोस रणि आइहै । बिनु इक हरि नाम सुनहो त्रिपति सु अउर न कोइ बचाइहै ॥१८७॥ ॥ छपै छंद ॥ सिमट सांग संग्रहै सेल सामुहि ह्वै सुट्टै । कलति क्रोध संजुगति गलित गैवर ज्यों जुट्टै । इक्क इक्क बिन कौन इक्क ते इक्क न चल्लै । इक्क इक्क संग भिड़ै शस्त्र सनमुख ह्वै झल्लै । इह बिधन सील दुस्सील भट सहत कुचील गरजिहै । बिनु एक सुचहि शुनि त्रिप त्रिपणि सु अउर न कोऊ बरजिहै ॥ १८८ ॥ ॥ छपै छंद ॥ शस्त्र अस्त्र दोऊ निपण निपण सभ बेद सास्त्र कर । अरण नेत्र अर रकत बस्त्र ध्रितवान धनुरधर । बिकट बांक्य बड इयाछ बडो अभिमान धरे मन । अमित रूप अमितोज अभै आलोक अजै रन । अस सुभट छुधा त्रिशना सबल जदिन रंग रण रच्चिहै ।

और आभूषणों वाले सारथी को लिये, चंदन की शक्लवाला और शत्रुओं को कष्ट देनेवाला निंदा नामक वीर जिस दिन युद्ध छेड़ देगा उस दिन एक धैर्य के बिना अन्य कौन वीर उससे युद्ध करेगा ॥ १८६ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ भयानक वस्त्र पहने, भयानक पगड़ी बाँधे, भयानक मुकुट धारणकर भयानक शत्रुओं को ठीक करनेवाला, भयानक मंत्र जपनेवाला, भयानक स्वरूप वाला, जिसके स्वरूप को देखकर स्वर्ग भी भयभीत हो जाता है, वह दुर्धर्ष वीर नरक जिस दिन क्रुद्ध होकर युद्ध के लिए आ जायगा उस समय एक परमात्मा के नाम के बिना हे राजन्! कोई तुमको नहीं बचा सकेगा ॥ १८७ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ पीछे हटकर जो भाला पकड़ता है और सामने होकर भाला फेंकता है, वह क्रोधयुक्त होकर पशु के समान टूट पड़ता है। वह एक-एक से सँभाला नहीं जाता। वह एक-एक के संग भिड़ता है और सामने होकर शस्त्रों के वार सहता है। इस प्रकार का दुःशील वीर जब क्रोधित होकर गरजेगा तो हे राजन्! तब मन की स्वच्छता के बिना कोई अन्य उससे पार नहीं पा सकेगा ॥ १८८ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ शस्त्र-अस्त्रों, वेद-शास्त्रों में निपुण, लाल आँखों और वस्त्रों वाला धैर्यवान धनुर्धर, विकट पिपासा और अभिमानी मन वाला अपरिमित तेजवाला अजेय और प्र क्षुधा और तृष्णा रूपी वीर

बिनु इस्क स्रिपति निग्रह बिना अउर जीअन लै बचिहै ॥१८९॥ ॥ छपै छंद ॥ पवन बेग रथ चलत सु छबि सावज तड़ता क्रित। गिरत धरन सुंदरी नैक जिह दिसि फिरि झाकत। मदन मोह मन रहत मनुछ देखित छबि लाजत। उपजत हीय हुलास निरख दुति कह दुख भाजत। इम कपट (मू०ग्रं०६९२) देव अनजेव ध्रिपु जदिन झटक दै धाइहै। बिन एक शांति सुनहो श्रिपत सु अउर कवन समुहाइहै ॥१९०॥ ॥ छपै छंद ॥ चखन चारु चंचल प्रभाव खंजन लखि लाजत। गावत राग बसंत बेण बीना धुन बाजत। धधकत ध्रिकट म्रिदंग झांझ झालर सुभ सोहत। खग म्रिग जच्छ भुजंग असुर सुर नर मन मोहत। अस लोभ नाम जोधा बडो जदिन जुद्ध कह जुट्टिहै। जस पवन बेग ते मेघगण सु अस तव सभ दल फुट्टिहै॥ १९१ ॥ ॥ छपै छंद ॥ धुज प्रमाण बीजुरी भुजा भारी जिह राजत। अति चंचल रथ चलत निरख सुर नर मुन भाजत। अधिक रूप अमितोज अमिट जोधा रण दुहकर। अति प्रताप बलवंत लगत

जिस दिन युद्ध मचा देगा तब मात्र एक निग्रह के बल पर ही हे राजन्! तुम जीवित बच पाओगे ॥ १८९ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ पवन वेग से चलनेवाले रथ की छवि विद्युत् के समान है। सुंदरियाँ इसके दर्शन मात्र से पृथ्वी पर गिर पडती हैं। कामदेव भी इस पर मोहित होता है और मनुष्य इसकी छवि को देखकर लज्जित हो जाते हैं। इसको देखने से हृदय में उल्लास का संचार होता है और दुःख भाग जाते हैं। यह 'कपट' हे राजन्! जिस दिन झटका देकर सामने आ जायगा तो एक शांति के बिना हे राजन्! कौन इसके सामने आएगा ॥ १९० ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ इसके सुन्दर नेत्रों को देखकर एवं चंचल प्रभाव को अनुभव कर खंजन नामक पक्षी भी लज्जित होते हैं। यह वसंत राग का गायन करता है और इसके पास वीणा-वादन चलता रहता है। तबले, मृदग आदि के बोल तथा झाँझ, झालर इसके पास शोभायमान होते हैं। पक्षी, मृग, यक्ष, भुजंग, असुर, सुर, नर सभी का यह मन मोह लेता है। लोभ नामक यह बड़ा योद्धा जिस दिन युद्ध के लिए सामने आ जायगा तो हे राजन्! तुम्हारा यह सारा दल उसी भाँति खंड-खंड हो जायगा जैसे पवन-बेग से बादल छिटक जाते हैं ॥ १९१ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ ध्वजा के समान लंबा और जिसकी भुजा बिजली के समान है; उसका रथ अत्यन्त गतिवान है और इसको देखकर सुर-नर मुनि भाग खड़े होते हैं। यह अत्यधिक अजेय योद्धा और युद्ध मे दुष्कर काय है शत्रुओं को यह अत्यन्त

शलन कह रिप हर । अस मोह नाम जोधा जसी जदिन जुद्ध कह जुइ है । बिन इक बिचार अबिचार ब्रिप अउर सकल दल फुट्टि है ॥ १९२ ॥ ॥ छपै छंद ॥ पवन बेग रथ चलत गवन लख मोहित नागर । अति प्रताप अमितोज अजै प्रतमान प्रभा धर । अति बलिष्ट अद्धिष्ट सकल सैना कहु जानहु । क्रोध नाम बढियाछ बडो जोधा जिअ मानहु । धरि अंग कवच धर पन ब्रकर जदिन तुरंग मटक है । बिनु एक शांति सुन सत्ति ब्रिप सु अउर न कोऊ हटकि है ॥ १९३ ॥ ॥ छपै छंद ॥ गलित दुरद मदि चढ़्यो काढ करवार भयंकर । स्याम बरण आभरण खचित सभ नील मणिण बर । स्वरन किंकणी जाल बधे बानैत गजोतम । अति प्रभाव जुति बीर सिद्ध सावंत नरोतम । इह छबि हंकार नामा सुभट अति बलिष्ट तिह मानिऐ । जिह जगत जीव जीते सभै आप अजित तिह जानिऐ ॥ १९४ ॥ ॥ छपै छंद ॥ सेत हसत आरूड़ दुरत चहूँ ओर चवर बर । स्वरण किंकणी बधे निरख मोहत नारी नर । सुभ्र सैहथी पाण प्रभा कर मै अस धावत । निरख दिपति

बलवान और उनका हरण कर देनेवाला लगता है । यह मोह नामक योद्धा जिस दिन युद्ध के लिए आ जुटेगा तब एक विचार के अतिरिक्त अन्य सारा अविचारी दल खंडित हो जायगा ॥ १९२ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ इसका रथ पवन वेग से चलता और सभी नागरिक इसको देखकर मोहित हो जाते हैं । यह अत्यन्त प्रतापी तेजवान् अजेय एवं सुंदर है । यह अत्यन्त बलिष्ठ और सारी सेना का स्वामी है । यह क्रोध नामक योद्धा है और इसे महाबली समझो । यह शरीर पर कवच धारण कर चक्र आदि लेकर जिस दिन घोड़े को सामने आ नचायेगा, हे राजन् ! सत्य समझो उस दिन एक शांति के बिना इसे अन्य कोई नहीं मोड़ सकेगा ॥ १९३ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ मदमस्त हाथी की तरह यह भयंकर तलवार निकालकर चलता है । इसका वर्ण काला और यह नीलमणियों से खचित रहता है । यह स्वर्ण-किंकिणियों के जाल से बँधा हुआ उत्तमोत्तम हाथी है और सब लोगों पर इस वीर का प्रभाव अत्युत्तम है । यह अहंकार नामक बली है, जिसे महाबलशाली समझो । इसने सारे संसार के जीवों को जीत लिया है और यह स्वयं अजेय है ॥ १९४ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ श्वेत हाथी पर सवार इसके चारों ओर चँवर डुलाया जा रहा है । इसकी स्वर्ण-किंकिणियाँ देखकर नर-नारी सभी मोहित होते हैं । इसके हाथ में बरछी और यह सूर्य के समान चल रहा है बिजली भी इसकी चमक

दामनी प्रभा हियरे पछुतावत । अस द्रोह नाम जोधा बडो अति प्रभाव तिह जानिऐ । जल थल बिदेस देसन न्रिपत आन जवन को मानिऐ ।। १९५ ।। ।। छपै छंद ।। तबल बाज घुंघरार सीस कलगी जिह सोहत । द्वै क्रिपाण गजगाह निरख (मू०ग्रं०६९३) नारी नर मोहत । अमित रूप अमितोज बिकट बानैत अमिट भट । अति सुबाह अति सूर अजै अनभिद्द सु अनकट । इह भांत भरम अनभिद्द भट जदिन क्रुद्ध जिय धारहैं । बिन इक बिचार अबिचार न्रिप सु अउर न आन उबारिहैं ।। १९६ ।। ।। छपै छंद ।। लाल माल सुभ बंधै नगन सर पेचि खचित सिर । अति बलिष्ट अनिभेद अजै सावंत भटा बर । कटि क्रिपाण सैहथी तजत धारा बाणन कर । देखत हसत प्रभाव लजत तड़िता धाराधर । अस बहम दोख अनमोख भट अकट अजै तिह जानिऐ । अरि दवन अजै आनंद कर न्रिप अबिबेक को मानिऐ ।। १९७ ।। ।। छपै छंद ।। असित बस्त्र अरु असित गात अमितोज रणाचल । अति प्रचंड अति बीर बीर जीते जिन जल थल । अकट अजै अनभेद अमिट अनरथि नाम तिह ।

को देखकर अपनी कम प्रभा के लिए दुःख का अनुभव करती है । द्रोह नामक इस बड़े योद्धा को अत्यन्त प्रभावशाली मानिए और इसी 'द्रोह' को जल-स्थल देश-विदेशों में हे राजन् ! अधीनता स्वीकार की जाती है ।। १९५ ।। ।। छप्पय छंद ।। तबलावादकों की तरह घुँघराले बालों वाला और दो कृपाणों वाला यह जिसको देखकर नर-नारी मोहित हो जाते हैं । यह अपरिमित ओज का स्वामी महाबली वीर है । यह लम्बी भुजाओंवाला अत्यन्त शूरवीर, अजेय और अकाट्य है । यह 'भ्रम' नामक अभेद्य वीर जिस दिन क्रोध को मन में धारण कर लेगा, तब एक विवेक के बिना हे राजन् ! और कोई उद्धार नहीं कर सकेगा ।। १९६ ।। ।। छप्पय छंद ।। यह नंगे सिर वाला लालों से खचित मालाओं से सुशोभित अत्यन्त बलिष्ठ, अभेद्य, अजेय शूरवीर है । इसके कटिबन्ध में कृपाण और भाला शोभायमान है और यह बाणों की धारा छोड़नेवाला है । इसकी हँसी के प्रभाव को देखकर बिजली भी लज्जित हो जाती है । ब्रह्मदोष नामक यह सुभट अजेय और अकाट्य है । हे राजन् ! यह अविवेक रूपी शत्रु, अपने शत्रु को जला देनेवाला, अजेय और (मूर्खों के लिए) अत्यन्त सुखकारी है ।।१९७।। ।। छप्पय छंद ।। काले वस्त्र और शरीर वाला यह अपरिमित तेज वाला है । यह अत्यन्त प्रचण्ड है और इसने युद्धस्थल में अनेको वीरो को जीता है इस अकाट्य अभेद्य का नाम अनर्थ है यह

अति प्रमाथ अर मथन शत्र सोखन है बिद जिह। दुरधरख सूर अनभेद भट अति प्रताप तिह जानिऐ। अनजै अनंद दाता अपन अति सुबाहु तिह मानिऐ॥ १९८॥ ॥ छपै छंद॥ मोर बरन रथ बाज मोर ही बरण परम जिह। अमित तेज दुरधरख शत्र लखि कर कंपत तिह। अमिट बीर आजानबाहु आलोक रूप गन। मतसकेत लखि जाहि ह्रिदै लाजत है दुत मन। अस झूठ रूठ जदिन न्रिपति रणहि तुरंग उथक्कि है। बिनु इक्क सत्त सुण सत्त न्रिप सु अउर न आन हटक्कि है॥ १९९॥ ॥ छपै छंद॥ रण तुरंग सित असित असित सित धुजा बिराजत। असित सत्त तिह बस्त्र निरख सुर नर मुनि लाजत। असित सेत सारथी असित से तछकिओ रथांबर। सुबरण किंकनि केस जनुक दूसर देवेसुर। इह छब प्रभाव मिथिआ सपत अति बलिष्ट तिह कह कह्यो। जिह जगत जीव जीते सभै नहि अजीत नर को रह्यो॥ २००॥ चक्र बक्र कर धरे चार बागा तन धारे। आनन खात तंबोल गंध उत्तम बिसथारे। चवर चार चहूँ ओर ढरत सुंदर छबि पावत। निरखत मैन बसंत

अत्यन्त बलशाली है और शत्रुओं के झुंडों को नष्ट कर देनेवाला है। यह दुर्धर्ष वीरों को मार डालनेवाला अत्यन्त प्रतापी के रूप में जाना जाता है। यह अजेय, आनन्ददाता और अत्यन्त प्रतापी वीर के नाम से जाना जाता है॥ १९८॥ ॥ छप्पय छंद॥ यह मोर के रंग वाले रथ और घोड़ों का स्वामी स्वयं भी मोर वर्ण वाला है। इस अपरिमित तेज के स्वामी को देखकर शत्रु काँप उठते हैं। यह अमिट वीर, आजानुबाहु और चकाचौंध पैदा करनेवाला है। इसके सौंदर्य को देखकर कामदेव भी लज्जित होता है। यह झूठ नामक वीर जिस दिन रूठकर युद्ध में आपके सामने हे राजन्! घोड़ा नचा देगा, हे राजन्! सच जानो कि एक सत्य के बिना उसे कोई नहीं हटा सकेगा॥ १९९॥ ॥ छप्पय छंद॥ जिसका युद्ध का अश्व गोरा-काला, काली ध्वजा, जिसके काले श्वेत वस्त्रों को देखकर सुर-नर और मुनि भी लज्जित होते हैं। जिसका सारथी काला और श्वेत है और जिसका तरकस व रथ भी काला है; इसके केश भी स्वर्ण की किंकिणियों के समान हैं और यह दूसरा इन्द्र दिखाई देता है। 'मिथ्या' नामक वीर का यह प्रभाव और छवि है। यह अत्यन्त बलिष्ठ है। इसने जगत के सारे जीवों को जीता है और इससे कोई भी नहीं बच पाया है॥ २००॥ वक्र चक्र और सुन्दर वस्त्र तन पर धारण किए हैं। मुख में यह पान चबा रहा है और उसकी उत्तम गंध चारों ओर

प्रभा ताकहु सिर न्यावत। इह बिधि सुबाहु चिंता सुभत अति दुरधरख बखानिऐ। अनभंग गात (मू०ग्रं०६६४) अन भै सुभट अति प्रचंड तिह मानिऐ ॥ २०१ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ लाल हीरन के धरे जिह सीस पै बहु हार। स्वरण किंकण सौछका गजराज पब्बा कार। दुरद रूड़ दरिद्र नाम सु बीर है सुनि भूप। कउन ता ते जीतहै रण आनि राज सरूप ॥ २०२ ॥ जरकसी के बस्त्र हैं अरु परम बाजारूड़। परम रूप पवित्र गात अछिज्ज रूप अगूड़। छत्र धरम धरे महा भट बंस की जिह लाज। शंक नामा सूर सो सभ सूर है सिरताज ॥२०३॥ पिंग बाजन हेरथै सहि अडिग बीर अखंड। अंत रूप धरे मनो अछिज्ज गात प्रचंड। नाम सूर असोभ ता कत जान ही सभ लोक। कउन राव बिबेक है जु न मानिहै इह सोक ॥२०४॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ सजे स्याम बाजी रथं जासु जानो। महाँ जंग जोधा अजै तासु मानो। असतुष्ट नामं महाबीर सोहै। तिहूँ लोक जाको बडो त्रास मोहै ॥ २०५ ॥ चड़ थो

फैल रही है। चारों तरफ़ चँवर हो रहा है और यह सुन्दर छवि में विराजमान है। इसको देखकर वसंत ऋतु की प्रभा भी सिर झुका लेती है। यह लम्बी भुजाओंवाला चिंता नामक दुर्धर्ष वीर है। यह कभी न नष्ट होने वाले शरीर वाला अत्यन्त प्रचंड वीर है ॥ २०१ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ जिसने सिर पर हीरे और लालों के सुन्दर मालाएँ धारण कर रखी हैं, जिसका पर्वताकार हाथी भी स्वर्ण-किंकिणी स्वच्छतापूर्वक धारण किए हुए है, हे राजन्! वह हाथी पर चढ़ा हुआ दारिद्र्य नामक शूरवीर है। उससे युद्ध में कौन भिड़ सकेगा ॥ २०२ ॥ जिसने ज़री के वस्त्र पहने हैं और घोड़े पर सवार है, उसका सौन्दर्य कभी न समाप्त होनेवाला है, उसने सर पर धर्म का छत्र धारण कर रखा है और वंश की मान-मर्यादा के रूप में जाना जाता है। इस शूरवीर का नाम शंका है और यह सभी वीरों का सरताज है ॥ २०३ ॥ भूरे घोड़ों वाला यह अडिग और अखंड वीर है। यह प्रचण्ड रूप धारण किए हुए अक्षय शरीर वाला प्रलय के समान है। यह शौर्य नामक वीर सब लोगों द्वारा माना जाता है। कोई भी विवेक ऐसा नहीं है, जो इसकी कमी पर शोकाकुल नहीं होगा ॥ २०४ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ जिसके काले घोडे और रथ सजे हुए हैं, वह महान अजेय योद्धा के नाम से जाना जाता है। यह असन्तुष्टि नामक महावीर है, जिससे तीनों लोक भयभीत रहते हैं ॥ २०५ ॥ सिर पर कलगी धारण किए चंचल घोडे पर सवार- सिर पर विजय-पत्र रूपी

तरं ताजी सिराजीत सोभैं। सिरं जैत पत्रं लखे चंद्र छोभैं। अनास ऊच नामा महाँ सूर सोहे। बडो छत्रधारी धरैं छत्र जोहे ॥ २०६ ॥ रथं सेत बाजी सिराजीत सोहै। लखे इंद्र बाजी तरे द्रिष्ट कोहै। हठी बीर हिंसा महा नाम जानो। महा जंग जोधा अजै लोक मानो ॥ २०७ ॥ सुभं संदली बाजराजी सिराजी। लखे रूप ताको लजैं इंद्र बाजी। कुमंतं महा जोर जोधा जुधारं। जलं वा थलं जेण जित्ते बरिआरं ॥ २०८ ॥ चड्यो बाज ताजी कपोतं सरूपं। धरे चरम बरमं बिसालं अनूपं। धुजा बद्ध सिद्धं अलज्जा जुझारं। बडो जंग जोधा सु क्रुद्धी बरारं ॥२०९॥ धरे छीन बस्त्रं मलीनं दरिद्री। धुजा फाट बस्त्रं सुधारे उपद्री। महा सूर चोरी करोरी समानं। लसै तेज ऐसो लजैं देखि स्वानं ॥ २१० ॥ फटे बस्त्र सरबं सभैं अंग धारे। बधे सीस जारी बुरी अरध जारे। चड्यो भीम भैंसं महाँ भीम रूपं। बिभैं चार जोधा कहो तास भूपं ॥ २११ ॥ सभैं स्याम बरणं सितं सेत एकं। नहे गरधपं स्यंदनेकं अनेकं। धुजा स्याम बरनं भुजं भीम रूपं। सरं स्रोणितं

छत्र से चन्द्रमा को भी लज्जित करनेवाला अनाश नामक यह उच्च महावीर शोभायमान हो रहा है। यह बहुत बड़ा छत्रधारी है और महाबली है ॥ २०६ ॥ सफ़ेद घोड़ों वाले रथ को देखकर इन्द्र भी आश्चर्यचकित हो उठता है। इस हठी वीर का नाम हिंसा है और यह महान शूरवीर सभी लोकों में अजेय जाना जाता है ॥ २०७ ॥ चन्दन के समान सुन्दर घोड़े, जिन्हें देखकर इन्द्र के घोड़े भी लज्जित हो जाते हैं, यह महान शूरवीर कुमंत्र है, जिसने जल, स्थल सभी स्थानों पर वीरों को जीत लिया है ॥ २०८ ॥ कपोत-स्वरूप वाला चंचल घोड़े पर सवार और अनुपम चर्म-कवचधारी, ध्वजा बाँधे हुए यह अलज्जा नामक योद्धा है। यह महाबली है और इसका क्रोध भीषण है ॥ २०९ ॥ दरिद्रों के समान मलिन वस्त्रधारी, फटी ध्वजा वाला, महान उपद्रवकारी यह महावीर चोरी के नाम से जाना जाता है। इसके तेज को देखकर कुत्ता भी लज्जित होता है ॥ २१० ॥ सभी फटे वस्त्रों को धारण किए हुए, सिर पर कपट बाँधे हुए आधा गला हुआ भीमकाय भैंसे पर भीमाकार बैठा हुआ यह व्यभिचार नामक महावीर है ॥ २११ ॥ पूर्ण काले शरीर और श्वेत सिर वाला, जिसके रथ में घोड़ों के स्थान पर गदहे जुते हुए हैं, जिसकी ध्वजा काली और भुजाएँ अत्यन्त बलिष्ठ हैं वह रक्त-सरोवर के

एक अच्छेक कूपं ॥ २१२ ॥ महा जोध दारिद नामा जुझारं । धरे चरम बरमं सु पाणं कुठारं । बडो (मू०ग्रं०६६५) चित्र जोधी करोधी करालं । तजै नासका नैन धूम्रं बरालं ॥२१३॥ ॥ रूआल छंद ॥ स्वामघात क्रितघनता दोऊ बीर हैं दुरधरख । शत्र सूरन के सँघारक सैन के भरतरख । कउन चोखन सो जना जु न मानिहै तिह त्रास । रूप अनूप बिलोकि कै भट भजै होइ उदास ॥ २१४ ॥ मित्र दोख अरु राज दोख सु एक ही हैं भ्रात । एक बंस दुहूँन को अर एक ही तिह मात । छत्रि धरम धरे हठी रण धाइहै जिह ओह । कउन धीर धरै भटांबर लेत हैं झक झोक ॥ २१५ ॥ ईरखा अरु उचाट ए दोऊ जंग जोधा सूर । भाजिहैं अबिलोकि कै अरु रीझिहै लखि हूर । कउन धीर धरै भटांबर जीतिहै सभ शत्र । दंत लै त्रिण भाजिहै भट कौन गहिहै अत्र ॥ २१६ ॥ घात अउर बसीकरण बड बीर धीर अपार । क्रूर करम कुठार पाण कराल दाड़ बरियार । बिज्ज तेज अछिज्ज गात अभिज्ज रूप दुरंत । कउन कउन न जीतिए जिनि जीव जंत महंत ॥ २१७ ॥ आपदा अरु

समान लहलहाता दिखाई पड़ रहा है ॥ २१२ ॥ इस महान योद्धा का नाम दारिद्र्य है । इसने चर्म-कवच धारण कर रखा है और हाथ में कुल्हाडा पकड़ रखा है । यह अत्यन्त क्रोधी योद्धा है और इसकी नाक से विकराल धुआँ निकल रहा है ॥ २१३ ॥ ॥ रूआल छंद ॥ विश्वासघात, कृतघ्नता भी दोनों दुर्धर्ष वीर हैं, जो शूरवीर शत्रुओं और सेना के संहार करनेवाले हैं। ऐसा कौन विशेष व्यक्ति है, जो इनसे भयभीत न होता हो । इनके अनुपम रूप को देखकर शूरवीर उदासीन होकर भाग खड़े होते हैं ॥ २१४ ॥ मित्र-दोष और राजदोष दोनों भाई हैं । दोनों का एक ही वंश है और दोनों की एक ही माता है । क्षत्रिय धर्म को धारण कर जब ये वीर युद्ध में चल पड़ेंगे, तो कौन शूरवीर इनके सामने धैर्य रख पाएगा ॥ २१५ ॥ ईर्ष्या और उच्चाटन भी दोनों योद्धा हैं । ये अप्सराओं को देखकर रीझ उठते हैं और भाग खड़े होते हैं । ये सभी शत्रुओं को जीत लेते हैं और कोई भी वीर इनके सामने टिक नहीं पाता । इनके सामने कोई भी शस्त्र नहीं उठा पाता और वीर दाँतों में तिनके दबा कर भाग खड़े होते हैं ॥ २१६ ॥ घात और वशीकरण ये भी बडे वीर हैं । इनका कर्म क्रूर, इनके हाथों में कुठार और इनके दाँत विकराल है । बिजली के समान इनका तेज अक्षय शरीर और विकरा है इन्होंने

झूठता अरु बीर बंस कुठार । परम रूप बुधरख गात अमरख तेज अपार । अंग अंगनि नंग बस्त्रन अंग बलकल प्रात । दुष्ट रूप दरिद्र धाम सु बाण साधे सात ॥ २१८ ॥ ब्योग अउ अपराध नाम सु धारहै जब कोप । कउन ठाढ सकै महाबल भाजिहैं बिन ओप । सूल सैथन पान बान सँभारिहैं तब सूर । भाजिहैं तजि लाज को बिसंभार ह्वै सभ कूर ॥२१९॥ भान की सर भेद जा दिन तपि हैं रण सूर । कउन धीर धरै महा भट भाजिहैं सभ कूर । शस्त्र अस्त्रन छाडि कै अरु बाज राज बिसार । काटि काटि सनाह तब भट भाजिहैं बिसंभार ॥ २२० ॥ धूम्र बरण अउ धूम्र नैन सु सात धूम्र जुआल । छीन बस्त्र धरे सभै तन क्रूर बरण कराल । नाम आलस तवन को सुनि राज राजवतार । कउन सूर सँघारिहै तिह शस्त्र अस्त्र प्रहार ॥ २२१ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ चड़िहै गहि कोप क्रिपाण रणं । घमकंत कि घुंघर घोर घणं । तिह नाम सुखेद अभेद भटं । तिह बीर सुधीर लखो निपटं ॥२२२॥ कल रूप कराल ज्वाल जलं । असि उज्जल

भला किस-किस जीव को, किस-किस महान प्राणी को नहीं जीता है ॥ २१७ ॥ विपदा और झूठ भी वीर वंश के लिए कुठार के समान हैं। इनका रूप सुन्दर, दुर्धर्ष शरीर है एवं अपार तेज है। ये शरीर से लंबे और वल्कलधारी हैं। ये दुष्ट रूप से दरिद्र और हमेशा सातों ओर से बाण साधे रहते हैं ॥ २१८ ॥ वियोग और अपराध नामक वीर जब क्रोधित हो उठेंगे तो कौन इनके सामने ठहर सकेगा। अर्थात् सभी भाग खड़े होंगे। तुम्हारे शूरवीर शूल, बाण, बरछी आदि सँभालेंगे, परन्तु इन क्रूरों के सामने लज्जित होकर भाग खड़े होंगे ॥ २१९ ॥ भेदते हुए सूर्य के समान जिस दिन युद्ध भड़क उठेगा तो कौन वीर धैर्य रखेगा। अर्थात् सब कुत्ते की तरह भाग खड़े होंगे। अस्त्र, शस्त्र एवं घोड़ों को छोड़कर सब भाग खड़े होंगे और तुम्हारे वीर कवचों को तोड़कर शीघ्र प्रयाण कर जाएँगे ॥ २२० ॥ काला शरीर, काली आँखों और धुँओं की सात लपटों वाले फटे-पुराने कपड़े पहने हुए इस विकराल एवं क्रूर का हे राजन् ! आलस्य नाम है। इसको अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से कौन शूरवीर मार सकेगा ॥ २२१ ॥ ॥ तोटक छंद ॥ युद्ध में क्रोधित हो कृपाण लेकर घुमड़ते हुए बादलों के समान जो गरजेगा उस वीर का नाम खेद है। हे राजन ! उसे अत्यंत महाबली जानो ॥ २२२ ॥ ज्वालाओं के समान विकराल रूपवाले कृपाण वाले निर्मल प्रभा वाले श्वेत दंतपंक्ति वाले

पान प्रभा न्रिमलं । अति उज्जल दंद अनंद मनं । (पृ०पं०६६६) कुक्रिआ तिह नाम सु जोध गनं ॥ २२३ ॥ अति स्याम सरूप करूप तनं । उपजं अग्यान बिलोक मनं । तिह नाम गिलान प्रधान भटं । रण मोन महाँ हठ हार हटं ॥२२४॥ अति अंग सुरंग सनाह सुभं । बहु कष्ट सरूप सु कष्ट छुभं । अति बीर अधीर न भ्यो कब ही । दिव देव पछानत हैं सब ही ॥ २२५ ॥ भट करम बिकरम जबै धरिहै । रण रंग तुरंगहि बिचरिहै । तुव बीर सुधीरहि को धरिहै । बलि बिक्रम तेज तबै हरिहै ॥ २२६ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह बिधि तन सूरा सुधर धैहै न्रिप अबिबेक । न्रिप बिबेक की दिसि सुभट ठाढ न रहिहै एक ॥ २२७ ॥

॥ इति स्री बचित्र नाटके ग्रंथे पारस मछिंद्र संवादे न्रिप अबिबेक आगमन नाम सुभट बरनन नाम धिआइ समापतम सुभम सतु ॥ अफजू ॥

अथ न्रिप बिबेक के दल कथनं ॥

॥ छपय छंद ॥ जिह प्रकार अबिबेक ब्रिपति दल सहित

आनंदकारी महायोद्धा का नाम कुक्रिया है ॥ २२३ ॥ जिसका अत्यन्त कुरूप और काला शरीर है तथा जिसे देखकर अज्ञान की उत्पत्ति होती है उस महाबली का काम ग्लानि है। यह अत्यन्त युद्धशील और हठ से हरा देने वाला है ॥ २२४ ॥ इसके अत्यन्त सुन्दर रंग वाले अंग हैं और यह कष्ट-स्वरूप कष्टों को भी कष्ट देनेवाला है। यह वीर कभी भी अधीर नहीं हुआ है और इसे सभी देवी-देवता भली प्रकार पहचानते हैं ॥ २२५ ॥ यह सभी शूरवीर जब अपना बल धारण करेंगे तो अपने अश्वों पर सवार होकर विचरण करेंगे। तुम्हारा कौन वीर है जो इनके सामने धैर्य धारण करेगा। ये विक्रम रूप से बलशाली सबके तेज का हरण कर लेंगे ॥ २२६ ॥ ॥ दोहा ॥ हे राजन् ! इस प्रकार अविवेक विभिन्न शूरवीरों के शरीर धारण करेगा और विवेक का कोई भी शूरवीर इसके सामने नहीं ठहर पायेगा ॥ २२७ ॥

॥ श्री बचित्र नामक ग्रंथ में पारस-मच्छेन्द्र-संवाद, नृप अविवेक-आगमन नामक सुभट-वर्णन अध्याय समाप्त ॥ अफजू ॥

नृप विवेक-दल-कथन

छप्पय छंद जिस प्रकार अविवेक नामक राजा के दल का वर्णन

बखाने । नाम ठाम आभरन सु रथ सभ के हम जाने । शस्त्र अस्त्र अरु धनुख भुजा जिह बरण उचारी । त्वप्रसादि मुनदेव सकल सु बिबेक बिचारी । करि क्रिपा सकल जिह बिधि कहे तिह बिधि वहै बखानिऐ । किह छबि प्रभाव किह दुति त्रिपति त्रिप बिबेक अनुमानिऐ ।। १ ।। २२८ ।। अधिक न्यास मुन कीन मंत्र बहु भाँत उचारे । तंत्र भली बिधि सधे जंत्र बहु बिधि लिखि डारे । अति पवित्र हुइ आप बहुर उच्चार करो तिह । त्रिप बिबेक अबिबेक सहित सैना कथियो जिह । सुर असुर चक्रित चहु दिस भए अनल पवन ससि सूर सभ । किह बिधि प्रकाश करिहै सँघार जके जच्छ गंध्रब सभ ।। २ ।। २२९ ।। सेत छत्र सिर धरे सेत बाजी रथ राजत । सेत शस्त्र तन सजे निरखि सुर नर भ्रमि भाजत । चंद चक्रित ह्वै रहत भान भवता लखि भुल्लत । भ्रमर प्रभा लखि भ्रमत असुर सुर नर जग डुल्लत । इह छबि बिबेक राजा त्रिपति अति बलिष्ट तिह मानिऐ । मुनि गन महीप बंदत सकल तीनि लोक महि जानिऐ ।। ३ ।। २३० ।। चमर चार चहूँ ओर ढुरत सुंदर छबि

किया, उन सबके नाम, स्थान, वस्त्र, रथ आदि सबको हमने जाना; अस्त्र, शस्त्र, धनुष, ध्वजा का जिस प्रकार वर्णन किया उसी प्रकार, हे मुनिदेव ! कृपापूर्वक विवेक-विचार का वर्णन कीजिए और सब प्रकार से उसका बखान कीजिए। हे मुनिराज ! विवेक की छवि और प्रभाव आदि का अनुमानित वर्णन कीजिए ।। १ ।। २२८ ।। मुनि ने गहन प्रयत्न किया और बहुत से मंत्रों का उच्चारण किया। तंत्र और यंत्रों की विभिन्न प्रकार से साधनाएँ की। अत्यन्त पवित्र होकर उन्होंने पुनः उच्चारण किया और जिस प्रकार अविवेक का सेना-सहित वर्णन किया था, विवेक नामक राजा का उसी प्रकार वर्णन किया। सुर-असुर, अग्नि, पवन, सूर्य, चन्द्र सभी चकित हो उठे तथा यक्ष, गंधर्व भी आश्चर्य में डूब गये कि किस प्रकार विवेक रूपी प्रकाश अविवेक नामक अज्ञान, अंधकार का नाश करेगा ।। २ ।। २२९ ।। श्वेत छत्र, घोड़े और शोभायमान रथ पर श्वेत शस्त्र धारण किए हुए को देखकर मनुष्य और देवता भ्रमित होकर भाग खड़े होते हैं। चन्द्रमा चकित है और सूर्य भी उसकी शोभा को देखकर डोलायमान है। यह छवि, हे राजन् ! विवेक की है जिसे अत्यन्त बलिष्ठ मानना चाहिए। तीनों लोकों में मुनिगण राजा आदि इसकी वंदना करते हैं ।। ३ ।। २३० ।। जिस पर चारों ओर से चमर किया जा रहा है और जिसे देखकर मानसरोवर के हंस भी लज्जित हो रहे हैं वह अत्यन्त

पावत । निरखि हंस तिह दुरनि मान सरवरहि लजावत । अति पवित्र सभगात प्रभा (मू०ग्रं०६६७) अति ही जिह सोहत । सुर नर नाग सुरेश जच्छ किंनर मन मोहत । इह छबि बिबेक राजा न्रिपति जदिन कमान चड़ाइ है । बिन इक अबिबेक सुनिहो न्रिपति सु अउर न बान चलाइहै ॥ ४ ॥ २३१ ॥ अति प्रचंड अबिकार तेज आखंड अतुल बल । अति प्रताप अति सूर तूर बाजत जिह जल थल । पवन बेग रथ चलत पेखि चपला चित लाजत । सुनत शबद चकचार मेघ मोहत भ्रम भाजत । जल थल अजेअ अनभै अभट अति उत्तम परवानिऐ । धीरजु सु नाम जोधा बिकट अति सुबाहु जग मानिऐ ॥५॥२३२॥ धरम धीर बीरज समीर अन भीर बिकट मति । कलपब्रिछ कुब्रितन क्रिपान जस तिलक सुभट अति । अति प्रताप अति ओज अनिल सर तेज जरे रण । ब्रहम-अस्त्र शिव-अस्त्र नहिन मानत एकै ब्रण । इह दुति प्रकाश ब्रित छत्र न्रिप शस्त्र अस्त्र जब छंडिहै । बिन एक अब्रित सु ब्रित न्रिपति अवर न आहव मंडिहै ॥ ६ ॥ २३३ ॥ अछिज्ज गात अनभंग तेज आखंड

पवित्र सबके शरीर की शोभा और अत्यन्त ही सुन्दर है। यह सुर, नर, नाग, इन्द्र, यक्ष, किन्नर आदि सबका मन मोह लेनेवाला है। इस प्रकार की छवि वाला विवेक जिस दिन बाण चढ़ा लेगा तो वह एक अविवेक के अतिरिक्त किसी दूसरे पर बाण नहीं चलाएगा ॥ ४ ॥ २३१ ॥ यह अत्यन्त प्रचंड, विकारहीन, तेजस्वी एवं अतुल बलशाली है। यह अत्यन्त प्रतापी शूरवीर है और इसकी दुंदुभी जल, स्थल सभी जगह बजती है। इसका रथ पवन-वेग से चलता है और उसकी गति को देखकर बिजली भी मन में लज्जित होती है। इसकी घनघोर गर्जना सुनकर चारों दिशाओं के मेघ भी भ्रमित होकर भाग खड़े होते हैं। यह जल, स्थल में अजेय, अभय और अति उत्तम शूरवीर माना जाता है। इस विकट महाबली को जग में धैर्य के नाम से माना जाता है ॥ ५ ॥ २३२ ॥ धर्म रूपी धैर्य विकट समय में अत्यन्त बलशाली है। यह कल्पवृक्ष है और कुवृत्तियों के लिए कृपाण के समान उन्हें काटनेवाला है। यह अत्यन्त प्रतापी अग्नि के समान तेजस्वी बाणों से युद्ध में सबको जलाने वाला और ब्रह्मास्त्र, शिव-अस्त्र आदि की भी परवाह नहीं करनेवाला है। यह सुवृत्ति नामक योद्धा जब युद्ध में अस्त्र-शस्त्र छोड़ेगा तो कुवृत्ति के अतिरिक्त और कोई इसमे युद्ध नहीं कर सकेगा ।'६'।२३३।। अक्षय शरीर अभग तेज और ज्वाला के समान अखंडित बल वाला तथा पवन वेग से रथ को

अनिल बल । पवन बेग रथ को प्रताप जानत जिअ जल थल । धनुष बान परबीन छीन सभ अंग ब्रितन कर । अति सुबाहु संजम सुबीर जानत नारी नर । गहि धनुख बान पानहि धरम परम रूप धरि गरजिहै । बिन इक अब्रित सु ब्रित ब्रिपति अउर न आन बरजिहै ।। ७ ।। २३४ ।। चक्रित चार चंचल प्रकाश बाजी रथ सोहत । अति प्रबीन धुन छीन बीन बाजत मन मोहत । प्रेम रूप सुभ धरे नेम नामा भट भैंकर । परम रूप परमं प्रताप जग जै अरि छै कर । असि अमिट बीर धीरा बडो अति बलीस दुरधरख रण । अनभै अभंज अनमिट सुधीस अन बिकार अन जैसु भण ।। ८ ।। २३५ ।। अति प्रताप अमितोज अमित अनभै अभंग भट । रथ प्रमाण चपला सु चारु चमकत है अनकट । निरख शत्रु तिह तज चक्रित भयभीत भजत रण । धरत धीर नहि बीर तीर मरहै नही हठि रण । बिग्यान नाम अनभै सुभट अति बलिष्ट तह जानिऐ । अगिआन देस जा को सदा त्रास घरन घर मानिऐ ।। ९ ।। २३६ ।। बमत ज्वाल डमरू कराल डिम

चलानेवाले प्रतापी को जल, स्थल के सभी जीव जानते हैं। यह धनुष-बाण में प्रवीण है, परन्तु व्रती होने के कारण इसके सभी अंग क्षीण हैं। इसे सब नर-नारी संयम वीर के नाम से जानते हैं। यह धनुष-बाण पकड़कर जब अपने परम रूप में गर्जना करेगा तो इसे कुवृत्ति के अतिरिक्त और कोई नही रोक सकता ।। ७ ।। २३४ ।। सुन्दर, चंचल घोड़ों से शोभायमान रथ वाले अत्यंत प्रवीण, धीरे-धीरे बोलनेवाला और वीणा के समान मन को मोहनेवाला, प्रेम-स्वरूप नियम नामक यह महाबली वीर है। यह परम प्रतापी और सारे जगत के शत्रुओं का नाशक है। इसकी कृपाण कभी नष्ट न होनेवाली और दुर्धर्ष युद्धों में यह स्वयं अति बलशाली सिद्ध होता है। यह अभय, अभंजनशील, चैतन्य का स्वामी, विकारहीन और अजेय कहा जाता है ।। ८ ।। २३५ ।। अत्यन्त प्रतापी अपरिमित रूप से प्रतापी अभय और कमी न करनेवाला शूरवीर है। इसका रथ विद्युत् के समान चपल और चमकीला है। इसे देखकर शत्रु युद्ध में भयभीत होकर भाग खड़े होते हैं। इसे देखकर वीर धैर्य त्याग देते हैं और हठपूर्वक बीर इस पर बाण नहीं चला पाते। इस बलिष्ठ को विज्ञान के नाम से जाना जाता है। अज्ञान के देश में घर-घर लोग इससे डरते हैं ।। ९ ।। २३६ ।। ज्वालाओं की तरह जलनेवाला और विकराल डमरू की तरह बजनेवाला बादलों की गर्जना के समान यह घहरानेवाला है यह

डिम रण बज्जत । घन प्रमान चक (पृ०पं०६६८) शबद घहर जा
को गल गज्जत । सिमट साँग संग्रहत सरकि सामुहि अरि झारत ।
निरख तास सुर असुर ब्रहम जै शबद उचारत । इशनान नाम
अभिमान जुत जदिन धनुख गहि गरजिहै । बिन इक कुचील
सामुहि समर अउर न तासि बरजिहै ॥ १० ॥ २३७ ॥ इक
निब्रित अति बीर दुतीअ भावना महा भट । अति बलिष्ट
अनिमिट अपार अनछिज्ज अनाकट । शस्त्र धारि जब गरज
है भीर भाजिहै निरखि रण । पत्र भेस भहिरात धीर धरहैं नह
अनगण । इह बिधि सुधीर जोधा न्रिपति जदिन अयोधन
रचिहैं । तज शस्त्र अस्त्र भज्जिहै सकल एक न बीर
बिरचिहैं ॥ ११ ॥ २३८ ॥ ॥ संगीत छपय छंद ॥ तागड़दी तूर
बाजहै जागड़दी जोधा जब जुट्टहि । लागड़दी लुत्थ बित्थुरहि
सागड़दी संनाह सु तुटहि । भागड़दी भूत भैरो प्रसिध अरु
सिद्ध निहारहि । जागड़दी जच्छ जुग्गणी जूथ जै शबद
उचारहि । संसागड़दी सुभट संजम अमिट कागड़दी क्रुद्ध जब
गरजिहै । दंदागड़दी इक्क दुरमति बिना आगड़दी सु अउरन
बरजिहै ॥ १२ ॥ २३९ ॥ जागड़दी जोग जयवान कागड़दी
कर क्रोध कड़क्कहि । लागड़दी लुट्ट अरु कुट्ट तागड़दी

लपककर भाला पकड़कर सामने शत्रु पर वार करता है और इसे देखकर सुर-असुर सभी जय-जयकार करते हैं। यह स्नान नामक अभिमानयुक्त वीर जिस दिन धनुष हाथ में लेकर गरजेगा उस दिन युद्ध में मलिनता के अतिरिक्त और कोई इसे नहीं रोक पाएगा ॥ १० ॥ २३७ ॥ पहला निवृत्ति और दूसरा भावना नामक वीर है जो अत्यन्त बलिष्ठ, अक्षय एवं अकाट्य है। जो वीर शस्त्र धारण कर गर्जना करेंगे, युद्ध में इन्हें देखकर वीर भाग खड़े होंगे। पीले पत्ते की तरह वीर थरथराएँगे और धैर्य खो देंगे। इस प्रकार यह योद्धा जिस दिन युद्ध प्रारम्भ करेगा तब अस्त्र-शस्त्रों को त्यागकर सभी मात्र खडे होंगे और कोई भी वीर नहीं बचेगा ॥ ११ ॥ २३८ ॥ ॥ संगीत छप्पय छंद ॥ जब योद्धागण जुटेंगे तो बाजे बज उठेंगे। भाले टूट-टूट जायँगे और लाशें बिखर जायँगी। भैरव और भूत भागेंगे और सिद्धगण यह दृश्य देखेंगे। यक्ष और योगिनियाँ जय-जयकार का उच्चारण करेंगे। संयम नामक वीर जब क्रोधित होकर गरजेगा तो उसका विरोध एक दुर्मति के अतिरिक्त अन्य कोई नही कर पाएगा १२ २३९ जय योग क्रोधित होकर कडकेगा तो सनसनाएंगी और लटपाट शुरू हो जायगी शस्त्र और

तरवार सड़क्कहि । सागड़दी शस्त्र संनाह पागड़दी पहिरहैं जवन दिन । सागड़दी शत्र भजिहैं टागड़दी टिकिहै न इक्क छिन । पंपागड़दी पीअर सित बरण मुख सागड़दी समस्त सिधारहैं । अंआगड़दी अमिट दुरधरख भट जागड़दी कि जदिन निहारहैं ॥ १३ ॥ २४० ॥ आगड़दी इक अर चारु पागड़दी पूजा जब कुप्पहि । रागड़दी रोस करि जोस पागड़दी पाइन जब रुप्पहि । सागड़दी शत्र तजि अत्र भागड़दी भज्जहि सु भ्रम रण । आगड़दी ऐस उज्जड़हि पागड़दी जण पवन पत्र बण । संसागड़दी सुभट सभ भजिहैं तागड़दी तुरंग नचाइहैं । छंछागड़दी छत्र छिति छड्डि कै आगड़दी अधोगति जाइहैं ॥ १४ ॥ २४१ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ चमिर चार चहूँ ओर ढुरत सुंदर छबि पावत । सेत बस्त्र अरु बाज सेत शस्त्रण छब छावत । अति पवित्र अबिकार (मू०पं०६६६) अचल अनखंड अकट भट । अमित ओज अनमिट अनंत आछल्ल रणा कट । धर अस्त्र शस्त्र सामुहि समर जदिन न्रिपोतम गरजिहै । टिक्किहै इक भट नहि समर अउर कवण तब बरजिहै ॥ १५ ॥ २४२ ॥ इकि बिद्या अरु लाज अमिट अति ही प्रताप रण । भीम रूप भैरो प्रचंड अमिट्ट अदाहन । अति अखंड अडंड चंड परताप

कवच जिस दिन यह धारण करेगा, उसी दिन सभी शत्रु एक क्षण भी टिके बिना भाग खड़े होंगे । सभी पीला मुख लेकर उस दिन भाग खड़े होंगे, जिस दिन यह अजेय वीर अपनी दृष्टि सब पर डाल देगा ॥ १३ ॥ २४० ॥ जब पाँचों विकार क्रुद्ध तथा रुष्ट होकर युद्धस्थल में पाँव जमायेंगे तो सभी शस्त्र-अस्त्र त्यागकर इस प्रकार भाग खड़े होंगे जैसे पवन के सामने पत्ते उड़ जाते हैं । जब शूरवीर भागते हुए घोड़ों को नचाएँगे तो सभी अच्छी वृत्तियाँ अपने आप को भूलकर अधोगति को प्राप्त होंगी ॥ १४ ॥ २४१ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ सुन्दर चँवर झुलाए जा रहे हैं और इसकी छवि सुन्दर है । इसके सफेद कपड़े, सफ़ेद घोड़े और सफ़ेद ही शस्त्र शोभा पा रहे हैं । यह अत्यन्त पवित्र अविकार रूपी अचल, अखण्ड और अकाट्य शूरवीर है, जिसका ओज अपरिमित है और जो अजेय तथा कभी भी न छला जानेवाला है, जिस दिन यह अस्त्र-शस्त्र धारणकर हे राजन् ! गर्जना करेगा तब इसके सामने युद्ध में कोई नहीं टिकेगा और कोई भी इसे नहीं रोक सकेगा ॥ १५ ॥ २४२ ॥ विद्या और लज्जा भी अत्यन्त प्रतापी हैं जो विशालकाय प्रचण्ड और अदहनशील हैं । इनका प्रताप अत्यन्त प्रचण्ड एवं अखण्ड है, तथा ये महाबली अजानबाहु

रणाचल। ब्रिखभ कंध आजानबाहु बानैत महाबल। इह छबि अपार जोधा जुगल जदिन निशान बजाइहै। भज्जिहै भूप तजि लाज सभ एक न सामुहि आइहै ॥ १६ ॥ २४३ ॥ ॥ नराज छंद ॥ संजोग नाम सूरमा अखंड एक जानिऐ। सु धाम धाम जास को प्रताप आज मानिऐ। अडंड औ अछेद है अभंग तास भाखिऐ। बिचार आज तउन सों जुझार कउन राखिऐ ॥ १७ ॥ २४४ ॥ अखंड मंडलीक सो प्रचंड बीर देखिऐ। सक्रित नाम सूरमा अजित्त तास लेखिऐ। गरजि शस्त्र सजि कै सलज्जि रथ धाइहै। अमंड मारतंड ज्यों प्रचंड सोभ पाइहै ॥ १८ ॥ २४५ ॥ बिसेख बाण सैहथी क्रिपान पाण सज्जिहै। अमोह नाम सूरमा सरोह आन गज्जिहै। अलोभ नाम सूरमा दुतीअ जो गरज्जिहैं। रथी गजी हईपती अपार सैण भज्जिहैं ॥ १९ ॥ २४६ ॥ हठी जपी तपी सती अखंड बीर देखिऐ। प्रचंड मारतंड ज्यों अडंड तास लेखिऐ। अजित्ति जउन जगत ते पवित्र अंग जानिऐ। अकाम नाम सूरमा-भिराम तास मानिऐ ॥ २० ॥ २४७ ॥ अक्रोध जोध क्रोध कै बिरोध सज्जिहै जबै। बिसार लाज सूरमा अपार भज्जिहै

तथा वृषभ के समान चौड़े कन्धे वाले हैं। इस अपार छवि वाले योद्धा युगल जिस दिन युद्ध का डंका बजा देंगे तो सभी राजा लज्जा त्यागकर भाग खड़े होंगे और कोई भी सामने नहीं आएगा ॥ १६ ॥ २४३ ॥ ॥ नराज छंद ॥ संयोग नामक एक शूरवीर है जिसको घर-घर में प्रतापी माना जाता है। वह अदण्डनीय, अक्षय तथा अभय कहा जाता है, उसका वर्णन क्या किया जाय ॥ १७ ॥ २४४ ॥ एक अन्य प्रचण्ड वीर इस नक्षत्रमण्डल में दिखायी देता है जिसका नाम सुकृत है तथा जो अजेय माना जाता है। वह गर्जना करता हुआ शस्त्रों से सुसज्जित होकर रथ पर जब निकलता है तो सूर्य की तरह प्रचण्ड शोभा से युक्त होता है ॥ १८ ॥ २४५ ॥ हाथों में विशेष बाण, कृपाण आदि धारण कर अमोह नामक शूरवीर क्रोधित होकर गरजेगा और इसके साथ अलोभ नामक दूसरा शूरवीर गरजना करता हुआ जब शोभायमान होगा तो रथी, गजी और अश्वपतियों की अपार सेना भाग खड़ी होगी ॥ १९ ॥ २४६ ॥ हठी, जपी, तपस्वी एवं सतियों के रूप में अनेक वीरों को प्रचण्ड सूर्य की तरह देदीप्यमान और अदण्डनीय के रूप में देखो। यह जगत में अजेय और पवित्र अंगों वाला अभिराम अकाम नामक शूरवीर है ॥ २० ॥ २४७ ॥ अक्रोध नामक योद्धा जब क्रोधित होकर युद्ध में

सभै। अखंड देहि जास की प्रचंड रूप जानिऐ। सलज्ज नाम सूरमा सु मंति तास मानिऐ ॥ २१ ॥ २४८ ॥ सु परम तत्त आदि दै निराहंकार गरजिहै। बिसेख तोर सैन ते असेख बीर बरजिहै। सरोख सैहथीन लै अमोघ जोध जुट्टिहैं। असेख बीर कारमद क्रूर कवच तुट्टिहैं ॥ २२ ॥ २४९ ॥ सब गति एक भावना सु क्रोध सूर धाइहैं। असेख मारतंड ज्यों बिसेख सोभ पाइहैं। सँघार सैण सव्वी जुझार जोध जुट्टिहैं। करूर कूर सूरमा तरक्क तंग तुट्टिहैं ॥ २३ ॥ २५० ॥ (मू०ग्रं०७००) सिमट्टि सूर सैहथी सरक्कि साँग सेल हैं। दुरंत घाइ झालिकै अनंत सैण पेलिहैं। तमक्कि तेग दामणी सड़क्कि सूरमट्टिहैं। निपट्टि कट्टि कुट्टिकै अकट्ट अंग सट्टिहैं ॥ २४ ॥२५१॥ निपट्टि सिंघ ज्यों पलट्टि सूर सेल बाहिहैं। बिसेख ब्रिथनीस की असेख सैण अगाहिहैं। अरुज्झि बीर अप्प मज्झि गज्झि आनि जुज्झिहैं। बिसेख देव दइत जच्छ किंन्र किन्न बुज्झिहैं ॥ २५ ॥ ॥२५२ ॥ सरक्कि सेल सूरमा सटिक्क बाज सुट्टिहैं। अमंड मंडलीक से अफुट्ट सूर फुट्टिहैं। सु प्रेम नाम सूर को बिसेख भूप

शोभायमान होगा तो सभी शूरवीर लज्जा का विस्मरण करते हुए आगे खड़े होंगे। जिसकी अखण्ड देह और प्रचण्ड स्वरूप है, यह लज्जा से युक्त वही शूरवीर है ॥ २१ ॥ २४८ ॥ यह परम तत्त्व का निर-अहंकार शूरवीर गरजेगा तो यह सेना को विशेष तौर से नष्ट कर देगा और अनेकों वीरों का विरोध करेगा। इसका मुक़ाबला क्रोधित होकर अमोघ अस्त्रों को लेकर अनेकों योद्धा जुटकर करेंगे और युद्ध में अनेकों वीर, धनुष तथा विकराल कवच खण्ड-खण्ड हो जायेंगे ॥ २२ ॥ २४९ ॥ सभी शूरवीर एक भावना से क्रोधित होकर टूट पड़ेंगे और अनेकों सूर्यों के सामने शोभायमान होंगे। शत्रुओं की सेना संहार करने के लिए शूरवीर जुट पडेंगे और क्रूरकर्मी योद्धाओं के दल को तोड़ देंगे ॥ २३ ॥ २५० ॥ शूरवीर पीछे हटकर तलवार और भाला चलाएँगे और अनेक घावों को सहन करते हुए अनन्त सेना को मार डालेंगे। बिजली के समान चमकती हुई तलवारें शूरवीरों में सनसनाएँगी और शूरवीर के अंग काट-कूटकर फेंक देंगी ॥ २४ ॥ २५१ ॥ शेरों के समान मुड़कर शूरवीर भाले चलाएँगे और मुख्य-मुख्य सेनापतियों की सेना का मंथन करेंगे। परस्पर दूर हटते हुए वीर शत्रु-सेना में आकर इस प्रकार भिड़ेंगे कि उन्हें देव, दैत्य, यक्ष, किन्नर भी नहीं पहचान पाएँगे ॥ २५ ॥ २५२ ॥ घोडों पर उत्साहपूर्वक सवार शूरवीर तेज़ी से भाला फेंकेंगे और अपरिमित शोभा से युक्त

जानिऐ । सु साथ तास की सदा तिहूँन लोक मानिऐ ॥ २६ ॥ ॥ २५३ ॥ ॥ नराज छंद ॥ अनूप रूप भान सो अभूत रूप मानिऐ । सँजोग नाम शत्रहा सु बीर तास जानिऐ । सु शांत नाम सूरमा सु अउर एक बोलिऐ । प्रताप जास को सदा सु सरब लोग तोलिऐ ॥ २७ ॥ २५४ ॥ अखंड मंडलीक सो प्रचंड रूप देखिऐ । सु कोप सुद्ध सिंघ की समान सूर पेखिऐ । सु पाठ नाम तास को पठाट तास भाखिऐ । भज्यो न जुद्ध ते कहूँ निशेश सूर साखिऐ ॥ २८ ॥ २५५ ॥ सु करन नाम एक को सु सिच्छ दूज जानिऐ । अभिज्ज मंडलीक सो आछिज्ज तेज मानिऐ । सु कोप सूर सिंघ ज्यों घटा समान जुट्टिहैं । दुरंत बाज बाजिहैं अनंत शस्त्र छुट्टिहैं ॥ २६ ॥ २५६ ॥ सु जग्ग नाम एक को प्रबोध अउर मानिऐ । सु दान तीसरा हठी अखंड तास जानिऐ । सु नेम नाम अउर है अखंड तास भाखिऐ । जगत्त जास जीतिआ जहान भान साखिऐ ॥ ३० ॥ २५७ ॥ सु सत्तु नाम एक को संतोख अउर बोलिऐ । सु तप्पु नाम तीसरो दसंत्र जासु छोलिऐ । सु जाप नाम एक को प्रताप आज तास

शूरवीरों को काट डालेंगे। हे राजन् ! प्रेम नामक शूरवीर एक विशिष्ट वीर है, जिसकी महिमा तीनों लोकों मे जानी जाती है ॥ २६ ॥ २५३ ॥ ॥ नराज छंद ॥ सूर्य के समान यह अनुपम सौन्दर्य वाला शत्रु घातक वीर सयोग नाम से जाना जाता है। शान्त नामक एक अन्य शूरवीर भी है जिसे सब लोग प्रतापी बली के रूप में पहचानते हैं ॥ २७ ॥ २५४ ॥ अखण्ड प्रचण्ड रूप-सौन्दर्य वाला यह शूरवीर शेर के समान क्रोधित दिखाई देनेवाला है। इसका नाम सुपाठ है तथा सूर्य और चन्द्र दोनों इस बात के साक्षी हैं कि यह कभी भी युद्ध से भागा नहीं है ॥ २८ ॥ २५५ ॥ इसका एक अन्य शिष्य है जो सुकर्ण नाम से जाना जाता है और सारे ब्रह्माण्ड में अक्षय तेज वाला माना जाता है। जब वह शूरवीर क्रोधित होकर शेर और बादलों के समान गरजता हुआ टूट पड़ेगा तो बिकराल वाद्य वजने लगेंगे और अनेकों शस्त्र छूटने लगेंगे ॥ २६ ॥ २५६ ॥ सुयज्ञ नामक अन्य वीर है तथा दूसरा प्रबोध तथा तीसरा अखण्ड रूप से हठी वीर दान नामक है। एक अन्य वीर सुनियम नामक है, जिसने सारा संसार जीता हुआ है और सारा विश्व और सूर्य इस बात के साक्षी हैं ॥ ३० ॥ २५७ ॥ सुसत्य, सन्तोष और तपस्या नामक एक तीसरा वीर जिसने दसों दिशाओं को अपने अधीन किया हुआ है। एक अन्य प्रतापी जप नामक वीर है जिसने अनेको युद्धो को जीतकर धारण

को । अनेक जुद्ध जीतिकै बर्‌यो जिनै निरास को ॥ ३१ ॥ ॥ २५८ ॥ ॥ छपै छंद ॥ अति प्रचंड बलवंड नेम नामा इक अति भट । प्रेम नाम दूसरो सूरबीरा रिणोत कट । संजम एक बलिष्टि धीर नामा चतुरथ गनि । प्राणयाम पंचवो ध्यान नामा खशटम भनि । जोधा अपार अनखंड अति सत प्रताप तिह मानिऐ । सूर असुर नाग गंध्रब धरम नाम जवन को जानिऐ ॥ ३२ ॥ २५६ ॥ सुभा (मू०पं०७०१) चार जिह नाम सबल दूसर अनुमानो । बिक्रम तीसरो सुभट बुद्ध चतुरथ जिय जानो । पंचम अनुरकतता छठम सामाध अभै भट । उद्‌दम अरु उपकार अमिट अनजीत अनाकट । जिह निरख शत्र तजि आसननि बिमन चित्त भाजत तवन । बलि टारि हारि आहव हठी अठट ठाट भूतल गवन ॥ ३३ ॥२६०॥ ॥ तोमर छंद ॥ सु बिचार है भट एक । गुन बीच जास अनेक । संजोग है इक अउर । जिनि जीति आपति गउर ॥ ३४ ॥ २६१ ॥ इक होम नाम सु बीर । अरि कीन जास अधीर । पूजा सु अउर बखान । जिह सो न पउरखु आन ॥ ३५ ॥ २६२ ॥ अनुरकतता इक अउर । सभ सुभट को सिरमउर । बेरकतता इक आन । जिह सो न आन प्रधान ॥ ३६ ॥ २६३ ॥

कर ली है ॥ ३१ ॥ २५८ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ नियम नामक एक अत्यन्त प्रचण्ड एवं बलवान शूरवीर है तथा दूसरा शूरवीर प्रेम है, तीसरा संयम और चौथा धैर्य नामक महाबली गिना जाता है। पाँचवाँ प्राणायाम तथा छठवाँ वीर ध्यान कहा जाता है। यह अपार योद्धा अत्यन्त सत्यवादी तथा प्रतापी माना जाता है, इसे सुर, असुर, नाग, गन्धर्व, धर्म नाम से भी जानते हैं ॥ ३२ ॥ २५६ ॥ शुभ आचरण नामक दूसरा वीर माना जाता है। तीसरा वीर विक्रम तथा चौथा महाबली बुद्धि है। पाँचवा अनुरक्तता तथा छठवाँ वीर समाधि है। उद्यम, उपकार आदि भी अजेय, अकाट्य एवं अमिट है। इन्हें देखकर शत्रु आसन त्यागकर विचलित होकर भाग खड़े होते हैं। इन महाबलियों का ऐश्वर्य सारे भूतल पर छाया हुआ है ॥ ३३ ॥ २६० ॥ ॥ तोमर छंद ॥ सुविचार नामक एक शूरवीर है जिसमें अनेकों गुण है। संयोग नामक एक अन्य वीर है जिसने शिवजी को भी जीत लिया था ॥ ३४ ॥ २६१ ॥ होम नामक एक वीर है, जिसने शत्रुओं को अधीर कर दिया है। पूजा एक अन्य है, जिसके समान अन्य किसी का पौरुष नहीं है ३५ २६२ सभी वीरो का शिरमौर नामक

सतसंग अउर सुबाह । जिह देख जुद्ध उछाह । भट नेह नाम अपार । बल जउन को बिकरार ॥ ३७ ॥ २६४ ॥ इक प्रीति अरु हरि भगति । जिह जोत जगमग जगत । भट दत्त मत्त महान । सभ ठउर मै परधान ॥ ३८ ॥२६५॥ इक क्रुद्ध अउर प्रबोध । रण देख कै जिह क्रोध । इह भांत सैन बनाइ । दुहु दिसि निशाण बजाइ ॥ ३९ ॥ २६६ ॥ ॥ दोहरा ॥ इह बिधि सैन बनाइकै चड़े निशान बजाइ । जिह जिह बिधि आहव मच्यो सो सो कहत सुनाइ ॥ ४० ॥ २६७ ॥ ॥ श्री भगवती छंद ॥ कि संबाह उट्ठें । कि सावंत जुट्टें । कि नीशाण हुक्के । कि बाजंत्र धुक्के ॥ ४१ ॥ २६८ ॥ कि बंबाल नेजे । कि जंज्वाल तेजे । कि सावंत हूके । कि हाहाइ कूके ॥ ४२ ॥ २६९ ॥ कि सिधूर गज्जे । कि तंबूर बज्जे । कि संबाह जुट्टे । कि संनाह फुट्टे ॥ ४३ ॥ २७० ॥ कि डाकंत डउरू । कि भ्रामंत भउरू । कि आहाड़ डिग्गे । कि राकत्र भिग्गे ॥ ४४ ॥ २७१ ॥ कि चामुंड चरमं । कि सावंत धरमं । कि आवंत जुद्धं । कि सानद्ध बद्धं ॥४५॥२७२॥

वीर है, इसी तरह विरक्ति के समान प्रधान अन्य कोई नहीं है ॥ ३६ ॥ २६३ ॥ सत्संग और बल को देखकर युद्ध का उत्साह बढ़ता है और इसी प्रकार स्नेह नामक वीर भी विकराल रूप से बलशाली है ॥ ३७ ॥ २६४ ॥ हरिभक्ति और प्रीति भी है जिनकी ज्योति से सारा जगत जगमगाता है। दत्त का योगी-मार्ग भी महान है और सभी स्थानों में प्रधान समझा जाता है ॥ ३८ ॥ २६५ ॥ क्रोध-प्रबोध युद्ध देखकर क्रोधित होकर और नगाड़े पर चोट देते हुए अपनी सेना को सुसज्जित कर चढ़ उठे ॥ ३९ ॥ २६६ ॥ ॥ दोहा ॥ इस प्रकार सेना बनाकर नगाड़े बजाते हुए चढ़ाई कर दी गयी जिस प्रकार युद्ध हुआ उसका वर्णन मैं सुनाता हूँ ॥ ४० ॥ २६७ ॥ ॥ श्री भगवती छंद ॥ भुजाएँ उठने लगीं, वीर भिड़ने लगे, नगाड़े एवं अन्य वाद्य बजने लगे ॥ ४१ ॥ २६८ ॥ पताकाओं वाले भाले ज्वालाओं के समान तेजयुक्त थे। उन्हें लेकर वीर आपस में भिड़ने लगे और हाहाकार होने लगा ॥ ४२ ॥ २६९ ॥ हाथी गरजने लगे, वाद्य बजने लगे, वीर भिड़ने लगे और कवच फटने लगे ॥ ४३ ॥ २७० ॥ डमरू बजने लगे, भैरव युद्धस्थल में भ्रमण करने लगे और रक्त से भीगे हुए वीर युद्ध में गिरने लगे ॥ ४४ ॥ २७१ ॥ शूरवीर चामुण्डा के समान अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हो युद्ध में आने लगे ४५ २७२ शूरवीर सुसज्जित थे

कि सावंत सज्जे। कि नीशाण बज्जे। कि जंज्वाल क्रोधं। कि बिसारि बोधं ॥ ४६ ॥ २७३ ॥ कि आहाड़ मानी। कि ज्यों मच्छ पानी। कि शस्त्रास्त्र बाहै। कि ज्यों जीत चाहै ॥ ४७ ॥ २७४ ॥ (मू०ग्रं०७०२) कि सावंत सोहे। कि सारंग रोहे। कि शस्त्रास्त्र बाहे। भले सैण गाहे ॥ ४८ ॥ ॥ २७५ ॥ कि भैरउ भभक्कैं। कि काली कुहक्कैं। कि जोगंन जुट्टी। कि लै पत्र घुट्टी ॥ ४९ ॥ २७६ ॥ कि देवी दमक्कैं। कि काली कुहक्कैं। कि भैरो भकारैं। कि डउरू डकारैं ॥ ५० ॥ २७७ ॥ कि बहु शस्त्र बरखे। कि परमास्त्र करखे। कि दइतास्त्र छुट्टे। कि देवास्त्र मुक्के ॥ ५१ ॥ ॥ २७८ ॥ कि सैलास्त्र साजे। कि पउनास्त्र बाजे। कि मेघास्त्र बरखे। कि अगनास्त्र करखे ॥ ५२ ॥ २७९ ॥ कि हंसास्त्र छुट्टे। कि काकास्त्र तुट्टे। कि मेघास्त्र बरखे। कि सुक्रास्त्र करखे ॥ ५३ ॥ २८० ॥ कि सावंत सज्जे। कि ब्योमास्त्र गज्जे। कि जच्छास्त्र छुट्टे। कि किंनास्त्र मुक्के ॥ ५४ ॥ २८१ ॥ कि गंध्रबास्त्र बाहै। कि नर अस्त्र गाहै। कि चंचाल नैणं। कि मै मत्त बैणं ॥ ५५ ॥ २८२ ॥

और नगाड़े बज रहे थे। वीर ज्वाला के समान क्रोधित थे और उनको तनिक भी होश नहीं था ॥ ४६ ॥ २७३ ॥ युद्ध में वीर इस प्रकार प्रसन्न थे जैसे पानी में मछली प्रसन्न होती है। वे अपनी जीत चाहने के लिए शस्त्र-अस्त्र चला रहे थे ॥ ४७ ॥ २७४ ॥ धनुष क्रोधित हो रहे हैं, वीर शोभायमान हो रहे हैं और सेना का मन्थन कर रहे हैं ॥ ४८ ॥ २७५ ॥ कालीदेवी अट्टहास कर रही है, भैरव गर्जना कर रहे हैं और हाथ में पात्र पकड़े हुए योगिनियाँ भी रक्त पीने के लिए आ जुटी हैं ॥ ४९ ॥ २७६ ॥ देवी जगमगा रही है, काली चीत्कार कर रही है, भैरव गरज रहे हैं तथा डम-डम डमरू बजा रहे हैं ॥ ५० ॥ २७७ ॥ शस्त्र-वर्षा हो रही है, और भयानक अस्त्र कड़क रहे हैं, एक तरफ़ से दैत्यास्त्र छूट रहे हैं और दूसरी ओर से देवास्त्र चल रहे हैं ॥ ५१ ॥ २७८ ॥ शैलास्त्र, पवनास्त्र, मेघास्त्र बरस रहे हैं और आग्नेयास्त्र कड़क रहे हैं ॥ ५२ ॥ २७९ ॥ हंसास्त्र, काकास्त्र और मेघास्त्र बरस रहे हैं तथा शूकरास्त्र कड़क रहे हैं ॥ ५३ ॥ २८० ॥ वीर सुसज्जित हैं, व्योमास्त्र गरज रहे हैं, यक्षास्त्र छूट रहे हैं और किन्नरास्त्र समाप्त हो चले हैं ॥ ५४ ॥ २८१ ॥ गन्धर्व-अस्त्र चल रहे हैं और नर-अस्त्र भी छूट रहे हैं, सभी वीरों के नैन चंचल हैं और सभी "मैं, मैं" का उच्चारण कर रहे हैं ॥ ५५ ॥ २८२ ॥

कि आहाड़ डिग्गं । कि आरक्त भिग्गं । कि शस्त्रास्त्र बज्जे । कि सावंत गज्जे ॥ ५६ ॥ २८३ ॥ कि आवरत हूरं । कि सावरत धूरं । फिरी ऐण गंणं । कि आरक्त नैणं ॥ ५७ ॥ ॥ २८४ ॥ कि पावंग पुल्ले । कि सरबास्त्र खुल्ले । कि हंकार बाहै । अधं अद्धि लाहै ॥ ५८ ॥ २८५ ॥ छुटी ईस तारी । कि संन्यासधारी । कि गंधरब गज्जे । कि बादित्र बज्जे ॥ ५९ ॥ २८६ ॥ कि पापास्त्र बरखे । कि धरमास्त्र करखे । अरोगास्त्र छुट्टे । सुभोगास्त्र सुट्टे ॥६०॥२८७॥ बिबादास्त्र सज्जे । बिरोधास्त्र बज्जे । कुमंत्रास्त्र छुट्टे । सुमंत्रास्त्र टुट्टे ॥ ६१ ॥ २८८ ॥ कि कामास्त्र छुट्टे । करोधास्त्र तुट्टे । बिरोधास्त्र बरखे । बिमोहास्त्र करखे ॥६२॥२८९॥ चरित्रास्त्र छुट्टे । कि मोहास्त्र जुट्टे । कि त्रासास्त्र बरखे । कि क्रोधास्त्र करखे ॥ ६३ ॥ २९० ॥ ॥ चौपई छंद ॥ इह बिध शस्त्र अस्त्र बहु छोरे । न्रिप बिबेक के भट झकझोरे । आपन चला निसरि तब राजा । भाँत भाँत के बाजन बाजा ॥ ६४ ॥ २९१ ॥ दुहुदिसि पड़ा निशाने घाता । महा शबद धुनि उठी अघाता । बरखा बाण गगन ग्यो

रक्त से भीगे हुए वीर युद्ध में गिर गए हैं और शस्त्रास्त्रों के बजने के साथ शूरवीर भी गरज रहे हैं ॥ ५६ ॥ २८३ ॥ शूरवीरों के लिए लाल आँखों वाली अप्सराओं के झुण्ड भी आकाश में विचरण कर रहे हैं ॥ ५७ ॥ २८४ ॥ घोड़ों के समूह खुले हुए इधर-उधर घूम रहे हैं और वीर क्रोधित होकर उनके खण्ड-खण्ड कर रहे हैं ॥ ५८ ॥ २८५ ॥ परम संन्यासी शिव का ध्यान भी टूट गया है और उसे भी गरजते हुए गन्धर्व और बजते हुए वाद्य सुनाई पड़ रहे हैं ॥ ५९ ॥ २८६ ॥ पापास्त्रों की वर्षा और धर्मास्त्रों की कड़कड़ाहट सुनायी पड़ रही है । आरोग्यास्त्र और भोगास्त्र भी छूट रहे हैं ॥ ६० ॥ २८७ ॥ विवादास्त्र और विरोधास्त्र, कुमंत्रास्त्र, सुमंत्रास्त्र चलने और टूटने लगे ॥ ६१ ॥ २८८ ॥ कामास्त्र, क्रोधास्त्र और विरोधास्त्र बरसने लगे तथा विमोहास्त्र कड़कने लगे ॥ ६२ ॥ २८९ ॥ चरित्रास्त्र छूटने लगे, मोहास्त्र भिड़ने लगे, त्रासास्त्र बरसने लगे और क्रोधास्त्र कड़कने लगे ॥ ६३ ॥ २९० ॥ ॥ चौपाई छंद ॥ इस प्रकार बहुत से अस्त्र-शस्त्र छोड़कर विवेक नामक राजा के शूरवीरों को झकझोर दिया गया तब राजा स्वयं चला तथा भाँति-भाँति के रण-वाद्य बजने लगे ॥ ६४ ॥ २९१ ॥ दोनों ओर से नगाड़े पर चोट पड़ गई और घनघोर शब्दध्वनि होने लगी बाण-वर्षा सारे

छाई । भूति पिसाच रहे उरझाई ॥ ६५ ॥ २९२ ॥ झिमि झिमि सारु (मू०ग्रं०७०३) गगन ते बरखा । भल भल सुभट पखरिआ परखा । सिमटे सुभट अनंत अपारा । परि गई अंध धुंध बिकरारा ॥ ६६ ॥ २९३ ॥ ॥ चौपई ॥ न्रिप बिबेक तब रोसहि भरा । सभ सैना कह आइसु करा । उमडे सूर सु फउज बनाई । नाम तास कबि देत बताई ॥ ६७ ॥ २९४ ॥ सिरी पाखरी टोप सवारे । चिलतह राग सँजोवा डारे । चले जुद्ध के काज सु बीरा । सूकत भयो नदन को नीरा ॥ ६८ ॥ २९५ ॥ ॥ दोहरा ॥ दुहू दिसन मारु बज्यो पर्‌यो निशाने घाउ ॥ उमड दु बहिआ उठि चलै भयो भिरन को चाउ ॥ ६९ ॥ २९६ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ रणं सुद्ध सावंत भावंत गाजे । तहा तूर भेरी महा संख बाजे । भयो उच्च कोलाहलं बीर खेतं । बहे शस्त्र अस्त्रं नचे भूत प्रेतं ॥ ७० ॥ २९७ ॥ फरी धोप पाइक सु खंडे बिसेखं । तुरे तुंद ताजी भए भूत भेखं । रणं राग बज्जे त गज्जे भटाणं । तुरी तत्त नच्चे पलट्टे भटाणं ॥ ७१ ॥ २९८ ॥

आसमान पर छा गई और भूत-पिशाच भी उसमें उलझ कर रह गये ॥ ६५ ॥ २९२ ॥ आकाश से लोहे की झिम-झिम वर्षा होने लगी और इसी के साथ बड़े-बड़े वीरों की परख होने लगी। अनन्त वीर सिमट कर इकट्ठे हो गए। चारों ओर विकराल धुन्ध की धुन्ध छा गयी ॥ ६६ ॥ २९३ ॥ ॥ चौपाई ॥ विवेक राजा तब क्रोध से भरकर सम्पूर्ण सेना को आदेश दिया। वे सभी वीर, जो फ़ौज बनाकर उमड़ पड़े, कवि अब उनके नाम बताता है ॥ ६७ ॥ २९४ ॥ सिर पर टोप और शरीर पर कवच तथा विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र सुसज्जित कर युद्ध के लिए चल पड़े। भयभीत होकर नदियों का जल भी सूखने लगा ॥ ६८ ॥ २९५ ॥ ॥ दोहा ॥ दोनो दिशाओं से मारू वाद्य बजने लगे और नगाड़े गड़गड़ाने लगे। अपनी दोनो भुजाओं के बल पर लड़नेवाले वीर मन में युद्ध का चाव लिये हुए उमड़ पडे ॥ ६९ ॥ २९६ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ रण में शूरवीर शोभायमान होकर गरजने लगे और युद्धस्थल में भेरी, शंख आदि वाद्य बजने लगे। युद्ध मे वीरों का भीषण कोलाहल होने लगा, अस्त्र-शस्त्र चलने लगे तथा भूत-प्रेत नृत्य करने लगे ॥ ७० ॥ २९७ ॥ कृपाण पकड़कर विशेष वीरों को खण्ड-खण्ड किया जाने लगा और युद्धस्थल में तीव्रगामी अश्व बेतालों के समान दौड़ने लगे रण-वाद्य बजने पर वीर गरजने लगे घोड़े नृत्य करने लगे और

हिणंकेत हैवार गैवार गाजी । भटक्के महाबीर सुभ्भे सिराजी । कड़ा कुट्ट शस्त्रास्त्र बज्जे अपारं । नचे सुद्ध सिद्धं उठी शस्त्र झारं ॥ ७२ ॥ २९९ ॥ किलंकीत काली कमच्छ्या करालं । बक्यो बीर बैताल बामंत ज्वालं । चवी चावडी चाव चउसठि बालं । करें स्रोण हारं बमै जोग ज्वालं ॥ ७३ ॥ ३०० ॥ छुरी छिप्र छंडै तिमंडे रणारं । तमक्के तताजी भभक्के भटाणं । सुभे संदली बोज बाजी अपारं । बहे बेर पिंगी सुमुंदे कंधारं ॥ ७४ ॥ ३०१ ॥ तुरे तुंद ताजी उठे कच्छ अच्छं । कच्छे आरबी पब्ब मानो सपच्छं । उठी धूर पूरं छही ऐण गैणं । भयो अंध धुंधं परी जान रैणं ॥ ७५ ॥ ३०२ ॥ इतै दत्त धायो अनादत्त उत्तं । रही धूर पूरं परी कट्ट लुत्थं । अनाबरत बीरं महा बरतधारी । चड़्यो चउपकं तुंद नच्चे ततारी ॥ ७६ ॥ ३०३ ॥ खुरं खेह उट्ठी छयो रथ भानं । दिसा बेदिसा भू न दिख्या समानं । छुटे शस्त्र अस्त्रं परी भीर

महाबली पलटकर वार करने लगे ॥ ७१ ॥ २९८ ॥ घोड़े हिनहिनाने लगे और महाबली वीरों के शरीर फड़कते हुए शोभायमान होने लगे। शस्त्र-अस्त्रों की कटाहट बजने लगी और सिद्ध-योगीगण उन्मत्त होकर शस्त्रों की उस धारा के साथ नृत्य करने लगे ॥ ७२ ॥ २९९ ॥ विकराल काली और कामाख्या किलकारियाँ मारने लगीं और ज्वालाएँ फेंकते हुए वीर बैताल चीत्कार करने लगे। चीलें और चौंसठ योगिनियाँ उत्साहपूर्वक रक्तमाला धारण किए योगज्वालाएँ फेंकने लगीं ॥ ७३ ॥ ३०० ॥ तेज़ छुरियाँ युद्ध में छोड़ी जाने लगीं जिससे तेज़ घोड़े भड़क उठे और शूरवीरो का रक्त भभक कर बहने लगा। अच्छी नस्लों वाले घोड़े शोभायमान होने लगे तथा कन्धारी, समुद्री तथा अनेकों प्रकार के अन्य घोड़े विचरण करने लगे ॥ ७४ ॥ ३०१ ॥ कच्छ प्रदेश के तीव्र घोड़े दौड़ रहे थे और अरबी घोड़े दौड़ते हुए ऐसे लग रहे थे, मानो पर्वत पंख लगाकर उड़ रहे हों। उठी हुई धूल ने आसमान को इस तरह ढक लिया तथा इतनी धुन्ध छा गई कि मानो रात हो गई हो ॥ ७५ ॥ ३०२ ॥ एक ओर से दत्त-मार्गी दौड़े तथा दूसरी ओर से अन्य लोग दौड़े। सारा वातावरण धूल-पूरित हो गया और लाशें कटकर गिरने लगीं। महाव्रतधारी वीरों के व्रत टूट गए और वे उत्साहित होकर ततारी घोड़ों पर चढ़कर नृत्य करने लगे ॥ ७६ ॥ ३०३ ॥ घोड़ों के खुरों से उठी धूल से सूर्य का रथ ढक गया और वह अपनी दिशा से विचलित हुआ तथा धरती पर दिखायी नहीं दिया। भारी भगदड़ मची और

भारी। छुटै तीर करबार काती कटारी ॥ ७७ ॥ ३०४ ॥ गहे बाण दत्तं अनादत्त मार्यो। भजी सरब सैणं न नैणं निहार्यो। जिन्यो बीर एकै अनेकं परानो। पुराने पलासी (पू०पं०७०४) हने पौन मानो ॥ ७८ ॥ ३०५ ॥ रणं रोसकै लोभ बाजी मटक्क्यो। भज्यो बीर बाच्यो अर्यो सु झटक्क्यो। फिर्यो देख बीरं अनालोभ धायो। छुटे बाण ऐसे सभै व्योम छायो ॥ ७९ ॥ ३०६ ॥ दसं बाण लै बीर धीरं प्रहारे। सरं सट्ठि लै संजमै ताकि मारे। नवं बाण सो नेम को अंग छेद्यो। बली बीसि बाणालि बिग्यान भेद्यो ॥ ८० ॥ ३०७ ॥ पचिस बाण पावित्रता को प्रहारे। असीह बाण अरचाहि कै अंग झारे। पचासी सरं पूर पूजाहि छेद्यो। बडो लसटका लै सलज्जाहि भेद्यो ॥ ८१ ॥ ३०८ ॥ बिआसी बली बाणि बिद्याहि मारे। तपस्याहि पै ताकि तेतीस डारे। कई बाण सौ कीरतनं अंग छेद्यो। अलोभादि जोधा भलीभाँत भेद्यो ॥ ८२ ॥ ३०९ ॥ न्रिहंकार को बान

अस्त्र-शस्त्र, तलवार, काँती, कटारी आदि चलने लगी ॥ ७७ ॥ ३०४ ॥ दत्त ने बाण पकड़कर अन्यों पर मारा और बिना देखे हुए सारी सेना भाग खडी हुई। एक ही वीर ने सबको जीत लिया और अनेक वीर भाग खडे हुए। वीरों के पैर इस प्रकार उखड़ गए कि मानो पवन ने पुराने पलाश के पेडों को उखाड़ डाला हो ॥ ७८ ॥ ३०५ ॥ युद्ध में क्रोधित होकर लोभ ने अपना घोड़ा दौड़ाया। उसके सामने से जो भाग खड़ा हुआ वही बच गया, जो खड़ा रहा झटककर मार डाला गया। अलोभ नामक वीर उसे देखकर पलटा और लोभ ने ऐसे बाण छोड़े जो सारे आसमान पर छा गए ॥ ७९ ॥ ३०६ ॥ धैर्य नामक वीर पर दस बाण लेकर प्रहार किया और संयम पर निशाना बाँधकर साठ बाण मारे। नौ बाणों से नियम के अंग छेद दिये गए और बीस बाणों से महाबली विज्ञान का भेदन कर दिया गया ॥ ८० ॥ ३०७ ॥ पचीस बाणों से पवित्रता पर और अस्सी बाणों से अर्चना पर प्रहार कर उसके अंगों को काट डाला गया। पचासी बाणों से सम्पूर्ण पूजा का खण्डन कर दिया गया। बड़ी लाठी लेकर लज्जा को भी भेद दिया गया ॥ ८१ ॥ ३०८ ॥ विद्या को बयासी बाण मारे गए और तपस्या पर तेंतीस बाण चलाए गए। अनन्त बाणों से कीर्ति के अंगों का छेदन कर दिया गया अलोभ आदि योद्धाओं का भलीभाँति भेदन कर दिया गया ८२ ३०९ निरहंकार को अस्सी बाणों से छेदा और

असीन छेद्यो । भले परम तत्वादि कौ बच्छ भेद्यो । कई बाण करुणाहि के अंग झारे । सरं सउक सिछ्याहि के अंग मारे ॥ ८३ ॥ ३१० ॥ ॥ दोहरा ॥ दान आनि पूज्यो तबै ग्यान बान लै हाथ । ज्वानि जानि मार्यो तिसै ध्यान मंत्र के साथ ॥ ८४ ॥ ३११ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ रणं उछल्यो दान जोधा महानं । सभै शस्त्र औ बस्त्र अस्त्रं निधानं । दसं बाण सो लोभ को बच्छ मार्यो । सरं सपत सौ क्रोध को देहु तार्यो ॥ ८५ ॥ ३१२ ॥ नवं बाण बेध्यो अनंन्यास बीरं । त्रयो तीर भेद्यो अनाबरत धीरं । भयो भेदि क्रोधं सतं संगि मारे । भई धीर धरमं ब्रहमगिआन तारे ॥ ८६ ॥ ३१३ ॥ कई बाण कुलहत ताको चलाए । कई बाण लै बैरके बीर घाए । किते घाइ आलस कै अंग लागे । सभै नरक ते आदि लै बीर भागे ॥ ८७ ॥ ३१४ ॥ इकै बाण निसील कौ अंग छेद्यो । दुतौ कुस्सतता को भलै सूत भेद्यो । गुमानादि के चार बाजी संघारे । अनरथादि के बीर बाँके निबारे ॥ ८८ ॥ ३१५ ॥ पिपासा छुधा आलसादी पराने ।

आदि के वक्ष को भी भेद डाला । कई बाणों से करुणा के अगों को झाड़ दिया गया और लगभग सौ बाण शिक्षा के अंगों पर चलाए गए ॥ ८३ ॥ ३१० ॥ ॥ दोहा ॥ तभी दान नामक वीर ने ज्ञान रूपी बाण हाथ में लेकर पूजा-अर्चना की और ध्यान से अभिमन्त्रित करके उस जवान पर चला दिया ॥ ८४ ॥ ३११ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ दान नामक योद्धा युद्ध में उछला जो कि सभी अस्त्र-शस्त्र एवं वस्त्रों का भण्डार था । दस बाण लेकर उसने लोभ के वक्षस्थल पर मारे । वह ऐसा लग रहा था मानो क्रोध रूपी सात समुद्रों में तैर रहा हो ॥ ८५ ॥ ३१२ ॥ नौ बाणों से उसने अन्याय नामक वीर को भेद दिया और तीन बाणों से अव्रत नामक वीर को छेद डाला । सात बाणों से उसने क्रोध का भेदन कर दिया । इस प्रकार ब्रह्मज्ञान तथा धर्म की धैर्यपूर्वक स्थापना हुई ॥ ८६ ॥ ३१३ ॥ कई बाण कलह को ताककर चलाए गए और कई बाणों से वैर के वीर मार डाले गए, कितने ही बाण आलस्य के अंगों पर लगे और ये सभी वीर नरक की तरफ भाग खड़े हुए ॥ ८७ ॥ ३१४ ॥ एक ही बाण से अशील का अंग छेदन किया और दूसरे से कुत्सितता को भली प्रकार भेदन किया । अभिमान के सुन्दर घोड़ों को मार डाला और अनर्थ आदि के वीरों को भी खंडित कर दिया ८८ ३१५ पिपासा क्षुधा भाग खडे हुए और दैव को

भज्यो लोभ क्रोधी हठी देख जाने। तप्यो नेम नामा अनेमं प्रणासी। धरे जोग अस्त्रं अलोभी उदासी॥ ८९॥ ३१६॥ हत्यो कापटं खापटं सो कपालं। हन्यो रोह मोहं सकामं करालं। महा क्रुद्ध कै क्रोध को बान मार्‌यो। (मू०ग्रं०७०५) खिस्यो ब्रहम दोखादि सरबं प्रहार्‌यो॥ ९०॥ ३१७॥ ॥ रूआल छंद॥ सु द्रोह अउ हंकार को हज़ार बान सौ हन्यो। दरिद्र अशंक मोह को न चित्त मै कछू गन्यो। असोच अउ कुमंत्रता अनेक बान सो हत्यो। कलंक कौ निशंक ह्वै सहंस्र साइकं छत्यो॥ ९१॥ ३१८॥ क्रितघनता बिस्वासघात मित्रघात मारियो। सु राजदोख ब्रहमदोख ब्रहम अस्त्र झारियो। उचाट मारणादि बस्सिकरण कौ सरं हन्यो। बिखाध को बिखाध कै न ब्रिध ताहि को गन्यो॥ ९२॥ ३१९॥ भजे रथी हई गजी सु पति त्रास धारिकै। भजे रथी महारथी सु लाज को बिसारिकै। असंभ जुद्ध जो भयो सु कैस कै बताइऐ। सहंस्र बार जौ रटै न तत्र पार पाइऐ॥ ९३॥ ३२०॥ कलंक बिभ्रमादि अउ क्रितगन ताहि कौ हन्यो। बिखाद

क्रोधित जानकर लोभ भी भाग खड़ा हुआ। अनियम का नाशक नियम भी क्रोधित हो उठा और उस उदासीन तथा अलोभी ने योगास्त्र धारण कर लिये॥ ८९॥ ३१६॥ कपट का सिर फोड़कर मार डाला गया और रोष, मोह, काम आदि विकराल वीरों को भी मार डाला गया। महाक्रोधित होकर क्रोध को बाण मारा और इस प्रकार ब्रह्म ने खीझकर सभी दु:खों का नाश कर दिया॥ ९०॥ ३१७॥ ॥ रूआल छंद॥ द्रोह तथा अहंकार को हज़ार बाणों से मार डाला तथा दरिद्रता, मोह आदि की ज़रा भी परवाह नहीं की गई। अशौच एवं कुमंत्रणा को अनेकों बाणों से नष्ट कर डाला गया और कलंक को भी अभय होकर हज़ारों बाणों से बेध डाला गया॥ ९१॥ ३१८॥ कृतघ्नता, विश्वासघात और मित्रघात को भी मार डाला गया। ब्रह्मास्त्र से ब्रह्मदोष, राजदोष को समाप्त कर दिया गया। उच्चारण, मारण तथा वशीकरण आदि को शरों द्वारा मार डाला गया। विषाद को भी वृद्ध जानकर छोड़ा नहीं गया॥ ९२॥ ३१९॥ रथवान, अश्व तथा गजपति भयभीत होकर भाग खड़े हुए तथा बड़े-बड़े रथी-महारथी लज्जा त्यागकर भाग खड़े हुए। यह असंभव एवं विकराल युद्ध कैसा हुआ इसका वर्णन कैसे करें; यदि सैकड़ों-हज़ारों बार भी वर्णन किया जाय तो भी उसकी विशालता का अन्त नहीं पाया जा सकता॥ ९३॥ ३२०॥ कलंक, विभ्रम

बिपदादि को कछू न चित्ति मै गन्यो। सु मित्र दोख राज दोख ईरखाहि मारिकै। उचाट अउ बिखाध को दयो रणं निकारिकै ॥ ९४ ॥ ३२१ ॥ गिलानि को प्रमान अप्रमान बान सौ हन्यो। अनरथ को समरथ कै हजार बान सो झन्यो। कुचार को हजार बान चार सौ प्रहारियो। कुकष्ट अउ कुक्रिआ कौ भजाइ तास डारियो ॥ ९५ ॥ ३२२ ॥ ॥ छपय छंद ॥ अतप्प बीर कउ ताकि बान सत्तरि मारे तप। नवे साइकनि सील सहस सरहने अजप जप। बीस बाण कुमतहि तीस कुकरमह भेद्यो। दस साइक दारिद्र काम कई बाणनि छेद्यो। बहु बिधि बिरोध को बध कियो अबिबेकहि सर संधि रण। रण रोह क्रोह करवार गहि इम संजम बुल्ल्यो बयण ॥ ९६ ॥ ३२३ ॥ अरण पच्छमहि उग्वै बरुणु उत्तर दिस तक्कं। मेर पंख करि उडे सरब साइर जल सुक्कै। कोल दाढ़ कड़ मुड़ै सिमटि फनीअर फण फट्टै। उलटि जानवी बहै सत्त हरीचंदं हट्टै। संसार उलट्ट पुलट्ट ह्वै धसकि धउल धरणी फटै। सुनि न्रिप अबिबेक बिबेक

और कृतघ्नता आदि को मार डाला गया तथा विषाद, विपदा आदि की तनिक परवाह नहीं की गई। मित्रदोष, राजदोष, ईर्ष्या आदि को मार उच्चाटन एवं विषाद को युद्ध से बाहर धकेल दिया गया ॥ ९४ ॥ ३२१ ॥ ग्लानि को अनेकों बाणों से छेद डाला गया। अनर्थ को पूर्ण शक्ति से हजार बाणों से वेध दिया गया। कुचाल पर हजारों सुन्दर बाणों से प्रहार किया गया तथा कष्ट और कुक्रिया को भगा दिया गया ॥ ९५ ॥ ३२२ ॥ ॥ छप्पय छंद ॥ तपस्या ने अतप को सत्तर बाण मारे। नब्बे तीर शील को और जाप ने अजाप को सहस्र बाण मारे। बीस बाणों से कुमति और तीस से कुकर्म का भेदन किया गया। दस तीर दरिद्रता को और कई बाणों से काम को छेद डाला गया। अविवेक वीर के विरोध वीर का युद्ध में वध कर दिया गया तथा युद्ध में क्रोधित हो हाथ में तलवार पकड़ कर संयम ने कहा ॥ ९६ ॥ ३२३ ॥ सूर्य चाहे पश्चिम से उगे और बादल चाहे उत्तर दिशा से आना शुरू कर दें; मेरु पर्वत चाहे उड़ने लगे और समुद्र का सारा पानी चाहे सूख जाय; काल के दाँत चाहे मुड़ जायँ और शेषनाग का फन चाहे पँलट जाय; गंगा चाहे उलटी बहने लगे और हरिश्चन्द्र भी चाहे सत्य छोड़ दें; संसार उलट जाय और बैल पर स्थिर धरती चाहे धसक कर फट जाय परंतु हे अविवेक राजन! विवेक का सूरबीर संयम तब भी नहीं

भटि तदपि न लटि संजम हटै ॥ ९७ ॥ ३२४ ॥ ॥ तेरे जोर मै गुंगा कहता हो । तेरा सदका तेरी शरणि ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ कुप्यो संजमं परम जोधा जुझारं । बडो गरबधारी बड़ो निरबिकारं । अनंतास्त्र लै कै (मू०ग्रं०७०६) अनरथै प्रहार्‌यो । अनादत्त के अंग को छेद डार्‌यो ॥ ९८ ॥ ३२५ ॥ ॥ तेरे जोर कहत हौ ॥ इसो जुद्ध बीत्यो कहा लौ सुनाऊ । रटो सहंस जिह्बा न तऊ अंत पाऊ । दसं लच्छ जुग्यं सु बरखं अनंतं । भयो बीर खेतं कथं कउन अंतं ॥ ९९ ॥ ३२६ ॥ ॥ तेरे जोर संग कहता हौ ॥ भई अंध धुंधं मच्यो बीर खेतं । नची जुग्गणी चारु चउसट्‌ठ प्रेतं । नची कालका सी कमक्खया करालं । डकं डाकणी जोध जागंत ज्वालं ॥ १०० ॥ ३२७ ॥ ॥ तेरा जोरु ॥ मच्यो जोर जुधं हट्‌यो नाहि कोऊ । बडे छत्र धारी पती छत्र दोऊ । थप्यो सरब लोकं अलोकं अपारं । मिटे जुद्ध ते ए न जोधा जुझारं ॥ १०१ ॥ ३२८ ॥ ॥ दोहरा ॥ ॥ तेरा जोर ॥ खटपट सुभट बिकट कटे झटपट भई अभंग । लटभट हटे न रन घट्‌यो अटपट मिट्‌यो न जंग ॥ १०२ ॥ ३२९ ॥ ॥ तेरे जोर ॥ ॥ चौपई ॥ बीस

हटेगा ॥ ९७ ॥ ३२४ ॥ ॥ मैं गूंगा तेरी कृपा से कहता हूँ; मैं तुम पर बलिहारी हूँ और तेरी शरण में हूँ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ परम योद्धा संयम क्रोधित हो उठा; यह गर्वयुक्त और निर्विकार था। उसने अनंत अस्त्र लेकर अनर्थ पर प्रहार किया और अनादत्त के अंगों को छेद डाला ॥ ९८ ॥ ३२५ ॥ ॥ तेरी शक्ति से कहता हूँ ॥ ऐसा युद्ध हुआ कि कहाँ तक वर्णन करूँ। हजारों जिह्वाओं से कहूँ तो भी अन्त नहीं पा सकता। दस लाख युग वर्षों तक युद्ध चलता रहा और अनन्त वीर खेत रहे ॥ ९९ ॥ ३२६ ॥ ॥ तुम्हारी शक्ति से उच्चारण करता हूँ ॥ युद्ध में अंधाधुंध मारकाट हुई। चौंसठ योगिनियाँ और प्रेतादि नृत्य करने लगे। काली के समान विकराल कामाख्या नाचने लगी और ज्वालाओं के समान डाकिनियाँ डकारने लगीं ॥१००॥३२७॥ ॥ तेरा जोर ॥ भीषण युद्ध हुआ और कोई भी पीछे नहीं हटा। वहाँ बड़े-बड़े योद्धा और छत्रपति थे। यह युद्ध सारे लोकों में चलने लगा और इस भीषण युद्ध में भी योद्धा समाप्त नहीं हुए ॥ १०१ ॥ ३२८ ॥ ॥ दोहा ॥ तेरा जोर ॥ शीघ्र ही उस घमासान युद्ध में महाबली वीर कटने लगे। कोई भी वीर भागकर पीछे नहीं हटता था और यह युद्ध समाप्त नहीं होता था ॥१०२॥३२९॥ ॥ तेरा जोर चौपाई बीस लाख युगों तक दोनों ओर से युद्ध होता रहा

लच्छ जुग ऐतु प्रमाना । लरे दोऊ भई किसू न हाना । तब राजा जिय मै अकुलायो । नाक चढे मछिंद्र पै आयो ॥ १०३ ॥ ॥ ३३० ॥ कहि मुन बरि सभ मोहि बिचारा । ए दोऊ बीर बडे बरिआरा । इनका बिरुध निब्रत्त न भया । इनो छुडावत सभ जगु गया ॥ १०४ ॥ ३३१ ॥ ॥ तेरा जोरु ॥ इनै जुझावत सभ कोई जूझा । इनका अंत न काहू सूझा । एहै आदि हठी बरिआरा । महाँ रथी अउ महाँ भयारा ॥ १०५ ॥ ३३२ ॥ बचनु मछिंद्र सुनत चुप रहा । धरा नाथ सभनन तन कहा । चक्रित चित्त चटपट ह्वै दिखसा । चरपटनाथ तदिन ते निकसा ॥ १०६ ॥ ३३३ ॥

॥ इति चरपटनाथ प्रगटणो नाम ॥

अथ आदिपुरख महिमा बरननं ॥

॥ चौपई ॥ सुनि राजा तुहि कहै बिबेका । इन कह द्वै जानहु जिन एका । ए अबिकार पुरख अवतारी । बडे धनुरधर बडे जुझारी ॥ १०७ ॥ ३३४ ॥ आदिपुरख जब आप सँभारा । आप रूप मै आपि निहारा । ओअंकार कह इकदा कहा ।

परन्तु किसी की भी हार नहीं हुई। तब राजा व्याकुल होकर मछेन्द्र के पास आया ॥ १०३ ॥ ३३० ॥ (राजा ने कहा) हे श्रेष्ठ मुनि ! मुझे समझाओ। ये दोनों वीर महाबली हैं। इनका विरोध समाप्त नहीं होता और इनसे छूटने की चेष्टा करता हुआ ही सारा जगत समाप्त हो चला है ॥१०४॥३३१॥ ॥ तेरा जोर ॥ इन्हें मारते हुए सारा संसार जूझ गया लेकिन इनका अंत नहीं पा सका। ये विकराल वीर महाहठी, महारथी और महाभयानक हैं ॥ १०५ ॥ ३३२॥ यह सुनकर मछेन्द्र चुप रहा और पारसनाथ आदि सबने अपनी बातें उनसे कहीं। वहाँ उसी समय सबको चकित करनेवाला कौतुक हुआ और उसी दिन चरपटनाथ सबको दिखाई दिए ॥ १०६ ॥ ३३३ ॥

॥ इति चरपटनाथ प्रकट हुए ॥

आदिपुरुष-महिमा-वर्णन

॥ चौपाई ॥ हे राजन् ! तुमसे विवेक की बात कहता हूँ, तुम इन दोनों को एक मत समझो। ये अविकारी पुरुष बडे धनुर्धर और जूझनेवाले योद्धा हैं १०७ ३३४ जब आदिपुरुष ८ ने अपना ध्यान किया

भूमि अकाश सकल बनि रहा ॥ १०८ ॥ ३३५ ॥ ॥ तेरे जोर ॥ दाहन दिस ते सति उपजावा । बाम परस ते झूठ बनावा । उपजत ही उठि जुझे जुझारा । तब ते करत जगत मै रारा ॥ १०९ ॥ ३३६ ॥ सहंस बरख जौ आयु बढावै । रसना सहस सदा लौ पावै । (मू०ग्रं०७०७) सहंस जुगन लौ करे बिचारा । तदपि न पावत पार तुमारा ॥ ११० ॥ ३३७ ॥ ॥ तेरे जोर गुंगा कहता ॥ ब्यास परासर अउ रिखि घने । सिंगी रिखि बकदालभ भने । सहंस मुखन का ब्रहमा देखा । तऊ न तुमरा अंतु बिसेखा ॥ १११ ॥ ३३८ ॥ ॥ तेरा जोरु ॥ ॥ दोहरा ॥ सिंध सुभट सावंत सभ मुनि गंधरब महंत । कोट कलप कलपात भे लह्यो न तेरो अंत ॥ ११२ ॥ ३३९ ॥ ॥ तेरे जोर सौ कहौ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ सुनो राज सरदूल उचरो प्रबोधं । सुनो चित्त दै कै न कीजै बिरोधं । सु स्री आद पुरखं अनादं सरूपं । अजेअं अभेअं अदग्गं अरूपं ॥ ११३ ॥ ॥ ३४० ॥ अनामं अधामं अनीलं अनादं । अजंअं अभेअं अबै निरबिखादं । अनंतं महंतं प्रिथीसं पुराणं । सुभव्यं

और स्वयं अपने स्वरूप को देखा तो उसने ओंकार शब्द का उच्चारण किया जिससे धरती, आकाश सारी सृष्टि बन गई ॥ १०८ ॥ ३३५ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ दाहिनी दिशा से उसने सत्य की उत्पत्ति की और बाम दिशा से उसने झूठ बनाया । ये दोनों वीर पैदा होते ही आपस में जूझने लगे और तब से ही इनका विरोध संसार में चलता चला आ रहा है ॥ १०९ ॥ ३३६ ॥ हजार वर्ष भी यदि आयु बढ़ जाय, हजारों जिह्वाएँ भी यदि प्राप्त हो जाएँ तथा हजारों वर्ष तक यदि विचार किया जाय तब भी हे ईश्वर ! तुम्हारे स्वरूप का अन्त नहीं पाया जा सकता ॥११०॥३३७॥ ॥ तेरे जोर से गूंगा कथन करता है ॥ व्यास, पराशर, शृंगी इत्यादि अनेकों ऋषियों ने वर्णन किया है । हजारों मुखों वाला ब्रह्मा भी देखा गया है, परन्तु ये सब भी तुम्हारा अन्त नहीं जान सके ॥ १११ ॥ ३३८ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ ॥ दोहा ॥ महाबली समुद्र, अनेकों वीर, मुनि, गन्धर्व, महन्त आदि करोड़ों कल्पों से व्याकुल हैं परन्तु ये सब तेरा अन्त नहीं जान सके ॥ ११२ ॥ ३३९ ॥ ॥ तेरे जोर से कहता हूँ ॥ ॥ भुजंग प्रयात छंद ॥ हे सिंह के समान राजन् ! जो मैं तुमको कह रहा हूँ, उसको ध्यानपूर्वक सुनना और उसका विरोध मत करना । वह आदिपुरुष परमात्मा, अनादि, अजेय, रहस्यातीत, अज्वलनशील और निराकार स्वरूप है ॥ ११३ ॥ ३४० ॥ वह नामातीत धामातीत अक्षय अनादि अजेय अभय

भविख्यं अवैयं भवाणं ॥ ११४ ॥ ३४१ ॥ जिते सरब जोगी जटी जंत्र धारी । जलास्त्रो जवी जामनो जग्ग कारी । जती जोग जुद्धी जको ज्वालमाली । प्रमाथी परी परबती छत्र पाली ॥ ११५ ॥ ३४२ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ सभै झूठु मानो जिते जंत्र मंत्रं । सभै फोकटं धरम है भरम तंत्रं । बिना एक आसं निरासं सभै है । बिना एक नामं न कामं कबै है ॥ ११६ ॥ ३४३ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ करे मंत्र जंत्रं जु पै सिद्ध होई । दरं द्वार भिच्छ्या भ्रमै नाहि कोई । धरै एक आसा निरासौर मानै । बिना एक करमं सभै भरम जानै ॥ ११७ ॥ ३४४ ॥ सुन्यो जोग बैनं नरेशं निधानं । भ्रम्यो भीत चित्तं कुप्यो जेम पानं । तजी सरब आसं निरासं चितानं । पुनर उच्चरे बाच बंधी बिधानं ॥ ११८ ॥ ॥ ३४५ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ ॥ रसावल छंद ॥ सुनो मोन राजं । सदा सिद्ध साजं । कछू देह मत्तं । कहो तोहि बत्तं ॥ ११९ ॥ ॥ ३४६ ॥ दोउ जोर जुद्धं । हठी परम क्रुद्धं । सदा जाप

एवं निर्विषाद है। वह अनन्त है, पृथ्वीपति है, प्राचीन है। वर्तमान है, भविष्य है एवं भूत है ॥ ११४ ॥ ३४१ ॥ उसने सभी योगियों, जटाधारियों, यज्ञधारियों, जलधारियों, निशाचरों आदि सबको इस संसार में जीता हुआ है। यति, योगी, योद्धा, गले में ज्वालाएँ धारण करनेवाले वीर महाबली एवं पर्वतों के छत्रपालों को अपने अधीन कर रखा है ॥ ११५ ॥ ३४२ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ जितने यन्त्र-मन्त्र हैं, उन्हें झूठा समझो और जितने तन्त्र-विद्या के माध्यम से भ्रमित करनेवाले धर्म हैं, उन सबको भी खोखला जानो। बिना उस एक परमात्मा पर आशा लगाए सब ओर से निराश होना पड़ेगा। बिना एक प्रभु-नाम के अन्य कुछ भी काम न आ सकेगा ॥ ११६ ॥ ३४३ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ मंत्र-यन्त्रों से यदि सिद्धियाँ प्राप्त होती हों तो द्वार-द्वार भिक्षा के लिए कोई भ्रमण नहीं करेगा। केवल एक आशा मन में धारण कर बाक़ी सब ओर से ध्यान हटा ले और परमात्मा के ध्यान के एक कर्म बिना, बाक़ी सबको भ्रम जानना चाहिए ॥११७॥३४४॥ राजा ने जब योगी के ये वचन सुने तो पानी के हिलने के समान वह चित्त में भयभीत हो उठा। उसने सर्व आशाओं एवं निराशाओं का चित्त से त्याग कर दिया तथा उस महान योगी को उच्चारण करते हुए कहा ॥ ११८ ॥ ३४५ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ ॥ रसावल छंद ॥ हे मुनिराज ! तुम सर्व सिद्धियों में पारंगत हो। मैं आप से प्रार्थना करता हूँ, कि मुझे कुछ मार्ग-दर्शन दीजिए। ११९ ३४६ । दोनों ओर के वीर योद्धा,

करता । सभै सिंध हरता ॥ १२० ॥ ३४७ ॥ अरीले अरारे। हठीले जुझारे। कटीले करूरं। करै शत्र चूरं ॥१२१॥ ॥ ३४८ ॥ ॥ तेरा जोर ॥ ॥ चौपई ॥ जो इन जीति सको नहि भाई। तउ मै जरो चिताहि जराई। मै इन कह मुनि जीति न साका। अब मुर बल पौरख सभ थाका ॥ १२२ ॥ ॥ ३४९ ॥ ऐस भाँत मन (मू०पं०७०८) बीच बिचारा। प्रगट सभा सभ सुनत उचारा। मै बड भूप बडो बरिआरू। मै जीत्यो इह सभ संसारू ॥ १२३ ॥ ३५० ॥ जिनि मोको इह बात बताई। तिन मुहि जानु ठगउरी लाई। ए दुइ बीर बडे बरिआरा। इन जीते जीतो संसारा ॥ १२४ ॥ ३५१ ॥ अब मो ते एई जिणि जाई। कहि मुनि मोहि कथा समझाई। अब मै देख बनावौ चिखा। पैठौ बीच अगनि की सिखा ॥ १२५ ॥ ॥ ३५२ ॥ चिखा बनाइ शनानहि करा। सभ तन बस्त्र तिलोना धरा। बहु बिधि लोग हटकि करि रहा। चटपट करि चरनन भी गहा ॥ १२६ ॥ ३५३ ॥ हीर चीर दै बिधवत दाना। मद्धि कटास करा असथाना। भाँत अनिक तन ज्वाल जराई। जरत न भई ज्वाल सिअराई ॥ १२७ ॥ ३५४ ॥

वाले ॥ १२० ॥ ३४७ ॥ दोनों ओर के वीर अड़नेवाले, हठवादी, क्रूर, काटने हठी, परम क्रोधित, सदैव जाप करनेवाले और समुद्र तक नाश कर देने वाले तथा शत्रु को चूर कर देनेवाले हैं ॥ १२१ ॥ ३४८ ॥ ॥ तेरा ज़ोर ॥ ॥ चौपाई ॥ यदि मैं इनको नहीं जीत सका तो मैं चिता जलाकर जल मरूँगा। हे मुनि ! मैं इनको नहीं जीत सका। मेरा बल और पौरुष थक गया है ॥ १२२ ॥ ३४९ ॥ मन में इस प्रकार का विचार करते हुए राजा ने प्रकट रूप से सबको सुनाकर कहा। मैं बहुत बड़ा राजा हूँ और मैंने सारे संसार को जीत लिया है ॥ १२३ ॥ ३५० ॥ जिसने मुझे इन दोनों वीरों (विवेक-अविवेक) को जीतने की बात कही है उसने मेरे प्राणों को मानो व्याकुल करके ठग लिया हो। ये दोनों वीर महाबली हैं, इनके जीतने से सारा संसार जीता जाता है ॥ १२४ ॥ ३५१ ॥ अब मुझसे ये नहीं जाएँगे। हे मुनि ! मुझे इनका वर्णन समझाकर कहो। अब मैं आप लोगों के देखते-देखते चिता बनाता हूँ और अग्निज्वाला के बीच में बैठता हूँ ॥ १२५ ॥ ३५२ ॥ चिता बनाकर उसने स्नान किया और अपने तन पर केशरी रंग के वस्त्र धारण किया। उसे बहुत से लोगों ने मना किया तथा उसके हाथ-पैर भी पकड़े ॥ १२६ ॥ ३५३ ॥ विभिन्न प्रकार के आभूषण और देकर राजा ने चिता के मध्य में

॥ तोमर छंद ॥ करि कोप पारस राइ । कर आप अगनि जराइ । सो भई सीतल ज्वाल । अति काल रूप कराल ॥१२८॥ ॥ ३५५ ॥ तब जोग अगनि निकारि । अति ज्वलत रूप अपारि । तब किअस आपन दाह । पुर लखत शाहन शाह ॥ १२९ ॥ ३५६ ॥ तब जरी अगनि बिसेख । तिन कास्ट घिरत असेख । तब जर्यो तामहि राइ । भए भसम अदभुत काइ ॥ १३० ॥ ३५७ ॥ कई द्योस बरख प्रमान । सल जरा जोर महान । भई भूत भसमी देह । धन धाम छाड्यो नेह ॥ १३१ ॥ ३५८ ॥

१ ओं स्री वाहिगुरू जी की फतह ॥ रामकली पातिशाही १० ॥

रे मन ऐसो करि संन्यासा । बन से सदन सभै करि समझहु मन ही माहि उदासा ॥१॥रहाउ॥ जत की जटा जोग को मज्जनु नेम के नखन बढाओ । ग्यान गुरू आतम उपदेशहु नाम बिभूत लगाओ ॥ १ ॥ अलप अहार सुलप सी निद्रा दया

स्थान बना लिया। अनेक प्रकार की अग्नियों से तन को जलाया परन्तु ज्वालाएँ उसे जलाने की बजाय ठंडी हो गयीं ॥ १२७ ॥ ३५४ ॥ ॥ तोमर छंद ॥ क्रोधित होकर पारसनाथ ने अपने हाथ में आग जलाई जो दिखने में विकराल थी परन्तु वहाँ ठंडी हो गई ॥ १२८ ॥ ३५५ ॥ तब उसने योगाग्नि निकाली जो अत्यन्त विकराल रूप से जल रही थी। उस अग्नि से उसने अपना दहन कर लिया और नगर के लोग उस महान राजा को देखते रहे ॥ १२९ ॥ ३५६ ॥ तब अनेकों घास के तिनकों, लकड़ियों समेत घी से प्रज्वलित अग्नि धधक उठी। उसमें राजा जल गया और उसकी काया भस्मीभूत हो गयी ॥ १३० ॥ ३५७ ॥ कई वर्षों तक वह चिता जलती रही तब कहीं राजा का शरीर भस्मीभूत हुआ और उसने धन-धाम के नेह का त्याग किया ॥ १३१ ॥ ३५८ ॥

हे मन ! तू ऐसा संन्यास धारण कर जिसमें घर को ही वन समझा जाय और मन ही मन उदासीन रहा जाय ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यतीत्व की जटाएँ परमात्मा से मन जोड़ने का स्नान और नियम के नाखून हों। ज्ञान गुरु हो जो परमात्मा नाम की भभूत लगाकर आत्मा को उपदेश देता हो १ आहार अल्प हो और निद्रा भी बहुत कम हो इन

छिमा तन प्रीति । सील संतोख सदा निरबाहिबो ह्वैबो त्रिगुण अतीति ॥ २ ॥ काम क्रोध हंकार लोभ हठ मोह न मन सो ल्यावै । तब ही आतम तत को दरसे परमपुरख कह पावै ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ रामकली पातिशाही १० ॥ रे मन इहि बिधि जोगु कमाओ । सिङी साच अकपट कंठला ध्यान बिभूत चढ़ाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ताती गहु (मू०ग्रं०७०६) आतम बसि कर की भिच्छा नाम अधारं । बाजे परम तार ततु हरि को उपजै राग रसारं ॥ १ ॥ उघटै तान तरंग रंगि अति ग्यान गीत बंधानं । चकि चकि रहे देव दानव मुनि छकि छकि ब्योम बिवानं ॥ २ ॥ आतम उपदेश भेसु संजम को जापु सु अजपा जापे । सदा रहै कंचन सी काया काल न कबहू ब्यापे ॥३॥२॥

॥ रामकली पातिशाही १० ॥ प्रानी परमपुरख पग लागो । सोवत कहा मोह निद्रा मै कबहूं सुचित ह्वै जागो ॥१॥ रहाउ ॥ औरन कह उपदेशत है पसु तोहि प्रबोध न लागो ।

सबके साथ दया, क्षमा और प्रेम भी हो। शील, संतुष्टि का सदैव निर्वाह किया जाय तथा तीनों गुणों से परे जाया जाय (तो वास्तविक संन्यास के अर्थ को समझा जा सकता है) ॥ २ ॥ ऐसा संन्यासी काम-क्रोध, अहंकार, लोभ, हठ, मोह इत्यादि को मन में नहीं आने देता और ऐसा ही संन्यासी आत्मतत्त्व को प्राप्त कर परमपुरुष का साक्षात्कार करता है ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ रामकली पातिशाही १० ॥ हे मन ! इस प्रकार की योगसाधना करो जिसमें सत्य का वाद्य हो, निष्कपटता की माला तथा ध्यान की भभूत धारण की जाय ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आत्मा को वशीभूत करना तंत्रनाद हो और नाम की भिक्षा माँगी जाय। ऐसे वाद्य से परमतत्त्व का रसीला राग निकले ॥ १ ॥ ज्ञान के गीतों की तान हो जिसे देखकर देव-दानव चकित हो जायँ और तृप्त होकर अपने विमानों में बैठकर देखने सुनने आएँ ॥ २ ॥ इस प्रकार के योग में केवल आत्मा का उपदेश हो, अजपा जाप हो और वेश के नाम पर मात्र संयम हो, तब इस प्रकार के योगी की काया सदैव कंचन के समान रहेगी और काल का कभी भय नहीं रहेगा ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ रामकली पातिशाही १० ॥ हे प्राणी ! परमपुरुष के चरण पकड़ो; मोह-निद्रा में क्यों सो रहे हो- चैतन्य होकर जागो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे पशु ! तुम दूसरों को उपदेश देते हो परन्तु स्वय तुम्हें कुछ बुद्धि नही आती तुम

सिंचत कहा परे बिखियन कह कबहु बिखै रस त्यागो ॥ १ ॥ केवल करम भरम से चीनहु धरम करम अनुरागो । संग्रहि करो सदा सिमरन को परम पाप तजि भागो ॥ २ ॥ जा ते दूख पाप नहि भेटै काल जाल ते तागो । जौ सुख चाहो सदा सभन कौ तौ हरि के रस पागो ॥ ३ ॥ ३ ॥

॥ रागु सोरठि पातिशाही १० ॥ प्रभ जू तोकहि लाज हमारी । नीलकंठ नरहरि नाराइण नील बसन बनवारी ॥१॥ रहाउ ॥ परमपुरख परमेस्वर स्वामी पावन पउन अहारी । माधव महा जोति मधु मरदन मान मुकंद मुरारी ॥ १ ॥ निरबिकार निरजुर निद्रा बिनु निरबिख नरक निवारी । क्रिपासिंध काल त्रै दरसी कुक्रित प्रनासनकारी ॥ २ ॥ धनुरपान ध्रित मान धराधर अनि बिकार असिधारी । हौ मति मंद चरन शरनागति करि गहि लेहु उबारी ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ रागु कलिआन पातिशाही १० ॥ बिन करतार न

क्यों विषय-वासनाओं को सींच रहे हो, कभी तो इनका त्याग करो ॥ १ ॥ कर्मकाण्ड को भ्रम मानो और धर्म के कर्मों के प्रति रुचि बढ़ाओ। सदैव स्मरण का संग्रह करो और पापों को त्यागकर भाग खड़े होवो अर्थात् छोड़ दो ॥ २ ॥ (ऐसा कार्य करो जिससे) दुःख-पाप का स्पर्श न हो और काल के जाल का प्रभाव न हो। यदि तुम सबका भला चाहते हो तो उस प्रभु के प्रेम-रस में ही अनुरक्त रहो ॥ ३ ॥ ३ ॥

॥ राग सोरठ पातिशाही १० ॥ हे प्रभु ! तुम नीलकण्ठ हो, नर के रूप में नारायण हो। नीले वस्त्र धारण करनेवाले हो तथा वनवारी हो। तुम ही हमारी कामनाओं का ध्यान रखो और हमें लज्जित होने से बचाओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम परमपुरुष परमेश्वर स्वामी पवित्र और मात्र वायु का आहार करनेवाले हो। तुम ही माधव, महाज्योति, मधु नामक दैत्य को मारनेवाले मुकुन्द एवं मुरारी हो ॥ १ ॥ तुम निर्विकार जरा-मरण से परे निद्रा-विहीन, विषयों से परे तथा नरक का निवारण करनेवाले हो। तुम ही कृपासिन्धु, त्रिकालदर्शी तथा कुकृत्यों का नाश करनेवाले हो ॥२॥ तुम्हारे हाथ में धनुष, धैर्यवान, सारी धरती के आधार, निर्विकार तथा कृपाण धारण करने वाले हो। हे प्रभु ! मैं मन्द मति तुम्हारा शरणागत हूँ। अपने हाथों से मेरा उद्धार करो ॥ ३ ॥ १ ॥

राग कल्याण पातिशाही १० बिना उस परमात्मा के किसी अन्य

किरतम मानो । आदि अजोनि अजै अबिनाशी तिह परमेशर जानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहा भयो जो आनि जगत मै दसकु असुर हरि घाए । अधिक प्रपंच दिखाइ सभन कह आपहि ब्रहमु कहाए ॥ १ ॥ भंजन गढ़न समरथ सदा प्रभ सो किम जात गिनायो । ता ते सरब काल के असि को घाइ बचाइ न आयो ॥ २ ॥ कैसे तोहि तारि है सुनि जड़ आप डुब्यो भवसागर । छुटिहो काल फास ते तब ही गहो शरनि जगतागर ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ खिआल पातिशाही १० ॥ मित्र पिआरे नूं हाल मुरीदां दा कहिणा । तुधु बिनु रोगु रजाइआं दा (म॰पं॰७१०) ओढण नाग निवासां दे रहिणा । सूल सुराही खंजरु पिआला बिंग कसाइआं दा सहिणा । यारड़े दा सानूं सत्थरु चंगा भट्ठ खेड़िआं दा रहिणा ॥ १ ॥ १ ॥

॥ तिलंग काफी पातिशाही १० ॥ केवल कालई

को कर्त्ता मत मानो । जो आदि, अयोनि, अजेय, अबिनाशी है, उसी परमतत्त्व को परमेश्वर जानो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार में दस एक असुरों का नाश करने से कोई बहुत बड़ी बात नहीं बनती । असुरों का नाश करनेवालों ने संसार को काफ़ी प्रपंच दिखाये और स्वयं अपने आप को ब्रह्म कहलाने लगे ॥ १ ॥ मैं परमात्मा, जो सबका भंजक सबका कर्त्ता है, उसका वर्णन कर सकता हूँ । उस सर्वकाल की कृपाण का घाव बचाकर कोई नहीं जीवित रह सका है ॥ २ ॥ हे जड़मति प्राणी ! ये सब (तथाकथित अवतार) तुम्हे कैसे पार करेंगे जो स्वयं ही भवसागर में डूबकर रह गए ! हे प्राणी ! तुम काल के फन्दे से तभी छूटोगे, जब तुम उस जगह के स्वामी परमात्मा की शरण में जाओगे ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ ख्याल पातिशाही १० ॥ उस परमात्मा रूपी प्यारे मित्र को इस सेवक का समाचार कहना कि हे प्रभु ! तुम्हारे बिना सुन्दर बिस्तरों का उपयोग करना साँपों के निवास में रहने के तुल्य है । तुम्हारे बिना सुराही शूल है, प्याला खंज़र के समान है और तुम्हारा वियोग क़साइयों द्वारा दी गयी भीषण पीड़ा के समान है । मेरे लिए तो प्रियतम का भूमि का आसन ही श्रेयस्कर है और उससे अलग होकर शारीरिक सुखपूर्वक रहना मानो जलती हुई भट्ठी में रहने के समान है ॥ १ ॥ १ ॥

॥ तिलंग काफी पातिशाही १० केवल महाकाल ही कर्त्ता है जो

करतार । आदि अंत अनंति मूरत गढ़न भंजनहार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निंद उसतत जउन के सम शत्रु मित्रु न कोइ । कउन बाट परी तिसै पथ सारथी रथ होइ ॥ १ ॥ तात मात न जात जाकर पुत्र पौत्र मुकंद । कउन काज कहाहिंगे ते आनि देवकिनंद ॥ २ ॥ देव दैत दिसा विसा जिह कीन सरब पसार । कउन उपमा तउन को मुख लेत नामु मुरार ॥३॥१॥

॥ रागु बिलावल पातिशाही १० ॥ सो किम मानस रूप कहाए । सिद्ध समाध साध कर हारे क्योंहूँ न देखन पाए ॥१॥ रहाउ ॥ नारद ब्यास परासर ध्रुअ से ध्यावत ध्यान लगाए । बेद पुरान हार हठ छाड्यो तदपि ध्यान न आए ॥ १ ॥ दानव देव पिसाच प्रेत ते नेतहि नेति कहाए । सूछम ते सूछम कर चीने ब्रिद्धन ब्रिद्ध बताए ॥ २ ॥ भूम अकाश पताल सभो सजि एक अनेक सदाए । सो नर कालफास ते बाचे जो हरि शरण सिधाए ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ रागु देवगंधारी पातिशाही १० ॥ इक बिन दूसर

आदि-अन्त में अनन्त जीव रूपी मूर्तियों को बनानेवाला और नाश करनेवाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निन्दा-स्तुति उसके लिए समान है । उसके लिए न कोई शत्रु है, न कोई मित्र । उसे भला क्या मुसीबत पड़ी थी, जो अर्जुन का सारथी बना ॥ १ ॥ उसके न माता, न पिता, न पुत्र, पौत्र है और उसका भला कौन सा कार्य होगा जिसके लिए देवकी का पुत्र बना ॥ २ ॥ उसी ने ही देव, दैत्यों और दिशाओं का प्रसार किया है और उसका नाम स्मरण करने के लिए कौन सी उपमा दी जाय, यह समझ में नहीं आता ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ राग बिलावल पातिशाही १० ॥ वह परमात्मा कैसे मनुष्य के रूप में आ सकता है, क्योंकि उसको देखने के लिए तो सिद्धगण समाधियाँ और साधनाएँ करके हार गए परन्तु उसका साक्षात्कार नहीं कर सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नारद, व्यास, पराशर और ध्रुव जैसे भक्तों ने ध्यान लगाकर उसका स्मरण किया; वेद-पुराण आदि भी हठ छोड़कर हार मान गए, परन्तु तब भी वह ध्यान में नहीं आ सका ॥ १ ॥ दानव, देव, पिशाच, प्रेतादि उसको नेति-नेति कहते हैं और सूक्ष्म जीवों ने उसे सूक्ष्म रूप में और वृहद् प्राणियों ने उसे वृहद् रूप में बताया है ॥ २ ॥ वह परमात्मा ही भूमि, आकाश, पाताल का सृजन कर एक से अनेक कहलाया है । वे व्यक्ति ही काल के फन्दे से बच सके हैं जो प्रभु की शरण में आ गए हैं ॥ ३ ॥ १ ॥

राग देवगंधारी पातिशाही १० एक (के बिना अन्य

सो न चिनार। भंजन गढ़न समरथ सदा प्रभ जानत है करतार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहा भइओ जो अति हित चित कर बहुबिधि सिला पुजाई। पान थके पाहिन कह परसत कछु कर सिद्ध न आई ॥ १ ॥ अच्छत धूप दीप अरपत है पाहन कछू न खैहै। ता मै कहां सिद्ध है रे जड़ तोहि कछू बर दैहै ॥ २ ॥ जो जिय होत देत कछु तुहि कर मन बच करम बिचार। केवल एक शरणि सुआमी बिन यों नहि कतहि उधार ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ रागु देवगंधारी पातिशाही १० ॥ बिन हरि नाम न बाचन पैहै। चौदह लोक जाहि बसि कोने ता ते कहां पलैहै ॥१॥ रहाउ ॥ राम रहीम उबार न सकिहै जाकर नाम रटैहै। ब्रहमा बिशन रुद्र सूरज ससि ते बसि काल सभै है ॥ १ ॥ बेद पुरान कुरान सभै मत जाकह नेति कहैहै। इंद्र फनिंद्र मुनिंद्र कलप बहु ध्यावत ध्यान (मू०पं०७११) न ऐहै ॥ २ ॥

किसी को मत पहचानो। वह ही सृजन करनेवाला, नाश करनेवाला समर्थ कर्त्ता प्रभु नाम से जाना जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ क्या हुआ यदि अत्यन्त प्रेमपूर्वक विभिन्न प्रकार से पत्थरों की पूजा की; पत्थरों को श्रद्धा-पूर्वक स्पर्श करते-करते हाथ तो थक गए पर कोई मनोकामना सिद्ध नही हुई ॥ १ ॥ अक्षत, धूप, दीप आदि पत्थर को अर्पित किए जाते हैं, परन्तु वह कुछ भी नहीं खाता। हे जड़ प्राणी! इस पत्थर मे कौन सी सिद्धि होगी, जो तुम्हें कोई वरदान देगी ॥ २ ॥ तुम मन, वचन और कर्म से विचार करो कि यदि पत्थर में जीवात्मा होती, तब ही वह कुछ तुमको दे पाती। इसलिए केवल एक प्रभु स्वामी की शरण के बिना तुम्हारा किसी भी प्रकार उद्धार नहीं होगा ॥ ३ ॥ १ ॥

॥ राग देवगंधारी पातिशाही १० ॥ हरि के नाम के बिना तुम बच नहीं सकोगे। हे जीव! जिसने चौदह लोकों को वश में किया हुआ है, उससे बचकर कहाँ भाग जाओगे? ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम और रहीम, जिनका नाम तुम रट रहे हो, वे तुम्हारा उद्धार नहीं कर सकेंगे। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सूर्य, चन्द्र ये सभी काल के वश में हैं ॥ १ ॥ वेद, पुराण, क़ुरान आदि सभी मत उसको नेति-नेति कहते हैं। इन्द्र, शेषनाग, मुनीश्वर आदि कई कल्पों तक उसका ध्यान करते हैं, परन्तु वह फिर भी ध्यान की पकड में नही आता २ हे जीव इसका तू रूप, रग जानता ही नही उसको तुम श्याम

जाकर रूप रंग नहि जनियत सो किम स्याम कहैहै। छुटहो काल जाल ते तबही ताहि चरन लपटैहै ॥ ३ ॥ २ ॥

१ ओं स्री वाहिगुरू जी की फतह ॥

स्री मुखवाक पातिशाही १० ॥

॥ सवैया ॥ जागति जोत जपै निस बासुर एक बिना मन नैक न आनै। पूरन प्रेम प्रतीत सजै ब्रत गोर मड़ी मट भूल न मानै। तीरथ दान दया तप संजम एक बिना नह एक पछानै। पूरन जोत जगै घट मै तब खालस ताहि नखालस जानै ॥ १ ॥ सत्ति सदैव सरूप सतब्ब्रत आदि अनादि अगाध अजैहै। दान दया दम संजम नेम जतब्ब्रत सील सुब्रित अबैहै। आदि अनील अनादि अनाहद आपि अद्वेख अभेख अभै है। रूप अरूप अरेख जरारदन दीनदयाल क्रिपाल भए है ॥ २ ॥ आदि अद्वेख अभेख महा प्रभ सत्ति सरूप सु जोत प्रकासी। पूर रह्यो सभ ही घट कै पट तत्त समाधि सुभाव प्रनासी। आदि जुगादि

कैसे कहते हो। तुम काल के जाल से तभी बच सकते हो, जब परमपिता परमात्मा की चरण पकड़कर शरण में चले जाओ ॥ ३ ॥ २ ॥

॥ सवैया ॥ सच्चा खालसा (सिक्ख) वही है जो केवल उस परमात्मा की देदीप्यमान ज्योति का सदैव स्मरण करता है और उस एक के बिना अन्य किसी में मन नहीं लगाता। वह परमात्मा के प्रति पूर्ण प्रेम के व्रत का पालन करता है और भूत, प्रेत, श्मशान आदि को बिलकुल नहीं मानता। वह तीर्थ-स्नान, दान, दया, तप, संयम आदि के माध्यम से भी उस एक परमात्मा की ही पहचान करता है और अपने शरीर में उसकी पूर्णज्योति को जलाकर तब शुद्ध रूप से खालसा तत्त्व का अनुभव करता है ॥ १ ॥ उसके सर्वदा सत्य-स्वरूप, सतव्रत, अनादि तत्त्व, अगाधता, अजेयता का अनुभव उसी की कृपा से होता है। दान, दया, तप, संयम, नियभ, उपनियम, शीलव्रत आदि उसको जानने के माध्यम हैं। वह आदि, अनील, अनादि, अद्वेष, अनहद, सर्व रहस्यों से परे तथा अभय है। वही कृपालु प्रभु रूप सेवा से परे दीनदयालु है तथा जरा-मरण का नाश करनेवाला है ॥ २ ॥ वह प्रभु आदि द्वेषों एवं भेसों से परे सत्यस्वरूप एवं प्रकाशमान ज्योति के समान है। वह सर्वसंहारक प्रभु सभी घटों में विराजमान है। हे प्रभु! तुम ही सारे संसार में युगान्तरों से

जगादि तुही प्रभ फैल रह्यो सभ अंतरि बासी । दीनदयाल क्रिपाल क्रिपा कर आदि अजोनि अजै अबिनासी ।। ३ ।। आदि अभेख अछेद सदा प्रभ बेद कतेबनि भेदु न पायो । दीनदयाल क्रिपाल क्रिपानिधि सत्ति सदैव सभै घटछायो । शेश सुरेश गणेश महेसुर गाहि फिरै स्रुति थाह न आयो । रे मन मूड़ अगूड़ इसो प्रभ तै किह काजि कहो बिसरायो ।। ४ ।। अच्चुत आदि अनील अनाहद सत्त सरूप सदैव बखाने । आदि अजोनि अजाइ जरा बिनु परम पुनीत परंपर माने । सिद्ध स्वयंभू प्रसिद्ध सभै जग एक ही ठौर अनेक बखाने । रे मन रंक कलंक बिना हरि तै किह कारण ते न पछाने ।। ५ ।। अच्छर आदि अनील अनाहद सत्त सदैव तुही करतारा । जीव जिते जल मै थल मै सभ कै सद पेट कौ पोखनहारा । बेद पुरान कुरान दुहूँ मिल भाति अनेक बिचार बिचारा । और जहान निदान कछू नहि ए सुबहान तुही सिरदारा ।। ६ ।। आदि अगाधि अछेद अभेद अलेख अजेअ अनाहद जाना । भूत भविक्ख भवान तुही सभहूँ

सबके अन्तर्मन में व्याप्त हो। तुम ही दीनदयालु, कृपालु, अनादि, अयोनि, अजेय एवं अविनाशी हो ।। ३ ।। तुम आदि, अवेश, अछेद, अनित्य हो तथा हे प्रभु ! वेद-कतेबादि भी तुम्हारा रहस्य नहीं जान सके। तुम दीनदयालु कृपा के समुद्र तथा सत्यस्वरूप में सबके प्राणों में विराजमान हो। शेषनाग, इन्द्र, गणेश, महेश तथा श्रुतियाँ आदि भी तुम्हारे रहस्य को नहीं जान सके। हे मेरे मूढ़ मन ! तुमने इस प्रकार के प्रभु का विस्मरण क्यों कर दिया ? ।।४।। उस परमात्मा का वर्णन सदैव अनादि, अनील, अनहद, अच्युत एवं सत्यस्वरूप में हुआ है। उसे आदि, अयोनि, जन्म-मरण से परे, परम पुनीत एवं अपरम्पार माना जाता है। वह स्वयंसिद्ध, स्वयंप्रकाशित सारे संसार में प्रसिद्ध है और एक ही स्थान पर उसका विभिन्न प्रकार से वर्णन हुआ है। हे मेरे दीन मन ! तुम उस निष्कलंक प्रभु को क्यों नहीं पहचानते हो ।। ५ ।। हे परमात्मा ! तुम अक्षर, अनादि, अनहद सर्वदा सत्यस्वरूप कर्ता हो तथा जल-स्थल में जितने भी जीव हैं, उनका पेट पालनेवाले हो। वेद, कुरान, पुराण आदि ने मिलकर अनेकों प्रकार के विचार तुम्हारे प्रति प्रकट किए हैं। परन्तु हे प्रभ ! सारे विश्व में तुम्हारे जैसा अन्य कोई नहीं है और तुम ही इस विश्व के परम आश्चर्य और सरदार हो ।। ६ ।। तुम आदि, अगाध अछेद अभेद अलेख अजेय सीमाओं से परे माने जाते हो तुम वर्तमान भूत भविष्य सभी स्थानों मे व्याप्त माने जाते हो देव दैत्य नाग

सभ ठौरन मो अनुमाना। देव (मू०ग्रं०७१२) अदेव मणी धर नारद सारद सत्ति सदैव पछाना। दीनदयाल क्रिपानिधि को कछु भेद पुरान कुरान न जाना ॥ ७ ॥ सत्ति सदैव सरूप सतब्रित बेद कतेब तुही उपजायो। देव अदेवन देव महीधर भूत भवान वही ठहरायो। आदि जुगादि अनील अनाहद लोक अलोक बिलोकन पायो। रे मन मूड़ अगूड़ इसो प्रभ तोहि कहो किहि आन सुनायो ॥ ८ ॥ देव अदेव महीधर नागन सिद्ध प्रसिद्ध बडो तपु कीनो। बेद पुरान कुरान सभै गुन गाइ थके पै तो जाइ न चीनो। भूँम अकाश पतार दिशा बिदिशा जिहि सो सभ के चित चीनो। पूर रही महि मो महिमा मन तै कह आन मुझै कहि दीनो ॥ ९ ॥ बेद कतेब न भेद लह्यो तिहि सिद्ध समाधि सभै करि हारे। सिंम्रित शासत्र बेद सभै बहु भाँति पुरान बिचार बीचारे। आदि अनादि अगाधि कथा ध्रुअ से प्रहिलादि अजामल तारे। नामु उचार तरी गनिका सोई नाम अधार बिचार हमारे ॥ १० ॥ आदि अनादि अगाधि

नारद, शारदा आदि सदैव तुम्हें सत्यस्वरूप में मानते रहे हैं। हे दीनदयालु, कृपानिधि ! तुम्हारे रहस्य को क़ुरान, पुराण आदि भी नहीं जान सके हैं ॥७॥ हे सत्यस्वरूप प्रभु ! बेद-कतेब आदि सत्य वृत्तियों का उत्पादन तुम्हीं ने किया है। सर्व कालों में देव-अदेव एवं पर्वतादि ने भी तुम्हें सत्यस्वरूप ही माना है। तुम्हीं आदि, युगादि एवं अनहद हो, जिसे इन्हीं लोकों में गहन दृष्टि के फल-स्वरूप पाया जा सकता है। हे मेरे मन ! मैं कह नहीं सकता कि इस प्रकार के प्रभु का वर्णन किस विशेष व्यक्ति द्वारा सुना है (क्योंकि उसका वर्णन तो सर्वत्र चलता ही रहता है) ॥ ८ ॥ देव, दैत्य, पर्वत, नाग तथा सिद्ध आदि ने भीषण तप किए; वेद, पुराण, क़ुरान आदि सभी उनके गुणों को गाकर थक गए, फिर भी उसके रहस्य को नहीं पहचान सके। भूमि, आकाश, पाताल, दिशा, विदिशा सभी उस परमात्मा में पूरित हैं; सारी धरती उसकी महिमा से परिपूर्ण है। अतः हे मन ! उसकी प्रशंसा कर तुमने मेरे लिए कौन सा नया कार्य किया है ॥ ९ ॥ वेद-कतेब उसके रहस्य को नहीं समझ सके और सिद्धगण भी उसके लिए समाधि लगाकर हार गए हैं। वेद-शास्त्र, पुराण स्मृतियों आदि में विभिन्न प्रकार से उस परमात्मा के बारे में विचार किए गए हैं। वह परमात्मा आदि, अनादि तथा अगाध है। उसके बारे में कथाएँ प्रचलित हैं कि उसने ध्रुव, प्रह्लाद, अजामिल आदि का उद्धार किया। उसके नाम का कर गणिका भी पार हो गई और उसी नाम के

सदा प्रभ सिद्ध स्वरूप सभो पहिचान्यो । गंध्रब जच्छ महीधर नागन भूँम अकाश चहूँ चक जान्यो । लोक अलोक दिशा बिदिशा अरु देब अदेब दुहूँ प्रभ मान्यो । चित्त अग्यान सुजान सुयंभव कौन की कान निधान भुलान्यो ।। ११ ।। काहूँ लै ठोक बधे उर ठाकुर काहूँ महेश को एस बखान्यो । काहूँ कह्‌यो हरि मंदर मै हरि काहूँ मसीत कै बीच प्रमान्यो । काहूँ ने राम कह्‌यो क्रिशना कहु काहूँ मनै अवतारन मान्यो । फोकट धरम बिसार सभै करतार ही कउ करता जिअ जान्यो ।। १२ ।। जौ कहौ राम अजोनि अजै अति काहे को कौशल कुक्ख जयो जू । कालहूँ काल कहै जिहि को किहि कारण काल ते दीन भयो जू । सत्त सरूप बिबैर कहाइ सु क्यों पथ को रथ हाँक धयो जू । ताही को मानि प्रभू करि कै जिह को कोऊ भेदु न लेन लयो ज ।।१३।। क्यों कहु क्रिशन क्रिपानिधि है किह काज ते बद्धक बाण लगायो । अउर कुलीन उधारत जो किह ते अपनो कुल नासु करायो । आदि अजोनि कहाइ कहो किम देवकि के जठरंतर आयो । तात न मात कहै जिह को तिह क्यों बसुदेवहि

विचार का आधार हमारे पास भी है ।। १० ।। उस परमात्मा को सभी अनादि, अगाध तथा सिद्धिस्वरूप जानते हैं । गंधर्व, यक्ष, मनुष्य, नाग आदि उसे भूमि, आकाश चारों दिशाओं में मानते हैं । लोक-आलोक, दिशा, विदिशा, देव-अदेव सभी परमात्मा को मानते हैं । हे अज्ञानी मन ! तुमने किसके पीछे लगकर उस स्वयंभू सुजान परमात्मा को भुला दिला है ।। ११ ।। किसी ने पत्थर के ठाकुर को गले में बांध रखा है तो किसी ने महेश को ही भगवान मान रखा है । कोई हरि को मंदिर में और मस्जिद में मानता है । कोई उसे राम, कोई कृष्ण कहता है और कोई उसके अवतारों को मानता है, परन्तु मेरे मन ने सभी फोकट कर्मों को त्याग कर केवल उस एक कर्ता को ही माना है ।। १२ ।। यदि हम राम (परमात्मा) को अयोनि कहते हैं तो फिर उसने कौशल्या की कोख से जन्म कैसे लिया ? जिसको काल का काल कहा जाता है वह स्वयं काल के सामने दीन क्यों बना ? यदि उसे सत्यस्वरूप वैर-विरोध से परे कहा जाता है तो क्यों उसे अर्जुन का रथ हांकना पड़ा । हे मन ! तू उसी को प्रभु मान जिसके रहस्य को कोई नहीं जान सका ।। १३ ।। कृष्ण स्वयं कृपनिधि माने जाते हैं, परन्तु उन पर भी बधिक ने बाण क्यों चलाया ? वे दूसरों के कुलों का उद्धार करते बताए गए हैं फिर उन्होंने अपने ही कुल का नाश करवा लिया उन्हें अयोनि-अनादि आदि कहा जाता है फिर वे देवकी

बापु कहायो ।। १४ ।। (मू०ग्रं०७१३) काहे को एश महेशहि भाखत काहि दिजेश को एस बखान्यो । है न रघ्वेश जद्वेश रमापति तै जिनको बिस्वनाथ पछान्यो । एक को छाडि अनेक भजै सुकदेव परासर ब्यास झुठान्यो । फोकट धरम सजे सभ ही हम एक ही कौ बिध नैक प्रमान्यो ।। १५ ।। कोऊ दिजेश को मानत है अरु कोऊ महेश कौ एश बतैहै । कोऊ कहै बिशनो बिशनाइक जाहि भजे अघ ओघ कटैहै । बार हजार बिचार अरे जड़ अंत समै सभ ही तजि जैहै । ताही को ध्यान प्रमानि हिए जोऊ थे अब है अरु आगै ऊ ह्वैहै ।। १६ ।। कोटक इंद्र करे जिहको कई कोटि उपिंद्र बनाइ खपायो । दानव देव फनिंद्र धराधर पच्छ पसू नहि जाति गनायो । आज लगे तपु साधत है शिवऊ ब्रहमा कछु पार न पायो । बेद कतेब न भेद लख्यो जिह सोऊ गुरू गुर मोहि बतायो ।। १७ ।। ध्यान लगाइ ठग्यो सभ लोगन सीस जटा नख हाथ बढाए । लाइ बिभूत फिर्यो मुख ऊपरि देव अदेव सभै डहकाए । लोभ के लागे फिर्यो

के उदर में कैसे आए ? जिस परमात्मा का तात-मात किसी को भी नहीं माना जाता है, उसने फिर वसुदेव को अपना पिता क्यों कहलवाया ।। १४ ।। तुम महेश अथवा ब्रह्मा को क्यों भगवान मानते हो । राम, कृष्ण, विष्णु कोई भी ऐसे नहीं है, जिन्हें तुम विश्वनाथ के नाम से पहचानते हो । तुम एक परमात्मा को छोड़कर अनेक देवी-देवताओं का स्मरण करते हो तथा इस प्रकार शुकदेव, पराशर आदि महर्षियों को झूठा साबित करते हो । सभी तथाकथित धर्म खोखले हैं और मैं तो केवल एक ही परमात्मा को विधाता के रूप में प्रभावित मानता हूँ ।। १५ ।। कोई ब्रह्मा को और कोई शिव को भगवान बताता है । कोई विष्णु को विश्वनायक मानता है और कहता है कि उसी के स्मरण से पाप-समूह कट जायेंगे । हे मूर्ख ! तू हज़ारों बार विचार करके देख ले, अन्त समय में ये सब तुम्हें छोड़ जायेंगे । इसलिए तू उसी का ध्यान कर जो वर्तमान में भी है और भविष्य में भी रहेगा ।। १६ ।। जिसने करोड़ों इन्द्रों एवं उपेन्द्रों को बनाकर उनका नाश किया, जिसने अगणित देव, दानव, शेषनाग, कच्छप, पक्षी, पशु आदि बनाए और जिसका रहस्य जानने के लिए शिव, ब्रह्मा आज तक तपस्या कर रहे हैं परन्तु उसका अन्त नहीं पा सके । वह ऐसा गुरु है जिसका वेद-कतेबादि भी भेद नहीं समझ सके और मेरे गुरु ने भी मुझे यही बताया है ।। १७ ।। सिर पर जटाएँ धारण कर हाथों के नाखून तुम झूठी ही समाधि लोगों को ठगते फिरते हो

घर ही घर जोग के न्यास सभै बिसराए। लाज गई कछु काजु सर्यो नहि प्रेम बिना प्रभ पान न आए॥ १८॥ काहे कउ डिंभ करै मन मूरख डिंभ करै अपनी पति छवैहै। काहे कउ लोग ठगो ठग लोगनि लोग गयो परलोग गवैहै। दीनदयाल की ठौर जहा तिहि ठौर बिखै तुहि ठौर न ऐहै। चेत रे चेत अचेत महाँ जड़ भेख के कीने अलेख न पैहै॥ १६॥ काहे कउ पूजत पाहन कउ कछु पाहन मै परमेशर नाही। ताही को पूज प्रभू करि कै जिह पूजत ही अघ ओघ मिटाही। आधि बिआधि के बंधन जेतक नाम के लेत सभै छुटि जाही। ताही को ध्यानु प्रमान सदा इन फोकट धरम करे फलु नाही॥ २०॥ फोकट धरम भयो फल हीन जू पूज सिला जुगि कोट गवाई। सिद्ध कहा सिल के परसे बल ब्रिद्ध घटी नवनिद्ध न पाई। आजु ही आजु समो जु बित्यो नहि काज सर्यो कछु लाज न आई। स्री भगवंत भज्यो न अरे जड़ ऐसे ही ऐस सु बैस गवाई॥ २१॥ जौ जुग

तुम मुख पर भभूत लगाकर देव-दानव सबको भ्रम में डालते हुए भ्रमण कर रहे हो। ये योगी! तुम लोभ के वश होकर घूम रहे हो और तुमने योग के सभी साधनों का विस्मरण कर दिया है। इस प्रकार तुम्हारा स्वाभिमान भी चला गया तथा कुछ कार्य भी नहीं हुआ। सच्चे प्रेम के बिना प्रभु हाथ नहीं आता॥ १८॥ हे मूर्ख मन! तुम पाखण्ड क्यों करते हो, क्योंकि पाखण्डों के द्वारा तुम अपने सम्मान का ही नाश करोगे। ठग बनकर तुम क्यों लोगों को ठग रहे हो और इस प्रकार लोक-परलोक दोनों को गँवा रहे हो। परमात्मा के स्थान में तुम्हें तनिक भी स्थान नहीं मिलेगा, इसलिए हे जड़ प्राणी! तू अभी भी सम्हल जा, क्योंकि मात्र वेश धारण करके तुम उस अलेख परमात्मा को नहीं पा सकोगे॥ १६॥ पत्थरों की पूजा क्यों करते हो क्योंकि उन पत्थरों में परमात्मा नहीं है, तुम केवल उसी की पूजा करो जिसकी पूजा से पापों के झुण्ड नष्ट हो जाते हैं। परमात्मा का नाम-स्मरण करने से सभी दु.ख-व्याधियों के बन्धन छूट जाते हैं। उस परमात्मा का ही सदैव ध्यान करो, क्योंकि खोखले धार्मिक कर्मकाण्डों का कोई फल नहीं होगा॥ २०॥ खोखला धर्म फलहीन सिद्ध हुआ और हे जीव! तुमने शिलाओं की पूजा करके करोड़ो वर्ष गँवा दिये। शिलाओं की पूजा से सिद्धि कहाँ मिलेगी, अपितु बल और वैभव कम ही होंगे। इस प्रकार समय व्यर्थ बीत गया और कुछ काम भी नहीं बना तथा तुम लज्जित भी नहीं हुए। हे जड़ बुद्धि! तुमने का भजन नहीं किया और व्यर्थ ही अपनी आयु गँवा दी २१

तैं करि है तपसा कछु तोहि प्रसंनु न पाहन कै है। हाथ उठाइ भली बिध सो जड़ तोहि कछू बरदानु न दैहै। कउन भरोस भया (मू०ग्रं०७१४) इह को कहु भीर परी नहि आनि बचैहै। जानु रे जानु अजान हठी इह फोकट धरम सु भरम गवैहै ॥२२॥ जाल बधे सभ ही म्रित के कोऊ राम रसूल न बाचन पाए। दानव देव फनिंद धराधर भूत भविक्ख उपाइ मिटाए। अंत मरे पछुताइ प्रिथी पर जे जग मै अवतार कहाए। रे मन लैल इकेल ही काल के लागत काहे न पाइन धाए ॥ २३ ॥ काल ही पाइ भयो ब्रहमा गहि दंड कमंडल भूम भ्रमान्यो। काल ही पाइ सदा शिवजू सभ देस बिदेस भया हम जान्यो। काल ही पाइ भयो मिट ग्यो जग याँही ते ताहि सभो पहिचान्यो। बेद कतेब के भेद सभै तजि केवल काल क्रिपानिध मान्यो ॥ २४ ॥ काल गयो इन कामन सिउ जड़ काल क्रिपाल हिऐ न चितार्यो। लाज को छाडि निलाज अरे तज

तुम एक युग तक भी तपस्या करते रहो परन्तु ये पत्थर तुम्हारी कामनाएँ पूर्ण कर तुम्हें प्रसन्न नहीं करेंगे। ये तुम्हें हाथ उठाकर कभी भी वरदान नहीं देंगे। इनका कोई भरोसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि किसी भी संकट के समय ये तुम्हें पहुँचकर बचा भी नहीं पायेंगे, इसलिए हे अंजान हठी जीव! तुम सँभल जाओ, ये खोखले धार्मिक कर्मकाण्ड तुम्हारे सम्मान का नाश कर देंगे ॥ २२ ॥ मृत्यु के जाल में सभी फँसे हुए हैं, और उसे कोई भी राम अथवा रसूल बच नहीं पाया। उस परमात्मा ने दानव, देव, शेष तथा धरती पर बसनेवाले अन्य प्राणी बनाए और उनका नाश कर दिया। संसार में जो अवतारों के नाम से जाने जाते हैं, वे भी अन्त में पश्चात्ताप करते हुए मृत्यु को प्राप्त हुए। इसलिए हे मेरे मन! तुम दौड़कर उस महाकाल एक परमात्मा के चरण क्यों नहीं पकड़ते हो ॥ २३ ॥ काल के ही वश में ब्रह्मा हुए और दण्ड, कमण्डल हाथ में लेकर उन्होंने पृथ्वी का भ्रमण किया। काल के ही वश में शिव देश-विदेशों में घूमते रहे। काल के ही वशीभूत सारे जगत का नाश हुआ और इसीलिए उस काल को सभी पहचानते हैं। इसलिए तुम वेद-कतेब आदि के भेदों का त्यागकर केवल काल को ही कृपा-सागर परमात्मा मानो ॥ २४ ॥ हे जड़! कामनाएँ करते-करते तुमने समय बिता दिया और परमकृपालु काल रूपी परमात्मा का हृदय में स्मरण नहीं किया। हे निर्लज्ज! तुम झूठी लज्जा का त्याग करो, क्योंकि उस परमात्मा ने भले-बुरे का विचार त्यागते हुए सबके कार्यों को सँवारा है हे

काज अकाज को काज सवार्यो । बाज बने गजराज बडो खर को चड़िबो चित बीच बिचार्यो । स्री भगवंत भज्यो न अरे जड़ लाज ही लाज सु काजु बिगार्यो ॥ २५ ॥ बेद कतेब पड़े बहुते दिन भेद कछू तिन को नहि पायो । पूजत ठौर अनेक फिर्यो पर एक कबै हिय मै न बसायो । पाहन को असथालय को सिर न्याइ फिर्यो कछु हाथ न आयो । रे मन मूड़ अगूड़ प्रभू तजि आपन हूड़ कहा उरझायो ॥ २६ ॥ जो जुगियान के जाइ उठि आश्रम गोरख को तिह जाप जपावै । जाइ संन्यासन के तिह को कह दत्त ही सत्त है मंत्र द्रिड़ावै । जो कोऊ जाइ तुरक्कन मै महि दीन के दीन तिसे गहि ल्यावै । आपहि बीच गनै करता करतार को भेदु न कोऊ बतावै ॥२७॥ जो जुगिआन के जाइ कहैं सभ जोगन को ग्रहि माल उठै दैं । जो परो भाजि सन्यासन दैं कहैं दत्त के नाम पै धाम लुटै दैं । जौ करि कोऊ मसंदन सौ कहै सरब दरब लै मोहि अबै दैं । लेउ ही लेउ कहै सभ को नर कोऊ न ब्रहम बताइ हमै दैं ॥ २८ ॥

मूर्ख ! तुम क्यों हाथी और घोड़ों की सवारी को छोड़कर माया रूपी गर्दभ की सवारी करने का विचार कर रहे हो । तुमने श्री भगवान का भजन नहीं किया और झूठी लज्जा और मान-सम्मान में ही काम बिगाड़ लिया है ॥२५॥ तुमने बहुत दिनों तक वेद-कतेब का अध्ययन किया । परन्तु फिर भी तुम उसके रहस्य को नहीं समझ पाए । अनेक स्थानों पर उसकी पूजा करते हुए तुम भ्रमण करते रहे, परन्तु तुमने उस एक परमात्मा को कभी हृदय में धारण नहीं किया । पत्थरों के मन्दिरों में सिर झुकाते घूमते रहे परन्तु कुछ भी तुम्हारे हाथ नहीं आया । हे मूढ़ मन ! उस अज्ञेय प्रभु को त्याग कर तुम अपनी ही मन्द मति में उलझे रहे ॥ २६ ॥ जो व्यक्ति योगियों के आश्रमों में जाकर गोरख का जाप जपाता है; संन्यासियों के मध्य दत्तात्रेय के मंत्र को ही सत्य बताता है तथा मुसलमानों के बीच जाकर दीन-ईमान की बात कहता है वह समझ लो केवल अपनी (विद्वत्ता की) महिमा का ही बखान करता घूमता है और उस कर्ता पुरुष का रहस्य नहीं कहता ॥ २७ ॥ जो योगियों के कहने पर घर का सारा धन-माल उठाकर योगियों को दे देता है; दत्त के नाम पर संन्यासियों को घर लुटा देता है तथा जो मसंदों (सिक्ख गुरुओं के सेवकों) के कहने पर घर का सारा द्रव्य लाकर मुझे दे देता है तो मैं तो यह मानता हूँ कि ये सब स्वार्थ-साधना के ढंग हैं । मै तो ऐसे व्यक्ति को चाहता हूँ जो मुझे ब्रह्म का रहस्य समझा दे २८ जो मात्र सेवकों

जो करि सेव मसंदन की कहै आनि प्रशादि सभै मोहि दीजै। जो कछु माल तवालय सो अब ही उठि भेट हमारी ही कीजै। मेरोई ध्यान धरो निस बासुर भूल कै अउर को नामु न लीजै। दीने को नामु सुनै भजि रातहि लीने बिना नहि नैक प्रसीजै ।।२९।। आँखन भीतरि तेल कौ डार सु लोगन नीरु बहाइ दिखावै। जो धनवानु लखै निज सेवक ताही परोसि प्रशादि जिमावै। (मू०ग्रं०७१५) जो धनहीन लखै तिह देत न मागन जात मुखो न दिखावै। लूटत है पसु लोगन को कबहूँ न प्रमेशर के गुन गावै ।। ३० ।। आँखन मीच रहै बक की जिम लोगन एक प्रपंच दिखायो। निआत फिर्यो सिरु बद्धक ज्यों अस ध्यान बिलोक बिड़ाल लजायो। लागि फिर्यो धन आस जितै तित लोग गयो परलोग गवायो। स्री भगवंत भज्यो न अरे जड़ धाम के काम कहा उरझायो ।। ३१ ।। फोकट करम द्रिड़ात कहा इन लोगन को कोई काम न ऐहै। भाजत का धन हेत अरे जमकिंकर ते नह भाजन पैहै। पुत्र कलित्र न

की ही सेवा कर लोगों पर प्रभाव डालकर उन्हें कहता है कि खाने-पीने के पदार्थ मुझे दो और जो कुछ तुम लोगों के घर में है उसे मेरे समक्ष उपस्थित करो; मेरा ही ध्यान करो तथा अन्य किसी का नाम भी न लो, समझ लो उसके पास देने को केवल नाममात्र मंत्र ही है और वह भी कुछ लिये बिना प्रसन्न नहीं होगा ।। २९ ।। जो अपनी आँखों में तेल डालकर लोगों को दिखाता है कि मैं प्रभु-प्रेम में विभोर होकर रो रहा हूँ और जो धनवान सेवक को तो स्वयं-परोसकर भोजन खिलाता है परन्तु किसी दीन के माँगने पर न तो उसे कुछ देता है और न ही उसे मिलना पसन्द करता है; समझ लो वह नीच लोगों को लूटता फिर रहा है और कभी भी प्रभु के गुण नहीं गाता ।। ३० ।। बगुले की तरह आँखें बंद करके लोगों को प्रपंच दिखाता है, शिकारी की तरह सिर झुकाता है (परन्तु अंदर से मारने की भावना रखता है) तथा बिल्ली भी उसके ध्यान को देखकर लज्जित हो जाती है। ऐसा व्यक्ति धन की आशा में भ्रमण करता रहता है और अपना लोक-परलोक दोनों गँवा लेता है। हे मूर्ख प्राणी ! तुमने श्री भगवान की तो पूजा नहीं की और तू व्यर्थ ही घर-बाहर के धंधों में ही उलझा रहा ।। ३१ ।। तुम क्यों इन लोगों को पाखंडपूर्ण कर्म करने के लिए बार-बार कहते हो, ये कर्म इन लोगों के किसी काम नहीं आएँगे। धन के लिए क्यों इधर-उधर भाग रहे हो; तुम कुछ भी कर लो परन्तु यम के फंदे से बच नहीं सकते पुत्र-स्त्री-मित्रादि

मित्र सभै उहा सिक्खसखा कोऊ साख न दैहै। चेत रे चेत अचेत महाँ पसु अंत की बार अकेलोई जैहै ॥ ३२ ॥ तो तन त्यागत ही सुन रे जड़ प्रेत बखान त्रिआ भजि जैहै। पुत्र कलत्र सु मित्र सखा इह बेग निकारहु आइसु दैहै। भउन भंडार धरा गड़ जेतक छाडत प्रान बिगान कहैहै। चेत रे चेत अचेत महाँपसु अंत की बार अकेलोई जैहै ॥ ३३ ॥

१ ओं स्री वाहिगुरू जी की फतह ॥

स्री मुखवाक पातिशाही १० ॥

॥ स्वैया ॥ जो कछु लेख लिख्यो बिधना सोई पाइयत मिशरजू शोक निवारो। मेरो कछू अपराध नही गयो याद ते भूल नह कोपु चितारो। बागो निहाली पठै दैहो आजु भले तुम को निसचै जिय धारो। छत्री सभै क्रित बिप्पन के इनहूँ पै कटाछ क्रिपा कै निहारो ॥ १ ॥ जुद्ध जिते इन ही के प्रसादि इन ही के प्रसादि सु दान करे। अघ अउघ टरै इन ही के

कोई भी तुम्हारी साक्षी नहीं देंगे अर्थात् कोई भी तुम्हारा साथ नहीं देंगे। इसलिए हे मूढ़ ! तू अभी भी सँभल जा, क्योंकि अन्त में तुझे अकेले ही जाना पड़ेगा ॥ ३२ ॥ तन के त्यागते ही, हे जड़ ! तेरी स्त्री भी प्रेत-प्रेत कहकर भाग खड़ी होगी। पुत्र, स्त्री, मित्र सभी कहेंगे जल्दी इसे बाहर निकालो और श्मशान घाट पहुँचाओ। भवन, भंडार, धरती आदि प्राणों के छूटते ही बेगाने हो जायँगे, इसलिए हे महापशु ! तू अभी भी सँभल जा, क्योंकि अंतिम समय में तुझे अकेले ही जाना है ॥ ३३ ॥

॥ सवैया ॥ हे मिश्र ! जो विधाता ने लिखा है, वह अवश्य होता है, इसलिए आप शोक का त्याग कीजिए। मेरा इसमें कुछ अपराध नहीं है। मैं तो केवल भूल गया था (और मैंने आपको खिलाने से पहले इन सिक्खों को भोजन खिला दिया)। मेरी इस भूल पर आप क्रोधित न हों। मैं आपके लिए दक्षिणा में दिया जानेवाला रज़ाई, गद्दा आदि अवश्य आज ही भिजवा दूँगा। उसके लिए आप निश्चिन्त रहें। क्षत्रिय तो सभी विप्रों के लिए ही कार्य करते रहे हैं। अब आप इनकी ओर देखते हुए इन पर कृपा करें ॥१॥ मैंने इन्हीं सिक्खों की कृपा से युद्ध जीते हैं और इन्हीं के प्रसादस्वरूप दान आदि किया है। इन्हीं सिक्खों ध्यान रहे कि गुरु गोविन्द सिंह के पाँच

प्रसादि इन ही क्रिपा फुन धाम भरे। इन ही के प्रसादि सु बिद्या लई इन ही की क्रिपा सभ शत्रु मरे। इन ही की क्रिपा के सजे हम हैं नही मोसो गरीब करोर परे॥ २॥ सेव करी इन ही की भावत अउर की सेव सुहात न जीको। दान दयो इन ही को भलो अरु आन को दान न लागत नीको। आगै फलै इनही को दयो जग मै जसु अउर दयो सभ फीको। मो ग्रहि मै मन ते तन ते सिर लउ धनहै सभ ही इन ही को॥ ३॥ ॥ दोहरा ॥ चटपटाइ चित मै जर्‍यो त्रिण ज्यों क्रुद्धत होइ। खोज रोज के हेत लग दयो मिशरजू रोइ॥ ४॥ (मू०पं०७१६)

॥ दूसरी संची समाप्त

प्यारे सिक्खों में एक नाई, एक धोबी, एक कहार, एक जाट और एक क्षत्रिय था, तथा वे पाँचो लाहौर, दिल्ली, जगन्नाथपुरी, मैसूर और द्वारिका के निवासी थे) की कृपा से मेरे घर में धन-धान्य है तथा इन्हीं सिक्खों की कृपा से पाप-समूहों का नाश हुआ है। इन्हीं के प्रसादस्वरूप मैंने विद्या प्राप्त की है और इन्हीं की कृपा से सभी शत्रुओं का नाश हुआ। इन सबकी ही कृपा से मैं शोभा पा रहा हूँ अन्यथा मेरे जैसे करोड़ों ग़रीब इस धरती पर पड़े हुए हैं और उनको कोई पूछता तक नहीं॥ २॥ मुझे इन्हीं की सेवा अच्छी लगती है और अन्य किसी की सेवा से मेरा मन प्रसन्न नहीं होता है। इन्ही द्वारा दिया हुआ दान मुझे भला लगता है तथा अन्य किसी के दान को भी मैं श्रेष्ठ नहीं मानता। इन्हीं का दिया हुआ दान आगे अच्छे फल प्रस्तुत करेगा और संसार में अन्य सबका दिया हुआ इनके दिये हुए दान के सामने फीका है। मेरे घर में मेरे मन, तन, धन से लेकर मेरा सिर तक सब कुछ इन्हीं का है॥ ३॥ दोहा॥ जिस प्रकार तिनके क्रोधित होकर जलते हुए चटपटाते हैं, इस प्रकार मिश्र जी मन में क्षुब्ध हो उठे और अपनी रोज़ी रोटी का ध्यान करते हुए रो पड़े॥ ४॥

॥ दूसरी संची समाप्त ॥
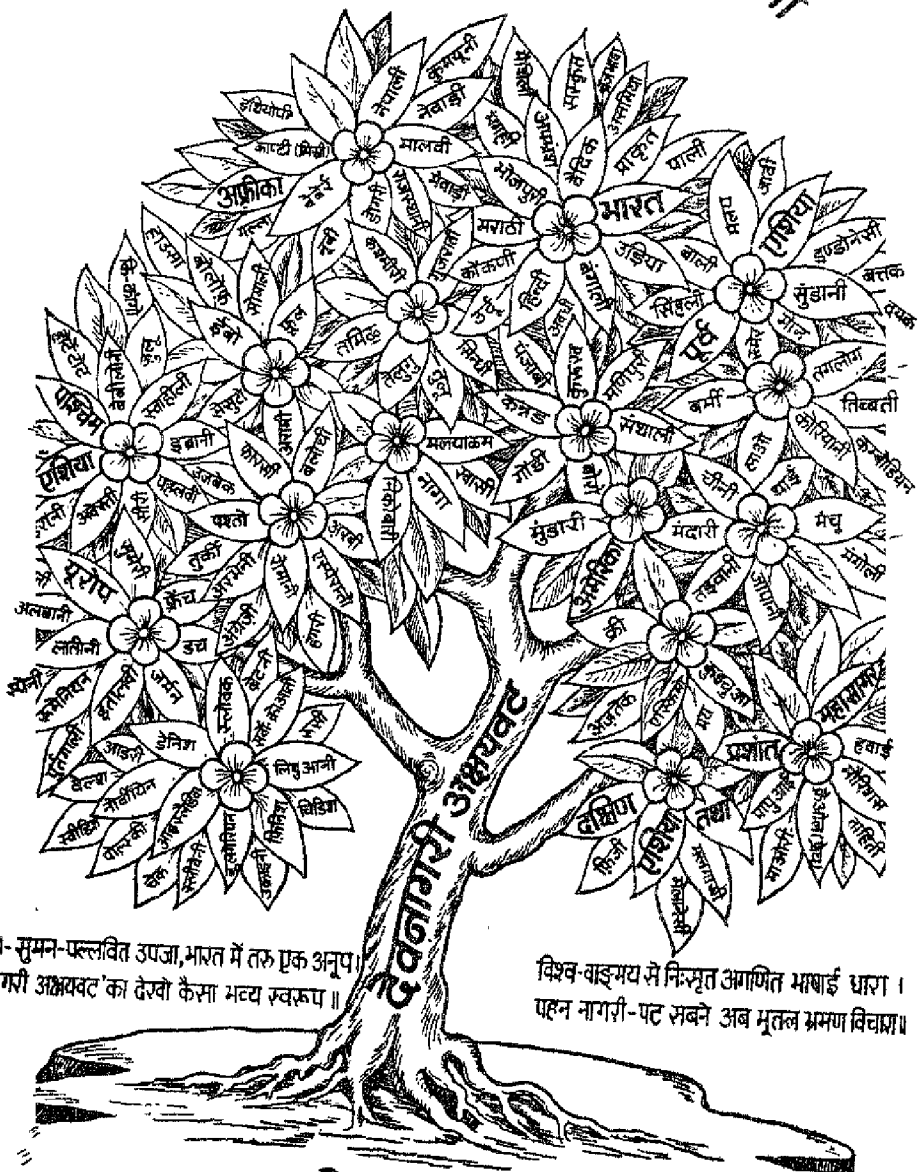
भुवन ग्रन्थ-गाथा भुवन सन्त-वाणी
अफ्रीका
भारत
एशिया
पूर्व
पश्चिम
एशिया
यूरोप
अमेरिका
दक्षिण
एशिया
प्रशांत
महासागर
देवनागरी अक्षयवट
मालवी
नेपाली
मराठी
कोंकणी
हिन्दी
उर्दू
उड़िया
बंगाली
पाली
प्राकृत
वैदिक
भोजपुरी
तमिळ
तेलुगु
कन्नड
मलयालम
संथाली
गोंडी
बर्मी
तिब्बती
मुंडानी
मुंडारी
मंदारी
मंचू
मंगोली
जापानी
कोरियाली
चीनी
सिंहली
इब्रानी
फारसी
पश्तो
अरबी
तुर्की
स्वाहिली
फ्रेंच
डच
लातीनी
अंग्रेजी
जर्मन
इतालवी
डेनिश
पुर्तगाली
लिथुआनी
हवाई
ी- सुमन-पल्लवित उपजा, भारत में तरु एक अनूप।
ागरी अक्षयवट' का देखो कैसा भव्य स्वरूप॥
विश्व-वाङ्मय से निःसृत अगणित भाषाई धारा ।
पहन नागरी-पट सबने अब भूतल भ्रमण विचारा॥
भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ
प्रतिष्ठाता – पद्मश्री नन्दकुमार अवस्थी